सचित्र

प्रश्नव्याकरण सूत्र

प्रवर्त्तक श्री अमर मुनि



PRASHNAVYĀKARAN SUTRA

Pravartak Shri Amar Muni

पंचम गणधर भगवत् सुधर्मा स्वामी प्रणीत दसवाँ अंग

सचित्र
प्रश्नव्याकरण सूत्र

मूल पाठ, हिन्दी-अंग्रेजी भावानुवाद, विवेचन तथा रंगीन चित्रों सहित

◻ *प्रधान सम्पादक* ◻

जैनधर्म दिवाकर उत्तर भारतीय प्रवर्त्तक

श्री अमर मुनि जी

◻ *सह-सम्पादक* ◻

श्री वरूण मुनि "अमर शिष्य"

श्री संजय सुराना

◻ *अंग्रेजी अनुवादक* ◻

श्री राजकुमार जैन

● प्रकाशक ●

पद्म प्रकाशन, पद्म धाम, नरेला मण्डी, दिल्ली-40

राष्ट्रसंत उत्तर भारतीय प्रवर्त्तक अनंत उपकारी गुरुदेव
भण्डारी श्री पद्मचन्द्र जी म. सा. की आठवीं पुण्यतिथि के पावन अवसर पर प्रकाशित

सचित्र आगम माला का बावीसवाँ पुष्प

❐ सचित्र प्रश्नव्याकरण सूत्र

❐ ***प्रधान सम्पादक :***
जैनधर्म दिवाकर उ भा प्रवर्त्तक श्री अमर मुनि जी

❐ ***सह-सम्पादक :***
श्री वरुण मुनि "अमर शिष्य"
श्री संजय सुराना

❐ ***अंग्रेजी अनुवादक :***
श्री राजकुमार जैन

❐ ***प्रथम आवृति :***
वी नि स २५३४, वि स २०६४, चैत्र
ईस्वी सन् २००८, मई

❐ ***चित्रकार :***
डॉ त्रिलोक शर्मा

❐ ***प्रकाशक :***
पद्म प्रकाशन
पद्म धाम, नरेला मण्डी, दिल्ली-११० ०४०

❐ ***मुद्रक :***
संजय सुराना
श्री दिवाकर प्रकाशन
A-७, अवागढ हाउस, एम जी रोड, आगरा-२८२ ००२
फोन : ०५६२-२८५११६५, मो : ९३१९२०३२९१

❐ ***मूल्य :***
छह सौ रुपया मात्र (६००/- रुपये)

E-mail padamprakashan@gmail com

The Tenth Anga Written by
FIFTH GANADHAR BHAGAVAT SUDHARMA SWAMI

ILLUSTRATED

PRASNAVYAKARAN SUTRA

Original Text with Hindi and English Translations, Elaboration and Multicoloured Illustrations

❑ EDITOR-IN-CHIEF ❑
Jain Dharma Diwakar Uttar Bharatiya Pravartak
Shri Amar Muni ji

❑ CO-EDITOR ❑
Shri Varun Muni "Amar Shishya"
Shri Sanjay Surana

❑ ENGLISH TRANSLATOR ❑
Shri Rajkumar Jain

PUBLISHERS
PADAM PRAKASHAN, PADAM DHAM, NARELA MANDI, DELHI-40

Published in the Eighth pious memory of Uttar Bharatiya Pravartak Gurudev Bhandari Shri Padam Chandra Ji M. S.

THE TWENTY-SECOND NUMBER OF THE ILLUSTRATED AGAM SERIES

- **ILLUSTRATE D *PRASHNAVYĀKARAN* SUTRA**
- ***Editor-in-Chief***
  Jain Dharma Diwakar - Uttar Bharatiya Pravartak
  Shri Amar Muni ji
- ***Co-Editor***
  Shri Varun Muni "Amar Shishya"
  Shri Sanjay Surana
- ***English Translator***
  Shri Rajkumar Jain

- ***First Edition***
  Chaitra, 2064 V
  May, 2008 A D

- ***Illustrations***
  Dr Trilok Sharma

- ***Publishers***
  Padam Prakashan
  Padam Dham, Narela Mandi, Delhi-110 040
- ***Printer***
  Shree Diwakar Prakashan, Agra
  A-7, Awagarh House, Opp Anjna Cinema,
  M G Road, Agra-282 002
  Ph (0562) 2851165, Mob 9319203291
- ***Price***
  Six Hundred Rupees only (Rs 600/-)

E-mail · padamprakashan@gmail com

समर्पण



जय गुरु आत्म



जय गुरु हेम



जय गुरु पद्म

जैनागम रत्नाकर

आचार्य सम्राट्

पू. श्री आत्माराम जी म. सा.

संस्कृत-प्राकृत विशारद सरलमना

पं. श्री हेमचन्द्र जी म.

एवं

राष्ट्र सन्त उ. भा. प्रवर्त्तक भण्डारी

श्री पद्मचन्द्र जी म. सा.

आराध्यत्रय के पुण्य स्मरण में

सश्रद्ध सादर समर्पित

प्रधान सम्पादक



साहित्य सम्राट् प्रवर्त्तक श्री अमर मुनि जी म.

सह सम्पादक



युवा मनीषी श्री वरुण मुनि जी म. 'अमर शिष्य'

श्रुत सेवा में सहयोगी गुरुभक्त



श्रीमान् विजयकुमार जी – चन्द्रकांता जैन
(अमर शिष्य श्री वरुण मुनि जी म. के जन्मदाता माता-पिता)



ला. प्रेमचन्द्र जी–जगमति देवी जैन
(मुनि श्री के दीक्षा प्रदाता दादा–दादी एवं धर्म के माता-पिता)



श्री सुनील कुमार – ममता जैन



श्री [illegible] जी – [illegible] जैन
[illegible]



श्री [illegible] – उषा जैन
([illegible])

आगम प्रकाशन के आधार स्तंभ



श्री सत्यपाल जी – रुक्कमणी अग्रवाल
कुरुक्षेत्र



श्री सुदर्शन जी – मोहिता अग्रवाल
कुरुक्षेत्र



श्री विजयकुमार जी – आशारानी जैन
लुधियाना (पंजाब)



श्री [illegible] जी – [illegible] जैन
[illegible]



श्री महेन्द्र जी – [illegible] जैन
[illegible]

श्रुत सेवा में समर्पित गुरुभक्त



श्री पृथ्वीचंदजी – शांतिदेवी जैन
पदमपुर (राजस्थान)



श्री ज्ञातनदन जी – अंगूरी देवी जैन
रोहिणी, दिल्ली



डॉ. श्री मौजीराम जी जैन, श्रीमती पुष्पा जैन
सैनिक फार्म, दिल्ली



श्री रामकुमार जी – कमलादेवी जैन
[illegible] दिल्ली



श्री गुलाबराय जी – विमलादेवी जैन
[illegible] (पंजाब)

प्रकाशकीय

दानो मे श्रेष्ठ दान ज्ञानदान है। इस वचन पर चिन्तन करके आज से 16 वर्ष पूर्व परम श्रद्धेय प्रवर्त्तक **श्री अमर मुनि जी म. सा.** ने भगवत् वाणी रूप जैन सूत्रों का हिन्दी-अंग्रेजी अनुवाद करवाकर चित्र सहित प्रकाशन करने की महत्वपूर्ण योजना बनाई। सन् 1992 में हमने सर्वप्रथम सचित्र श्री उत्तराध्ययन सूत्र हिन्दी-अंग्रेजी अनुवाद सहित प्रकाशित किया। इस प्रकाशन को पाठकों और विद्वान वर्ग ने भरपूर सराहा। अब निरन्तर 16 वर्षो के प्रयास से श्रुत सेवा के इस कार्य मे हम अपने लक्ष्य के निकट पहुँच रहे हैं। अब तक 21 सचित्र आगमों का प्रकाशन हो चुका है। इस वर्ष दो आगम ग्रन्थो का प्रकाशन हो रहा है— **श्री प्रश्नव्याकरण सूत्र** तथा **श्री भगवती सूत्र (भाग-3)**।

श्री प्रश्नव्याकरण सूत्र द्वादशागी का दसवाँ अंग सूत्र है। इस सूत्र मे पाँच आश्रव और पाँच सवरो का विस्तृत निरुपण किया गया है। इसके दो श्रुतस्कध हैं। प्रथम श्रुतस्कध मे पाँच आश्रवो—हिसा, मृषावाद, अदत्तादान, अब्रह्मचर्य और परिग्रह व द्वितीय श्रुतस्कध मे पाँच सवरो—अहिसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह का बहुत ही सांगोपाग वर्णन किया गया है।

हमारा यह परम सौभाग्य है कि परम श्रद्धेय स्व उत्तर भारतीय प्रवर्त्तक महास्थविर गुरुदेव **भण्डारी श्री पद्मचन्द्र जी म. सा.** के मगल आशीर्वाद से प्रवर्तक श्री अमर मुनि जी म सा आगम सेवा के इस महान् पुण्य कार्य मे हम सबको प्रेरणा और प्रोत्साहन प्रदान कर युग-युग तक चिरस्थायी रहने वाला ज्ञानदीप प्रज्वलित कर रहे हैं।

इन आगमो के प्रकाशन मे स्व श्री श्रीचन्द जी सुराना 'सरस' (सम्पादक) तथा श्री सुरेन्द्र बोथरा, जयपुर एव श्री राजकुमार जी जैन, दिल्ली (अग्रेजी अनुवादक) का सहयोग हमें हमेशा प्राप्त होता रहा। श्री श्रीचन्द जी सुराना के स्वर्गवास के पश्चात् उनके पुत्र युवा साहित्यकार श्री सजय सुराना भी पूरे मनोयोग से इस कार्य मे सहयोग प्रदान कर रहे हैं।

आगमो के सम्पादन एव प्रूफ सशोधन के गहन कार्य मे गुरुदेव प्रवर्त्तक श्री अमर मुनि जी म सा के शिष्य श्री वरुण मुनि जी भी एकाग्रता एव समर्पण भाव से अपनी सेवायें दे रहे हैं। चित्रकार डॉ त्रिलोक शर्मा ने इस आगम के चित्र बनाये हैं एव श्री वरुण मुनि जी ने इनका मार्गदर्शन किया है।

आगममाला का यह 22वाँ पुष्प सचित्र श्री प्रश्नव्याकरण सूत्र आपके हाथो मे पहुँचाते हुए हमे अति प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है। हमेशा की तरह इस बार भी उदार गुरु भक्तो ने मुक्त हृदय से अर्थ-सहयोग देकर अपने अर्जित धन का सदुपयोग किया। गुरु भक्ति और वीतराग वाणी के प्रति उनके इस धर्म अनुराग का हम हृदय से स्वागत करते हैं।

अन्त मे प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से इस कार्य से जुड़े सभी महानुभावो के हम हृदय से आभारी हैं। जिनके अथक परिश्रम से यह ग्रन्थ प्रकाशित होकर आपके हाथो मे पहुँच सका।

—महेन्द्रकुमार जैन
अध्यक्ष : पद्म प्रकाशन, दिल्ली

Publisher's Note

Best charity is the charity of knowledge Pondering over this statement, highly revered Pravartak Shri Amar Muni ji Maharaj launched the unique project of publishing the Jain *Agams*, the word of the Jina, after getting them translated in Hindi and English as well as including colourful illustrations As our first publication in this series we brought out *Illustrated Shri Uttaradhyayan Sutra* with Hindi-English translation in 1992 This book was amply lauded by common readers as well as scholars Now, after continued efforts of sixteen years we are approaching our goal in this mission of service to the scriptures Till date twenty-one illustrated *Agams* have been published In the current year we plan to add two more *Agam* works to this series — *Shri Prashna Vyakaran Sutra* and *Shri Bhagavati Sutra* (Volume-3)

Shri Prashnavyākaran Sutra is the tenth book of the corpus of 12 *Angas* (*Dvadashangi*) This book deals with the five *Ãsravas* (inflow of *karmas*) and five *Samvars* (blockage of the inflow of *karmas*) It has two sections (*Shrutskandh*) The first section contains detailed discussion on five *Ãshravas* – *Himsã* (violence), *Mrishãvãd* (falsity), *Adattãdãn* (taking without being given), *Abrahmacharya* (non-celibacy), and *Parigraha* (covetousness) The second section contains detailed discussion on five *Samvars* – *Ahimsã* (non-violence), *Satya* (truth), *Achaurya* (non-stealing), *Brahmacharya* (celibacy), and *Aparigraha* (non-covetousness)

Honouring the intense desire of and inspiration by late Gurudev Uttar Bharatiya Pravartak Bhandari Shri Padma Chandra Ji M this project was launched by Uttar Bharatiya Pravartak Shri Amar Muni ji M. We are fortunate that he continues to inspire and guide us in this pious mission of service to the Shrut, and thereby lighting the everlasting lamp of knowledge

We have been getting continued cooperation of contributing scholars like Shri Shrichand ji Surana 'Saras' (in editing), Agra, as well as Shri Surendra Kumar

ji Bothara, Jaipur; and Shri Rajkumar ji Jain, Delhi (in English translation) After the sad demise of Shri Shrichand ji Surana his son Shri Sanjay Surana, a young and budding author, has taken his place with all sincerity Pujya Gurudev's able disciple Shri Varun Muni shares, with all sincerity and devotion, the responsibility of the serious work of editing the *Agams* and proofreading Dr Trilok Sharma, a skilled artist, has made the illustrations of this *Agam*, like many others, under the guidance of Shri Varun Muni ji We are, indeed, indebted to them all

We are very happy to present this 22nd book, *Illustrated Shri Prashnavyākaran Sutra*, of the Illustrated *Agam* Series to our readers Many generous and devout guru-devotees have displayed their devotion for the Guru and scriptures through their financial contributions and meaningful utilization of their hard earned wealth We heartily laud and appreciate their gesture

In the end we express our sincere gratitude for all those directly or indirectly associated with the publication of this book and whose tireless hard work has made it possible to bring this book to you

Mahendra Kumar Jain
President Padam Prakashan

प्रस्तावना

काल के परिवर्तन के स्वभाव वाला यह भरत क्षेत्र अनत अवसर्पिणी और अनंत उत्सर्पिणीयों से गुजर रहा है। हर अवसर्पिणी और हर उत्सर्पिणी मे तीर्थकर भगवान ज्ञान की गंगा बहाते हैं। भव्य जीव इस गंगा में स्नान करके पवित्र होते हैं। ज्ञान, दर्शन, चारित्र की आराधना करते हैं और ससार से मुक्ति पाते हैं। तीर्थकर देवों के पश्चात् उनके मुख्य शिष्य गणधरो द्वारा ये परम्परा चलती रहती है। समय के परिवर्तन के साथ धीरे-धीरे ज्ञान का विच्छेद होता है, पुन: तीर्थकर प्रभु के मुखारविन्द से ज्ञान की गगा बहती है और ये परम्परा सदा-सर्वदा गतिमान रहती है।

वर्तमान अवसर्पिणी मे इस भरत क्षेत्र मे प्रथम तीर्थकर भगवान ऋषभदेव हुये और आज से करीब 2500 वर्ष पूर्व अतिम तीर्थकर भगवान महावीर स्वामी हुये। भगवान महावीर स्वामी के 11 गणधर थे। भगवान की उपस्थिति मे ही 9 गणधर मोक्ष पधार गये और भगवान के निर्वाण के साथ ही गौतम स्वामी को केवलज्ञान हुआ। फलत: श्री सुधर्मा स्वामी, जिन्हे उस समय केवलज्ञान नहीं हुआ था, भगवान महावीर के पाट पर प्रथम आचार्य के रूप मे विराजित किए गए। (तीर्थंकर के पाट पर केवली विराजमान नहीं होते, क्योकि सामान्य केवली के और तीर्थकर के केवलज्ञान मे कोई अतर नहीं होता तो वो "सुय मे आउम—हे आयुष्यमान ! मैंने भगवान से सुना है त्तिबेमि- वह मैं कहता हूँ, ऐसा नहीं कह सकते। फिर भगवान का शासन कैसे प्रवाहमान रहता ?) अत: आज हमारे पास श्रुत के रूप में जो भी ज्ञान है वह पचम गणधर श्री सुधर्मा स्वामी जी की ही देन है।

भगवान के श्री मुख से अर्थ रूप देशना प्रवाहित होती है, गणधर भगवन् द्वादशागी सूत्र के रूप मे इसका गुथन करते हैं। ये द्वादशागी इस प्रकार है—(1) आचाराग सूत्र, (2) सूत्रकृतांग सूत्र, (3) स्थानाग सूत्र, (4) समवायाग सूत्र, (5) व्याख्याप्रज्ञप्ति या भगवती सूत्र, (6) ज्ञाताधर्मकथाग सूत्र, (7) उपासकदशांग सूत्र, (8) अन्तकृद्दशांग सूत्र, (9) अनुत्तरोपपातिकदशाग सूत्र, (10) प्रश्नव्याकरण सूत्र, (11) विपाकसूत्र, और (12) दृष्टिवाद सूत्र।

भगवान के दो पाट तक तो द्वादशागी नियम से अखड रूप मे होती है। भगवान ऋषभदेव आदि तीर्थकरो के शासन मे जहाँ असंख्य पाट तक केवलज्ञान विद्यमान होता है, वहाँ द्वादशांगी भी असंख्य पाट तक पूर्ण रूप में हो सकती है पर जिन तीर्थंकर भगवान का शासनकाल छोटा होता है, जैसे भगवान पार्श्वनाथ का (250 वर्ष), वहाँ दो पाट तक तो द्वादशांगी परिपूर्ण रूप में अखंड होती है पर उसके बाद उसमे ज्ञान का शनै: शनै: विच्छेद होना प्रारम्भ हो जाता है। भगवान महावीर की 9वीं पाट परम्परा पर हुये आचार्य भद्रबाहु स्वामी तक 14 पूर्वों का ज्ञान विद्यमान था (14 पूर्व दृष्टिवाद

सूत्र का एक भाग है) उस समय वह ज्ञान गुरु द्वारा अपने शिष्यों-प्रशिष्यों को परम्परानुसार मौखिक रूप में दिया जाता था। जैन श्रमणों के आचार के कठोर नियम, श्रमणों की संख्या बल की कमी और बार-बार देश में पड़ने वाले दुर्भिक्षों के कारण कंठस्थ करने की यह धारा टूटती रही। इस स्थिति में जब आचार्यो ने देखा कि श्रुत का ह्रास हो रहा है और ज्ञान में अव्यवस्था आ रही है, तब उन्होंने एकत्र होकर श्रुत को व्यवस्थित करने का निर्णय किया। भगवान महावीर के निर्वाण के करीब 160 वर्ष पश्चात् पाटलीपुत्र में जैन श्रमण संघ एकत्रित हुआ। वहाँ एकत्रित हुये उन श्रमणों ने परस्पर आदान-प्रदान कर 11 अंगो को व्यवस्थित रूप प्रदान किया किन्तु उनमें से किसी को भी दृष्टिवाद या 14 पूर्वो का स्मरण नहीं था। (यद्यपि उस समय 14 पूर्वों के ज्ञाता आचार्य भद्रबाहु थे लेकिन वे 12 वर्षीय विशेष प्रकार की योग साधना में संलग्न थे और वे उस समय नेपाल में विराजित थे।) संघ ने दृष्टिवाद के 14 पूर्वो की वाचना के लिए अनेक संतों के साथ मुनि स्थूलभद्र को वहाँ भेजा। उनमें से दृष्टिवाद को ग्रहण करने में मुनि स्थूलभद्र ही समर्थ हुये। किन्तु 10 पूर्वो तक सीखने के बाद उन्होंने अपनी श्रुत-लब्धि का लौकिक दृष्टि से प्रयोग किया। जब यह बात आचार्य भद्रबाहु को ज्ञात हुई तो वो समझ गये कि मुनि स्थूलभद्र में ज्ञान के पाचन की वह पात्रता नहीं रही। अत: उन्होने वाचना देना बंद कर दिया। इसके बाद सघ के बहुत अनुनय, विनय, प्रार्थना करने पर उन्होंने शेष चार पूर्वों की केवल सूत्र वाचना ही दी, अर्थ वाचना नहीं दी। परिणाम यह हुआ कि सूत्र और अर्थ से 14 पूर्वों का ज्ञान आर्य भद्रबाहु तक और 10 पूर्व का ज्ञान आर्य स्थूलभद्र तक रहा। आचार्य भद्रबाहु के कालधर्म के साथ (अर्थात् वीर स 170) इस भरत क्षेत्र में श्रुत केवली परम्परा का विच्छेद हो गया। फिर 10 पूर्व की परम्परा आचार्य वज्र तक चली। आचार्य वज्र का कालधर्म वीर सं 584 मे हुआ। उसके बाद आर्य रक्षित हुये। आर्य रक्षित के बाद भी उत्तरोत्तर श्रुतज्ञान का ह्रास होता रहा और एक समय ऐसा आया जब पूर्वो के ज्ञान वाला कोई विशेषज्ञ नहीं रहा। इस घटना का समय वीर निर्वाण सं 1000 है।

नन्दी सूत्र की चूर्णि मे उल्लेख है कि बारह वर्षीय दुष्काल के कारण ग्रहण, गुणन और अनुप्रेक्षा के अभाव मे सूत्र कठस्थ करने वाले श्रमणो की सख्या कम होने लगी। अत: 12 वर्ष के दुष्काल के बाद स्कंदिल आचार्य के नेतृत्व मे साधु संघ मथुरा में एकत्रित हुआ और जिसको जो याद था उसका परिष्कार करके सूत्रों को व्यवस्थित किया गया। इसे माथुरी वाचना कहा जाता है। इसी काल में वल्लभी में नागार्जुन आचार्य ने श्रमण सघ को एकत्रित करके आगमों को व्यवस्थित करने का प्रयत्न किया तथा विस्मृत स्थलों (पाठों) की पूर्वापर सम्बन्ध के अनुसार संशोधित करके वाचना दी गई। इसे वलभी वाचना कहा जाता है। इन दोनों वाचनाओं का काल वीर सं 830-840 के आसपास का माना जाता है।

उपर्युक्त वाचनाओं के करीब 150 वर्ष बाद पुन: वलभी नगर में श्रमण संघ इकट्ठा हुआ और उस समय 'पूर्व ज्ञान' वाले अंतिम आचार्य देवर्धिगणी क्षमाश्रमण के नेतृत्व में दोनों वाचनाओं का समन्वय किया गया और जहाँ तक हो सका अंतर दूर कर एकरूपता लायी गई। दोनों वाचनाओं में जो महत्वपूर्ण

भेद थे उन्हें पाठांतर के रूप में दिया गया और आगमो को लिपिबद्ध करने का निर्णय लिया गया। इस तरह आगमों को ताडपत्र पर लिपिबद्ध करने का ये महान कार्य वीर नि सं 980-993 में सम्पन्न हुआ।

वर्तमान में जो आगम उपलब्ध हैं उनका अधिकाश भाग इसी समय में स्थिर हुआ ऐसा कहा जा सकता है। नदीसूत्र मे दी गई सूची से स्पष्ट होता है कि उक्त लेखन के बाद भी आगमो का ज्ञान कुछ न कुछ रूप में विलुप्त होता रहा है। भगवान महावीर के उपदेश विक्रम पूर्व 500 मे मुखरित हुए, अत: किसी भी आगम की रचना उससे पहले की संभव नहीं है और अंतिम वाचना के आधार पर इनका लेखन विक्रम सं 510-523 (वीर सं 980-993) में हुआ। अत: यह समय मर्यादा ही आगम रचना का काल है, ऐसा मानना ही अधिक युक्तिसंगत जान पड़ता है।

इस काल मर्यादा को ध्यान में रखकर अब हम प्रस्तुत सूत्र प्रश्नव्याकरण पर विचार करेंगे।

प्रश्नव्याकरण सूत्र द्वादशांगी में 10वाँ अगसूत्र है। इसका स्थान अगप्रविष्ट श्रुत मे है। समवायाग सूत्र और नन्दी सूत्र तथा अनुयोगद्वार सूत्र में प्रश्नव्याकरण के लिए '**पण्हावागरणाइं**' के रूप मे बहुवचन का प्रयोग है, जिसका सस्कृत रूप '**प्रश्नव्याकरणानि**' होता है। वर्तमान मे उपलब्ध प्रश्नव्याकरण सूत्र के उपसहार मे एक वचन का ही प्रयोग है—'**पण्हावागरणे।**' तत्त्वार्थस्वोपज्ञभाष्य मे भी '**प्रश्नव्याकरणम्**' इस प्रकार एकवचनान्त का ही प्रयोग है। दिगम्बर परम्परा के धवला तथा राजवार्तिक आदि ग्रन्थों में भी एकवचनान्त '**पण्हवायरणं**' '**प्रश्नव्याकरणम्**' प्रयोग ही प्रचलित है। 'स्थानाग' सूत्र के दशम स्थान मे प्रश्नव्याकरण का नाम '**पण्हावागरणदसा**' बतलाया है, जिसका सस्कृत रूप टीकाकार आचार्य अभयदेव ने '**प्रश्नव्याकरणदशा**' किया है। परन्तु यह नाम अन्यत्र अधिक प्रचलित नहीं हो पाया।

प्रश्नव्याकरण यह समासयुक्त पद है। इसका अर्थ होता है प्रश्नो का व्याकरण अर्थात् *निर्वचन उत्तर एव निर्णय*। यहाँ 'प्रश्न' शब्द सामान्य प्रश्न के अर्थ मे नहीं है। इसमे किन प्रश्नों का व्याकरण किया गया था, इसका परिचय दिगम्बर परम्परा के धवला आदि ग्रंथो में एव श्वेताम्बर परम्परा के स्थानाग, समवायाग और नन्दीसूत्र में मिलता है। 'प्रश्न' शब्द मत्रविद्या एव निमित्त शास्त्र आदि के विषयविशेष से सम्बन्ध रखता है। प्राचीन परम्परा के अनुसार विचित्र विद्यातिशय अर्थात् चमत्कारी प्रश्नो का व्याकरण जिस सूत्र मे वर्णित है, वह प्रश्नव्याकरण है। वर्तमान मे उपलब्ध प्रश्नव्याकरण में तो ऐसी कोई चर्चा उपलब्ध नहीं होती है। अत: यहाँ प्रश्नव्याकरण का यदि सामान्यत: विचार चर्चा रूप 'जिज्ञासा' अर्थ किया जाए तो अधिक उपयुक्त रहेगा। अहिंसा-हिंसा एव सत्य-असत्य आदि धर्माधर्मरूप विषयो की चर्चा जिस सूत्र मे है, वह प्रश्नव्याकरण है। इस दृष्टि से वर्तमान में उपलब्ध प्रश्नव्याकरण सूत्र के नाम की सार्थकता परिलक्षित होती है।

स्थानाग में प्रश्नव्याकरण के 10 अध्ययनो का उल्लेख है। जो क्रमश: इस प्रकार है—उपमा, संख्या, ऋषिभासित, आचार्यभाषित, महावीरभाषित, क्षौमकप्रश्न, कोमलप्रश्न, अद्दागप्रश्न, अंगुष्ठप्रश्न और बाहुप्रश्न। समवायांग और नंदीसूत्र में बताया गया है कि प्रश्नव्याकरण में 108 प्रश्न, 108 अप्रश्न, 108 प्रश्नाप्रश्न है। अंगुष्ठ प्रश्न, बाहुप्रश्न, दर्पणप्रश्न आदि विचित्र विद्यातिशयों के वर्णन हैं। **नागकुमारों व सुवर्णकुमारों की संगति के दिव्य संवाद** हैं। 45 अध्ययन, 45 उद्देशन काल, 45 समुद्देशन काल, संख्यात हजार पद हैं।

लेकिन वर्तमान में उपलब्ध प्रश्न व्याकरण मे ऐसी कोई चर्चा नहीं है। वर्तमान प्रश्नव्याकरण सूत्र मे नये विषय लेने का प्रयोजन कदाचित् भावी अहित की आशका से किसी सुविज्ञ अनुभवी आचार्य ने मन्त्रादिक विषयक प्रश्नो को छोडकर केवल **पाँच आश्रव** और **पाँच संवर** का विषय प्रतिष्ठापित कर दिया है। वर्तमान विषय वास्तव मे आत्महित मे अत्यन्त उपयोगी है। पाप के स्वरूप को समझकर त्याग करना ही आत्मोत्थान का प्रधान विषय है। अन्य किसी मूल-सूत्र मे इस विषय का इतना विशद विवेचन नहीं है। आश्रव और संवर ही हेय और उपादेय के रूप मे जैन साधना के केन्द्र बिन्दु हैं। जो भावत: तीर्थकरो द्वारा प्रतिपादित होने के कारण परम्परा से चले आ रहे हैं। इसके सम्बन्ध मे वृत्तिकार अभयदेव सूरि लिखते हैं—"इस समय का कोई अनधिकारी मनुष्य चमत्कारिक विद्याओं का दुरुपयोग न करे इस दृष्टि से वे विद्याये इस सूत्र में से निकाल दी गई और केवल आश्रव और संवर का समावेश कर दिया गया।" आचार्य जिनदास महत्तर ने शक सवत् 500 की समाप्ति पर नन्दीसूत्र पर चूर्णि की रचना की है। उसमे सर्वप्रथम वर्तमान प्रश्नव्याकरण के विषय से सम्बन्धित पाँच सवर आदि का उल्लेख है। इसका अर्थ यह है कि शक सवत् 500 से पूर्व ही प्रस्तुत प्रश्नव्याकरण सूत्र का निर्माण एव प्रचार-प्रसार हो चुका था और उसे अग साहित्य मे मान्यता मिल चुकी थी। अब हम प्रश्नव्याकरण सूत्र के विषयो पर थोड़ा प्रकाश डालेगे।

वर्तमान प्रश्नव्याकरण सूत्र का विषय—

प्रस्तुत प्रश्नव्याकरण सूत्र में दो श्रुतस्कध हैं। प्रथम स्कध मे हिसा आदि पॉच आश्रवो का और द्वितीय स्कध मे अहिसा आदि पाँच सवरो का वर्णन है। आश्रवो और पाँच सवरो के 5-5 द्वार हैं।

प्रथम श्रुतस्कध के पाँचों द्वारो मे जम्बूस्वामी की पृच्छा के माध्यम से इसे पाँच-पाँच प्रश्नो में विभाजित किया गया है। जैसे कि प्रथम आश्रवद्वार **हिंसा** में—1 हिंसा-प्राणवध का स्वरूप क्या है? 2 प्राणवध के पर्यायवाची कौन-कौन से नाम हैं? 3 किन पापी जीवों द्वारा वह किया जाता है? 4 किस प्रकार किया जाता है? 5. इसका फल क्या है? इन पाँच प्रश्नों के द्वारा हिंसा आश्रव का मार्मिक और विस्तृत चित्रण किया गया है। इसी तरह **असत्य, चौर्य, अब्रह्मचर्य** और **परिग्रह** आश्रव का पाँच प्रश्नों द्वारा विस्तृत वर्णन किया गया है।

द्वितीय श्रुतस्कंध में **अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह** के स्वरूप का और उनके सुखद फलों का सविस्तार निरुपण किया गया है।

प्रथम संवरद्वार अहिंसा में अहिंसा भगवती का स्वरूप, इसके पर्यायवाची नाम, किन महापुरुषो द्वारा ये की जाती है और अहिसा वृत्ति को सम्पन्न बनाने में कारण-भूत पाँच भावनाये—इन विषयो के द्वारा अहिंसा भगवती का सर्वांगीण चित्रण किया गया है।

सत्य रूप द्वितीय संवरद्वार में विविध प्रकार के सत्यों का वर्णन किया है। सत्य बोलने वालो को वाणी मर्यादा और शालीनता का ध्यान रखने का निर्देश दिया गया है। **तीसरे अचौर्य संवरद्वार** में अचौर्य सबधित अनुष्ठानो का वर्णन किया गया है। इसमें अस्तेय की स्थूल से लेकर सूक्ष्म तक व्याख्या की गई है। **चौथे ब्रह्मचर्य संवरद्वार** में ब्रह्मचर्य के गौरव का प्रभावशाली शब्दों में विस्तार से निरुपण एव इसकी साधना करने वालो के सम्मानित होने का प्ररुपण किया गया है। ब्रह्मचर्य विरोधी प्रवृत्तियो का भी उल्लेख किया है और यह बताया गया है कि ये प्रवृत्तियाँ ब्रह्मचारी साधक को साधना से पतित करने मे कारणभूत बनती हैं।

पाँचवे और अंतिम **अपरिग्रह संवरद्वार** मे अपरिग्रह वृत्ति के स्वरूप, तद्विषयक अनुष्ठानों और अपरिग्रह व्रतधारियो के स्वरूप का वर्णन है। इसकी पाँच भावनाओं के वर्णन मे सभी इद्रियजन्य विषयों के त्याग का संकेत किया गया है।

इस प्रकार से प्रस्तुत सूत्र का प्रतिपाद्य विषय पाँच आश्रवो और पाँच सवरो का निरुपण है। भव्य जीव इन आश्रवो को जाने और उनका त्याग करें तथा इन सवरों को जाने और उसकी आराधना करें और कर्म मल से मुक्त होकर आत्मा के शुद्ध स्वरूप, सिद्ध दशा को प्राप्त करें।

प्रस्तुत संस्करण सचित्र क्यों ?

प्रस्तुत सचित्र आगमो को पढते-पढ़ते कई बार पाठको के मन मे यह जिज्ञासा उठती है कि स्थानकवासी आगमो के प्रकाशन मे कभी चित्र सहित आगम प्रकाशित नहीं किये गये। फिर ये चित्र की परम्परा क्यों ?

इसके उत्तर मे हम सिर्फ यही कहेगे कि एक ही बात को कई बार कहने पर भी वह हमारे मन-मस्तिष्क पर उतना प्रभाव नहीं डालती जितना प्रभाव चित्र को सिर्फ एक बार देखने से पडता है। **आगम ज्ञान का विषय इतना गहन है कि वह आसानी से ग्राह्य नहीं है।** अत: आगम के भावो को लोगो के हृदय तक ले जाने के लिए हम यह सस्करण सचित्र बनाकर साधारण ज्ञान रखने वाले व्यक्तियो के लिए भी उपयोगी बना रहे हैं। हमें विश्वास है कि आगम के ज्ञान की जो बातें लोग आसानी से नहीं समझ पाते, वो चित्रो के माध्यम से जरूर समझ पायेंगे। जब भी इस आगम का नाम या इसका विषय लोगों के सामने आयेगा तो तुरन्त उसके चित्र उनके मानस पटल पर उभर आयेगे और वीतराग श्री तीर्थंकर भगवान द्वारा आगम में फरमाई गई बातों का मर्म वे आसानी से ग्रहण कर सकेंगे।

आगमों का अंग्रेजी भाषांतर क्यों ?

वैश्वीकरण (Globalisation) के इस युग मे हर व्यक्ति की यह धारणा बन गई है कि "अंग्रेजी पढने-समझने वाला व्यक्ति ही आगे जाकर सफल हो सकता है।" इस मान्यता से संस्कृत, प्राकृत तो ठीक, पर हमारी मातृभाषा भी मृत प्राय: स्थिति में आ गई है। जब प्राकृत, सस्कृत या हिन्दी-पजाबी का अक्षर ज्ञान ही नहीं रहेगा तो हम आने वाली पीढियों को आगम ज्ञान से परिचित कैसे करवायेंगे ?

जैसा कि आपको विदित है कि जब हमारा प्राकृत-संस्कृत का ज्ञान अल्प हुआ तो हमारे पूर्वजों ने हिन्दी भाषांतर देकर आगमों के ज्ञान का अमृत हमें पिलाया और अब जबकि हमारे युवकों को हिन्दी का अक्षर ज्ञान कम होता जा रहा है और अंग्रेजी भाषा के प्रति ही उनका रुझान बढ़ रहा है तो हमारा कर्त्तव्य है कि हम आगमों का अग्रेजी अनुवाद करके आगम-अमृत को अपनी नई पीढ़ी तक पहुँचाएँ और उन्हें अमर बनने का मार्ग दिखायें। इसी के साथ जो अहिंदी भाषी विदेशी जिज्ञासुजन हैं, वे भी इस माध्यम द्वारा जिनवाणी से लाभान्वित हो सके।

आगम सम्पादन के महत्वपूर्ण कार्य का निर्वहन करने मे पूज्य गुरुदेव उत्तर भारतीय प्रवर्तक भण्डारी श्री पद्मचन्द्र जी म की प्रेरणा, प्रोत्साहन तथा आशीर्वाद सदा मेरे साथ रहा है। वास्तव मे तो उन्हीं की कृपा से यह अत्यन्त गुरुतर कार्य भी सहज ही सम्पादित हो रहा है। गुरुजनो का आशीर्वाद पग-पग पर हमारा सम्बल व मार्गदर्शक बना हुआ है।

प्रश्नव्याकरण सूत्र के सम्पादन में मेरे शिष्य वरुण मुनि जी व स्व श्री श्रीचन्द जी सुराना 'सरस' के सुपुत्र श्री सजय सुराना का आत्मीय सहयोग विशेष रूप से रहा है।

प्रश्नव्याकरण सूत्र के अंग्रेजी अनुवाद का महत्त्वपूर्ण दायित्व निभाया है आगमों के विशेष अभ्यासी, गृहस्थ में साधु वृत्ति जैसी जीवन यात्रा करने वाले विद्वान विचारक सुश्रावक श्री राजकुमार जी जैन ने। साथ ही श्री सुरेन्द्र बोथरा जी ने भी अंग्रेजी अनुवाद कार्य का पुनरीक्षण कर आवश्यक सशोधन आदि किये हैं, इन सभी को हार्दिक साधुवाद।

पूज्य गुरुदेव की कृपा से आगम सेवा करने वाले गुरुभक्तो ने इस प्रकाशन मे हर वर्ष की भाँति दिल खोलकर अपना सहयोग दिया है। उनके सहयोग के बल पर ही संस्था यह व्ययसाध्य प्रकाशन कर रही है।

इस प्रकार इस कार्य मे जिन-जिन सहृदयों का प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष सहयोग प्राप्त हुआ है, मैं उन सबके प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करता हूँ।

—प्रवर्त्तक अमर मुनि

Preface

With its ever-changing nature this Bharat Area passes through infinite progressive and regressive cycles of time. Each progressive and regressive cycle has different set of *Tirthankars*, the supreme souls. They are the sources of the streams of knowledge in which worthy beings dip and gain purity. Those worthy of liberation tread the path of right knowledge-faith-conduct to reach their goal of liberation. After the nirvana of a *Tirthankar* his chief disciples, *Ganadhars* carry his tradition. With passage of time the treasure of this knowledge undergoes decline and becomes extinct. Then comes a new *Tirthankar* and a new source of knowledge and this goes on.

The current regressive cycle of time saw Rishabhadev as the first *Tirthankar*. About 2500 back came the last *Tirthankar* Bhagavân Mahavir Swami. Bhagavân Mahavir had eleven *Ganadhars*, nine of whom attained liberation during his lifetime. Gautam Swami attained *Keval Jnana* (omniscience) immediately after *Bhagavãn*'s own nirvana. Thus Sudharma Swami was the only *Ganadhar* left as a *chhadmasth* (one who is short of omniscience due to residual *karmic* bondage), and he became the first head of the order after Bhagavân Mahavir. (A *Kevali* does not lead the order after the *Tirthankar* because there is no difference in the level of omniscience of a *Tirthankar* and a *Kevali*. Therefore he, as a rule, does not quote the *Tirthankar* by saying, "I say as I have listened from *Bhagavãn*." A *Kevali* would say only what he has himself realized and that would end the order established by the *Tirthankar*.) As such whatever knowledge we have today in the form of *Shrut* (the sermon of Bhagavãn Mahavir) is in the form of discourse of Sudharma Swami, the fifth *Ganadhar*. Whatever *Bhagavãn* conveys as essence (*artha*) through his utterance is compiled and organized by *Ganadhars* as *Sutra* (canon) in twelve parts (*Dwadashangi*). They are — (1) *Ăchãrãnga Sutra*, (2) *Sutrakritãnga Sutra*, (3) *Sthãnãnga Sutra*, (4) *Samvãyãnga Sutra*, (5) *Vyãkhyãprajnapti* or *Bhagavati Sutra*, (6) *Jnãtãdharmakathãnga Sutra*, (7) *Upãsakdashãnga*

Sutra, (8) *Antakriddashānga Sutra*, (9) *Anuttaraupapātik Dashānga Sutra*, (10) *Prashnavyākaran Sutra*, (11) *Vipāka Sutra*, and (12) *Drishtivāda Sutra*.

In case of *Tirthankars* with a very long lineage of omniscients as well as a long period of influence, like Rishabhdev, this twelve-limbed canon remains intact for innumerable generations of heads of the order, as a rule However, where the period of influence is short, like that of Bhagavān Parshvanath (250 years), the twelve-limbed canon remains intact only up to the second generation of heads of the order, after which the decline starts In case of Bhagavān Mahavir the knowledge of fourteen *Purvas* (subtle canons, a portion of *Drishtivād Sutra*) was intact till Bhadrabahu Swami, the 9th head of the order in Bhagavān Mahavir's lineage During that period the oral tradition prevailed and the disciples memorized the texts This tradition of memorizing the canons underwent a continuous decline due to dwindling numbers of Jain ascetics caused by recurring periods of famine combined with the strict code of conduct of Jain ascetics During one such period of famine in the eastern parts of the country the religious organization broke and Jain ascetics scattered far and wide Looking at this disorganization and the consequent decline in the corpus of knowledge, the *Āchāryas* (heads of the groups) decided to come together and reorganize the system It was in Patliputra that the whole organization of ascetics assembled sometime around 160 ANM (After Nirvana of Mahavir) After intense mutual consultations and deliberations the assembled ascetics could reorganize only eleven of the twelve limbs because none of them could recall *Drishtivād Sutra* completely including the 14 *Purvas* Although Āchārya Bhadrabāhu, an expert of 14 *Purvas* lived, he was busy in some higher yoga practices in Nepal The *Sangh* (religious organization) sent many ascetics including Sthulibhadra to Āchārya Bhadrabāhu for discourses on the 14 *Purvas* of *Drishtivād* Only Sthulibhadra was prodigious enough to start acquiring this knowledge However, after learning 10 *Purvas* Sthulibhadra could not contain himself and used the miraculous powers he had acquired When Āchārya Bhadrabāhu came to know of this he realized that Sthulibhadra lacked the capacity to contain himself once he acquired special powers Consequently he terminated his discourses After much request and beseeching Sthulibhadra was given the text and not the meaning of the remaining four *Purvas* As such the com-

plete knowledge of the text and the meaning of the 14 *Purvas* was available till Ãchãrya Bhadrabãhu That of 10 *Purvas* continued up to Ãchãrya Sthulibhadra In other words the lineage of *Shrut Kevalis* got terminated with the death of Ãchãrya Bhadrabãhu (170 ANM) After this the lineage of scholars of 10 *Purvas* (*Dash Purvadhar*) continued till Ãchãrya Vajra, who died in 584 ANM He was followed by Ãchãrya Ãryarakshit and the decline of the treasure of knowledge continued A time came when the knowledge of the *Purvas* was completely lost That was in 1000 ANM

It is mentioned in the commentary (*Churni*) of *Nandi Sutra* that after a famine lasting 12 years the capacity to learn, memorize and contemplate drastically declined This resulted in a paucity of ascetics who could memorize the scriptures In response to this the ascetic organization assembled in Mathura under the leadership of Ãchãrya Skandil They compiled, corrected, edited and organized all the scriptures each one of them remembered This is called the Mathuri Vãchanã (Mathura Recitation) Around the same time another such attempt was made at Vallabhi by Ãchãrya Nagarjuna, who tried to restructure the texts on the basis of establishing textual continuity This is known as the Vallabhi Vãchanã The period of both these religious councils is believed to be somewhere around 830 to 840 ANM

About 150 years after these two religious councils the ascetic organization (*Shraman Sangh*) assembled once again in Vallabhi Under the leadership of Arya Devardhigani Kshamãshraman the aforesaid two recitations were compared and differences were removed as far as possible Wherever there were significant and important differences they were accepted and included as variant readings It was also decided that from memory all these text be transferred to palm leaves This great mission of writing was accomplished around 980 to 993 ANM

It can be said that a major portion of the *Agamic* literature available today crystallized during that period However, even after the written tradition started, some portions of the *Agamic* knowledge kept on getting lost This is evident from the list mentioned in *Nandi Sutra* Bhagavãn Mahavir gave his sermon around 500 BV (Before the Vikram era), as such, creation of any book of canon before that is out of question According to the last reciting the writing of the

Agams was done around 510-523 BV (980 to 993 ANM) Thus the period between these two dates has to be accepted as the period of creation of the *Agams*.

Keeping this periodicity in mind I will now discuss about this *Agam*, *Shri Prashnavyãkaran Sutra*

Prashnavyãkaran Sutra is one of the *Anga Sutras* (*Angapravishta*, part of the 12 limbed-corpus called *Dwadashangi*) It is the tenth *Anga* (limb) In *Samvãyãnga*, *Nandi* and *Anuyogadvãr Sutras* its name has the plural ending – *Panhãvãgaranãim* Its Sanskrit transliteration is *Prashnavyãkaranãni* In the conclusion of the *Prashnavyãkaran Sutra* available today the singular ending is found – *Panhãvãgarane* The same singular ending – *Prashnavyãkaranam* – is also found in the auto-commentary of *Tattvãrtha Sutra Dhavalã*, *Rãjavãrtika* and other scriptures of the Digambar tradition too have this singular ending – *Panhavãyaranam* or *Prashnavyãkaranam* In the tenth Sthãn of the *Sthãn Anga Sutra* its name is mentioned as *Panhãvãgaranadasã* Commentator Ãchãrya Abhayadeva Suri has transliterated it in Sanskrit as *Prashnavyãkaranadashã* However this name did not find acceptance anywhere else

Prashnavyãkaran is a compound word It means the grammar (*vyãkaran*) of questions (*prashna*), which in turn means answer, interpretation and conclusion Here the term question has not been used for ordinary questions Indication of which questions it deals with is found in *Dhavalã* and other Digambar scriptures as well as *Sthãnãnga*, *Samvãyãnga* and *Nandi Sutras* of the Shvetambar tradition The term *prashna* is specially associated with the topics of mantra science and augury Thus according to the ancient tradition the book that contains explanations about questions related to miracles and the supernatural is called *Prashnavyãkaran* However, the book available today has nothing of that sort Therefore in present context it would be proper to interpret it as explanation about normal curiosity and questions That means the book that contains answers of questions related to violence, non-violence, truth, falsity and other such religious and non-religious themes is called *Prashnavyãkaran*

Sthãnãnga Sutra mentions that there are ten chapters in *Prashnavyãkaran* — *Upamã* (allegory), *Sankhyã* (numbers), *Rishibhãshit* (sermon of sages),

Āchāryabhāshit (sermon of teachers), *Mahavir-bhāshit* (sermon of Mahavir), *Kshaumak Prashna, Komal Prashna Addāg Prashna, Angushtha Prashna,* and *Bāhu Prashna* (these are questions related to specific esoteric topic related topic) According to *Samvāyānga* and *Nandi Sutras* it has 108 *Prashnas* (questions), 108 Aprashnas (non-questions) and 108 *Prashna-aprashnas* (question-non-questions) It has discussions about strange miraculous powers including *Angushtha Prashna, Bāhu Prashna* and *Darpan Prashna* It also contains divine dialogues from congregation of divine beings like Nāg Kumārs and Suparna Kumārs It has countable thousand verses divided into 45 *Adhyayans*, 45 *Uddeshan Kāls* and 45 *Samuddeshan Kāls*

However, the text of the *Prashnavyākaran* available presently has nothing of all this Most probably some senior and experienced *Āchārya*, apprehensive of future misuse and harm, replaced all these questions about mantras with those related to five *Āshravas* (inflow of *karmas*) and five *Samvars* (blockage of the inflow of *karmas*) The existing contents are, in fact, spiritually very useful The basic process of spiritual uplift is to understand the form and action of sin and then refrain from indulgence in it No other basic scripture contains such detailed elaboration The central theme of Jain spiritual endeavour is avoiding the inflow of *karmas* (*Āshrava*) and working towards the blockage of this inflow (*Samvar*) Being propagated by the *Tirthankar*, these two form the essential part of the tradition In this context commentator (*Vritti*) Abhayadev Suri says – "With the view that some incompetent person could misuse the miraculous powers discussed (in this scripture), those subjects have been replaced by the topics of *Āshrava* and *Samvar*" *Āchārya* Jinadas Mahattar wrote a commentary (*Churni*) on *Nandi Sutra* in 500 Shaka It includes five *Samvars* and other themes of the current text of *Prashnavyākaran Sutra* This indicates that the existing text of *Prashnavyākaran Sutra* had already been written and popularized before 500 Shaka It was also accepted within the *Anga* corpus I will briefly discuss the subject matter of this available version of *Prashnavyākaran Sutra*

The subject matter of the existing *Prashnavyākaran Sutra*

In the present *Prashnavyākaran Sutra* there are two sections (*Shrut Skandh*) The first one discusses five *Āshravas* (inflow) including violence

(*himsā*) and the second one details the five *Samvars* (blockage) including *Ahimsā*. One chapter each has been devoted to the detailed discussion of these ten doors (of *Āshrava* and *Samvar*)

In the first section each of the five doors (of *Āshrava*) has been divided into five questions by Jambu Swami and their answers For example the questions about violence in the first door are — 1 What is the definition of violence (killing)? 2 What are the synonyms of killing? 3 Which sinners indulge in it? 4 How that is done? And 5 What are the fruits (consequences)? With answers to these five questions a touching and detailed picture of violence has been presented In the same way falsity (*asatya*), stealing (*chaurya*), non-celibacy (*abrahmacharya*) and covetousness (*parigraha*) have been presented in details

Second section contains similar detailed discussion of *Ahimsā*, Truth (*satya*), non-stealing (*achaurya*), celibacy (*brahmacharya*) and non-covetousness (*aparigraha*) and their happy consequences

In the first *Samvar Dvār* (door of blockage of inflow of *karmas*), *Ahimsā*, first of all its definition has been given It is followed by its synonyms, which great persons follow it and the five sentiments (*bhāvanā*) that enhance and enrich the attitude of *ahimsā* With these details a comprehensive description of *ahimsā* has been presented

In the second door of blockage, truth, various kinds of truth have been presented Besides this it has been advised to ensure discipline and grace in speech In the third door of blockage, non-stealing, rituals related to non-stealing have been described along with gross and subtle elaborations of non-stealing In the fourth door of blockage, celibacy, the importance and glory of celibacy have been lucidly detailed along with the glorification of its observers Besides this, anti-celibacy attitudes have also been specified as they are the causes of possible transgression by the aspirant

The fifth and the last door of blockage, non-covetousness, details the attitude of non-covetousness, associated activities, and description of the followers of the vow of *aparigraha* In its five sentiments it has been advised to renounce all sensual indulgences

Thus the subject matter of this *Sutra* is — expounding five *Ãshrava*s and five *Samvar*s The worthy may know these *Ãshrava*s and renounce them The worthy may know these *Samvar*s and practice them Thereby they rid themselves of the dirt of *karma*s and attain the purest condition of soul to reach the state of perfection (*Siddha*)

Why illustrations?

In the Sthanakavasi sect *Agam*s were never published with illustrations Why this new tradition?

The answer to this question is that even after hearing about a concept hundred times it is not possible to grasp a clear picture, whereas just one look at an illustration does that Listening and reading does not leave a lasting impression on the mind but seeing a picture does that more effectively The knowledge of *Agam*s is so profound and complex that it cannot be grasped easily For this reason we have published this illustrated edition with the purpose of bringing the spirit of *Agam*s within easy reach of our readers and making the scriptures useful even for the common readers I am confident that with the help of the illustrations our readers will be able to understand the complex topics of *Agam*s that are otherwise difficult to grasp One attentive reading and viewing will help the reader recall the picture related to any theme whenever they hear about it once again They will be able to understand better what the preceptor has conveyed in the *Agam* Thus these illustrated publications are the best medium for carrying the message of *Agam*s to masses

Why the English translation?

In this age of globalization it is a popular belief that only with the knowledge of English language can one pursue his goal of happiness What to say of classical languages like Sanskrit and Prakrit when even the mother tongue is heading towards extinction due to this mindset The children of Hindi speaking people cannot read Hindi properly The children of Punjabi speaking people are not at ease with Punjabi script and language Where can I express the agony of such wide spread apathy for the mother tongue? When the knowledge of the Prakrit, Sanskrit, Hindi or Punjabi scripts and languages will dwindle how will we pass on the knowledge of *Agam*s to the future generations?

Knowledge of scriptures should be saved at any cost No matter what, we have to pass on the contents of *Agam*s to the next generation When the popularity of Sanskrit and Prakrit faded our ancestors gave us the ambrosia of *Agam*s through Hindi So now when the youth of today is more at ease with English than Hindi, it becomes our duty to use English translation for carrying the pious message of *Agam*s to them and show them the path to immortality

My preface would not be complete without the pious remembrance of my revered teacher Uttar Bharatiya Pravartak Gurudev Bhandari Shri Padmachandra ji M S who always inspired me to pursue the service to the Shrut (*Agam*s) Whatever I have achieved and whatever I am presently doing is the fruit of his kindness and blessings The blessings of my Gurus have provided me guidance and support at every step

My able disciple Shri Varun Muni and late Shri Shrichand ji Surana's son Shri Sanjay Surana have assisted me with all sincerity and devotion in editing this edition of *Prashnavyākaran Sutra*

Shri Rajkumar ji Jain, a scholar of *Agam*s who leads an ascetic-like life as a householder, has done the English translation of this *Agam* Shri Surendra Kumar ji Bothara has carefully gone through the English translation and made the required changes My heartfelt thanks to them all

Due to blessings of revered Gurudev, generous devotees have extended their cooperation and contributions to this pious and cost intensive project of publishing Illustrated *Agam*s

I convey my thanks and commendations to all those who have directly or indirectly co-operated in this mission

—Amar Muni
(Uttar Bharatiya Pravartak)

अनुक्रमणिका

CONTENTS

प्रथम श्रुत स्कन्ध : आस्रवद्वार

First Volume (Shrut-skandh) : GATEWAYS OF AASRAWA

द्वितीय श्रुत स्कन्ध : संवरद्वार

Second Volume (Shrut-skandh) : GATEWAYS OF SAMVAR

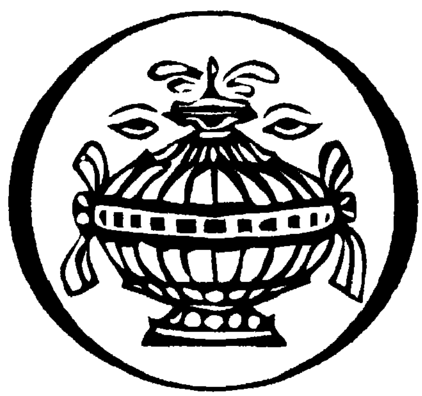
सचित्र प्रश्नव्याकरण सूत्र

प्रथम श्रुतस्कंध : आस्रवद्वार

ILLUSTRATED

PRASNAVYAKARAN SUTRA

First Volume : GATEWAYS OF AASRAWA



आस्रवद्वार
AASRAVA DVAAR

प्रथम अध्ययन : हिंसा
FIRST CHAPTER · VIOLENCE

१. जंबू ! इणमो अण्हय-संवर विणिच्छयं, पवयणस्स णिस्संदं।
वोच्छामि णिच्छयत्थं, सुभासियत्थं महेसीहिं॥१॥

पचविहो पण्णत्तो, जिणेहिं इह अण्हओ अणाईओ।
हिंसामोसमदत्तं अब्बंभपरिग्गहं चेव॥२॥

जारिसमो जं णामा, जह य कओ जारिसं फलं देइ।
जे वि य करेति पावा, पाणवहं तं णिसामेह॥३॥

१. आर्य सुधर्मा स्वामी अपने शिष्य जम्बू स्वामी से कहते है-जम्बू ! आस्रव और सवर को भलीभाँति जानने और समझने के लिए यह सूत्र सम्पूर्ण जिन प्रवचन का साररूप है अर्थात् जिन प्रवचन का निचोड है। दोनो तत्त्वो का सम्यक् निश्चय करने के लिए महर्षियो-तीर्थकरो एव गणधरो आदि के द्वारा यह समीचीन रूप से कहा गया है।

जिनेश्वर देव ने इस जगत् मे अनादि आस्रव के पाँच प्रकार बताये है-(१) हिंसा, (२) असत्य, (३) अदत्तादान, (४) अब्रह्म, और (५) परिग्रह (मूर्च्छा-ममत्व)॥ २॥

प्राणवधरूप प्रथम आस्रव है। वह जैसा है, उसके जो-जो नाम है, जिन पापी प्राणियो द्वारा वह जिस रूप मे, जिस प्रकार किया जाता है और जैसा-(दु खमय) फल प्रदान करता है, उन सबको तुम सुनो॥ ३॥

1. Reverend Sudharma Swami tells his disciple Jambu Swami—O Jambu ! This text is the very essence of entire teaching of the omniscient in order to properly understand the inflow of Karma (Aasrava) and the stoppage of the said inflow (Samvar). In other words it is the gist of the sermon of the Jina It is lucidly said by the great sages-Tirthankars and the Ganadhars in order to explain in detail the two essentials.

The omniscient has laid down that Aasrava which has been in existence since beginningless period is of five types namely—(i) violence, (ii) falsehood, (iii) stealing, (iv) non-chastity, and (v) covetousness (parigraha)

The first type of Aasrava is in the form of causing violence to the life force Now you listen its different names, the way it is committed by the ignoble, and its consequences

विवेचन · जिन भावो तथा जिन प्रवृत्तियो से आत्मा मे पाप-कर्मरूप मलिन परमाणु प्रविष्ट होते है, उनको 'आस्रव' कहा गया है।

'आस्रव' को समझाने के लिए समुद्र मे स्थित नौका का उदाहरण दिया जाता है। समुद्र स्थित नौका मे यदि छिद्र हो जाते है, तो उन छिद्रो द्वारा नौका मे धीरे-धीरे पानी प्रवेश करने लगता है, फलस्वरूप नौका समुद्र मे डूबने की स्थिति मे पहुँच जाती है।

इसी प्रकार ससाररूपी समुद्र मे कर्मवर्गणारूप अथाह जल भरा है। आत्मारूपी नौका इस समुद्र मे तैर रही है। जब आत्मा हिसा, असत्य, चौर्य, अब्रह्मचर्य और परिग्रहरूप अशुभ भावो मे प्रवृत्त होती है तो उसमे ऐसे छिद्र हो जाते है जिनसे अशुभ कर्मरूपी जल आत्मा मे आने लगता है। कर्म जल से भारी होने पर आत्मारूपी नौका ससार-समुद्र मे डूबने लगती है। आस्रव छिद्र-नाव मे छिद्र है तो उसमे से पानी आता है। उसी प्रकार हिसा से आत्मा मे अशाता वेदनीय कर्म आते है। इस प्रकार कर्म आने के छिद्र को आस्रव कहते है।

अहिंसा, सत्य आदि सयमरूप शुभ भावो द्वारा उन छिद्रो को रोका जाता है। छिद्रो को रोक देना 'सवर' है।

तत्त्वार्थसूत्र मे आस्रव के पाँच भेद बताये है-(१) मिथ्यात्व, (२) अविरति, (३) प्रमाद, (४) कषाय, और (५) योग। कुछ अन्य अपेक्षाओ से आस्रव के बीस भेद भी गिनाये गये है।

प्रस्तुत तीन गाथाओ मे से प्रथम गाथा मे शास्त्रकार ने बताया है कि अर्हत् तीर्थंकरो द्वारा इस शास्त्र मे आस्रव और सवर की समीचीन, सर्वांग प्ररूपणा की जायेगी।

जिसने कर्मबन्ध के कारण-'आस्रवो' और कर्मनिरोध के कारण 'सवरो' को भलीभाँति जान लिया, उसने समग्र जिन प्रवचन के रहस्य को ही जान लिया है।

प्रत्येक ससारी जीव को आस्रव अनादिकाल से हो रहा है, ससारी जीवो ने आस्रव का कभी भी समग्र रूप मे निरोध नही किया, किन्तु अनादि होने पर भी आस्रव अनन्तकालिक नही है। सवर के द्वारा उसका परिपूर्ण निरोध किया जा सकता है। अभव्य जीवो की अपेक्षा आस्रव अनादि-अनन्त है। वे कभी आस्रव का सम्पूर्ण निरोध नही कर पाते। किन्तु भव्य जीवो की अपेक्षा यह अनादि-सान्त है। आस्रव का निरोध करना सवर है। प्रस्तुत आगम मे प्रथम आस्रव का स्वरूप बताकर फिर सवर का स्वरूप बताया जायेगा।

तृतीय गाथा मे हिसा को 'जीव वध' नही कहकर **'प्राण वध'** कहा है। टीकाकार ने इसका स्पष्टीकरण करते हुए लिखा है, 'जीव' का कभी वध नही होता, वह शाश्वत है, किन्तु शरीर के भीतर जो जीव की शक्तिरूप 'प्राण' है, उनका विनाश करने पर 'जीव' को घोर कष्ट व पीडा पहुँचती है। सभी शरीरधारी जीवो को अपने प्राण प्रिय हैं, प्राण नाश अप्रिय व दु खदायी है। किसी जीव को कष्ट पहुँचाना हिंसा है। अत यहाँ हिंसा के अर्थ मे 'प्राण वध' शब्द का सार्थक, सोद्देश्य प्रयोग किया गया है। जैसा कहा है-

प्राणा दशैते भगवद्भिरुक्ता,
तेषा वियोगीकरण तु हिंसा॥

दस प्रकार के प्राणो मे से किसी भी प्राण का वियोजन (नाश) करना हिंसा है।

सर्वप्रथम हिंसा आस्रव के सम्बन्ध मे निम्नलिखित विषयो पर प्रकाश डाला जायेगा-

(१) हिंसा आस्रव का स्वरूप क्या है ?

(२) उसके क्या-क्या नाम है, जिनसे उसके विविध रूपो का परिज्ञान हो सके ?

(३) हिंसारूप आस्रव किस प्रकार से किया जाता है ?

(४) वह आस्रव किस प्रकार का कटु फल प्रदान करता है ?

(५) कौन पापी जीव-हिंसा करते है ?

Elaboration—The sentiments and the activities, which result in inflow of atoms of dirty karmic matter in the soul are called Aasrava.

In order to enable one to understand Aasrava properly, the example of boats floating on the sea is quoted In case holes develop in the boat, the sea-water slowly enters the boat As a result there comes a stage when the boat starts sinking

Similarly the worldly ocean of life, death and re-birth is full of water in the form of harmful Karmic matter The soul in the form of boat floats in that sea When the soul engages itself in thought activity coloured with violence, falsehood, stealing, non-chastity or attachment for worldly things, holes develop in the boat representing soul and through those holes the demerit Karmas start entering the soul just as water enters the boat Due to the heavy load of water in the form of Karmas, the soul represented by the boat starts sinking in the worldly ocean

Asrava is like holes If there are holes in a boat, water entersit In the same way violence causes entry of pain-causing karmas in the soul These holes that allow entry of Karmas in the soul are called Aasrava

The holes are plugged with meritorious thought activity in the form of non-violence (ahimsa), truth and the like, plugging the holes is called Samvar

According to Tattvarth Sutra, Aasrava is of five types—(1) Wrong perception (mithyatva), (2) non-restraint (avirati), (3) slackness (pramaad), (4) passions (kashaya), and (5) activities of body, speech and mind (yoga) In another context Aasrava is stated to be of twenty types

Among the three verses mentioned above, the author has mentioned in the first verse that the reverend Tirthankars shall explain here Aasrava and Samvar in a comprehensive manner

One who clearly understands Aasrava—the cause of inflow of Karma, and Samvar—the cause of stoppage of the inflow, properly, he shall in reality understand the very secret of the philosophy of the omniscient

Every worldly living being is experiencing Aasrava since beginningless period He never made serious effort to stop that inflow of Karma (Aasrava) completely Although Aasrava has been without a beginning, yet it is not endless. It can be stopped completely through Samvar In the context of abhavya (those who are incapable of attaining salvation) it is indeed without a beginning and also without an end They can never stop the inflow of Karmas completely But in the case of bhavya living beings, it can be ended To stop Aasrava is Samvar In the present text, at first the nature of Aasrava shall be explained in detail and thereafter Samvar shall be described

In the third verse, violence is not interpreted as killing the living being It is mentioned as killing the life-force Explaining it, the commentator has mentioned that a living being is never killed He is permanent But when the life-force in him, which is called praan, is destroyed, the living being experiences great pain Every living being possessing physical body has a great affection for the life-forces in him He does not like the destruction of life-force in him He experiences great pain at their loss To cause trouble to any living being (Jiva) is violence (himsa) So violence has been properly interpreted as hurting the life-force. For instance it has been mentioned by the wise that the life-force is of ten types and to cause hurt to any one of them is violence At first, the following topics shall be discussed in the context of Himsa Aasrava—

(1) What is the nature of Himsa Aasrava ?

(2) What are the various names through which one can know its different forms ?

(3) How is Himsa Aasrava performed ?

(4) How does Himsa Aasrava produce bitter result ?

(5) Who are the persons involved in causing hurt to living beings ?

प्राणवध का स्वरूप NATURE OF HARMING LIFE-FORCE (PRAAN VADH)

२. पाणवहो णाम एसो जिणेहिं भणिओ–१ पावो २ चंडो ३ रुद्दो ४ खुद्दो ५ साहसिओ ६ अणारिओ ७ णिग्घिणो ८ णिस्संसो ९ महब्भओ १० पइभओ ११ अइभओ १२ बीहणओ १३ तासणओ १४ अणज्जओ १५ उव्वेयणओ य १६ णिरवयक्खो १७ णिद्धम्मो १८ णिप्पिवासो १९ णिक्कलुणो २० णिरयवासगमणनिधणो २१ मोहमहब्भयपयट्टओ २२ मरणवेमणस्सो। एस पढमं अहम्मदारं॥ १॥

२. जिनेश्वर भगवान ने प्राणवध रूप हिंसा का स्वरूप इस प्रकार बताया है, यथा-(१) पाप, (२) चण्ड, (३) रुद्र, (४) क्षुद्र, (५) साहसिक, (६) अनार्य, (७) निर्घृण, (८) नृशस, (९) महाभय, (१०) प्रतिभय, (११) अतिभय, (१२) भापनक, (१३) त्रासनक, (१४) अन्याय, (१५) उद्वेगजनक, (१६) निरपेक्ष, (१७) निर्धर्म, (१८) निष्पिपास, (१९) निष्करुण, (२०) नरकवास गमन-निधन, (२१) मोहमहाभय प्रवर्तक, (२२) मरणवैमनस्य। इति प्रथम अधर्म-द्वार।

2. The omniscient Tirthankar has described the nature of Praan Vadh as under—(i) sin, (ii) contemptible (chand), (iii) wrath (rudra), (iv) rustic (kshudra), (v) rash (sahasik) (vi) uncultured (anarya), (vii) treacherous (nirghurna), (viii) inhuman (nrishans), (ix) a great fear, (x) shadow of fear (pratibhaya), (xi) extreme fear (atibhaya), (xii) terrible (bhapanak), (xiii) terrorising (trasanak), (xiv) unjust, (xv) distressed, (xvi) non-committal, (xvii) un-religious, (xviii) merciless, (xix) non-compassionate, (xx) desirous of hell, (xxi) engrossed in extreme fear due to attachment, (xxii) enmity due to death

विवेचन हिसक की मनोवृत्तियो और उसके परिणामो का प्रकटीकरण करने वाले २२ विशेषण प्रस्तुत सूत्र मे दिये है, जिनका भावार्थ इस प्रकार है-

(१) **पावो**-पापकर्म की ८२ प्रकृतियो के बन्ध का कारण होने से यह पापरूप है।

(२) **चडो**-जब कषाय के भडकने से परिणाम उग्र हो जाते है, तब जीव प्राणवध करता है, अतएव यह चण्ड है।

(३) **रुद्दो**-हिसा करते समय जीव रौद्र परिणामी बन जाता है, अतएव हिंसा रुद्र है।

(४) **खुद्दो**-यह अत्यन्त नीच कर्म होने से क्षुद्र है। हिंसा करने वाले के मन मे स्वार्थलिप्सा, असहिष्णुता, दुर्बलता, कायरता, ईर्ष्या एव सकीर्णता आदि क्षुद्र मनोभाव रहते है।

(५) **साहसिओ**-हिसा करने वाला अविवेकी, दुस्साहसिक तथा हिसा के कटु परिणामो के प्रति लापरवाह होता है।

(६) **अणारिओ**-अनार्य पुरुष हिसा का आचरण करते है, अथवा हेय प्रवृत्ति होने से भी यह अनार्य कर्म कहा गया है।

(७) **णिग्घिणो**-हिंसा करते समय पाप से घृणा नही रहती, अत यह निर्घृण है।

(८) **णिस्ससो**-हिसा दयाहीनता का कार्य है, अतएव नृशस है।

(९) **महब्भओ**-हिसा की पृष्ठभूमि मे भय भी एक प्रबल कारण है। हिंसा करते हुए हिसक भयभीत रहता है। जिसकी हिसा होती है वह हिंस्य भी भयभीत होता है। हिसा कृत्य को देखने वाले दर्शक भी भयभीत होते है। हिसा मे भय व्याप्त है। हिंसा भय का हेतु होने के कारण उसे महाभयरूप माना है।

(१०) **पइभओ**-हिंसा करने वाले का मन भी हिंस्य प्राणी से भयभीत रहता है। अत यह प्रतिभय है। भय से भय उत्पन्न होता है।

(११) अइभओ-हिंसा प्राणवध (मृत्यु) स्वरूप है। प्राणिमात्र को मृत्युभय से बढकर अन्य कोई भय नही। 'एतस्मात् अन्यत् भय नास्ति' मृत्यु से बडा या मरण के समान अन्य कोई भय नही है। अत यह अतिभय है।

(१२) बीहणओ-हिंसा दूसरो मे भय उत्पन्न करने वाली है।

(१३) तासणओ-दूसरो को त्रास या क्षोभ उत्पन्न करने वाली है।

(१४) अणज्ञओ-हिसा नीति व न्याय विरुद्ध होने के कारण अन्याय है।

(१५) उव्वेयणओ-हिंसा हृदय मे उद्वेग उत्पन्न करने वाली है।

(१६) णिरवयक्खो-हिसक प्राणी अन्य के प्राणो की अपेक्षा-परवाह नही करता, उन्हे तुच्छ समझता है। अतएव उसे निरपेक्ष कहा गया है।

(१७) णिद्धम्मो-हिसा धर्म से विपरीत है। अर्थात् हिसा त्रिकाल मे भी धर्म नही हो सकती।

(१८) णिप्पिवासो-हिंसक के चित्त मे दूसरो के जीवन की पिपासा-इच्छा नही होती, अत वह निष्पिपास कही जाती है।

(१९) णिक्कलुणो-हिसक के मन मे करुणाभाव नही रहता, वह निर्दय हो जाता है।

(२०) णिरयवासगमणनिधणो-हिंसा का सुनिश्चित परिणाम नरकगति की प्राप्ति रूप है।

(२१) मोहमहब्भयपयट्टओ-हिसा मूढता की जननी एव परिणाम मे घोर भय को उत्पन्न करने वाली है।

(२२) मरणवेमणस्सो-मरण के कारण जीवो मे उससे विमनस्कता-उदासी उत्पन्न होती है। अथवा यह मरने वाले के मन मे वैमनस्य (वैर-द्वेष) उत्पन्न करती है। उक्त विशेषणो से हिंसा का वास्तविक रूप प्रकट किया गया है।

Elaboration—In this paragraph twenty two adjectives have been mentioned in order to describe the mental attitude of the violent person and the consequences of such states—

(1) Sin—Since it results in bondage of 82 species of demerit Karma, it is a sin

(2) Contemptible—A person hurts the life-force of others when he becomes violent due to the influence of passion So it is contemptible (chand)

(3) Wrath—While committing violence, one is in a state of wrath So such a violence is wrath

(4) Rustic—Violence is an extremely low type action A violent person is selfish He is intolerant, weak, coward, jealous and mean So he is in a rustic (kshudra) state

(5) Rash—A violent person does not have a sense of discrimination He cannot control his passions He is slack about the bettor consequences of violence

(6) Uncultured—Only those who are not civilized, engage, themselves in violence Further such a behaviour needs to be abandoned So it is an uncultured act.

(7) Treacherous—While committing violence, one has no contempt for sin. So it is treacherous

(8) Inhuman—Violence is the act of one devoid of compassion So it is inhuman

(9) Great Fear—In the background of violence, the primary cause is fear While engaged in violence, one remains in a state of fear One who is the victim of that violence, he also remains frightened The persons seeing the violent act are also in a state of fear So violence is full of fear

(10) Shadow of Fear—The person committing violence is mentally afraid of the one against whom he is violent. So it is a shadow of fear Fear results in fear

(11) Extreme Fear—Violence is by nature hurting the life-force (causing death) The greatest fear to a living being is the fear of death So it is extreme fear

(12) Terrible—Violence causes fear in others

(13) Terrorising—Violence causes dejection and trouble

(14) Unjust—Violence is against the code of morality and justice So it is unjust

(15) Distress—Violence causes distress in the heart

(16) Non-committal—A violent person has no regard for the life-force of others He considers them insignificant So he is said to be non-committal

(17) Unreligious—Violence is against the code defined in scripture It cannot be justified in any period.

(18) Merciless—A violent person has no respect for the life of others So he is merciless

(19) Non-compassionate—A violent person is devoid of any feeling of compassion He is cruel

(20) Desirous of Hell—Violence definite leads one to hell in the next life

(21) **Engrossed in Extreme Fear due to Attachment**—Violence is the mother of ignorance It causes extreme state of fear

(22) **Enmity due to Death**—Since violence causes death, the victim feels extremely sad It causes animosity in the victim

The above-mentioned qualitative interpretations describe the real nature of violence

प्राणवध के पर्यायवाची नाम SYNONYMOUS OF HURTING LIFE-FORCE

३. तस्स य णामाणि इमाणि गोण्णाणि होंति तीस–तं जहा–

१. पाणवहं, २. उम्मूलणा सरीराओ, ३ अवीसभो, ४. हिंसविहिंसा तहा, ५. अकिच्चं च, ६ घायणा य, ७ मारणा य, ८. वहणा, ९. उद्दवणा, १० तिवायणा य, ११. आरंभसमारंभो, १२ आउयक्कम्मस्सुवद्दवो भेयणिट्ठवणगालणा य संवट्टगसंखेवो, १३. मच्चू, १४. असंजमो, १५. कडगमद्दणं, १६. वोरमणं, १७ परभवसंकामकारओ, १८ दुग्गइप्पवाओ, १९ पावकोवो य, २० पावलोभो, २१ छविच्छेओ, २२. जीवियंतकरणो, २३. भयकरो, २४ अणकरो, २५. वज्जो, २६. परियावणअण्हओ, २७. विणासो, २८ णिज्जवणा, २९ लुपणा, ३० गुणाणं विराहणत्ति विय तस्स एवमाईणि णामधिज्जाणि होंति तीसं, पाणवहस्स कलुसस्स कडुयफलदेसगाइं॥२॥

३. प्राणवधरूप हिंसा के कटु फलो को दर्शाने वाले विविध अर्थो व भावो के द्योतक गुणवाचक तीस नाम इस प्रकार है–

('गौण' शब्द से एक अर्थ यह भी द्योतित होता है कि ये सब नाम तो गौण है, मुख्य नाम तो प्राणवध या हिसा है।)

(१) **प्राणवध**–स्वार्थ, अज्ञान और मोह मे अन्धे होकर किसी भी प्राणी के प्राणो का घात करना प्राणवध है। पाँच इन्द्रियाँ, मनबल, वचनबल, कायबल, आयु, श्वासोच्छ्वास, इन दस प्राणो मे से किसी भी प्राणी के कोई भी प्राण को चोट पहुँचाना, सताना, पीडा देना, काटना, पीटना या बिल्कुल नष्ट कर देना प्राणवध है।

(२) **शरीर (प्राणो का) से उन्मूलन**–जैसे वृक्ष को जड से उखाडा जाता है, वैसे ही शरीर से जीव को उखाड डालना उन्मूलन है।

(३) **अविस्रंभ–अविश्वास**–हिसा करने वाला सभी जीवो के लिए अविश्वसनीय होता है। उसका कोई भी विश्वास नही करता क्योकि वह कब किसको मार बैठे, आ दबोचे या अनिष्ट कर डाले, पता ही नही चलता। जैसे चूहे बिल्ली का कदापि विश्वास नही करते, वैसे ही ससार मे हिंसक प्राणी के प्रति मनुष्य ही क्या, कोई भी प्राणी विश्वास नही करता। हिसक की आकृति से ही प्राणी पहचान लेते है और उसके पास जाने से हिचकते है। इसलिए हिसा प्राणियो मे अविश्वास, शका, भय और सकोच पैदा करने वाली होने से इसे अविस्रंभ या अविश्वास कहा है।

(४) **हिंस्यविहिंसा–हिंसविहिंसा**–जिनकी हिंसा की जाती है, वे हिंस्य जीव कहलाते है, उनकी हिंसा करना यानी उन्हे सताना, पीडा देना 'हिंस्यविहिंसा' है। अथवा हिंसा पर हिंसा करना। यानी किसी ने किसी पर प्रहार किया तो उस पर उसकी हत्या कर देना हिसविहिंसा है। जिन्होने हिंसा के बदले मे प्रतिहिंसा की, उन्होने जगत् मे वैर को बढाया। इसीलिए हिंसविहिंसा पापरूप है।

(५) **अकृत्य**–ससार मे जितने भी कुकृत्य है, उन सबमे प्रधान कुकृत्य हिंसा है। अथवा जितने भी कुकृत्य है, उन सबमे हिंसा छिपी हुई है।

(६) **घातना**–किसी भी प्रकार की चोट पहुँचाना, टक्कर लगाना, उठते–बैठते, चलते–फिरते, किसी चीज को उठाते–रखते असावधानी से किसी जीव को कुचल देना, उसके प्राणो को हानि पहुँचाना 'घातना' है।

(७) **मारणा**–मारपीट करना, लात–घूँसे मारना, कोडो से, लाठी से, चाबुक से किसी पशु या मनुष्य पर प्रहार करना 'मारणा' है।

(८) **वधना**–किसी प्राणी के प्राणो को पीडा पहुँचाना या नष्ट करना वध है अथवा अपनी जिह्वा–लोलुपतावश या क्षणिक सुख के लिए बेचारे निरपराध प्राणियो का हनन करना, पशुओ का वध करना या वध को प्रोत्साहन देना भी वध है।

(९) **उपद्रवणा**–वन मे आग लगाकर या मन बहलाव के लिए अथवा कुतूहलवश भैसे, मुर्गे, साँड आदि को परस्पर लडाना उपद्रव है। अथवा कही आग लगाना, दगा–फिसाद करना या पत्थरबाजी करना या आपस मे लाठी, शस्त्र आदि से लडना इत्यादि सब उपद्रव है, ये भी हिंसा के भाई है।

(१०) **त्रिपातना या निपातना**–किसी जीव के मन, वचन और काया का अतिपात–वियोग करना अथवा आयु, शरीर और प्राणो से पृथक् कर देना त्रिपातना है।

(११) **आरम्भ–समारम्भ**–मकान बनाना, कारखाना चलाना आदि छोटे–बडे अनेक कार्यों मे स्थावर जीवो की हिसा होती ही है, कई बार त्रस जीवो की हिसा भी होती है। इसे शास्त्रीय परिभाषा मे आरम्भ कहते है, खुद हिसा करे उसे आरभ कहते है। दूसरो से करवाते है उसे समारभ कहते है।

(१२) **आयुकर्म का उपद्रव–भेदन–निष्ठापन–गालन और सवर्तक संक्षेप**–आयुष्य कर्म को विष, शस्त्र आदि से उपद्रवित कर देना (सकट मे डाल देना), भिन्न कर देना (शरीर के टुकडे–टुकडे करके अलग कर देना), समाप्त कर देना, गला देना तथा श्वासोच्छ्वास (प्राणवायु) का ह्रास कर देना–दम घोंट देना भी प्राणवध है।

संवर्तक सक्षेपक का एक अर्थ समस्त बल, सामर्थ्य, शक्ति आदि को क्षीण कर देना भी है। किसी की ताकत को खत्म करने के लिए भूखे–प्यासे रखना, जहर देना, रोगी बना देना, ये सब हिसा के ही प्रकार है।

(१३) **मृत्यु**–किसी को जान से मार डालना, जीवन से रहित कर देना या परलोक पहुँचा देना मृत्यु है।

(१४) **असंयम**–पृथ्वीकाय, अप्काय आदि छहो काय जीवो के साथ यतना, सावधानी या विवेकपूर्वक व्यवहार न करने से या स्थावर (एकेन्द्रिय) जीवो के शरीर (मिट्टी, पानी, हवा, अग्नि और वनस्पति) का अनावश्यक, निरर्थक एव अनाप–शनाप उपयोग करने से प्राणिवध रूप असयम होता है। असयम ही हिसा का जनक है।

(१५) **कटकमर्दन**–सेना लेकर आक्रमण करके जीवो का मर्दन करना, कुचल डालना या रौद डालना अथवा मसल डालना कटकमर्दन है। अथवा युद्ध मे झौंककर या लडाकर उनको चकनाचूर करा देना भी कटकमर्दन कहलाता है।

(१६) **व्युपरमण**–शरीर को प्राणो से भिन्न करना–रहित करना व्युपरमण है।

(१७) **परभव सक्रमकारक**–किसी प्राणी को इहभवरूपी घर को छुडाकर परभवरूपी नवगृह मे जाने से मोह–ममत्ववश अत्यन्त दु ख होता है। इसलिए अत्यन्त दु खकारक होने से यह दूसरे जन्म मे पहुँचाने वाला परभव सक्रमणकारक कहलाता है।

(१८) **दुर्गतिप्रपात**–नरक तिर्यंचरूप दुष्ट गति के गड्ढे मे गिराने वाला होने से प्राणवध को दुर्गतिप्रपात कहा गया है।

(१९) **पापकोप**–पाप को प्रकुपित करने या उत्तेजित करने वाला पापकोप है। हिंसा भी पाप को उत्तेजित करने–बढावा देने वाली होती है।

(२०) **पापलोभ या पापल**–जो प्राणी को पाप मे लुब्ध कर देता है, पाप मे रचा–पचा देता है, वह पापलोभ है। अथवा पापरूप उत्कट लोभ का कारण होने से भी प्राणिवध का एक नाम 'पापलोभ' है। इसका पाठान्तर '**पापलः**' भी मिलता है, जिसका अर्थ है–पापो को लाने वाला।

(२१) **छविच्छेद**–छवि यानी शरीर के किसी भी हिस्से (नाक, कान आदि) का छेदन करना–काटना छविच्छेद है।

(२२) **जीवितान्तकरण**–जीवन का अन्त कर देना भी प्राणवध का एक अग है। जीवन सबको अत्यन्त प्यारा होता है, किन्तु जब उसको अपने जीवन से कोई अलग करता है, तो उसे अत्यन्त दु ख होता है, यही हिंसा है।

(२३) **भयकर**–भयकर का अर्थ है–भय पैदा करने वाला। वध के नाम से ही प्राणी डर के मारे काँप उठता है। जिसका वध किया जाता है, उसे तो भय लगता ही है, साथ ही वध करने वाले के मन मे भी यह भय बैठ जाता है कि कही यह सामना करके मुझे मार न बैठे। इस तरह प्राणिवध चारो ओर भय ही भय पैदा करने वाला है।

(२४) **ऋणकर**–प्राणिवध पापरूप ऋण को चुकाते समय–पाप का फल भोगते समय जीव को बडा ही दु खी होना पडता है। परलोक मे भी इस कठोर ऋण के कारण नरक आदि मे असह्य यातनाएँ और तिर्यंचगति मे भी भूख, प्यास, सर्दी, गर्मी आदि के नाना दु ख भोगने पडते है, जो उस ऋण के कुफल है।

(२५) **वज्र या वर्ज्य अथवा सावद्य**–प्राणिवध वज्र के समान बडा कठोर है। प्राणी का कोमल हृदय इसे सह नही सकता, इसलिए इसे 'वज्र' कहा है। इसका एक सस्कृत रूप **वर्ज्य** भी होता है, जिसका अर्थ है वर्जनीय।

(२६) **परितापास्रव**–परितापकारी। मृषावाद आदि अन्य आस्रव इसी आस्रव से उत्पन्न होते है। अथवा यह आस्रव दूसरे मृषावाद आदि आस्रवो की अपेक्षा अधिक परिताप (सन्ताप) देने वाला होने से इसे परितापास्रव कहा है।

(२७) **विनाश**–प्राणियो का इसमे द्रव्य और भाव दोनो ही तरह से नाश होता है, इसलिए इसे विनाश कहा है। द्रव्य से विनाश तो प्राणो या शरीरादि का होता है, भाव से मरते समय मरने वाले जीव मे प्राय आर्त्तध्यान एव मारने वाले के प्रति रौद्रध्यान पैदा होता है, साथ ही मारने वाले के मन मे भी क्रूर भाव पैदा होते है, इसलिए द्रव्य और भाव से स्व-पर विनाश का कारण होने से प्राणिवध को 'विनाश' कहा है।

(२८) **निर्यापना अथवा नियातना**–जीवनयापन से रहित कर देना निर्यापना है। अथवा जीवनयापन का अर्थ सुख से चल रही जीवेका से रहित कर देना, किसी की जीविका को उखाड देना भी हो सकता है। अथवा इसका एकरूप नियातना होता है-जिसका अर्थ होता है, जिसमे **नितरां**–निरन्तर यातना ही यातना हो। हिसा के कारण हिसक प्राणी को सतत यातना का ही अनुभव होता है।

(२९) **लोपना**–जिसमे प्राणो का लोप (खात्मा) कर दिया जाता हो, वह लोपना है। अथवा प्राणो की लुम्पना-लूट करने वाली होने से यह लोपना है।

(३०) **विराधना**–आत्मा के ज्ञानादि गुणो की इसमे विराधना होती है, क्षति होती है, इसलिए विराधना भी आत्म-भाव की हिंसा का ही काम करती है। वास्तव मे तो भावहिंसा ही पापकर्म के बन्ध की कारण है, द्रव्यहिसा तो प्राणघात आदि की क्रियामात्र है।

तदुलमत्स्य जीवो की वधरूप क्रिया (द्रव्यहिंसा) बिल्कुल नही करता, लेकिन उसके परिणाम जीवो को निगलने व मारने के होने से वह मरकर अपने उन हिसा रूप परिणामो (भावहिंसा) के कारण सातवे नरक का मेहमान बनता है। इसलिए भावहिंसा ही पापकर्म के बन्ध की कारण है।

तीस नाम–इस प्रकार प्राणवध के पर्यायवाची 'गुणनिष्पन्न' ३० नाम प्रस्तुत सूत्र मे बताये है।

3. There are thirty synonyms of violence in the form of causing hurt to life-force and they depict the bitter consequences of it and of the mental state. (The word 'gauna' used in the script indicates that all these synonymous are secondary and the primary title is violence or hurting the life-force.)

(1) Hurting the Life-force—To cause hurt to the life-force of any person in a selfish state or in delusion is violence. The life-forces are ten in the form of five sense organs—mind, speech, physical body, breathing

and life-span To cause hurt, trouble, cut, thresh or completely destroy any one of these forces is hurting the life-force (praan vadh)

(2) **To Uproot from the Body**—Just as a tree is removed from its very root, the soul is uprooted from the body

(3) **Mistrust**—Nobody has a trust in a violent person. One is not sure when he may hurt, overpower or cause damage It is not just man but every other living being too has no trust in a violent person They recognize the violent person from his appearance itself and hesitate to go near him Since one has a mistrust, doubt, fear and hesitation from a violent person it is called mistrust or lack of trust

(4) **To Hurt Repeatedly**—The person who is hurt by a person, is called a victim To cause grieveous hurt to the victim or to trouble him again and again is called causing hurt repeatedly To kill in retaliation is also Himsya Vihimsa Those who act in this manner, they increase enmity So such a violence is a sin

(5) **Unworthy Act**—Out of all the condemnable activities in the world, violence is the most condemnable act We can also say that violence is latent in all the condemnable activities

(6) **To Cause Serious Damage (Ghatana)**—To cause hurt of any type, to strike against, to crush or trample any living being due to carelessness, while getting up, sitting, moving about or while placing an object and thus causing damage to the life-force is Ghatana

(7) **To Beat**—To beat a person or an animal with legs or fists, with lashes or stick is Marana (to beat)

(8) **Vadhana**—To cause hurt to the life-force of any living being is Vadh For one's taste or momentary pleasure, to hurt or kill innocent living beings, to kill animals or to encourage others in such killings is also called Vadh

(9) **Upadravana**—To set a forest on fire or to cause fight among cocks, he-buffaloes, bulls and the like for sensual enjoyment is called Upadrava To set any place on fire, to cause disturbance, to hurl stones at others, to fight with sticks or weapons and the like—all such activities are Upadrav All such activities fall in the category of violence (himsa)

(10) **Tripatana or Nipatana**—To cause serious damage to one's mind, speech or the body or to separate the life-force of a person from his body is Tripatana

(11) **Aarambh-samarambh**—In construction of the house, in running a factory and in many suchlike small or large activities, immobile (Sthavar) living beings are killed Sometimes such activities cause hurt even to mobile living beings In scriptures it is called Aarambh The violence caused due to such an Aarambh is called Aarambh-samarambh

(12) **Upadrav, Bhedan, Nishthapan, Gaalan of Age-determining Karma and Samavartak Sankshep**—To cause serious damage to life of a person by poisoning him or by hurting with a weapon, to cut his body into pieces, to finish him, to cause damage to his breathing process, to throttle him–all such activities are activities of violence

Another interpretation of Samvartak Sankshep is to bring the strength, capability, power and the like of a person at its lowest level To keep one in a state of starvation, to poison him or to turn him sick in order to finish his physical strength—all such activities are activities falling in the category of violence

(13) **Death (Mrityu)**—To kill a living being, to make one lifeless is causing death

(14) **Non-restraint (Asanyam)**—Violence to the life-force of the living being in the form of non-restraint occurs when due to lack of discrimination, proper awakening or proper care one treats earth-bodied, water-bodied living beings and the like in an indiscriminate manner or when makes unnecessary use of gross body of such beings (earth, water, air, fire and vegetable) without any specific purpose Such non-restraint causes violence

(15) **Katak-mardan**—To attack people with army and then to trample them, crush them, torture them is called katak-mardan To force or compel people to participate in battle and thus to get them crushed is also katak-mardan

(16) **Vyuparaman**—To make one devoid of his life-force is Vyuparaman

(17) **Parabhav Sankramakarak**—To push away any living being to the next world is parabhav sankramakarak When a person has to leave this world and his existence here and his soul has to move to the next world (through re-birth in that state), he feels extreme dejection due to

his attachment Since it is extremely painful, it is just like violence to the life-force

(18) **Durgati Prapaat**—Violence to the life-force is termed as durgati prapaat because it throws one into the deep ditch of bad state of existence in the form of hellish state or animal state.

(19) **Paapakoap**—An element that deeply instigates sin or makes it serious or glorified is called paapakoap Violence instigates sin

(20) **Paapalobh or Paapal**—The behaviour that engages a living being in sin deeply is called paapalobh Since violence in the form of a sin is the cause of extreme greed it is called paapalobh Another version available is paapalah, which means the one that leads to sin

(21) **Chhavichhed**—To pierce or cut the physical body is called Chhavichhed

(22) **Jeevitaantakaran**—To bring an end to the life is also called praanavadh Every one loves to live So when any one brings an end to his living state, he feels extreme pain Thus it produces violence

(23) **Bhayankar**—It means that which produces fear A living being feels afraid of the very word Vadh (killing) One who is being hurt or killed feels frightened Even the killer has a fear in his mind that the opponent may not kill him Thus violence produces fear all around

(24) **Rinakar**—One experiences great pain when he pays the debt relating to the sin of his ill deed or when he has to bear the fruit of his sin Due to it, he has to bear intolerable tortures in the hell and several types of pain such as hunger, thirst, cold, heat and the like in animal state of existence after transmigration from the human state All such troubles are the result of the debt incurred by him due to his sins

(25) **Vajra or Varjya or Saavadya**—Violence is harsh like vajra Soft heart of a living being cannot tolerate that blow So it is called vajra In Sanskrit it is also called varjya, which means that which should be avoided

(26) **Paritapasrava**—That which causes trouble Falsehood and other suchlike inflow of Karmas are the products of this Aasrava This inflow of Karma causes greater damage than the other Aasravas such as falsehood and the like So it is called Paritaap Aasrava.

(27) Vinash—It destroys the living beings physically and emotionally. So it is called vinaash Physically it destroys the life-force or the physical body. Emotionally when a person is about to die he is normally in a dejected state and feels bitter contempt towards his killer Even the killer has dreadful feelings So it causes destruction both physically and mentally of his ownself and of the other Hence violence is called vinaash (destruction)

(28) Niryapana or Niyatana—To destroys ones livelihood is called niryapana It can also be interpreted as uprooting the livelihood of a person who was comfortably leading his life Its another interpretation is niyatana which means that which is continuously troublesome Due to his state of violence, the violent living being experience continuous state of torture

(29) Lopana—The process in which the life-forces are totally destroyed is called lopana It robs one of his life-force

(30) Viradhana—It adversely affects the fundamental qualities of the soul namely knowledge and the like So viradhana also result in violence to the soul In reality violence in thought is the cause of bondage of demerit Karmas The visible hurt is simply hurt to the life-force

The rice-shaped tiny fish was not causing any hurt externally. But due to his thought-activity of eating away and killing all the fishes, it took birth in the seventh hell It was the result of his polluted violent mind So mental violence is the primary cause of bondage of sin.

Violence has been described in this verse through thirty different names

पापियो का पापकर्म SIN OF THE SINNERS

४. तं च पुण करेंति केइ पावा असंजया अविरया अणिहुयपरिणामदुप्पयोगा पाणवहं भयंकरं बहुविहं बहुप्पगारं परदुक्खुप्पायणसत्ता इमेहिं तसथावरेहिं जीवेहिं पडिणिविट्ठा।

किं ते ?

४. कितने ही पापिष्ट, सयमविहीन, तप आदि अनुष्ठानो से रहित, अनुपशान्त परिणाम वाले एव जिनके मन, वचन और काया की प्रवृत्तियाँ दूषित है, जो अन्य प्राणियो को पीडा पहुँचाने मे आसक्त रहते हैं तथा त्रस और स्थावर जीवो की रक्षा न करने के कारण वस्तुत जो उनके प्रति द्वेषभाव से युक्त है, वे अनेक प्रकारो से भयंकर-हिंसा किया करते है।

वे विविध प्रकारो से कैसे हिंसा करते है ?

4. Many persons have a liking for bad deeds They are without any self-restraint They do not practice austerities and the like They remain disturbed Their mental, vocal and physical activities are polluted. They remain engaged in causing trouble to other living beings They do not protect mobile and immobile living beings In fact they have a *feeling of* contempt for them They engage themselves in terrible acts of violence

How do they cause violence in different ways?

जलचर जीवो की हिंसा **VIOLENCE TO AQUATIC ANIMALS**

५. पाठीण–तिमि–तिमिंगल–अणेगझस–विविहजातिमडुक्क–दुविहकच्छभ–नक्क–मगर–दुविह–गाह–दिलिवेढय–मंडुय–सीमागार–पुलुय–सुसुमार–बहुप्पगारा जलयरविहाणा कते य एवमाई।

५. वे हिंसा मे आसक्त मानव अनेकानेक प्रकार के जलचर जीवो का घात करते है। जैसे-**पाठीन**-एक विशेष प्रकार की मछली, **तिमि**-बडे मत्स्य, **तिमिगल**-महामत्स्य, अनेक प्रकार की मछलियाँ, अनेक प्रकार के मेढक, अस्थिकच्छप और मॉसकच्छप के भेद से दो प्रकार के कच्छप, **मगर**-सुडामगर एव मत्स्यमगर के भेद से दो प्रकार के मगर, ग्राह-(ओक्टोपस की जाति) एक विशिष्ट जल-जन्तु, दिलिवेष्ट-पूँछ से लपेटने वाला जलीय जन्तु, मडूक, सीमाकार, पुलकर आदि ग्राह के प्रकार, सुसुमार (डोलफीन) इत्यादि।

5. The persons engaged in violence cause damage to aquatic animals in many ways The aquatic animals are of the following types—

Paatheen—It is a special type of fish

Timi—It is a fish of large size

Timingal—It is gigantic fish

Many types of fish, many types of frogs

Tortoise is of two types—Bony tortoise and fleshy tortoise

Magar—Crocodiles are of two types—Sunda crocodile and fish like crocodile

Graha—It is a special type of acquatic creature

Diliveshta—It is an acquatic creature that gathers victims with its tail Mandook, Seemakar, pulakar and the like are the various types of graha Sunsumaar and the like

६. कुंरग–रुरु–सरभ–चमर–संबर–उरब्भ–ससय–पसय–गोण–रोहिय–हय–गय–खर–करभ–खग्ग–वाणर–गवय–विग–सियाल–कोल–मज्जार–कोलसुणह–सिरियंदलगावत्त–कोकंतिय–गोकण्ण–मिय–महिस–वियग्घ–छगल–दीविय–साण–तरच्छ–अच्छ–भल्ल–सद्दूल–सीह–चिल्लल–चउप्पयविहाणाकए य एवमाई।

६. कुरग और रुरु जाति के हिरण, सरभ–अष्टापद, चमर–नील गाय, सबर–साभर, उरभ्र–मेढा, शशक–खरगोश, पसय–प्रशय–वन्य पशुविशेष, गोण–बैल, रोहित–पशुविशेष, घोडा, हाथी, गधा, करभ–ऊँट, खड्ग–गेडा, वानर (बन्दर), गवय–रोझ, वृक–भेडिया, शृगाल–सियार–गीदड, कोल–शूकर, मार्जार–बिलाव–बिल्ली, कोलशुनक–बडा शूकर, श्रीकदलक एव आवर्त्त नामक खुर वाले पशु, लोमडी, गोकर्ण–दो खुर वाला जानवर, मृग, भैंसा, व्याघ्र, बकरा, तेदुआ, जगली कुत्ता, जरख, रीछ–भालू, शार्दूल–सिह, सिंह–केसरीसिह, चित्तल–नाखून वाला एक विशिष्ट पशु अथवा हिरण की आकृति वाला पशुविशेष इत्यादि बहुविध चतुष्पद प्राणी है, जिनकी पूर्वोक्त पापी हिंसा करते है।

6. The above mentioned violent sinful people hunt quadruped beasts and animals Such beasts are deer of Kurang and ruru type **sarabh** (ashtapad), **chamar** (neel cow), **saambhar**, **sheep** (medha), **shashak** (hare), **pasaya** (a wild beast), **goan** (ox), **rohit** (a type of animal such as horse, elephant, donkey), **karabh** (camel), **khadag** (rhino, monkey), **gavaya** (rogh), **vrik** (wolf), **shrigaal** (jackal), **koal** (pig), **marjar** (cat), **kolshunak** (big pig), shrikandalak and avart (animal with round hoof), fox, **gokaran** (beasts with two hoofs), deer, he-buffalo, tiger, he-goat, tendua, wild dog, jarakh, bear, lion, chittal (a special type of beasts having nails—a beast of the shape of a deer, and many other types of quadrupeds

विवेचन . इन नामो मे एक नाम 'सरभ' प्रयुक्त हुआ है। यह एक विशालकाय वन्य प्राणी होता है। इसे परासर भी कहते है। ऐसी प्रसिद्धि है कि सरभ हाथी को भी अपनी पीठ पर उठा लेता है। खड्ग ऐसा प्राणी है, जिसके दोनो पार्श्व भागो मे पखो की तरह चमडी होती है और मस्तक के ऊपर एक सीग होता है। (प्रश्नव्याकरण–आचार्य हस्तीमल जी म , पृ १६)

Elaboration—One of the names mentioned above as Sarabh. It is a wild beast of huge size It is also called parasar. It is said that this beast is able to carry even an elephant on its back Khadag is such a beast that has feather like skin on both sides and a horn at its forehead.

(See **Prashna Vyakaran** by Acharya Hastimal Ji M, pp. 16)

उरपरिसर्प जीव URAPARISARP ANIMALS

CREATURES MOVING ALONG THE BREAST

७. अयगर–गोणस–वराहि–मउलि–काउदर–दब्भपुप्फ–आसालिय–महोरगोरगविहाणकाए य एवमाई।

७. अजगर, **गोणस**–बिना फन का सर्पविशेष, **वराहि**–दृष्टिविष सर्प–जिसके नेत्रो मे विष होता है, **मुकुली**–फन वाला साँप, **काउदर**–काकोदर–सामान्य सर्प, **दब्भपुप्फ**–दर्भपुष्प–एक प्रकार का दर्वीकर सर्प, **आसालिक**–सर्पविशेष, **महोरग**–विशालकाय सर्प, इन सब और इस प्रकार के अन्य उरपरिसर्प जीवो का पापी जन वध करते है।

7. Ajgar (large snake), Gonas (a special type of snake), Varahi (snake where eyes are poisonous), Mukuli (snake havings wing), Kaudar (common snake), Dabbhapuph (a type of snake), Aasalik (a peculiar type of snake), Mahorag (gigantic snake) The violent people hurt or kill such and also other types of creatures that move along their breast

विवेचन छाती से रेगकर चलने वाले जीव उरपरिसर्प जीव कहलाते है। इन नामो मे एक नाम आसालिक आया है। टीका मे इसका विशेष परिचय दिया गया है। आसालिक बारह योजन लम्बा होता है। यह सम्मूर्च्छिम है और इसकी आयु मात्र एक अन्तर्मुहूर्त्त की होती है। इसकी उत्पत्ति भूमि के अन्दर होती है। जब किसी चक्रवर्ती अथवा वासुदेव के विनाश का समय सन्निकट आता है तब यह उसके **स्कन्धावार**–सेना के पडाव के नीचे अथवा किसी नगरादि के विनाश के समय उसके नीचे उत्पन्न होता है। उसके उत्पन्न होने से पृथ्वी का वह भाग पोला हो जाता है और वह स्कन्धावार अथवा बस्ती उसी पोल मे समाकर विनष्ट हो जाती है।

महोरग का परिचय देते हुए टीकाकार ने उल्लेख किया है कि यह सर्प एक हजार योजन लम्बा होता है और अढाई द्वीप के बाहर होता है। किन्तु यदि यह अढाई द्वीप से बाहर ही होता है तो मनुष्य इसका वध नही कर सकते। सम्भव है अन्य किसी जाति के प्राणी वध करते हो। चतुर्थ सूत्र मे 'केइ पावा' आदि पाठ है। वहाँ मनुष्यो का उल्लेख भी नही किया गया है। तत्त्व केवलिगम्य है।

Elaboration—The creatures that move along their breast are called Uraparisarp Asalik also occurs as one of the above names In the commentary this name is particularly mentioned Asalik is twelve yojans long It comes into existence without parents Its life-span is less than 48 minutes It takes birth under the earth When a Chakravarti or Vasudev is near his end, it takes birth under the place where his army is camping In case the destined period is for the destruction of a town, it takes birth under that town Due to its growth, that part of the land becomes porous and that camping ground or the colony sinks in it and thus gets eliminated

While describing Mahorag, the commentator has mentioned that this snake is one thousand yojan long and it exists outside two and a half continents constituting the area of human existence In view of its location beyond the area of human existence, the human beings cannot kill it It is therefore possible that other animals or beast kill it In the

fourth verse words Keyı paava occur. Therein human beings have not been mentioned Factual position, however, could be known only to the omniscient

भुजपरिसर्प जीव **BHUJAPARISARP (CREATURES MOVING WITH ARMS)**

८. छीरल–सरंब–सेह–सेल्लग–गोधा–उंदुर–णउल–सरड–जाहग–मुगुंस–खाडहिल–वाउप्पिय घिरोलिया सिरीसिवगणे य एवमाई।

८. क्षीरल–भुजाओ के सहारे चलने वाला जीव, शरम्ब, सेह–सेही–जिसके शरीर पर बडे–बडे काले–सफेद रग के काँटे होते है जो उसकी आत्मरक्षा मे उपयोगी होते है, शल्यक, गोह, चूहा, नेवला–वैरी, गिरगिट–जो अपना रग पलटने मे समर्थ होता है, जाहक–काँटो से ढका जीवविशेष, मुगुंस–गिलहरी, खाड़हिल–छछूदर, गिल्लोरी, वातोत्पत्तिका, छिपकली इत्यादि अनेक प्रकार के भुजपरिसर्प जीवो का वध करते है।

8. Ksheeral—creature moving with the help of arms, Sharamb, Seh, Sehı—creature having large white and black thorns on its body which protect it, Shalyak, goh, undur (rat), mongoose, girgit (creature capable of changing the colour of its body), jahak—a special type of creature covered with thorns, muguns (squirrel), Khaadahıl, Gıllorı, Vatotapattıka, lizard and the like The violent person hurts or kills many suchlike animals

विवेचन परिसर्प जीव दो प्रकार के होते है–उर परिसर्प और भुजपरिसर्प। सर्प और चूहे का सावधानी से निरीक्षण करने पर दोनो का अन्तर स्पष्ट प्रतीत होता है। जो भुजाओ–अपने छोटे–छोटे पैरो से चलते है वे भुजपरिसर्प है। उरपरिसर्पों के ऐसा कोई अग नही होता। वे रेग–रेगकर छाती के बल चलते है।

Elaboration—Crawling creatures (Parısarp) are of two kinds—those moving along their breast (uraparısarp) and those moving with the help of their arms (bhujaparısarp), Uraparısarp do not have any arm like thing and they move only along their breast

नभचर जीव **NABHACHAR . (CREATURES MOVING IN SKY)**

९. कादंबक–बक–बलाका–सारस–आडा सेतीय–कुलल–वंजुल पारिप्पव–कीर–सउण–दीविय–हंस–धत्तरिट्ठग–भास–कुलीकोस–कुंच–दगतुंड–ढेणियालग–सुईमुह–कविल–पिंगलक्खग–कारंडग–चक्कवाग–उक्कोस–गरुल–पिंगुल–सुय–बरहिण–मयणसाल–णंदीमुह–णंदमाणग–कोरंग–भिंगारग–कोणालग–जीवजीवग–तित्तिर–वट्टग–लावग–कपिंजलग–कवोतग–पारेवग–चडग–ढिंक–कुक्कुड–वेसर–मयूरग–चउरग–हयपोंडरीय–करकरग–चीरल्ल–सेण–वायस–विहग–सेण–सिणचास–वग्गुलि–चम्मट्ठिल–विययपक्खी–समुग्गपक्खी खहयर विहाणाकए य एवमाई।

९. कादम्बक–विशेष प्रकार का हस, बक–बगुला, बलाका–विषकण्ठिका–वकजातीय पक्षीविशेष, सारस, आडासेतीय–आड, कुलल, वजुल, परिप्लव, कीर–तोता, शकुन–तीतर, दीपिका–एक प्रकार की

काली चिडिया, **हंस**–श्वेत हस, **धार्तराष्ट्र**–काले मुख एव पैरो वाला हस, **भास**–भासक, कुटीक्रोश, क्रौच, **दकतुंडक**–जलकूकडी, **ढेलियाणक**–जलचर पक्षी, **शूचीमुख**–सुघरी, कपिल, पिंगलाक्ष कारडक, **चक्रवाक**–चकवा, उक्कोस, गरुड, **पिंगुल**–लाल रग का तोता, **शुक**–तोता, मयूर, **मदनशालिका**–मैना, नन्दीमुख, **नन्दमानक**–दो अगुल प्रमाण शरीर वाला और भूमि पर फुदकने वाला विशिष्ट पक्षी, कोरग, **भृंगारक**–भिगोडी, कुणालक, **जीवजीवक**–चातक, **तित्तिर**–तीतर, वर्त्तक (बतख), लावक, कपिजल, **कपोत**–कबूतर, **पारावत**–विशिष्ट प्रकार का कपोत, पारेवा, **चटक**–चिडिया, ढिक, **कुक्कुट**–मुर्गा, वेसर, मयूर, चकोर, **हृदपुण्डरीक**–जलीय पक्षी, करक, **चीरल्ल**–चील, **श्येन**–बाज, **वायस**–काक, **विहग**–एक विशिष्ट जाति का पक्षी, श्वेत चास, वल्गुली, चमगादड, **विततपक्षी**–अढाई द्वीप से बाहर रहने वाला एक विशेष पक्षी, समुद्गपक्षी इत्यादि पक्षियो की अनेकानेक जातियाँ है, हिंसक जीव इनकी हिंसा करते हैं।

9. Kadambak—a special type of swan, Bak—crane, Balaka—a goose like bird, Aadasetiya, Kulal, vanjul, pariplav, keer—parrot, Shakun—quail, deepika—a special type of sparrow, Hans—white swan, dhartarashtra—Swan with black face and feet, bhaas, kutikrosh, crounch, dakatundak—acquatic snails, dheliyanak—an acquatic bird, shuchimukh, Kapil, pingalaksh, karandak, Chakravaak, Ukkos, Garud, pingul—red coloured parrot, Shuk—parrot, madanashalika—maina, nandimukh, nandamanak—a bird just two finger-breadth in size hopping on the land, bhringarak, Kunalak, Chatak, quail, goose, laavak, Kapinjal, pigeon, paravat—a special type of pigeon, pareva, dhink, kukkut (cock), vesar, peacock, chakor, hridapundarik (an acquatic bird), Karak, eagle, vulture, vaayas, kaak, Vihag, white chaas Valguli, bat, vitat bird (bird found only outside two and a half continents inhabited by human beings), Samudag bird and the like These are various types of birds The violent people hunt them

अन्य विविध प्राणी OTHER DIFFERENT LIVING BEINGS

१०. जल–थल–खग–चारिणो उ पंचिंदियपसुगणे बिय–तिय–चउरिंदिए विविहे जीवे पियजीविए मरणदुक्खपडिकूले वराए हणंति बहुसंकिलिट्ठकम्मा।

१०. जल, स्थल और आकाश मे विचरण करने वाले पचेन्द्रिय प्राणी तथा पशु एव द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय अथवा चतुरिन्द्रिय प्राणी अनेकानेक प्रकार के होते है। इन सभी प्राणियो को जीवित रहना प्रिय है। मरण का दु ख प्रतिकूल–अप्रिय है। फिर भी अत्यन्त सक्लिष्टकर्मा–अतीव क्लेश उत्पन्न करने वाले कर्मों से युक्त पापी पुरुष इन मूक दीन–हीन प्राणियो का वध करते है।

10. There are many types of five-sensed creatures and animals moving about in water on land and in sky There are also two-sensed, three-sensed and four-sensed creatures All these creatures love life They detest death Even than sinful persons with complex pain-causing Karmas kill these moot two-three-four sensed living beings.

विवेचन - ससार के समस्त जीवो के मुख्य भेद सलग्न तालिका से समझे जा सकते है-

- त्रस
  - द्वीन्द्रिय
  - त्रीन्द्रिय
  - चतुरिन्द्रिय
  - पचेन्द्रिय
    - तिर्यंच
      - १ जलचर
      - २ स्थलचर
      - ३ खेचर
      - ४ उर परिसर्प
      - ५ भुजपरिसर्प
    - मनुष्य
    - नारक
    - देव
- स्थावर
  - एकेन्द्रिय
    - १ पृथ्वीकाय
    - २ अप्काय
    - ३ तेजस्काय
    - ४ वायुकाय
    - ५ वनस्पतिकाय

द्वीन्द्रियादि जीव अपूर्ण इन्द्रियो वाले है, अत विकलेन्द्रिय कहे जाते है। प्रस्तुत सूत्र मे स्थावर जीवो तथा विकलेन्द्रिय जीवो का उल्लेख नही करके त्रस पचेन्द्रिय जीवो के सम्बन्ध मे ही उल्लेख है।

सभी जीवो मे जीवित रहने की उत्कट अभिलाषा होती है। किन्तु विकलेन्द्रिय तथा तिर्यंच पचेन्द्रिय जीव प्राय स्पष्ट वाणी शक्ति का अभाव होने के कारण अपनी वेदना स्पष्ट प्रकट नही कर सकते तथा अपना बचाव करने का सामर्थ्य भी मानव जैसा उनमे नही होता। निर्दय स्वार्थी मनुष्य विविध प्रयोजनो से उन जीवो की हिंसा करते है, जिसका निर्देश अगले सूत्रो मे किया गया है।

Elaboration—The primary categories of the living beings in this world can be understood from the following table—

- **Mobile**
  - Two-sensed
  - Three-sensed
  - Four-sensed
  - Five-sensed
    - 1 Acquatic
    - 2 Moving on land
    - 3 Moving in sky
    - 4. Moving with breast
    - 5 Moving with arms
    - Human beings
    - Hellish beings
    - Gods
- **Immobile**
  - One-sensed
    - 1. Earth-bodied
    - 2 Water-bodied
    - 3 Fire-bodied
    - 4 Air-bodied
    - 5. Plant-bodied

The living beings having two, three or four senses are called Vikalendriya as they do not have all the five senses. In the present Sutra

such living beings and the immobile living beings have not been described It relates to only five-sensed living beings

All the living beings have a keen desire to live But Vikalendriya and five-sensed animals cannot express their feelings clearly because they do not have a distinct power of expressing it through words Further they are not as capable of safe-guarding themselves as human beings Selfish, cruel persons kill them for various needs and the same has been expressed in the Sutras ahead

हिंसा करने के प्रयोजन **PURPOSE OF CAUSING VIOLENCE**

११. इमेहिं विविहेहिं कारणेहिं, किं ते ?

चम्म–वसा–मंस–मेय–सोणिय–जग–फिप्फिस–मत्थुलुंग–हिय–यंत–पित्त–फोफस–दंतट्ठा–अट्ठि–मिंज–णह–णयण–कण्ण–ण्हारुणि–णक्क–धमणि–सिंग–दाढि–पिच्छ–विस–विसाण–वालहेउं।

हिंसंति य भमर–महुकरिगणे रसेसु गिद्धा तहेव तेइंदिए सरीरोवगरणट्ठयाए किवणे बेइंदिए बहवे वत्थोहर परिमंडणट्ठा।

११ चमडा, चर्बी, मॉस, मेद, रक्त, यकृत, फेफडा, भेजा, हृदय, ऑत, पित्ताशय, फोफस–शरीर का एक विशिष्ट अवयव (फुप्फुस), दाँत, अस्थि–हड्डी, मज्जा, नाखून, नेत्र, कान, स्नायु, नाक, धमनी, सींग, दाढ, पिच्छ, विष, विषाण–हाथीदॉत तथा शूकरदत और बालो के लिए (हिसक प्राणी जीवो की हिसा करते है)।

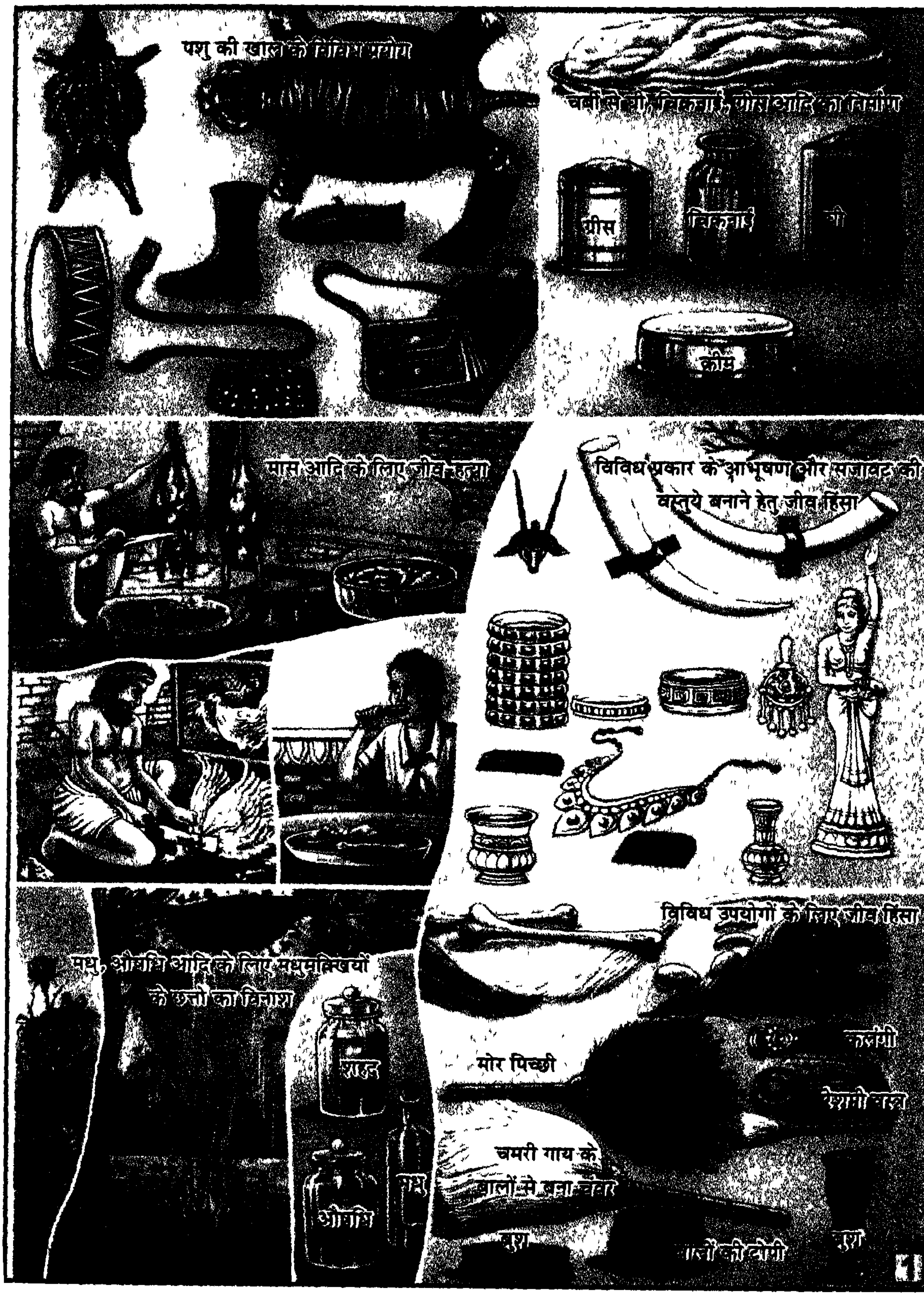
रस मे आसक्त मनुष्य मधु के लिए भ्रमर–मधुमक्खियो का हनन करते है, शारीरिक सुख या दु ख–निवारण करने के लिए खटमल आदि त्रीन्द्रिय जीवो का वध करते है, (रेशमी) वस्त्रो के लिए अनेक प्रकार के द्वीन्द्रिय कीडो आदि का घात करते है।

11. The violent human beings hunt the living beings for their skin, fat, marrow, meat, blood, lungs, brain, heart, nerves, teeth, bones, nails, eyes, ears, intestine, nose, horn, molars, flock of hair, poison, tusk and hair

The human beings deeply attached to honey are violent to the bees They kill bugs for their physical comfort or to avoid pain In order to procure silk, they kill two-sensed silk worms and other worms of various types

विवेचन अनेक प्रकार के वाद्यो, जूतो, बटुवा, घडी के पट्टे, कमरपट्टे, सन्दूक, बैग, थैला, टोपियाँ, कोट, कपडे आदि भिन्न–भिन्न प्रयोजनो के लिए पचेन्द्रिय जीवो का वध किया जाता है, क्योकि इन वस्तुओ के लिए मुलायम चमडा चाहिए और वह स्वाभाविक रूप से मृत पशुओ से प्राप्त नही होता। स्वाभाविक रूप से मृत पशुओ की चमडी अपेक्षाकृत कडी होती है। अत्यन्त मुलायम चमडे के लिए तो विशेषत छोटे बच्चो या गर्भस्थ

हिंसा के विविध कारण


पशु की खाल के विविध प्रयोग
चर्बी से घी, चिकनाई, ग्रीस आदि का निर्माण
ग्रीस
चिकनाई
घी
क्रीम
मांस आदि के लिए जीव हत्या
विविध प्रकार के आभूषण और सजावट की वस्तुये बनाने हेतु जीव हिंसा
विविध उपयोगों के लिए जीव हिंसा
मधु, औषधि आदि के लिए मधुमक्खियों के छत्तों का विनाश
शहद
मधु
औषधि
कलंगी
मोर पिच्छी
रेशमी वस्त्र
चमरी गाय के बालों से बना चंवर
ब्रुश
बालों की टोपी
ब्रुश

चित्र-परिचय 1

Illustration No. 1

हिंसा के विविध कारण

मनुष्य विविध प्रयोजनो से जीव हिसा करता है। कोई चमडे के जूते, घड़ी के पट्टे, कमर पट्टे, बेग, थेला, टोपी, कोट आदि बनाने के लिए जीवो का वध करता है। कोई चर्बी, मास, रक्त, यकृत, हड्डी, दाँत आदि के लिए जीवो का वध करता है। कोई शहद के लिए मधु मक्खी के छत्तो का विनाश करता है। सूअर के बाल, ब्रुश आदि के काम आते हैं। जानवरो की खाल मनुष्य के वस्त्र आदि के काम आती है। मोर के पखो मे मोर पिच्छी बनती है जिसे देवी-देवताओ की मूर्तियो के प्रमार्जन आदि के काम मे लेते है। इसके अतिरिक्त पहले जिन कारणो से हिंसा होती थी, उसमे वर्तमान युग मे बहुत वृद्धि हो गई है। यह सभी कारण मनुष्य की पैशाचिक वृत्ति को प्रकट करते है। प्रस्तुत चित्र मे हिसा के विभिन्न प्रायोजन बताये गये है।

—सूत्र 11, पृ. 22

VARIOUS CAUSES OF VIOLENCE

Man causes violence to living beings for various reasons. Someone kills animals and get leather for making a variety of items including shoes, watchstraps, belts, purses, handbags, hats and dresses. Some people kill animals for fat, meat, blood, level, bones, teeth and horns. Others destroy beehives for honey. Pig hairs are used for a variety of brushes. Leather is used for dresses and other things of human use. Peacock feathers are used to make fans and brooms that have various uses including cleaning idols of gods and goddesses. Moreover in the modern world there has been a sizeable increase in the number causes of violence against living beings as compared with ancient times. All these causes reveal the evil attitude of man. The illustration presents different reasons for violence.

—Sutra-11, page-22

बच्चो का वध करना पडता है। प्रथम गाय, भैस आदि का घात करना, फिर उनके उदर को चीरकर गर्भ मे स्थित बच्चे को निकालकर उनकी चमडी उतारना अत्यन्त निर्दयतापूर्ण कार्य है। इस निर्दयता के सामने पैशाचिकता भी लज्जित होती है। इन मूक जीवो की हिंसा करने वाले तो हिंसक है ही, किन्तु इन वस्तुओ का उपयोग करने वाले भी इस अमानवीय घोर पाप के लिए उत्तरदायी है। यदि वे इन वस्तुओ का उपयोग न करे तो ऐसी हिसा होने का प्रसग ही उपस्थित नही हो।

चर्बी खाने, चमडी को चिकनी रखने, यत्रो मे चिकनाई देने तथा दवा आदि मे काम आती है। माँस, रक्त, यकृत, फेफडा आदि खाने तथा दवाई आदि के काम मे लिया जाता है। वर्तमान मे माँसाहार की बढती प्रवृत्ति पर समूचे ससार मे स्वास्थ्य प्रेमी वैज्ञानिको मे चिन्ता व्याप्त है। उनका कहना है माँसाहार के कारण ससार मे हत्याएँ, दुष्कर्म, असाध्य बीमारियाँ और वायुमण्डल का प्रदूषण बढ रहा है। माँसाहार करने वालो मे अनेक ऐसी असाध्य नई-नई बीमारियाँ उत्पन्न हो रही है, जिसकी दवाएँ भी अभी तक नही निकली है। माँसाहार से रोगग्रस्त होकर ससार मे लाखो मनुष्य प्रतिवर्ष मरते है। ससार मे बढता जल सकट, वायु प्रदूषण और मानव जीवन मे बढता तनाव, पारस्परिक वैमनस्य आदि के मूल मे माँसाहार की प्रवृत्ति है। शाकाहार और माँसाहार पर वर्तमान समय मे बहुत साहित्य निकल रहा है। अत यहाँ इसका विस्तार अपेक्षित नही है।

इसी प्रकार मेद, रक्त, यकृत, फेफडा, आँत, हड्डी, दन्त, विषाण आदि विभिन्न अगो के लिए भी भिन्न-भिन्न प्रकार के प्राणियो का घात किया जाता है। मात्र विलासिता के लिए अपने ही समान सुख-दु ख का अनुभव करने वाले, दीन-हीन, असहाय, मूक और अपना बचाव करने मे असमर्थ निरपराध प्राणियो का हनन करना हृदयहीनता और अन्तरतम मे पैठी पैशाचिक वृत्ति का प्रकटीकरण है। विवेकशील मानव को इस प्रकार की वस्तुओ का उपयोग करना किसी भी प्रकार उचित नही कहा जा सकता।

Elaboration—Soft leather is required for various types of musical instruments, shoes, purses, straps of watches, belts, boxes, bags, hand bags, caps, coats, apparel and the like It is not available from the creatures that have a natural death So five-sensed animals and beasts are hunted for these purposes The skin of the animals who die naturally is generally hard In order to procure very soft leather, very small off-springs or that still in the womb has to be killed It is a very cruel act to kill cow, buffalo and the like and later to take out their off-spring from the womb by tearing its belly in order to remove the skin of that off-spring Such a cruelty is more dreadful than even that committed by a demon Those who kill in this manner are certainly violent people Even those who use such products made of their leather are responsible for this inhuman sin In case they do not make use of such products, there won't be any longer a cause of committing such a violence

Marrow is used for edible products for keeping human skin soft and for medicines Flesh, blood, liver and the like are used for human consumption and medicines. Those engaged in scientific research for human health all over the world are worried about the increasing habit

of non-vegetarian diet in the present world They are of the view that murders, violent activities, incurable diseases, pollution of the environment in the world is on the increase because of non-vegetarianism. Many new incurable diseases are appearing in those who take meat The medicines to cure such diseases could not be found as yet Millions of people die every year due to diseases caused by consumption of meat Non-vegetarianism is the fundamental cause of increasing shortage of water, air pollution, increasing tension and mutual friction among the human beings Information in plenty is published at present about vegetarian and non-vegetarian diet So it need not be described in greater detail here

Similarly various types of living beings are humbled for their marrow, blood, liver, lung, intestines, teeth, bones, tusk and the like Just for their luxurious life, the poor, dumb creatures who also feel pleasure and pain like human beings, who are incapable of protecting themselves from such a cruelty, and who have not committed any sin are killed It depicts that such killers have no compassion and their inner nature is demon-like The use of such products manufactured through violence to animals can in no way be justified for a discriminating human being

१२. अण्णेहि य एवमाइएहिं बहूहिं कारणसएहिं अबुहा इह हिंसंति तसे पाणे। इमे य-एगिंदिए बहवे वराए तसे य अण्णे तयस्सिए चेव तणुसरीरे समारभंति।

अत्ताणे, असरणे, अणाहे, अबधवे, कम्मणिगडबद्धे, अकुसलपरिणाम-मंदबुद्धिजणदुव्विजाणए, पुढविमए, पुढविसंसिए, जलमए, जलगए, अणलाणिल-तण-वणस्सइगणणिस्सिए य तम्मयतज्जिए चेव तयाहारे।

तप्परिणय-वण्ण-गध-रस-फास-बोदिरूवे अचक्खुसे चक्खुसे य तसकाइए असखे। थावरकाए य सुहुम-बायर-पत्तेय-सरीरणामसाहारणे अणंते हणति अविजाणओ य परिजाणओ य जीवे इमेहिं विविहेहिं कारणेहिं।

१२. जिनमे सद्बुद्धि का अभाव है, ऐसे अज्ञानी पापी लोग पूर्वोक्त तथा अन्य अनेकानेक प्रयोजनो से त्रस-चलते-फिरते, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और पचेन्द्रिय जीवो का घात करते है तथा बहुत-से एकेन्द्रिय जीवो का, उन एकेन्द्रिय जीवो के आश्रित अन्य सूक्ष्म शरीर वाले त्रस जीवो का भी घात करते है।

ये प्राणी **त्राणरहित** है-उनके पास अपनी रक्षा के साधन नही है, **अशरण** है-उन्हे कोई शरण देने वाला नही है, वे अनाथ है, बन्धु-बान्धवो से रहित है-सहायक विहीन है और बेचारे अपने कृत कर्मो की बेडियो से जकडे हुए है। जिनके अन्त करण की वृत्तियाँ अशुभ है, जो मन्द बुद्धि है, वे इन प्राणियो

के अस्तित्व को नही मानते, तो फिर इनकी वेदना कैसे जानेगे ? वे अज्ञानी जन न पृथ्वीकाय को जानते है, न पृथ्वीकाय के आश्रित रहे अन्य स्थावरो एव त्रस जीवो को जानते है। उन्हे जलकायिक तथा जल मे रहने वाले अन्य त्रस-स्थावर जीवो का ज्ञान नही है। उन्हे अग्निकाय, वायुकाय, तृण तथा (अन्य) वनस्पतिकाय के एव इनके आधार पर रहे हुए अन्य जीवो का परिज्ञान नही है। ये प्राणी उन्ही (पृथ्वीकाय आदि) के स्वरूप वाले, उन्ही के आधार से जीवित रहने वाले अथवा उन्ही का आहार करने वाले है।

उन जीवो का वर्ण, गध, रस, स्पर्श और शरीर अपने आश्रयभूत पृथ्वी, जल आदि के सदृश होता है। उनमे से कई जीव नेत्रो से दिखाई नही देते है और कोई-कोई दिखाई देते है। ऐसे असख्य त्रसकायिक जीवो की तथा अनन्त सूक्ष्म, बादर, प्रत्येकशरीर और साधारणशरीर वाले स्थावरकाय के जीवो की जानबूझकर या अनजाने इन (आगे कहे जाने वाले) कारणो से हिसा करते है।

12. For the above said and many other purposes, the ignorant bad people who lack discrimination, hunt mobile living beings including two-sensed, three-sensed, four-sensed and five-sensed living beings During this process they kill many one-sensed living beings and mobile beings having subtle body who are dependent on them

Such living beings have no means for their safety They are orphans They have no friends or relatives to help them They are bound in chains by the fruit of their misdeeds The persons who have polluted mind or whose intellect is dormant, they do no believe in existence of life in such beings So how can they realise the feeling of pain Such persons lacking true knowledge do not understand earth-bodied living beings and the other mobile and immobile living beings dependant on them They have no knowledge about water-bodied beings and the other mobile and immobile to creatures living in water They have no knowledge of fire-bodied, air-bodied and plant-bodied beings and the other living beings dependant on these Such living beings are by nature of the same type as earth-bodied and other bodied living beings They are dependant on them for their life In other words, they use them for their diet.

The colour, smell, taste, touch and the body of such living beings are identical to the earth, water and the like on which they depend Many such creatures are not visible while some are visible to the naked eye. Human beings cause death of innumerable mobile living beings and infinite subtle, gross, separate bodied and common bodied immobile living beings intentionally or inadvertantly for various reasons (that are going to the narrated in following paragraphs)

विवेचन पृथ्वी ही जिन जीवो का शरीर है वे पृथ्वीकायिक कहलाते है। इसी प्रकार जल, अग्नि, वायु और वनस्पति ही जिनका शरीर है, वे क्रमश जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक और वनस्पतिकायिक जीव कहलाते है।

जब कोई मनुष्य पृथ्वीकाय आदि की हिंसा करता है तब वह केवल पृथ्वीकाय की ही हिंसा नही करता, अपितु उसके आश्रित रहे हुए अनेकानेक अन्यकायिक एव त्रसकायिक जीवो की भी हिंसा करता है।

जल के एक बिन्दु मे वैज्ञानिको ने ३६,४५० जीव देखे है, वस्तुत वे जलकायिक नही, जलाश्रित त्रस जीव है। जलकायिक जीव तो असख्य होते है, जिन्हे वैज्ञानिक अभी नही जान सके है।

Elaboration—The living beings whose body is the earth itself are called earth-bodied Similarly those living beings whose body is water, fire, air, plant itself are called water-bodied, fire-bodied, air-bodied and plant-bodied living beings respectively

When a person kills earth-bodied creature and the like, he commits death not only of earth-bodied living beings but he also causes violence to many other bodied immobile living beings and also mobile living beings dependant on them

Scientists have seen 36,450 living beings in a drop of water But in reality, they are not water-bodied living beings They are mobile living beings dependant on water The water-bodied living beings are innumerable and the scientists have not been able to locate them so far

पृथ्वीकाय की हिंसा के कारण CAUSES OF VIOLENCE TO EARTH-BODIED CREATURES

१३. [प्र.] किं ते ?

[उ] **करिसण–पोक्खरिणी–वावि–वप्पिणि–कूव–सर–तलाग–चिइ–वेइय–खाइय–आराम–विहार–थूभ–पागार–दार–गोउर–अट्टालग–चरिया–सेउ–संकम–पासाय–विकप्प–भवण–घर–सरण–लयण–आवण– चेइय–देवकुल–चित्तसभा– पवा–आयतणा–वसह– भूमिघर–मडवाण कए भायणभंडोवगरणस्स य विविहस्स य अट्ठाए पुढविं हिंसंति मंदबुद्धिया।**

१३. [प्र] वे कौन–से कारण है, जिनसे (पृथ्वीकायिक) जीवो का वध किया जाता है ?

[उ] कृषि, पुष्करिणी (चौकोर बावडी जो कमलो से युक्त हो), बावडी, क्यारी, कूप, सर, तालाब, भित्ति, वेदिका, खाई, आराम, विहार (मठ), स्तूप, प्राकार, द्वार, गोपुर (नगर का मुख्य द्वार) अटारी, चरिका (नगर और कोट के बीच का आठ हाथ प्रमाण मार्ग), सेतु–पुल, सक्रम (ऊबड–खाबड भूमि को पार करने का मार्ग), **प्रासाद**–राजमहल, बगला या प्रासाद, भवन, गृह, **सरण**–झौपडी, **लयन**–पर्वत खोदकर बनाया हुआ स्थान, गुफा, दुकान, **चैत्य**–यक्षायतन आदि या छतरी और स्मारक, देवकुल–शिखरयुक्त देवालय, चित्रसभा, प्याऊ, आयतन, देवस्थान, आवसथ–तापसो का आश्रम,

भूमिगृह—तलघर और मडप (तम्बू) आदि के लिए तथा नाना प्रकार के **भाजन**—सोने—चाँदी आदि धातुओ के पात्र, **भाण्ड**—मिट्टी आदि के बर्तन एव लकडी आदि के उपकरणो के लिए मन्द बुद्धि जन पृथ्वीकाय की हिंसा करते है।

13. [Q.] What are the causes for violence to earth-bodied living beings ?

[Ans.] People with dormant intellect commit violence to earth-bodied living beings for agriculture, making lotus-bedded lake, ordinary lake, well, tank, wall, vedika, ditch, rest house, pillar, boundary wall, gate, main gate of the town, terrace, highway, bridge, path to cross undulating area, palace, bungalow, building, house, hut, processing level ground by cutting mountain, cave, shop, temple, canopy, memorial, temple having canopy, theatre, water hut, ashram for ascetics, basement, setting up tent and the like, for manufacturing pots of silver, gold and other metals, earthen pots and wooden pots

विवेचन प्रस्तुत सूत्र मे कथित वस्तुओ के नाम तो सक्षेप मे सकेत मात्र है। इन उल्लिखित वस्तुओ के लिए ही पृथ्वीकाय की हिसा होती है, ऐसा नही समझना चाहिए। अत पृथ्वीकाय का घात जिन—जिन वस्तुओ के लिए किया जाता है, उन सभी का ग्रहण यहाँ कर लेना चाहिए।

Elaboration—In the present paragraph, the articles mentioned are just an indication It should not be understood that violence to earth-bodied living beings is caused only for such articles In fact, one should take note of all those things which are manufactured by causing violence to each bodied living beings

अप्काय की हिंसा के कारण CAUSES OF VIOLENCE TO WATER-BODIED

१४. जलं च मज्जण—पाण—भोयण—वत्थधोवण—सोयमाइएहिं।

१४ मज्जन—स्नान, पान—पीने, भोजन, वस्त्र धोना एव **शौच**—शरीर, गृह आदि की शुद्धि इत्यादि विविध कारणो से जलकायिक जीवो की हिंसा की जाती है।

14. Violence to water-bodied living beings is caused for taking bath, for preparing food, for drinking, for washing clothes, for toilet and for cleaning house and the like

तेजस्काय की हिंसा के कारण CAUSES OF VIOLENCE TO FIRE-BODIED LIVING BEINGS

१५. पयण—पयावण—जलावण—विदंसणेहिं अगणिं।

१५. भोजनादि पकाने, पकवाने, दीपक आदि जलाने तथा प्रकाश करने के लिए अग्निकाय के जीवो की हिंसा की जाती है।

15. Violence to fire-bodied living beings is caused for cooking, lighting the lamp and for light

वायुकाय की हिंसा के कारण CAUSES OF VIOLENCE TO AIR-BODIED LIVING BEINGS

१६. सुप्प–वियण–तालयंट–पेहुण–मुह–करयल–सागपत्त–वत्थमाईएहिं अणिलं हिंसंति।

१६. सूप–धान्यादि फटककर साफ करने का छाज आदि उपकरण, व्यजन–पखा, तालवृन्त–ताड का पखा, मयूरपख आदि से, मुख से, हथेलियो से, सागवान आदि के पत्ते से तथा वस्त्र–खण्ड आदि से वायुकाय के जीवो की हिंसा की जाती है।

16. The violence to air-bodied living beings is caused through planks for cleaning grains, fan, fan of palm leaves, peacock feather and also blowing with mouth, waving palms, teak leaves and pieces of cloth

वनस्पतिकाय की हिंसा के कारण CAUSES OF VIOLENCE TO PLANT-BODIED BEINGS

१७. अगार–परियार–भक्ख–भोयण–सयणासण–फलक–मूसल–उक्खल–तत–विततातोज्ज–वहण–वाहण–मंडव–विविह भवण–तोरण–विडंग–देवकुल– जालयद्धचंद–णिज्जूहग–चंदसालिय–वेतिय–णिस्सेणि–दोणि–चंगेरी–खील–मंडक–सभा–पवावसह–गंध–मल्लाणुलेवण, अंबर–जुयणगल–मइय–कुलिय–संदण–सीया–रह–सगड–जाण–जोग्ग–अट्टालग–चरिय–दार–गोउर–फलिहा–जंत–सूलिय–लउड–मुसंढि–सयग्घी–बहुपहरणावरणुवक्खराणकए, अण्णेहिं य एवमाइएहिं बहूहिं कारणसएहिं हिंसंति ते तरुगणे भणियाभणिए य एवमाई।

१७. **अगार**–गृह, **परिचार**–तलवार की म्यान आदि, **भक्ष्य**–मोदक आदि, **भोजन**–रोटी वगैरह, **शयन**–शय्या आदि, **आसन**–बिस्तर–बैठका आदि, **फलक**–पाट–पाटिया, मूसल, ओखली, **तत**–वीणा आदि, **वितत**–ढोल आदि, **आतोद्य**–अनेक प्रकार के वाद्य, **वहन**–नौका आदि, **वाहन**–रथ–गाडी आदि, मण्डप, अनेक प्रकार के भवन, तोरण, **कपोतपाली**–कबूतरो के बैठने के स्थान, देवालय, झरोखा, अर्ध–चन्द्र के आकार की खिडकी या सोपान, **निर्यूहक**–द्वारशाखा दरवाजे के अगल–बगल मे निकले हुए लकडी के कगूरे, **चन्द्रशाला**–अटारी, चौबारा, वेदी, **नि·सरणी**–नसैनी, **द्रोणी**–छोटी नौका, **चगेरी**–बडी नौका या फूलो की डलिया, खूँटी, खम्भा, सभागार, प्याऊ, आश्रम, मठ, सुगधित चूर्ण, माला, विलेपन, चन्दन आदि का लेप वस्त्र, जूवा, **लांगल**–हल, जमीन जोतने के पश्चात् ढेला फोडने के लिए काष्ठ–निर्मित औजार, जिससे भूमि समतल की जाती है, **कुलिक**–विशेष प्रकार का हल–बखर, **स्यन्दन**–युद्ध रथ, **शिविका**–पालकी, रथ, **शकट**–छकडा गाडी, यान, **युग्य**–दो हाथ का वेदिकायुक्त यानविशेष, अट्टालिका, **चरिका**–नगर और परकोटे के मध्य का आठ हाथ का चौडा मार्ग, **परिघ**–द्वार, फाटक, आगल, अरहट आदि, शूली, लकडी–लाठी, मुसुढी बदूक आदि, **शतघ्नी**–तोप या महासिला जिससे सैकडो का हनन हो सके तथा अनेकानेक प्रकार के शस्त्र, ढक्कन एव अन्य उपकरण बनाने के लिए और इसी प्रकार के ऊपर कहे गये तथा नही कहे गये ऐसे बहुत–से सैकडो कारणो से अज्ञानी जन वनस्पतिकाय की हिंसा करते है।

17. People construct house, sheaths for the sword, sweat-meat balls and food They make beds, beddings, wooden pots, wooden rods, vessels, sitar, many musical instruments, boats, carts, chariots, tent houses, buildings, gates, places for stay of pigeons temples, windows, windows of half-moon shape, stairs and handles to close the door, pointed outlets on doors (niryuhak), terrace, stair-case (nissarni), small boat (droni), large boat (changeri), flower-basket, pegs, pillars, conference hall, ashrams, places for serving water, fragrant powder, garlands, paste, paste of sandalwood, clothes, yoke, plough, wooden weapon to dig earth and level the humps after ploughing the field, Kulik (a special type of plough), chariot for battle field, palanquin, wooden cart, yugya (special transport measuring two-haath, and having a Vedika), tops of buildings, eight haath wide path at the centre of the town from its boundary wall, gates, doors, door closet, arhat and the like, stick, gun, huge armoury that could kills hundreds of people at a time They also manufacture many types of weapons, covers and many other articles of the type above-mentioned and even not mentioned Thus ignorant people commit violence to plant bodied living beings through many suchlike causes

विवेचन वनस्पतिकाय की सजीवता अब केवल शास्त्रो मे ही नही, अपितु विज्ञान से भी सिद्ध हो चुकी है। वनस्पति का आहार करना, आहार से वृद्धिगत होना, छेदन-भेदन करने से मुरझाना आदि जीव के लक्षण प्रत्यक्ष देखे जा सकते है। वनस्पति मे क्रोध, मान, माया, लोभरूप कषाय है, आहार, भय, मैथुन, परिग्रहरूप सज्ञाएँ है। वे मानव की तरह सुख-दु ख का अनुवेदन करते है। अतएव वनस्पति की सजीवता मे किचित् भी सन्देह के लिए अवकाश नही है। वनस्पति का हमारे जीवन के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध है। तथापि निरर्थक आरम्भ का विवेकी जन सदैव त्याग करते है।

वृक्षो के अनाप-शनाप काटने से आज विशेषत भारत का वायुमण्डल बदलता जा रहा है। वर्षा की कमी हो रही है। लगातार अनेक प्रान्तो मे सूखा पड रहा है। हजारो मनुष्य और लाखो पशु मरण-शरण हो रहे है। जैनशास्त्र सदा से ही मानव-जीवन के लिए वनस्पति की उपयोगिता और महत्ता का प्रतिपादन करते चले आ रहे है। वैदिक ग्रन्थो मे भी वृक्ष आदि को पुत्रवत् स्नेह करने का कथन है। वृक्ष मानव के सबसे बडे मित्र व प्राणपोषक है। वनस्पति की हिंसा से पर्यावरण पर अत्यन्त दुष्प्रभाव पडता है।

Elaboration—Life in plants is not just a subject of scriptures. It has been established by scientific research also It is clearly noticed that the vegetation grows when it is provided requisite food and it decays when it is cut or pierced and this fact establishes that there is life in vegetation. The plant-bodied living beings have the four passions namely anger, ego,

deceit and greed They have a desire for food. They have sense of fear, sensual desire of mating and also attachment They feel pleasure and pain like human beings So there is no scope of any doubt in believing that plant has life

Vegetable has intimate influence on our daily life Still discriminating people avoid violent activity towards plant life when it is without any definite purpose

The environment of the world and of India in particular is changing adversely due to indiscriminate cutting of trees It is causing dearth of rain-fall Many states are experiencing famine continuously Thousands of human beings and millions of animals are dying Jain scriptures have always laid emphasis on benefits of plant life for human beings and its importance Even in Vedic scriptures, it is mentioned that trees and the like should be loved like sons The trees are the most intimate friends of mankind and provide strength to their life-force Violence towards plant life causes the most adverse effect on the environment

हिंसक जीवो का दृष्टिकोण **APPROACH OF VIOLENT LIVING BEINGS**

१८. सत्ते सत्तपरिवज्जिया उवहणंति दढमूढा दारुणमई कोहा माणा माया लोहा हस्स रई अरई सोय वेयत्थी जीय–धम्मत्थ–कामहेउं सवसा अवसा अट्ठा अणट्ठाए य तसपाणे थावरे य हिंसति मदबुद्धी।

सवसा हणति, अवसा हणंति, सवसा–अवसा दुहओ हणंति। अट्ठा हणंति, अणट्ठा हणति, अट्ठा–अणट्ठा दुहओ हणंति। हस्सा हणंति, वेरा हणंति, रईय हणंति, हस्सा–वेरा–रईय हणंति। कुद्धा हणंति, लुद्धा हणंति, मुद्धा हणंति, कुद्धा–लुद्धा–मुद्धा हणंति। अत्था हणंति, धम्मा हणंति, कामा हणंति, अत्था–धम्मा–कामा हणति।

१८. कुछ मद बुद्धि जीव जो हिताहित के विवेक से सर्वथा शून्य अज्ञानी, दारुण मति वाले होते है, वे क्रोध से प्रेरित होकर, मान, माया और लोभ के वशीभूत होकर तथा हँसी-दिलबहलाव के लिए, रति, अरति एव शोक के अधीन होकर, यज्ञ आदि वेदानुष्ठान के लिए जीवन, धर्म, अर्थ एव काम के लिए, (कभी) **स्ववश**–अपनी इच्छा से और (कभी) **परवश**–पराधीन होकर, (कभी) प्रयोजन से और (कभी) बिना प्रयोजन के त्रस तथा स्थावर जीवो का घात करते है।

वे बुद्धिहीन क्रूर प्राणी स्ववश (स्वतत्र) होकर घात करते है, विवश होकर घात करते है, स्ववश-विवश दोनों प्रकार से घात करते है। कई प्रयोजन से घात करते है, कई निष्प्रयोजन घात करते है, कई सप्रयोजन और निष्प्रयोजन दोनो प्रकार से घात करते है। (अनेक पापी जीव) हास्य-विनोद से, वैर से और अनुराग से प्रेरित होकर हिंसा करते है। कई क्रुद्ध होकर घात करते है, कई लुब्ध होकर हिसा करते है, कई मुग्ध होकर, तथा कई क्रुद्ध–लुब्ध–मुग्ध तीनो ही कारणो वश हिंसा करते है। कई

अर्थ के लिए, धर्म के लिए-धर्म मानकर घात करते है, कामभोग के लिए घात करते है तथा अर्थ-धर्म-कामभोग तीनो ही प्रयोजनो से घात करते है।

18. Some people have intellect of low category. They are totally devoid of discrimination between welfare and disaster They lack knowledge and are violent Under the influence of anger, ego, deceit and greed they resort to sensual enjoyment They like non-restraint and dislike moral restraint They kill mobile and immobile living beings in performance of yajna (fire-sacrifice) willingly or under influence of others for the purpose of long life and their desire for more wealth and sensual pleasures and spiritual benefits Their such actions are sometimes with a definite purpose and sometimes without any purpose

Such cruel people of polluted bent of mind kill sometimes independently, sometimes under orders of others and sometimes under both the conditions Many sinners commit acts of violence for their amusement, under influence of earlier enmity, or due to attachment for very dear one Some kill in a fit of anger, some due to their greed, some due to their deep attachment and some due to all the said three causes Some kill for mercy Some, for spiritual award believing it as a spiritual act, some for sex and some for all the said three reasons.

विवेचन पिछले सूत्रो मे मुख्यत हिंसा के बाह्य निमित्तो की चर्चा की गई है और प्रस्तुत सूत्र मे क्रोध, मान, माया, लोभ, हास्य, रति, अरति आदि अन्तरग वृत्तियो की प्रेरणा को हिंसा के कारणरूप मे अकित किया गया है। बाह्य और आभ्यन्तर कारणो से ही कार्य की निष्पत्ति होती है। अन्तर मे स्वार्थ व कषायादि दूषित वृत्तियाँ न हो तो केवल बाह्य प्रयोजनो के लिए हिसा नही की जाती अथवा कम से कम अनिवार्य हिंसा ही की जाती है। इसके विपरीत अनेक सुसस्कारहीन, कल्मषवृत्ति वाले, निर्दय मनुष्य मात्र मनोविनोद के लिए, मरते हुए प्राणियो को छटपटाते-तडफते देखकर आनन्द अनुभव करने के लिए अत्यन्त क्रूरतापूर्वक हिरण, खरगोश आदि निरपराध भद्र प्राणियो का घात करने मे भी नही हिचकते।

मूल मे धर्म एव वेदानुष्ठान के निमित्त भी हिसा करने का उल्लेख किया गया है। इसमे मूढता-मिथ्यात्व ही प्रधान कारण है। बकरा, भैसा, गाय, अश्व आदि प्राणियो की अग्नि मे आहुति देकर अथवा अन्य प्रकार से उनका वध करके स्वर्ग-प्राप्ति का मनोरथ करना, जहर खाकर अमर बनने के मनोरथ के समान है।

Elaboration—In the earlier Sutras (maxims) the external causes of violence have been discussed primarily In the present maxim, the influence of inner nature represented by anger, ego, deceit, greed, mocking gestures, have been pointed out as causes of violence A task is completed only with external and internal causes. In case there is no selfish or polluted activity in the mind, the violence is not done simply for external purpose In such a case only the least possible violence is

done which is absolutely necessary in that situation On the other hand, many persons, who are uncivilized, cruel and of polluted mind commit acts of violence simply for enjoyment They experience great pleasure in seeing the creatures moaning due to pangs of death They do not hesitate killing mercilessly innocent deer, rabbit and the like

In Vedic tradition, there is a mention of committing violence even for religious practices and customs This is due to ignorance about the true philosophical thought The desire of attaining salvation by sacrificing goat, he-buffalo, cow, horse and like in fire or in any other way is like the desire of becoming immortal by taking poison

हिंसक जनो के विविध प्रकार **VARIOUS TYPES OF VIOLENT LIVING BEINGS**

१९. [प्र.] कयरे ते ?

[उ] जे ते **सोयरिया मच्छबंधा साउणिया वाहा कूरकम्मा वाउरिया दीवित–बंधणप्पओग–तप्पगल–जाल–वीरल्लगायसीदब्भ–वग्गुरा–कूडछेलियाहत्था।**

हरिएसा साउणिया य वीदंसगपासहत्था वणचरगा लुद्धगा महुघाया पोयघाया एणीयारा पएणीयारा सर–दह–दीहिय–तलाग–पल्लल–परिगालण–मलण–सोत्तबंधण–सलिलासयसोसगा विसगरलस्स य दायगा उत्तणवल्लर–दवग्गि–णिद्दया पलीवगा कूरकम्मकारी।

१९. [प्र] वे हिसा करने वाले पापिष्ट प्राणी कौन–कौन है ?

[उ] **शौकरिक**–जो सूअर का शिकार करते है, **मत्स्यबन्धक**–धीवर जो मछलियो को जाल मे बाँधकर मारते है, **बहेलिए** जो पक्षियो को जाल मे फँसाकर घात करते है। **व्याध**–शिकारी जो, हिरणो को फँसाकर मारते है। **क्रूरकर्मा, वागुरिक**–मृग आदि को जाल मे फँसाने के लिए घूमते है, जो मृगादि को मारने के लिए चीते आदि जीवो के साधन काम मे लेते है, मृग आदि को फँसाने–बाँधने के लिए, फदा या गुलेल रखते है। मछलियाँ पकडने के लिए, छोटी नौकाएँ, गल–मछलियाँ पकडने के लिए काँटे पर आटा या माँस, जाल, बाज पक्षी, लोहे का जाल, डाभ या नारियल की बनी रस्सी, कूटपाश, चीता आदि को पकडने के लिए पिजरे आदि मे अथवा किसी स्थान पर बाँधी हुई बकरी अथवा बकरा रखते है। इन सब साधनो को साथ मे लेकर फिरने वाले–इन साधनो का प्रयोग करने वाले।

चाण्डाल, चिडीमार, बाज पक्षी तथा जाल को रखने वाले भील आदि वनवासी, शहद के या माँस के लिए मधुमक्खियो का घात करने वाले, **पोतघातक**–पक्षियो के बच्चो का घात करने वाले, मृगो को आकर्षित करने के लिए हरिणी को साथ लिए घूमने वाले, सरोवर, ह्रद, वापी, तालाब, क्षुद्र जलाशय को मत्स्य, शख आदि प्राप्त करने के लिए खाली करने वाले, जलाशय को किसी उपाय से सुखाने वाले, विष अथवा अन्य वस्तु मे मिले विष को खिलाने वाले, उगे हुए तृण–घास एव खेत को निर्दयतापूर्वक जलाने वाले, ये सब क्रूरकर्मकारी है।

19. [Q.] Who are the sinners indulging in such violence ?

[Ans.] Saukarik (one who hunts pig), **Matsyabandhak** (those who do fishing to kill them), baheliyas (bird hunters) and hunters of deer are the various types of sinners engaged in sinful activities. Kroorakarma (one engaged in cruel activities), Vrigarik (those who move about in order to hunt deer by catching them in the net and also take the help of leopard and the like for this purpose) They keep rope or sling-shot to tie deer They use small boats to catch fish They use meat or kneaded floor at the tip of sharp thorny substance to catch fish They also use iron net, coconut rope and net to catch eagle They keep cages to catch leopards and tie a goat at a particular place to attract it They keep with them all the above said material and wander about in search of their prey.

There are rogues, bird-hunters, bhils and foresters who keep hawk and net for hunting, those who kill bees to collect honey or meat and also those who kill chics of birds Some move about with a doe in order to attract deer Some drain out tanks, lake, small collection of water in order to procure fishes and conch-shells Some get these reservoirs dried up for the said purpose Some serve poison or substance mixed with poison Some brutally burn green grass All such people are termed as those engaged in dreadful profession

हिंसा करने वाली जातियाँ TRIBES ENGAGED IN VIOLENCE

२०. इमे य बहवे मिलक्खुजाई।

[प्र.] के ते ?

[उ.] सक–जवण–सबर–बब्बर–गाय–मुरुंडोद–भडग–तित्तिय–पक्कणिय–कुलक्ख–गोड–सीहल–पारस–कोचंध–दविल–बिल्लल–पुलिंद–अरोस–डोंब–पोक्कण–गंधहारग–बहलीय–जल्ल–रोम–मास–बउस–मलया–चुंचुया य चूलिया कोंकणगा–मेत्त–पण्हव–मालव–महुर–आभासिय–अणक्ख–चीण–लासिय–खस–खासिया–नेहुर–मरहट्ठ–मुट्ठिय–आरब–डोबिलग–कुहण–केकय–हूण–रोमग–रुरु–मरुया–चिलायविसयवासी य पावमइणो।

२०. उनके अतिरिक्त ये बहुती–सी म्लेच्छ जातियाँ भी है, जो प्राणी हिंसा मे सलग्न रहती है।

[प्र.] वे (जातियाँ) कौन–सी है ?

[उ] शक, यवन, शबर, बब्बर, काय, मुरुड, उद, भडक, तित्तिक, पक्कणिक, कुलाक्ष, गौड, सिहल, पारस, क्रौच, आन्ध्र, द्रविड, बिल्वल, पुलिद, आरोष, डौब, पोकण, गान्धार (कधारवासी), बहलीक, जल्ल, रोम, मास, बकुश, मलय, चुचुक, चूलिक, कोकण, मेद, पण्हव, मालव, महुर,

आभाषिक, अणक्क, चीन, ल्हासिक, खस, खासिक, नेहुर, महाराष्ट्र, मौष्टिक, आरब, डोबलिक, कुहण, कैकय, हूण, रोमक, रुरु, मरुक, चिलात आदि म्लेच्छ देशो के निवासी, जो पाप बुद्धि वाले है, (वे हिंसा मे प्रवृत्त रहते है)।

20. In addition to the above mentioned people, there are many rustic tribes who are always engaged in violence

[Q.] Which are those tribes ?

[Ans.] They are Shakas, Mohammadens, Shabar, Babbar, Kaya, Murund, Uda, Bhadak, Tittik, Pakkanik, Kulaksh, Gaur, Simhal, Paras, Cronch, Andhra, Dravid, Bilval, Pulind, Aarosh, Daumb, Pokan, Gandhar (natives of Kandhar), Bahaleek, Jalla, Romans, Maas, Bakush, Malaya, Chunchuk, Choolik, Konkan, Med, Panhav, Malav, Mahur, Abhashik, Anakk, Chinese, Lhasik, Khas, Khasik, Nehur, Maharashtra, Maushtik, Arabs, Daublik, Kuhan, Kaikaya, Hun, Romak, Ruru, Maruk, Chillat and the like natives of uncivilized areas They have maligned mind (They remain engaged in violence)

विवेचन प्रस्तुत सूत्र मे जिन म्लेच्छ जातियो का नामोल्लेख किया गया है, वह किसी जाति विशेष पर आक्षेप नही है, किन्तु ये जातियाँ प्राय सस्कारो व वातावरण के कारण खूँखार, हिंसा-प्रेमी और बर्बर स्वभाव की होती है। इनके अतिरिक्त जो भी हिसा आदि क्रूर कर्म करते है, शास्त्रकार ने उन्हे म्लेच्छ व मन्द बुद्धि कहा है। क्योकि वे कठोर निर्दय स्वभाव के साथ अपनी आत्मा के हिताहित के ज्ञान से शून्य होते है। हिंसा के कटु परिणामो से अनभिज्ञ होते है। इनमे से अधिकतर अपनी आजीविका के लिए हिसा करते है। कुछ लोग आमोद -प्रमोद मनोरजन के लिए तथा कुछ रसलोलुपतावश जीभ के स्वाद तथा शरीर-पोषण के लिए हिसा करते है।

Elaboration—In this Sutra, the mention of some tribes as uncivilized (malechh) is not an aspersion on any particular tribe But these tribes, primarily because of the environment and the set up in which they live, had become dreadful, addicted to violence and cruel Further the author has called all those as malechh and of malign intellect who do activities of violence It is because they are not only devoid of compassion but they do not have any awareness for the welfare of their soul also They are ignorant of the consequences of the violent behaviour Most of them engage in violence for their livelihood Some of them commit violence for enjoyment, same for their taste and some for nourishing their physical body

२१. जलयर-थयलर-सणप्फ-योरग-खहयर-संडासतुंड-जीवोवग्घायजीवी सण्णी य असण्णिणो पज्जत्ते अपज्जत्ते य असुभलेस्स-परिणामे एए अण्णे य एवमाई करेति पाणाइवायकरणं।

पावा पावाभिगमा पावरुई पाणवहकयरई पाणवहरूवाणुट्ठाणा पाणवहकहासु अभिरमंता तुट्ठा पावं करेत्तु होंति य बहुप्पगारं।

२१. ये पूर्वोक्त विविध देशो और जातियो के लोग तथा इनके अतिरिक्त अन्य जातीय और अन्य देशीय लोग भी, जो अशुभ लेश्या, परिणाम वाले, निकृष्ट विकृत धारा वाले है, वे जलचर, स्थलचर, नख वाले, उरग, नभचर, सडासी जैसी चोच वाले आदि जीवो का घात करके अपनी आजीविका चलाते है। वे सज्ञी, असज्ञी, पर्याप्त और अपर्याप्त जीवो का हनन करते है।

वे पाप बुद्धि वाले पाप को ही अपनाने योग्य मानते है। पाप मे ही उनकी रुचि-प्रीति होती है। वे प्राणियो का घात करके प्रसन्नता व आनन्द का अनुभव करते है। उनका काम प्राणवध करना ही होता है। प्राणियो की हिंसा की कथा-वार्त्ता मे ही वे आनन्द मानते है। वे अनेक प्रकार के पापो का आचरण करके सन्तोष अनुभव करते है।

21. The natures of the above-said states and tribes and even those of other states and tribes who are of maligned thought-activity and bad attitude and who are going astray, earn their livelihood by killing aquatic creatures, the creatures living on land, and moving in the sky, the nail-bearing animals, the Urags and those who have sharp beaks They kill the living beings who have a mind and those who do not possess it, the developed beings and those who are not fully developed

Such people of maligned intellect, believe that it is good for them to engage in bad activities They like to engage in sin They feel happy and elated by killing living beings They feel satisfied by committing sin of various types

विवेचन प्रस्तुत पाठ मे कुछ पारिभाषिक शब्द प्रयुक्त हुए है, जैसे-सज्ञी, असज्ञी, पर्याप्त और अपर्याप्त। उनका आशय इस प्रकार है-

सज्ञी-सज्ञा अर्थात् मनन करने की विशिष्ट चेतना आगे-पीछे के हिताहित का विचार करने की शक्ति जिन प्राणियो को प्राप्त है, ऐसे प्राणी पचेन्द्रियो मे ही होते है।

असज्ञी-जिन जीवो को मन नही होता है असज्ञी कहलाते है, एक इन्द्रिय जीवो से लेकर चार इन्द्रिय वाले सभी जीव असज्ञी होते है और पचेद्रिय मे भी होते है।

पर्याप्त-जिन जीवो को शरीर आदि की इन्द्रियाँ पूर्ण प्राप्त हो चुकी है, वे पर्याप्त कहलाते है।

अपर्याप्त-जिन जीवो को शरीर आदि की इन्द्रियाँ पूर्ण प्राप्त नही हुई है, वे अपर्याप्त कहलाते है।

Elaboration—In this paragraph, some technical terms have been used for instance sanjni, asanjni, paryapt, aparyapt The purport of these words is as under—

Sanjni—Sanjni is the special awakening that helps one to discriminate between good and bad for him Such a trait is only in five-sensed living beings

Asanjni—All the living beings who have only one, two, three or four senses, are asanjni

Paryapt—Those living beings whose sense organs in the physical body have fully developed are called paryapt

Aparyapt—Those living beings whose sense organs have not developed as yet

हिंसा का फल CONSEQUENCES OF VIOLENCE

२२. तस्स य पावस्स फलविवागं अयाणमाणा वड्ढंति महब्भयं अविस्सामवेयणं दीहकाल-बहुदुक्खसंकड णरयतिरिक्खजोणिं।

२२. हिसा मे लिप्त रहने वाले हिंसा के कटु फल-विपाक को नही जानते हुए, अत्यन्त भयानक एव दीर्घकाल पर्यन्त बहुत-से दु खो से परिपूर्ण एव लगातार निरन्तर होने वाली दु खरूप वेदना वाली नरकयोनि और तिर्यंचयोनि को बढाते है, उनमे जाकर उत्पन्न होते है।

22. Those who are engaged in violence, they do not know the dreadful results of it They increase the likelihood of their next span as animal life full of extremely dreadful and full of pain lasting for a long period That life is going to cause them trouble continuously in hellish state and in animal state of existence

विवेचन : हिसा का फल तिर्यंचयोनि और नरकयोनि मे उत्पत्ति बतलाया गया है और वह भी अतीव भयोत्पादक एव निरन्तर दु खो से परिपूर्ण। तिर्यचयोनि की परिधि बहुत विशाल है। एकेन्द्रिय से लेकर चतुरिन्द्रिय तक के सभी जीव तिर्यंचयोनिक ही होते है। पचेन्द्रियो मे चारो गति के जीव होते है। इनमे पचेन्द्रिय तिर्यचयोनिक जीवो के दु ख तो किसी अश मे प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर होते है, किन्तु अन्य एकेन्द्रियादि तिर्यचो के कष्टो को मनुष्य बहुत ही कम जानता है। एकेन्द्रियो के दु ख और वेदना तो कल्पना से भी परे है। नरकयोनि तो एकान्तत दु खमय है ही। इस योनि मे उत्पन्न होने वाले प्राणी जन्मकाल से लेकर मरणकाल तक निरन्तर-एक क्षण के व्यवधान या विश्राम बिना सतत भयानक से भयानक पीडा भोगते ही रहते है। इस प्रकार घोरतम दु खमय वेदना भोगने का जो स्थान है, वही नरकस्थान है। नरक की वेदनाओ का दिग्दर्शन मात्र ही कराया जा सकता है। शास्त्रकार ने उन दु खो का वर्णन आगे किया है।

कुछ लोग मनुष्य और तिर्यचयोनि मे भी घोर नारकीय यातनाएँ भोगते देखे जाते है। इसके पीछे भी उनके कृत दुष्कृत कर्म ही है।

Elaboration—It is said that as a result of acts of violence, one takes re-birth either in hellish state or in animal state of existence The condition there is extremely frightening The sphere of animal state of

existence is very large All the living being who are one-sensed upto four-sensed belong to animal state of existence only The five-sensed living beings are in all the four states of existence The troubles of five-sensed living beings are visible to a certain extent but the troubles of other living beings who belong to one-sensed category and the like are not mostly known to the human beings The pain of one-sensed living beings is so intense that it is beyond any imagination The hellish state is totally troublesome In this state right from the birth upto their end, the living beings continuously without any break even for a moment bear dreadful pain Thus the place where one has to bear the most dreadful torture is hell One can only have a slight glimpse of such pain The author has mentioned these troubles in paragraphs ahead

Some people undergo hellish troubles even in the human and animal state of existence It is also the result of their earlier bad deeds

नरक भूमि वर्णन DESCRIPTION OF HELL

२३. इओ आउक्खए चुया असुभकम्मबहुला उववज्जंति णरएसु।

हुलियं महालएसु वयरामयकुड्ड–रुद्द–णिस्संधि–दार–विरहिय–णिम्मद्दव–भूमितल–खरामरिसविसम–णिरय–घरचारएसु महोसिणसया–पतत्त दुग्गंध–विस्स–उव्वेयजणगेसु।

बीभच्छदरिसणिज्जेसु णिच्चं हिमपडलसीयलेसु कालोभासेसु य भीम–गंभीर–लोमहरिसणेसु णिरभिरामेसु णिप्पडियार–वाहि–रोग–जरा–पीलिएसु अईव णिच्चधयार तिमिस्सेसु पइभएसु ववगय–गह–चद–सूर–णक्खत्तजोइसेसु मेय–वसा–मंसपडल–पोच्चड–पूय–रुहि–रुक्किण्णविलीण–चिक्कण–रसिया वावण्णकुहियचिक्खल्लकद्दमेसु।

कुकू–लाणल–पलित्तजालमुम्मुर–असिक्खुरकरवत्तधारासु णिसिय–विच्छुयडंक–णिवायोवम्म–फरिसअइदुस्सहेसु य।

अत्ताणा असरणा कडुयदुक्खपरितावणेसु अणुबद्ध–णिरंतर–वेयणेसु जमपुरिस–संकुलेसु।

२३. जीवो की हिसा करने वाले वे पापीजन–मनुष्यभव से आयु की समाप्ति होने पर, मृत्यु को प्राप्त होकर अशुभ कर्मों की बहुलता के कारण नरको मे उत्पन्न होते है।

क्षेत्र और आयुष्य की दृष्टि से नरक बहुत विशाल–विस्तृत है। उनकी भित्तियाँ वज्रमय है। उन भित्तियो मे कोई सन्धि–छिद्र नही है, बाहर निकलने के लिए कोई द्वार नही है। वहाँ की भूमि अत्यन्त कठोर है। वह नरकरूपी कारागार विषम है। वहाँ नारकावास अत्यन्त उष्ण एव तप्त रहते है। वे जीव वहाँ दुर्गध के कारण सदैव उद्विग्न–घबराए हुए रहते है।

नरक का दृश्य ही अत्यन्त वीभत्स है, वे देखते ही भयंकर प्रतीत होते है। वहाँ (किन्ही स्थानो मे जहाँ शीत की प्रधानता है) हिम–पटल–बर्फ की पहाडी के सदृश शीतलता बनी रहती है। वे नरक

भयंकर है, गम्भीर एव रोमाच खडे कर देने वाले है, घृणास्पद है। वे नारक जीव असाध्य कुष्ठ आदि व्याधियो, रोगो एव जरा से पीडित रहते है। वहॉ सदैव अन्धकार रहने के कारण प्रत्येक वस्तु अतीव भयानक लगती है। ग्रह, चन्द्रमा, सूर्य, नक्षत्र आदि का प्रकाश वहॉ नही होता। मेद, चर्बी, माँस के ढेर होने से वह स्थान अत्यन्त घृणास्पद है। पीव और रुधिर के निरन्तर बहते रहने से वहाँ की भूमि गीली और चिकनी रहती है और कीचड–सी बनी रहती है।

(जहाँ उष्णता की प्रधानता है) वहाँ का स्पर्श दहकती हुई करीष की अग्नि या खदिर (खैर) की अग्नि के समान उष्ण तथा तलवार, उस्तरा अथवा करौत की धार के सदृश तीक्ष्ण है। वह स्पर्श बिच्छू के डक से भी अधिक वेदना उत्पन्न करने वाला अतिशय दुस्सह्य है। वहाँ के नारक जीव त्राण और शरणविहीन है–न कोई उनकी रक्षा करने वाला है, न उन्हे आश्रय देने वाला है। वे नरक कटुक दु खो के कारण घोर परिणाम उत्पन्न करने वाले है। वहॉ लगातार दु खरूप वेदना चालू ही रहती है–पलभर के लिए भी चैन नही मिलता। वहाँ यमपुरुष अर्थात् पन्द्रह प्रकार के असुर जाति के परमाधामी देव उन्हे घेरे रहते है। नारको को भयकर–भयकर यातनाएँ देते है। (जिनका वर्णन आगे किया जायेगा।)

23. The evil people who commit violence on living beings are re-born in the hell after completing their present life-span because of the bad Karmas collected by them in plenty

So far as area and the life-span is concerned, the hell is very large Its walls are extremely hard like Vajra There are no holes in them There is no door for coming out from the hell Its ground is extremely hard The hellish prison is undulating The halls in the hell are extremely hot and remain scorching The living beings there remain bewildered because of foul smell

The hellish scene is very dreadful It appears very drastic at the very first appearance At those places in the hell where cold is in abundance, it is as cold as snow covered hills Such hells are dreadful, drastic and worthy of contempt The hellish beings suffer from incurable diseases like leprosy and others and affect of old age Since there is always darkness in hell, every thing there appears to be extremely frightening Planets, the moon, the sun, constellations and the like providing light are not there There are heaps of marrow, and meat So that place is extremely detestable Since blood and mucus flow continuously, the ground remains greasy and slippery It appears as if it is muddy continuously

The touch of the hell where heat is in abundance is as burning as the fire of dung cakes or of khair wood It is as sharp as the edge of a sword, a razor or a saw That touch is more painful than a scorpion-bite and is extremely unbearable The hellish beings living there are without any

protection or support There is no one to provide them shelter or to safeguard them In view of dreadful troubles that the hellish beings undergo, they suffer miserably The feeling of pain is continuously there, they do not feel comfort even for a moment Fifteen types of demons, the paramadhami gods surround them They give extreme torture to the hellish beings (which shall be described later)

विवेचन नरकभूमियाँ केवल लम्बाई-चौडाई की दृष्टि से ही नही, किन्तु नारको के आयुष्य की दृष्टि से भी विस्तृत है। मनुष्यो की आयु की अपेक्षा नारको की आयु बहुत लम्बी है। वहाँ कम से कम आयु भी दस हजार वर्ष और अधिक से अधिक तेतीस सागरोपम है। सातो नरकभूमि की सक्षिप्त तालिका इस प्रकार है-

सात नरक भूमियाँ

नाम	गोत्र	पृथ्वी पिण्डमान मोटाई	आयु-जघन्य	उत्कृष्ट	नरकावास	वेदना
१ घम्मा	रत्नप्रभा	१,८०,००० योजन	१० हजार वर्ष	१ सागर	३० लाख	क्षेत्रजा, अन्योन्या, परमाधामी कृत
२ वशा	शर्कराप्रभा	१,३२,००० योजन	१ सागर	३ सागर	२५ लाख	क्षेत्रजा, अन्योन्या, परमाधामी कृत
३ शीला	बालुकाप्रभा	१ २८,००० योजन	३ सागर	७ सागर	१५ लाख	क्षेत्रजा, अन्योन्या, परमाधामी कृत
४ अजणा	पकप्रभा	१,२०,००० योजन	७ सागर	१० सागर	१० लाख	क्षेत्रजा, अन्योन्या
५ रीट्ठा	धूमप्रभा	१,१८ ००० योजन	१० सागर	१७ सागर	३ लाख	क्षेत्रजा, अन्योन्या
६ मघा	तम प्रभा	१,१६,००० योजन	१७ सागर	२२ सागर	९९,९९५	क्षेत्रजा, अन्योन्या
७ माघवइ	तमस्तम प्रभा	१,०८,००० योजन	२२ सागर	३३ सागर	५	क्षेत्रजा, अन्योन्या
					८४ लाख	

नरकभूमि अत्यन्त कर्कश, कठोर और ऊबड-खाबड है। उस भूमि का स्पर्श ही इतना कष्टकर होता है, मानो हजार बिच्छुओ के डको का एक साथ स्पर्श हुआ है।

नरक मे वेदना

नरक मे उत्पन्न होने वाले पापी जीव तीन प्रकार की वेदना भोगते है-(१) क्षेत्रजनित वेदना, (२) परस्परोदीरित वेदना-एक-दूसरे के द्वारा दी जाने वाली, तथा (३) परमाधामी (यम पुरुषो द्वारा दी गई) वेदना। क्षेत्र वेदना मुख्यत १० प्रकार की है-(१) अत्यन्त शीत, (२) अत्यन्त उष्ण, (३) अति क्षुधा, (४) अत्यन्त तृष्णा, (५) घोर खुजली, (६) पराधीनता, (७) जरा (वृद्धत्व), (८) अत्यन्त दाह, (९) शोक, (१०) भय। ये दसो वेदना उस क्षेत्र मे अत्यन्त उग्र असहनीय रूप मे होती है।

क्षेत्र वेदना सातो नरको मे क्रमश अशुभ, अशुभतर होती है। परस्परोदीरित वेदना दो प्रकार की है। परस्पर शरीर से दी जाने वाली तथा शस्त्र आदि प्रहारो से नारक जीव परस्पर झगडते रहते है। नरक मे जो मिथ्यादृष्टि जीव होते है वे अज्ञान आदि के कारण परस्पर उग्र रूप मे लडते-झगडते है। दूसरो को पीडा देते है। सम्यक् दृष्टि जीव अपने पूर्व कर्मो को निमित्त मानकर उस वेदना को समभाव के साथ वेदते है। अत मिथ्यादृष्टि जीवो की वेदना उग्र-उग्रतर होती है, सम्यक् दृष्टि की वेदना अल्प होती है।

१५ प्रकार के परमाधामी (असुर जाति के) देव हँसी, खेल, मनोरजन के निमित्त उन्हे भयकर यातनाएँ देते है। वह केवल तीसरे नरक तक ही होते है। सूत्र २३ मे केवल क्षेत्रजनित वेदना का वर्णन किया है-

नरक मे घोर अधकार सदैव व्याप्त रहता है। चन्द्र, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र आदि का लेशमात्र भी प्रकाश नही है।

माँस, रुधिर, पीव, चर्बी आदि घृणास्पद वस्तुएँ ढेर की ढेर वहाँ बिखरी पडी है, जो अतीव उद्वेग तथा घृणा उत्पन्न करती है। यद्यपि माँस, रुधिर आदि औदारिक शरीर मे ही होते है और वहाँ औदारिक शरीरधारी मनुष्य एव पचेन्द्रिय तिर्यंच नही है, तथापि वहाँ के पुद्गल अपनी विचित्र परिणमन शक्ति से इन घृणित वस्तुओ के रूप मे परिणत होते रहते है। इनके कारण वहाँ सदैव दुर्गन्ध-सडाध फैली रहती है जो दुस्सह त्रास उत्पन्न करती है।

नरको के कोई स्थान अत्यन्त शीतमय है तो कोई अतीव उष्णतापूर्ण है। जो स्थान शीतल है वे हिमखण्ड से भी असख्यगुण शीतल है और जो उष्ण है वे खदिर की धधकती अग्नि से भी अत्यधिक उष्ण है।

नारक जीव ऐसी नरकभूमियो मे सुदीर्घकाल तक भयानक से भयानक यातनाएँ निरन्तर, प्रतिक्षण भोगते रहते है। वे प्रतिक्षण १० प्रकार की वेदना भोगते रहते है। वहाँ उनके प्रति न कोई सहानुभूति प्रकट करने वाला, न सान्त्वना देने वाला और न यातनाओ से रक्षण करने वाला है। इतना ही नही, वरन् भयकर से भयकर कष्ट पहुँचाने वाले परमाधामी देव वहाॅ है, जिनका उल्लेख यहाँ 'जमपुरिस (यमपुरुष) के नाम से किया गया है। ये यमपुरुष पन्द्रह प्रकार के है और विभिन्न भयोत्पादक रूप बनाकर नारको को घोर पीडा पहुँचाना उनके लिए मनोरजन है। वे इस प्रकार है-

१ **अम्ब**-ये नारको को ऊपर आकाश मे उछालकर एकदम नीचे पटक देते है।

२ **अम्बरीष**-छुरी आदि शस्त्रो से नारको के शरीर के टुकडे-टुकडे करके भाड मे पकाने डाल देते है।

३ **श्याम**-रस्सी से या लात-घूँसो से नारको को मारते है और यातनाजनक स्थानो मे पटक देते है।

४ **शबल**-ये नारक जीवो के शरीर की आँते, नसे और कलेजे आदि को बाहर निकाल लेते है।

५ **रुद्र**-भाला, बर्छी आदि नुकीले शस्त्रो मे नारको को पिरो देते है। इन्हे रौद्र भी कहते है। ये अतीव भयकर होते है।

६ **उपरुद्र**-नारको के अगोपागो को फाडने वाले, अत्यन्त ही भयकर असुर है।

७ **काल**-ये नारको को कडाही मे पकाते है।

८ **महाकाल**-ये नारको के मॉस के खण्ड-खण्ड करके उन्हे जबर्दस्ती खिलाने वाले अतीव काले असुर है।

९ **असिपत्र**-अपनी वैक्रिय शक्ति द्वारा तलवार जैसे तीक्ष्ण पत्तो वाले वृक्षो का वन बनाकर उनके पत्ते नारको पर गिराते है और नारको के शरीर के तिल जितने छोटे-छोटे टुकडे कर डालते है।

१० **धनुष**-ये धनुष से तीखे बाण फेककर नारको के कान, नाक आदि अवयवो का छेदन करते है और अन्य प्रकार से भी उन्हे पीडा पहुँचाकर आनन्द मानते है।

११ **कुम्भ**-ये असुर नारको को कुम्भियो मे पकाते है।

१२ **बालु**-ये वैक्रियलब्धि द्वारा बनाई हुई कदम्ब-बालुका अथवा वज्र-बालुका-रेत मे नारको को चना आदि की तरह भूनते है।

१३. **वैतरणी**–ये यम पुरुष माँस, रुधिर, पीव, पिघले ताँबे-सीसे आदि अत्युष्ण पदार्थों से उबलती-उफनती वैतरणी नदी मे नारको को फेक देते है और उसमे तैरने को विवश करते है।

१४ **खरस्वर**–ये वज्रमय तीक्ष्ण कटको से व्याप्त शाल्मली वृक्ष पर चढाकर करुण आक्रन्दन करते नारको को इधर-उधर खीचते है।

१५ **महाघोष**–ये भयभीत होकर अथवा दुस्सह यातना से बचने से भागते हुए नारक जीवो को बाडे मे बन्द कर देते है और भयानक गर्जना करते हुए उन्हे रोक देते है।

Elaboration—The hells are huge in length and breadth Even from the point of view of life-span of hellish beings, they are extensive No hellish beings has a life less than ten thousand years The maximum life of a living being in hell is thirty three Sagaropam The table below indicates in brief the data about seven hells

Seven Hells

Name	Class	Thickness of Hell in yojan	Min life	Max. life	Hellish Abodes	Type of Pain
1 Dhamma	Ratnaprabha	1 8 Lakhs	10000 years	1 Sagar	30 Lakhs	area specific, by others, by demons
2 Vansha	Sharkaraprabha	1 32 Lakhs	1 Sagar	3 Sagar	25 Lakhs	-do-
3 Sheela	Balukaprabha	1 28 Lakhs	3 Sagar	7 Sagar	15 Lakhs	-do-
4 Anjana	Pankprabha	1 2 Lakhs	7 Sagar	10 Sagar	10 Lakhs	area specific, by others
5 Rittha	Dhoomprabha	1 18 Lakhs	10 Sagar	17 Sagar	3 Lakhs	-do-
6 Magha	Tamprabha	1 16 Lakhs	17 Sagar	22 Sagar	99,995	-do-
7 Maaghavai	Mahatamprabha	1 08 Lakhs	22 Sagar	33 Sagar	5	-do-

The land of the hell is extremely hard, sharp and undulating The touch of that land is as painful as a thousand scorpions biting simultaneously

Pain in Hells—

The evil beings taking birth in hell face three types of feeling of pain—(1) Pain caused by the land, (2) Pain caused mutually, and (3) Pain caused by demons (Paramadhami gods).

The pain caused by the land is of ten types—(1) extreme cold, (2) extreme heat, (3) extreme hunger, (4) extreme thirst, (5) extreme itching, (6) slavery, (7) continuous high fever, (8) extreme burning sensation, (9) sadness, (10) fear All the said ten feelings of pain are of extremely dreadful type and unbearable.

The feeling of pain due to land of the hell goes on increasing gradually as one moves from first hell to the second and so on The mutual feeling of pain is of two types—one given by physical contact of the body and the other by weapons The hellish beings go on fighting among themselves The hellish beings who are of wrong perception (faith) fight fiercely among themselves due to their ignorance. They cause pain to others Those hellish beings who are of right perception (faith) believe that the troubles they face are the result of their own Karmas of earlier life-span So they bear it calmly So the feeling of pain of hellish beings of wrong perception is more and more dreadful while the pain of hellish beings of right perception is feeble

Fifteen types of paramadhami gods (of demon category) cause pain for their enjoyment They exist only in first three hells In Sutra 23, the feeling of pain due to the nature of land above has been discussed

Always there is pitch dark in hell There is not even minor light of the moon, the sun, planets, constellations and the like

There are meat, blood, mucus, marrow, and other foul substances scattered all around in heaps in the hell They produce extreme hatred and dejection Meat, blood and the like are found only in physical (audarik) body and the human beings and five-sensed animals do not exist in hell, still the matter in hell has an unusual quality of transforming itself into foul substances So there is always bad striking smell there which creates a great sense of frustration

Some area in hell is extremely cold while some area is extremely hot The area which is cold is innumerable times colder than a block of ice and the area which is hot is much more hot than a drastically burning fire

In such hells, the hellish being continuously undergo most frightening and shocking tortures for a very long period every moment The hellish beings bear pain of ten types There is no one present there to show mercy, compassion or consolation towards them Further there are demon (paramadhami) gods who give them most dreadful tortures and they have been termed here as messenger of death (yam purush) Such yam purush are of fifteen types They transform themselves into different frightening shapes and experience enjoyment in providing extreme tortures to the hellish beings They are as follows—

1. **Amb**—These demons hurl the hellish beings upwards and suddenly throw them downwards

2. **Ambarish**—They cut the bodies of the hellish beings into pieces with sharp-edged weapons and then put them for cooking

3. **Shyam**—They beat the hellish beings with ropes, legs and fists and then throw them in nasty places to undergo tortures

4. **Shabal**—These demons take out the intestines, nerves and the like of the hellish beings from their body

5. **Rudra**—They pierce the hellish beings with sharp points of spears and the like. They are also called raudra They are extremely cruel and dreadful

6. **Uparudra**—They tear the limbs of the hellish beings They are extremely frightening demons

7. **Kaal**—These demons roast the hellish beings in a vessel

8. **Mahakaal**—These demons are extremely dark in complexion They cut the flesh of hellish beings into pieces and forcibly compel the hellish beings to devour the same

9. **Asipatra**—These demons with their fluid power create forests having sword-like sharp edged leaves Then they hurl such leaves on the hellish beings Thus they cut their body into pieces as small as an atom

10. **Dhanush**—They hurl sharp arrows on the hellish beings from their bow and pierces the ears, nose and the like They enjoy causing tortures of many types to the hellish beings

11. **Kumbh**—These demons cook the hellish beings in vessels with long narrow mouth

12. **Balu**—These demons create burning sand with their fluid power That sand is very hard and burning Then they roast the hellish beings in that sand just as grams are roasted

13. **Vaitarni**—These demons throw the hellish beings in Vaitarni stream containing meat and boiling with blood, mucus, melted copper, melted glass and the like Then they force them to swim in that stream

14. **Khar Swar**—These demons force the hellish beings to climb Shalmali trees that contains extremely sharp thorns The hellish beings then weep bitterly and pray for mercy but the demons pull them hither and thither.

15. Mahaghosh—They imprison in the penn hellish beings who run hither and thither in a frightened state in order to save themselves from the tortoises Thereafter the demons produce dreadful roaring sound and stop them from coming out from that prison

नारको का बीभत्स शरीर **DREADFUL BODY OF HELLISH BEINGS**

२४. तत्थ य अंतोमुहुत्तलद्धिभवपच्चएणं णिवत्तंति उ ते सरीरं हुंडं बीभच्छदरिसणिज्जं बीहणगं अट्ठि-ण्हारु-णह-रोम-वज्जियं असुभगं दुक्खविसह।

तओ य पज्जत्तिमुवगया इंदिएहिं पंचहिं वेएति असुहाए वेयणाए उज्जल-बल-विउल-कक्खड-खर-फरुस-पयंड-घोर-बीहणगदारुणाए।

२४. उस अत्यन्त डरावनी नरकभूमि मे वे घोर पाप करने वाले पापी जीव उत्पन्न होते ही अन्तर्मुहूर्त (४८ मिनट से कम काल) मे नरकभव की स्वाभाविक प्रकृति के कारण वैक्रियलब्धि से अपने शरीर का निर्माण कर लेते है। वह शरीर बेडौल, भद्दी आकृति वाला, देखने मे बीभत्स, दुर्गन्धमय घृणित, भयानक, अस्थियो, नसो, नाखूनो और रोमो से रहित, अशुभ और घोरातिघोर दु खो को सहन करने मे सक्षम हुडक सस्थान वाला होता है।

शरीर का निर्माण हो जाने के पश्चात वे सभी पर्याप्तियो से पूर्णपर्याप्त हो जाते है और पाँचो इन्द्रियो से अशुभ वेदना का वेदन करते है। उनकी वेदना उज्ज्वल, बलवती, विपुल, उत्कट, प्रखर, परुष, प्रचण्ड, घोर, बीहनक-डरावनी और दारुण होती है।

24. In that extremely dreadful hell, the hellish beings who had committed drastic sinful activities in their previous lives develop their body fully in just 48 minutes with the natural fluid power they have in the hell That body is grotesque, ugly and frightening to look at and does not contain bones, nerves, nails or pores It is bad and capable of bearing most dreadful pain and troubles It has hundak constitution

After developing their body, the hellish beings experience bad feelings through all the five senses Their pain is distinct, forceful, extended, dreadful, sharp, frightening, deep and heart rending

विवेचन · वेदना प्राय दो प्रकार की होती है-सुखरूप सातावेदना और दु खरूप असातावेदना। नारक जीवो की वेदना असातावेदना ही होती है। उस असातावेदना की उत्कटता बताने के लिए यो तो शब्द कम ही पडते है, परन्तु फिर भी उसकी दारुणता का सामान्य बोध कराने के लिए आगम मे अनेक शब्द आये है, जिनका भावार्थ इस प्रकार है-

उज्जल (उज्ज्वल)-जिसमे सुख का तनिक भी सम्मिश्रण नही।

बल-विउल (बल-विपुल)-अतिशय बलवती एव समग्र शरीर मे व्याप्त रहने के कारण विपुल।

उक्कड (उत्कट)-चरम सीमा को प्राप्त।

खर–फरुस (खर–परुष)–शिला आदि के गिरने पर होने वाली वेदना के सदृश होने से खर तथा कूष्माण्डी तलवार की धार वाले पत्ते के समान कर्कश स्पर्श वाली परुष–कठोर।

पयड (प्रचण्ड)–शीघ्र ही समग्र शरीर मे व्याप्त हो जाने वाली।

घोर (घोर)–यदि औदारिक शरीर मे ऐसी वेदना हो जाये तो वह शीघ्र ही नष्ट हो जाता है। वैक्रिय शरीर होने के कारण वे उसे जीवन पर्यन्त भोगते है।

बीहणग (भीषणक)–भयानक–भयजनक।

दारुण (दारुण)–अत्यन्त विकट।

देवो की भाँति नारको का शरीर भी वैक्रिय होता है। आयुष्य पूर्ण हुए बिना–अकाल मे इस शरीर का अन्त नही होता। परमाधामी उस शरीर के टुकडे–टुकडे कर देते है तथापि वह पारे की तरह फिर जुड जाता है।

Elaboration—Often the sufierence is of two types—one that provides pleasure and the other that provides pain The feelings of hellish beings is only full of pain No proper words are available to express their dreadful feelings of pain Still in order to provide some understanding about their condition many words have been used in the scriptures (Agams) The meanings of these words is as follows—

Ujjal—That which does not contain even an iota of happiness

Bal-viyul—Very strong and spreading throughout the body

Utkat—Reaching the extreme limit

Khar-pharus—Dreadful like that experienced at the time of fall of a large slab on one's body and dangerous in touch like a sharp-edge leaf

Payand—That spreads in the body very soon

Ghor—The pain that is capable of destroying the physical body in case it occurs there But in hell the body being fluid, the hellish beings endure it throughout their life

Beehanak—Dreadful.

Daarim—Extremely unbearable

The hellish beings possess fluid body like that of gods They do not die without completing their destined life-span The demon gods cut that body into pieces But it again joins like particles of mercury

२५. [प्र] किं ते ?

[उ] **कंदु–महाकुंभिए पयण–पउलण–तवग–तलण–भट्टभज्जणाणि य लोहकडाहु–कड्ढणाणि य कोट्टवलिकरण–कोट्टणाणि य।**

सामलितिक्खग्ग–लोहकंटग–अभिसरणपसारणाणि फालणविदारणाणि य अवकोडकबंधणाणि लट्ठिसयतालणाणि य गलगंबलुल्लंबणाणि सूलग्गभेयणाणि य आएसपवंचणाणि खिंसणविमाणणाणि विघुट्ठपणिज्जणाणि वज्झसयमाइकाणि य।

२५. [प्र] नारको को जो वेदनाएँ भोगनी पडती है, वे कैसी है ?

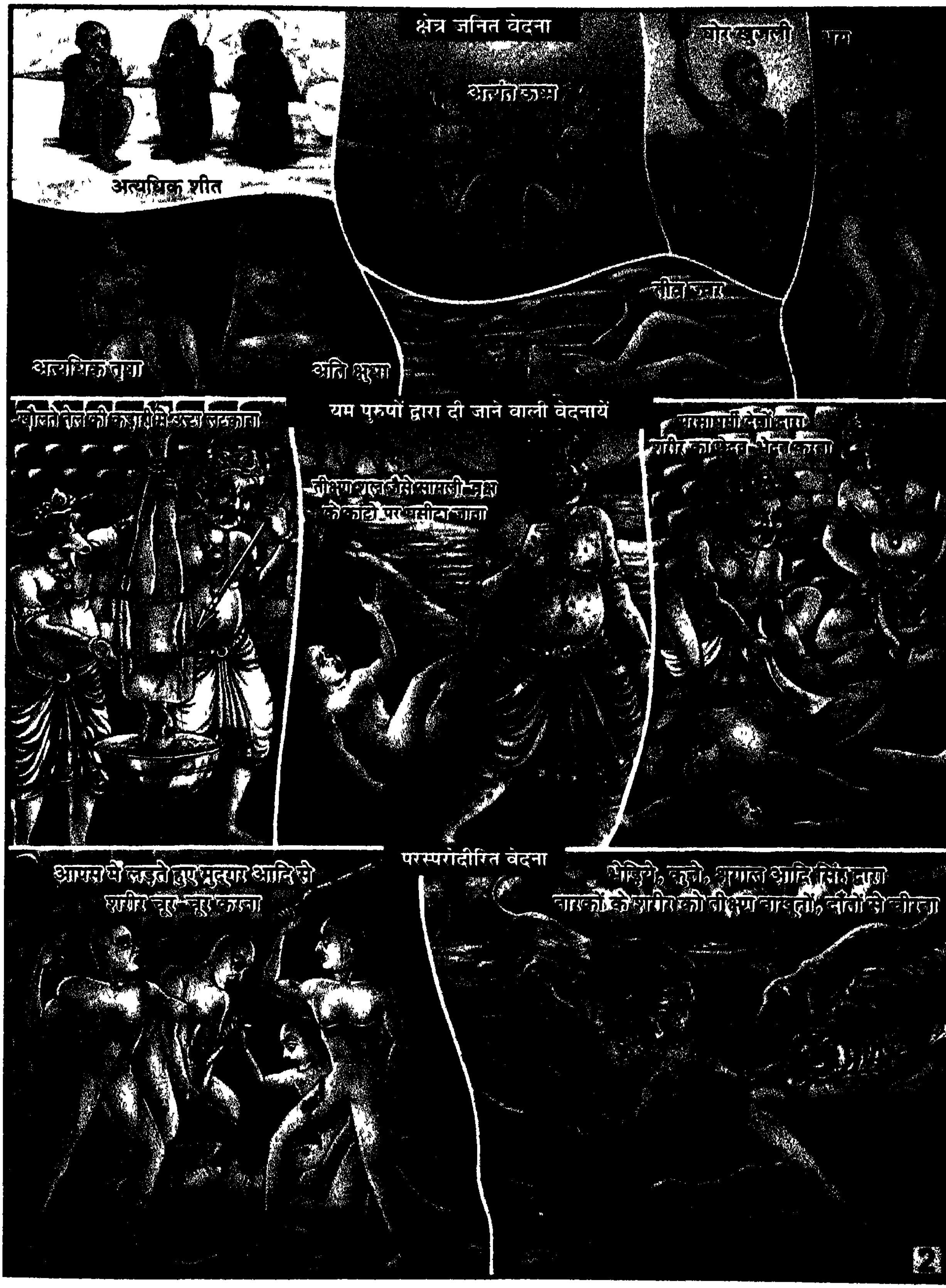
[उ] नारक जीवो को **कदु**–लोहे की कडाही जैसे चौडे मुख के पात्र मे और **महाकुभी**–सॅकडे मुख वाले घडा सरीखे महापात्र मे पकाया और उबाला जाता है। तवे पर रोटी की तरह सेका जाता है। चनो की भाँति भाड मे भूँजा जाता है। लोहे की कडाही मे ईख के रस के समान औटाया जाता है। जैसे देवी के सामने बकरे की बलि चढाई जाती है, उसी प्रकार उनकी बलि चढाई जाती है–उनकी काया के खण्ड-खण्ड कर दिये जाते है।

लोहे के तीखे शूल के समान तीक्ष्ण काँटो वाले शाल्मलिवृक्ष (सेमल) के कॉटो पर उन्हे इधर--उधर घसीटा जाता है। काठ के समान उनकी चीर-फाड की जाती है। उनके पैर और हाथ बीच मे डण्डे लगाकर बॉध दिये जाते है। सैकडो लाठियो से उन पर प्रहार किये जाते है। गले मे फदा डालकर लटका दिया जाता है। उनके शरीर को शूली के अग्र भाग से भेदा जाता है। झूठे आदेश देकर उन्हे ठगा जाता–धोखा दिया जाता है। उनकी तीव्र भर्त्सना की जाती है, अपमानित किया जाता है। पूर्वभव मे किए गये घोर पापो की घोषणा करके उन्हे वधभूमि (कत्लगाह) मे घसीटकर ले जाया जाता है। वध्य जीवो को दिये जाने वाले सैकडो प्रकार के दु ख उन्हे दिये जाते है।

25. [Q.] What are the feelings of pain that the hellish beings have to undergo ?

[Ans.] The hellish beings are roasted in iron pots having wide mouth (Kandu) and in large pitchers with narrow neck (mahakumbhi) They are baked on the frying pan like a loaf They are churned like grams on a burning fire Just as goat sacrifice is done in front of a goddess, their sacrifice is performed They are boiled like sugar cane juice in an iron vessel Their body is cut into pieces

They are pushed along the sharp thorn on a Semal tree having such sharp thorns They are sawn like wood, they are hung with rope tied on their neck on a scaffold Their body is pierced with the pointed tip of a sharp weapon Their hands are tied keeping a wooden stick in between Then they are beaten with hundreds of sticks They are cheated with false orders They are condemned adversely. They are dishonoured The



क्षेत्र जनित वेदना
अत्यधिक शीत
यम पुरुषों द्वारा दी जाने वाली वेदनायें
परस्परोदीरित वेदना
आपस में लड़ते हुए मुद्गर आदि से

चित्र-परिचय 2 | **Illustration No 2**

नारकों को दिये जाने वाले लोमहर्षक दुःख

हिंसा के फलस्वरूप जीव को नरक गति मे अनेक भयकर कष्ट सहने पडते हैं इस योनि मे उत्पन्न होने वाले प्राणी जन्म से लेकर मरण तक सतत् ही तीव्र वेदना भोगते रहते है। नरक की वेदना का मात्र दिग्दर्शन करने मे ही हृदय काँपने लगता है रोम खड़े हो जाते है तो इनको भोगने पर कितना कष्ट होता होगा ? नरक मे उत्पन्न जीव तीन प्रकार की वेदनायें भोगते है—

(1) क्षेत्र जनित वेदना—यह दस प्रकार की होती है—(1) अत्यन्त शीत, (2) अत्यन्त उष्ण (3) अति क्षुधा, (4) अत्यन्त तृष्णा, (5) घोर खुजली (6) पराधीनता, (7) सतत ज्वर, (8) अत्यन्त दाह, (9) शोक, (10) भय।

(2) परमाधर्मी (यम पुरुषों द्वारा दी गई) वेदना— 15 प्रकार के परमाधर्मी [illegible] देव हँसी, खेल मनोरंजन के निमित्त नरक में उत्पन्न जीवों को भयंकर यातनाएँ देते हैं। [illegible] गरम बालू पर भूजते है। शरीर के टुकड़े टुकड़े कर देते है और लोहे की कड़ाहियों में [illegible] के समान औटाते हैं। यह यम पुरुष केवल तीसरे नरक तक ही होते है।

(3) परस्परोदीरित वेदना—परस्परोदीरित वेदना दो प्रकार की है—परस्पर शरीर [illegible] और [illegible] शस्त्रादि प्रहार से। ये नारकीय जीव परस्पर वैक्रिय लब्धि द्वारा सिंह व्याघ्र आदि [illegible] एक दूसरे को चीर-फाड देते है।

- सूत्र 25, पृ 46

BITTER FRUITS OF VIOLENCE IN INFERNAL WORLD

As a consequence of violence a living being takes birth in hell and suffers many terrible torments. Living beings born in this genus continue to suffer acute pain throughout its life. Even imagination of the tortures of hell is heart rending, what to say of the actual suffering? Infernal beings suffer three types of pain

(1) Area generated pain – It is of ten types – (1) extreme cold, (2) extreme heat (3) extreme hunger (4) extreme thirst (5) extreme itching (6) slavery (7) persistent high fever, (8) extreme burning sensation (9) melancholy and (10) fear

(2) Pain caused by Paramadhami gods – These divine beings of Asur class are of 15 types. They cause extreme torment to infernal beings just for their joy and entertainment. They roast these beings in hot sand. They cut their bodies into small pieces and boil them in iron cauldrons just like cane juice. These attendants of the god of death (Yama) are active only up to the third hell

(3) Mutually caused pain – This is of two types – bodily caused and caused through weapons. These infernal beings take the form of ferocious animals including lion and tiger through their natural power of transmutation and indulge in tearing apart each other

— Sutra-25 page-46

dreadful sins committed by them during earlier life-span are announced and they are dragged towards the place where scaffold is fixed They are given hundreds of suchlike tortures as are given to those who are to be hanged

विवेचन क्षेत्र वेदना का वर्णन करने के बाद अब परमाधामी देवो द्वारा दी जाने वाली भयानक यातनाओ का दिग्दर्शन इस सूत्र मे कराया गया है।

परमाधामी जीव जब नारको को पीडा देते है तब वे उनके पूर्व कृत पापो की उद्घोषणा भी करते है, उन्हे अपने पूर्व कृत पापो का स्मरण कराते है और उन्हे प्राय उसी कोटि की यातना दी जाती है। जैसे-जो लोग जीवित मुर्गा-मुर्गी को उबलते पानी मे डालकर उबालते है, उन्हे कदु और महाकुभी मे उबाला जाता है। जो पापी जीववध करके माँस को काटते-भूनते है, उन्हे उसी प्रकार काटा-भूना जाता है। जो देवी-देवता के आगे बकरा, पाडा आदि प्राणियो का घात करके उनके खण्ड-खण्ड करते है, उनके शरीर के भी नरक मे परमाधामियो द्वारा तिल-तिल जितने खण्ड-खण्ड किये जाते है। अन्य वेदनाओ के विषय मे भी इसी प्रकार जान लेना चाहिए।

Elaboration—In this Sutra, the tortures given by demon gods have been narrated after describing earlier the pains due to the nature of the area

When the demon gods torture the hellish beings, they also announce the sins committed by them in earlier life and the punishment given is often of the same type as was the sin committed by them For instance those who boil living chicken in water, they are boiled in a pot with wide mouth or one with narrow neck Those people who, after killing animal, cut its flesh and bake it in fire, they are cut and burnt in the same manner Those people who sacrifice goat, buffalo and the like before the idol of a god or goddess, and then cut their flesh into pieces, the demon gods cut their bodies in the same manner when they take birth in hell One should understand about other troubles also in the same manner

२६. एव ते पुव्वकम्मकयसंचयोवतत्ता णिरयग्गिमहग्गिसपलित्ता गाढदुक्खं महब्भयं कक्कसं असायं सारीरं माणस य तिव्वं दुविहं वेएति वेयणं पावकम्मकारी बहूणि पलिओवम-सागरोवमाणि कलुणं पालेंति ते अहाउय जमकाइयतासिया य सद्दं करेति भीया।

२६. इस प्रकार वे नारक जीव अपने पूर्व जन्म मे किये हुए कर्मो के सचय के कारण दु खो से व्याकुल रहते है। महा-अग्नि के समान प्रचण्ड नरक की अग्नि से जलते रहते है। वे पापकृत्य करने वाले जीव प्रगाढ दु खमय, घोर भय उत्पन्न करने वाली, अतिशय कर्कश एव उग्र शारीरिक तथा मानसिक दोनो प्रकार की वेदना का अनुभव करते रहते है। उनकी यह वेदना अनेक पल्योपम और सागरोपम काल तक रहती है। वे अपनी पूर्ण आयु के अनुसार अत्यन्त दीन व करुण अवस्था मे रहते

है। वे दक्षिण दिक्पाल यमदेव के आश्रित यमकायिक देवो द्वारा पीडा व यातना को प्राप्त होते है और (दुस्सह वेदना के वशीभूत होकर) भयभीत होकर रोते-चिल्लाते है।

26. Thus the hellish beings remain in trouble as a result of the bad Karma collected by them in earlier life or lives by committing sins They burn in fire of the drastic hell, indeed a ferocious fire They experience physical and mental pain, which is of extreme order, frightening and highly unbearable as they had committed sin in earlier life-span. Their pain lasts for many Palyopam or Sagaropam, they remain in extremely wretched and pitiable state throughout their life They are tortured by ferocious gods who serve under deadly god (Yamadev) guarding the southern region They weap and cry out of fear as result of unbearable pain they suffer

विवेचन · जैसे सामान्य मनुष्य और तिर्यच उपघात आदि के निमित्त प्राप्त होने पर अकालमरण से मर जाते है, वैसा नारको मे नही होता। उनकी आयु निरुपक्रम होती है। जितने काल की आयु बँधी है, नियम से उतने ही काल मे वह भोगी जाती है। नारक जीव अनेकानेक पल्योपमो और सागरोपमो तक निरन्तर ये वेदनाएँ भुगतते रहते है।

Elaboration—Unlike ordinary human beings and animals who die without completing their total life-span as a result of hurt caused by external sources (weapons, diseases and the like), the hellish beings do not die under such conditions There life-span cannot end in this manner as it is nir-upakram life-span They have to complete their life as pre-determined The hellish beings suffers the painful feeling continuously for a period running into many Palyopam and Sagaropam

नारक जीवो की करुण पुकार **BEMOANING OF HELLISH BEINGS**

२७. [प्र.] किं ते ?

[उ.] अविभाव सामि भाय बप्प ताय जियवं मुय मे, मरामि दुब्बलो वाहिपीलिओऽहं किं दाणिऽसि एवं दारुणो णिद्दय ? मा देहि मे पहारे, उस्सासेयं मुहुत्तं मे देहि, पसायं करेह, मा रुस वीसमामि, गेविज्जं मुयह मे मरामि गाढं तण्हाइओ अहं देहि पाणीयं।

२७. [प्र] (नारक जीव) किस प्रकार रोते-चिल्लाते क्रन्दन करते है ?

[उ] हे अज्ञातबन्धु ! हे स्वामिन् ! हे भ्राता ! अरे बाप ! हे तात ! हे विजेता ! मुझे छोड दो। मै मर रहा हूँ। मै दुर्बल हूँ। मै व्याधि से पीडित हूँ। आप इस समय क्यो इतने कठोर हृदय दारुण एव निर्दय हो रहे है ? मेरे ऊपर प्रहार मत करो। मुझे मुहूर्त्तभर-थोडे समय तक साँस तो लेने दीजिए। दया कीजिए। रोष न कीजिए। मै जरा विश्राम ले लूँ। मेरा गला छोड दीजिए। मै मरा जा रहा हूँ। प्यास से मेरा गला सूखा जा रहा है। मुझे थोडा-सा पानी दे दीजिए।

27. [Q.] In what manner do the hellish beings cry and bemoan ?

[Ans.] O unknown friend ! O master ! O brother ! O father ! O saviour ! O conqueror ! Kindly make me free I am dying I am weak I am suffering from illness Why are you becoming so hard-hearted and cruel at this moment Kindly do not attack me. Kindly allow me to give a sigh of relief for a little time—say 48 minutes Please have mercy on me Do not be angry with me May I take rest for sometime Please release my neck My throat is becoming dry due to thirst. Please give me some water.

नारकपालो द्वारा दिया जाने वाला घोर दु ख **DREADFUL TORTURE BY GUARDIANS OF HELL**

२८. हंता पिय इमं जलं विमलं सीयलं त्ति घेत्तूण य णरयपाला तवियं तउयं से दिंति कलसेण अंजलीसु दट्ठूण य तं पवेवियंगोवंगा अंसुपगलंतपप्पुयच्छा–"छिण्णा तण्हाइयम्ह कलुणाणि जंपमाणा विप्पेक्खंता दिसोदिसिं अत्ताणा असरणा अणाहा अबंधवा बंधविप्पहूणा विपलायंति य मिया इव वेगेण भयुव्विग्गा।

२८. (जब वे पानी माँगते है तब नरकपाल कहते है) 'अच्छा, हाँ, (तुम्हे प्यास सता रही है ? तो लो) यह निर्मल और शीतल जल पीओ।' इस प्रकार कहकर नरकपाल अर्थात् परमाधामी असुर नारको को पकडकर खौलता हुआ सीसा कलश से उनकी अजुली मे उँडेल देते है। उसे देखते ही उनके अगोपाग काँपने लगते है। उनके नेत्रो से आँसू टपकने लगते है। फिर वे रोते-रोते कहते है-'(रहने दीजिए), हमारी प्यास शान्त हो गई !' इस प्रकार करुणाजनक हीन वचन बोलते हुए भागने-बचने के लिए इधर-उधर ताकने लगते है। किन्तु वहाँ उन्हे कोई त्राण (रक्षा) देने वाला, शरण देने वाला, सहारा देने वाला नही है। वे अरक्षित, निराश्रित, अनाथ, बन्धुविहीन एव भय के मारे घबराकर के सिह से आक्रान्त मृग की तरह बडे वेग से इधर-उधर भागते है।

28. (When the hellish beings demand water, the guardians of hell say) well you are suffering due to thirst So you have it Here is clear cold water You drink it Saying so, the demon gods guarding the hell catch hold of the hellish beings and put hot melted lead on their cupped palms The hellish beings start shivering at the very sight of the pot of melted lead They start weeping bitterly and utter while weeping—'kindly keep it away. Our thirst has subsided' Thus while seeking compassion through such words, they look hither and thither in order to run away. But there is no one to provide protection, help or security to them. The poor hellish beings run away hither and thither very fast in a state of bewilderment just as a terrified deer runs away at the sight of a lion.

विवेचन यहाँ आँसुओ के टपकने का या इसी प्रकार के जो अन्य कथन है, वे मात्र करुण दशात्मक आन्तरिक पीडा के द्योतक है, औदारिक शरीरधारियो (मनुष्यो) के शीघ्र ही समझ मे आ जाता है, अतएव उनकी भाषा मे समझाने की दृष्टि है।

Elaboration—The trickling of tears and such like statement convey simply the inner trouble, seeking compassion The living beings who have physical body (say human beings) understand it soon So it is a method used by the author to explain it in their language

२९. घेत्तूणबला पलायमाणाणं णिरणुकपा मुह विहाडेत्तुं लोहदंडेहिं कलकलं ण्हं वयणंसि छुभंति केइ जमकाइया हसता। तेण दड्ढा संतो रसति य भीमाइ विस्सराइ रुवंति य कलुणगाइ पारेयवगा व एवं पलविय–विलाव–कलुण–कदिय–बहुरुण्णरुइयसद्दो परिदेवियरुद्धबद्धय णारया–रवसकुलो णीसिट्ठो।

रसिय–भणिय–कुविय–उक्कूइय–णिरयपाल तज्जिय गिण्हक्कम पहर छिंद भिंद उप्पाडेह उक्खणाहि कत्ताहि विकत्ताहि य भुज्जो हण विहण विच्छुब्भोच्छुब्भ–आकड्ढ–विकड्ढ।

कि ण जपसि ? सराहि पावकम्माइं दुक्कयाइं ! एवं वयणमहप्पगब्भो पडिसुयासद्दसकुलो तासओ सया णिरयगोयराण महाणगरडज्झमाण–सरिसो णिग्घोसो, सुच्चइ अणिट्ठो तहियं णेरइयाण जाइज्जताण जायणाहिं।

२९. वे अनुकम्पाविहीन यमकायिक (यमपुरुष) उपहास करते हुए इधर-उधर भागते हुए उन नारक जीवो को जबर्दस्ती पकडकर और लोहे के डण्डे से उनका मुख फाडकर उसमे उबलता हुआ सीसा डाल देते है। उबलते सीसे से दग्ध होकर वे नारक भयानक आर्त्तनाद करते है-बुरी तरह चिल्लाते है। वे कबूतर की तरह करुणाजनक आक्रदन करते है, खूब रुदन करते है-चीत्कार करते हुए अश्रु बहाते है। विलाप करते है।

नरकपाल उन्हे रोक लेते है, बाँध देते है। तब नारक आर्त्तनाद करते है, हाहाकार करते है, बडबडाते है-शब्द करते है, तब नरकपाल कुपित होकर और कठोर उच्च ध्वनि से उन्हे धमकाते है और अन्य नरकपालो को कहते है-"इसे पकडो, मारो, प्रहार करो, छेद डालो, भेद डालो, इसकी चमडी उधेड दो, नेत्र बाहर निकाल लो, इसे काट डालो, खण्ड-खण्ड कर डालो, हनन करो, फिर से और अधिक पीटो, इसके मुख मे (गर्मागर्म) सीसा उँडेल दो इसे उठाकर पटक दो या मुख मे और सीसा डाल दो, घसीटो, उल्टा घसीटो।"

नरकपाल फिर उन्हे फटकारते हुए कहते है-"बोलता क्यो नही ! अपने पापकर्मो को, अपने कुकर्मो को स्मरण कर !" इस प्रकार नरकपालो की अत्यन्त कर्कश ध्वनि की वहाँ घोर प्रतिध्वनि होती है। नारक जीवो के लिए वह ऐसी त्रासजनक होती है कि जैसे किसी महानगर मे आग लगने पर घोर शब्द-कोलाहल होता है, उसी प्रकार निरन्तर यातनाएँ भोगने वाले नारको का अनिष्ट निर्घोष वहाँ सुना जाता है।

29. Those demon gods (yamapurush) who laugh at the hellish beings running away hither and thither and have no compassion for them They forcibly catch them, open their mouth with iron rod and put boiling melted lead in it The hellish beings weep bitterly and cry vigorously when their mouth burns with melted lead They cry like a pigeon seeking mercy They weep bitterly, bemoan and cry

The guardians of hell stop them, chain them and than the hellish beings weep bitterly, cry, grumble and then the guardians of hell threaten them with hard words in a loud voice They say, "Catch him, beat him, hit him, pierce him, cut him, pull out his skin, take out his eyes, cut him into small pieces, kill him, beat him again more severely Put extremely hot lead in his mouth Throw him down with great force Put more lead in his mouth, pull him, pull him facing the ground

Later the guardians of hell tell them while threatening, 'Why don't you speak ? You recollect your sins, your bad deeds ' Thus there occurs a dreadful reaction of the extremely dreadful voice of guardians of hell Such a sound creates such a fear in hellish beings as if there is a great disturbing sound in a city at the time of dreadful fire Thus one hears continuously bemoaning sound of the hellish beings suffering tortures

नारको की विविध पीड़ाए VARIOUS TORTURES OF INFERNAL BEINGS

३०. [प्र] कि ते ?

[उ] **असिवण–दब्भवण–जतपत्थर–सूइतल–क्खार–वावि–कलकलंत–वेयरणि–कलंब–वालुया–जलियगुह–णिरुंभण–उसिणोसिण–कटइल्ल–दुग्गम–रहजोयण–तत्तलोहमग्गगमण–वाहणाणि।**

३०. (नारक जीवो की यातनाएँ इतनी ही नही है।) [**प्रश्न**] वे यातनाएँ कैसी है ?

[उ] नारको को असि -वन मे अर्थात् तलवार की तीक्ष्ण धार के समान पत्तो वाले वृक्षो के वन मे चलने को बाध्य किया जाता है, तीखी नोक वाले दर्भ (घास) के वन मे चलाया जाता है, उन्हे कोल्हू मे डालकर (तिलो की तरह) पेरा जाता है, सुई की नोक के समान अतीव तीक्ष्ण कण्टको के सदृश स्पर्श वाली भूमि पर चलाया जाता है, क्षारयुक्त पानी वाली बावडी मे पटक दिया जाता है, उबलते हुए सीसे आदि से भरी वैतरणी नदी मे बहाया जाता है, कदम्ब पुष्प के समान तपकर अत्यन्त उष्ण एव कण्टकाकीर्ण-विषम–ऊबड–खाबड मार्ग मे रथ मे (बैलो की तरह) जोतकर चलाया जाता है, तपे हुए लोह से उष्ण मार्ग मे चलाया जाता है और भारी भार उठवाया जाता है।

30. [Q.] (The tortures in hell are not just the said ones) Of what type are those tortures ?

[Ans.] The hellish beings are compelled to move in the forest that is full of trees having leaves sharper than the sharp edge of a sword They

are forced to move on sharp pointed grass They are crushed like sesame They are moved on land that has dreadful touch like extremely sharp thorns They are thrown in a lake that contains very acidic water They are floated in the Vaitarni river containing boiling lead and the like They are driven like bullocks on a very hot and thorny, undulating road which is as warm as Kadamb flower They are made to carry very great load and driven on a road as hot as burning iron

परस्परोदीरित वेदना **PAIN CAUSED MUTUALLY**

३१. इमेहिं विविहेहिं आउहेहिं–

[प्र] किं ते ?

[उ] मुग्गर–मुसुंढि–करकय–सत्ति–हल–गय–मूसल–चक्क–कोत–तोमर–सूल–लउड–भिडिपाल–सद्धल–पट्टिस–चम्मेट्ठ–दुहण–मुट्ठिय–असि–खेडग–खग्ग–चाव–णाराय–कणग–कप्पिणि–वासि–परसु–टक–तिक्खणिम्मल–अण्णेहिं य एवमाइएहिं असुभेहिं वेउव्विएहिं पहरणसएहिं अणुबद्धतिव्ववेरा परोप्परवेयणं उदीरेति अभिहणंता।

तत्थ य मोग्गर–पहारचुण्णिय–मुसुंढि–सभग्ग–महियदेहा जतोवपीलणफुरंतकप्पिया केइत्थ सचम्मका विगत्ता णिम्मूलुल्लूण–कण्णोट्ठणासिका छिण्णहत्थपाया, असि–करकय–तिक्ख–कोंत–परसुप्पहारफालिय–वासीसंतच्छितंगमगा कलकलमाण–खार–परिसित्त–गाढडज्झतगत्ता कुंतग्ग–भिण्ण–जज्जरिय–सव्वदेहा विलोलति महीतले विसूणियंगमगा।

३१ (नरकभव के स्वभाव से ही नारक जीव आपस मे एक–दूसरे के प्रति उग्र वैर भाव वाले होते है। अतएव) वे अशुभ वैक्रियलब्धि से निर्मित इन सैंकडो शस्त्रो से परस्पर–एक–दूसरे को वेदना उत्पन्न करते है।

[प्र] वे विविध प्रकार के आयुध–शस्त्र कौन–कौन से है ?

[उ] वे शस्त्र ये है–मुद्गर, मुसुढि, करवत, शक्ति, हल, गदा, मूसल, चक्र, कुन्त (भाला), तोमर (बाण का एक प्रकार), शूल, लकुट (लाठी), भिडिमाल, सद्धल (एक विशेष प्रकार का भाला), **पट्टिस**–शस्त्र विशेष, चम्मेट्ठ (चमडे से मढा पाषाण विशेष–गोफण), **द्रुघण**–वृक्षो को भी गिरा देने वाला शस्त्र विशेष, **मौष्टिक**–मुष्टि प्रमाण पाषाण, **असि**–तलवार अथवा **असिखेटक**–तलवार सहित फलक, खड्ग, धनुष, **नाराच**–बाण, **कनक**–एक प्रकार का बाण, **कप्पिणी**–कर्त्तिका-कैची, **वसूला**–लकडी छीलने का औजार, **परशु**–फरसा और छैनी। ये सभी अस्त्र–शस्त्र तीक्ष्ण और शाण पर चढे जैसे चमकदार होते है। इनसे तथा इसी प्रकार के अन्य शस्त्रो से भी (नारक परस्पर एक–दूसरे पर प्रहार कर) वेदना की उदीरणा करते है।

मुद्गर के प्रहारो से उन नारको का शरीर चूर–चूर कर दिया जाता है, मुसुढी से टुकडे–टुकडे कर दिया जाता है, मथ दिया जाता है, कोल्हू आदि यत्रो से पेरने के कारण फडफडाते हुए उनके शरीर के

टुकडे–टुकडे कर निचोड दिये जाते है। कइयो को चमडी सहित विकृत कर दिया जाता है, कान, ओठ, नाक और हाथ–पैर समूल काट लिए जाते है, तलवार, करवत, तीखे भाले एव फरसे से फाड दिये जाते है, वसूला से काठ की तरह छीला जाता है, उनके शरीर पर उबलता खारा जल सींचा जाता है, जिससे शरीर जल जाता है, फिर भालो की नोक से उसको छिन्न–भिन्न किया जाता है, इस प्रकार उनके समग्र शरीर को जर्जरित कर दिया जाता है। उनका शरीर सूज जाता है और वे पृथ्वी पर लोटने लगते है।

31. By nature the hellish beings are minical towards each other So they cause pain to each other with hundreds of weapons created with bad fluid power

[Q.] What are these various types of weapons ?

[Ans.] Those weapons are dumble (mudgar), musundhi, karawat, shakti, plough, gada, moosal, wheel, spear, tomar (a kind of arrow), shool, stick, bhindimal, sadhal (a special type of spear), pattis, chammeth (a stony weapon mounted with leather), duhan (a weapon that can fell trees), mutthiya (a weapon of fist size), asikhedak (a sword with a blade), sword (khadag), bow, arrow, kanak (a type of arrow), kappini (scissor), vaasi (a weapon used to peel the wood), parasu All these weapons were shining bright The hellish beings attack and tear the body of each other with these weapons and with other weapons of similar type

The body of the hellish beings is reduced to particles by striking with mudgar It is reduced to pieces with musundhi It is trampled It is crushed in the oil crusher Some of them are deformed Their ears, lips, nose, hand and feet are chopped off totally Their body is sprinkled with boiling salty water, which burns their body Later with the sharp pointed edge of the spear they are torn Thus the entire body is in tatters Their body becomes swollen and they start moving on the earth in a bemoaning state

विवेचन जैसा पहले बताया है–नरकभूमियो मे मुख्यत तीन प्रकार से घोर वेदना होती है–(१) क्षेत्रजनित वेदना, (२) नरकपालो द्वारा पहुँचाई जाने वाली वेदना, और (३) परस्पर नारको द्वारा उत्पन्न की हुई वेदना। क्षेत्रजनित वेदना नरकभूमियो के निमित्त से होती है, जैसे अतिशय उष्णता और अतिशय शीतलता आदि। इस प्रकार की वेदना का उल्लेख सूत्र २३–२४ मे किया जा चुका है। नरकभूमियो मे ऊपर की भूमियो मे उष्णता का भयानकतम दु ख है तो नीचे की भूमियो मे शीत का वचनातीत प्रकोप है। उष्णता वाली नरकभूमियो को धधकते लाल–लाल अगारो की उपमा या अतिशय प्रदीप्त–जाज्वल्यमान पृथ्वी की उपमा दी गई है। यह उपमा मात्र समझाने के लिए है। वहाँ की उष्णता तो इनसे अनेकानेक गुणी है। वहाँ की गर्मी इतनी तीव्रतम होती है कि मेरु के बराबर का लोहपिण्ड भी उसमे गल सकता है।

जिन नरकभूमियो मे शीत वेदना है, वहाँ की शीतलता भी असाधारण है। शीत-प्रधान नरकभूमि मे से यदि किसी नारक को लाकर यहाँ बर्फ पर लिटा दिया जाये, ऊपर से बर्फ ढक दिया जाये और पार्श्व भागो मे भी बर्फ रख दिया जाये तो उसे बहुत राहत का अनुभव होगा। वह ऐसी विश्रान्ति का अनुभव करेगा कि उसे निद्रा आ जायेगी। इससे वहाँ की शीतलता की थोडी बहुत कल्पना की जा सकती है।

इसी प्रकार की क्षेत्रजनित अन्य वेदनाएँ भी वहाँ असामान्य उत्कट होती है, जिनका उल्लेख पूर्व मे किया गया है।

परमाधार्मिक देवो द्वारा दिये जाने वाले घोर कष्टो का कथन भी सूत्र २५-३० मे किया गया है। ज्यो ही कोई पापी जीव नरक मे उत्पन्न होता है, ये असुर उसे नाना प्रकार की यातनाएँ देने के लिए सन्नद्ध हो जाते है और जब तक नारक जीव अपनी लम्बी आयु पूरी नही कर लेता तब तक वे निरन्तर उसे सताते ही रहते है। किन्तु परमाधामियो द्वारा दी जाने वाली वेदना तीसरे नरक तक ही होती है, क्योकि ये तीसरे नरक से आगे नही जाते। चौथे, पाँचवे, छठे और सातवे नरक मे दो निमित्तो से ही वेदना होती है-भूमिजनित और परस्परजनित। जिसका कथन सूत्र ३१ ३२ मे किया गया है।

नारको को भव के निमित्त से वैक्रियलब्धि प्राप्त होती है। किन्तु वह लब्धि स्वय उनके लिए और साथ ही अन्य नारको के लिए यातना का ही कारण बनती है। वैक्रियलब्धि से दु खो से बचने के लिए वे जो शरीर निर्मित करते है, उससे उन्हे अधिक दु ख की ही प्राप्ति होती है। भला सोचते है, पर बुरा होता है। इसके अतिरिक्त जैसे यहाँ श्वान एक-दूसरे को सहन नही करता, एक-दूसरे को देखते ही गुर्राता है, झपटता है, आक्रमण करता है, काटता-नोचता है, उसी प्रकार नारक एक-दूसरे को देखते ही उस पर आक्रमण करते है, विविध प्रकार के शस्त्रो से-जो वैक्रियशक्ति से बने होते है-हमला करते है। शरीर का छेदन-भेदन करते है। अगोपागो को काट डालते है। इतना त्रास देते है जो हमारी कल्पना से भी बाहर है। यह वेदना सभी नरकभूमियो मे भोगनी पडती है।

नरको का वर्णन जानने के लिए जिज्ञासु जनो को सूत्रकृतागसूत्र के प्रथम श्रुत स्कध का नरक-विभक्ति' नामक पचम अध्ययन तथा बृहत्सग्रहणी ग्रन्थ का नरक द्वार भी देखना चाहिए।

Elaboration—It has been mentioned earlier, there are three types of troubles in the hells—(1) The trouble caused by the nature of the ground, (2) The troubles caused by demon gods, (3) The troubles caused by the hellish beings mutually The trouble caused by the area is due to the nature of its land as it is either extremely hot or extremely cold Such trouble has been narrated in aphorisms 23 and 24 In the hells of upper region, there is dreadful trouble due to burning heat while in the hells of the lower region, there is trouble due to icy cold land The heat of the hell is comparable with burning embers or dreadfully burning earth This comparison is made only to make one understand the heat there In fact the heat in such hells is many times more than the heat of such embers or fire The heat is so severe that it is capable of melting an iron ball of the size of Meru mountain

The hells, which experience cold, also have extraordinary cold. In case any hellish being is taken out from such a hell and laid down on a slab of ice and then covered with ice from all sides, even then he feels some relief He shall feel such a relief that he will soon go to sleep From this example, the cold nature of such a hell can be comprehended to a certain extent

The other troubles caused by nature of the hellish area are also highly dreadful and they have already been mentioned earlier

The troubles caused by demon gods have been mentioned in aphorisms 25 to 30 Immediately when a living being, who had done sin in earlier life, takes birth in hell, the demon gods become ready to cause tortures of various types They go on troubling him till he completes his entire long life-span in hell This torture exists only upto the third hell because the demon gods do not go beyond the third hell In the fourth, fifth, sixth and the seventh hell there are two types of troubles—the trouble due to the nature of the area and the trouble caused by hellish beings mutually to each other Such troubles have been mentioned in aphorisms 31 and 32

A hellish being possesses the fluid power right from birth but this trait becomes the cause of trouble for him and for other hellish beings The hellish beings in order to protect themselves from the impending troubles transform their body with fluid power but this transformation becomes the cause of greater trouble They plan for their welfare but it becomes otherwise Further just as a dog cannot tolerate presence of another dog and jumps at it, attacks it, bites it similarly a hellish beings attacks the other hellish beings with the weapons created by their fluid power They pierce their body, cut their limbs and cause such a torture that cannot even be thought of Such a torture has to be endured in all the hells

In order to know the painful condition of hell, the reader should study the fifth chapter 'Narak Vibhakti' of the first volume of Sutrakritanga He should also go though 'Narak Dwaar' in 'Brihat-sangrahni'

३२. तत्थ य विग–सुणग–सियाल–काक–मज्जार–सरभ–दीविय–वियग्घग–सद्दूल–सीह–दप्पिय–खुहाभिभूएहिं णिच्चकालमणसिएहिं घोरा रसमाण–भीमरूवेहिं अक्कमित्ता दढदाढागाढ–डक्क–कड्ढिय–सुतिक्ख–णह–फालिय–उद्धदेहा विच्छिप्पंते समंतओ विमुक्कसंधिबंधणा वियंगियंगमंगा कंक–

कुरर–गिद्ध–घोर–कट्ठवायसगणेहि य पुणो खरथिर–दढणक्ख–लोहतुंडेहिं उवइत्ता पक्खाहय–तिक्ख–णक्ख–विक्किण्ण–जिब्भछिय–णयणणिद्दओलुग्गविगय–वयणा उक्कोसता य उप्पयंता णिप्पयता भमंता।

३२. नरक मे मानो बहुत दिनो की भूख से पीडित हो, जिन्हे कभी भोजन न मिला हो, ऐसे भयावह, भयकर रूप वाले मदोन्मत्त भेडिये, शिकारी कुत्ते, गीदड, कौवे, बिलाव, अष्टापद, चीते, बाघ, केसरी शेर और सिह घोर गर्जना करते हुए उन नारको पर टूट पडते है, अपनी मजबूत दाढो से नारको के शरीर को काटते है, खीचते है, अत्यन्त पैने नुकीले नाखूनो से फाडते है और फिर इधर–उधर चारो ओर फेक देते है जिससे उनके शरीर के जोड ढीले पड जाते है। उनके अगोपाग विकृत और पृथक् हो जाते है। तत्पश्चात् दृढ एव तीक्ष्ण दाढो, नखो और लोहे के समान नुकीली चोच वाले कक, टिटहरी और गिद्ध आदि पक्षी तथा घोर कष्ट देने वाले काक पक्षियो के झुण्ड अपनी कठोर, दृढ तथा स्थिर लोहमय चोचों से (उन नारको के ऊपर) झपट पडते है, उन्हे अपने पखो से घायल कर देते है, तीखे नाखूनो से उनकी जीभ बाहर खीच लेते है और ऑखे बाहर निकाल लेते है। निर्दयतापूर्वक उनके मुख को नोच-नोचकर कुरेदते है। इस प्रकार की यातना से पीडित वे नारक जीव जोर–जोर से रुदन करते है, कभी ऊपर उछलते है और फिर नीचे आ गिरते है, इधर–उधर चक्कर काटते है।

32. In the hell, the ferocious, dreadful starving, intoxicated wolves, hounds, jackals, crows, cats, ashtapad, leopards, tigers, lions attack the hellish beings with a roaring sound They pierce their body with their strong molars, pull them and tear them with their sharp nails Later they throw their pieces hither and thither and thus loosen the joints in their body Their limbs become deformed and get separated Later kank, titehri and vultures and swarm of kaak birds rush towards them with their strong sharp molars, nails, iron like pointed beaks, they injure them with their wings They take out their tongues with their sharp nails and also extract their eyes They cruelly bite their faces The hellish beings weep loudly, jump hither and thither or move about in pain due to such troubles

विवेचन वस्तुत नरक मे भेडिया, बिलाव, सिह, व्याघ्र आदि तिर्यच चतुष्पद नही होते, किन्तु नरकपाल ही नारको को त्रास देने के लिए अपनी वैक्रियशक्ति से भेडिया आदि का रूप बना लेते है। नारको की इस करुणाजनक पीडा एव भयानक यातनाओ का शास्त्रकार ने प्रत्यक्ष देखा वर्णन किया है। इसका एक मात्र प्रयोजन यही है कि मनुष्य हिसारूप दुष्कर्म से बचे और उसके फलस्वरूप होने वाली यातनाओ का भाजन न बने।

प्रस्तुत सूत्र मे **उक्कोसता, य उप्पयता णिप्पयता भमता**–पाठ से सूचित किया है कि वे ऊँचे उठते है। ग्रन्थकारो ने बताया है-जिस नारक के शरीर की जितनी ऊँचाई होती है, वह उतना ही ऊँचा उठता है। जैसे सातवी नरक के नारको की उत्कृष्ट ऊँचाई ५०० धनुष, छठी की २५० धनुष यो क्रमश घटती हुई प्रथम नरक के नारक जीवो की उत्कृष्ट ऊँचाई ७ धनुष ३ हाथ ६ अगुल की है।

नरकगति मे हिंसा के कुफलो का वर्णन करने के पश्चात् अगले सूत्र मे तिर्यंच आदि गतियो के हिंसा के कटुफलरूप यातनाओ का वर्णन करते है।

Elaboration—In fact there are no wolves, cats, lions, tigers or other quadruped beasts in the hell but the demon gods with their fluid power transform themselves into such shapes of wolves and the like The author has given an eye-witness account of such merciless and ferocious troubles and tortures The purpose of this description is that human beings should avoid bad deeds so that they may not have to suffer such tortures as a result thereof

In the present aphorism, the words ukkosanta or uppayanta, nippayanta, bhamanta indicate that the hellish beings jump upwards. It is mentioned in the scriptures that a hellish being can jump only upto the size of his body For instance the maximum height of a hellish beings in the seventh hell is 500 dhanush (a measure), in sixth hell it is 250 dhanush and thus becoming half respectively in secondary hells, it is just 7 dhanush 3 haath and 6 finger-thickness in the first hell

In the succeeding aphorism, the evil consequences of violence faced in the hellish state of existence have been mentioned, the troubles faced in other states of existence such as animal state and others have been described

नारको की मरने के बाद की गति **THE SUCCEEDING LIFE OF HELLISH BEINGS AFTER DEATH**

३३. पुव्वकम्मोदयोवगया, पच्छाणुसएण डज्झमाणा णिंदंता पुरेकडाइं कम्माइं पावगाइं तहिं तहिं तारिसाणि ओसण्णचिक्कणाइं दुक्खाइं अणुभवित्ता तओ य आउक्खएण उव्वट्टिया समाणा बहवे गच्छंति तिरियवसहिं।

दुक्खुत्तरं सुदारुणं जम्मण–मरण–जरा–वाहि–परियट्टणारहट्टं जल–थल–खहयर–परोप्पर–विहिंसण–पवंचं इमं च जगपागडं वरागा दुक्खं पावेति दीहकालं।

३३. पूर्वजन्म मे उपार्जित पापकर्मों के अधीन हुए, पश्चात्ताप (की आग) से जलते हुए, अमुक-अमुक स्थानो मे, उस–उस प्रकार के पूर्वकृत कर्मों की निन्दा करते हुए, अत्यन्त चिकने-बहुत कठिनाई से छूट सकने वाले-निकाचित दु खो को भुगतकर, तत्पश्चात् नारकीय आयु का क्षय होने पर नरकभूमियो मे से निकलकर बहुत–से जीव तिर्यंचयोनि मे उत्पन्न होते है।

किन्तु उनकी वह तिर्यंचयोनि भी अतिशय दु.खो से परिपूर्ण होती है अथवा अत्यन्त कठिनाई से पूरी की जाने वाली होती है, दारुण कष्टो वाली होती है, जन्म–मरण–जरा का अरहट उसमे घूमता रहता है। उसमे जलचर, स्थलचर और खेचर जीवो के पारस्परिक घात–प्रत्याघात का प्रपच या दुष्चक्र

चलता ही रहता है। तिर्यचगति के दु ख जगत् मे प्रत्यक्ष दिखाई देते है। नरक से किसी भी भाँति निकले और तिर्यचयोनि मे जन्मे वे पापी जीव बेचारे दीर्घकाल तक इन दु खो को प्राप्त करते है।

33 As a result of sinful deeds of earlier life, the hellish beings repenting bitterly and discarding their deeds of past lives, facing severe troubles and the effect of adverse Karma, which could be removed only after going through their consequences, most of them take birth in animal state of existence after completing their life in hell

But their life as creatures in animal state of existence is extremely full of troubles It has to be completed with great odds They go on passing through pangs of birth, old age and death The living beings in water, land and sky go on attacking and counter-attacking each other The troubles of animal life are quite evident in the world The poor creatures some how completed the span of life in hell and now for a long time they bear the pangs of animal life

विवेचन नारक जीव नरकायु पूर्ण होने पर ही नरक से निकलते है। उनका मरण 'उद्वर्त्तन' कहलाता है। पूर्व मे बतलाया जा चुका है कि नारको का आयुष्य निरुपक्रम होता है। विष, शस्त्र आदि के प्रयोग से उनकी अकालमृत्यु नही होती। जब नरक का आयुष्य पूर्ण रूप से भोगकर क्षीण कर दिया जाता है, तभी नारक नरकयोनि से छुटकारा पाता है।

मानव किसी कषाय आदि के आवेश से जब आविष्ट होता है तब उसमे एक प्रकार का उन्माद जागृत होता है। वह आविष्ट अवस्था मे अकरणीय कार्य कर बैठता है। आन्तरिक दुर्भाव के कारण प्रगाढ-चिकने-निकाचित कर्मो का बन्ध होता है। बँधे हुए कर्म जब अपना फल प्रदान करने के उन्मुख होते है-अबाधाकाल पूर्ण होने पर फल देना प्रारम्भ करते है तो भयकर से भयकर यातनाएँ उसे भोगनी पडती है।

प्रत्येक नारक जीव को भव-प्रत्ययिक अर्थात् नारक भव के निमित्त से उत्पन्न होने वाला अवधिज्ञान होता है। उस अवधिज्ञान से नारक अपने पूर्वभव मे किए घोर पापो के लिए पश्चात्ताप करते है। किन्तु उस पश्चात्ताप से भी उनका छुटकारा नही होता। हाँ, नारको मे यदि कोई सम्यग्दृष्टि जीव हो तो वह कर्मफल की अनिवार्यता समझकर नारकीय यातनाएँ समभाव से सहन करता है और अपने समभाव के कारण दु खानुभूति को किंचित् हल्का बना सकता है। मगर मिथ्यादृष्टि तो दु खो की आग के साथ-साथ पश्चात्ताप की आग मे जलते हुये अपने पूर्व आचरित पापकर्मो की निंदा करने लगते है कि मैने ऐसा क्यो किया ?

नारक जीव पुन तदनन्तर भव मे नरक मे उत्पन्न नही होता। वह तिर्यंच अथवा मनुष्यगति मे ही जन्म लेता है। तिर्यंचयोनि, नरकयोनि के समान एकान्त दु खमय नही है। उसमे दु खो की बहुलता के साथ किंचित् सुख भी होता है। कोई-कोई तिर्यच तो पर्याप्त सुख की मात्रा का अनुभव करते है, जैसे राजा-महाराजाओ के हस्ती, अश्व अथवा समृद्ध जनो द्वारा पाले हुए कुत्ता आदि।

नरक से निकले हुए और तिर्यंचगति मे जन्मे हुए घोर पापियो को सुख-सुविधापूर्ण तिर्यंचगति की प्राप्ति नही होती। नारक जीव नरक से निकलकर दु खमय तिर्यंचयोनि मे जन्म लेते है। वहाँ उन्हे विविध प्रकार के दु ख भोगने पडते है।

Elaboration—The hellish beings come out from the hellish state of existence after completing their destined life-span there Their death in hell is called udavartan It has been mentioned earlier that the life-span of hellish beings is nirupakram They cannot die earlier by poison or weapon injury They can leave hell only after passing there span in full there

When a man is in a fit of any passion, a sort of intoxication appears in him In that condition he performs such activities, which are not worthy of him Due to his inner thought activity he collects very harsh Karmas When after the period of subsidence, the said Karmas start ripening of deliver their consequences, he has to suffer dreadful pain and tortures

Every hellish being has transcendental knowledge (avadhi jnana) since his birth Then seeing vividly the evil activities committed by him in the past life, he repents for those sins But even after repentance, they are not let off Of course, if there is any hellish being among them who has right perception, he patiently bears his pain and so his karmic burden becomes lighter to a certain extent But those with wrong faith (or perception) suffer miserably due to pain, repenting simultaneously for their misdeeds of earlier life

A hellish being does not take birth as hellish being immediately after his current life-span He takes birth either in animal state of existence or as human being The animal state of existence is not totally full of troubles as is the hell There are many troubles in it but there is a little happiness also Some animal beings experience sufficient happiness, for instance the elephant or horse of the king The dog brought up by a nobleman

Those living beings who come out from the hell and take birth in animal state of existence, they do not get such an animal existence which may be full of comforts and happiness They take birth only in wretched animal state full of miseries They have to undergo many troubles there

तिर्यच पचेन्द्रिय योनि के दु ख THE TROUBLE OF ANIMAL STATE

३४. [प्र] किं ते ?

[उ.] सीउण्ह–तण्हा–खुह–वेयण–अप्पईकार–अडवि–जम्मणणिच्च–भउव्विग्गवास–जग्गण–वह–बंधण–ताडण–अंकण–णिवायण–अट्ठिभंजण–णासाभेय–प्पहारदूमण–छविच्छेयण–अभिओग–पावण–कसंकुसारणिवाय–दमणाणि–वाहणाणि य।

३४. [प्र.] वे तिर्यंचयोनि के दु ख कैसे है ?

[उ] सर्दी, गर्मी, प्यास, भूख, वेदना का प्रतीकार करने की क्षमता का अभाव, घोर जगल मे जन्म लेना, निरन्तर भय से घबडाते रहना, जागते रहना, मारपीट सहना, बाँधा जाना, ताडन, दागना–लोहे की शलाका, चीमटा आदि को गर्म करके निशान बनाना–डामना, गड्ढे आदि मे गिराना, हड्डियाँ तोड देना, नाक छेदना, चाबुक, लकडी आदि के प्रहार सहन करना, सताप सहना, छविच्छेदन–अगोपागो का छेदन जबर्दस्ती भारवहन आदि कामो मे लगना, कोड़ा–चाबुक, अकुश एव डण्डे के अग्र भाग मे लगी हुई नोकदार कील आदि से दमन किया जाना, भार वहन करना आदि–आदि।

34. [Q.] What are the sorrows of animal state of existence ?

[Ans.] They are not capable of safeguarding themselves from cold, hot, thirst, hunger and pain They take birth in dense forest They continuously remain in a frightened sleepless state They have to suffer beating They are tied, lashed, branded with hot iron rod, marked with hot pair of tongs They are thrown in a pit Their bones are broken Their nose is pierced They have to bear the blows of lashes and sticks They are oppressed with the sharp nail fixed on a stick They are used to carry heavy load and the like

विवेचन प्रस्तुत सूत्र मे उल्लिखित दु ख प्राय पचेन्द्रिय तिर्यंचो सम्बन्धी हैं। तिर्यचो मे कोई पचेन्द्रिय होते है, कोई चार, तीन, दो या एक इन्द्रिय वाले होते है। चतुरिन्द्रिय आदि के दु खो का वर्णन आगे किया जायेगा।

मनुष्य मे बुद्धि एव विवेक होता है, वह सर्दी–गर्मी से अपना बचाव करने के लिए अनेकानेक उपाय करने मे समर्थ है, तिर्यंचो मे विवेक–बुद्धि का अभाव होता है। अज्ञान व मूढता के कारण तथा वाणी से स्पष्ट बता भी नही सकते, उन्हे विवश होकर सर्दी–गर्मी आदि अनेकानेक कष्ट सहन करने पडते है।

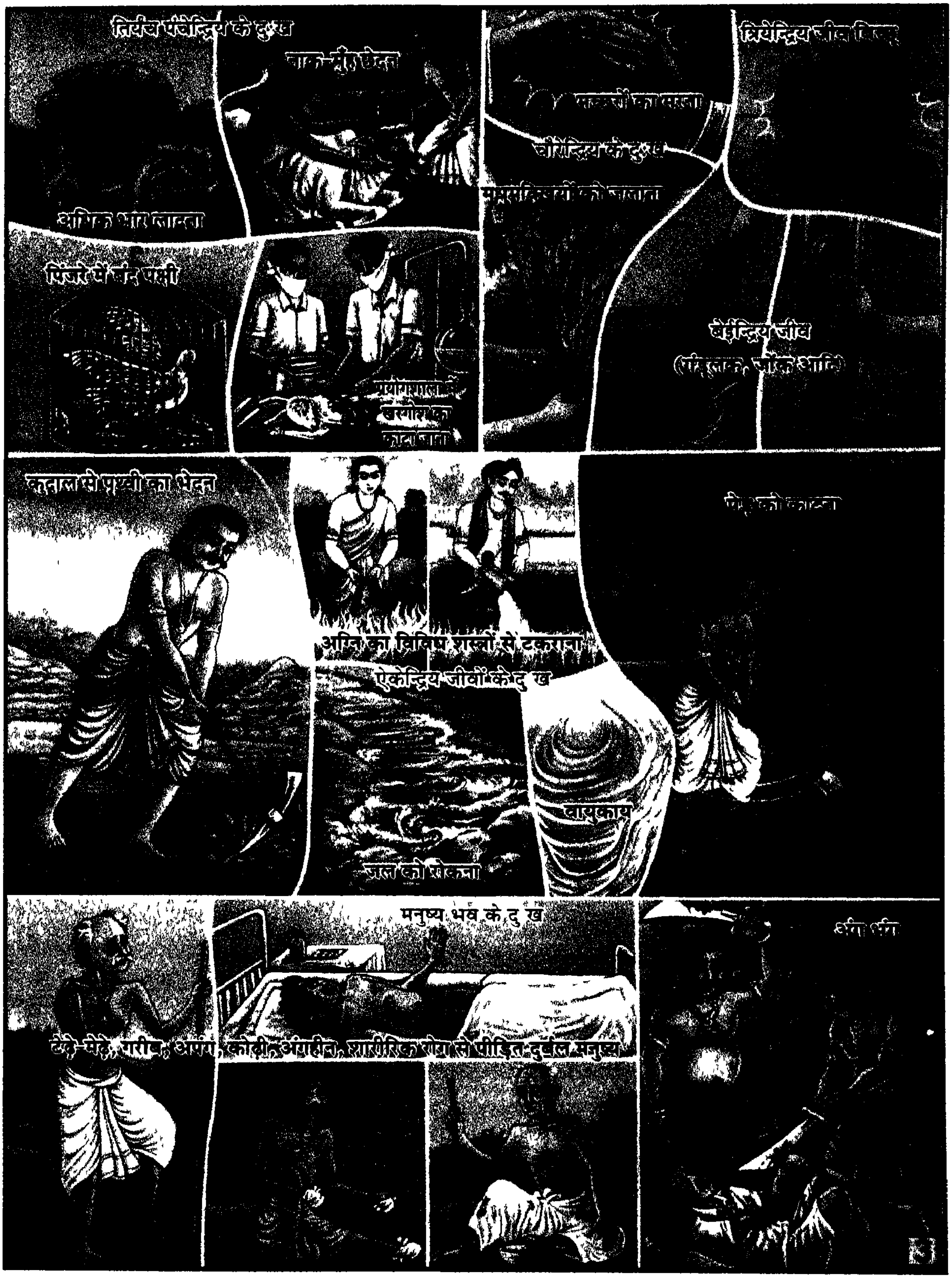
भूख–प्यास की पीडा होने पर वे उसे असहाय होकर सहते है। कभी–कभी पापी हिंसक उन्हे पकडकर कत्ल करके उनके माँस एव अस्थियो को बेच देते है।

कतिपय पालतू पशुओ को छोडकर तिर्यचो की वेदना का प्रतिकार (चिकित्सा) करने वाला कौन है ?

तिर्यंचो मे जो जन्मजात वैर वाले अनेक जीव है, उन्हे परस्पर एक–दूसरे से निरन्तर भय बना रहता है, शशक, हिरण आदि शिकारियो के भय से ग्रस्त रहते है और पक्षी व्याधो (शिकारियो)–बहेलियो के डर से घबराते है। इसी प्रकार अशरण एव साधनहीन होने के कारण सभी पशु–पक्षी निरन्तर भयग्रस्त बने रहते है।

इसी प्रकार अन्य पीडाएँ भी उन्हे चुपचाप पराधीन होकर सहनी पडती है। स्पष्ट वाणी का अभाव होने के कारण वे अपनी वेदना व्यक्त नही कर सकते।

कुछ माँसभक्षी और मिथ्यादृष्टि पापी जीव पशु–पक्षियो का अत्यन्त निर्दयतापूर्वक वध करते है। बेचारे पशु तडफते हुए चीत्कारे करते हुए मृत्यु के ग्रास बन जाते है। कुछ अधम मनुष्य तो माँस–विक्रय का धधा ही चलाते है। कुछ अत्यन्त क्रूर धनलोभी मानव उद्योग के रूप मे प्रतिदिन लाखो जीवो की निर्मम हत्या करवाते हैं। इस प्रकार तिर्यंचो की वेदना भी अत्यन्त दुस्सह और भयावह होती है।


तिर्यंच पंचेन्द्रिय के दुःख
अधिक भार लादना
पिंजरे में बंद पक्षी
चौरिन्द्रिय के दुःख
त्रियेन्द्रिय जीव
बेइन्द्रिय जीव
कुदाल से पृथ्वी का भेदन
अग्नि का विविध शस्त्रों से टकराना
ऐकेन्द्रिय जीवों के दुःख
वायुकाय
जल को रोकना
मनुष्य भव के दुःख
टेढ़े-मेढ़े, गरीब, अपंग, कोढ़ी, अंगहीन, शारीरिक रोग से पीड़ित दुर्बल मनुष्य

चित्र-परिचय 3

Illustration No. 3

पंचेन्द्रिय से ऐकेन्द्रिय गतियों में हिंसा के कुफल

यहाँ मनुष्य भव से लेकर ऐकेन्द्रिय जीवों तक के दुःखों का वर्णन किया गया है। हिंसा के फलस्वरूप उन्हें विभिन्न योनियों में कितने दारुण कष्ट सहने पड़ते हैं।

(1) तिर्यंच पंचेन्द्रिय के दुःख– तिर्यंच योनि के जीव अपना दुःख, वेदना बोलकर नहीं बता सकते। उन पर भारी बोझ लादा जाता है। नाक, मुँह का छेदन-भेदन किया जाता है। पक्षियों को पिंजरे में बन्द कर दिया जाता है। कुछ जीवों को तो प्रयोगशालाओं में जागृत अवस्था में ही काटकर उनके शरीर के अन्दर का आँत, हृदय, यकृत आदि निकाल लिये जाते हैं। इस प्रकार तिर्यंच योनि में मिलने वाली वेदनायें भी अत्यन्त दुस्सह और भयानक होती हैं। *—सूत्र 34-36 पृ 59*

(2) चौरिन्द्रिय से बेइन्द्रिय जीवों के दुःख– उपरोक्त पंचेन्द्रिय जीवों की तरह चौरिन्द्रिय से बेइन्द्रिय जीव भी अपने-अपने कुल कोटियों में जन्म लेकर अपने पूर्वकृत पाप कर्मों की अनेक प्रकार की वेदनायें पाते हुए मृत्यु को प्राप्त होते हैं। *—सूत्र 37-39, पृ 63*

(3) ऐकेन्द्रिय जीवों के दुःख– पृथ्वीकाय में उत्पन्न जीवों को कुदाल व हल से विदारण किया जाता है। तेउकाय और वायुकाय में जीवों का स्वकाय और परकाय रूप विविध शस्त्रों से हनन किया जाता है। अपकाय जीवों का जल के प्रवाह को रोककर स्थन किया जाता है, जल का मंथन किया जाता है। पेड़ आदि वनस्पति को काटा जाता है। इस प्रकार अनेक ऐकेन्द्रिय जीव अपने दुष्कर्मों के उदय से प्राप्त होने वाले दुःख भोगते हैं। *—सूत्र 40, पृ 66*

(4) मनुष्य भव के दुःख– हिंसा करने वाले जीव नरक योनि में घोर दुःख पाकर वहाँ से निकलते हैं और तिर्यंच योनि में होकर फिर मनुष्य बनते हैं। वे प्रायः विकृत शरीर, विकलांगी, कुबड़े, वामन, बहरे, गूँगे, काने, अन्धे, टूटे हाथ और लंगड़े टाँग वाले होते हैं। कई कुष्ठादि व्याधि और ज्वरादि रोग से पीड़ित होते हैं। कई शस्त्र-प्रहार से वध किये जाते हैं। कई दुर्बल, दीन-हीन एवं शक्तिरहित होते हैं। *—सूत्र 42 पृ 70*

नोट - पिछले पृष्ठ पर जीवों की वेदनाओं के कुछ उदाहरण दिये गये हैं। इसके अलावा भी अनेक प्रकार से वेदनायें भोगते हैं।

ILL FRUITS OF VIOLENCE IN FIVE TO ONE-SENSED BEINGS

The miseries of living beings from humans to one-sensed beings have been described here. How acute is the pain they have to suffer in different forms of life is detailed here.

(1) Miseries of human life After suffering great pain in hell the living beings indulging in violence leave the hell and reincarnate as humans after getting born once as animal. They are generally with deformed and disabled bodies, or hunchbacked, dwarfs, deaf and dumb, one-eyed or blind or with damaged limbs. Many of them suffer from leprosy, fever or other diseases. Some are killed with weapons. Many are weak, destitute, lowly and deprived. *– Sutra-23-25, page-37*

(2) Miseries of five sensed animals Living beings of animal class cannot express their sorrow and pain by speaking. They are burdened with heavy load. Their nose and mouth are pierced. Birds are trapped in cages. Some animals are even cut and body parts including intestines, heart and lever are removed without using anesthesia. Thus the pain suffered as animal is also terrible and intolerable. *-- Sutra-34-36, page-59*

(3) Miseries of four to two sensed beings Like the five sensed animals the four to two-sensed living beings also suffer the fruits of their karmas acquired due to sinful activities of the past when born in their respective categories. They suffer numerous types of torments and die.

— Sutra-37-39, page-63

(4) Miseries of one-sensed beings Earth-bodied beings are crushed with axe and plough. Fire-bodied and air-bodied beings are killed with weapons made of their own class as well as others. Water-bodied beings are killed by blocking the flow of water as well as by agitating water. Trees and other plant-bodied beings are cut and destroyed in different ways. Thus one-sensed beings suffer miseries due to their acquired karmas. *— Sutra-40, page-66*

Note: Preceding pages contain only a few examples of the miseries of living beings. Besides these there are many more.

Elaboration—The miseries mentioned in this aphorism are mostly related to five sensed animals There are also many four, three, two or one sensed beings Their miseries will be discussed later

Human beings have intelligence and commonsense They are capable of protecting themselves from heat or cold by employing various means But animals are devoid of this ability They have to suffer many such miseries due to the lack of intelligence and absense of the faculty of speech

When they feel pangs of hunger or thirst, they helplessly endure it Sometimes violent parsons catch them, kill them and sell their meat and bones

Except some domesticated animals, there is no one to provide medical care to reduce the pain of animals

There are many living beings in the animal state who are by birth inimical to others They remain continuously in a sense of fear from others Rabbits, deer and the like are afraid of hunters Birds are afraid of bird catchers and hunters Thus animals in a protectionless state always feel frightened

In the same manner, they have to patiently bear other troubles in a state of slavery They cannot clearly express their pain as they do not have the ability of distinct expression

Some violent people who take meat and who have wrong perception kill birds and animals in an extremely brutal manner Animals die while crying because of dreadful suffering Some low-class people deal in meat Some persons who are extremely greedy run such an industry wherein millions of animals are mercilessly killed daily Thus the suffering of animals in extremely unbearable and frightening

३५. मायापिइ–विप्पओग–सोय–परिपीलणाणि य सत्थग्गि–विसाभिघाय–गल–गवलावलण–मारणाणि य गलजालुच्छिप्पणाणि य पउलण विकप्पणाणि य जावज्जीविगबंधणाणि य, पंजरणिरोहणाणि य सयूहणिग्घाडणाणि य धमणाणि य दोहिणाणि य कुदंडगलबंधणाणि य वाडगपरिवारणाणि य पकजलणिमज्जणाणि य वारिप्पवेसणाणि य ओवायणिभंग–विसमणिवडणदवग्गिजालदहणाई य।

३६. एयं ते दुक्ख–सय–संपलित्ता णरगाओ आगया इहं सावसेसकम्मा तिरिक्ख–पंचिंदिएसु पाविंति पावकारी कम्माणि पमाय–राग–दोस–बहुसंचियाइं अईव अस्साय–कक्कसाइं।

३५. (पूर्वोक्त दु खो के अतिरिक्त तिर्यचगति मे) इन दु खो को भी सहन करना पडता है–माता–पिता का वियोग, शोक से अत्यन्त पीडित होना या नासिका आदि श्रोतो–नथुनो आदि के छेदन से पीडित होना, शस्त्रो से, अग्नि से और विष से आघात पहुँचना, गले एव सींगो का मोडा जाना, मारा

जाना, मछली आदि को गल-काँटे मे या जाल मे फँसाकर जल से बाहर निकालना, आग पर भूनना, छुरी आदि से काटा जाना, जीवन पर्यन्त बन्धन मे बँधे रहना, पिजरे मे बन्द रहना, अपने टोले से पृथक् किया जाना, भैस आदि को फूँका लगाना अर्थात् ऊपर मे वायु भर देना (या इजेक्शन आदि लगाना) और फिर उसे दुहना-जिससे दूध अधिक निकले, गले मे डण्डा बाँध देना, जिससे वह भाग न सके, बाडे मे घेरकर रखना, कीचड-भरे पानी मे डुबोना, जल मे घुसेडना, गड्ढे मे गिरने से अग-भग हो जाना, पहाड के विषम-ऊँचे-नीचे-ऊबड-खाबड मार्ग मे गिर पडना, दावानल की ज्वालाओ मे जलना या जल मरना, आदि-आदि अगणित कष्टो से परिपूर्ण तिर्यचगति मे हिसाकारी पापी जीव नरक से निकलकर उत्पन्न होते है।

३६. इस प्रकार वे हिंसा का पाप करने वाले पापी जीव सैकडो पीडाओ से पीडित होकर, नरकगति से आये हुए, घोर प्रमाद, तीव्र राग और तीव्र द्वेष के कारण बहुत सचित किए और नरकगति मे भोगने से शेष रहे कर्मों को भोगने के लिए अत्यन्त कर्कश असाता को उत्पन्न करने वाले कर्मो से उत्पन्न दु खो को पाते है।

35. In addition to the above mentioned sufferings of animal life they have to suffer other pains also They suffer separation from their parents They remain in extreme agony due to sadness They bear pain when their nose and the like are pierced They are troubled by weapons, through fire and poison Their necks and the horns are bent They are killed Fish and the like are caught in the net and then taken out from water They are parched on the fire They are cut with a sharp knife They are kept in control throughout their life They are put in cages They are separated from their group Buffalo and the like are administered injection and then milked so that one may get more milk A stick is tied on the neck They are dropped in muddy water They are pushed forcibly in water There limbs get disjointed when they fall in a ditch They are forced into an enclosure so that they may not run away They fall on the undulating hilly path They are burnt in deadly fire Those who have committed sin take birth in such an animal state of existence, which is full of innumerable troubles

36. Thus the violent human beings who had committed sinful activities suffer hundreds of tortures in hell and then suffer the fruits of remaining bad Karmas collected by them through slackness, extreme attachment and intense hatred They undergo extreme painful condition as a result of their evil deeds

विवेचन पिछले सूत्र मे पचेन्द्रिय तिर्यचो को होने वाली यातनाओ का उल्लेख किया था। प्रस्तुत सूत्र मे नारकीय जीवो की तिर्यचगति मे उत्पत्ति के कारण का निर्देश किया गया है। पहला कारण है कर्मो का शेष रहना। इतने कर्म भोगने के बाद भी कर्म शेष क्यो रहते है। इसका दूसरा कारण बताया है-'पमाय-राग-दोस

बहुसचियाइं' अर्थात् घोर प्रमाद, राग और द्वेष के कारण पापकर्मों का बहुत सचय किया गया था। सचित कर्म जब अधिक होते है और उनकी स्थिति भी आयुकर्म की स्थिति से अत्यधिक होती है तब उसे भोगने के लिए पापी जीवो को तिर्यंचयोनि मे उत्पन्न होना पडता है। नारक जीव नरक से निकलकर सर्वप्रथम तिर्यंच पंचेन्द्रियो मे उत्पन्न होते है, अतएव यहाँ पचेन्द्रिय जीवो-तिर्यंचों के दु ख का वर्णन किया गया है। तिर्यंच पचेन्द्रियो की ५३॥ लाख कुल कोटियो मे परिभ्रमण करता हुआ पश्चात् पचेन्द्रिय तिर्यंच मरकर फिर चतुरिन्द्रिय आदि तिर्यंचो मे भी उत्पन्न हो सकता है। अतएव आगे चतुरिन्द्रिय आदि तिर्यंचो के दु खो का भी वर्णन किया जायेगा।

Elaboration—The miseries of five sensed animals have been mentiioned in the preceding aphorism In this aphorism two causes of rebirth of infernal beings as animals have been stated First is the residual karmas and the second is excessive acquisition of karmas due to intense stupor, attachment and aversion When the accumulated karmas are excessive and they outlive the life span, the soul has to be reborn in the animal genes to suffer the fruits. Leaving the hells, the infernal beings first of all reincarnate as five sensed animals, Passing through the 5 35 million species of five sensed animals a soul can also take rebirth as four or lesser sensed beings As such the miseries of these will also be discussed later

चतुरिन्द्रिय जीवो के दु ख **THE PAIN OF FOUR-SENSED LIVING BEINGS**

३७. भमर–मसग–मच्छिमाइएसु य जाइकुलकोडि–सयसहस्सेहिं णवहिं चउरिंदियाणं तहिं तहिं चेव जम्मणमरणाणि अणुहवता काल संखिज्ज भमति णेरइयसमाणतिव्वदुक्खा फरिसरसण–घाण–चक्खु–सहिया।

३७ चार इन्द्रियो वाले भ्रमर, मशक–मच्छर, मक्खी आदि पर्यायो मे, उनकी नौ लाख जाति–कुलकोटियो मे बारबार जन्म–मरण (के दु खो) का अनुभव करते हुए, नारको के समान तीव्र दु ख भोगते हुए (१) स्पर्शन, (२) रसना, (३) घ्राण, और (४) चक्षु से युक्त होकर वे पापी जीव सख्यात काल तक भ्रमण करते रहते है।

37. There are 0 9 million kulakotis (different types in families of insects) of four-sensed creatures namely moth, mosquitoes, flies and others In this condition they suffer badly the pangs of death and rebirth like hellish beings They have four senses namely sense of touch, sense of taste, sense of smell and sense of sight and in this state they suffer for a period of numerable years passing from one state of four-sensed creature to another state of four-sensed living beings.

विवेचन · चतुरिन्द्रिय जीवो को पूर्वोक्त चार इन्द्रियाँ प्राप्त होती है। इन चारो इन्द्रियो के माध्यम से उन्हें विविध प्रकार की पीडाएँ भोगनी पडती है। भ्रमर, मच्छर, मक्खी आदि जीव चार इन्द्रियो वाले है।

योनि एक समान वर्ण गध रस स्पर्श वाले उत्पात्त स्थान को योनि कहते हैं। एक ही योनि मे अलग–अलग रग के, अलग अलग प्रकार के जीव उत्पन्न होते है, उसे कुल कहते है। इसलिए योनि से कुल ज्यादा ही होते है। सभी जीवो की ८४ लाख योनि है –

कुलकोटि क्या है? गोत्र कर्म के उदय से प्राप्त वश 'कुल' कहलाते है। उन कुलो की विभिन्न कोटियाँ (श्रेणियाँ) कुलकोटि कही जाती है। एक जाति मे विभिन्न अनेक कुल होते है। केवल मनुष्यो मे ही नही, अपितु प्रत्येक जीव योनि मे 'कुल' होते है। समस्त ससारी जीवो के मिलकर एक करोड साढे सत्तानवे लाख करोड कुल शास्त्रो मे कहे गये है।

कुलो की सख्या इस प्रकार है –

मनुष्य		१२ लाख कुलकोटियाँ
देव		२६ लाख कुलकोटियाँ
नारक		२५ लाख कुलकोटियाँ
जलचर पचेन्द्रिय तिर्यंच		१२½ लाख कुलकोटियाँ
स्थलचर चतुष्पद पचेन्द्रिय	तिर्यच पचेन्द्रिय	१० लाख कुलकोटियाँ
स्थलचर उरपरिसर्प पचेन्द्रिय	५३½ लाख करोड कुल	१० लाख कुलकोटियाँ
स्थलचर भुजपरिसर्प पचेन्द्रिय		९ लाख कुलकोटियाँ
खेचर पचेन्द्रिय तिर्यंच		१२ लाख कुलकोटियाँ
चतुरिन्द्रिय तिर्यच		९ लाख कुलकोटियाँ
त्रीन्द्रिय तिर्यच	२४ लाख करोड कुल	८ लाख कुलकोटियाँ
द्वीन्द्रिय तिर्यच		७ लाख कुलकोटियाँ
पृथ्वीकायिक स्थावर		१२ लाख कुलकोटियाँ
अप्कायिक स्थावर	स्थावर	७ लाख कुलकोटियाँ
तेज कायिक स्थावर	५७ लाख करोड कुल	३ लाख कुलकोटियाँ
वायुकायिक स्थावर		७ लाख कुलकोटियाँ
वनस्पतिकायिक स्थावर		२८ लाख कुलकोटियाँ
		योग–१,९७,५०,००० करोड

इनमे से चतुरिन्द्रिय जीवो की यहाँ नव लाख कुलकोटियाँ बताई है। जैसे नारक जीव नारक पर्याय का अन्त हो जाने पर पुन तदनन्तर भव मे नरक मे जन्म नही लेते, वैसा नियम तिर्यच पचेन्द्रिय व चतुरिन्द्रिय आदि के लिए नही है। ये जीव मरकर बार–बार चतुरिन्द्रिय आदि मे जन्म लेते रहते है। सख्यात काल तक अर्थात् सख्यात हजार वर्षों जितने सुदीर्घ काल तक वे चतुरिन्द्रिय पर्याय मे ही जन्म–मरण करते रहते है।

Elaboration—A place of origin having same appearance, smell, taste and touch in called **Yoni** Different types of living beings with change of

colour and other attributes are born in the same Yoni. They are called different Kulas (clans) Thus the total number of Kulas is more than that of yonis In total there are 84 lac yonis of living beings.

What is a Kulakotis ? The family in which a living being takes birth due to his status (gotra), Karma is called kul Various categories of those kuls are called Kulakotis There are many kuls in a jati Not only in human beings, but in every family of birth there are kuls All the world being have in all 19 75 million billion kuls according to scriptures

The number of kuls is as under—

Human beings		1 2 million Kulakotis
Celestial beings		2 6 million Kulakotis
Hellish beings		2 5 million Kulakotis
Five sense aquatic beings	Five sensed animals 5 35 million-billion kulas	1 25 million Kulakotis
Quadrupeds on land (Five-sensed)		1 million Kulakotis
Five-sensed being moving on heart		1 million Kulakotis
Five-sensed moving on arms		0.9 million Kulakotis
Five-sensed moving in air		1 2 million Kulakotis
Four-sensed living beings	2 4 million-billion kulas	0 9 million Kulakotis
Three-sensed living beings		0 8 million Kulakotis
Two-sensed living beings		0 7 million Kulakotis
Earth-bodied living beings	Immobile beings 5 7 million-billion kulas	1 2 million Kulakotis
Water-bodied immobile beings		0 7 million Kulakotis
Fire-bodied beings		0 3 million Kulakotis
Air-bodied beings		0.7 million Kulakotis
Plant-bodied beings		2 8 million Kulakotis
		Total 19.75 million billion Kulakotis

Out of them 0 9 million Kulakotis of four-sensed living beings have been mentioned here Just as the hellish beings after completing their span of life in hell, do not immediately take re-birth in hell, the same principle does not apply to animal beings having five senses, four senses and so on These living beings go on taking birth again and again in four-sensed category of living beings after their present life as four-sensed living being They continue taking birth in the class of four-sensed living being for a countable period which means for a period as long as numerable thousand years

त्रीन्द्रिय जीवो के दु ख PAIN OF THREE-SENSED LIVING BEINGS

३८. तहेव तेइंदिएसु कुंथु-पिप्पीलिया-अवधिकादिएसु य जाइकुलकोडिसयसहस्सेहिं अट्ठहिं अणूणएहिं तेइंदियाण तहिं तहिं चेव जम्मणमरणाणि अणुहवंता कालं संखेज्जगं भमंति णेरइयसमाण-तिव्वदुक्खा फरिस-रसण-घाण-संपउत्ता।

३८. इसी प्रकार कुथु, पिपीलिका-चीटी, दीमक आदि त्रीन्द्रिय जीवो की पूरी आठ लाख कुलकोटियो मे से विभिन्न योनियो एव कुलकोटियो मे जन्म-मरण का अनुभव करते हुए (वे पापी प्राणी) सख्यात काल अर्थात् सख्यात हजार वर्षो तक नारको के सदृश तीव्र दु ख भोगते है। ये त्रीन्द्रिय जीव स्पर्शन, रसना और घ्राण-इन तीन इन्द्रियो से युक्त होते है।

38. The ants, white ants, worms and the like are the three-sensed living beings They have 0 8 million Kulakotis and continuously they take birth for a total period running upto numerable thousand years in these categories They suffer pain and tortures like hellish beings. These living beings have three senses namely those of touch, taste and smell

विवेचन त्रीन्द्रिय-पर्याय मे उत्पन्न हुए जीव भी उत्कर्षत सख्यात हजार वर्षों तक बार-बार जन्म-मरण करता हुआ त्रीन्द्रिय पर्याय मे ही बना रहता है।

Elaboration—A three-sensed living being taking birth again and again spends maximum period of numerable thousand years in the category of three-sensed living beings

द्वीन्द्रिय जीवो के दु ख PAIN OF TWO-SENSED LIVING BEING

३९. गंडूलय-जलूय-किमिय-चदणगमाइएसु य जाइकुलकोडिसयसहस्सेहिं सत्तहिं अणूणएहिं बेइदियाणं तहिं तहिं चेव जम्मणमरणाणि अणुहवंता काल संखेज्जग भमंति णेरइयसमाण-तिव्वदुक्खा फरिस-रसण-सपउत्ता।

३९. गडूलक-गिडोला, जलौक-जोक, कृमि, चन्दनक आदि द्वीन्द्रिय जीव पूरी सात लाख कुलकोटियो मे से वही-वही अर्थात् विभिन्न कुलकोटियो मे जन्म-मरण की वेदना का अनुभव करते हुए सख्यात हजार वर्षो तक भ्रमण करते रहते है। वहाँ भी उन्हे नारको के समान तीव्र दु ख भुगतने पडते है। ये द्वीन्द्रिय जीव स्पर्शन और रसना-जिह्वा, इन दो इन्द्रियो वाले होते है।

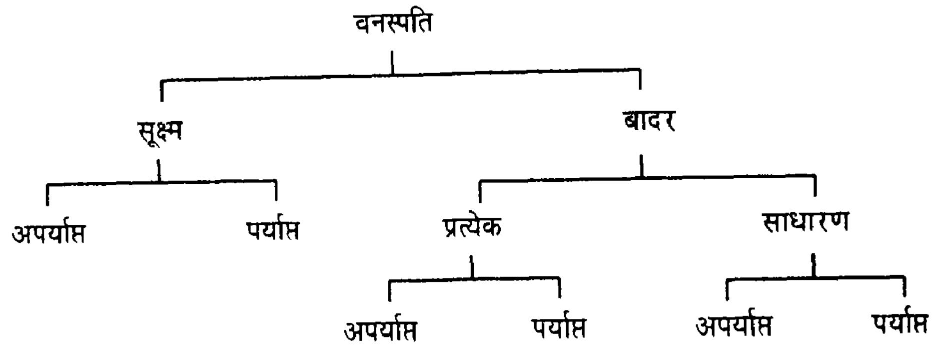
39. Snails, earthworms and the like two-sensed creatures have 0 7 million Kulakotis and they take birth again and again in them spending a maximum period of numerable thousand years They experience sever suffering like those in hell These living beings have two senses-sense of touch and sense of taste

४०. पत्ता एगिंदियत्तणं वि य पुढवि–जल–जलण–मारुय–वणप्फइ–सुहुम–बायरं च पज्जत्तमपज्जत्तं पत्तेयसरीरणाम–साहारणं च पत्तेयसरीरजीविएसु य तत्थवि कालमसंखेज्जगं भमंति अणंतकालं च अणंतकाए फासिंदियभावसंपउत्ता दुक्खसमुदयं इमं अणिट्ठं पावंति पुणो पुणो तहिं तहिं चेव परभव–तरुगणगहणे।

४०. एकेन्द्रिय अवस्था को प्राप्त हुए पृथ्वीकाय, जलकाय, तेजस्काय, वायुकाय और वनस्पतिकाय के दो–दो भेद है–सूक्ष्म और बादर, अर्थात् सूक्ष्मपृथ्वीकाय और बादरपृथ्वीकाय, सूक्ष्मजलकाय और बादरजलकाय आदि। इनके अन्य प्रकार से भी दो–दो प्रकार होते है, यथा–पर्याप्तक और अपर्याप्तक। इन भेदो के अतिरिक्त वनस्पतिकाय मे दो भेद और भी है–प्रत्येकशरीरी और साधारणशरीरी। इन भेदो मे से प्रत्येकशरीर (एक शरीर मे एक जीव) पर्याय मे उत्पन्न होने वाले पाप–हिंसक जीव असख्यात काल तक उन्ही–उन्ही पर्यायो मे परिभ्रमण करते रहते है और अनन्तकाय अर्थात् साधारण–शरीरी (एक शरीर मे अनन्त जीव) जीवो मे अनन्त काल तक पुन –पुन जन्म–मरण करते हुए भ्रमण करते है। ये सभी जीव एक स्पर्शनेन्द्रिय वाले होते है। इनके दु ख अतीव अनिष्ट (पीडाकारी) होते है। वनस्पतिकाय रूप एकेन्द्रिय पर्याय मे कायस्थिति सबसे अधिक–अनन्तकाल की है। *(टीका, पृ २४)*

40. The one-sensed living beings are earth-bodied, water-bodied, fire-bodied, air-bodied and plant-bodied living beings and each is of two types—namely subtle and gross In other words these are subtle earth-body living beings and gross earth-bodied living beings, subtle water-bodied living beings and gross water-bodied living beings and so on Again each of them is of two types—complete in capability of their category (paryaptak) and incomplete (aparyaptak) In addition, the plant-bodied living beings have two more types—namely one living being in one body (pratyek sharira) and infinite number of living beings in one body (sadharan sharira) The sinner living beings who take birth in pratyek sharira category go on taking birth in that category for a maximum period of innumerable years. The living beings who take birth in sadharan sharira category go on taking birth again and again in that category for a total period of infinite number of years All these beings are one-sensed living beings and have only one sense namely sense of touch Their sufferings are extremely troublesome The maximum period a one-sensed living being (by taking birth again and again) can spend is infinite period

विवेचन एकेन्द्रिय जीव मूलत पाँच प्रकार के है-पृथ्वीकाय आदि। इनमे से प्रत्येक सूक्ष्म और बादर तथा पर्याप्त और अपर्याप्त के भेद से दो-दो प्रकार के होते है। वनस्पतिकाय के इन दो भेदो मे बादर वनस्पति के साधारणशरीरी और प्रत्येकशरीरी, ये दो भेद होते है। इनका स्पष्टीकरण इस प्रकार है-



सूक्ष्म-सूक्ष्म नामकर्म के उदय से जिन स्थावर जीवो का शरीर अतीव सूक्ष्म हो, चर्मचक्षु से दिखाई न देता हो, सिर्फ अतिशयज्ञानी ही जिसे देख सकते है, ऐसे सूक्ष्म जीव सम्पूर्ण लोक मे व्याप्त है।

बादर-बादर नामकर्म के उदय से जिनका शरीर अपेक्षाकृत बादर हो। यद्यपि सूक्ष्म और बादर शब्द किसी एक ही अपेक्षा से नही है, एक की अपेक्षा जो सूक्ष्म है वह दूसरे की अपेक्षा बादर (स्थूल) हो सकता है और जो किसी की अपेक्षा बादर है वह अन्य की अपेक्षा सूक्ष्म भी हो सकता है। किन्तु यहाँ सूक्ष्म और बादर का भेद समझना चाहिए। नामकर्म के उदय पर ही यहाँ सूक्ष्म और बादर का भेद बताया है। कोई-कोई त्रसजीव भी अत्यन्त सूक्ष्म शरीर वाले होते है। उनका शरीर भी चक्षुगोचर नही होता। सम्मूर्च्छिम मनुष्यो का शरीर भी इतना सूक्ष्म होता है कि दृष्टिगोचर नही हो सकता। फिर भी यहाँ गृहीत नही है, क्योकि उनके सूक्ष्म नामकर्म का उदय नही होता।

प्रत्येकशरीर-यह वनस्पतिकाय का भेद है। जिस जीव के एक शरीर का स्वामी एक ही हो, वह प्रत्येकशरीर या प्रत्येकशरीरी जीव कहलाता है।

साधारणशरीर-ऐसे जीव जो एक ही शरीर मे, उसके स्वामी के रूप मे एक साथ अनन्त हो। ऐसे जीव निगोदकाय के जीव भी कहे जाते है। सूक्ष्म निगोद के जीव सम्पूर्ण लोकाकाश मे व्याप्त है। बादर निगोद के जीव कन्दमूल आदि वनस्पतियो मे होते है। लोकाकाश मे असख्यात गोल है। एक-एक गोल मे असख्यात-असख्यात निगोद है और एक-एक निगोद मे अनन्त-अनन्त जीव है।

साधारणशरीर वाले जीवो के विषय मे कहा गया है कि वे एक शरीर मे अर्थात् एक ही शरीर के स्वामी के रूप मे अनन्त जीव होते है। किन्तु उन सबका शरीर एक ही होता है। जब शरीर एक ही होता है तो उनका आहार और श्वासोच्छ्वास आदि भी एक साथ ही होता है। किन्तु उनके तैजस् और कार्मण शरीर भिन्न-भिन्न ही होते है। ये साधारणशरीरी अथवा निगोदिया जीव अनन्त काल तक अर्थात् अनन्त उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी काल पर्यन्त उसी पर्याय मे लगातार जन्म-मरण की वेदना का अनुभव करते रहते है।

Elaboration—One-sensed living beings are basically of five types—earth-bodied and the like Out of them every subtle and every gross living being is of two types The plant-bodied living beings have two more categories—namely one living being in one body and infinite number of living beings in one body

They are described as under—

- Plant bodied
  - Subtle
    - fully developed
    - Under developed
  - Gross
    - One soul in one body
      - fully developed
      - Under developed
    - Infinite souls in one body
      - fully developed
      - Under developed

Subtle—Due to subtle name bearing Karma, the immobile living being that have extremely subtle body which cannot be seen by the naked eye They can be seen only by those who have transcendental knowledge (Avadhi Jnani) The entire world is full of such living beings

Gross (Badar)—Due to gross name bearing Karma, the body of these living beings is comparatively gross One can be subtle compared to one living being and gross compared to another living being A living being may have gross body compared to that of one living being and a subtle body compared to another living being But the distinction between subtle and gross should be clearly understood The distinction here is because of the prevalence of name bearing Karma Some mobile living beings have extremely subtle body. Their body cannot be seen with the naked eye The body of sammurchhim human beings is also so subtle that they cannot be seen with the eye But here those living beings are not considered because they do not fall in this category of subtle name-bearing Karma

Pratyek Sharir—It is a type of plant-bodied living being. A living being that is having one soul in one body is called pratyek sharir living being

Sadharan Sharir—When infinite souls are in one body, they are called Sadharan Shariri They are also called Nigod-kaya Jivas Subtle Nigod Kaya Jiva are in the entire space Gross Nigod Jiva are vegetables growing under the ground namely Kand-mool

In the worldly space there are innumerable number of tiny balls (round tiny drop like things) Each such ball has innumerable nigod Each nigod has infinite number of Jiva

About Sadharan Sharir Jiva, it is said that in one body there are infinite number of Jiva But all of them combinedly have just one body When they have one physical body, they take food and breath simultaneously But each of them has a separate electric body and separate Karmic body

४१. कुद्दाल–कुलिय–दालण–सलिल–मलण–खुंभण–रुभण–अणलाणिल–विविहसत्थघट्टण–परोप्पराभिहणण–मारणविराहणाणि य अकामकाइ परप्पओगोदीरणाहि य कज्जप्पओयणेहिं य पेस्सपसुणिमित्तं ओसहाहारमाइएहिं उक्खणण उक्कत्थण–पयण–कुट्टण–पीसण–पिट्टण–भज्जण–गालण–आमोडण–सडण–फुडण–भजण–छेयण–तच्छण–विलुचण–पत्तज्झोडण–अग्गिदहणाइयाइ, एव ते भवपरपरादुक्ख–समणुबद्धा अडति संसारबीहणकरे जीवा पाणाइवायणिरया अणंतकालं।

४१ कुदाल (कुल्हाडी) और हल से पृथ्वी का विदारण करना, जल का मथना और रोकना, अग्नि तथा वायु का विविध प्रकार के शस्त्रो से टकराना, पारस्परिक आघातो से एक–दूसरे को पीडा पहुँचाना, मारना, शरीरादि प्रवृत्ति से उत्पन्न होने वाली विराधना की व्यथा सहन करना, नौकर–चाकरो तथा गाय–भैस–बैल आदि पशुओ की दवा और आहार आदि के लिए जड से खोदना, छानना, मोडना, सड जाना, स्वय टूट जाना, मसलना–कुचलना, छेदन करना, छीलना, रोमो का उखाडना, पत्ते आदि तोडना, अग्नि से जलाना, इस प्रकार भव–परम्परा मे दु खो से घिरे वे पापी जीव भीषण ससार मे अनन्त काल तक परिभ्रमण करते रहते है।

41. The violent human beings dig the earth with an axe or a plough They churn and stop the flowing water They strike fire and air with weapons of various types They cause hurt by striking them They bear the suffering, resulting from the physical activities against prescribed code They cut the plants from the very root for the food and medicine of their servants, employees, cows, buffaloes, bullocks and the like They bend these plants, rot them and pass the powder through a sieve Some plants break themselves They crush them, pierce them, pull out their skin and pores They pluck the leaves and burn them Thus they pass through sufferings of birth again and again in this dreadful word for an infinite period

विवेचन · प्रस्तुत सूत्र मे उन हिंसक जीवो के दु:ख का वर्णन किया गया है जो पहले नरक की यातनाएँ भोगकर आदि मे तत्पश्चात् पापकर्मों का फल भोगना शेष रह जाने के कारण तिर्यंच पचेन्द्रिय पर्याय मे, फिर विकलेन्द्रिय अवस्था मे और फिर एकेन्द्रिय अवस्था मे उत्पन्न होते है। जब वे पृथ्वीकाय मे जन्म लेते है तो उन्हे कुदाल हल फावडा आदि द्वारा विदारण किये जाने का कष्ट भोगना पडता है। जलकाय मे जन्म लेते है तो उनका मथन विलोडन आदि किया जाता है। तेजस्काय और वायुकाय मे स्वकाय शस्त्रो से विविध प्रकार से घात किया जाता है। वनस्पतिकाय मे उनका छेदन-भेदन किया जाता है। इतना ही नही वनस्पतिकाय के जीवो को तो वनस्पतिकाय मे ही बारम्बार जन्म-मरण करते-करते अनन्त काल तक इस प्रकार की वेदनाएँ भोगनी पडती है। ये समस्त दु ख हिंसा करके प्रसन्न होने वाले प्राणियो को भोगने पडते है।

Elaboration—In the present aphorism, the sufferings of those violent living beings have been narrated who first pass through sufferings in the hell Thereafter due to the fact that still some fruit of their bad Karmas exist, they take birth in five-sensed animal life, then in four-sensed and so on, ultimately in one-sensed beings as earth-bodied living beings When they take birth in plant-bodied living beings they have to take birth again and again for infinite period Thus they suffer for an infinite period All these sufferings are borne by those living beings who feel happy and elated after doing violent activities

मनुष्यभव के दु ख SUFFERINGS OF HUMAN LIFE

४२. जे वि य इह माणुसत्तण आगया कहिं वि णरगा उव्वट्टिया अधण्णा ते वि य दीसंति पायसो विकयविगलरूवा खुज्जा वडभा य वामणा य बहिरा काणा कुंटा पंगुला विगला य मूका य मम्मणा य अंधयगा एगचक्खू विणिहयसंचिल्लया वाहिरोगपीलिय-अप्पाउय-सत्थवज्झबाला कुलक्खण-उक्किण्णदेहा दुब्बल-कुसंघयण-कुप्पमाण-कुसंठिया कुरूवा किविणा य हीणा हीणसत्ता णिच्चं सोक्खपरिवज्जिया असुहदुक्खभागी णरगाओ इहं सावसेसकम्मा उव्वट्टिया समाणा।

४२. हिसारूप घोर पापकर्म करने वाले जीव बडी कठिनाई से नरक से निकलकर किसी भाँति मनुष्य-पर्याय मे उत्पन्न होते है, किन्तु जिनके पापकर्म भोगने से शेष रह जाते है, वे भाग्यहीन प्राणी विकृत एव मूर्ख रूप-स्वरूप वाले, कुबडे, टेढे-मेढे शरीर वाले, बौने, बहरे, काने, टूटे हाथ वाले, लँगडे, अगहीन, गूँगे, तुतलाने वाले या मरुमय उच्चारण करने वाले, अधे, काने, दोनो खराब आँखो वाले या पिशाचग्रस्त, कुष्ठ आदि व्याधियो और ज्वर आदि रोगो से अथवा मानसिक एव शारीरिक रोगो से पीडित, अल्प आयुष्य वाले, शस्त्र आदि द्वारा चोटे खाये हुए या मारे जाने योग्य, मूढ मूर्ख लक्षणो से भरपूर शरीर वाले, दुर्बल, अप्रशस्त सहनन, बहुत छोटे या बहुत मोटे, लम्बे कद के बेडौल अगोपागो वाले, खराब सस्थान-आकृति वाले, कुरूप, दीन, हीन, सत्त्वविहीन, सुख से सदा वचित रहने वाले और अशुभ दु खो के भाजन होते है।

42. After committing extremely violent deeds and thus collecting bad Karmas as a result of their sins, with great difficulty such living beings

take birth as human state of existence But those who have yet to bear the fruit of some of their violent sinful activities take birth as wretched persons They are abnormal They are hunch-backed Their body is disproportionate They are dwarf, deaf, one-eyed, one-legged, with broken hands Some of them are without some limbs, dumb and indistinct in faculty of speech Some are blind or having diseased eyes Some are under influence of demon gods Some suffer from leprosy like diseases, fever, mental and physical diseases Some have very short life-span Some suffer from hurts and injuries Some are tall but disproportioned Some have very irritating, unpleasant look Some are dependent and without normal strength They are always devoid of happiness and are the subject of sufferings

विवेचन प्रस्तुत सूत्र मे ऐसे प्राणियो की दुर्दशा का चित्रण किया गया है जो हिसा के फलस्वरूप नरक मे उत्पन्न हुए थे और फिर नरक से किसी तरह कठिनाई से निकलकर सीधे मनुष्यभव को प्राप्त हुए है अथवा पहले तिर्यंचगति की यातनाएँ भुगतकर फिर मानवभव को प्राप्त हुए है, किन्तु जिनके घोरतर पापकर्मों का अन्त नही हो पाया है। जिनको पापो का फल भोगना बाकी रह गया है। उस बाकी रहे पापकर्म का फल उन्हे मनुष्ययोनि मे भोगना पडता है। उसी फल का यहाँ किचित् दिग्दर्शन मात्र कराया गया है।

ऐसे पापी प्राणी प्राय भाग्यहीन होते है। उन्हे सर्वत्र निन्दा, अपमान, तिरस्कार और धिक्कार ही मिलता है। शरीर से विकृत बेडौल होते है। कुष्ठादि भीषण व्याधियो से और ज्वरादि रोगो से तथा मानसिक रोगो से पीडित रहते है। वे ज्ञानहीन, मूर्ख होते है। वे मनुष्यभव मे भी दु खो के ही पात्र बनते है।

क्या नरक से निकले हुए सभी जीव मनुष्य-पर्याय पाकर पूर्वोक्त दुर्दशा के पात्र बनते है ? इस प्रश्न का उत्तर मूल पाठ से ही मिल जाता है। मूल पाठ मे **'पायसो'** और **'सावसेसकम्मा'** ये दो पद ध्यान देने योग्य है। इनका तात्पर्य यह है कि सभी जीवो की ऐसी दुर्दशा नही होती, वरन् प्राय अर्थात् अधिकाश जीव जिनके पापकर्मों का फल-भोग पूरा नही हुआ है, अपितु कुछ शेष है, वे इस प्रकार के दु खो के भागी होते है।

जिन प्राणियो का फल-भोग परिपूर्ण हो जाता है, वे कुछ जीव नरक से सीधे निकलकर लोकपूज्य, आदरणीय, सम्माननीय एव यशस्वी भी होते है, यहाँ तक कि कोई-कोई अत्यन्त विशुद्धि-प्राप्त जीव तीर्थंकर पद भी प्राप्त करता है।

Elaboration—In the present aphorism, the sad state of such living beings has been narrated who, as a result of their sinful acts involving violence, had taken birth among hellish beings and from the hellish life with great difficulty sometimes were re-born as human beings or after going through sufferings in animal state of existence took birth as human beings However, there had not been an end to the consequences of there dreaded sinful activities They have yet to suffer some fruit of their bad karmas They suffer it in the human state of existence Here that condition as a result of their earlier sins has been described to a certain extant

Such lıvıng beıngs generally are ıll-fated They are cursed, dıshonoured and hated everywhere Every one talks ıll of them They have unattractıve physıcal body They suffer from dreadful dıseases lıke leprosy, fever and the lıke They suffer from mental dıseases They are dullards and wıthout proper knowledge They bear sufferıngs even ın human lıfe

Do all lıvıng beıngs who take bırth as human beıngs after theır earlıer lıfe ın hell suffer such a sad state ? The reply to thıs questıon ıs avaılable ın the text ıtself The words 'payaso' and 'saavasesakamma' ın the orıgınal text need to be understood clearly Theır purport ıs that all the lıvıng beıng do not meet such a fate Only those lıvıng beıngs, the consequences of whose sıns have not been suffered by them ın full, undergo such sufferıngs

Some lıvıng beıngs who have suffered the total fruıt of theır bad deeds ın hell, take bırth as human beıngs dırectly from hell They become honoured persons and are loved and respected Some of them who have purıfied theır mundane soul almost completely, become even Tırthankar

उपसहार CONCLUSION

४३. एव णरगं तिरिक्ख–जोणिं कुमाणुसत्त च हिंडमाणा पावंति अणंताइं दुक्खाइं पावकारी। एसो सो पाणवहस्स फलविवागो। इहलोइओ परलोइओ अप्पसुहो बहुदुक्खो महब्भयो बहुरयप्पगाढो दारुणो कक्कसो असाओ वाससहस्सेहिं मुंचई ण य अवेदयित्ता अत्थि हु मोक्खो त्ति एवमाहंसु णायकुलणंदणो महप्पा जिणो उ वीरवरणामधेज्जो कहेसी य पाणवहस्स फलविवाग।

एसो सो पाणवहो चंडो रुद्दो खुद्दो अणारिओ णिग्घिणो णिसंसो महब्भओ बीहणओ तासणओ अणज्जाओ उव्वेयणओ य णिरवयक्खो णिद्धम्मो णिप्पिवासो णिक्कलुणो णिरयवासगमणणिधणो मोहमहब्भयपवड्ढओ मरण–वेमणसो।

पढमं अहम्मदार सम्मत्तं त्ति बेमि॥ १॥

४३. इस प्रकार (हिसारूप) प्राणवध करने वाले प्राणी नरक और तिर्यंच योनि मे तथा कुमानुष–अवस्था मे भटकते हुए अनन्त दु खो को भोगते है।

यह (उपर्युक्त) प्राणवध (हिसा) का फलविपाक (भोग) है, जो इहलोक (मनुष्यभव) और परलोक (नारकादि भव) मे भोगना पडता है। यह फलविपाक अल्प सुख किन्तु (भव–भवान्तर मे) अत्यधिक दु ख वाला है। महा भय पैदा करने वाला है और अतीव गाढ कर्मरूपी रज से युक्त है। अत्यन्त दारुण है, अत्यन्त कठोर है और अत्यन्त असाता को उत्पन्न करने वाला है। हजारो वर्षों (सुदीर्घ काल) मे इससे छुटकारा मिलता है। किन्तु इसे भोगे बिना छुटकारा नही मिलता। हिंसा का यह फलविपाक ज्ञातकुल–नन्दन महात्मा महावीर नामक जिनेन्द्रदेव ने कहा है।

जिसका फल विपाक इतना भयानक है, वह प्राणवध क्रोध रूप उग्र रौद्र ध्यान से उत्पन्न है। क्षुद्र और अनार्य जनो का आचरण है। यह घृणारहित, नृशस, महाभयो का कारण, भयानक, त्रासदायक और अन्यायरूप है। यह उद्वेगजनक, दूसरे के प्राणो की परवाह न करने वाला, धर्महीन, स्नेह-पिपासा से शून्य और करुणाहीन है। इसका अन्तिम परिणाम नरक मे गमन करना है अर्थात् यह नरकगति मे जाने का कारण है। मोह और महाभय को बढाने वाला और मरण के समय दीनता उत्पन्न करने वाला है।

43. Thus the persons who engage in violence, they as a result thereof are re-born in hell, in animal state or in bad category of human beings, wander there and undergo numberless sufferings there

Thus is the result of their violence that they have to suffer in this life (as human beings) and in the other state of existence (hell and others) It provides little pleasure and much greater pain It produces great fear and is smeared with extremely thick karmic molecules This condition is extremely pitiable, severe and produces very deep pain It continues for thousands of years (a very long period) It is not possible to overcome it without undergoing requisite suffering Tirthankar Mahavir who was of Jnat clan has mentioned about this fruit of violent activities

The violence which collects Karma producing such a dreadful result when they fructify is caused by anger or harsh and drastic thought actively It is the conduct followed by rustic and uncivilized people It is the conduct of those people who are inhuman, ferocious, unjust, dreadful and in a fit of state fear It produces terror It does not take care of the life force of others It is irreligious. It is devoid of love and compassion Its ultimate result is re-birth in hell It increases delusion and fear. It causes pitiable state at the time of death

विवेचन नरक सम्बन्धी यह फलविपाक शास्त्रकार ने अपनी बुद्धि या कल्पना से नही बताया है, किन्तु ज्ञातपुत्र सर्वज्ञ देव श्री महावीर ने कहा है, यह उल्लेख करके प्रस्तुत प्ररूपणा की पूर्ण प्रामाणिकता प्रकट की गई है। श्री सुधर्मास्वामी ने जम्बूस्वामी से कहा-जैसा मैने श्रमण भगवान महावीर से सुना है, वैसा ही तुम्हारे समक्ष प्रतिपादन किया है।

Elaboration—The author has not mentioned these conditions in hell from his own imagination but omniscient Mahavir has mentioned it So it is undisputable Sudharma Swami told Jambu that he has told exactly what he heard from Bhagavan Mahavir

• END OF THE FIRST CHAPTER •

द्वितीय अध्ययन : मृषावाद
SECOND CHAPTER · FALSEHOOD

प्रथम अध्ययन मे प्राणवध रूप हिंसा को सागोपाग निरूपण करके अब हिंसा के प्रेरक कारणो का कथन अगले अध्ययनो मे किया जा रहा है। हिंसा के साथ मृषावाद (झूठ) का सम्बन्ध जुडा है। क्योंकि मृषावाद क्रोध, भय, लोभ, स्वार्थ, हास्य आदि के कारण बोला जाता है। यह सब क्रोधादि भाव हिंसा के मुख्य कारण है।

After describing violence in the form of destruction of life force in an exhaustive manner, the causes that lead to such violence are being narrated in the following chapters Falsehood is deeply connected with violence because it is due to anger, fear, greed, selfishness, mockery and the like Anger and all such like thought activity is primary cause of violence (himsa)

मृषावाद का स्वरूप NATURE OF FALSEHOOD

४४. "इह खलु जबू" ! **बिइयं अलियवयणं लहुसग–लहुचवल–भणियं भयंकरं दुहकरं अयसकरं वेरकरग अरइ–रइ–रागदोस–मणसंकिलेस–वियरणं अलियणियडिसाइजोयबहुलं णीयजणणिसेवियं णिस्संसं अप्पच्चयकारगं परमसाहुगरहणिज्जं परपीलाकारगं परमकिण्हलेस्ससेवियं दुग्गइविणिवायविवड्ढणं भवपुणब्भवकरं चिरपरिचिय–मणुगय दुरंतं कित्तिय बिइयं अहम्मदारं।**

४४. हे जम्बू ! अलीकवचन अर्थात् मिथ्याभाषण दूसरा (आस्रवद्वार) है। यह गुण–गौरव से हीन, हल्के, अति उतावले और चचल लोगो द्वारा बोला जाता है, यह स्व एव पर के लिए भय उत्पन्न करने वाला, दु खोत्पादक, अपयशकारी एव वैर बढाने वाला है। यह अरति, रति, राग, द्वेष और मानसिक सक्लेश को देने वाला है। शुभ फल से रहित है। धूर्त्तता एव अविश्वसनीय वचनो से भरपूर है। नीच जन इसका सेवन करते है। यह नृशस, क्रूर अथवा निन्दित है। अप्रतीतिकारक है–विश्वसनीयता का नाश करने वाला है। उत्तम साधुजनो–सत्पुरुषो द्वारा निन्दित है। दूसरो को–जिनके लिए असत्यभाषण किया जाता है, उनको पीडा उत्पन्न करने वाला है। उत्कृष्ट कृष्णलेश्या से युक्त है अर्थात् कृष्णलेश्या वाले लोग इसका प्रयोग करते है। यह बारम्बार दुर्गतियो मे ले जाने वाला है। जन्म–मरण की वृद्धि करने वाला है। यह चिरपरिचित है–अनादि काल से जीव इसके अभ्यासी है। निरन्तर साथ रहने वाला है और बडी कठिनाई से इसका अन्त होता है अथवा इसका परिणाम अतीव अनिष्ट होता है।

44. Jambu ! Untrue talk or false speech is the second entrance for the inflow (Aasrav Dvar) of Karma It is devoid of the characteristic of respect It is mean It is spoken by mischievous persons who have no stable approach It creates fear trouble, dishonour and increases enmity among people It produces distaste for self-restraint, liking for worldly

objects, attachment, hatred and mental disturbance It is devoid of meritorious result It is full of deceit and non-trust worthy words Mean people adopt it It is inhuman, dis-compassionate and condemned It destroys mutual affection and trust It is disliked by the noble and cultured people It causes pain to those for whom it is used It is full of extremely worst thought activity In other words only such people use such words who are in heinous thought activity It causes birth again and again in demerit state of existence It increases the circle of life, death and re-birth in the mundane world Jiva has been experiencing it since beginningless period It has been accompanying the living being continuously So it can be finished only with great effort Its result is extremely deplorable

विवेचन असत्य वचनो का प्रयोग ऐसे मनुष्य ही करते है जिनमे गुणो की गरिमा नही होती, जो क्षुद्र, हीन, तुच्छ या लुच्चे होते है। जो अपने वचनो का स्वय ही मूल्य नही जानते, उतावल मे सोचे बिना चचलतापूर्वक जो वचन बोले जाते है, वे स्व-पर के लिए भयकर सिद्ध होते है। उनके फलस्वरूप अनेक प्रकार के दु ख भोगने पडते है। साधुजन–सत्पुरुष सुविचारित सत्य तथ्य का ही प्रयोग करते है और वह भी ऐसा कि जिससे किसी को पीडा न हो, क्योकि पीडाजनक वचन तथ्य होकर भी सत्य नही कहलाता।

असत्यभाषी को ससार मे निन्दा और तिरस्कार का पात्र बनना पडता है। असत्यभाषण करके जिन्हे धोखा दिया जाता अथवा हानि पहुँचाई जाती है, उनके साथ वैर बँध जाता है और कभी–कभी उस वैर की परम्परा अनेकानेक भवो तक चलती रहती है। असत्यभाषी के अन्तर मे यदि स्वल्प भी उज्ज्वलता का अश होता है तो उसके मन मे भी सक्लेश बोलने पर पश्चात्ताप उत्पन्न होता है। जिसे ठगा जाता है उसके मन मे तो सक्लेश होता ही है।

असत्यभाषी को अपनी प्रामाणिकता प्रकट करने के लिए अनेक प्रकार के जाल रचने पडते है, धूर्त्तता, कपट का आश्रय लेना पडता है।

असत्य दुर्गति मे ले जाता है और ससार-परिभ्रमण की वृद्धि करने वाला है।

असत्यभाषी अपने असत्य को छिपाने के लिए कितना ही प्रयत्न क्यो न करे, अन्त मे प्रकट हो जाता है। जब प्रकट हो जाता है तो असत्यभाषी की सच्ची बात पर भी कोई विश्वास नही करता। उसकी विश्वसनीयता खत्म हो जाती है।

'परपीडाकारग' कहकर शास्त्रकार ने बताया है। असत्य एक प्रकार की हिसा का ही रूप है।

Elaboration—Only such people use false speech who command no trust, who are mean, and uncivilised, who do not understand the worth of their words, and who prove to be dreadful for themselves and others As a result of it, they suffer adversely The noble cultured people use only true mode of speech They use such words, which do not hurt

anyone because the words, which cause pain to others, are not considered true even if they relate factual position.

A person who utters false words becomes subject of non-praise and disrespect He develops enmity with those whom he has deceived by making false statement Sometimes this inimical relationship continues for many lives In case a false person has even the slightest element of respect for truth in him, on making a false statement he repents in his mind The person who is cheated mentally feels disturbed

A false person has to adopt many types of conjunctives in order to prove that he is trustworthy He has to take shelter of deceit and non-straight forwardness

As a result of falsehood one takes re-birth in demerit state of existence His wandering in the cycle of birth and death in the mundane world increases Howsoever hard a false speaking person may try to conceal falsehood, it ultimately reveals After the truth appears, one shall no longer believe even the true statement of that person He loses his trustworthiness

By using the word 'Parpeedakaragam' the author has pointed out that falsehood is a type of violence

मृषावाद के नामान्तर **SYNONYMS OF FALSEHOOD**

४५. तस्स य णामाणि गोण्णाणि होति तीसं। तं जहा–

१ अलिय, २ सढ, ३ अणज्जं, ४ मायामोसो, ५. असंतगं, ६. कूडकवडमवत्थुगं च, ७. णिरत्थयमवत्थयं च, ८. विद्देसगरहणिज्ज, ९. अणुज्जुगं, १० कक्कणा य, ११ वंचणा य, १२. मिच्छापच्छाकड च, १३. साई उ, १४ उच्छण्णं, ११. उक्कूल च, १६. अट्टं, १७. अब्भक्खाणं च, १८. किव्विस, १९. वलयं, २०. गहणं च, २१. मम्मणं च, २२ णूमं, २३. णिययी, २४. अपच्चओ, २५. असमओ. २६. असच्चसंधत्तणं, २७. विवक्खो, २८. अवहीयं, २९. उवहिअसुद्धं, ३० अवलोवोत्ति।

अवि य तस्स एयाणि एवमाइयाणि णामधेज्जाणि होंति तीसं, सावज्जस्स अलियस्स वइजोगस्स अणेगाइं।

४५. उस असत्य के गुणनिष्पन्न अर्थात् सार्थक तीस नाम है। वे इस प्रकार है–

(१) अलीक–झूठ, मिथ्यावचन।

(२) शठ–धूर्त्त, मायावी जनो द्वारा आचरित।

(३) अनार्य (अन्याय्य)–अनार्य पुरुषो का वचन होने से अनार्य है अथवा अन्याययुक्त है।

(४) **माया-मृषा**-माया रूप कषाय से युक्त और मृषा झूठ होने से इसे माया-मृषा कहा जाता है।

(५) **असत्क**-असत् पदार्थ को कहने वाला।

(६) **कूट-कपट-अवस्तुक**-दूसरो को ठगने से कूट, भाषा का विपर्यास होने से कपट, तथ्य-वस्तुशून्य होने से अवस्तुक है।

(७) **निरर्थक-अपार्थक**-प्रयोजनहीन होने के कारण निष्प्रयोजन और सत्यहीन होने से अपार्थक है।

(८) **विद्वेषगर्हणीय**-विद्वेष और निन्दा का कारण।

(९) **अनृजुक**-कुटिलता-सरलता का अभाव, वक्रता से युक्त।

(१०) **कल्कना**-मायाचारमय।

(११) **वचना**-दूसरो को ठगने का कारण।

(१२) **मिथ्यापश्चात्कृत**-न्यायी पुरुष झूठा समझ कर पीछे कर देते है, अत मिथ्यापश्चात्कृत है।

(१३) **साति**-अविश्वास का कारण।

(१४) **उच्छन्न**-अपने दोषो और दूसरे के गुणो को ढकने वाला है। इसे 'अपच्छन्न' भी कहते है।

(१५) **उत्कूल**-सन्मार्ग की मर्यादा लाँघने वाला अथवा न्याय रूपी नदी के तट से गिराने वाला है।

(१६) **आर्त्त**-पाप से पीडित जनो का वचन।

(१७) **अभ्याख्यान**-दूसरो पर मिथ्या दोषारोपण करने वाला है।

(१८) **किल्विष**-पाप या पापका जनक है।

(१९) **वलय**-गोलमोल-टेढा-मेढा, चक्करदार वचन।

(२०) **गहन**-जिसे समझना कठिन हो, जिस वचन से असलियत का पता न चले।

(२१) **मन्मन**-स्पष्ट न होने के कारण, अस्पष्ट वचन।

(२२) **नूम**-सचाई को ढकने वाला।

(२३) **निकृति**-किये हुए मायाचार को छिपाने वाला वचन।

(२४) **अप्रत्यय**-अविश्वास उत्पन्न करने वाला होने से अप्रत्यय है।

(२५) **असमय**-सम्यक् आचार से रहित अथवा शिष्ट जनो द्वारा असमत है।

(२६) **असत्यसधता**-झूठी प्रतिज्ञाओ कसमो का कारण है।

(२७) **विपक्ष**-सत्य और धर्म का विरोधी।

(२८) **अपधीक**-निन्दित या तुच्छ क्षुद्र बुद्धि से उत्पन्न।

(२९) **उपधि-अशुद्ध**-मायाचार से अशुद्ध।

(३०) **अवलोप**-वस्तु के वास्तविक स्वरूप का लोप करने वाला है।

45. Falsehood has thirty synonyms based on its real characteristics. They are as mentioned below—

(1) **Aleek**—Untrue, untrue words.

(2) **Shath**—Conduct of cunning and crooked persons.

(3) **Anarya**—Speech used by uncivilised people, speech full of injustice

(4) **Maya-mrisha**—Crooked speech under influence of passion and besemeared with falsehood

(5) **Asatk**—One which defines a substance that actually does not exist at all

(6) **Koot-kapat-avastuck**—Averse (koot), as it is spoken to deceive others, it is indistinct (kapal) as it has different interpretations, it is not real (avastuck)

(7) **Nirarthak-aparthak**—It is without any purpose (nirarthak), it is not true so it is aparthak

(8) **Vidvesh-garhaniya**—As it is the cause of hatred and ill talk

(9) **Anrijuk**—As it is crooked

(10) **Kalkana**—As it is saturated with deceit

(11) **Vanchana**—As it is used to cheat others

(12) **Mithya-pashchatakrit**—Since the right persons ignore it considering it as false

(13) **Saati**—Since it leads to mistrust

(14) **Uchhann**—Since it sidetracks one's faults and good qualities of others

(15) **Utkool**—Since it oversteps the sanctions of the true path

(16) **Artt**—Since it is the language of those who are suffering from fruits of their sins

(17) **Abhyakhyan**—Since it levels false allegations against others.

(18) **Kilvish**—Since it is a sin or generates sins.

(19) **Valaya**—Since it is a talk leading to more than one different interpretation

(20) **Gahan**—Since it is difficult to be understood Reality cannot be known with such words

(21) **Manman**—Since it is indistinct, vague

(22) **Noom**—Since it betrays truth

(23) **Nikriti**—Since it conceals deceitful conduct

(24) **Apartyaya**—Since it generates mistrust

(25) **Asamaya**—Since it is devoid of right conduct Civilised people do not support it

(26) **Asatya-Sandhata**—Since it is the cause of false oaths

(27) **Vipaksh**—Since it is opponent of truth and dharma

(28) **Apadhik**—Since it is the creation of persons having mean and pervert intellect

(29) **Upadhi-Ashudh**—It is impure because of deceitful nature

(30) **Avalope**—It conceals the real nature of a thing

मृषावादी THE FALSE

४६ त च पुण वयति केई अलियं पावा असजया अविरया कवड–कुडिल–कडुय–चडुलभावा कुद्धा लुद्धा भया य हस्सट्ठिया य सक्खी चोरा चारभडा खडरक्खा जियजूयकरा य गहियगहणा कक्क–कुरुग–कारगा, कुलिगी, उवहिया वाणियगा य कूडतुल–कूडमाणी कूडकाहावणोवजीविया पडगारका, कलाया, कारुइज्जा वचणपरा चारियचाडुयार–णगरगुत्तिय–परिचारगा दुट्ठवाइसूयग–अणबल–भणिया य पुव्वकालियवयणदच्छा साहसिया लहुस्सगा असच्चा गारविया असच्चट्ठावणाहिचित्ता उच्चच्छदा अणिग्गहा अणियत्ता छदेणमुक्कवाया भवंति अलियाहिं जे अविरया।

४६ यह असत्य कितनेक पापी रात–दिन पापकर्म करने वाले सयमहीन, सर्वविरति और देशविरति से रहित,कपट के कारण कुटिल, कटु स्वभाव वाले और चचल चित्त वाले, क्रोध से अभिभूत, लोभ के वशीभूत, अनेक प्रकार के भयो से त्रस्त स्वय भयभीत और अन्य को भय उत्पन्न करने वाले, हँसी–मजाक करने वाले, झूठी गवाही देने वाले, चोर, गुप्तचर- जासूस, खण्डरक्ष–राजकर या चुगी वसूल करने वाले, जुआ मे हारे हुए–जुआरी, गिरवी माल को हजम करने वाले, कपट से किसी बात को बढा–चढा कर कहने वाले, मिथ्या मत वाले वेषधारी, छल करने वाले, वणिक्, खोटा नापने–तोलने वाले, नकली सिक्को से आजीविका चलाने वाले, जुलाहे, सुनार–कारीगर, दूसरो को ठगने वाले, दलाल, चाटुकार खुशामदी, नगररक्षक मैथुन–सेवी–स्त्रियो को बहकाने वाले, खोटा पक्ष लेने वाले, चुगलखोर, साहूकार के ऋण सम्बन्धी तकाजे से दबे हुए, कर्जदार, किसी के बोलने से पूर्व ही उसके अभिप्राय को ताड लेने वाले, साहसिक–सोच–विचार किये बिना ही प्रवृत्ति करने वाले, निस्सत्त्व हीन–अधम, हीन, सत्पुरुषो का अहित करने वाले–दुष्ट जन, अहकारी, असत्य की स्थापना मे चित्त को लगाये रखने वाले, अपने को उत्कृष्ट बताने वाले, निरकुश, नियमहीन और बिना विचारे मनमाना असबद्ध बोलने वाले लोग, जो असत्य से विरत नही है, वे (असत्य) बोलते है।

46. Falsehood is in the nature of several sinners who are devoid of self-restraint. They have adopted neither ascetic discipline nor vows of a householder They are crooked because of deceitful nature They are harsh by nature and have a wavering mind They remain engrossed in anger and greed They are under influence of many types of fear and create fear in others also They are clowns They depose falsely as a witness They are thieves, spies, collectors of octroi duty and taxes. They are gamblers who have incurred losses They are dishonest as they misappropriate property pledged by others They in a deceitful manner, make mountain of a molehill They wear the dress of a true saint but have wrong faith They are cheaters They measure and weigh things in an untrue manner They earn their livelihood by passing counterfeit coins They are weavers or goldsmiths, who deceive others They are brokers They falsely praise others They are guardians of the town engaged in sex by misleading the women They support the wrong side They backbite They are under debt They understand the purport of others attitude before he speaks They act without properly considering its likely consequences They are mean They do injustice to the lovers of true They are haughty They keep engaged in establishing falsehood They show themselves as most worthy persons They are without any control of elders They do not follow any code. They talk incoherently and without prior consideration They are not liberated from the clutches of falsehood Such people embrace falsehood

मृषावादी–नास्तिकवादी का मत PHILOSOPHY OF SPEAKERS OF FALSEHOOD

४७ अवरे णत्थिगवाइणो वामलोयवाई भणंति–सुण्णं ति, णत्थि जीवो, ण जाइ इह परे वा लोए, णय किंचिवि फुसइ पुण्णपाव, णत्थि फल सुकयदुक्कयाणं, पंचमहाभूइयं सरीरं भासंति, हे वायजोगजुत्तं।

पंच य खधे भणंति केइ, मणं य मणजीविया वदंति, वाउजीवोत्ति एवमाहंसु, सरीरं साइयं सणिधणं, इह भवे एगभवे तस्स विप्पणासम्मि सव्वणासोत्ति, एवं जंपंति मुसावाई।

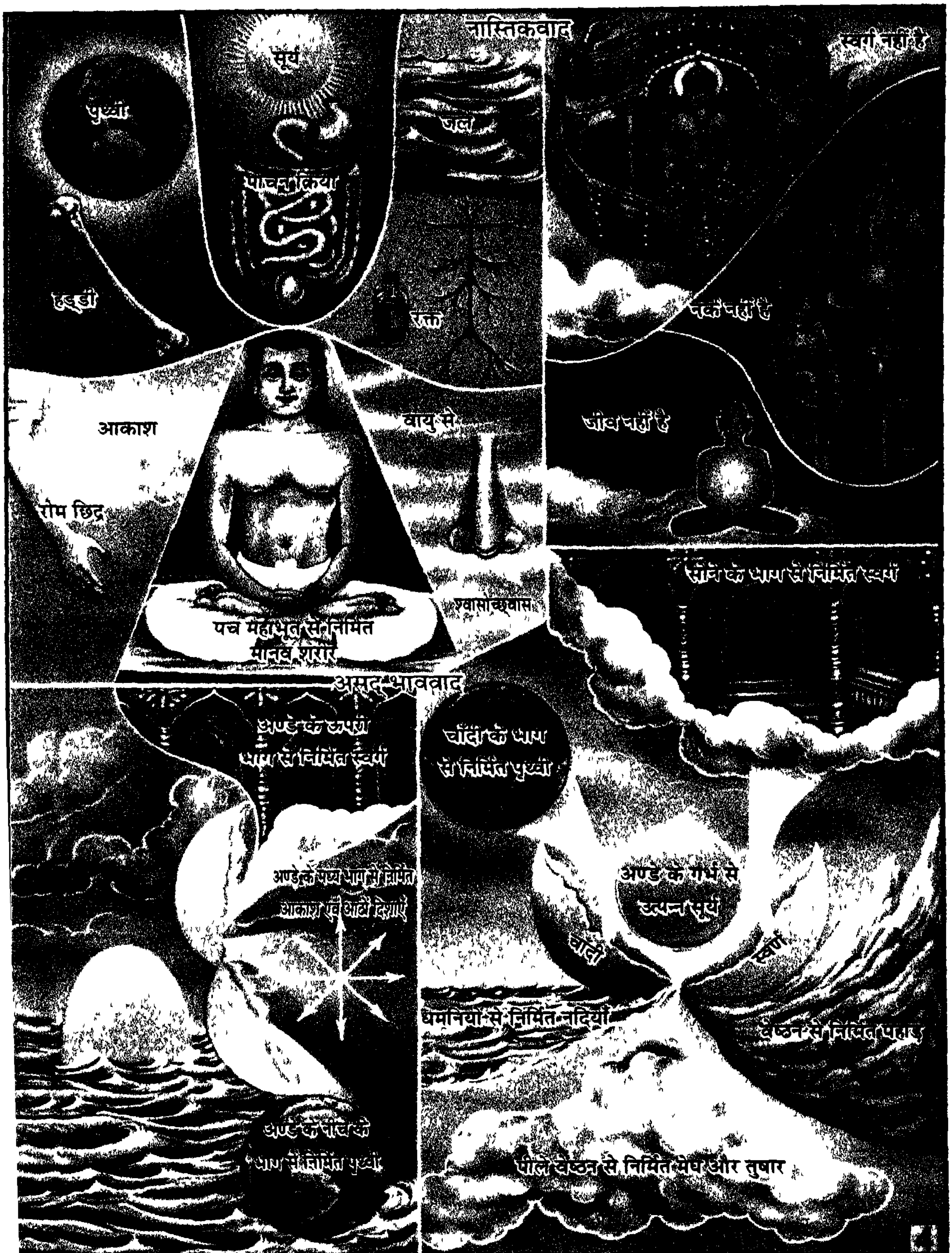
तम्हा दाण–वय–पोसहाणं तव–संजम–बंभचेर–कल्लाणमाइयाणं णत्थि फलं, ण वि य पाणवहे अलियवयणं ण चेव चोरिक्ककरणं परदारसेवणं वा सपरिग्गह–पावकम्मकरणं वि णत्थि किंचि ण णेरइय–तिरिय–मणुयाण जोणी, ण देवलोगो वा अत्थि, ण य अत्थि सिद्धिगमणं, अम्मापियरो णत्थि, ण वि अत्थि पुरिसकारो, पच्चक्खाणमवि णत्थि, ण वि अत्थि कालमच्चू य, अरिहंता चक्कवट्टी बलदेवा वासुदेवा णत्थि, णेवत्थि केइ रिसओ धम्माधम्मफलं च णवि अत्थि किंचि बहुयं च थोवगं वा, तम्हा एवं विजाणिऊण जहा सुबहु इंदियाणुकूलेसु सव्वविसएसु वट्टह, णत्थि काइ किरिया वा अकिरिया वा एवं भणंति णत्थिगवा–इणो वामलोयवाई।

४७. दूसर, नास्तिकवादी, जो लोक मे विद्यमान वस्तुओ को भी अवास्तविक अथवा विपरीत रूप मे कहने के कारण-'वामलोकवादी' कहलाते है। उनका कथन इस प्रकार है-''यह जगत् शून्य (सर्वथा असत्) है, क्योकि जीव का अस्तित्व नही है। वह मनुष्यभव मे या देवादि-परभव मे नही जाता। वह पुण्य-पाप का किचित् भी स्पर्श नही करता। सुकृत-पुण्य या दुष्कृत-पाप का (सुख-दु ख रूप) फल भी नही है। यह शरीर पाँच भूतो (पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश) से बना हुआ है। वायु के निमित्त से वह सब क्रियाएँ करता है। कुछ लोग कहते है-श्वासोच्छ्वास की हवा ही जीव है।

कुछ (बौद्ध) लोगो का कथन है कि यह आत्मा पाँच स्कन्ध रूप है। कोई मन को ही जीव (आत्मा) मानते है। कोई वायु को ही जीव के रूप मे स्वीकार करते है। किन्ही-किन्ही का मन्तव्य है कि शरीर सादि और सान्त है-शरीर का उत्पाद और विनाश हो जाता है। यह भव ही एक मात्र भव है। इस भव का समूल नाश होने पर सर्वनाश हो जाता है। अर्थात आत्मा जैसी कोई वस्तु शेष नही रहती। इस प्रकार मृषावादी लोग कहते है। दान देना, व्रतो का आचरण करना, पौषध की आराधना करना, तपस्या करना, सयम का आचरण करना, ब्रह्मचर्य का पालन करना आदि कल्याणकारी अनुष्ठानो का (कुछ भी) फल नही होता। प्राणवध और असत्यभाषण भी अशुभ फलदायक नही है, चोरी और परस्त्री सेवन भी कोई पाप नही है। परिग्रह और अन्य पापकर्म भी निष्फल है अर्थात् उनका भी कोई अशुभ फल नही होता। नारको, तिर्यचो और मनुष्यो की योनियाँ नही है। देवलोक भी नही है। मोक्ष-गमन या मुक्ति भी नही है। माता पिता भी नही है। पुरुषार्थ भी कोई चीज नही है अर्थात् पुरुषार्थ कार्य की सिद्धि मे कारण नही है। प्रत्याख्यान त्याग भी नही है। भूतकाल, वर्तमानकाल और भविष्यकाल नही है और न मृत्यु है। अरिहन्त, चक्रवर्ती, बलदेव और वासुदेव भी कोई नही होते। न कोई ऋषि है, न कोई मुनि है। धर्म और अधर्म का थोडा या बहुत-किचित् भी फल नही होता। इसलिए ऐसा जानकर इन्द्रियो के अनुकूल (रुचिकर) सभी विषयो मे प्रवृत्ति करो-किसी प्रकार के भोग-विलास से परहेज मत करो। न कोई शुभ क्रिया है और न कोई अशुभ क्रिया है। इस प्रकार लोक के वास्तविक स्वरूप से अनभिज्ञ विपरीत मान्यता वाले नास्तिक विचारधारा का अनुसरण करते हुए इस प्रकार का मिथ्या कथन करते है।

47. The second category is Nastikavadi The people who pronounce imaginary even these substances, which are actually existing in the world, or describe them in an opposite manner are called vaamalokavadi Their philosophy is that this world was always unreal because Jiva has no existence The soul does not transmigrate to human state or celestial state of existence It does not commit any merit or demerit There is no cosequence of good deeds or bad deeds This body is made of five elements—earth, water, fire, air and space It does various activities because of the air Some people say the air we breath is Jiva

Some people (the Buddhists) say that the soul is a formation of five skandhas Some believe that only mind is Jiva Some accept air as Jiva Some believe that the body has a beginning and an end The body takes



नास्तिकवाद
स्वर्ग नहीं है
सूर्य
पृथ्वी
जल
पाचन क्रिया
हड्डी
रक्त
नर्क नहीं है
आकाश
वायु से
जीव नहीं है
रोम छिद्र
सोने के भाग से निर्मित स्वर्ग
श्वासोच्छ्वास
पञ्च महाभूत से निर्मित
मानव शरीर
असद् भाववाद
अण्डे के ऊपरी
भाग से निर्मित स्वर्ग
चाँदी के भाग
से निर्मित पृथ्वी
अण्डे के मध्य भाग से निर्मित
आकाश एवं आठों दिशाएँ
अण्डे के गर्भ से
उत्पन्न सूर्य
चाँदी
सोना
धमनियों से निर्मित नदियाँ
वेष्ठन से निर्मित पहाड़
अण्डे के नीचे के
भाग से निर्मित पृथ्वी
पीले वेष्ठन से निर्मित मेघ और तुषार

चित्र-परिचय 4 | **Illustration No. 4**

मृषावाद का स्वरूप (1)

मृषावाद का स्वरूप बताते हुए शास्त्रकार ने सर्वप्रथम नास्तिकवाद का वर्णन किया है।

नास्तिकवाद—नास्तिक मतावलम्बी जीव (आत्मा) को नहीं मानते। उनकी मान्यता है कि आत्मा जैसी कोई भी सत्ता इस जगत् में नहीं है। यह शरीर– **पृथ्वी, पानी, अग्नि, वायु और आकाश**—इन पाँच पंचभूतों से मिलकर बना है। **पृथ्वी से हड्डी, जल से रक्त, तेजस् (अग्नि) से पाचन तन्त्र, वायु से श्वासोच्छ्वास और आकाश से रोम छिद्रों का** निर्माण हुआ है। वे नास्तिकवादी स्वर्ग, नरक, जीवात्मा के अस्तित्व को भी स्वीकार नहीं करते हैं। *—सूत्र 47, पृ 81*

असद्भाववाद—इन मतावलम्बियों का यह मानना है कि सर्वप्रथम ब्रह्मा ने जल का निर्माण किया और उसमें बीज डाला, बीज सूर्य के सदृश्य स्वर्णमय अण्डा बना। फिर स्वयं ही संकल्प रूप ध्यान से अण्डे के दो टुकड़े किये। उन दो टुकड़ों में से ऊपर के टुकड़े से स्वर्ग और नीचे के टुकड़े से पृथ्वी बनाई। अण्ड के मध्य भाग से आकाश, आठों दिशाएँ और समुद्र का निर्माण किया।

कुछ प्राचीन शास्त्रों में असद्भाववाद की व्याख्या इस प्रकार दी गई है— सर्वप्रथम इस असत् जगत में अंकुरित बीज रूपी स्थूल आकार की रचना हुई। वह बीज आगे चलकर अण्डा बना। अण्डे के दो टुकड़े हुये। एक टुकड़ा (कपाल) चाँदी का और एक टुकड़ा (कपाल) स्वर्णमय बना। चाँदी के टुकड़े से पृथ्वी बनी, स्वर्ण के टुकड़े से स्वर्ग बना। गर्भ के वेष्टन से पर्वत बने, थोड़े पतले वेष्टन से मेघ और तुषार बने, अत्यन्त पतले वेष्टन से नदियों का निर्माण हुआ। अण्डे के अन्दर से जो गर्भ रूप उत्पन्न हुआ, वह सूर्य बना। *—सूत्र 48, पृ 90*

FALACIOUS DOCTRINES EXPLAINED (1)

Explaining falsity or wrong faith the author has described many doctrines. First of them is Nastikavad.

Nastikavad—The followers of this school do not believe in soul (jiva). They believe that anything like soul does not exist in this world. This body is made up of five elements— earth, water, fire, air and space. Bones are made from earth element, blood from water, breathing from air, digestive system from fire and body pores from space. Like that of soul the Nastikavadis do not accept the existence of any heaven and hell. ***Sutra-47, page 81***

Asadbhavavad—The followers of this doctrine believe that Brahma first of all created water and put a seed in it. That seed turned into a golden egg like the sun. Brahma then did penance within that egg for one year. He broke the egg into two parts with the power of his meditation. He turned the upper part into heaven and made the earth from the lower part. Sky, eight cardinal directions and the oceans (the eternal place of water) were created from the middle part of the egg.

Some ancient texts define Asadbhavavad as— In this universe first of all a gigantic sprouted seed was created. This seed turned into an egg and then it split into two pieces, one of silver and the other of gold. The silver piece turned into the earth and the golden one into heaven. The thicker yoke matter turned into mountains and thinner into clouds and snow. Even more thin matter turned into rivers. The fetus born out of the egg became the sun.

Sutra-48, page 90

birth and also comes to an end The present life is the only life-span With the end of this life-span there is the total extinction of that Jiva. In other words nothing like soul exists thereafter The people who are Mrishavadi (the pronouncers of falsehood) speak in this manner They say that giving in charity, adopting vows, observing paushadh fast, following ascetic discipline, observing celibacy and the like which are normally considered as practices of public welfare, do not lead to any result Even violence, killing and speaking false does not produce any bad result There are no states of hellish beings, human beings and animal life, there is no abode of celestial beings There is nothing like liberation or salvation There is no mother or father There is nothing like human effort In other words human effort is not the cause of any success There is no reality in taking vow of discarding any thing or activity (*pratyakhyan*) There is nothing that can be termed as past, present or future There is nothing like death There never occur omniscient (Arihant), Chakravarti, Baladev or Vasudev No one is a rishi or a muni There is no fruit big or small of any religious activity or of irreligious activity, so keeping these facts in mind, one should behave as one's sense organs desire Never discard any opportunity of enjoyment No activity is good or bad Thus these people are ignorant about the real nature of the universe They have a wrong belief They follow untrue path (nastik) and they make false pronouncement

विवेचन प्रस्तुत पाठ मे नास्तिकवादियो की मान्यताओ का दिग्दर्शन कराया गया है। इससे पूर्व के सूत्र मे विविध प्रकार के लौकिक जनो का, जो व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए, आजीविका, व्यापार-धधा, परिवार-पालन आदि के लिए असत्यभाषण करते है, उनका कथन किया गया था।

एक व्यक्ति किसी कारण स्वार्थ आदि से जब असत्य भाषण करता है तब वह प्रधानत अपना ही अहित करता है। किन्तु जब कोई दार्शनिक असत्य पक्ष की स्थापना करता है, असत्य को सिद्धान्त रूप मे स्थापित करता है। तब वह असत्य विराट रूप धारण कर लेता है। वह मृषावाद दीर्घकाल पर्यन्त प्रचलित रहता है और उससे अगणित लोग भ्रान्त होकर दुराचरण की ओर प्रवृत्त होते है। इस प्रकार की प्ररूपणा करने वाला न जाने कितने लोगो को, कितने काल तक मिथ्या धारणाओ का शिकार बनाता रहता है। ऐसी धारणाएँ व्यक्ति के अपने जीवन को तो कलुषित करती ही है और साथ ही सामाजिक जीवन को भी निरकुश, स्वेच्छाचारी बना देती है। अतएव वैयक्तिक असत्य की अपेक्षा दार्शनिक असत्य हजारो-लाखो गुणा अनर्थकारी है।

शून्यवादी-बौद्ध दर्शन की अनेक शाखाओ मे एक 'शून्यवादी' शाखा या सम्प्रदाय है। इसके मतानुसार किसी भी वस्तु की सत्ता नही है। जैसे स्वप्न मे अनेको दृश्य दृष्टिगोचर होते है किन्तु जागृत होने पर या वास्तव मे उनकी कही भी सत्ता नही होती। इसी प्रकार प्राणी भ्रम के वशीभूत होकर नाना पदार्थों का अस्तित्व समझता है, किन्तु भ्रमभग होने पर वह सभी कुछ शून्य मानता है।

टीकाकार ने शून्यवाद का खण्डन करते हुए कहा है-कि यदि समग्र विश्व शून्य रूप है तो शून्यवादी स्वय भी शून्य है या नही ? शून्यवादी यदि शून्य है तो इसका स्पष्ट अर्थ यह हुआ कि शून्यवादी कोई है ही नही। इसी प्रकार उसके द्वारा प्ररूपित शून्यवाद यदि सत् है तो शून्यवाद समाप्त हो गया और शून्यवाद असत् है तो भी उसकी समाप्ति ही समझनी चाहिए। इस प्रकार शून्यवाद युक्ति से विपरीत तो है ही, प्रत्यक्ष अनुभव से भी विपरीत है।

नास्तिकवाद-शून्यवाद के पश्चात् अनात्मवादी नास्तिको के मत का उल्लेख किया गया है। अनात्मवादियो की मान्यता है कि जीव अर्थात् आत्मा की स्वतन्त्र कोई सत्ता नही है। जो कुछ भी है वह पाँच भूत ही है। पृथ्वी, जल, तेजस् (अग्नि), वायु और आकाश, ये पॉच भूत है। इनके सयोग से शरीर का निर्माण होता है। इन्ही से चैतन्य की उत्पत्ति हो जाती है। चैतन्य शरीराकार परिणत भूतो से उत्पन्न होकर उन्ही के साथ नष्ट हो जाता है। जैसे जल का बुलबुला जल से उत्पन्न होकर जल मे ही विलीन हो जाता है, उसका पृथक् अस्तित्व नही है, उसी प्रकार चैतन्य का भी पच भूतो से अलग अस्तित्व नही है।

जब आत्मा की ही पृथक् सत्ता नही है तो परलोक के होने की बात ही निराधार है। अतएव न जीव मरकर फिर जन्म लेता है, न पुण्य और पाप का अस्तित्व है। सुकृत और दुष्कृत का कोई फल किसी को नही भोगना पडता।

नास्तिकवादियो की उक्त मान्यता को असत्य ठहराते हुए टीकाकार कहते है-

नास्तिको की यह मान्यता प्रत्यक्ष अनुभव से भी अप्रमाणिक है। अनुमान और आगम प्रमाणो से भी वह असत्य सिद्ध होती है।

यह निर्विवाद है कि कारण मे जो गुण विद्यमान होते है वही गुण कार्य मे आते है। ऐसा कदापि नही होता कि जो गुण कारण मे नही है, वे अकस्मात् कार्य मे उत्पन्न हो जाये। मिष्ठान्न तैयार करने के लिए गुड, शक्कर आदि मिष्ट पदार्थो का प्रयोग किया जाता हैं। गुड--शक्कर के बदले राख या धूल से मिठाई नही बनती।

इस सिद्धान्त के आधार पर पाँच भूतो से चैतन्य की उत्पत्ति की मान्यता पर विचार किया जाये तो यह मान्यता कपोल-कल्पित ही सिद्ध होती है। नास्तिको से पूछना चाहिए कि जिन पाँच भूतो से चैतन्य की उत्पत्ति कही जाती है, उनमे पहले से चैतन्यशक्ति विद्यमान है अथवा नही ? यदि विद्यमान नही है तो उनसे चैतन्यशक्ति उत्पन्न नही हो सकती। क्योकि जो गुण, वस्तु मे नही होता वह उसके फल मे भी नही हो सकता। यदि बीज मे अकुरित होने की क्षमता नही है, तो उससे कोई भी फसल उत्पन्न नही हो सकती।

अनात्मवादी कहते है-आत्मा का स्वतन्त्र अस्तित्व सिद्ध करने के लिए कोई प्रमाण नही है। इन्द्रियो से उसका परिज्ञान नही होता। अतएव मन से भी वह नही जाना जा सकता, क्योकि इन्द्रियो द्वारा जाने हुए पदार्थ को ही मन जान सकता है। अतीन्द्रिय प्रत्यक्ष जैसी कोई वस्तु है ही नही। इस प्रकार किसी भी रूप मे आत्मा का प्रत्यक्ष न होने से वह अनुमान के द्वारा भी नही जाना जा सकता। आगम परस्पर विरोधी प्ररूपणा करते है, आत्मा के अस्तित्व को कैसे प्रमाणित कर सकते है ?

टीकाकार का प्रत्युत्तर है-अनात्मवादियो का यह कथन तर्क और अनुभव से असगत है। सर्वप्रथम तो 'मै हूँ, मै सुखी हूँ मै दु खी हूँ' इस प्रकार जो अनुभूति होती है, उसी से आत्मा की सिद्धि हो जाती है। घट, पट आदि चेतनाहीन पदार्थो को ऐसी प्रतीति नही होती। अतएव 'मै' की अनुभूति से उसका कोई विषय सिद्ध होता है और जो 'मै' शब्द का विषय (वाच्य) है, वही आत्मा कहलाता है।

अनुमान और आगम प्रमाण से भी आत्मा का अस्तितव सिद्ध होता है। एक ही माता-पिता के एक समान वातावरण मे पलने वाले दो पुत्रो मे अनेक प्रकार की विषमताएँ दृष्टिगोचर होती है, वह किसी अदृष्ट कारण से ही होती है। वह अदृष्ट कारण पूर्वजन्मकृत शुभाशुभ कर्म ही हो सकता है और पूर्वजन्मकृत शुभाशुभ कर्म का फल आत्मा का पूर्व जन्म मे अस्तित्व माने बिना नही सिद्ध हो सकता।

आत्मा की सिद्धि हो जाने पर परलोक-पुनर्जन्म, पाप-पुण्य, पाप-पुण्य का फल, विविध योनियो मे जन्म लेना आदि भी सिद्ध हो जाता है।

पूर्वजन्म की स्मृति की घटनाएँ आज भी अनेकानेक घटित होती रहती है। ये घटनाएँ आत्मा के स्वतत्र अस्तित्व को अभ्रान्त रूप से सिद्ध करती है।

पचस्कन्धवाद-बौद्ध दर्शन मे पाँच स्कन्ध माने गये है-

(१) **रूप**-पृथ्वी, जल आदि तथा इनके रूप, रस आदि।

(२) **वेदना**-सुख, दु ख आदि का अनुभव।

(३) **विज्ञान**-विशिष्ट ज्ञान अर्थात् रूप, रस, घट, पट आदि का ज्ञान।

(४) **सज्ञा**-प्रतीत होने वाले पदार्थों का अभिधान-नाम।

(५) **संस्कार**-पुण्य-पाप आदि धर्मसमुदाय।

बौद्ध दर्शन के अनुसार समस्त जगत् इन पाँच स्कन्धो का ही प्रपच है। इनके अतिरिक्त आत्मा का पृथक् रूप से कोई अस्तित्व नही है। यह पाँचो स्कन्ध क्षणिक है।

बौद्धो मे चार परम्पराएँ है-(१) वैभाषिक, (२) सौत्रान्तिक, (३) योगाचार और, (४) माध्यमिक। वैभाषिक सभी पदार्थों का अस्तित्व स्वीकार करते है, किन्तु सभी को क्षणिक मानते है। क्षण-क्षण मे आत्मा का विनाश होता रहता है, परन्तु उसकी सन्तति-सन्तानपरम्परा निरन्तर चालू रहती है। उस सन्तानपरम्परा का सर्वथा उच्छेद हो जाना-बन्द हो जाना ही मोक्ष है। सौत्रान्तिक सम्प्रदाय के अनुसार जगत् के पदार्थों का प्रत्यक्ष ज्ञान नही होता। उन्हे अनुमान द्वारा ही जाना जाता है। योगाचार पदार्थों को असत् मानकर सिर्फ ज्ञान की ही सत्ता स्वीकार करते है और वह ज्ञान क्षणिक है। माध्यमिक सम्प्रदाय ज्ञान की भी सत्ता नही मानता। वह शून्यवादी है। वह मानता है न ज्ञान है और न ज्ञेय है। शून्यवाद के अनुसार वस्तु सत् नही, असत् भी नही, सत् असत् भी नही और सत्-असत् नही ऐसा भी नही। तत्त्व इन चारो कोटियो से विनिर्मुक्त है।

वायु-जीववाद-कुछ लोग वायु को-प्राणवायु को ही जीव स्वीकार करते है। उनका कथन है कि जब तक श्वासोच्छ्वास चालू रहता है तब तक जीवन है और श्वासोच्छ्वास का अन्त हो जाना ही जीवन का अन्त हो जाना है। उसके पश्चात् परलोक मे जाने वाला कोई जीव-आत्मा शेष नही रहता।

किन्तु विचारणीय है कि वायु जड है और जीव चेतन है। वायु मे स्पर्श आदि जड के धर्म स्पष्ट प्रतीत होते है, जबकि जीव स्पर्श आदि से रहित है। ऐसी स्थिति मे वायु को ही जीव कैसे माना जा सकता है ?

आत्मा की सत्ता या नित्य सत्ता न मानने के फलस्वरूप इस प्रकार की आत्मघाती व समानघाती धारणाएँ पनपती है कि परभव नही है। शरीर का विनाश होने पर सर्वनाश हो जाता है। अतएव दान, व्रत, पौषध, तप,

संयम, ब्रह्मचर्य आदि का आचरण निष्फल है। इनके करने का कुछ भी शुभ फल नहीं होता। साथ ही हिंसा, असत्य, चौर्य, अब्रह्मचर्य, परिग्रह आदि कुकृत्यों का भी कोई दुष्फल नहीं होता।

नरक है, स्वर्ग है, मोक्ष है, इत्यादि मान्यताएँ कल्पनामात्र है। अतएव इन्द्रियों के विषयों का सेवन करने में संकोच मत करो-मौज करो, मस्त रहो, धर्म-अधर्म का विचार त्याग दो।

इस प्रकार आत्मा का सनातन अस्तित्व स्वीकार न करने से जो विचारधारा उत्पन्न होती है, वह कितनी भयावह है। आत्मा को घोर पतन की ओर ले जाने वाली तो है ही, सामाजिक सदाचार, नैतिकता, प्रामाणिकता और शिष्टाचार के लिए भी चुनौती है। यदि संसार के सभी मनुष्य इस नास्तिकवाद को मान्य कर ले तो संसार मे अव्यवस्था और अशान्ति फैल जायेगी। सामाजिक मर्यादाएँ ध्वस्त हो जायेगी।

Elaboration—In the present lesson, the beliefs of the followers of Nastikavad (philosophy of non-existence) has been depicted In the earlier aphorism, the conduct of those people who adopt falsehood for personal benefit, livelihood, trade and commerce, nourishment of their family and the like was narrated

When a person speaks untrue due to any selfish motive and the like he primarily incurs his own loss in welfare But when a philosopher establishes a wrong thought or supports a wrong philosophical diction, his falsehood takes a gigantic shape That wrong philosophical thought remains prevalent for a very long period and, misled by it, many people engage themselves in bad conduct Thus propounders of such a philosophical thought influence indefinite number of people for an indefinite period with their wrong notions Such a false philosophy spoils their life and also turns the social life uncontrollable and irresponsible in the set up So philosophical falsehood is million times more dangerous as compared to personal falsehood

Shunyavadi—The Buddhist philosophy has many branches One of them is Shunyavadi According to it there is nothing in existence Just as one sees many things in dream but when one wakes up he finds that actually there is nothing in existence, similarly human beings out of ignorance consider the existence of various substances, when that ignorance withers away, they start believing that all that was simply nothing (Shunya)

Disapproving Shunyavad, the commentator has said, 'In case the entire world is by nature nothing, the propounder of this philosophy is also nothing himself It would mean, in other words, that there is no such person So the philosophy propounded by him is also non-existent Then the philosophy of Shunyavad dies its own death In case

Shunyavad is unreal, than also it should be understood that it has ended Thus Shunyavad does not stand the test of reason. It is against the practical experience also

Nastikavad—(Philosophy of disbelief in existence of soul) after describing Shunyavad, the philosophy of those who do not believe in existence of soul has been narrated They believe that Jiva or soul has no independent existence Whatever is there, it is five elements Earth, water, fire, air and space are the said five elements with the mixture of these elements, the body is formed Consciousness also is the product of these elements Awakening generates from the five elements transformed in the form of physical body and is destroyed with the destruction of the body Just as a bubble of water generates from water and ends in the water itself and has no independent existence, similarly consciousness (soul) has no existence independent from the five elements

When the soul has no independent existence, the theory of existence of the next world is reasonless So, after death, Jiva does not take birth again and there is no existence of piety (punya) and sins (paap) There is no fruit of good and bad deeds and nobody has to bear any such fruit

Regarding this belief of disbelievers in the existence of soul (Nastikavadis), the commentator states as follows—

Even by practical experience, we see that this belief is irrational Agams and logic also hold it untrue

It is accepted beyond doubt that the traits, which are formed in any work exist in its cause It is never true that the qualities, which are not present in the cause, all of a sudden appear in the work resulting from that cause To prepare sweets, sugar and the like are needed Sweets cannot be prepared by using ash or dust instead of sugar

In case the belief of generation of soul from five elements is considered on the basis of this principle, it shall be quite evident, that the said theory does not hold good We should ask Nastikavadis whether consciousness already exists or not in five elements that according to them generate soul (consciousness) In case the consciousness is not in them, they cannot produce consciousness because only those qualities, which are in the cause can be in the result If the seed does not possess the capability of generating, it cannot produce any crop

Disbelievers of soul (Anatmavadis) say that there is no proof to establish independent existence of soul Sense organs do not provide its knowledge So it cannot be known through the mind also since the mind can only think of those objects, which are known by senses There is no such substance which is visible beyond the field for senses Since soul is not directly visible in any form, it can be known through estimate Scriptures are giving description, which contradict themselves So how can the existence of soul be established

The commentator in reply states This statement of non-believers of soul is against logic and practical experience First of all the experience 'I am, I am happy, I am unhappy' and the like itself proves the existence of soul The substances like pot, cloth and others, which do not possess consciousness cannot have such a feeling So the existence of soul is established with the very experience of I The subject of 'I' is in fact the soul

Even logic and Agams prove the existence of soul Two sons who belong to the same father and mother and who have been brought up in the same or similar environment are not identical Disparities are noticed in them There must be some latent cause for it That cause can only be the Karmas collected in earlier lives, merit Karma or demerit Karma The existence of merit or demerit Karmas of earlier lives cannot be proved without accepting the existence of soul in earlier life

After proving the existence of soul, the life after death, rebirth, merit and demerit, consequences of merit and demerit Karmas, taking birth in different states of existence and the like also stands established

Even now many events reminding the memories of previous lives are seen Such events establish beyond doubt independent existence of soul

Buddhism believes in five Skandhas—

(1) **Appearance (Roop)**—Earth, water and the like and their appearance, taste and the like

(2) **Feeling (Vedana)**—Experience of pleasure pain and the like

(3) **Vijnan (Special Knowledge)**—Knowledge of appearance, taste, pot, cloth and the like

(4) **Name (Sanjna)**—The name or caption of substances, which are experienced or felt

(5) Sanskar (Impressions)—Merit, demerit and other religious activities

According to Buddhist thought the entire world is based on these five Skandhas There is no existence of soul beyond these Skandhas. These five Skandhas are momentary

There are four traditions among the Buddhists—(1) Vaibhavik, (2) Sautrantik, (3) Yogachar, and (4) Madhyamik Vaibhavik believe in the existence of all the substances but according to them all of these are momentary The soul is dying every moment but its tradition of generation continues uninterrupted. The total extinction or stoppage of that tradition is liberation (mokhsa) According to Sautrantik branch of Buddhism, the substaces in the world cannot be directly visible but they can be known through logical estimation (Anumaan) Yogachar believes that all the substances are unreal Only knowledge is real and that knowledge is momentary According to Madhyamik branch, there is no existence of even knowledge It is Shunyavadi It believes that there is neither knowledge nor substance to be known According to Shunyavad, the substance is neither existent nor non-existent It is not even existent and non-existent It cannot also be said that it is not existent and non-existent It is beyond all these four interpretations

A detailed discussion of these disturbing beliefs is not being done here, as it needs exhaustive narration In the scriptures, it has been proved that this view does not hold good

Vayu-Jivavad—Some people believe that the air, the breath is itself Jiva According to them the life exists till one breathes With the end of breathing process, the life also ends Thereafter there is no soul that is to go to the next world for re-birth

But it is worth consideration that air is matter while Jiva is consciousness Air has qualities like touch and the taste, which are qualities of matter, whereas, Jiva does not have these physical attributes like touch In such a condition how can it be believed that air itself is Jiva

Such self-distinctive beliefs arise due to disbelief in the existence of soul or permanent existence of soul and that there is no life after death They believe that with the destruction of the body, there is destruction of every thing So charity, ascetic practice, paushadh-fast, vows, ascetic

restraint, celibacy and the like are all useless They do not produce any good result Simultaneously violence, falsehood, stealing, non-celibacy, attachments and the like which are considered bad also go in vain without awarding any ill fruit of such a conduct

The belief in existence of hell, heavenly abode, liberation and the like is all a creation of imagination So one should not hesitate in satisfying his senses He should enjoy life He should remain absorbed in physical and sensual enjoyments He should discard pondering over what is dharma and what is adharma

The thinking process that arises by not accepting the age-old existence of soul is extremely frightening It causes downfall of the soul. It is a challenge to social conduct, morality, ethical behaviour and good conduct In case all the human beings start believing this philosophy of Nastikavad, there shall be disorder all around in the world All the social restraints and code of conduct shall wither away

मृषावादी–असद्भाववादी का मत BELIEF OF ASADBHAVAVADI

४८. इमं वि बितियं कुदसण असब्भाववाइणो पण्णवेति मूढा–संभूओ अडगाओ लोगो।

सयंभुणा सयं य णिम्मिओ।

एवं एय अलियं पयंपति।

४८. (वामलोकवादी नास्तिको के अतिरिक्त) कोई–कोई असद्भाववादी–मिथ्यावादी मूढ जन दूसरा कुदर्शन–मिथ्यामत इस प्रकार कहते है–

यह लोक अण्डे से उद्भूत–प्रकट हुआ है।

इस लोक का निर्माण स्वय स्वयभू ने किया है।

इस प्रकार वे मिथ्या कथन करते है।

48. (In addition to Vamlokavadi nastiks there are non-believers in existence of soul) These are believers in wrong faith namely asadbhavavadi They propound as follows—

This world has originated from an egg

Svayambhu himself has created this world

Thus they speak false doctrine.

विवेचन सृष्टि की उत्पत्ति के सम्बन्ध मे प्राचीनकाल से भिन्न–भिन्न धारणाएँ, मान्यताएँ चलती रही है। उसमे से यहाँ दो मतो का उल्लेख किया गया है तथा यह भी स्पष्ट कर दिया गया है कि यह वाद–कथन वास्तविक नही है। अज्ञानी जन इस प्रकार की प्ररूपणा करते है।

किसी-किसी की मान्यता है कि यह समग्र जगत् अण्डे से उत्पन्न हुआ है और स्वयभू ने इसका निर्माण किया है। अडसृष्टि के मुख्य दो प्रकार है-एक प्रकार छान्दोग्योपनिषद् (३/१९) मे बतलाया गया है और दूसरा प्रकार मनुस्मृति मे दिखलाया गया है।

छान्दोग्योपनिषद् के अनुसार सृष्टि से पहले प्रलयकाल मे यह जगत् असत् अव्यक्त था। फिर वह सत् अर्थात् नाम रूप कार्य की ओर अग्रसर हुआ। तत्पश्चात् यह अकुरित बीज के समान कुछ-कुछ स्थूल बना। आगे चलकर वह जगत् अण्डे के रूप मे बन गया। एक वर्ष तक वह अण्डे के रूप मे बना रहा। एक वर्ष बाद अण्डा फूटा। अण्डे के कपालो (टुकडो) मे से एक चाँदी का और दूसरा सोने का बना। जो टुकडा चाँदी का था उससे यह पृथ्वी बनी और सोने के टुकडे से ऊर्ध्वलोक-स्वर्ग बना। गर्भ का जो जरायु (वेष्टन) था उससे पर्वत बने और जो सूक्ष्म वेष्टन था वह मेघ और तुषार रूप मे परिणत हो गया। उसकी धमनियाँ नदियाँ बन गईं। जो मूत्राशय का जल था वह समुद्र बन गया। अण्डे के अन्दर से जो गर्भ रूप मे उत्पन्न हुआ वह सूर्य बना।

यह स्वतन्त्र अडे से बनी सृष्टि है। दूसरे प्रकार की अडसृष्टि का वर्णन मनुस्मृति मे पाया जाता है वह भी लगभग इसी के समान है, जैसे-

पहले यह जगत अन्धकार रूप था। यह तर्क-विचार से अतीत और पूरी तरह से प्रसुप्त-सा अज्ञेय था।

तब अव्यक्त रहे हुए भगवान स्वयभू पाँच महाभूतो को प्रकट करते हुए स्वय प्रकट हुए।

उसने ध्यान करके अपने शरीर से अनेक प्रकार के जीवो को बनाने की इच्छा से सर्वप्रथम जल का निर्माण किया और उसमे बीज डाल दिया। वह बीज सूर्य के समान प्रभा वाला स्वर्णमय अण्डा बन गया। उससे सर्वलोक के पितामह ब्रह्मा स्वय प्रकट हुए। एक वर्ष तक उस अण्डे मे रहकर उस भगवान ने स्वयं ही अपने ध्यान से उस अण्डे के दो टुकडे कर दिये। उन दो टुकडो से उसने स्वर्ग और पृथ्वी का निर्माण किया। मध्यभाग से आकाश, आठ दिशाओ और जल का शाश्वत स्थान निर्मित किया।

इस क्रम के अनुसार पहले भगवान स्वयभू प्रकट हुए और जगत् को बनाने की इच्छा से अपने शरीर से जल उत्पन्न किया। फिर उसमे बीज डालने से वह अण्डाकार हो गया। ब्रह्मा या नारायण ने अण्डे मे प्रकट होकर उसे फोड दिया, जिससे समस्त ससार प्रकट हुआ। (चित्र पृष्ठ 82 के सामने देखे)

इन सब मान्यताओ को यहाँ मृषावाद मे कहा गया है।

Elaboration—About the origin of the world, since ancient times, there have been different beliefs Some of those beliefs have been narrated here. Further it has been clarified that there is no truth in these beliefs Persons who lack real knowledge, say as under—

Some believe that the entire world has originated from an egg and Svayambhu has created it

Creation from an egg has been primarily in two forms—one is mentioned in Chhandogyopanishad (3/9) and the other in Manu Smriti.

According to Chhandogyopanishad, before the creation of the world, it was non-substantive and invisible at the time of the holocast Later it proceeded to have a substantive name. Later it became somewhat gross

just as a germinated seed Further, it took the shape of an egg For a year, it remained in the form of an egg Thereafter that egg burst into two pieces—one part became that of silver and the other part bacome that of gold The earth was formed from the silver external part of the egg and the higher world (the heavenly abode) was formed from the gold part of the egg From the gross inner material in the egg, the mountains were formed and from the subtle matter the clouds and rain evolved The nerves turned into rivers and the ocean was formed from the water in the urinary portion of the egg The fetus which grew from the egg became the sun

This is the description of creation from the egg independently

The second description of creation of the world from the egg is in Manu Smriti which is also almost similar as the first instance For instance—

At first the world was in the form of darkness It was totally unknown, beyond any reason or thinking and completely asleep

Then Lord Svayambhu who was till then invisible, appeared along with five elements (Bhutas)

With a desire to form various types of Jivas from his body, he first of all created water and put a seed in it That seed took the shape of a golden egg shining like the sun From it Brahma, the grandfather of the universe, appeared himself He remained in that egg for a year and then with his thought-activity split that egg into two pieces From the said two pieces, he created heaven and the earth From the central portion he created space, eight directions and eternal place for water

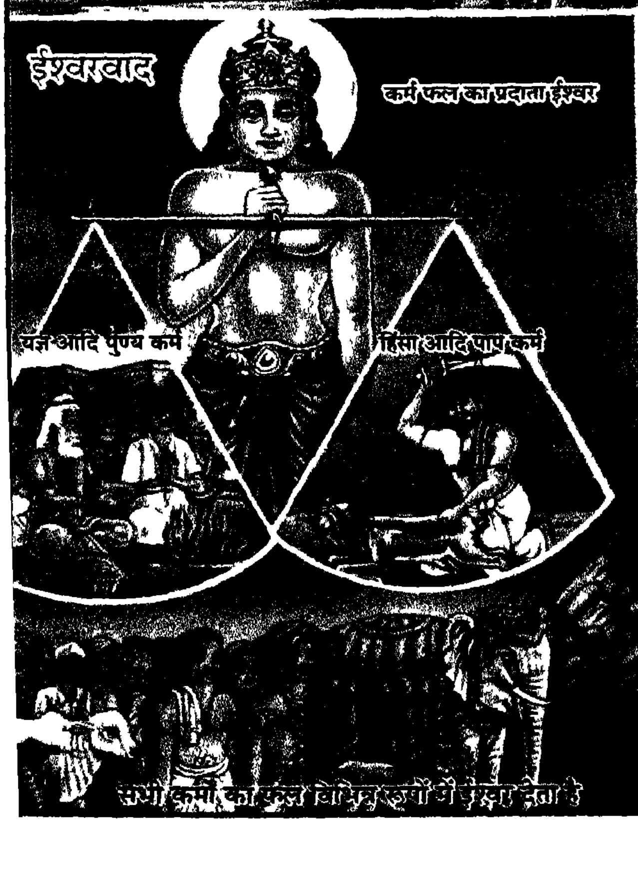
Thus, according to it, first of all Lord Swayambhu appeared and then with a desire to create the universe, he produced water from his body Later when seed was put in it, it took the shape of an egg Brahma (God) or Narayan appeared in it and then broke the egg From it the entire Universe was created

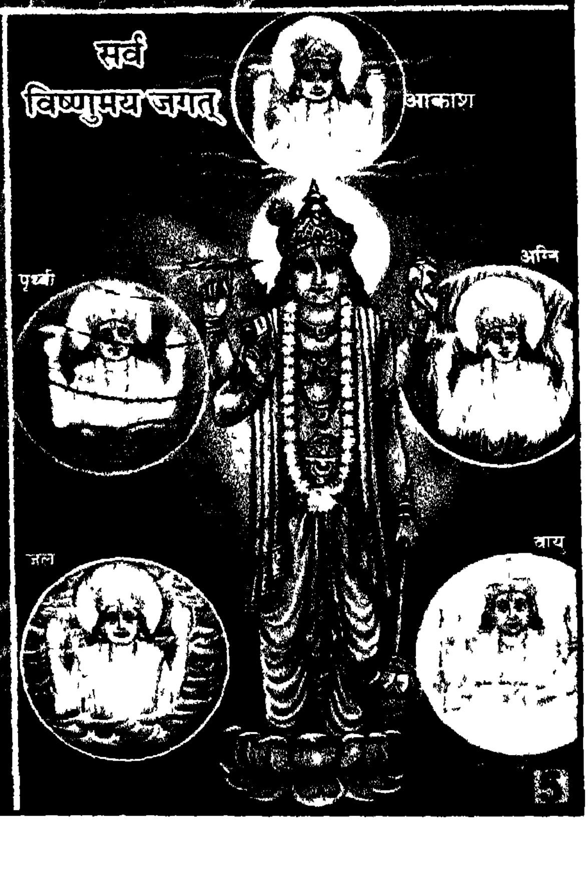
All these beliefs are termed here as concepts of falsehood

प्रजापति द्वारा सृष्टि–सर्जन की मान्यता BELIEF OF CREATION BY PRAJAPATI

४९. पयावइणा इस्सरेण य कयं ति केई। एव विण्हुमयं कसिणमेव य जगं ति केइ। एवमेगे वयति मोसं एगे आया अकारओ वेदओ य सुकयस्स दुक्कयस्स य करणाणि कारणाणि सव्वहा सव्वहिं च णिच्चो य णिक्किओ णिग्गुणो य अणुवलेवओ त्ति विय एवमाहंसु असब्भाव।


प्रजापति द्वारा सृष्टि सृजन
मनु
विराट पुरुष
ब्रह्मा
पुरुष
स्त्री


ईश्वरवाद
कर्म फल का प्रदाता ईश्वर
यज्ञ आदि पुण्य कर्म
हिंसा आदि पाप कर्म
सभी कर्मों का फल विभिन्न रूपों में ईश्वर देता है


सर्व
विष्णुमय जगत्
आकाश
पृथ्वी
अग्नि
जल
वायु

चित्र-परिचय 5

Illustration No 5

मृषावाद का स्वरूप (2)

प्रजापति द्वारा सृष्टि-सर्जन—मनुस्मृति में कहा गया है कि ब्रह्मा ने अपने देह के दो टुकडे किये। एक से स्त्री बनी और एक से पुरुष। स्त्री ने एक विराट् पुरुष का निर्माण किया। उस विराट् पुरुष ने तप करके मनु का निर्माण किया। मनु से सम्पूर्ण सृष्टि उत्पन्न हुई।

ईश्वरवाद—ईश्वरवादी 'एक सर्वव्यापी स्वतन्त्र सत्ता को' ईश्वर मानते है। उनका मानना है कि ईश्वर द्वारा जगत का निर्माण किया गया है। वह मनुष्यों को उनके अच्छे बुरे कर्मों का फल देता है। जिससे प्रेरित होकर मनुष्य स्वर्ग-नरक मे जाता है और पृथ्वी पर विभिन्न प्रकार के सुख दु ख पाता है। ईश्वर द्वारा दिये गये कर्म फलस्वरूप ही (प्राणी) जीव मनुष्य और पशु आदि योनियो मे उत्पन्न होता है।

विष्णुमय जगत्—मृषावाद के एक और स्वरूप की व्याख्या करते हुये विष्णुमय जगत की मान्यता के बारे मे बताया गया है—**सर्व विष्णु मय जगत्**—यह जल स्थल, अग्नि, वायु व आकाश आदि सभी मे विष्णु व्याप्त हैं यानि यह सारा जगत ही विष्णुमय है। ऐसा कोई स्थान नहीं जहाँ विष्णु न हो।

उपरोक्त मान्यताओं को पिछले पृष्ठ पर चित्र द्वारा प्रदर्शित किया गया है।

—सूत्र 49, पृ 92

FALACIOUS DOCTRINES EXPLAINED (2)

Creation by Prajapati - Manusmriti states that Brahma divided his body into two parts one became a woman and other a man That woman created a gigantic man who in turn created Manu with the help of his penance Manu then created the whole universe

Ishwaravad The followers of this doctrine believe in an all pervading independent power called the God The universe was created by the God who is the instrumental cause of this universe He awards fruits of good and bad deeds of humans As a consequence man goes to the heaven or hell as well as enjoys or suffers in different ways on this earth It is due to the God s will that a soul is born as a human or an animal according to its deeds

Vishnu pervaded universe Another fallacious doctrine described is the universe pervaded by Vishnu It conveys that Vishnu pervades all this water earth, fire, air and sky There is nothing devoid of Vishnu

— *Sutra-49, page-92*

४९. कोई-कोई कहते है कि यह जगत् प्रजापति या ब्रह्मा ने बनाया है। किसी का कहना है कि यह समस्त जगत् विष्णुमय है। किसी की मान्यता है कि आत्मा अकर्त्ता है किन्तु (उपचार से) पुण्य और पाप (के फल) का भोक्ता है। सर्व प्रकार से तथा सर्वत्र देश-काल मे इन्द्रियाँ ही कारण है। आत्मा (एकान्त) नित्य है, निष्क्रिय है, निर्गुण है और निर्लेप है। असद्भाववादी इस प्रकार प्ररूपणा करते है।

49. Some thinkers declare that this world has been created by Prajapati or Brahma Some say that the entire world is Lord Vishnu itself Some believe that soul is not the doer but by default it has to experience the fruit of good and bad Karmas In every form and every where during every period senses are the root cause of all activity Soul is totally (throughout) permanent, non-doer (passive), free from all traits and without the influence of anything Such a statement is made by Asadbhavavadi

विवेचन प्रस्तुत सूत्र मे अनेक मिथ्या मान्यताओ का उल्लेख किया गया है। उनका स्पष्टीकरण इस प्रकार है-

प्रजापतिसृष्टि-मनुस्मृति मे कहा है-ब्रह्मा ने अपने देह के दो टुकडे किये। एक टुकडे को पुरुष और दूसरे टुकडे को स्त्री बनाया। फिर स्त्री मे विराट् पुरुष का निर्माण किया। उस विराट् पुरुष ने तप करके जिसका निर्माण किया, वही मै (मनु) हूँ, अतएव हे श्रेष्ठ द्विजो ! सृष्टि का निर्माणकर्त्ता मुझे समझो।

ईश्वरसृष्टि-ईश्वरवादी एक-अद्वितीय, सर्वव्यापी, नित्य, स्वतत्र ईश्वर के द्वारा सृष्टि का निर्माण मानते है। ये ईश्वर को जगत का उपादानकारण नही, निमित्तकारण कहते है। ईश्वर को ही कर्मफल का प्रदाता मानते है। ईश्वर द्वारा प्रेरित होकर ही ससारी जीव स्वर्ग या नरक मे जाता है।

किन्तु सृष्टि-रचना की मूल कल्पना ही कल्पना मात्र है। वास्तव मे यह जगत् सदा काल से है और सदा काल विद्यमान रहेगा। कई दार्शनिक इस जगत् को विष्णुमय मानते है-**सर्वं विष्णु मय जगत्**-अर्थात् जल-स्थल-पर्वत-अग्नि आदि मे सर्वत्र विष्णु व्याप्त है।

विष्णुमय जगत् की मान्यता भी किसी युक्ति और प्रमाण से सिद्ध नही होती। अत कल्पना मात्र है, क्योकि जब जगत् नही था तो विष्णु कहाँ रहते थे ? उन्हे जगत्-रचना की इच्छा और प्रेरणा क्यो हुई ? अगर वे घोर अन्धकार मे रहते थे, उसके अतिरिक्त कुछ भी नही था तो बिना उपादान-सामग्री के ही उन्होने इतने विराट् जगत् की सृष्टि किस प्रकार कर डाली ?

सृष्टि रचना के विषय मे अन्य अनेक प्रकार के मन्तव्य भी यहाँ बतलाए गये है। उन पर अन्यान्य दार्शनिक ग्रन्थो मे विस्तार से चर्चाएँ की गई है। अतएव जिज्ञासुओ को उन ग्रन्थो का अवलोकन करना चाहिए।

इस प्रकार ये सारी कल्पनाएँ ईश्वर के स्वरूप को दूषित करने वाली है। सब मृषावाद है।

एकात्मवाद-प्रस्तुत सूत्र मे वेदान्त दर्शन सम्मत एकात्मवाद की मान्यता का उल्लेख करके उसे मृषावाद बतलाया गया है। एकात्मवादियो का कथन है-**एक एव हि भूतात्मा भूते-भूते व्यवस्थितः** अर्थात् संसार मे आत्मा तो एक ही है, किन्तु वह अनेक रूपो मे प्रतीत होता है-जिस प्रकार आकाश मे चन्द्रमा एक होने पर भी भिन्न-

भिन्न पात्रो व जलाशयो मे भिन्न-भिन्न रूप मे प्रतिभासित होता है। स्पष्टीकरण-एकान्तरूप से आत्मा को एक मानना प्रत्यक्ष से और युक्तियो से भी बाधित है। मनुष्य, पशु, पक्षी, कीडा-मकोडा, वनस्पति आदि के रूप मे आत्मा का अनेकत्व प्रत्यक्षसिद्ध है। अगर आत्मा एकान्तत एक ही हो तो एक का मरण होने पर सबका मरण और एक का जन्म होने पर सबका जन्म होना चाहिए। एक के सुखी या दु खी होने पर सबको सुखी या दु खी होना चाहिए। किसी के पुण्य-पाप पृथक् नही होने चाहिए। इस प्रकार सभी लौकिक एव लोकोत्तर व्यवस्थाएँ नष्ट हो जायेगी। अतएव एकान्त एकात्मवाद भी मृषावाद है।

अकर्तृवाद-साख्यमत के अनुसार आत्मा अमूर्त्त, चेतन, भोक्ता, नित्य, सर्वव्यापक और अक्रिय है। वह अकर्त्ता है, निर्गुण है और सूक्ष्म है।

वे कहते है-न तो आत्मा बद्ध होता है, न उसे मोक्ष होता है और वह ससरण करता-एक भव से दूसरे भव मे जाता है। मात्र नाना पुरुषो के आश्रित प्रकृति को ही ससार, बन्ध और मोक्ष होता है।

साख्यमत मे मौलिक तत्त्व दो है-पुरुष अर्थात् आत्मा तथा प्रधान अर्थात् प्रकृति। सृष्टि के आविर्भाव के समय प्रकृति से बुद्धितत्व, बुद्धि से अहकार, अहकार से पाँच कर्मेन्द्रियाँ, पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, और पाँच तन्मात्र अर्थात् रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, शब्द तथा इन पाँच तन्मात्रो से पृथ्वी आदि पाँच महाभूतो का उद्‌भव होता है। यह साख्यसृष्टि की प्रक्रिया है।

साख्य पुरुष (आत्मा) को नित्य, व्यापक और निष्क्रिय कहते है। अतएव वह अकर्त्ता भी है।

विचारणीय यह है कि यदि आत्मा कर्त्ता नही है तो भोक्ता कैसे हो सकता है ? जिसने शुभ या अशुभ कर्म नही किये है, वह उनका फल क्यो भोगता है ?

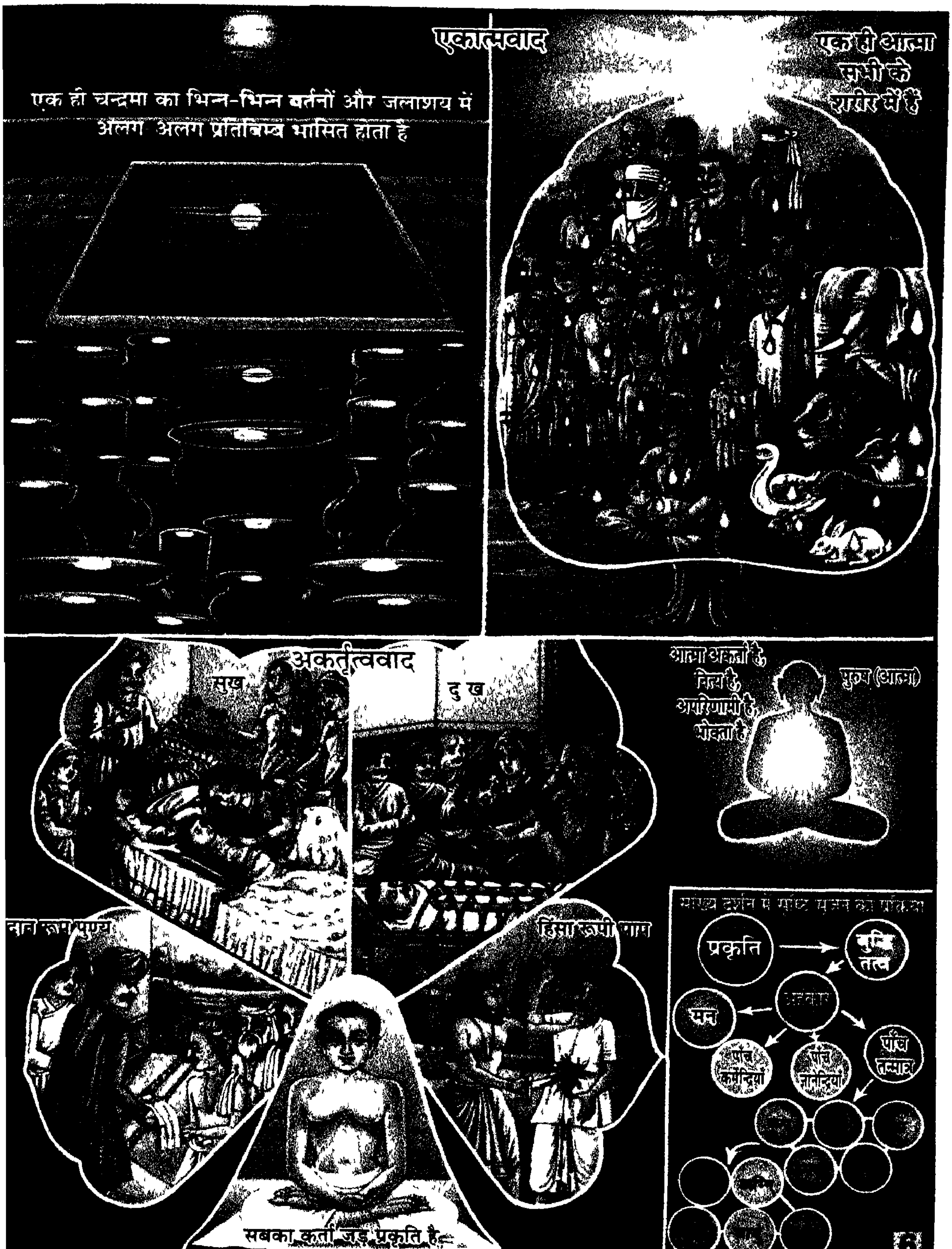
पुरुष चेतन और प्रकृति जड है और प्रकृति को ही ससार, बन्ध और मोक्ष होता है। जड प्रकृति मे बन्ध-मोक्ष-ससार मानना मृषावाद है। उससे बुद्धि की उत्पत्ति कहना भी विरुद्ध है।

साख्यमत मे इन्द्रियो को पाप-पुण्य का कारण माना है, किन्तु वाक्, पाणि, पाद, पायु और उपस्थ नामक उनकी मानी हुई पाँच कर्मेन्द्रियाँ जड है। वे पाप-पुण्य का उपार्जन नही कर सकती। स्पर्शन आदि पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ भी द्रव्य और भाव के भेद से दो-दो प्रकार की है। द्रव्येन्द्रियाँ जड है। वे भी पुण्य-पाप का कारण नही हो सकती। भावेन्द्रियाँ आत्मा से कथचित् अभिन्न है। उन्हे कारण मानना आत्मा को ही कारणा मानना कहलायेगा।

पुरुष (आत्मा) को एकान्त नित्य (कूटस्थ अपरिणामी), निष्क्रिय, निर्गुण और निर्लेप मानना भी प्रमाण विरुद्ध है। जब आत्मा सुख-दु ख का भोक्ता है तो अवश्य ही उसमे परिणाम -अवस्था-परिवर्तन मानना पडेगा। अन्यथा वह कभी सुख का भोक्त और कभी दु ख का भोक्त कैसे हो सकता है? एकान्त अपरिणामी (अपरिवर्तनशील) होने पर जो सुखी है, वह सदैव सुखी ही रहना चाहिए और जो दु खी है, वह सदैव दु खी ही रहना चाहिए।

आत्मा को क्रियारहित मानना भी मिथ्या है। प्रत्यक्ष आत्मा मे गमनागमन, जानना-देखना आदि क्रियाएँ तथा सुख-दु ख, हर्ष-विषाद आदि की अनुभूतिरूप क्रियाएँ प्रत्यक्ष देखी जाती है।

आत्मा को निर्गुण मानना किसी अपेक्षाविशेष से ही सत्य हो सकता है, सर्वथा नही। अर्थात् प्रकृति के गुण यदि उसमे नही है तो ठीक, मगर पुरुष के गुण ज्ञान-दर्शनादि से रहित मानना योग्य नही है। ज्ञानादि गुण यदि चैतन्यस्वरूप आत्मा मे नही होगे तो किसमे होगे ? जड मे तो चैतन्य का होना असम्भव है।



एकात्मवाद
एक ही चन्द्रमा का भिन्न-भिन्न बर्तनों और जलाशय में अलग अलग प्रतिबिम्ब भासित होता है
एक ही आत्मा सभी के शरीर में है
अकर्तृत्ववाद
सुख
दु ख
आत्मा अकर्ता है, नित्य है, अपरिणामी है, भोक्ता है
पुरुष (आत्मा)
हिंसा रूपी पाप
सबका कर्ता जड़ प्रकृति है
प्रकृति
बुद्धि तत्व
मन
पाँच कर्मेन्द्रियाँ
पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ
पाँच तन्मात्र
6

चित्र-परिचय 6

Illustration No. 6

मृषावाद का स्वरूप (3)

मृषावाद के अन्य स्वरूप निम्नोक्त है–

एकात्मवाद– एकात्मवादियों का कथन है कि जिस प्रकार चन्द्रमा एक होने पर भी अलग-अलग पात्रों व जलाशयों में उसका प्रतिबिम्ब अलग-अलग रूप में प्रतिभासित होता है, उसी प्रकार इस संसार में एक ही आत्मा है। वह संसार के सभी जीवों में अलग-अलग प्रतिभासित होती है। चाहे वह हाथी जैसा विशाल जीव हो या चींटी जैसा नन्हा जीव हो। चाहे मनुष्य हो या देव, नारक हो या तिर्यंच, कीड़े-मकोड़े, वनस्पति आदि सभी में एक ही आत्मा है। बस शरीर अलग-अलग है।

अकर्तृत्ववाद– अकर्तृत्ववाद का स्वरूप इस प्रकार बताया गया है--सांख्यदर्शन में दो तत्त्व माने गये है–(1) आत्मा अर्थात् पुरुष (2) प्रकृति अर्थात् प्रधान। सृष्टि के प्रारम्भ में प्रकृति से बुद्धितत्त्व की उत्पत्ति हुई। बुद्धि से अहंकार और अहंकार से मन, पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ और पाँच तन्मात्राओं की उत्पत्ति हुई। पाँच तन्मात्राओं से पृथ्वी आदि पंचमहाभूतों का उद्भव हुआ।

सांख्यदर्शन में आत्मा को अकर्त्ता, अमूर्त, चेतन और भोक्ता माना गया है तथा सुख-दुःख, पाप-पुण्य इन सबका कर्त्ता प्रकृति को बताया है। इन्द्रियों को दान आदि पुण्य, हिंसा रूप पाप एवं सुख और दुःख का कारण माना गया है।

--सूत्र 49 पृ 92

FALACIOUS DOCTRINES EXPLAINED (3)

Other fallacious doctrines described are as follows:

Ekatmavad– The followers of this doctrine believe that there is only one soul in this universe. Like the reflection of the moon in different water bodies like rivers, seas, ponds and pots, the same soul is reflected separately in all beings. Be it a large animal like an elephant or a tiny one like an ant. Whether it is human beings, divine beings, infernal beings, animals, insects or plants, only bodies are different, the soul is just one.

Akartritvavad– According to this doctrine of the Sankhya philosophy there are two fundamental elements– (1) Purush (soul) and (2) Pradhan (nature). At the time of the origin of the universe first of all nature created intellect, which in turn created ego. From ego came five senses of action, five senses of knowledge and five tanmatras (subtle powers). The five tanmatras created five bhutas, namely earth, water, fire, air and space.

Sankhya school believes that soul is non-doer, formless, sentient and sufferer. Nature is said to be the creator of pleasure, pain, sin and piety. The sense organs are said to be the cause of merits including charity, sin including violence as well as happiness and misery.

– Sutra-49, page-92

जैन दर्शन के अनुसार आत्मा चेतन है, द्रव्य से नित्य–अपरिणामी होते हुए भी पर्याय से अनित्य–परिणामी है, अपने शुभ और अशुभ कर्मो का कर्त्ता है और उनके फल सुख–दु ख का भोक्ता है। अतएव वह सर्वथा निष्क्रिय और निर्गुण नही हो सकता। आत्मा अमूर्त्त भी नही है।

इस प्रकार प्रस्तुत सूत्र मे जगत् की उत्पत्ति और आत्मा सम्बन्धी भिन्न–भिन्न दर्शनो की कल्पित मान्यताओ को मृषावाद बताया गया है।

Elaboration—In the present aphorism, many false beliefs have been mentioned They are clarified as under—

Prajapati Srishti (creation of Prajapati)—It is mentioned in Manu Smriti that Lord Brahma cut his body into two pieces He turned one piece into a man and the other piece into a woman Then through the woman, he created a gigantic man That man observed austerities and created Manu (me) So you should consider me as the creator of the Universe

Ishwar Srishti (Creation by Ishwar or God) Ishwarvadis believe that the universe has been created by Ishwar who is unique, all prevalent, permanent and totally independent They do not believe that Ishwar took the form of creation (Upadan cause) They believe that Ishwar is the secondary cause (Nimitt Cause) of creation of the Universe They believe that it is Ishwar alone who awards fruit of the Karmas (activities good or bad committed by living beings) The living beings after their current life-span are re-born in heaven or hell as directed by Ishwar

But the real fact is that the very thought about the very creation of the Universe is simply the flight of imagination In reality this Universe had always been in existence and shall exist always

Some philosophers believe that this Universe is throughout Vishnu In other words Vishnu is all prevalent everywhere in water, land, mountain, fire and the like

This belief that the Universe is all Vishnu is also not established by any logical reasoning It is also simply a flight of imagination because where was Vishnu when there was no Universe (Jagat) Why did he have the desire to create the world or what was there that inspired him to create the world ? If He (Vishnu) was living in thick darkness and there was nothing else except Him, how then He created this gigantic Universe without any material (upadan)

Many other theories about the creation of the Universe have also been mentioned here They have been discussed in detail in several philosophical texts So the reader should study them from there

Thus all such theories based simply on imagination, spoil the very nature of Ishwar They are products of falsehood

Ekatamavad (belief in one soul)—In the present aphorism the philosophy of prevalence of one soul as propounded by Vedanta has been discussed and it has been proved that it is not true Ekatamavadis believe that in the entire world, the soul is only one but it appears in different forms just as moon is one but in different vessels and collections of water it appears in different forms To believe that there is absolutely one soul is directly not established and it does not hold good even in the test of logic It is quite evident that souls are numberless in the form of man, animal, bird, ants, plant life and so on In case the soul had been only one, with the death of any one living being, all world would have died and with the birth of any one all world have taken birth Further in case one was happy, every one should have been happy and in case one was in pain, every one should have been in pain The good and bad fruit (punya and paap) should not have been separate Thus with the acceptance of this theory, all the worldly set up and metaphysical set up shall dwindle So theory of existence of just one soul (Ekatamavad) is also untrue

Akartrivad—According to Sankhya philosophy, soul is formless, conscious, experiencer, permanent, all pervading and non-doer It is subtle and free of all traits

They say—soul never gets bound It never gets liberated It does not transmigrate from one life-span to another The bondage, liberation and wandering in the mundane world is there only in the case of prakriti (nature) dependent on many souls (purushas)

In Sankhya school of thought, there are two fundamental elements—purush (the soul) and pradhan (prakriti) At the time of the origin of the Universe first of all prakriti produced intellect, intellect produced ego, ego created five senses of Karmas, five senses, of knowledge and five tanmatra (senses of sight, taste, smell, touch and hearing) The said five Tanmatras created five bhutas namely earth, water, fire, air and space This is the theory of creation according to Sankhya School

Sankhya School declares that soul (purush) is permanent, all prevalent and non-deor

It is worth consideration that in case soul is not the doer, how can it be the experiencer of the fruit of activities in the Universe A person who has not done good or bad Karma, why should he bear the fruit of those Karmas

Purush is consciousness while prakriti is matter. Bondage, liberation and transmigration occurs only in respect of prakriti It is falsehood to believe that non-conscious prakriti can go in bondage, liberation and transmigration It is also against its nature that intellect is produced by prakriti

Sankhya School believes that sense orgrans are the cause of good and bad Karmas but the tongue, hand, feet, paryu and upasth which are Karmendrya (the organs with which they performs deeds) are matter They cannot collect merit or demerit Senses such as sense of touch and the like, the said five Jnanendriya, are also of two types each—the external sense organs on the basis of their shape (Dravya) and inner centre capable of being conscious (bhavendriya) Dravya Indriya is matter So it cannot be the cause of good and bad deeds Bhava Indriyas are to a certain extent non-different from the soul. To believe them as cause would mean that the soul is believed to be the cause of merit and demerit

It is also against available evidence that purush (soul) is absolutely permanent, non-doer, devoid of traits and without any influence (or taint) When soul experiences pleasure and pain, it shall have to be admitted that its state is changing Otherwise how can it be possible that it is sometimes in a state of happiness and sometimes in pain In case it is absolutely unchanging, if it is in a state of happiness, it should remains always happy and in case it is unhappy, it should always be so

It is also untrue to believe that soul does not perform any activity It is quite evident that it performs the activities of going and coming, seeing and knowing It experiences pleasure and pain, happiness and sorrow and such experiences are directly visible in it

To believe that soul is without any attribute can be true only in certain context and not totally. In other words, it is correct that it does not have the attributes of prakriti. But it is not proper to believe that it

does not have the qualities of knowing and seeing In case the soul does not have the qualities of knowing and others, then who else shall have these qualities It is impossible that matter may have consciousness

According to Jainism, soul is consciousness From the substantive point of view it is permanent and unchanging but from the point of view of modes, it is impermanent and changing It is the doer of its good and bad Karmas and also the experiencer of the fruits of those Karmas So it is not absolutely non-doer and devoid of qualities It is also not non-existent (amurat)

Thus in this aphorism it is stated that different beliefs of other schools of thought about creation of the Universe and the soul are not true

मृषावाद FALSEHOOD (MRISHAVAD)

५०. जं वि इहं किंचि जीवलोए दीसइ सुकयं वा दुकय वा एयं जदिच्छाए वा सहावेण वावि दइवतप्पभावओ वावि भवइ। णत्थेत्थ किंचि कयगं तत्त लक्खणविहाणणियत्तीए कारियं एवं केइ जंपंति इड्ढि-रस-सायागारवपरा बहवे करणालसा परूवेति धम्मवीमंसएण मोसं ।

५० कोई-कोई वादी ऋद्धि, रस और साता के गर्व (अहकार) से लिप्त या इनमे अनुरक्त बने हुए और क्रिया करने मे आलसी होते है, वे धर्म की मीमासा (विचारणा) करते हुए इस प्रकार मिथ्या प्ररूपणा कहते है-

इस जीवलोक मे जो कुछ भी सुकृत या दुष्कृत दिखाई देता है, वह सब यदृच्छा (अकस्मात्) ईश्वर की इच्छा से, स्वभाव से अथवा दैव प्रभाव-विधि के प्रभाव से ही होता है। इस लोक मे कुछ भी ऐसा नही है जो पुरुषार्थ से किया गया तत्त्व (सत्य) हो। लक्षण (वस्तुस्वरूप) और विद्या (भेद) की कर्त्री नियति ही है, ऐसा कोई कहते है। पदार्थ के लक्षण - स्वरूप और भेदो की उत्पत्ति करने वाली नियति ही है।

50. Some scholars are under the influence of the ego of wealth, comforts and pleasures so they are slack in activity While describing dharma, they depict it in the following wrong manner—

Whatever is seen in this world inhabited by living beings as good or bad act, it is all due to such a desire of Ishwar, or due to the very nature or due to the influence of fate There is nothing in this world, which is due to efforts The cause of the attributes of things and variations in them is fate is what they say

विवेचन प्रस्तुत सूत्र मे एकान्त यदृच्छावादी, स्वभाववादी, दैव या द्वैतवादी एव नियतिवादी के मन्तव्यो का उल्लेख करके उन्हे मृषा (मिथ्या) बतलाया गया है। आचार्य अभयदेव सूरि कृत टीका के अनुसार उल्लिखित वादों का आशय सक्षेप मे इस प्रकार है-

यदृच्छावाद–अर्थात् जैसी ईश्वर की इच्छा थी वैसा स्वत हो जाना। यदृच्छायाद का मन्तव्य है–प्राणियो को जो भी सुख या दु ख होता है, वह सब अचानक–अतर्कित ही उपस्थित हो जाता है। जैसे–कौआ आकाश मे उडता–उडता अचानक किसी ताड वृक्ष के नीचे पहुँचा और अचानक ही ताड का फल टूटकर गिरा और कौआ उससे घायल हो गया। सब कुछ अकस्मात् हो गया। इसी प्रकार जगत् मे जो घटनाएँ घटित होती है, वे सब बिना इरादे के सहज ही घट जाती है। बुद्धिपूर्वक कुछ भी नही होता। अतएव अपने प्रयत्न एव पुरुषार्थ का अभिमान करना वृथा है।

स्वभाववाद–पदार्थ का स्वत ही भिन्न–भिन्न रूपो मे परिणमन होना स्वभाववाद कहलाता है। स्वभाववादियो का कथन है–जगत् मे जो कुछ भी होता है, सब स्वभाववश स्वत ही हो जाता है। मनुष्य के करने से कुछ भी नही होता। काँटे की तीक्ष्णता, मयूर–पखो की विचित्रता और मुर्गे के पखो के रग, कौन बनाने वाला है? वस्तुत यह सब स्वभाव से ही होता है। गन्ने मे मिठास, मिर्च मे तीखा चटपटापन, इत्यादि सब कार्य स्वभाव से होते रहते है। इसमे न किसी की इच्छा काम आती है, न कोई इसके लिए प्रयत्न या पुरुषार्थ करता है। इसी प्रकार जगत् के समस्त कार्यकलाप स्वभाव से ही हो रहे है। पुरुषार्थ को कोई स्थान नही है। लाख प्रयत्न करके भी कोई वस्तु के स्वभाव मे तनिक भी परिवर्तन नही कर सकता।

विधिवाद–जगत् मे कुछ लोग एकान्त विधिवाद–भाग्यवाद का समर्थन करते है। उनका कथन है कि प्राणियो को जो भी सुख–दु ख होता है, जो हर्ष–विवाद के प्रसग उपस्थित होते है, न तो यह इच्छा से और न स्वभाव से होते है, किन्तु विधि या भाग्य–दैव से ही होते है। दैव की अनुकूलता हो तो बिना पुरुषार्थ किये इष्ट वस्तु प्राप्त हो जाती है और जब भाग्य प्रतिकूल होता है तो हजार–हजार प्रयत्न करने पर भी कुछ प्राप्ति नही होती। अतएव ससार मे सुख–दु ख का जनक भाग्य ही है।

विधिवादी कहते है–जिस वस्तु की प्राप्ति होनी होती है वह हो ही जाती है, क्योकि दैव सर्वोपरि है, उसकी शक्ति अप्रतिहत है। अतएव दैववश जो कुछ होता है, उसके लिए मै न तो शोक करता हूँ और न विस्मय मे पडता हूँ। जो हमारा है, वह हमारा ही होगा। वह किसी अन्य का नही हो सकता।

नियतिवाद–विधिवाद से मिलता–जुलता ही नियतिवाद है। भवितव्यता अथवा होनहार नियति कहलाती है। कई प्रमादी मनुष्य भवितव्य के सहारे निश्चिन्त रहने को कहते है। उनका कथन होता है–आखिर हमारे सोचने और करने से क्या हो जाता है! जो होनहार है, वह होकर ही रहता है और अनहोनी कभी होती नही।

पुरुषार्थवाद–एकान्त पुरुषार्थवादी स्वभाव, दैव आदि का निषेध करके केवल पुरुषार्थ से ही सर्व प्रकार की कार्यसिद्धि स्वीकार करते है। उनका कथन है–लक्ष्मी उद्योगी पुरुष को ही प्राप्त होती है। लक्ष्मी की प्राप्ति भाग्य से होती है, ऐसा कहने वाले पुरुष कायर है। अतएव दैव को ठोकर मारकर अपनी शक्ति के अनुसार पुरुषार्थ करो। प्रयत्न किये जाओ। प्रयत्न करने पर भी यदि सिद्धि न हो तो इसमे क्या दोष–बुराई है।

कालवाद–कुछ वादी उक्त कारणो को नकारते हुए 'काल' को ही महत्त्व देते है। एकान्त कालवादियो का कथन है कि स्वभाव, नियित, पुरुषार्थ आदि कुछ नही, किन्तु काल से ही कार्य की सिद्धि होती है। सब अनुकूल कारण विद्यमान होने पर भी जब तक काल परिपक्व नही होता तब तक कार्य नही होता। अमुक काल मे ही

गेहूँ, चना आदि धान्य पकते है। समय आने पर ही सर्दी, गर्मी, वर्षा आदि होती है। अतएव एक मात्र कारण काल ही है।

ये सब एकान्तवादी कथन होने से मृषावाद है। जैन दर्शन पच समन्वयवादी है अर्थात् इन सबको अलग-अलग नही मानकर कहता है-वास्तव मे काल, स्वभाव, नियति, दैव और पुरुषार्थ, सभी यथायोग्य कार्यसिद्धि के सम्मिलित कारण है। कार्यसिद्धि एक कारण से नही, अपितु समग्र कारणो के समूह से होती है। जैसा कि कहा गया है-

> कालो सहाव नियई, पुव्वकय पुरिसकारणेगता।
> मिच्छत्त ते चेव, उ समासओ होति सम्मत्त॥

काल, स्वभाव, नियति, पूर्वकृत (दैव-विधि) और पुरुषकार (पुरुषार्थ) को एकान्त कारण मानना अर्थात् इन पाँच मे से किसी भी एक को कारण स्वीकार करना और शेष को कारण न मानना मिथ्यात्व है। ये सब मिलकर ही यथायोग्य कारण होते है, ऐसी मान्यता ही सम्यक्त्व है।

Elaboration—In the present aphorism, after explaining the beliefs of various schools of thought namely 'all according to desire of God' (yadrichhavadi), 'all according to nature of the thing' (Svabhavavadi), 'all according to fate or super power' (Daive or daivatawadi) and 'all according to destiny' (niyativadi), it has been established that all the said theories are false (wrong) The purports of the said schools of thought according to the commentary by Acharya Abhayadev Suri are in brief as follows—

Yadrichhavad—It means to happen itself as desired by God (Ishwar) In brief, it believes that whatever pleasure or pain that the living beings experience, occurs all of a sudden (without any effort) Just as a crow while flying suddenly arrives under a deodar tree and all of a sudden a fruit falls from the tree and injures the crow Everything happens all of a sudden, similarly various events occur in the world in a natural way and without any prior planning No occurrence is the result of any proper planning though the intellect So it is useless to have any ego of one's efforts

Svabhavavad—The transforming of a substance in different shapes naturally is called Svabhavavad The philosophers of this school say that whatever happens in the world is happening itself according to its very nature Nothing happens by effort or activity of any human being Who produces sharpness in thorns, strange design in peacock feathers and colours of cock feathers? We see different shapes and structure of animals and birds Who is the maker of them? In reality, all this happens by nature Sweetness in the sugarcane, pungent taste in chillies,

bitterness in ginger and so on—all this is in these substances by their very nature In its making, neither the desire nor the effort of any one functions Similarly everything is happening in this Universe by its very nature Effort has no scope in it Even by persistent effort, no change in the nature of a substance can be brought about

Vidhivad—Some people in the world support the theory that every thing happens according to fate They believe that all the occasions that arise in the world providing pleasure or pain, enjoyment or sadness, they are not the result of any desire or by nature but they are all the result of one's fate In case the fate is in one's favour, one gets the desired substance even without efforts When the fate is against him, he does not achieve anything even after persistent efforts So fate is the generator of pleasure and pain in this world

Vidhivadis declare that fate is supreme One certainly gets whatever is destined in his fate The power of fate is unchallengeable So I do not feel sad or wonder-struck at anything which happens in the world Whatever is mine, it shall be mine It cannot be of anyone else

Niyativad—Niyativad is almost similar to vidhivad Destiny is called niyati Some indolent people remain carefree depending on destiny There belief is that nothing is going to happen with their planning or efforts Whatever is in our destiny that shall certainly happen Nothing happens which is not in destiny

Purusharthavad—Absolute believers in efforts, deny the influence of nature, destiny and the like They believe that success in any activity can be achieved only by efforts They say that only that person can get wealth who makes efforts Those who say that wealth gained only if it is in destiny, they are coward So one should discard any thought about destiny and should make efforts according to his capacity One should go on making persistent efforts There is no fault if one does not succeed even after making efforts

Kaalavad—Some thinkers deny the above mentioned causes and give importance only to Kaal (Time). It is the theory of believers of absolute Kaal that nothing lies in nature, destiny or efforts But success is obtained if, it is the right time for it Wheat, rice and the like ripen at a particular time Winter, summer, rainy seasons appear within their respective time frame so only time is the cause of success

All these theories are false as they are one-sided Jainism brings about cohesion in these five theories It does not believes in them individually It declares that in fact all the five namely time, nature, destiny, fate and efforts are jointly the cause of any success in any activity The success is not dependent on one cause alone but it is the result of all of them jointly

It is wrong to believe that time, nature, fate, destiny and efforts are individually the cause of success In other words to believe that only one of them and not the remaining four is the cause of the result is wrong belief All these jointly are the causes of the result Such a belief is the right belief

ईर्ष्या-द्वेषवश झूठा दोषारोपण करने वाले FALSE ALLEGATIONS OUT OF JEALOUSY

५१. अवरे अहम्मओ रायदुट्ठं अब्भक्खाण भणति अलिय चोरोत्ति अचोरयं करेतं, डामरिउत्ति वि य एमेव उदासीण, दुस्सीलोत्ति य परदार गच्छइत्ति मइलिति सीलकलिय, अयं वि गुरुतप्पओ त्ति। अण्णे एमेव भणति उवाहणता मित्तकलत्ताइ सेवंति अय वि लुत्तधम्मो, इमोवि विस्सभवाइओ पावकम्मकारी अगम्मगामी अय दुरप्पा बहुएसु य पावगेसु जुत्तोत्ति एवं जंपंति मच्छरी।

भद्दगे वा गुणकित्ति-णेह-परलोय-णिप्पिवासा। एव ते अलियवयणदच्छा परदोसुप्पायणप्पसत्ता वेढेति अक्खाइयबीएण अप्पाण कम्मबधणेण मुहरी असमिक्खियप्पलावा।

५१. कोई-कोई लोग राज्यविरुद्ध (वर्तमान शासक पक्ष को बदनाम करने की नीयत से) मिथ्या दोषारोपण करते है। यथा-चोरी न करने वाले को चोर कहते है। जो उदासीन है-लडाई-झगडा नही करता, उसे लडाईखोर या झगडालू कहते है। जो सुशील है-शीलवान् है, उसे दु शील-व्यभिचारी बताते है, यह परस्त्रीगामी है, ऐसा कहकर उसे बदनाम करते है। उस पर ऐसा आरोप लगाते है कि यह तो गुरु-पत्नी के साथ अनुचित सम्बन्ध रखता है। कोई-कोई किसी की कीर्ति अथवा आजीविका को नष्ट करने के लिए इस प्रकार मिथ्या दोषारोपण करते है कि यह अपने मित्रो की पत्नियो का सेवन करता है। यह अधार्मिक है, यह विश्वासघाती है, पापकर्म करता है, नही करने योग्य कृत्य करता है, यह अगम्यगामी है अर्थात् भगिनी, पुत्रवधू आदि अगम्य स्त्रियो के साथ सहवास करता है, यह दुष्टात्मा है, बहुत-से पापकर्मो को करने वाला है। इस प्रकार ईर्ष्यालु लोग मिथ्या प्रलाप करते है।

भद्र पुरुष के परोपकार, क्षमा आदि गुणो की तथा कीर्ति, स्नेह एव परभव की लेश मात्र परवाह न करने वाले वे असत्यवादी, असत्य भाषण करने मे कुशल, दूसरो के कल्पित दोषो को बताने मे सलग्न रहते है। वे विचार किये बिना बोलने वाले वाचाल लोग प्रगाढ दु ख के कारणभूत अत्यन्त दृढ कर्मबन्धनो से अपनी आत्मा को बद्ध करते है।

51. Some people (in order to condemn the present administration) level false allegations against the government They call one a thief who actually has not committed any theft They name one quarrelsome who is quiet and humble They pronounce one a loafer who is actually of good character Thus they adversely affect one's reputation They level allegation that one has improper relation with the wife of the teacher Some level false allegation in order to affect one's reputation or to spoil his sources of livelihood They say that the particular person is having sex with the wives of his friends, he is irreligious, untrustworthy and commits sins He does such acts, which are not worthy to be performed He is a vagabond He has illicit relation with his sister, daughter-in-law and women of bad character He is a bad character and commits many sins Thus the jealous people level false allegations

They have little care for the noble deeds and acts of compassion of good people They are expert in making false speeches They remain busy in narrating imaginary faults of others They talk without proper knowledge Thus they acquire extremely severe bondage of bad Karmas, which result in extreme trouble to their souls

विवेचन विविध वादियो की मिथ्या मान्यताओ की चर्चा करने के पश्चात् अन्य दूसरे कारणो से झूठ बोलने वालो की चर्चा प्रस्तुत पाठ मे है। कुछ लोग ईर्ष्यालु होते है। कोई अच्छा शासनकर्त्ता है, तो उसकी कीर्ति मे ईर्ष्या व द्वेष करके उन्हे बदनाम करने का या चरित्र हनन करने का प्रयत्न करते है। किसी की बढती प्रतिष्ठा देखकर उन्हे घोर कष्ट होता है। दूसरो के सुख को देखकर जिन्हे तीव्र दु ख व जलन का अनुभव होता है। ऐसे लोग भद्र पुरुषो को अभद्रता से लाछित करते है। उन पर झूठे आरोप लगाते है। तटस्थ रहने वाले को लडाई-झगडा करने वाला कहते है। जो सुशील-सदाचारी है, उन्हे वे कुशील कहने मे सकोच नही करते। उनकी धृष्टता इतनी बढ जाती है कि वे उन सदाचारी पुरुषो को मित्र-पत्नी अथवा गुरु-पत्नी-जो माता की कोटि मे गिनी जाती है, उनके साथ गमन करने वाला तक कहते नही हिचकते। पुण्यशील पुरुष को पापी कहने की धृष्टता करते है। ऐसे व्यक्ति असत्य भाषण मे कुशल, ईर्ष्या से प्रेरित होकर किसी को कुछ भी लाछन लगा देते है। वे यह भी नही सोचते कि मुझे परलोक मे जाना है और इस मृषावाद मिथ्या दोषारोपण का कितना दुष्परिणाम भुगतना पडेगा। ऐसे लोग दूसरो को लाछित करके, अपमानित करके, उनकी प्रतिष्ठा को मलीन करके ऐसे घोरतर पापकर्मो का सचय करते है जो बडी कठिनाई से भोगे बिना नष्ट नही हो सकते। ऐसा असत्य भाषण करने वालो को नारकीय यातनाओ से बचाने की सद्भावना के साथ शास्त्रकार ने मृषावाद के अनेक प्रकारो तथा उसके दुष्परिणामो का यहाँ उल्लेख किया है और आगे भी करेगे।

Elaboration—After discussing the false beliefs of various thinkers (schools of thought), the falsehood of others is discussed in this aphorism Some people are jealous Some are jealous of good administration and want to dishonour it due to their hatred towards it

They say to level allegation against a good ruler's character also A jealous person feels highly perturbed at the rising respect and fame of others. He feels extreme pain and jealousy when he see others in a state of happiness Such people dishonour respectable by leveling false allegations They call the impartial people as quarrelsome They do not hesitate in calling the chaste as sexy They are so much rude that they do not hesitate in levelling the allegations on noble persons that they engage in sex with the wife of their friend or wife of the teacher who is considered just as mother They do the unwarranted act of calling a noble person as sinner Such a person levels any accusation to any one under the influence of jealousy as he is expert in making false speechs They do not try to understand that they have to go the next world after the present life-span and that they shall have to bear extremely drastic consequences there for levelling false allegations Such persons, by levelling false accusation, by insulting others, by adversely affecting the image of others, acquire extremely thick layer of bad Karmas, which cannot be destroyed without very severe sufferings The author has described in detail the bad results of their Karmas In order to save, such persons who make false statements from hellish tortures, the author has for their welfare mentioned in detail various kinds of falsehood and its bad results and he shall discuss them later also

लोभजन्य अनर्थकारी झूठ FALSEHOOD ARISING FROM GREED

५२. णिक्खेवे अवहरंति परस्स अत्थम्मि गढियगिद्धा अभिजुंजति य परं असंतएहिं। लुद्धा य करेंति कूडसक्खित्तण असच्चा अत्थालियं च कण्णालियं च भोमालियं च तह गवालियं च गरुयं भणति अहरगइगमणं।

अण्ण पि य जाइरूवकुलसीलपच्चयं मायाणिउणं चवलपिसुणं परमट्ठभेयगमसंतगं विद्देसमणत्थकारगं पावकम्ममूलं दुद्दिट्ठं दुस्सुयं अमुणिय णिल्लज्जं लोयगरहणिज्जं वहबंधपरिकिलेसबहुल जरामरणदुक्खसोयणिम्मं असुद्धपरिणामसंकिलिट्ठं भणंति।

५२. वे (मृषावादी लोभी) पराये धन मे अत्यन्त आसक्त होकर, दूसरो की धरोहर को हडप जाते है तथा दूसरे सत्पुरुषो को ऐसे दोषो से दूषित करते है जो दोष उनमे विद्यमान भी नही होते। धन के लोभी झूठी साक्षी देते है। वे असत्यभाषी धन के लालच मे, कन्या (मातृ जाति) के लिए, भूमि (भूमि सम्बन्धी) के लिए तथा गाय-बैल आदि पशुओ के निमित्त असत्य भाषण करते है, जो उन्हे अधोगति मे ले जाता है।

इसके अतिरिक्त वे मृषावादी जाति, कुल, रूप एव शील के विषय मे असत्य भाषण करते है। मिथ्या षड्यत्र रचने मे कुशल, परकीय असद्गुणो के प्रकाशक, सद्गुणो के विनाशक, पुण्य-पाप के

स्वरूप से अनभिज्ञ, असत्याचरण-परायण लोग अन्यान्य प्रकार से भी असत्य बोलते है। वह असत्य चपलता से युक्त है, (पैशुन्य) चुगलखोरी से परिपूर्ण है, परमार्थ को नष्ट करने वाला, असत्य अर्थ वाला अथवा सत्त्व से हीन, द्वेषमय, अप्रिय, अनर्थकारी पापकर्मो का मूल एव मिथ्यादर्शन से युक्त है। वह कर्णकटु, सम्यग्ज्ञानशून्य, लज्जाहीन, लोक-निन्दित, वध-बन्धन और क्लेशो से परिपूर्ण, जरा, मृत्यु, दु ख और शोक का कारण है, मिथ्या भाषण बुरे परिणाम तथा सक्लेश का कारण है।

52. Greedy persons making false statement grab things belonging to others as they are extremely attached to others property They point out such faults in noble persons which actually are not in them Greedy persons give false evidence Those persons tell lies in a fit of greed for money, and in respect of girl, land, cow, bullock and suchlike animals This conduct leads them to mean state of existence.

In addition, such people make false statements about their clan, caste, appearance and character They are expert in plotting against others They publicise false accusation against others and condemn their good qualities They are ignorant about the nature of merit and demerit They are prone to indecent conduct They utter falsehood in different manner They are clever in making false statement They are interested in back-biting They destroy activities of public welfare Their talk is having wrong interpretation They are devoid of capability They are jealous They are not loved by any one They are at the root of sinful activities They have wrong faith (or perception) They do not have right knowledge They are shameless and are condemned by the public They are full of disturbing traits and engaged into activities of violence They are the cause of death, adage, pain and sorrow since they produces improper results, they are full of miseries

विवेचन इस पाठ मे चार प्रकार के असत्यो का विशेष रूप से उल्लेख किया गया है-(१) अर्थालीक, (२) भूम्यलीक, (३) कन्यालीक, और (४) गवालीक। इनका अर्थ इस प्रकार है-

(१) **अर्थालीक**-अर्थ अर्थात् धन के लिए बोला जाने वाला अलीक (असत्य)। धन शब्द से यहाँ सोना, चाँदी, रुपया, पैसा, मणि, मोती आदि रत्न, आभूषण आदि भी समझ लेना चाहिए।

(२) **भूम्यलीक**-भूमि प्राप्त करने के लिए या बेचने के लिए अनेक प्रकार से असत्य बोलना, जैसे-अच्छी उपजाऊ भूमि को बजर भूमि कह देना अथवा बजर भूमि को उपजाऊ भूमि कहना आदि।

(३) **कन्यालीक**-कन्या देने मे या प्राप्त करने मे असत्य भाषण करना, सुन्दर सुशील कन्या को असुन्दर या दुश्शील कहना और दुश्शील को सुशील कहना।

(४) **गवालीक**-गाय, भैस, बैल, घोडा आदि पशुओ के सम्बन्ध मे असत्य बोलना।

चारो प्रकार के असत्यो मे उपलक्षण से समस्त अपद, द्विपद और चतुष्पदो का समावेश हो जाता है।

इस ससार मे वाणी की शक्ति प्राप्त होना अत्यन्त दुर्लभ है, प्रकृष्ट पुण्योदय से ही व्यक्त वाणी बोलने का सामर्थ्य हम प्राप्त करते है। इतनी महर्ध्य शक्ति का सदुपयोग तभी हो सकता है, जब हम स्व-पर के हिताहित का विचार करके सत्य, तथ्य, प्रिय भाषण करे और आत्मा को पाप की कालिमा से लिप्त करने वाले वचनो का प्रयोग न करे।

मूल पाठ मे **पावकम्ममूल दुद्दिट्ठ दुस्सुय अमुणिय** पद विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है। इनका तात्पर्य यह है कि जिस बात को, जिस घटना को हमने अच्छी तरह देखा न हो, जिसके विषय मे प्रामाणिक पुरुष से सुना न हो और जिसे सम्यक् प्रकार से जाना न हो, उसके विषय मे अपना अभिमत प्रकट कर देना-अप्रमाणित को प्रमाणित कर देना भी असत्य है। यह असत्य पाप का मूल है।

परमट्ठभेयग आदि पदो से सूचित किया है कि जो वचन परमार्थ के भेदक है-मुक्तिमार्ग के विरोधी है, कपटपूर्वक बोले जाते है, जो निर्लज्जतापूर्ण है और लोक मे गर्हित है-सामान्य जनो द्वारा भी निन्दित है, सत्यवादी को ऐसे वचनो का भी प्रयोग नही करना चाहिए।

Elaboration—In this lesson, four types of falsehood have been primarily discussed—(1) Falsehood regarding money, (2) Falsehood regarding land, (3) Falsehood regarding girl (in matrimony) and (4) Falsehood regarding animals like cow

(1) **Arthaleek**—False statement made in respect of money is called Arthaleek The word money here includes gold, silver, coins, change, rubies, pearls, ornaments and the like

(2) **Bhoomyaleek**—To make false statement in order to procure land or to sell land, for instance to call barren land as fertile or to call fertile land as barren is called bhoomyaleek

(3) **Kanyaleek**—To make false statement regarding a girl (in context of matrimony) For instance, to call a beautiful girl as ugly and of bad character and to call a girl of bad character as beautiful

(4) **Gavaleek**—To make false statement about cow, buffalo, bullock, horse and the like is gavaleek

The above said four types of falsehood includes falsehood about all things that have no feet and all that have two feet and four feet

It is very difficult to have power of speech in this world. As a result of very meritorious deeds, one gets the capability of speaking distinct language The proper use of this capability is possible only when we properly discriminate between good and bad for our welfare and welfare of others and then speak what is true, factual and loveable We should not use such words which darken our soul with sins

In the original text 'Pavakamm Moolam Dudditham dussuyam amuniyam' has been mentioned These words are worthy to be considered attentively It means it is also falsehood to express one's opinion about an event which one has not clearly seen, about which one has not heard from a reliable person and about which one has not properly collected proper facts This falsehood is the root of the sin

The word Parmatthabhajagam in the text indicates that the word or phrase which is against the path of liberation should not be used by lover of truth He should also not use such words which are altered in a crooked manner, which are shameful and which are disliked or hated by the common people

असत्यवादी उभय–घातक FALSEHOOD DUAL HARM

५३. अलियाहिसंधि–सण्णिविट्ठा असंतगुणुदीरया य संतगुणणासगा य हिंसाभूओवघाइयं अलियं सपउत्ता वयणं सावज्जमकुसल साहुगरहणिज्ज अहम्मजणण भणति, अणभिगय–पुण्णपावा पुणो वि अहिगरण–किरिया–पवत्तगा बहुविहं अणत्थं अवमद्दं अप्पणो परस्स य करेति ।

५३ जो लोग मिथ्या अभिप्राय -आशय से प्रेरित है, जो अविद्यमान गुणो की उदीरणा करने वाले, किसी मे गुण नही है, फिर भी उसमे बताते है, विद्यमान गुणो के नाशक है–दूसरो मे मौजूद गुणो को आच्छादित करते है, हिसा करके प्राणियो को कष्ट पहुँचाते है, जो असत्य भाषण करते है, ऐसे लोग सावद्य–पापमय, अहितकारी, सत्पुरुषो द्वारा गर्हित और अधर्मजनक वचनो का प्रयोग करते है। ऐसे मनुष्य पुण्य और पाप के स्वरूप से अनभिज्ञ होते है। वे पुन अधिकरणो अर्थात् पाप वृद्धि के साधनो मे शस्त्रनिर्माण आदि पापोत्पादक उपादानो को बनाने, जुटाने, जोडने आदि की क्रिया मे प्रवृत्ति करने वाले है, वे अपना और दूसरो का अनेक प्रकार से अनर्थ और विनाश करते है।

53. Persons who are influenced by false notion, who depict such qualities which actually do not exist in the person concerned, who proclaim that there are good qualities in a person inspite of their absence, who conceal the good qualities of others, who cause violence to the living beings by troubling them, who make false statements; such people use contemptuous, sinful, immoral words which are disliked by the cultured, truth-speaking people Such human beings are ignorant about the nature of merit and demerit They again engage themselves in such activities, which increase the growth of sin They manufacture weapons and other suchlike destructive products or indulge in assembling suchlike things They cause harm and destruction of themselves and others in many ways.

विवेचन : प्रस्तुत पाठ मे एक तथ्य यह भी स्पष्ट किया गया है कि मृषावादी असत्य भाषण करके पर का ही अहित, विनाश या अनर्थ नही करता किन्तु अपना भी अहित, विनाश और अनर्थ करता है। अतएव अपने हित की रक्षा के लिए अपने आपको दुर्गति से बचाने के लिए भी मृषावाद का परित्याग आवश्यक है।

Elaboration—In this aphorism, it has been clarified that a person who is in the habit of telling lies, he by making false speeches causes damage to the welfare not only of others but also to his own welfare He digs a pit for himself So to safeguard one's own welfare and to protect oneself from having re-birth in bad state of existence, it is essential that one should discard falsehood

पाप का परामर्श देने वाले **ADVISORS OF SIN**

५४. एमेव जपमाणा महिससूकरे य साहिंति घायगाणं, ससयपसयरोहिए य साहिंति वागुराणं तित्तिर–वट्टग–लावगे य कविंजल–कवोयगे य साहिंति साउणीणं, झस–मगर–कच्छभे य साहिंति मच्छियाणं, सखके खुल्लए य साहिंति मगराण, अयगर–गोणसमंडलिदव्वीकरे मउली य साहिंति बालवीण, गोहा–सेहग–सल्लग–सरडगे य साहिंति लुद्धगाणं, गयकुलवाणरकुले य साहिंति पासियाणं, सुग–बरहिण–मयणसाल–कोइल–हंसकुले सारसे य साहिंति पोसगाण ।

वहबंधजायणं च साहिंति गोम्मियाणं, धण–धण्ण–गवेलए य साहिंति तक्कराण, गामागर–णगरपट्टणे य साहिंति चारियाणं, पारघाइय पंथघाइयाओ य साहिंति गंठिभेयाणं, कय च चोरिय साहिति णगरगुत्तियाणं ।

लछण–णिलंछण–धमण–दूहण–पोसण–वणण–दवण–वाहणाइयाइ साहिंति बहूणि गोमियाण, धाउ–मणि–सिल–प्पवाल–रयणागरे य साहिंति आगरीण, पुप्फविहिं फलविहिं च साहिंति मालियाणं, अग्घमहुकोसए य साहिंति वणचराणं ।

५४. वे स्व और पर दोनो का अहित करने वाले मृषावादी जन जीव (अपने क्षुद्र स्वार्थवश) घातको को भैसो और शूकरो के सम्बन्ध मे हिसा का उपदेश देते है, व्याधो, शिकारियो को–शशक–खरगोश या मृगशिशु और रोहित दिखाते है। तीतुर, बत्तख और लावक तथा कपिजल और कबूतर पक्षीघातको चिडीमारो को दिखलाते है, मच्छीमारो को मछलियाँ, मगर और कछुआ दिखाते है, शख (द्वीन्द्रिय जीव), अक–जल–जन्तु और कौडी के जीव धीवरो को बतला देते है, अजगर, गोणस, मण्डली एव दर्वीकर जाति के सर्पों तथा मुकुली–बिना फन के सर्पो को, साँप पकडने वालो को बतला देते है, गोधा, सेह, शल्लकी और गिरगिट लुब्धको को हाथियो और बन्दरो के झुण्डो पर जाल डालकर पकडने वालो को बतलाते है। तोता, मयूर, मैना, कोकिला और हस के कुल तथा सारस पक्षी पोषको–इन्हे पकडकर, बन्दी बनाकर रखने वालो को बतला देते है।

आरक्षको–कारागार आदि के रक्षको को वध, बन्ध और यातना देने के उपाय बतलाते है। चोरो को धन, धान्य और गाय–बैल आदि पशु बतलाकर चोरी करने की प्रेरणा करते है। गुप्तचरो को ग्राम,

नगर, आकर और पत्तन आदि बस्तियाँ (एव उनके गुप्त रहस्य) बतलाते है। ग्रन्थिभेदकों को–गाँठ काटने वालो को, पथिको को, रास्ते के अन्त में अथवा बीच मे मारने–लूटने आदि के उपाय बता देते है। नगररक्षको–कोतवाल आदि पुलिसकर्मचारियो को की हुई चोरी का भेद बतलाते है।

गाय आदि पशुओ का पालन करने वालो को कान आदि काटना, या निशान बनाना, नपुंसक–वधिया करना, **धमण**–भैस आदि के शरीर मे हवा भरना (जिससे वह दूध अधिक दे), दुहना, **पोषना**–जौ आदि खिलाकर पुष्ट करना, बछडे को दूसरी गाय के साथ लगाकर गाय को धोखा देना अर्थात् वह गाय दूसरे के बछडे को अपना समझकर स्तन–पान कराये, ऐसी भ्रान्ति मे डालना, पीडा पहुँचाना, वाहन गाडी आदि मे जोतना इत्यादि अनेकानेक पापपूर्ण कार्य इनके उपाय तथा रहस्य सिखलाते है। इसके अतिरिक्त (वे मृषावादी जन) खान खुदाने वालो को लौह आदि धातुएँ बतलाते है, चन्द्रकान्त आदि मणियाँ बतलाते है, शिलाप्रबाल–मूँगा और अन्य रत्न बतलाते है। मालियो को पुष्पो और फलो के प्रकार बतलाते है तथा वनचरो–भील आदि वनवासी जनो को मधु का मूल्य और मधु के छत्ते बतलाकर उसे प्राप्त करने की तरकीब सिखाते है।

54. There are people who by false talk (due to mean selfish interest) engage themselves in non-welfare for themselves and others They tell the killers about he-buffaloes and pigs They inform hunters about rabbits, young deer and rohit They tell the sparrow-hunters about quails, ducks, lavaks, Kapinjal and pigeons They inform fishers about fishes, crocodiles and tortoise. They inform hunters of aquatic creatures about conch-shells, anks (creatures living in water) and other suchlike creatures They tell snake catchers about snakes of various categories such as ajagar, gonas, mandali and darvikar They also inform them about mukuli—the snake without tongue. They inform the location of godha, seg, shallaki, giragit, elephants and monkeys to these who are expert in catching them by casting the net They tell bird catchers about parrots, peacocks, nightingale, swan, cranes and koel, who keep them in cages.

Security Guards—They tell jailers methods of beating, torturing and keeping the prisoners in bondage. They tell thieves the locations where money, grain, cows and bullocks are kept and inspire them to commit theft. They tell spies about various colonies, villages, towns and the like and also their secrets They tell robbers various methods of robbing and killings passers-bye They tell the secrets of thefts to the security guards of the town and the police.

They train keepers of animals in various sinful activities involving violence to animals such as cutting their ears, marking them

permanently, making them non-productive, filling their body with air (so that they may produce more milk), process of milking them, making them fat by feeding herbs and milking them with the help of a calf of another cow and then cheating them They also educate them in causing trouble to animals and in using them to drive cart Further they tell about various metals to those who own mines They tell them about various precious stones such as jewels, chandrakant jewel Shilaprabal and others They tell about various types of flowers and fruit to gardeners They tell about the location of beehives so that honey could be procured, to the bhils and foresters

विवेचन इसी प्रकार चिडीमारो को पक्षियो का पता, मच्छीमारो को मछलियो आदि जलचर जीवो के स्थान एव घात का उपाय बताते है। चोरो, डाकुओ, जेबकतरो आदि को चोरी आदि के स्थान–उपाय आदि बतलाते है। तात्पर्य यह है कि विवेकविकल लोग अनेक प्रकार से ऐसे वचनो का प्रयोग करते है जो हिसा आदि अनर्थों के कारण है और हिसाकारी वचन मृषावाद मे ही गर्भित है, भले ही वे किसी उद्देश्य से बोले गये। अत सत्य के उपासको को ऐसा प्रयोग नही करना चाहिए जिससे आरम्भ–समारम्भ आदि को उत्तेजना मिले या हिंसा हो।

Elaboration—In this manner, they tell sparrow-catchers, fishermen, hunters and thieves various locations and methods of committing violence In brief those who are not discriminating about violent activities, they use suchlike words which result in causing violence Such words fall in the category of falsehood even if they might have been uttered for some other purpose So the followers of truth should not use such words which may inspire violence to living beings in any form

पाप कार्य मे सहभागी बनने वाले **BECOMING PARTNERS IN VIOLENT SINFUL ACTS**

५५. जंताइं विसाइं मूलकम्मं आहेवण–आविंधण–आभिओग–मंतोसहिप्पओगे चोरिय–परदार–गमण–बहुपावकम्मकरणं उक्खंधे गामघाइयाओ वणदहण–तलागभेयणाणि बुद्धिविसविणासणाणि वसीकरणमाइयाइ भय–मरण–किलेसदोसजणणाणि भावबहुसकिलिट्ठमलिणाणि भूयघाओवघाइयाइं सच्चाइं वि ताइ हिंसगाइं वयणाइं उदाहरंति ।

५५ मारण, मोहन, उच्चाटन आदि के लिए यन्त्र आदि लिखकर देने या पशु–पक्षियो को पकडने वाले यन्त्रो, सखिया आदि विषो तथा गर्भपात आदि के लिए जडी-बूटियो के प्रयोग, मन्त्र आदि द्वारा नगर मे क्षोभ या विद्वेष उत्पन्न कर देने अथवा मन्त्रबल से धनादि पाने के उपाय, द्रव्य और भाव से वशीकरण मत्रो एवं औषधियो के प्रयोग, चोरी, परस्त्रीगमन आदि के बहुत–से पापकर्मो के उपदेश देने तथा छल से शत्रुसेना की शक्ति को नष्ट करना अथवा उसे कुचल देने के, जगल मे आग लगा देने, तालाब आदि जलाशयो को सुखा देने के, गाँव को नष्ट कर देने के, बुद्धि के विषय–विज्ञान आदि अथवा बुद्धि एव स्पर्श, रस आदि विषयो के विनाश के, वशीकरण आदि के भय, मरण, क्लेश और दु ख उत्पन्न करने वाले उपाय बताते है। ऐसे वचन जीवो को सक्लेश पहुँचाने वाले है। जीवो का घात और उपघात करने वाले होने से मृषावाद की श्रेणी मे ही आते है।

55. Some people provide Yantras in writing for killing, enticing, bewildering others They give yantra for catching birds and animals. They use herbs for preparing medicines for abortion They create terror or hatred in the town with mantras They tell methods of collecting or usurping money through mantras They use mantra and medicines to enslave others They educate people in art of stealing, sex and other suchlike sinful activities They tell the methods of reducing the strength of the army of the enemy through deceitful means or that of crushing it They tell methods of setting forest on fire, of drying tanks and other water resources, of destroying villages and of adversely affecting the field of intellect They tell methods of creating fear, disturbance and trouble to others and also of overpowering others Such yantras, mantras and words fall in the category of falsehood since they result in trouble and violence to the living beings

विवेचन उक्त वर्णन का सार यही है कि सत्यवादी की वाणी अमृतमयी और सबका कल्याण करने वाली होनी चाहिए। उससे किसी का अकल्याण व अहित न हो।

इस तथ्य को अधिक स्पष्ट करने के लिए सूत्रकार ने प्राणियो का उपघात करने वाली भाषा का विवरण भी दिया है। यथा–मत्र, तन्त्र, यन्त्र आदि के प्रयोग बतलाकर किसी का अनिष्ट करना, चोरी एव परस्त्रीगमन सम्बन्धी उपाय बतलाना, ग्रामघात की विधि बतलाना, जगल को जलाने का उपदेश देना आदि। ऐसे समस्त वचन हिसोत्तेजक अथवा हिंसाजनक होने के कारण विवेकवान् पुरुषो के लिए त्याज्य है।

Elaboration—The essence of the above description is that the language of followers of truth should be sweat and for the welfare of every one There should not be any element of disaster in it for any one.

In order to further clarify this fact, the author has mentioned in detail the language that causes violence to living beings For instance to cause harm to others by telling suchlike mantra and yantras, to tell methods of stealing or engaging in sex, to tell methods of destroying villages, setting forest on fire—all such words which cause violence, inspire violence should be totally avoided by followers of truth and discrimination

हिंसक उपदेश–आदेश VIOLENT LESSONS AND ORDERS

५६. पुट्ठा वा अपुट्ठा वा परतत्तियवावडा य असमिक्खियभासिणो उवदिसंति, सहसा उट्टा गोणा गवया दमंतु, परिणयवया अस्सा हत्थी गवेलग–कुक्कुडा य किज्जंतु, किणावेह य विक्केह पहय य सयणस्स देह पियह।

दासी–दास–भयग–भाइल्लगा य सिस्सा य पेसगजणो कम्मकरा य किंकरा य एए सयणपरिजणो य

कीस अच्छंति ! भारिया भे करितु कम्मं, गहणाइं वणाइं खेत्तखिलभूभिवल्लराइं उत्तण–घणसंकडाइं डज्झंतु–सूडिज्जंतु य रुक्खा, भिज्जंतु जंतभंडाइयस्स उवहिस्स कारणाए बहुविहस्स य अट्ठाए उच्छू दुज्जंतु, पीलिज्जंतु य तिला।

पयावेह य इट्टकाउ मम घरट्ठयाए, खेत्ताइं कसह कसावेह य, लहुं गाम–आगर–णगर–खेड–कब्बडे णिवेसेह, अडवीदेसेसु विउलसीमे पुप्फाणि य फलाणि य कंदमूलाइं कालपत्ताइं गिण्हेह, करेह संचयं परिजणट्ठयाए साली वीही जवा य लुच्चंतु मलिज्जंतु उप्पणिज्जंतु य लहु य पविसंतु य कोट्ठागारं ।

५६. जो अन्य प्राणियो को सन्ताप–पीडा पहुँचाने मे सलग्न होते है, वे अविचारपूर्वक भाषण करने वाले लोग किसी के पूछने पर और (कभी–कभी) बिना पूछे ही सहसा (अपनी पटुता प्रकट करने के लिए) दूसरो को इस प्रकार का उपदेश देते है कि–ऊँटो, बैलो और जगली पशु रोझ आदि को इस प्रकार दमन करो। परिणत आयु वाले इन अश्वो को, हाथियो को, भेड–बकरियो को या मुर्गों को खरीदो, खरीदवाओ, इन्हे बेच दो, पकाने योग्य वस्तुओ को पकाओ, स्वजन को दे दो, मदिरा आदि पीने योग्य पदार्थों का पान करो।

दासी, दास–नौकर, भृतक–भोजन देकर रखे जाने वाले सेवक, भागीदार, शिष्य, कर्मकर–कर्म करने वाले, किंकर–क्या करूँ ? इस प्रकार पूछकर कार्य करने वाले, ये सब प्रकार के कर्मचारी तथा ये स्वजन और परिजन क्यो–कैसे (निकम्मे–निठल्ले) बैठे हुए है। अर्थात् उनसे काम क्यो नही लेते ? ये भरण–पोषण करने योग्य है अर्थात् इनका वेतन आदि चुका देना चाहिए। इनसे अपना काम करवाओ। ये सघन वन, खेत, बिना जोती हुई भूमि, जो उगे घास–फूस से भरे है, इन्हे जला डालो, घास कटवाओ या उखडवा डालो, यन्त्रो–घानी, गाडी आदि भाड–कुण्डे आदि उपकरणो के लिए और नाना प्रकार के प्रयोजनो के लिए वृक्षो को कटवाओ, तिलो को पेलो–इनका तेल निकालो।

घर बनाने के लिए ईटो को पकाओ, खेतो को जोतो अथवा जुतवाओ, जल्दी–से ग्राम, आकर, नगर, खेडा और कर्बट आदि को बसाओ। प्रदेश मे विस्तृत सीमा वाले गाँव आदि बसाओ। पुष्पो और फलो को तोडने या ग्रहण करने का समय हो चुका है, ऐसे कन्दो और मूलो को ग्रहण करो। अपने परिजनो के लिए इनका सचय करो। शाली–धान, ब्रीहि–अनाज आदि और जौ को काट लो। इन्हे मलो अर्थात् मसलकर दाने अलग कर लो। पवन से साफ करो–दानो को भूसे से पृथक् करो और शीघ्र कोठो और घरो मे भर लो।

56. There are people who are engaged in causing trouble and violence to other living beings They speak without proper thought They tell on asking and sometimes even suddenly (in order to exhibit their intelligence) to others that they should in such and such manner control camel, bullocks and wild horse They advise them that they should purchases horse, elephants, sheep and goat They advise them to get such animals purchased or sold They further advise them to cook the things worthy of cooking and to give them to their relatives They advise them to take intoxicants such as wine

They ask them why the servants, employees, partners, pupils, workers, people of their own family are sitting idle and why don't you get work from them They advise them to pay them off They ask them to get work done from the said employees They advise them to set thick forest, unploughed land that has grass on it, on fire They counsel them to get cut or pulled the grass They ask them to get cut the trees for preparing various machines or vehicles They advise them to crush seasame-seeds, and get oil from it

They advise them to set brick-kiln on fire for getting bricks to construct house They ask them to plough fields or get them ploughed. They ask them to get village, town or colony inhabited soon They ask them to get villages with large boundaries settled They tell them that it is the right time to pluck and collect flowers and fruits and that they should collect Kands and mools (the vegetables that have infinite number of living beings) They suggest that such things should be stored for relatives They advise them to harvest paddy, barley and other crops, winnow them and to procure grains out of them by separating the husk from the corn They ask them to store grains soon

विवेचन प्रस्तुत पाठ मे यह प्रतिपादन किया गया है कि विवेकविहीन जन किसी के पूछने पर अथवा न पूछने पर भी, अपने स्वार्थ के लिए अथवा बिना स्वार्थ भी केवल अपनी चतुरता, व्यवहारकुशलता और प्रौढता प्रकट करने के लिए दूसरो को ऐसा आदेश-उपदेश दिया करते है, जिससे अनेक प्राणियो को पीडा उपजे, परिताप पहुँचे, उनकी हिसा हो, विविध प्रकार का आरम्भ-समारम्भ हो।

सर्वविरति के आराधक साधु-साध्वी तो ऐसे वचनो का प्रयोग कभी नही करते है, किन्तु देशविरति के आराधक श्रावको एव श्राविकाओ को भी ऐसे निरर्थक वाद से सदैव बचने की सावधानी रखनी चाहिए।

Elaboration—In the present lesson it has been mentioned that the persons who do not have sense of discrimination advise on one's asking and sometimes even without asking for their selfish purpose and even without such a purpose simply to exhibit their expertise in worldly behaviour and experience that they should engage in such activities which cause violence to living beings in different forms

Monks and nuns never use such a language, as they have totally discarded worldly activities, which cause violence to any living beings. Even household followers of religious discipline (Shravaks) observing vows of the householder should always avoid suchlike useless talk

५७. अप्पमहउक्कोसगा य हम्मंतु पोयसत्था, सेण्णा णिज्जाउ, जाउ डमरं, घोरा वट्टंतु य संगामा पवहंतु य सगडवाहणाइं, उवणयणं चोलगं विवाहो जण्णो अमुगम्मि य होउ दिवसेसु करणेसु मुहुत्तेसु णक्खत्तेसु तिहिसु य।

अज्ज होउ ण्हवण मुइय बहुखज्जपिज्जकलियं कोउगं विण्हावणगं, सतिकम्माणि कुणह ससि–रवि–गहोवराग–विसमेसु सज्जणपरियणस्स य णियगस्स य जीवियस्स परिरक्खणट्ठयाए पडिसीसगाइं य देह, दह य सीसोवहारे विविहोसहिमज्जमस–भक्खण्ण–पाण–मल्लाणुलेवणपईवजलि–उज्जलसुगंधि–धूवावगार–पुप्फ–फल–समिद्धे पायच्छित्ते करेह, पाणाइवायकरणेणं बहुविहेणं विवरीउप्पायदुस्सुमिण–पावसउण–असोमग्गहचरिय–अमगल–णिमित्त–पडिघायहेउं, वित्तिच्छेय करेह, मा देह किंचि दाणं, सुट्टु हओ सुट्टु हओ सुट्टु छिण्णो भिण्णोत्ति उवदिसता।

एवविहं करेति अलिय मणेण वायाए कम्मुणा य अकुसला अणज्जा अलियाणा अलियधम्म–णिरया अलियासु कहासु अभिरमंता तुट्टा अलियं करेत्तु होइ य बहुप्पयारं।

५७ कुछ लोग दूसरो को इस प्रकार के आदेश–उपदेश आदि करते है जैसे–छोटे, मध्यम और बडे नौका–दल या नौका–व्यापारियो या नौका–यात्रियो के समूह को नष्ट कर दो। युद्धादि के लिए सेना प्रयाण करे, सग्राम भूमि मे जाये, घोर युद्ध प्रारम्भ हो। गाडी और नौका आदि वाहन चले, उपनयन (यज्ञोपवीत) सस्कार, शिशु का मुण्डन–सस्कार, विवाह- सस्कार, यज्ञ-ये सब कार्य--अमुक दिनो मे, करणो मे, मुहूर्त्तो मे, नक्षत्रो मे और तिथियो मे होने चाहिए।

आज सौभाग्य के लिए स्नान करना चाहिए अथवा सौभाग्य एव समृद्धि के लिए प्रमोद-स्नान कराना चाहिए–आज प्रमोदपूर्वक बहुत विपुल मात्रा मे खाद्य पदार्थो एव मदिरा आदि पेय पदार्थो के भोज के साथ सौभाग्य वृद्धि अथवा पुत्रादि की प्राप्ति के लिए वधू आदि को स्नान कराओ तथा (डोरा बॉधना आदि) कौतुक करो। सूर्यग्रहण, चन्द्रग्रहण और अशुभ स्वप्न के फल का निवारण करने के लिए विविध मत्रादि से सस्कारित जल से स्नान और शान्ति कर्म करो। अपने कुटुम्बीजनो की अथवा अपने जीवन की रक्षा के लिए कृत्रिम–आटे आदि से बनाये हुए प्रतिशीर्षक सिर की आकृति बनाकर चण्डी आदि देवियो की भेंट चढाओ। अनेक प्रकार की औषधियो, मद्य, मॉस, मिष्ठान्न, अन्न, पान, पुष्पमाला, चन्दन–लेपन, उबटन, दीपक, सुगन्धित धूप, पुष्पो तथा फलो से परिपूर्ण विधिपूर्वक बकरा आदि पशुओ के सिरो की बलि दो। विविध प्रकार की हिसा करके अशुभ–सूचक उत्पात, प्रकृतिविकार, दु स्वप्न, अपशकुन, क्रूर ग्रहो के प्रकोप, अमगल सूचक अगस्फुरण–(अवयवो का फडकना) आदि के फल को नष्ट करने के लिए प्रायश्चित्त करो। अमुक की आजीविका नष्ट कर दो। किसी को कुछ भी दान मत दो। वह मारा गया, यह अच्छा हुआ। उसे काट दिया, यह ठीक हुआ। उसके टुकडे–टुकडे कर डाले, यह बहुत अच्छा हुआ।

इस प्रकार किसी के न पूछने पर या पूछे जाने पर भी आदेश-उपदेश अथवा कथन करते हुए, मन-वचन-काय से हिंसानुमोदी मिथ्या आचरण करने वाले अनार्य, अकुशल, मिथ्यामतों का अनुसरण करने वाले मृषा भाषण करते है। ऐसे मिथ्या धर्म मे निरत लोग (अज्ञान मे डूबे) मिथ्या कथाओ मे रमण करते हुए, नाना प्रकार से असत्य का सेवन करके सन्तोष का अनुभव करते है।

57. Some persons order others in this manner They ask that chain of small, medium and large, boats may be destroyed, all the traders doing trade through boats be destroyed or the persons travelling in boats be destroyed They order the army to move for war, to go to the battle-field and to start a fierce battle They order that the vehicles and boats be started They direct that different ceremonies such as wearing of holy thread, the hair-cutting of the newly born child, the marriage, the yajna (fire-sacrifice) be performed on such particular days at such and such auspicious time, at such and such constellation and on such days of Indian calendar

They say that one should take bath today for good luck or one should get others bathed for good future and prosperity They suggest that the daughter-in-law should be directed to take bath today for prosperity or for having a son and the like, food be prepared happily in plenty and enjoyed with intoxicants like wine and drinks They advise that in order to remove the evil effect of solar eclipse, lunar eclipse and bad dream one should take bath with the water affected with the influence of various mantras They ask that for the protection of oneself and the members of the family, shapes of heads be made with the flour and sacrificed before goddess Chandi They suggest that the heads of goats and other animals decorated with many types of herbs, intoxicants, meat, sweats, garlands, sandal paste, lighted lamp, fragrant incense and fruit be sacrificed in the manner narrated by them They advise that the affect of bad omens like bad dreams, dreadful planet and shaking of limbs be avoided by performing activities involving violence to living beings suggested by them as a repentance They direct that means of livelihood of a particular person be destroyed They direct that nothing should be given in charity to any one They declare that it is good that such and such person has been killed or chopped off or has been reduced to pieces

Thus while giving such orders at any one's asking or without it, these uncivilised people who are incompetent and follow wrong faith, while appreciating violent activities and wrong conduct, follow falsehood in their speech Such persons lacking true knowledge, narrate untrue stories and feel satisfied by following various types of wrong activities

विवेचन प्रस्तुत सूत्र मे वर्णित हिंसा के विविध स्वरूपो का आदेश–उपदेश देने वालो को अज्ञानी, मिथ्यात्वी और अपनी आत्मा का अध पतन करने वाले बताये है। कोई युद्ध आदि का उपदेश हो, या ग्रह शान्ति आदि के लिए यज्ञ, पशु बलि या शान्तिकर्म आदि हो, जिसमे भी जीवो की घात होती हो, वे सभी वचन और कार्य हिंसा के साधन होने से या जिनसे हिंसा की प्रेरणा व हिंसा को उत्तेजना मिलती है, वह मिथ्या भाषण है।

कुछ अज्ञानी ऐसा मानते है कि जीवित बकरे या भैसे की बलि चढाने मे पाप है, पर आटे के पिण्ड से उसी की आकृति बनाकर बलि देने मे कोई बाधा नही है। किन्तु यह क्रिया भी घोर हिंसा का कारण होती है। कृत्रिम बकरे मे बकरे का सकल्प होता है, अतएव उसका वध बकरे के वध के समान ही पापोत्पादक है। जैन ग्रन्थ मे काल शौकरिक का उदाहरण जो कुएँ मे बैठा अपने शरीर के मैल से भैसे बनाकर–मैल के पिण्डो मे भैंसो का सकल्प करके उनकी हत्या करता था। परिणामस्वरूप उसे नरक मे जाना पडा।

मिथ्या भाषण के विविध स्वरूपो का कथन करने के पश्चात् अब शास्त्रकार मृषावाद के भयानक फल का वर्णन करते है।

Elaboration—In the present aphorism, it has been mentioned that the persons who suggest or direct various type of violent activities, are ignorant of truth They are of wrong faith and they adversely affect their soul Whether the order be for engaging in war, for animal sacrifice in yajna to bring peace, if there is killing or hurting of living being in it than all such words or acts are false speech since they inspires violence

Some believe that it is a sin to sacrifice a living he-goat or a he-buffalo But there is no harm in sacrificing such a shape made of kneaded flour But in fact such an act is cause of dreadful violence (himsa) In the artificial he-goat, one has in his mind the real he-goat So by sacrificing it, he collects the same sin as he collects when he sacrifices a living he-goat In Jain scriptures there is the example of Kaal butcher He while in a well was collecting the moist dust from his body and preparing he-buffaloes with it and was killing them considering in his mind that he was killing he-buffaloes As a result therefore, he was re-born in hell and suffers for his sins there

After narrating false speech of various types, the author describes the dreadful results of it

मृषावाद का भयानक फल DREADFUL RESULTS OF FALSEHOOD

५८. तस्स य अलियस्स फलविवागं अयाणमाणा वड्ढेंति महब्भय अविस्सामवेयणं दीहकाल बहुदुक्खसंकडं णरयतिरियजोणिं।

तेण य अलिएण समणुबद्धा आइद्धा पुणब्भवधयारे भमंति भीमे दुग्गइवसहिमुवगया। ते य दीसंति इह दुग्गया दुरता परवस्सा अत्थभोगपरिवज्जिया असुहिया फुडियच्छवि–बीभच्छ–विवण्णा, खरफरुसविरत्तज्झामज्झुसिरा, णिच्छाया, लल्लविफलवाया, असक्कयमसक्कया अगंधा अचेयणा दुभगा

अकंता काकस्सरा हीणभिण्णघोसा विहिंसा जडबहिरंधया य मम्मणा अकंतविकयकरणा, णीया णीयजणणिसेविणो लोयगरहणिज्जा भिच्चा असरिसजणस्स पेस्सा दुम्मेहा लोय–वेय–अज्झप्पसमयसुइवज्जिया, णरा धम्मबुद्धिवियला।

अलिएण य तेणं पडज्झमाणा असंतएण य अवमाणणपिट्ठिमंसाहिक्खेव–पिसुण–भेयण–गुरुबंधव–सयण–मित्तवक्खारणाइयाइं अब्भक्खाणाइं बहुविहाइं पावेंति अमणोरमाइं हिययमणदूमगाइं जावज्जीवं दुरुद्धराइं अणिट्ठ–खरफरुसवयण–तज्जण–णिब्भच्छणदीणवयणविमला कुभोयणा कुवाससा कुवसहीसु किलिस्संता णेव सुहं णेव णिव्वुइं उवलभंति अच्चंत–विउलदुक्खसयसंपलित्ता।

५८. पूर्वोक्त प्रकार के मिथ्या भाषण के कटु फल–विपाक से अनजान, वे मृषावादी जन नरक और तिर्यंच योनि मे परिभ्रमण की वृद्धि करते है, जहाँ सतत–भय महाभय है, जिनमे विश्रामरहित–लगातार वेदना भुगतनी पडती है और जो दीर्घकाल तक बहुत दु खो से परिपूर्ण है।

(नरक–तिर्यंचयोनियो मे लम्बे समय तक घोर दु खो का अनुभव करके शेष रहे कर्मो को भोगने के लिए) वे मृषावादी लोग भयकर पुनर्भव जन्म–मरण के अन्धकार मे भटकते है। उस पुनर्भव (मनुष्य भव) मे भी दुर्गति प्राप्त करते है, जिसका अन्त बडी कठिनाई से होता है। वे मिथ्यावादी मनुष्य पुनर्भव (इस भव) मे भी पराधीन होकर जीवन यापन करते है। इस भव मे उन्हे न तो भोगोपभोग का साधन अर्थ (धन) प्राप्त होता है और न वे मनोज्ञ भोगोपभोग ही प्राप्त कर सकते है। वे (सदा) दु.खी रहते है। उनकी चमडी बिवाई, दाद, खुजली आदि से फटी रहती है, वे डीलडौल से भयानक दिखाई देते है और कुरूप होते है। कठोर स्पर्श वाले, सदा बेचैन, मलीन एव सारहीन शरीर वाले होते है। शोभाकान्ति से रहित होते है। वे न तो स्पष्ट उच्चारण कर सकते है और न उनकी वाणी का कोई प्रभाव या सार्थकता होती है। वे सस्काररहित और सत्कार आदि से रहित होते है, सर्वत्र तिरस्कार को प्राप्त करते है। उनका शरीर दुर्गन्ध से व्याप्त, विशिष्ट चेतना से विहीन होता है, वे अभागे, अकान्त–अनिच्छनीय–अकमनीय, कौए के समान अनिष्ट स्वर वाले, धीमी और फटी हुई आवाज वाले, दूसरो के द्वारा अनेक प्रकार से सताये जाने वाले, जड, बधिर, अधे, गूगे और तोतली बोली बोलने वाले, अमनोज्ञ तथा विकृत इन्द्रियो वाले, जाति, कुल, गोत्र तथा कार्यो से नीच होते है। उन्हे नीच लोगो का सेवक–दास बनना पडता है। वे लोक मे निन्दा व अपमान के पात्र होते है, उन्हे सर्वत्र तिरस्कार एव धिक्कार प्राप्त होता है। वे चाकर होते है और अपने से भी निकृष्ट आचार–विचार वाले लोगो के आज्ञापालक या द्वेषपात्र होते है। वे दुर्बुद्धि होते है। अत महाभारत, रामायण आदि लौकिक शास्त्र, ऋग्वेद, सामवेद आदि वेद, योगशास्त्र, कर्मग्रन्थ आदि अध्यात्म शास्त्रो एव जैन–बौद्ध आदि आगमो या सिद्धान्तो के श्रवण एव ज्ञान से रहित होते है। वे धर्मबुद्धि से रहित होते है।

उस अशुभ या अनुपशान्त असत्य की अग्नि से जलते हुए वे मृषावादी जीवन मे अपमान, निन्दा, आक्षेप–दोषारोपण, चुगली, परस्पर की फूट अथवा प्रेम–सम्ब धो का भग आदि विषम स्थितियो को प्राप्त करते है। गुरुजनो, बन्धु–बान्धवो, स्वजनो तथा मित्रजनो के कठोर वचनो से अनादर पाते है। अमनोरम, हृदय और मन को सन्ताप देने वाले तथा जिनका प्रतीकार सम्पूर्ण जीवन मे भी कठिनाई से

हो सके या न हो सके ऐसे अनेक प्रकार के मिथ्या आरोपो को वे प्राप्त करते है। अनिष्ट–अप्रिय, तीक्ष्ण, कठोर और मर्मवेधी वचनो से तर्जना, झिडकियो और धिक्कार–तिरस्कार के कारण दीन मुख एव खिन्न चित्त वाले होते है। वे मृषावाद के पाप के फलस्वरूप उन्हे न तो अच्छा भोजन प्राप्त होता है, न पहनने–ओढने के लिए अच्छे वस्त्र ही नसीब होते है। उन्हे निकृष्ट गन्दी बस्ती मे क्लेश पाते हुए अत्यन्त एव विपुल दु खो की अग्नि मे जलना पडता है। उन्हे न तो शारीरिक सुख प्राप्त होता है और न ही मानसिक शान्ति मिलती है।

58. The common men ıs ıgnorant about the dreadful result of wrong talk Such persons makıng false utterances ıncrease their wanderıng ın hellısh and anımal state of exıstence They have to remaın there ın contınuous state of fear They cannot take any rest there They have to undergo sufferıng They have to remaın for a long tıme ın such a condıtıon, whıch ıs full of troubles

(After goıng through dreadful troubles of hellısh and anımal lıfe for a long perıod, ın order to suffer the fruıts of remaınıng bad karma), these false speakıng people wander about ın the dark vıcıous cırcle of lıfe and death Even ın the state of human exıstence, theır condıtıon ıs wretched and they pass through that perıod wıth great dıfficulty Even ın that lıfe those people lead the lıfe of slavery They do not have requısıte means to enjoy lıfe They remaın always ın trouble There skın remaıns polluted and torn due to varıous dıseases such as ıtchıng They are unattractıve ın theır appearance There touch ıs also not soothıng They remaın always restless, dırty and ımpotant They are devoıd of beauty They cannot speak clearly Theır words are not effectıve They are uncıvılısed and they do not command any respect They are hated everywhere Theır body gıves out foul smell and theır level of conscıousness ıs also pretty low They are unlucky, ugly and do not have any attractıve feature Theır voıce ıs dıslıked by every one, lıke that of a crow Theır voıce ıs very low and indıstınct They are torturı ed by others ın dıfferent ways They are dull, hard of hearıng, blınd dumb and theır words are not clear Theır sense organs are not ın proper proportıon They belong to mean class of famıly and status They do actıvıtıes of backward category They have to serve mean people They are looked wıth contempt by the people They are dıshonoured and turned out from every place They serve those people who from theır thought-actıvıty and conduct are mean Theır approach ıs bad They do not have any knowledge of famous epıcs such as Ramayan, Mahabharat and others, as well as spırıtual texts lıke

Vedas, Yogashastra the Agams and the principles laid therein They are without any scriptural knowledge

Passing through such a wretched disturbed state, those followers of falsehood, face dishonour, disrespect, and accusations in their life They cannot maintain cordial relations They back-bite and face dreadful result thereof They are badly treated by teachers, relatives and friends Many false accusations are levelled against them, which cause great mental agony and which cannot be washed off in the entire life or could be removed only with great difficulty Since they have to listen sharp, harsh, unlovable, words, condemnation, they remain with dulled face They do not get good clothes to wear They have to live in a dirty colony facing extreme trouble and pain They have neither physical happiness nor mental peace

विवेचन प्रारम्भ मे कहा गया है कि मृषावाद के फल को नही जानने वाले अज्ञानी जन मिथ्या भाषण करते है। वास्तव मे जिनको असत्य भाषण के यहाँ प्ररूपित लोमहर्षक फल का वास्तविक ज्ञान नही होता है अथवा जो जानकर भी उस पर पूर्ण विश्वास नही करते, वे भी अनजान की श्रेणी मे ही गिने जाते है।

असत्य भाषण को साधारण जन सामान्य या हल्का दोष मानते है और साधारण-सी स्वार्थसिद्धि के लिए, दूसरो को धोखा देने के लिए क्रोध से प्रेरित होकर, लोभ के वशीभूत होकर, भय के कारण अथवा हास्य-विनोद मे लीन होकर असत्य बोलते रहते है। उन्हे इसके दुष्परिणाम की चिन्ता नही होती या इतने कटु दुष्परिणामो का ज्ञान भी नही होता, इसलिए शास्त्रकार ने यहाँ बतलाया है कि मृषावाद का फल इतना गुरुतर एव भयकर होता है कि नरकगति और तिर्यचगति के भयानक कष्टो को दीर्घकाल पर्यन्त भोगने के पश्चात् भी उनसे पिण्ड नही छूटता। उसका फल जो शेष रह जाता है उसके प्रभाव से मृषावादी जब मनुष्यगति मे उत्पन्न होता है तब भी वह अत्यन्त दुरवस्था का भागी होता है। दीनता, दरिद्रता, भाग्यहीनता आदि उसका पीछा नही छोडती। वह हर प्रकार के सुख साधनो से तो वचित रहता ही है। शारीरिक दृष्टि से भी रोगी घृणित और दूसरो के तिरस्कार का पात्र होता है।

मृषावाद वाणी व्यवहार से होता है, अत मृषावादी की बोली अस्पष्ट व तुतलाती व कौए जैसी कर्ण कटु होती है। जब वे बोलते है तो सभी को अप्रिय तथा अरुचिकर लगती है। उनमे से कई तो गूँगे ही होते है।

Elaboration—It has been said in the beginning that those who do not know the consequences of false speech, they make false utterances In fact those who are ignorant about the results of falsehood as mentioned above, or those who even after having such knowledge, do not have faith in it, they also belong to this category

The common man considers that to make a false statement is a minor fault So they tell lie for minor selfish gain, for deceiving others, under influence of anger or greed, out of fear or in a fit of laughter or minor

enjoyment They do not worry about its bad consequences They do not have knowledge about the dreadful result So the author has stated that the result of falsehood is so harsh and dreadful that even after suffering after a long period in hell and in animal state, one is not able to wipe it off completely Due to the residual karma, when such a person takes birth as a human being, his condition there also is extremely sad He remains poor, unlucky seeking mercy He remains devoid of means of enjoyment Even from the point of view of physical structure he remains sick and subject of hatred and contempt

Falsehood is expressed through speech So the talk of such as person is indistinct and unpleasant to the ears as is of a crow When he speaks, it is disliked by every one, nobody has any interest in it Many such person are born dumb

फलविपाक की भयकरता **DREADFULNESS OF CONSEQUENCES**

५९. (क) एसो सो अलियवयणस्स फलविवाओ इहलोइओ परलोइओ अप्पसुहो बहुदुक्खो महब्भओ बहुरयप्पगाढो दारुणो कक्कओ असाओ वास-सहस्सेहिं मुच्चइ, ण अवेयइत्ता अत्थि हु मोक्खोत्ति।

एवमाहसु णायकुलणदणो महप्पा जिणो उ वीरवरणामधेज्जो कहेसि य अलियवयणस्स फलविवागं।

५९. (क) मृषावाद का यह (पूर्वोक्त) इस लोक और परलोक सम्बन्धी फलविपाक है। इस फलविपाक मे सुख का अभाव है और दु खो की ही बहुलता है। यह अत्यन्त भयानक है और प्रगाढ कर्मो के बन्ध का कारण है। यह दारुण है और असातारूप है। हजारो-हजारो वर्षो मे इससे छुटकारा मिलता है। फल को भोगे बिना इस पाप से मुक्ति नही मिलती-इसका फल भोगना ही पडता है।

ज्ञातकुलनन्दन, महान् आत्मा वीरवर महावीर नामक जिनेश्वर देव ने मृषावाद का यह फल प्रतिपादित किया है।

59 [a]. This is the result of falsehood in the current life-span and in the next life There is absence of happiness in it, and the troubles are in abundance It is extremely dreadful It is the cause of thick bondage of karmas It is very troublesome and harsh One has to bear its sad result for thousands of years This sin cannot be removed without passing through its consequences One has to suffer its fruits

Lord Mahavir who was born in Jnatri clan has mentioned these consequences of falsehood

विवेचन प्रस्तुत पाठ मे मृषावाद के कटु फलविपाक का उपसहार करते हुए तीन बातो का विशेष रूप से उल्लेख किया गया है-

(१) असत्य भाषण का जो पहले और यहाँ फल निरूपित किया गया है, वह सूत्रकार ने अपनी स्वमति कल्पना से नही किया है किन्तु ज्ञातकुलनन्दन भगवान् महावीर, सर्वज्ञ वीतराग जिन के द्वारा प्ररूपित है। यह लिखकर शास्त्रकार ने इस समग्र कथन की प्रामाणिकता की है।

अर्थात् जिनेन्द्रो ने जो कहा है वही सत्य है और उस कथन मे शका के लिए कुछ भी स्थान नही है।

(२) सूत्रकार ने दूसरा तथ्य यह प्रकट किया है कि मृषावाद के फल को सहस्रो-सहस्रो वर्षों तक भोगना पडता है। 'सहस्र' शब्द मे बहुवचन का प्रयोग करके सूत्रकार ने दीर्घकालिक फलभोग का अभिप्राय प्रकट किया है।

(३) तीसरा तथ्य यहाँ फल की अवश्यमेव उपभोग्यता कही है। असत्य भाषण का दारुण, दु खमय फल भोगे बिना जीव को उससे छुटकारा नही मिलता। क्योकि वह विपाक **'बहुरयप्पगाढो'** होता है, अर्थात् अलीक भाषण से जिन कर्मों का बध होता है, वे बहुत गाढे, चिकने होते है, अतएव विपाकोदय से भोगने ही पडते है।

Elaboration—In the present lesson three things have been specially mentioned while concluding the talk on bitter consequences of falsehood.

(1) Whatever has been mentioned earlier or here, as the result of falsehood is not based on the flight of imagination of the author. It is, however, mentioned by omniscient Bhagavan Mahavir belonging to Jnatri clan Thus the writer has clarified that this version is absolutely true and is of one who has actually seen it

Whatever is said by the omniscient is totally true and there is not any scope of doubt in it

(2) The second fact that the writer has highlighted is that one has to bear the consequences of falsehood for thousands of years. By using the words 'thousand' in plural form, the writer has clarified that its consequences are suffered for a very long period.

(3) The third conclusion is that one has to bear the consequences of falsehood essentially One can not go scot free without undergoing the dreadful, troublesome consequence of his false speech. That result is 'haturayappagadho' It means that the bondage due to false utterances is extremely thick and tenacious So when it fructifies, one has to bear its consequences

उपसंहार CONCLUSION

५९. (ख) एयं त बिईयं पि अलियवयणं लहुसग–लहु–चवल–भणियं भयंकरं दुहकरं अयसकरं वेरकरगं अरइ–रइ–राग–दोस–मणसंकिलेस–वियरणं अलिय–णियडि–साइजोगबहुलं णीयजणणिसेवियं

णिस्संसं अप्पच्चयकारगं परम–साहुगरहणिज्जं परपीलाकारगं परमकण्हलेस्ससहियं दुग्गइ–विणिवायवड्डणं पुणब्भवकरं चिरपरिचियमणुगय दुरंत।

॥ बिईयं अहम्मदारं समत्तं ॥

५९. (ख) यह दूसरा अधर्मद्वार-मृषावाद है। छोटे क्षुद्र और चचल प्रकृति के लोग इसका प्रयोग करते-अर्थात् महान् एव गम्भीर स्वभाव वाले मृषावाद का सेवन नही करते। यह मृषावाद भयकर है, दु खकर है, अपयशकर है, वैर का कारण है। अरति, रति, राग-द्वेष एव मानसिक सक्लेश को उत्पन्न करने वाला है। यह झूठ, निष्फल कपट और अविश्वास की बहुलता वाला है। नीच जन इसका सेवन करते है। यह नृशस एव घृणा योग्य है। अविश्वासकारक है-मृषावादी के कथन पर कोई विश्वास नही करता। परम साधुजनों द्वारा निन्दनीय है। दूसरो को पीडा उत्पन्न करने वाला और परम कृष्णलेश्या से सयुक्त है। अधोगति मे जाने का कारण है, पुन-पुन जन्म-मरण का कारण है, चिरकाल से परिचित है-अनादिकाल से लोग इसका सेवन कर रहे है, यह अनुगत है-उनके साथ चिपटा है। इसका अन्त कठिनता से होता है अथवा इसका परिणाम दु खमय ही होता है।

॥ द्वितीय अधर्मद्वार समाप्त ॥

59 [b]. Falsehood is the second entrance of adharma (impiety) It is followed by mean people of disturbed childish behaviour In other words those who are cultured and sober, they do not follow falsehood Falsehood is dreadful and troublesome It brings dishonour It becomes the cause of enmity It produces disinterest in self-restraint, interest in uncontrolled behaviour, feelings of attachment and hatred, and also mental disturbance It contains crookedness and distrust in plenty Only mean people follow it It is inhuman and worthy of contempt It is untrustworthy Nobody believes the version of a person who is mrishavadi (habitual in making false utterances) It is condemned by worthy people It causes trouble to others It is full of extremely dark thought activity It is the cause of re-birth in lower region and of taking birth again and again in the mundane world It has been prevalent since beginningless period It has been closely attached to the mundane soul It can be destroyed with great difficulty In other words, its result is always painful

● END OF THE SECOND CHAPTER ●

तृतीय अध्ययन : अदत्तादान
THIRD CHAPTER : ADATTADAN (STEALING)

दूसरे मृषावाद-आस्रवद्वार का निरूपण करने के बाद अब तीसरे अदत्तादान आस्रव का निरूपण किया जाता है। क्योकि मृषावाद और अदत्तादान मे घनिष्ठ सम्बन्ध है। अदत्तादान लेने वाला प्राय असत्य भाषण करता है। यहाँ सर्वप्रथम अदत्तादान का स्वरूप बताया गया है-

After discussing Mrishavad (falsehood) the second Asrava (entrance for the Karmic inflow), the third asrava adattadan (stealing) is going to be discussed here Falsehood and stealing are deeply related to each other One who steals often tells lies Now first of all the ordinary interpretation of adattadan is stated here

अदत्त का परिचय INTRODUCTION OF ADATT

६०. जबू ! तइयं च अदिण्णादाणं हर-दह-मरणभय-कलुस-तासण-परसंतिग-अभेज्ज-लोभ-मूलं कालविसमसंसियं अहोऽच्छिण्ण-तण्हपत्थाण-पत्थोइमइयं अकित्तिकरणं अणज्जं छिद्दमंतर-विहुर-वसण-मग्गण-उस्सवमत्त-प्पमत्त पसुत्त-वंचणक्खिवण-घायणपरं अणिहुयपरिणामं तक्कर-जणबहुमयं अकलुणं रायपुरिस-रक्खियं सया साहु-गरहणिज्जं पियजण-मित्तजण-भेय-विप्पिइकारगं रागदोसबहुल पुणो य उप्पूरसमरसंगामडमर-कलिकलहवेहकरणं दुग्गइविणिवायवड्ढणं-भवपुणब्भवकरं चिरपरिचिय-मणुगय दुरतं। तइयं अहम्मदारं।

६० श्री सुधर्मा स्वामी ने अपने शिष्य जम्बू स्वामी से कहा-हे जम्बू ! तीसरा अधर्मद्वार अदत्तादान है। अदत्त अर्थात् बिना दी गई किसी दूसरे की वस्तु को आदान-ग्रहण करना है। यह अदत्तादान (परकीय पदार्थ का) हरण रूप है। हृदय को जलाने वाला है। मरण-भय रूप अर्थात् मृत्यु के समान भयकर है। पापमय होने से कलुषित है। दूसरो को त्रास उत्पन्न करने वाला है। धनादि मे रौद्रध्यानस्वरूप मूर्च्छा-लोभ ही इसका मूल है। विषमकाल-आधी रात्रि आदि और विषम स्थान-पर्वत, सघन वन आदि स्थानो पर आश्रित है अर्थात् चोरी करने वाले विषम काल और विषम स्थान की तलाश मे रहते है। यह अदत्तादान निरन्तर तृष्णाग्रस्त जीवो को अधोगति की ओर ले जाने वाली बुद्धि देने वाला है। अदत्तादान अपयश का कारण है, अनार्य पुरुष इसका आचरण करते है। आर्य-श्रेष्ठ मनुष्य कभी अदत्तादान ग्रहण नही करते। यह सदा छिद्रगवेषण एव ताक-झाँक की वृत्ति वाला है। उत्सवो के अवसर पर मदिरा आदि के नशे मे बेभान, असावधान तथा सोये हुए मनुष्यो को ठगने वाला, चित्त मे व्याकुलता उत्पन्न करने और घात करने मे तत्पर है तथा अशान्त परिणाम वाले चोरो द्वारा किया जाता है। यह करुणाहीन कृत्य-निर्दयता से परिपूर्ण कार्य है, राजपुरुषो-चौकीदार, कोतवाल, पुलिस आदि द्वारा इसे रोका जाता है। सदैव साधुजनो-सत्पुरुषो द्वारा निन्दित है। प्रियजनो तथा मित्रजनो मे (परस्पर) फूट और अप्रीति उत्पन्न करने वाला है। राग और द्वेष को बढाने वाला है। यह बहुतायत से मनुष्यो को मारने वाले सग्रामो, स्वचक्र-परचक्र सम्बन्धी विपल्वों, लडाई-झगडो, तकरारो एव पश्चात्ताप का कारण है। दुर्गति-पतन मे वृद्धि करने वाला, भव-पुनर्भव-बारम्बार जन्म-मरण कराने वाला, चिरकाल

सदाकाल से परिचित, आत्मा के साथ लगा हुआ–जीवो का पीछा करने वाला और परिणाम में अन्त मे दु खदायी है। यह तीसरा अधर्मद्वार–अदत्तादान ऐसा है।

60. Sudharma Swami told his disciple Jambu Swami, O Jambu ! The third gateway of impiety (adharma) is stealing (adattadan) Adatt means that which has not been given or offered and adaan means to take a thing belonging to others The adattadan is by nature stealing a thing belonging to another person It causes pain It is as dreadful as death It is bad as it is a sin It causes dejection to others Greed, the dangerous attachment to wealth, is at its root It leads one to odd time and place—mountain or thick forest In other words the thieves are always in search of odd times and odd places It is in the conduct of those whose desires never fulfil It creats such a mental attitude in them which leads them to mean state of existence Stealing is the cause of disrespect It is followed by uncivilised people The civilised, cultured people never adopt it It is done by thieves who at the time of festivals search the people who are in unconscious condition due to intoxicating drink and are asleep or not well aware Those thieves are ready to create disturbance in the mind of others and to kill them causing a disturbing environment It is completed in a cruel manner, which is devoid of compassion It is checked by state officials, the security guards, the police and the like It is always condemned by cultured noble people It often becomes the cause of creating friction among friends and relatives It increases feelings of attachment and hatred It is primarily the cause of wars, disturbances, quarrels, fights, exchange of hot words resulting in death of many human beings In the end it results in repentance It increases the possibility of fall in bad state of existence It causes birth and re-birth again and again in the mundane world It is well known since long It is attached to the soul, follows it and ultimately causes trouble This is the nature of adattadan—the third gateway of inflow of karmas

विवेचन जो वस्तु वास्तव मे अपनी नही है परायी है–उसे उसके स्वामी की स्वीकृति या अनुमति के बिना ग्रहण कर लेना अपने अधिकार मे ले लेना अदत्तादान कहलाता है।

शास्त्र मे चार प्रकार के अदत्त कहे गये है- (१) स्वामी द्वारा अदत्त, (२) जीव द्वारा अदत्त, (३) गुरु द्वारा अदत्त, और (४) तीर्थंकर अदत्त। इन चारो मे से प्रत्येक के द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव की अपेक्षा चार–चार भेद होते है। अतएव सब मिलकर अदत्त के १६ भेद है।

महाव्रती साधु और साध्वी सभी प्रकार के अदत्त का पूर्ण रूप से तीन करण और तीन योग से त्याग कर चुके होते है। वे कोई भी वस्तु उसके स्वामी की अनुमति बिना ग्रहण नही करते है। गृहस्थो मे श्रावक और

श्राविकाएँ स्थूल अदत्तादान के त्यागी होते है। जिस वस्तु को ग्रहण करना लोक मे चोरी कहा जाता है और जिसके लिए शासन की ओर से दण्डविधान है, ऐसी वस्तु के अदत्त ग्रहण को **स्थूल अदत्तादान** कहा जाता है।

कालविसमसंसिय–अदत्तादान करने वाले व्यक्ति प्राय विषम काल और विषम देश का सहारा लेते है। अर्थात् रात्रि मे जब लोग निद्राधीन हो जाते है तब अनुकूल अवसर समझकर चोर अपने काम मे प्रवृत्त होते है और चोरी करने के पश्चात् गुफा, बीहड जगल, पहाड आदि विषम स्थानो मे छिप जाते है, जिससे उनका पता न लग सके।

आगम वचन है–**अहोऽ छिन्नतण्ह पत्थाण पत्थो इमइयं**

धनादि की तीव्र तृष्णा, जो कभी शान्त नही होती, ऐसी कलुषित बुद्धि से प्रेरित होकर मनुष्य चौर्य–कर्म मे प्रवृत्त होता है।

चोर की सर्वत्र ऐसी अपकीर्ति होती है कि उसे कही भी प्रतिष्ठा प्राप्त नही होती। उस पर कोई विश्वास नही करता।

चोरी स्पष्टत अनार्य अर्थात् नीच कर्म है। चोरी करने वाला जाति या कुल आदि की अपेक्षा से भले आर्य हो परन्तु कर्म से अनार्य है। इसी कारण सत्पुरुषो द्वारा यह गर्हित–निन्दित है।

अदत्तादान के कारण प्रियजनो एव मित्रो मे भी भेद–फूट उत्पन्न हो जाती है। मित्र शत्रु बन जाते है। प्रेमी भी विरोधी हो जाते है। इसकी बदौलत भयकर नरसहारकारी सग्राम होते है, लडाई–झगडा होता है।

चौर्य कर्म मे लिप्त मनुष्य वर्तमान जीवन को ही अनेक दु खो से परिपूर्ण नही बनाता, अपितु भावी जीवन को भी विविध वेदनाओ से परिपूर्ण बना लेता है एव जन्म–मरण रूप ससार की वृद्धि करता है।

Elaboration—Adattadan is to usurp a thing that belongs to some one other than self without the permission of its owner or without his knowledge

In the scriptures, four types of stealing (adatt) have been mentioned **(1) Swami adatt**—stealing a thing of its owner, **(2) Jiva adatt**—stealing the life or limbs of a Jiva, **(3) Guru adatt**—stealing from or misinterpreting the teacher, and **(4) Tirthankar adatt**—declaring a thing as said by omniscient which is not so or misinterpreting the words of omniscient Each of the said four, has four kinds namely Dravya (according to substance), Kshetra (according to location), Kaal (according to time) and Bhava (according to mental attitude) Thus adatt is of sixteen types

An ascetic observing five great vows avoids all types of stealing (adatt) He does not accept anything without the express permission of its owner Among the householders, Shravaks and Shravikas (the householders who have accepted the vows of a householder devotees), avoid gross stealing Gross adatt (stealing) is that which is considered theft in the world and for which there is criminal procedure for awarding punishment

Kalvısansansıyam—Those engaged ın stealıng often take advantage of odd tıme and odd place It means that at nıght when every one ıs asleep, the thıeves consıderıng ıt as appropriate opportunıty for commıttıng theft, engage themselves ın such an act After commıttıng theft they conceal themselves ın a cave, dense forest or ın hılls so that no one ıs able to trace them

In Agams, the relevant passage ıs 'Atutthı dosen duhı parass lobhavıle ayayaı adattam' It means that a person commıts theft under the deep desıre of money, whıch never cools down and under the ınfluence of adverse mental actıvıty

A thıef ıs dıshonoured everywhere He commands respect nowhere No one has a trust ın hım

Stealıng ıs clearly a contemptıble actıvely A thıef may be of a cıvılısed class and cultured famıly but he ıs a rustıc by vırtue of hıs conduct So the noble people hate hım

Stealıng leads to frıctıon among frıends and relatıves Frıends become enemıes A beloved one becomes the opponent, sometımes dreadful battles resultıng ın heavy loss of lıfe occur because of ıt

अदत्तादान के तीस नाम THIRTY SYNONYMS OF STEALING (ADATTADAN)

६१. तस्स य णामाणि गोण्णाणि होति तीसं, त जहा–(१) चोरिक्कं, (२) परहडं, (३) अदत्त, (४) कूरिकडं, (५) परलाभो, (६) असंजमो, (७) परधणम्मि गेही, (८) लोलिक्क, (९) तक्करत्तणं ति य, (१०) अवहारो, (११) हत्थलहुत्तणं, (१२) पावकम्मकरणं, (१३) तेणिक्क, (१४) हरणविप्पणासो, (१५) आदियणा, (१६) लुंपणा धणाणं, (१७) अप्पच्चओ, (१८) अवीलो, (१९) अक्खेवो, (२०) खेवो, (२१) विक्खेवो, (२२) कूडया, (२३) कुलमसी य, (२४) कंखा, (२५) लालप्पणपत्थणाय, (२६) आससणाय वसण, (२७) इच्छामुच्छा य, (२८) तण्हागेही, (२९) णियडिकम्म, (३०) अप्परच्छंति वि य। तस्स एयाणि एवमाईणि णामधेज्जाणि होति तीसं अदिण्णादाणस्स पावकलिकलुस–कम्मबहुलस्स अणेगाइ।

६१. पूर्व सूत्रो मे जिसके स्वरूप का वर्णन किया गया है, उस अदत्तादान के सार्थक गुणनिष्पन्न–तीस नाम है। वे इस प्रकार है–

(१) चोरिक्कं–चौरिक्य–दूसरे की वस्तु चुराना।

(२) परहड–परहृत–दूसरे से वस्तु छीन लेना या दूसरे की वस्तु दबा लेना।

(३) अदत्त–अदत्त–स्वामी के द्वारा दिये बिना लेना।

(४) कूरिकड–क्रूरकृत–क्रूर लोगो का कर्म या क्रूरतापूर्ण दुस्साहसिक कार्य है।

(५) **परलाभो–परलाभ**–दूसरे के श्रम से उपार्जित वस्तु आदि लेना।

(६) **असंजमो–असयम**–चोरी करने से सयम का विनाश हो जाता है। अथवा मन व इन्द्रियो के असयम को बढाने वाला है।

(७) **परधणंमि गेही–परधन गृद्धि**–दूसरे के धन मे आसक्ति–लोभ–लालच होने पर चोरी की जाती है। यही चोरी का प्रेरक कारण है।

(८) **लोलिक्क–लौल्य**–दूसरो की वस्तु पर लोलुपता।

(९) **तक्करत्तण–तस्करत्व**–तस्कर वृत्ति, लुटेरो का काम है।

(१०) **अवहारो–अपहार**–स्वामी की इच्छा के बिना या धोखा देकर लेना।

(११) **हत्थलहुत्तणं–हस्तलघुत्व**–हाथ की सफाई लोलुपता चोरी को उत्तेजना देती है।

(१२) **पावकम्मकरण–पापकर्मकरण**–चोरी पापकर्म है। इसमे हिंसा, असत्य, निर्दयता, लोभ आदि पाप छिपे है।

(१३) **तेणिक्क–स्तेनिका**–चौर्य कर्म।

(१४) **हरणविप्पणास–हरणविप्रणाश**–परायी वस्तु को नष्ट–भ्रष्ट करना।

(१५) **आदियणा–आदान**–बिना आज्ञा के परधन को लेना।

(१६) **धणाण लुपना–धनलुम्पता**–दूसरे के धन को गायब करना।

(१७) **अप्पच्चओ–अप्रत्यय**–अविश्वास का कारण।

(१८) **अवीलो–अवपीड**–दूसरे को पीडा उपजाना। जिसकी चोरी की जाती है, उसे पीडा अवश्य होती है।

(१९) **अक्खेवो–आक्षेप**–परकीय द्रव्य पर झपटना।

(२०) **खेवो–क्षेप**–दूसरे की वस्तु छीन लेना।

(२१) **विक्खेवो–विक्षेप**–परकीय वस्तु लेकर इधर–उधर कर देना।

(२२) **कूडया–कूटता**–तोल, माप आदि मे बेईमानी करना।

(२३) **कुलमसी–कुलमषि**–कुल को कलकित करने वाला कर्म।

(२४) **कखा–कांक्षा**–दूसरे की वस्तु पर तीव्र इच्छा होना। यही चोरी का मूल कारण है।

(२५) **लालप्पणपत्थणाप–लालपन–प्रार्थना**–लल्लो–चप्पो करके दूसरो से धन आदि लेना। अर्थात् कुछ लोग खुशामद या चापलूसी करके दूसरो का धन हडपते है यह भी चोरी है।

(२६) **आससणाय वसणं–व्यसन**–विपत्तियो का कारण अथवा बुरी आदत है।

(२७) इच्छा–मुच्छा–इच्छा–मूर्च्छा–परकीय धन की इच्छा करना एव उसमे गहरी आसक्ति रखना।

(२८) तण्हा–गेही–तृष्णा–गृद्धि–प्राप्त द्रव्य का मोह और अप्राप्त द्रव्य को पाने की आकाक्षा।

(२९) नियडिकम्म–निकृतिकर्म–कपटपूर्वक या जालसाजी द्वारा किया हुआ कर्म है।

(३०) अपरच्छंति–अपरोक्ष–दूसरो की नजर बचाकर किया जाने वाला कर्म।

इस प्रकार पापकर्म और कलह से मलिन कामो से परिपूर्ण इस अदत्तादान आस्रव के ये तीस नाम और इस प्रकार के अन्य अनेक नाम है।

61. In the scriptures, thirty synonyms of adattadan have been mention They are as under

(1) Chorikkam—To steal a thing belonging to others

(2) Parahadam—To snatch a thing from the other person or not to return it

(3) Adattam—To take a thing without its having been given by the owner

(4) Koorikadam—An act of cruel persons or a daring cruel act

(5) Paralabho—To take a thing, which the other one has got by hard work

(6) Asanjamo—Stealing destroys the spirit of self-restraint and increases non-restraint of senses

(7) Paradhanami Gehi—Theft is committed in view of greed or attachment towards others property

(8) Lolikkam—To look greedily at others things

(9) Takkarattanam—Smuggling, it is a trait of robbers

(10) Avahaaro—To get a thing by deceiving others

(11) Hatth lahuttaam—Greed encourages stealing It is a trick of the hand and is a dirty act

(12) Pavakammakaranam—It is a sin Violence, non-truth, cruelty, greed and the like are at its root

(13) Tennikam—It is an act of thieves

(14) Haran Vippanaas—To destroy others articles

(15) Adiyana—Taking others money without permission

(16) Dhananum Lumpana—Concealing others money

(17) Appachchao—It is a cause of mistrust

(18) **Aveel**—It causes pain to others. The person whose property is stolen certainly feels pain.

(19) **Aakkhevo**—It is to pounce on others belongings

(20) **Khevo**—To take others property by force

(21) **Vikkhevo**—To take others things and hide them

(22) **Koodaya**—To be dishonest in weights and measures

(23) **Koolamasi**—To bring dishonour to the family

(24) **Kankha**—To have a intense desire for a thing belonging to others It is the basic cause of theft

(25) **Lalappan-patthanaye**—To procure money by flattering others or by false praise

(26) **Vasanam**—Bad habit or the cause of troubles

(27) **Ichha-Muchha**—To have a deep attachment for money belonging to others

(28) **Tanha-Gehi**—To be deeply attached to what one has got and to have a desire of having that which has not got in yet

(29) **Niyadikamm**—An act done in a deceitful manner

(30) **Aparachhanti**—To do a thing avoiding others

These are the important synonyms of adattadan asrava (inflow of karma through stealing) which is full of sinful act and dirty as it leads to quarrel There are many more synonyms also

विवेचन किसी की कोई वस्तु असावधानी से कही गिर गई हो, भूल से रह गई हो, जानबूझकर रखी हो, उसे उसके स्वामी की आज्ञा, अनुमति या इच्छा के बिना ग्रहण कर लेना 'चोरी' कहलाता है।

यहाँ प्रश्न होता है कि तिनका, मिट्टी, रेत आदि वस्तुएँ, जो सर्व साधारण के उपयोग के लिए मुक्त हैं, जिनके ग्रहण करने का सरकार की ओर से निषेध नही है, न कोई दण्ड है। जिसका कोई स्वामी विशेष भी नही है, उसको ग्रहण करना क्या चोरी है ? समाधान है-स्थूल अदत्तादान का त्यागी गृहस्थ यदि उसे ग्रहण कर लेता है तो उसके व्रत मे बाधा नही आती तथा लोकव्यवहार मे वह चोरी नही कहलाती है। परन्तु तीन करण और तीन योग से अदत्तादान के त्यागी साधुजन ऐसी वस्तु को भी ग्रहण नही कर सकते। आवश्यकता होने पर वे उसके स्वामी या शक्रेन्द्र की अनुमति लेकर ही ग्रहण करते है।

अदत्तादान के तीस नामो के अर्थ का विस्तृत चिन्तन करने से इन नामो से चौर्यकर्म की व्यापकता का परिबोध होता है। इन नामो से चोरी की मूल प्रेरणा अतृप्ति, उससे होने वाले फल अपकीर्ति, भय तथा परलोक मे दुर्गति तक का कथन समाहित है।

शास्त्रकार ने सूत्र के अन्त मे यह स्पष्ट निर्देश किया है कि अदत्तादान के यह तीस ही नाम है, ऐसा नही समझना चाहिए। इसके अनुरूप अन्य अनेक कार्य भी स्तेन कर्म हो सकते है।

Elaboration—A thing belonging to a person has fallen down somewhere due to lack of proper attention, a person has forgotten a thing kept at a place or he has knowingly kept it somewhere, to take it without the orders, express permission or without the consent of the owner is theft

Now the question arises that a small piece of dry grass, earth, sand and the like are such substances, which one can freely take and use The government has not laid any restriction No punishment is there in the law for it There is no particular owner of it Is it a theft to take such a thing The reply to this question is as follows

In case a householder observing vows of the householder takes it, it does not in any way affect his vow and it is not called theft in ordinary dealings But the monks have discarded stealing in the context of three karanas (in doing, in getting done, appreciating what is done) and three yogas (mentally, vocally and physically) So they cannot take it In case they have a need for a thing they can accept it only with the permission of the owner and if there is no owner available, with the permission of Indra, the lord of first heaven

By contemplating deeply on thirty synonyms of adattadan, one can have a sufficient knowledge about the extent of its field These synonyms exhibit what inspires stealing, how it causes non-satisfaction, and how it results in disrespect, fear and bad state of existence in the next life

At the end of this aphorism, it has clearly been stated that one should not understand that adattadan has only these thirty names Other activities similar to it also fall in category of stealing

चौर्यकर्म के विविध प्रकार VARIOUS TYPES OF ACT OF STEALING

६२. ते पुण करेत्ति चोरियं तक्करा परदव्वहरा छेया, कयकरणलद्ध–लक्खा साहसिया लहुस्सगा अइमहिच्छलोभगत्था दद्दरओवीलका य गेहिया अहिमरा अणभंजगा भग्गसधिया रायदुट्ठकारी य विसयणिच्छूढ–लोकबज्झा उद्दोहग–गामघायग–पुरघायग पंथघायग–आलीवग–तित्थभेया लहुहत्थसंपउत्ता जूइकरा खंडरक्ख–त्थीचोर–पुरिसचोर–संधिच्छेया य, गंथीभेयग–परधण–हरण–लोमावहारा अक्खेवी हडकारगा णिम्मद्दगगूढचोरग–गोचोरग–अस्सचोरग–दासीचोरा य एकचोरा ओकड्ढग–

संपदायगउच्छिंपग–सत्थघायग–बिलचोरीकारगा य णिग्गाहविप्पलुंपगा बहुविहतेणिक्कहरणबुद्धी एए अण्णे य एवमाई परस्स दव्वाहि जे अविरया।

इस सूत्र मे चौर्य कर्म करने वालो का वर्णन किया जाता है–

६२. उस पूर्वकथित चोरी को वे लोग करते है जो दूसरो का धन हरण करने वाले है, हरण करने मे कुशल है, अनेको बार चोरी कर चुके है और मौका जानने वाले है, जिनका दुस्साहसी स्वभाव है। परिणाम की चिन्ता करके भी चोरी का साहस करते है, जो तुच्छ हृदय वाले, अत्यन्त महत्वाकाक्षी एव लोभ से ग्रस्त है, जो वाणी के आडम्बर से अपनी असलियत को छिपाने वाले है या दूसरो को भ्रमित करने वाले है, जो दूसरो के धनादि मे आसक्त है, जो सामने से सीधा प्रहार करने वाले है, जो लिए हुए ऋण को नही चुकाने वाले है, जो की हुई सन्धि अथवा प्रतिज्ञा या वायदे को भग करने वाले है, जो राजकोष आदि को लूटकर या अन्य प्रकार से राज्य–शासन का अनिष्ट करने वाले है, देश निकाला दिये जाने के कारण जो समाज द्वारा बहिष्कृत है, जो घातक है या उपद्रव, दगा आदि करने वाले है, गॉवो, नगरो आदि मे घात करने वाले है, मार्ग मे पथिको को लूटने वाले या मार मारने वाले है, आग लगाने वाले और तीर्थयात्रियो को लूटने वाले जो (जादूगरो की तरह) हाथ की सफाई वाले है–जेब या गाँठ काट लेने मे कुशल है, जो जुआरी है, चुगी लेने वाले या कोतवाल है, स्त्री–चोर है अथवा स्त्री का वेष धारण करके चोरी करते है, जो पुरुष की वस्तु को अथवा (आधुनिक डकैतो की भाँति फिरौती लेने आदि के उद्देश्य से) पुरुष का अपहरण करते है, जो सेध लगाने वाले है, गाँठ काटने वाले है, जो पराया धन उडाने वाले है, (धन हाथ न लगने पर जो निर्दयता या भय के कारण अथवा आतक फैलाने के लिए) मारने वाले है, जो वशीकरण या औषधि आदि का प्रयोग करके धनादि का अपहरण करने वाले है, सदा दूसरो को सताने वाले है, गुप्तचोर, गो–चोर–गाय चुराने वाले, अश्व–चोर एव स्त्रियो को चुराने वाले है, अकेले ही चोरी करने वाले, घरो मे से आभूषण आदि निकाल लेने वाले, चोरो को बुलाकर दूसरे के घर मे चोरी करवाने वाले, चोरो की सहायता करने वाले, चोरो को भोजनादि देने वाले, लुक छिपकर चोरी करने वाले, सार्थ–बनजारो को लूटने वाले, दूसरो को धोखा देने के लिए बनावटी आवाज मे बोलने वाले, राजा द्वारा दण्डित बन्दीगृहो से भागे हुए एव छलपूर्वक राजाज्ञा का उल्लघन करने वाले, अनेकानेक प्रकार से चोरी करके दूसरो का धन चुराने की बुद्धि वाले, ये लोग और इसी कोटि के अन्य लोग, जो दूसरे के द्रव्य को ग्रहण करने की इच्छा से निवृत्त नही है अर्थात् अदत्तादान के त्यागी नही है–जिनमे परधन के प्रति लालसा विद्यमान है, वे चौर्य कर्म मे प्रवृत्त होते है।

62. This ophorism describes people indulging in stealing–the above said act of stealing is done by those people whose profession is usurping property of others They are expert in this act They have committed theft many times They are well-versed in finding out proper occasion for committing theft They have a daring temperament They care little for its result They are bold They have a mean heart They are extremely

greedy They are expert ın concealıng their true nature through sweat talk They are clever ın deludıng others They are attached ın others property They attack at the fore front They do not pay back the debts They break the promıse or the oath or the agreement They rob the state treasure or cause loss to the state ın any other way They are extradıted by the socıety as they are expelled by the state They are murderers They create dısturbance. They cause kıllıngs ın vıllages and towns They rob the travellers on the way or even kıll them They set fire They loot pılgrıms They pıckpocket people lıke magıcıans They are gamblers They collect octroı They are polıcemen They abduct women or commıt thefts ın the garb of women They steal artıcles, belongıng to men or even kıdnap the owners (ın order to get money from them lıke kıdnappers at present) They break ınto the houses They cheat people They mısuse property of others They kıll people (ın case they are unable to find money) They create dısturbance and terror They rob people by usıng mantra or substances causıng unconscıousness They always trouble others They are spıes They carry away the cattle namely cow, horse and the lıke They kıdnap women They help thıeves They serve food to thıeves They secretly commıt thefts They rob wayfarers They utter artıficıal sounds ın order to deceıve others They are the prısoners set free after undergoıng the jaıl term They plan thefts ın dıfferent way They, ın a deceptıve manner, transgress the state orders They commıt theft alone They steal ornaments from houses Such people and other people of thıs category are not devoıd of the desıre of usurpıng property of others In other words they have not dıscarded adattadan (stealıng) They stıll have an eye on money belongıng to others They remaın engaged ın stealıng

विवेचन प्रस्तुत सूत्र मे बताया है कि चोरी करने वाले लोग किस श्रेणी के होते है ? किन-किन तरीको से वे चोरी करते है ? कोई छिपकर चोरी करते है तो कोई सामने से प्रहार करके, आक्रमण करके करते है, कोई वशीकरण मत्र आदि का प्रयोग करके दूसरो को लूटते है, कोई धनादि का, कोई गाय-भैस-बैल-ऊँट-अश्व आदि पशुओ का हरण करते है, यहाँ तक कि नारियो और पुरुषो का भी अपहरण करते है। कोई राहगीरो को लूटते है तो कोई राज्य के खजाने को-आधुनिक काल में बैक आदि को भी शस्त्रो के बल पर लूट लेते है। कोई दूसरो को चकमा देकर या भयभीत करके चोरी करते है।

इस प्रकार लोक प्रचलित चोरी के अनेक प्रकारो का उल्लेख यहाँ किया गया है।

Elaboration—In the present aphorism, it has been stated as to which category the persons engaged in theft belong and which are the methods they adopt to commit theft. Some commit theft secretly and some by directly attacking the victim They use mantra to overpower them and then to rob them Some carry away money, some carry away animals like cow, buffalo, bullock, camel, horse and others Some kidnap even men and women Some rob travelers Some rob the state treasure (the banks at present) on the strength of their weapons Some commit theft by deceiving or frightening others

Thus many types of thefts prevalent during that period have been mentioned

धन के लिए राजाओ का आक्रमण **ATTACK BY RULERS TO SECURE MONEY**

६३. विउलबलपरिग्गहा य बहवे रायाणो परधणम्मि गिद्धा सए व दव्वे असंतुट्ठा परविसए अहिहणंति ते लुद्धा परधणस्स कज्जे चउरंगविभत्त–बलसमग्गा णिच्छियवरजोहजुद्धसद्धिय–अहमहमिइ–दप्पिएहिं सेण्णेहिं संपरिवुडा पउम–सगड–सूइ–चक्क–सागर–गरुलवूहाइएहिं अणिएहिं उत्थरंता अभिभूय हरति परधणाइं।

६३. इनके अतिरिक्त विपुल बल–सेना और परिग्रह–धनादि सम्पत्ति या परिवार वाले राजा लोग भी, जो पराये धन मे आसक्त होते है और अपने द्रव्य से जिन्हे सन्तोष नही है, दूसरे (राजाओ के) देश–प्रदेश पर आक्रमण करते है। वे लोभी राजा दूसरे के धनादि को हथियाने के उद्देश्य से रथसेना, गजसेना, अश्वसेना और पैदलसेना, इस प्रकार चतुरगिणी सेना के साथ (अभियान करते है।) वे दृढ निश्चय वाले, श्रेष्ठ योद्धाओ के साथ युद्ध करने मे विश्वास रखने वाले, 'मै पहले लड़ूँगा' इस प्रकार के दर्प से भरे हुए सैनिको से घिरे हुए होते है। वे नाना प्रकार के व्यूहो (मोर्चों) की रचना करते है, जैसे कमलपत्र के आकार का पद्मपत्र व्यूह, बैलगाडी के आकार का शकटव्यूह, सुई के आकार का शूचीव्यूह, चक्र के आकार का चक्रव्यूह, समुद्र के आकार का सागरव्यूह और गरुड के आकार का गरुडव्यूह। इस तरह नाना प्रकार की व्यूह रचना वाली सेना द्वारा दूसरे-विरोधी राजा की सेना को आक्रान्त करते है, अर्थात् अपनी विशाल सेना से विपक्ष की सेना को घेर लेते है–उस पर छा जाते है और उसे पराजित करके दूसरे की धन–सम्पत्ति को हरण कर लेते है–लूट लेते है।

63. Further, the kings who have large money and family and also a great military strength but who are not yet contented with their wealth and have an eye on others wealth, attack their territory Those greedy kings in order to rob the money of others attack with their army of elephants, horses, chariots and the infantry They are steadfast in their determination They have a faith in their warriors They are surrounded

by great soldiers who are keen to fight first They form many types of army formation such as of the form of lotus, bullock cart, of the form of needle, of the form of wheel or of the form of garud (eagle) Thus with an army, which can take formation of various such types, they attack other kings They surround the army of the enemy with their army and defeat it robbing their money and property

विवेचन जो धन-सम्पत्ति अपने पास है तथा जो भोगोपभोग के अन्य साधन प्राप्त है, उनमे सन्तोष न होना और दूसरो की वस्तुओ मे आसक्ति होना चौर्य कर्म का मूल कारण है। प्रस्तुत पाठ का आशय यही है कि अदत्तादान का मूल अपनी वस्तु मे सन्तुष्ट न होना और परकीय पदार्थो मे गृद्धि होना है। अतएव जो अदत्तादान के पाप से बचना चाहते है और अपने जीवन मे सुख-शान्ति चाहते है, उन्हे प्राप्त सामग्री मे सन्तुष्ट रहना चाहिए और परायी वस्तु की आकाक्षाओ से दूर रहना चाहिए। प्रस्तुत प्रसग मे शास्त्रकार यह बताना चाहते है-धन के लोभ से बडे-बडे युद्ध, भीषण नरसहार भी होते आये है। एक राज्य दूसरे राज्य पर आक्रमण कर उसकी धन-सम्पत्ति लूटकर अपना ऐश्वर्य बढाना चाहता है।

Elaboration—The basis of activity of stealing is not to feel satisfied with the money and property one possesses and to feel allured by the things the other one possesses The purport of the present lesson is that the basis of adattadan is not to feel contented with one's own property and to be attached with the things belonging to others So those who want to safeguard themselves from the sin of adattadan and want peace and happiness in their life, they should remain satisfied with what they have They should keep themselves away from the desire for things belonging to others In the present context the author wants to emphasize that great wars involving heavy bloodshed have occurred due to greed for money One ruler attacked the other ruler in order to increase his wealth by robbing the wealth of the other

युद्ध के लिए विविध प्रकार की शस्त्र-सज्जा VARIOUS WEAPONS FOR THE BATTLE

६४. अवरे रणसीसलद्धलक्खा संगामंसि अइवयंति सण्णद्धबद्धपरियर-उप्पीलिय-चिधपट्टगहियाउह-पहरणा माढिवर-वम्मगुडिया, आविद्धजालिया कवयकंकडइया उरसिरमुह-बद्ध-कण्ठतोणमाइयवरफलगर चियपहकर-सरहसखरचावकरकरछिय-सुणिसिय-सरवरिसचडकरगमुयंत-घणचंड वेगधाराणिवायमग्गे अणेगधणुमडलग्गसंधित-उच्छलियसत्तिकणग-वामकरगहिय खेडगणिम्मल-णिक्किट्ठखग्गपहरत-कोत-तोमर-चक्क-गया-परसु-मूसल-लंगल-सूल-लउल-भिंडमालसब्बल-पट्टिस-चम्मेट्ठ-दुघणमोट्ठिय-मोग्गर-वरफलिह-जंत-पत्थर-दुहण-तोण-कुवेणी-पीढकलिएईलीपहरण मिलिमिलिमिलंतखिप्पत-विज्जुज्जल-विरचिय-समप्पहणभतले फुडपहरणे

महारणसंखभेरिवरतूर–पउर–पडुपडहाहयणिणाय–गंभीरणदिय पक्खुभिय–विउलघोसे हय–गय–रह–जोह–तुरिय–पसरिय–रउद्धततमंधकार–बहुले कायर–णर–णयण–हिययवाउलकरे।

६४. दूसरे कितने ही राजा जो युद्धभूमि मे सबसे अगली पक्ति मे लडकर विजय प्राप्त करने वाले होते है। वे (इस प्रकार विविध शस्त्रो से सज्जित रहते है) जैसे–कमर कसे हुए, कवच–बख्तर धारण किये हुए और विशेष प्रकार के चिह्नपट्ट–परिचयसूचक बिल्ले मस्तक पर बाँधे हुए, अस्त्र–शस्त्रो को धारण किये हुए, प्रतिपक्ष के प्रहार से बचने के लिए ढाल से और उत्तम कवच से शरीर को वेष्टित किये हुए, लोहे की जाली पहने हुए, कवचो पर लोहे के काँटे लगाये हुए, वक्षस्थल के साथ ऊर्ध्वमुखी बाणो की तूणीर–बाणो की थैली कण्ठ मे बाँधे हुए, हाथो मे पाश–शस्त्र और ढाल लिए हुए, सैन्यदल की रणोचित रचना किए हुए, कठोर धनुष को सहर्ष हाथो मे पकडे हुए, हाथो से (बाणो को) खीचकर की जाने वाली प्रचण्ड वेग से बरसती हुई मूसलधार वर्षा के गिरने से जहाँ मार्ग अवरुद्ध हो गया है, ऐसे युद्ध मे अनेक धनुषो, दुधारी तलवारो, फेकने के लिए निकाले गये त्रिशूलो, बाणो, बाये हाथो मे पकडी हुई ढालो, म्यान से निकाली हुई चमकती तलवारो, प्रहार करते हुए भालो, तोमर नामक शस्त्रो, चक्रो, गदाओ, कुल्हाडियो, मूसलो, हलो, शूलो, लाठियो, भिडमालो, शब्बलो–लोहे के वल्लभो, पट्टिस नामक शस्त्रो, पत्थरो–गिलोलो, द्रुघणो–विशेष प्रकार के भालो, मुट्ठी मे आ सकने वाले एक प्रकार के शस्त्रो, मुद्‌गरो, प्रबल आगलो, गोफणो, द्रुहणो (कर्करो), बाणो के तूणीरो, नालदार बाणो एव आसन नामक शस्त्रो से सज्जित तथा दुधारी तलवारो और चमचमाते शस्त्रो को आकाश मे फेकने से आकाश बिजली के समान उज्ज्वल प्रभा वाला हो जाता है। उस सग्राम मे प्रकट–स्पष्ट शस्त्र–प्रहार होता है। महायुद्ध मे बजाये जाने वाले शखो, भेरियो, उत्तम वाद्यो, अत्यन्त स्पष्ट ध्वनि वाले ढोलो के बजने के गम्भीर आघोष से वीर पुरुष हर्षित होते है और कायर पुरुषो को घबराहट बढती जाती है। वे (भय से पीडित होकर) काँपने लगते है। इस कारण युद्धभूमि मे हो–हल्ला होता है। घोडे, हाथी, रथ और पैदल सेनाओ के शीघ्रतापूर्वक चलने से चारो ओर फैली–उडती धूल के कारण वहाँ सघन अधकार व्याप्त रहता है। वह युद्ध कायर नरो के नेत्रो एव हृदयो को आकुल–व्याकुल बना देता है।

अगले सूत्र मे पुन उस युद्धभूमि की भयानकता का वर्णन करते है–

64. Many other kings want to achieve conquest by fighting in the battlefield in front line They remain equipped with various types of weapons such as waist belt, armour, the emblem indicating their identity, the badge at the forehead, weapons of war, the high quality iron shield to protect themselves from attack of the enemy They wear iron net Their armour has iron thorns They have a bundle of arrows close to their chest tied to their neck They have paash weapon and shield in their hands They do the formation of the army as during war They happily hold the strong bow in their hands The battlefield was such that

due to the rain of arrows at fast speed, the passage had closed In such a battle many bows, two-edged sword, spear like tridents, shield held in left hand, shining sword just taken out from the sheath, spears, tomar weapon, wheals, gadaas, axes, dumble, ploughs, pointed weapons, sticks, bhindmaal, shabbals (iron thick rods), patties, launchers of stone, drughans (special type of spears), special weapons that could be held in the fist, mudgars, strong aagats, gophans, druhams, quivers of arrows, tube like arrows, aasan and two-edged swords were used The sky was shining due to the use of such weapons in the same manner as when there is lightening In that battle the attack through weapons is quite visible to each other The conch-shells, trumpets, bugles, were blown Drums were beaten Musical instruments were played and the warriors felt happy and encouraged with that war music A coward feels bewildered in that situation and trembles out of fear So there is a great noise in the battlefield A thick mist spreads all around due to the movement of infantry and the elephants, the horse and the chariots and spreads darkness That battle causes terror in the mind of cowards

In the next aphorism, the dreadful nature of the battlefield has been further narrated

युद्ध–स्थल की वीभत्सता DREADFULNESS OF BATTLEFIELD

६५. विलुलियउक्कड–वर–मउड–तिरीड–कुडलोडुदामाडोविया पागड–पडाग–उसियज्झय–वेजयंतिचामरचलंत–छत्तंधयारगभीरे।

हयहेसिय–हत्थिगुलुगुलाइय–रहघणघणाइय–पाइक्कहरहराइय–अप्फोडिय–सीहणाया, छेलिय–विघुट्टुक्कट्ठकटकयसद्दभीमगज्जिए।

सयराह–हसंत–रुसत–कलकलरवे आसूणियवयणरुद्दे भीमदसणाधरोट्ठगाढदट्ठे सप्पहारणुज्जयकरे अमरिसवसतिव्वतरत्तणिद्दारितच्छे वेरदिट्ठि–कुद्ध–चिट्ठिय–तिवलि–कुडिलभिउडि–कयणिलाडे वहपरिणय–णरसहस्स–विक्कमवियंभियबले। वग्गंत–तुरगरहपहाविय–समरभडा आवडियछेयलाघव–पहारसाहियासमूसविय बाहु–जुयलमुक्कट्टहासपुक्कंतबोल–बहुले।

फलफलगावरणगहिय–गयवरपत्थिंत–दरियभडखल–परोप्परपलग्ग–जुद्धगव्विय–विउसिय–वरासिरोस–तुरियअभिमुह–पहरिंतछिण्णकरिकर–विभंगियकरे अवइद्धणिसुद्धभिण्णफालिय–पगलियरुहिर–कय–भूमि–कद्दम–चिलिचिल्लपहे।

कुच्छिदालिय–गलंतरुलिंतणिभेलितंत–फुरुफुरंत–अविगल–मम्माहय–विकयगाढदिण्णपहारमुच्छित–



युद्ध स्थल की विभत्सता



युद्ध के पश्चात् युद्ध-स्थल का लोमहर्षक दृश्य

चित्र-परिचय 7

Illustration No. 7

युद्ध-स्थल की विभत्सता

चित्र मे युद्ध-स्थल की विभत्सता को दिखाया गया है। पराये धन को प्राप्त करने के इच्छुक राजा किस प्रकार भयकर नरसहार करते हैं, यह सब अदत्तादान रूप तीसर अधर्म (आस्रव) का परिणाम है। चित्र इसका प्रत्यक्ष आभास कराता है।

चित्र के ऊपर के भाग मे युद्ध-स्थल का वर्णन है—युद्धोन्मत्त राजा मदमस्त होकर एक-दूसरे पर आक्रमण कर रहे हैं। घोडे हिनहिना रहे हैं। हाथी गुलगुला रहे है। घोडे, रथ और पदाति सैनिक बडे वेग से दौडकर एक-दूसरे पर आक्रमण कर रहे हैं। योद्धागण क्रोधित होकर मुँह फुलाकर अपने शत्रु पर प्रहार कर रहे है। किसी-किसी के नेत्र लाल है। गदाये आपस मे टकरा रही हैं। आवेश के कारण वे अपने होठो को दाँतो से चबा रहे है।

चित्र के नीचे के भाग मे सध्या के समय युद्ध स्थल का बडा ही करुणाजनक चित्र प्रस्तुत किया गया है। सध्या के समय युद्ध स्थल की भूमि अत्यत रक्त रजित हो गई है। किसी योद्धा का पेट फटने से रक्त बह रहा है, आँते बाहर निकली हुई हैं। गहरा प्रहार होने से किसी की इन्द्रियाँ फडफडा रही है। किसी के मर्म स्थानो पर चोट लगने मे वह छटपटा रहा है। कोई असह्य वेदना के कारण करुण क्रदन कर रहा है। जिनके मस्तक कट गये है, ऐसे हाथियो और अश्वो के शरीर स भूमि पटी हुई है। पराये धन को हडपने की इच्छा रखने वाले राजा आदि अन्य व्यक्ति ऐसी युद्ध भूमि मे प्रवेश करते हैं, जो प्रत्यक्ष श्मशान के समान दीखती है और परम रौद्र एव भयकर होती है।

—सूत्र 65, पृ 137

REVOLTING SCENE OF THE BATTLE FIELD

The illustration presents the revolting scene of a battlefield How terrible massacre the kings desirous of grabbing wealth of others commit is the outcome of the third door of Asrava taking what is not given (stealing) The illustration presents a live picture of that

The scene at the top shows the battle Kings driven by rage to fight are attacking each other Horses are whining Elephants are trumpeting Elephant, chariot and foot soldier battalions are attacking with speed Warriors are striking enemies with faces swollen in rage Their eyes are red Maces are colliding They are biting their lips in excitement

The bottom scene is the pitiful presentation of the evening when the day's battle is over Due to the excessive shedding of blood during the day the ground is filled with slime Blood is oozing from the split belly of some warrior Intestine has come out Some soldier is shivering due to the blow by a mace Some one is trembling due to blow on vital parts Someone is pitifully wailing due to intolerable pain The field is full of bodies of beheaded elephants Kings and other people desirous of grabbing others wealth enter such battle ground that has such evil and terrifying appearance like a cremation ground

— Sutra-65, page-137

रुलंतविब्भलविलावकलुणे; हयजोह–भमंत–तुरग–उद्दाममत्तकुंजर–परिसंकियजणणिब्बुक्कच्छिण्णधय–भग्गरहवरणट्ठसिरकरिकलेवराकिण्ण–पतित–पहरण–विकिण्णाभरण–भूमिभागे।

णच्चंतकबंधपउरभयंकर–वायस–परिलेंत–गिद्धमंडल–भमंतच्छायंधकार–गंभीरे। वसुवसुहविकंपियव्व–पच्चक्खपिउवणं परमरुद्दबीहणगं दुप्पवेसतरगं अहिवयंति संगामसंकडं परधणं महंता।

६५. ढीला होने के कारण इधर उधर हिलते चचल एव उन्नत उत्तम मुकुटो, तीन सेहरो वाले मुकुटो–ताजो, कुण्डलो तथा नक्षत्र नामक आभूषणो की उस युद्ध मे जगमगाहट होती है। स्पष्ट दिखाई देने वाली पताकाओ, ऊपर फहराती हुई ध्वजाओ, विजय को सूचित करने वाली वैजयन्ती पताकाओ तथा चचल–हिलते–डुलते चामरो और छत्रो के कारण होने वाले अन्धकार के कारण वह रणक्षेत्र गम्भीर प्रतीत होता है।

घोडो की हिनहिनाहट से, हाथियो की चिघाड से, रथो की घनघनाहट से, पैदल सैनिको (प्यादो) की हर–हर आवाज से, तालियो की गडगडाहट से, सिहनाद की ध्वनियो से, सीटी बजाने की–सी आवाजो से, भय के कारण जोर–जोर की चिल्लाहट से, हँसने के कारण जोर की किलकारियो से और एक साथ उत्पन्न होने वाली हजारो कण्ठो की ध्वनि से वहाँ भयकर गर्जनाएँ होती है।

उसमे एक साथ हँसने, रोने और कराहने के कारण कलकल ध्वनि होती रहती है। बीच–बीच मे मुँह फुलाकर आँसू बहाते हुए बोलने के कारण वह रौद्र दिखाई देते है। उस युद्ध मे भयावने दाँतो स होठो को जोर से चबाने–काटने वाले योद्धाओ के हाथ अचूक प्रहार करने के लिए उद्यत–तत्पर रहते है। क्रोध की उग्रता के कारण योद्धाओ के नेत्र लाल–लाल और तरेरते हुए होते है। वैरमय दृष्टि के कारण क्रोध परिपूर्ण चेष्टाओ से उनकी भौहे तनी रहती है और इस कारण उनके ललाट पर तीन सल पडी हुई होती है। उस युद्ध मे, मार–काट करते हुए हजारो योद्धाओ के पराक्रम को देखकर सैनिको के पौरुष–पराक्रम की वृद्धि हो जाती है। हिनहिनाते हुए अश्वो और रथो द्वारा इधर–उधर भागते हुए युद्धवीरो तथा शस्त्र चलाने मे कुशल और सधे हुए हाथो वाले सैनिक हर्षविभोर होकर, दोनो भुजाएँ ऊपर उठाकर, खिलखिलाकर–ठहाका मारकर हँस रहे होते है, किलकारियाँ मारते है।

चमकती हुई ढाले एव कवच धारण किये हुए, मदोन्मत्त हाथियो पर आरूढ प्रस्थान करते हुए योद्धा, शत्रुयोद्धाओ के साथ परस्पर जूझते है तथा युद्धकला मे कुशलता के कारण अहकारी योद्धा अपनी–अपनी तलवारे म्यानो मे से निकालकर, फुर्ती के साथ रोषपूर्वक परस्पर–एक–दूसरे पर प्रहार करते है। हाथियो की सूँडे काट रहे होते है, जिससे उनके भी हाथ कट जाते है। ऐसे भयावह युद्ध मे मुद्गर आदि द्वारा मारे गये, काटे गये या फाडे गये हाथी आदि पशुओ और मनुष्यो के युद्धभूमि मे बहते हुए रुधिर के कीचड से मार्ग लथपथ हो रहे होते है।

कूँख के फट जाने से भूमि पर बिखरी हुई एव बाहर निकलती हुई आँतो से रक्त प्रवाहित होता रहता है तथा तडफडाते हुए, विकल, मर्माहत, बुरी तरह से कटे हुए, प्रगाढ प्रहार से बेहोश हुए, इधर–उधर लुढकते हुए विह्वल मनुष्यो के विलाप के कारण वह युद्धभूमि बहुत ही करुणाजनक प्रतीत

होती है। उस युद्ध मे मारे गये योद्धाओ के इधर-उधर भटकते घोडे, मदोन्मत्त हाथी और भयभीत मनुष्य, मूल से कटी हुई ध्वजाओ वाले टूटे-फूटे रथ, मस्तक कटे हुए हाथियो के धड-कलेवर, विनष्ट हुए शस्त्रास्त्र और बिखरे हुए आभूषण-अलकार इधर-उधर पडे होते है।

डोलते हुए बहुसख्यक कलेवरो-धडो पर काक और गिद्ध मॅडराते रहते है। और जब उन कौओ और गिद्धो के झुण्ड के झुण्ड घूमते है तब उनकी छाया के अन्धकार के कारण वह युद्ध गम्भीर अन्धकारपूर्ण बन जाता है। ऐसे (भयावह-घोरातिघोर) युद्ध मे (राजागण) केवल सेना को ही युद्ध मे नही झोकते। स्वय प्रवेश करते है-मानो देव (देवलोक) और पृथ्वी को प्रकम्पित करते हुए, ये धन की कामना करने वाले राजागण साक्षात् श्मशान के समान, अतीव रौद्र होने के कारण भयानक और अत्यन्त कठिनाई से प्रवेश करने योग्य इस सग्रामरूपी गहन वन मे चलकर अथवा आगे होकर प्रवेश करते है।

65. There occurs a great brightness in the battle due to loose and shaking high class crowns, the crowns having three hanging garlands, the ear-rings and the nakshatras (a shining ornament) The buntings are distinctly visible The flags flutter The buntings indicating success in the battle flutter The brooms (chamars) move The darkness prevails due to all these and umbrellas Due to all these, the atmosphere of the battlefields looks grim

The horses neigh The elephants trumpet The movement of chariots causes rattling sound The infantry moves The soldiers clap The war-bugles are blown Some blow the whistle Some cry loudly due to fear Some laugh heartily Thousands of people collectively shout All such activities cause a terrible roaring sound

There occurs a disturbing sound as simultaneously some laugh, some weep and some bemoan Some swelling their mouth shout loudly with tears trickling from their eyes and it makes the atmosphere dreadful The warriors are ready to attack the target precisely, while grinding their teeth and chewing their lips with ferocious teeth Their eyes are red due to the high level anger Their eye-brows are raised as anger is crossing its limits Three wrinkles are distinctly visible on their forehead The courage of the war-heroes increases when they see the warriors in action causing heavy bloodshed The warriors move about on the horses that neigh Some move on their chariots The warriors are expert in handling weapons They raise their arms upwards out of ecstatic pleasure and laugh loudly

The soldiers move to fight with warriors of the enemy. They wear shinning shields and armours and ride the excited elephants As they are experts in warfare, with pride pull out their swords from sheaths cleverly and angrily attack with agility They cut the trunks of the elephants at which they sometimes cut their own hands also. In such a fierce battle the ground in the battlefield becomes muddy with the blood of elephants, men and animals killed, cut or torn by weapons such as mudgars and others

As the body gets torn, the intestines come out scattered and the blood oozes out from them The injured warriors are in a bewildered condition They are restless. They received injuries on their delicate parts They are badly cut Some of them are in unconscious state due to the grievous attack Such men weep bitterly and roll hither and thither In this condition, the battle field presents a look seeking compassion The corpses of warriors killed in the battle, their wandering horses, the intoxicated elephants, frightened human beings, the flags cut from the base on the broken chariots, the bodies of the elephants with cut forehead, the destroyed weapons and the decoration of the warriors, all are seen lying down scattered hither and thither

Crows and vultures move along on the dead bodies of animals and human beings lying there in large numbers When the crows and vultures wander in flocks, the darkness caused by their shadow makes the battlefield dark and grim In such a dreadful battle, it appears that simply army alone does not participate but it appears as if shaking the heaven and earth, the kings desirous of money themselves enter the ferocious cremation ground-like and thick forest-like extremely dangerous and difficult battlefield

विवेचन प्रस्तुत पाठ मे सग्राम की भयानकता का स्पष्ट अतीव रोमहर्षक सजीव चित्र उपस्थित किया गया है। पराये धन के इच्छुक राजा लोग किस प्रकार भीषण नर-सहार के लिए तत्पर हो जाते है। यह वर्णन उसका प्रत्यक्ष आभास कराता है।

Elaboration—In the present lesson, a live picture of the ferocity of the battle has been drawn which is extremely heart rending The kings desirous to capture the wealth of the others become ready for bloodshed. This description gives a vivid account of such a condition.

वनवासी चोर THIEVES IN FOREST

६६. अवरे पाइक्कचोरसंघा सेणावइ–चोरवंद–पागड्डिका य अडवी–देसदुग्गवासी कालहरितरत्तपीतसुक्किल–अणेगसयचिंध–पट्टबद्धा परविसए अभिहणंति लुद्धा धणस्स कज्जे।

६६. इनके (पूर्वसूत्र मे उल्लिखित राजाओ के) अतिरिक्त पैदल चलकर चोरी करने वाले चोरो के समूह होते है। कई ऐसे (चोर) सेनापति भी होते है जो चोरो को प्रोत्साहित करते है। चोरो के यह समूह अटवी आदि दुर्गम स्थानो मे रहते है। उनके काले, हरे, लाल, पीले और श्वेत रग के सैकडो चिन्ह–पट्ट होते है, जिन्हे वे अपने मस्तक पर धारण करते है। पराये धन के लोभी बनकर वे चोर–समुदाय दूसरे प्रदेशो मे जाकर धन का अपहरण करते है और मनुष्यो का घात करते है।

66. In addition to the kings above mentioned, there are thieves in large number, who commit theft while moving on foot There are their leaders also who encourage them Such groups of thieves reside in hilly and undulating areas They wear at their forehead hundreds of cloth-belts of black, green, red, yellow and white colour that distinguish them They are greedy of the money belonging to others They go to other regions to rob people of money They also kill human beings

विवेचन · ज्ञातासूत्र, विपाकसूत्र आदि आगमो मे ऐसे अनेक चोरो और सेनापतियो का विस्तृत वर्णन उपलब्ध होता है, जो विषम दुर्गम अरण्य प्रदेशो मे निवास करते और लूटपाट करते थे। पाँच–पाँच सौ सशस्त्र चोर उनके दल मे थे जो मरने–मारने को सदा उद्यत रहते थे। उनका सैन्यबल इतना सबल होता था कि राजाओ की सेना को भी पछाड देता था, राजाओ की सेना भी उनको पकडने मे समर्थ नही होती थी। ऐसे ही चोरो एव चोर–सेनापतियो का यहाँ सकेत किया गया है।

Elaboration—There is a detailed description of such thieves and their leaders in many Agams such as Jnata Sutra, Vipak Sutra and others They lived in forest land and robbed people There were five hundred members in these groups and they were ready always to attack people Their group was so powerful that they used to defeat even the army of a king The state army was not capable to catch them Such thieves and their leaders have been referred to in this lesson

समुद्री डाकू SEA ROBBERS

६७. रयणागरसागरं उम्मीसहस्समाला–उलाउल–वितोयपोत–कलकलेत–कलिय पायालसहस्स–वायवसवेगसलिल–उद्धम्ममाणदगरयरयंधकारं वरफेणपउर–धवल–पुलंपुल–समुट्ठियट्टहासं मारुयविच्छु–भमाणपाणियं जल–मालुप्पीलहुलिय अवि य समतओ खुभिय–लुलिय–खोखुब्भमाण–पक्खलियचलिय–

विउलजलचक्कवाल—महाणईवेगतुरियआपूरमाणगंभीर—विउल—आवत्त—चवल—भममाणगुप्पमाणुच्छलंत पच्चोणियत्त—पाणिय—पधावियखर—फरुस—पयंडवाउलियसलिल—फुट्टंत वीइकल्लोलसंकुलं महामगर—मच्छ—कच्छभोहार—गाह—तिमि—सुंसुमार—सावय—समाहय—समुद्धायमाणक—पूरघोर—पउरं कायरजणहियय—कंपणं घोरमारसंतं महब्भयं भयंकरं पइभयं उत्तासणगं अणोरपारं आगासं चेव णिरवलंबं। उप्पायणपवण—धणिय—णोल्लिय उवरुवरितरंगदरिय—अइवेग—वेग—चक्खुपहमुच्छरंतं।

कत्थइ—गंभीर—विउलगज्जिय—गुंजिय—णिग्घायगरुयणिवडिय—सुदीहणीहारि—दूरसुच्चंत—गंभीर—धुगुधुगंतसद्दं पडिपहरुंभंतजक्ख—रक्खस—कुहंड—पिसायरुसिय—तज्जाय—उवसग्ग—सहस्ससंकुलं बहुप्पाइयभूयं विरइयबलिहोम—धूवउवयारदिण्ण—रुहिरच्चणाकरणपयत—जोगपययचरियं परियंत—जुगत—कालकप्पोवम दुरंतं महाणईणईवई—महाभीमदरिसणिज्जं दुरणुच्चरं विसमप्पवेसं दुक्खुत्तारं दुरासयं लवण—सलिलपुण्णं।

असियसिय—समूसियगेहि हत्थतरकेहिं वाहणेहिं अइवइत्ता समुद्दमज्झे हणंति, गंतूण जणस्स पोए परदव्वहरा णरा।

६७ (इन वनवासी चोरो के सिवाय कुछ अन्य प्रकार के समुद्री लुटेरे, डाकू भी होते है जो धन के लालच मे फँसकर समुद्र यात्रा करने वाले यात्रियो को लूटते है। यहाँ उनका दिग्दर्शन कराया जाता है। वे लुटेरे जहाँ रत्नो के खजाने छिपे पडे है, ऐसे समुद्र मे चढाई करते है। वह समुद्र कैसा होता है? वह समुद्र हजारो–हजारो तरग–मालाओ से व्याप्त होता है। पीने के पानी के अभाव मे जहाज के यात्री आकुल–व्याकुल होकर कल–कल ध्वनि से क्रन्दन करते है। हजारो पाताल–कलशो की वायु के क्षुब्ध होने से तेजी से ऊपर उछलते हुए जलकणो की रज से वातावरण अन्धकारमय बना होता है। निरन्तर प्रचुर मात्रा मे उठने वाले श्वेत वर्ण के फेन ही मानो उस समुद्र का अट्टहास है। वहाँ पवन के प्रबल थपेडो से जल क्षुब्ध हो रहा होता है। जल की तरग–मालाएँ तीव्र वेग के साथ तरगित होती है। चारो ओर तूफानी हवाएँ उसे क्षोभित कर रही होती है। जो तट के साथ टकराते हुए जल–समूह से तथा मगर–मच्छ आदि जलीय जन्तुओ के कारण अत्यन्त चंचल हो रहा होता है। बीच–बीच मे उभरे हुए–ऊपर उठे हुए पर्वतो के साथ टकराने वाले एव बहते हुए अथाह जल–समूह से युक्त है, गगा आदि महानदियो के वेग से जो शीघ्र ही लबालब भर जाने वाला है, जिसके गम्भीर एव अथाह भँवरो मे जलजन्तु अथवा जलसमूह चपलतापूर्वक भ्रमण करते, व्याकुल होते, ऊपर–नीचे उछलते है, जो वेगवान् अत्यन्त प्रचण्ड, क्षुब्ध हुए जल मे से उठने वाली लहरो से व्याप्त है। महाकाय मगर–मच्छो, कच्छपो, ओह नामक जल–जन्तुओ, घडियालो, बडी मछलियो, सुसुमारो एव श्वापद नामक जलीय जीवो के परस्पर टकराने से तथा एक–दूसरे को निगल जाने के लिए दौडने से वह समुद्र अत्यन्त घोर–भयावह बना होता है, जिसे देखते ही कमजोर मनुष्यो का हृदय कॉप उठता है, जो अतीव भयानक और प्रतिक्षण भय उत्पन्न करने वाला है, अतिशय उद्वेग पैदा करने वाला है, जिसका ओर–

छोर–आर–पार का कोई कही दिखाई नही देता, जो आकाश के समान निरालम्बन–आलबनहीन है अर्थात् जिस समुद्र मे कोई सहारा नही है, उत्पात से उत्पन्न होने वाले पवन से प्रेरित और ऊपरा–ऊपरी एक के बाद दूसरी गर्व से इठलाती हुई लहरो के वेग से जो नेत्रपथ–नजर को आच्छादित कर देता है।

उस समुद्र मे कही–कही गम्भीर मेघगर्जना के समान गूँजती हुई, व्यन्तर देवकृत घोर भयावह ध्वनि के समान तथा उस ध्वनि से उत्पन्न होकर दूर–दूर तक सुनाई देने वाली प्रतिध्वनि के समान गम्भीर और धुक्–धुक् करती ध्वनि सुनाई पडती है। जो प्रत्येक रात मे रुकावट डालने वाले यक्ष, राक्षस, कूष्माण्ड एव पिशाच जाति के कुपित व्यन्तर देवो के द्वारा उत्पन्न किये जाने वाले हजारो उत्पातो–उपद्रवो से परिपूर्ण है। जो बलि, होम और धूप देकर की जाने वाली देवता की पूजा और रुधिर देकर की जाने वाली अर्चना मे प्रयत्नशील एव सामुद्रिक व्यापार मे निरत नौका–वणिको–जहाजी व्यापारियो द्वारा सेवित है, जो कलिकाल–अन्तिम काल के अन्त अर्थात् प्रलयकाल के कल्प के समान है, जिसका पार पाना कठिन है, जो गगा आदि महानदियो का अधिपति–नदीपति होने के कारण अत्यन्त भयकर है, जिसमे यात्रा करना अनेक सकटो व खतरो से परिपूर्ण है, जिसमे प्रवेश पाना भी कठिन है, जिसे पार करना–किनारे पहुँचना भी अत्यन्त दुष्कर है, यहाँ तक कि जिसका आश्रय लेना भी दु खयुक्त है और जो खारे पानी से भरा होता है।

ऐसे रत्नाकर समुद्र मे ऊँचे किये हुए काले और सफेद झण्डो वाले पराये धन द्रव्य के अपहारक डाकू अति–वेगपूर्वक चलने वाले, पतवारो से सज्जित जहाजो द्वारा आक्रमण करके समुद्र के मध्य मे जाकर सामुद्रिक व्यापारियो के जहाजो को नष्ट कर देते है।

67. In addition to thieves mentioned above, there were also sea robbers of various types They, in order to satisfy their hunger for wealth, robbed the sea travellers Here an account of their life has been presented Such robbers move in such a sea where the treasures of jewels is concealed Now the condition of the sea is narrated The sea is full of thousands of waves The travellers make a bemoaning sound in distress, as no drinking water is available The environment gets darkened due to the rapidly rising drops from thousands of deep pitches (pataal kalash) as the wind gets disturbed The continuously rising white foam presents the picture of laughing sea The water is badly disturbed due to the striking of mighty winds The water waves rise rapidly, stormy winds are all around affecting the sea badly The sea is becoming extremely disturbed as the water strikes its banks and the crocodiles, sea lions and other aquatic animals move about The water of the sea


महा भयंकर समुद्र में
धन लूटने जाते समुद्री लुटेरे


ग्राम आदि लूटने वाले लुटेरे
कई चोर चोरी करके श्मशान भूमि जैसे भयानक स्थानों पर जाकर
धन का बंटवारा करते हैं। गुप्त मंत्रणा करते हैं।

चित्र-परिचय 8

Illustration No. 8

समुद्री डाके

जलयान द्वारा विदेशो मे व्यापार के लिए जाने वाले व्यापारियो को लूटने के लिए ये डाकू महाभयकर समुद्र मे प्रवेश करते हैं। इसमे प्रचण्ड वायु के कोप से ऊँची-ऊँची भयकर लहरे उठती रहती हैं। अनेक स्थानो पर बडे-बडे भवर होते हैं। गगा आदि नदियो का पानी अत्यत वेग से समुद्र मे आने के कारण बडी-बडी विशाल लहरे उठती हैं। इन समुद्री लहरो के साथ अनेक विशाल समुद्री जीव भी उछलते हैं जिससे गम्भीर एव भयकर ध्वनियाँ उत्पन्न होती हैं। आँधी-तूफान आदि का उपद्रव होने पर आकाश मे घटाटोप अधकार छा जाता है। बिजली कडकती है। इतने लोमहर्षक वातावरण मे भी जलयान मे सवार ये समुद्री लुटेरे दूसरो का धन हरण करने की इच्छा से आगे बढते चले जाते हैं। धन के लालच मे आकर ये समुद्री डाकू समुद्र जैसे उपद्रवपूर्ण भयकर स्थान पर जाने का दुस्साहस कर लेते है। चित्र मे इनका लोमहर्षक चित्रण किया गया है। *—सूत्र 67, पृ 142*

ग्रामादि लूटने वाले

पराये धन का हरण करने वाले दुष्ट मति चोर नगरो मे जाकर लोगो को बन्दी बना लेते हैं। घरो की दीवारो मे सेंध लगाकर चोरी करते है। इनकी तृष्णा असीम होती है।

इस प्रकार ये चोर चोरी के धन का बँटवारा करने के लिए श्मशान भूमि जैसे भयानक स्थानो पर जाते हैं। जहाँ सर्वत्र भय एव मनहूसियत छाई रहती है। यहाँ भोजन पानी मिलना भी दुष्कर रहता है। ऐसे भयकर स्थानो पर जाकर ये धन का बँटवारा करते है। गुप्त मत्रणा करते है। इनके शरीर भोजन-पानी के अभाव मे शुष्क एव विकृत हो जाते है। ये लुटेरे पराये धन के लालच मे नरक और तिर्यंच भव मे भोगने योग्य अत्यत दु ख उत्पन्न करने वाले पाप कर्मो का सचय करते है। *—सूत्र 68, पृ 145*

PIRACY ON THE SEA

In order to loot the merchants going to foreign countries by ship these pirates take to highly menacing seas Tremendous winds agitate the seas causing menacingly high waves There are gigantic whirlpools at many spots The speedy inflow of great rivers like Ganges also cause giant waves in the sea With these waves jump many large aquatic animals producing loud and fearsome sounds Storms and typhoons cause blinding darkness in the sky pierced by intermittent lightening With a desire to snatch others wealth these sea pirates keep on moving in their ships even in such hair-raising conditions Greed for wealth infuses boldness in these pirates to face the terrors of such tormenting seas The illustrations vividly present this horrifying scene ***— Sutra-67, page-142***

OTHER BANDITS

Rogue thieves on the lookout for others wealth go into cities and trap the citizens They make a hole in the wall and commit burglary They have unlimited thirst for wealth For mutual distribution of such stolen things these thieves go to terrible places like cremation grounds The atmosphere is grim and oppressive there Even food or water is difficult to find at such places They go to such horrible places and divide their loot They also cook up conspiracies there Their bodies get weak and deformed in absence of proper food and water In their greed for wealth such bandits acquire karmas of demerit and as a consequence suffer great pain on rebirth as infernal beings or animals ***— Sutra-68, page-145***

strikes against the rising hills protruding in the sea The sea water flows heavily The sea is full to the brim due to the rivers like Ganga and others that flow in it The aquatic animals and the water currents moving about in its gigantic circular movement feel disturbed They jump up and down The sea is full of extremely dreadful, disturbed currents rising in it The crocodiles, tortoise and sea lions, large fishes, gharials, sunsumar, shvaapad and other aquatic animals strike against each other and run in order to devouver the other aquatic creatures So the sea becomes extremely dreadful The persons with weak heart tremble at its very sight It is extremely frightening and produces fear every moment It creates extreme restlessness Nobody can locate its banks and the end It appears to be in existence without any support like the sky Due to the influence of the winds arsing in it, the currents rise majestically one after the other and disturb the vision

In that sea a sound appears It roars like the roaring rain clouds It is like the one created by vyantar gods It is extremely dreadful It is like echoing sound heard upto a great distance It is full of thousands of disturbances created by angry Vyantar gods like Yakshas, Rakshas, Kushmand, Pishaach who cause panic every moment It is frequented by the traders who trade through the sea continuously with boats and ships They worship the sea through animal sacrifice, yajna and incense and further by offering blood The sea is as at the time of doomsday and it is extremely difficult to cross it It is extremely dreadful as it is the master of Ganga and others The travel in it is full of several dangers and troubles It is very difficult to enter in it It is extremely difficult to cross it It is full of troubles to depend on it It is full of salty water

The sea robbers with black and white flags raised high move in it at a very fast speed in order to rob the travellers They attack the ships of the traders with ships equipped with sails at the centre of the sea and destroy them

विवेचन कभी-कभी दूर से देखने मे सागर शान्त दृष्टिगोचर होता है, किन्तु किस क्षण वह भयकर रौद्र प्रलयकारी रूप धारण कर लेगा, यह निश्चय करना कठिन है। आधुनिक काल मे जब मौसम, आँधी-तूफान आदि को पहले ही सूचित कर देने वाले अनेक प्रकार के साधन-यन्त्र आदि आविष्कृत हो चुके है और जलयान भी अत्यधिक क्षमता वाले सभी साधनो से सुसज्जित हो चुके है, तब भी अनेको यान डूबते रहते है। लाखो

लोगो की जीवन–लीला समाप्त हो जाती है। समुद्री तूफानो के कारण प्राचीन काल मे जो उत्पातसूचक यन्त्रो का प्राय अभाव था और यानों की भी इतनी क्षमता के अभाव मे समुद्रयात्रा कितनी सकट–परिपूर्ण होती होगी, यह कल्पना करना कठिन नही है। आगमो मे समुद्री तूफानो मे डूबने वाले यात्रा वर्णन का उल्लेख मिलता है। इसी कारण समुद्रयात्रा प्रारम्भ करने के पूर्व यात्री शुभ दिन, तिथि, नक्षत्र आदि देखने के साथ अनेकानेक देवी–देवताओ की पूजा–अर्चा भी करते थे। क्योकि यह माना जाता था कि यात्रा मे व्यन्तर देव भी विविध प्रकार के विघ्न उपस्थित करते रहते है।

फिर भी धन के लोभ से प्रेरित होकर वणिक् जन जान–माल का खतरा सिर पर उठाकर समुद्रयात्रा करते थे और एक देश का माल दूसरे देश मे ले जाकर बेचते थे।

समुद्रयात्रा मे प्राकृतिक अथवा दैविक प्रकोप के अतिरिक्त समुद्री लुटेरो का भय भी बहुत रहता था। ये लुटेरे अपने प्राणो को सकट मे डालकर केवल लूटमार के लिए ही भयकर सागर मे प्रवेश करते थे। वे नौका–वणिको को लूटते थे और कभी-कभी उनके प्राणो को भी हर लेते थे। उक्त पाठ मे यही सभी तथ्य प्रकट किये गये है।

Elaboration—Sometimes the sea appears to be quiet from a distance But it cannot be said when it may turn violent Now such instruments have been invented which inform about weather, storms and the like in advance and there are ships of very great capability Still many ships sink Lakhs of people lose their life One can imagine how much frightening and full of disturbance was the sea travel in ancient times due to sea storms and lack of instruments providing advance information Even the ships of present day capacity were not there in those days In scriptures we find description of ships sinking in the sea due to sea storms So before starting on sea voyage, the travellers used to look into the proper day, date, constellation for safe journey Further they used to worship many gods and goddesses for this purpose It was believed that Vyantar gods create disturbances of many types in sea travel

Still in order to earn more money, the businessmen used to undertake sea travel caring little for the dangers involved They used to take goods from one country and sell in the other

In sea travel there is fear of natural danger, of gods and of sea robbers The sea robbers enter the dreadful sea at great risk to their lives in order to rob people They used to rob the traders travelling by boat Sometimes they even killed them All these facts are quite evident in this aphorism

६८. णिरणुकंपा णिरवयक्खा गामागर–णगर–खेड–कब्बड–मडंब–दोणमुह–पट्टणासम–णिगम–जणवए य धणसमिद्धे हणंति थिरहियय–छिण्ण–लज्जा–बंदिग्गह–गोग्गहे य गिण्हंति दारुणमई णिक्किवा णियं हणंति छिंदंति गेहसंधि णिक्खित्ताणि य हरति धणधण्णदव्वजायाणि जणवय–कुलाणं णिग्घिणमई परस्स दव्वाहिं जे अविरया।

६८. पराया धन चुराने वाले लोगो का हृदय अत्यन्त कठोर, अनुकम्पा, दया से शून्य होता है, वे परलोक की जरा भी परवाह नही करते, ऐसे लोग धन से समृद्ध ग्रामो, आकरो, नगरो, खेटो, कर्बटो, मडम्बो, पत्तनो, द्रोणमुखो, आश्रमो, निगमो एव देशो को नष्ट कर देते–उजाड देते है। और वे अत्यन्त कठोर हृदय वाले या निहित स्वार्थ वाले, निर्लज्ज लोग मानवो को बदी बनाकर अथवा गायो आदि पशुओ को पकडकर ले जाते है। दारुण मति वाले, निर्दय या निकम्मे अपने–आत्मीय जनो का भी घात कर देते है। वे घरो मे सेध लगाते है।

जो परकीय द्रव्यो के लोभ से निवृत्त नही है, ऐसे निर्दय बुद्धि वाले (वे चोर) लोगो के घरो मे रखे हुए धन–धान्य एव अन्य प्रकार के द्रव्य के समूहों को चुरा लेते है।

68. The people who steal the money belonging to others are extremely rude They have no compassion They care a fig for the next life. They destroy or ruin prosperous villages, towns, colonies, cities, ports, corporations, ashrams, municipalities, aakars, khetas, karbats, ports They always look to their personal gain They are shameless They make the people prisoners and carry away the cattle They are fierce, cruel and insolent They kill even their own relations They break into the houses

Those thieves have no mercy They are always greedy for the property of others They steal money, grains and other articles stored by people

विवेचन चोरी करने वाले लोग प्राय निर्दय–अनुकम्पाहीन और क्रूर होते है, उन्हे अदत्तादान के परिणामस्वरूप परलोक मे होने वाली दुर्दशाओ की परवाह नही होती क्योकि वे प्राय अदूरदर्शी और लोभग्रस्त रहते है। दयावान और परलोक से डरने वाले विवेकी जन इस इह–परलोक–दु खप्रद कुकृत्य मे प्रवृत्त नही होते।

प्रस्तुत पाठ मे आये कुछ विशेष शब्दो के अर्थ इस प्रकार हैं–

ग्राम–छोटी बस्ती। जहाँ किसानो की बहुलता हो। **आकर**–जहाँ सोना–चाँदी आदि की खाने हो। **खेड–खेट**–धूल के परकोटे वाली बस्ती।

कब्बड–कर्बट–जहाँ थोडे मनुष्य रहते हो।

मडम्ब–जिसके आस–पास कोई बस्ती न हो।

द्रोणमुख–जहा जल एव स्थल दोनो मार्ग हो ऐसा बन्दरगाह।

पत्तन–पाटन–जहाँ जलमार्ग से अथवा स्थलमार्ग से जाया जाये।

आश्रम–तापसजनो का निवास हो।

निगम–जहाँ व्यापारी बहुतायत से निवास करते हो।

Elaboration—The people engaged in theft are often cruel and ferocious They have no compassion They care little for the tortured and wretched state in the next life as a result of stealing (adattadan) activity They are not far-sighted They are engrossed in greed The persons who are compassionate, who have a fear about the next life, who have sense of discrimination, they do not engage themselves in such bad activities

The meanings of some technical terms in this aphorism are as follows

Gram—A small colony **Aakar**—The place where mines of gold etc exist **Khed**—A colony of with sand boundry walls **Karbat**—Place where a few people reside **Madamb**—A habited place not having a colony nearby **Dronmukh**—Harbour **Pattan**—Place connected with sea route or land route **Ashram**—Place where hermits live **Nigam**—Place where businessmen live in majority

६९. तहेव केई अदिण्णादाणं गवेसमाणा कालाकालेसु सचरता चियकापज्जलिय–सरस–दर–दड्ड–कड्डियकलेवरे रुहिरलित्तवयण–अक्खय–खाइयपीय–डाइणिभमंत–भयकर जंबुयक्खिक्खियंते घूयकयघोरसद्दे वेयालुट्ठिय–णिसुद्ध–कहकहिय–पहसिय–बीहणग–णिरभिरामे अइदुब्भिगध–बीभच्छदरिसणिज्जे।

सुसाणवण–सुण्णघर–लेण–अतरावण–गिरिकदर–विसमसावय–समाकुलासु वसहीसु किलिस्सता सीयातव–सोसिय–सरीरा दड्डच्छवी।

णिरयतिरिय–भवसकड–दुक्ख–सभारवेयणिज्जाणि पावकम्माणि सचिणता।

दुल्लहभक्खण्ण–पाणभोयणा पिवासिया झुझिया किलता मंस–कुणिमकंदमूल–जं किंचिकयाहारा उव्विग्गा उप्पुया असरणा अडवीवास उवेति वालसय–संकणिज्जं।

६९. इसी प्रकार कितने ही लोग (चोर) चोरी के लिए धन आदि की खोज करते हुए समय और कुसमय–अर्ध–रात्रि आदि विषम काल मे इधर–उधर भटकते हुए ऐसे श्मशान मे फिरते है जहाँ चिताओ मे जलती हुई, रुधिर आदि से युक्त, अधजली एव खीच ली गई लाशे पडी है तथा रक्त से लथपथ मृत शरीरो को पूरा खा लेने और रुधिर पी लेने के पश्चात् इधर–उधर घूमती हुई डाकिनो के कारण जो अत्यन्त भयावना जान पडता है, जहाँ गीदड खी–खी ध्वनि कर रहे है। उल्लुओ की डरावनी

आवाज आ रही है। भयोत्पादक एव विद्रूप पिशाचो, बेतालो द्वारा ठहाका मारकर अट्टहास करने से जो अतिशय भयावना एव अरमणीय हो रहा है और जो अतीव तीव्र दुर्गन्ध से घिनौना होने के कारण देखने मे भीषण जान पडता है।

(वे तस्कर) ऐसे शून्य स्थानो के अतिरिक्त वनो मे, सूने घरो मे, लयनो-शिलाओ से बने घरो मे, मार्ग पर बनी हुई दुकानो, पर्वतो की गुफाओ, ऊबड-खाबड स्थानो और सिह, व्याघ्र आदि हिंसक प्राणियो से व्याप्त स्थानो मे (राजदण्ड से बचने के लिए) इधर-उधर मारे-मारे फिरते है। उनके शरीर की चमडी सर्दी और गर्मी से सूखकर सिकुड गई है। सर्दी-गर्मी की तीव्रता के कारण चमडी जल जाती है या चेहरे की कान्ति मद पड जाती है।

वे नरक भव मे और तिर्यच भव रूपी गहन वन मे होने वाले निरन्तर असह्य दु खो की अधिकता द्वारा भोगने योग्य पापकर्मों का सचय करते है, अर्थात् अदत्तादान के पाप से नरक की एव तिर्यंचगति की तीव्र वेदनाओ को निरन्तर भोगे बिना छुटकारा नही मिलता। ऐसे घोर पापकर्मों का वे सचय करते है।

(जगल मे कभी यहाँ और कभी वहाँ लुक-छिपकर भटकते-छिपते रहने के कारण) उन्हे खाने योग्य अन्न-चावल, गेहूँ आदि और पीने के लिए जल भी दुर्लभ होता है। कभी प्यास से पीडित रहते है, कभी भूखे रहते है, थके रहते है और कभी-कभी माँस, मुर्दा शरीर, कभी कन्दमूल आदि जो कुछ भी मिल जाता है, उसी को खाकर रहना पडता है। वे निरन्तर उद्विग्न-घबराये हुए रहते है, सदैव एक स्थान से दूसरे स्थान पर भागते रहते है। उनका कोई शरणदाता नही होता। इस प्रकार वे जगल मे रहते है, जहाँ सैकडो सर्पो (अजगरो, भेडियो, सिहो, व्याघ्रों) आदि का भय बना रहता है अर्थात् विषैले और हिसक जन्तुओ के कारण जो सदा शकाजनक बना रहता है।

69. Similarly some thieves, in order to commit theft move in odd hours—say at midnight—in cremation ground where pyres are lit, blood is scattered, half-burnt dead bodies have been pulled out, and which appears to be highly frightening as witches move about after eating the dead corpses and drinking their blood The jackals howl The owls make bleating sound causing fear The demons, betaals laugh in a shocking and frightening manner At this the entire environment is becoming non-pleasant since extremely sharp bad smell is spreading, it is also becoming highly despising to look at

Those thieves wander about in such vacant places or in forests, ruins, stone huts, wayside shops, hilly caves, undulating areas, and in places visited by lions, tigers and other hunting beasts (in order to avoid punishment of the government) The skin on their body has dried up due

to terrible cold and heat Their skin has burnt because of hoary winter and severe summer The glow on their face has also gone down

They collect demerit Karmas, which shall lead them to hell or animal state of existence where they shall have to bear continuously pain of such a dreadful living In other words due to the sin committed by adattadan (thefts), one cannot avoid the Karmas so collected without undergoing deep pain and tortures of hell and animal state of existence continuously They collect such dreadful Karmas in large quantity

(Since they wander about in the forest concealing themselves) It is difficult for them to get foodstuff such as rice and wheat to eat and good water to drink They remain sometimes thirsty, sometimes hungry, sometimes tired Sometimes they have to eat raw flesh, a dead body, or the vegetables grown underground, whatever is available there They remain always in a bewildered condition They always run away from one place to another They do not get protection from any one Thus they remain in the forest where there is always the fear of hundreds of snakes (cobras, leopards, lions, tiger) and other creatures In other words, due to the presence of such animals and beasts that kill for their food, they always remain disturbed

७०. अयसकरा तक्करा भयकरा कास हरामोत्ति अज्ज दव्वं इह सामत्थं करेति गुज्झं। बहुयस्स जणस्स कज्जकरणेसु विग्घकरा मत्तपमत्तपसुत्त–वीसत्थ–छिद्दघाई वसणब्भुदएसु हरणबुद्धी विगव्व रुहिरमहिया परेति णरवइ–मज्जायमइक्कंता सज्जणजणदुगंछिया सकम्मेहिं पावकम्मकारी असुभपरिणया य दुक्खभागी णिच्चाविलदुहमणिव्वुइमणा इहलोए चेव किलिस्संता परदव्वहरा णरा वसणसयसमावण्णा।

७०. वे अपने खानदान की बदनामी व अपकीर्ति का काम करने वाले और दूसरो के लिए भय उत्पन्न करने वाले तस्कर चोरी करने से पहले परस्पर ऐसी गुप्त मत्रणा करते रहते है कि आज किसका धन चुराये। वे बहुत से मनुष्यो के कामो मे विघ्न डालते है। नशे मे चूर हुए तस्कर बेसुध सोए हुए और विश्वास रखने वाले लोगो का अवसर देखकर घात कर देते है। दुर्व्यसनो, विपत्तियो और उत्सव आदि खुशी के मौको पर चोरी करने की बुद्धि वाले होते है। भेडियो की तरह अति क्रूर रुधिर–पिपासु होकर इधर–उधर भटकते रहते है। वे राज्यशासन द्वारा बनाये हुए कानूनो का उल्लघन करने वाले, सज्जन पुरुषो द्वारा निन्दा के पात्र एव पापकर्म करने वाले (चोर) अपनी ही करतूतो के कारण अशुभ परिणाम वाले और दु ख के भागी होते है। सदैव मलिन, दु खक्रान्त अशान्तियुक्त चित्त वाले ये दूसरो का धन हरण करने वाले इसी जन्म मे सैकडो कष्टो से घिरकर क्लेश पाते हैं।

70. They bring ill fame and dishonesty to their family by their activities relating to stealing Before committing theft that frightens others, the thieves among themselves plan where should they commit theft They cause disturbance in the functioning of many people In their intoxicated state they attack sleeping people and even those who have trust in them They overpower those who are adversely in a state of intoxication They commit theft at the time of festivals or when others are engaged in bad habit or are in trouble They wander about hither and thither in a ferocious state, thirsty of blood of others like a leopard They transgress the law of the state The noble people condemn them They commit bad deed Such thieves face dire consequences as a result of their own deeds They bear troubles They always have a restless, sadly affected and ill bent of mind They take away money belonging to others They face hundreds of troubles in this very life

चोर को बन्दीगृह मे होने वाली यातनाएँ **JAIL TORTURES TO THIEVES**

७१. तहेव केइ परस्स दव्वं गवेसमाणा गहिया य हया य बद्धरुद्धा य तुरियं अइधाडिया पुरवरं समप्पिया चोरग्गह–चारभडचाडुकराण तेहि य कप्पडप्पहार–णिद्दयआरक्खिय–खरफरुसवयण–तज्जण–गलच्छल्लुच्छल्लणाहिं विमणा चारगवसहिं पवेसिया णिरयवसहिसरिसं।

तत्थवि गोमियप्पहार–दूमणणिब्भच्छण–कडुयवयणभेसणगभयाभिभूया अक्खित्तणियंसणा मलिणदंडिखंडणिवसणा उक्कोडालं–चपासमग्गणपरायणेहिं दुक्खसमुदीरणेहिं गोम्मियभडेहिं विविहेहिं बधणेहिं।

७१. पहले कहे अनुसार दूसरो का धन चुराने की फिराक मे फिरते हुए कई चोर (आरक्षको–पुलिस आदि के द्वारा) पकड लिए जाते है और उन्हे मारा–पीटा जाता है, रस्सो आदि से बाँधा जाता है और कारागार मे कैद किया जाता है। उन्हे जल्दी–जल्दी खूब घुमाया–दौडाया जाता है। बडे नगरो मे पहुँचाकर उन्हे पुलिस आदि अधिकारियो को सौप दिया जाता है। तत्पश्चात् चोरो को पकडने वाले, चौकीदार, सिपाही मीठी–मीठी बाते बनाकर उन्हे कारागार मे ठूँस देते है। चमडे के चाबुको के प्रहारो से, कठोर हृदय सिपाहियो के तीक्ष्ण एव कठोर वचनो की डाट–डपट से तथा गर्दन पकडकर धक्के देने से उनका चित्त खेदखिन्न होता है। उन चोरो को नरकावास सरीखी काल कोठरी मे जबर्दस्ती घुसेड दिया जाता है।

(किन्तु कारागार मे भी उन्हे चैन कहाँ ?) वहाँ भी वे कारागार के अधिकारियो द्वारा विविध प्रकार

के प्रहारो, अनेक प्रकार की कठोर यातनाओ, झिडकियो व कठोर तथा भयोत्पादक वचनो से भयभीत होकर दु खी बने रहते है। उनके पहनने-ओढने के वस्त्र छीन लिए जाते है। वहाँ उनको मैले-कुचैले फटे वस्त्र पहनने को मिलते है। बार-बार उन कैदियो (चोरो) से रिश्वत मॉगने मे तत्पर कारागार के निर्दय तथा लोभी रक्षको द्वारा अनेक प्रकार के बन्धनो मे वे बाँध दिये जाते है।

71. As mentioned above, the thieves wander about in order to commit theft Some of them are caught by the security guards or police They are then severely beaten They are tied with ropes and put in the prison They are made to run quickly in order to torture them They are brought to the town and handed over to the police Thereafter the thief-catchers, the security guards or the policemen talk to them in a sweet deceptive voice and thrust them in the prison They are beaten with cloth-made lashes The hard-hearted policemen rebuke them with harsh words and push them from their neck Thus they feel deeply dejected Those thieves are imprisoned forcibly in hell-like cells

(But even in jail they have no peace) The jailors torture them in various ways They cause them severe troubles and rebuke them with dreadful words Thus they remain troubled as a result of fear Their clothes are snatched They get torn and dirty clothes to wear The cruel greedy officials demand bribe from them again and again They are chained or bound in different ways by the cruel and greedy jail officials

७२. [प्र] किं ते ?

[उ] हडि–णिगड–बालरज्जुय–कुदंडग–वरत्त–लोहसंकल–हत्थंदुय–बज्झपट्ट–दामक–णिक्कोडणेहिं अण्णेहि य एवमाइएहिं गोम्मिगभडोवगरणेहिं दुक्खसमुदीरणेहिं।

सकोडणमोडणाहिं बज्झंति मंदपुण्णा। सपुड–कवाड–लोहपंजर–भूमिघर–णिरोह–कूव–चारग–कीलग–जुय–चक्कविततबधण खभालण–उद्धचलण–बधणविहम्मणाहि य विहेडयंता।

अवकोडगगाढ–उर–सिरबद्ध–उद्धपूरिय फुरंत–उर–कडगमोडणा–मेडणाहिं। बद्धा य णीससंता।

सीसावेढ–उरुयावल–चप्पडग–संधिबंधण–तत्तसलाग–सूइया–कोडणाणि तच्छणविमाणणाणि य खारकडुय–तित्त–णावणजायणा–कारणसयाणि बहुयाणि पावियंता।

उरक्खोडी–दिण्ण–गाढपेल्लण–अट्ठिगसंभग्गसपंसुलिगा गलकालकलोहदंड–उर–उदर–वत्थि–परिपीलिया मत्थंत–हिययसंचुण्णियंगमंगा आणत्तीकिंकरेहिं।

केई अविराहिय–वेरिएहिं जमपुरिस–सण्णिहेहिं पहया ते तत्थ मंदपुण्णा चडवेला–वज्झपट्टपाराइ–छिव–कस–लत्तवरत्त–णेत्तप्पहारसयतालि–यंगमंगा किवणा लंबंतचम्मवणवेयणविमुहियमणा घणकोट्टिम–णियलजुयलसंकोडियमोडिया य कीरंति णिरुच्चारा असचरणा, एया अण्णा य एवमाईओ वेयणाओ पावा पावेंति।

७२. [प्र.] चोरो को जिन विविध बन्धनो से बाँधा जाता है, वे बन्धन कौन–कौन से है ?

[उ] हडि–खोडा या काठ की बेडी, जिसमे चोर का एक पाँव फँसा दिया जाता है, लोहे की बेडी, बालो से बनी हुई रस्सी, जिसके किनारे पर रस्सी का फदा बाँधा जाता है, ऐसा एक विशेष प्रकार का काष्ठ, चर्म से बने मोटे रस्से, लोहे की साँकल, हथकडी, चमडे, का पट्टा, पैर बाँधने की रस्सी तथा निष्कोटन नाम का एक विशेष प्रकार का बन्धन, इन सब तथा इसी प्रकार के अन्य–अन्य दु खो को समुत्पन्न करने वाले कारागार-कर्मचारियो के उपकरणो द्वारा पापी चोरो को बाँधकर पीडा पहुँचाई जाती है।

इतना ही नही, उन पापी चोर कैदियो के शरीर को सिकोडकर और मोडकर जकड दिया जाता है। कैद की कोठरी (काल–कोठडी) मे डालकर किवाड बन्द कर देना, लोहे के पिजरे मे डाल देना, भोयरे–तलघर मे बन्द कर देना, कभी गहरे कुएँ मे उतारना, जेलखाने के सीखचो से बाँध देना, अगो मे कीले ठोक देना, (बैलो के कधो पर रखा जाने वाला) जूवा उनके कधे पर रख देना अर्थात् बैलो के स्थान पर उन्हे गाडी मे जोत देना, गाडी के पहिये के साथ बाँध देना या पहिया गले मे डाल देना, बाहो, जाँघो और सिर को कसकर बाँध देना, खम्भे से चिपटा देना, पैरो को ऊपर और मस्तक को नीचे की ओर करके लटका देना इत्यादि अनेक प्रकार के बन्धन है जिनसे बाँधकर अधर्मी जेल–अधिकारियो द्वारा चोर बाँधे जाते है-पीडित किये जाते है।

फिर चोरी करने वालो की गर्दन नीची झुकाकर, छाती और सिर को कसकर बाँध दिया जाता है, तब वे नि श्वास छोडते है अथवा कसकर बाँधे जाने के कारण उनका श्वास रुक जाता है अथवा उनकी आँखे ऊपर को आ जाती है। डर व पीडा के मारे उनकी छाती धक्–धक् करती रहती है। उनके अग मोडे जाते है, वे बारम्बार उल्टे किये जाते है। वे अशुभ विचारो मे डूबे रहते है और ठण्डी आहे छोडते है।

कारागार के अधिकारियो की आज्ञा का पालन करने वाले कर्मचारी उनको विविध यातनाएँ देते है, जैसे चमडे की रस्सी से उनके मस्तक (कसकर) बाँध देते है, दोनो जघाओ को चीर देते है या मोड देते है। काठ के एक खास यत्र से उनके घुटने, कोहनी, कलाई आदि जोडो को बाँधा जाता है। तपी हुई लोहे की सलाइयाँ एव सुइयाँ शरीर मे चुभोई जाती है। उनका शरीर वसूले से लकडी की भाँति छीला जाता है। मर्मस्थलो को पीडित किया जाता है। शरीर पर बने घावो पर नमक आदि क्षार पदार्थ, नीम आदि

कटुक पदार्थ और लाल मिर्च आदि तीखे पदार्थ उनके अन्य कोमल अगो पर छिडके जाते है। इस प्रकार सैकडो उपायो द्वारा बहुत-सी यातनाएँ वे भोगते रहते है।

(इतने से ही गनीमत कहाँ ?) उनकी छाती पर वजनदार काठ रखकर जोर से दबाने अथवा मारने से उनकी हड्डियाँ भग्न हो जाती है-पसली-पसली ढीली पड जाती है। मछली पकडने के काँटे के समान घातक काले लोहे के नोकदार डण्डे छाती, पेट, गुदा और पीठ मे भोक देने से वे अत्यन्त पीडा से तडफने लगते है। ऐसी-ऐसी यातनाएँ पहुँचाने के कारण अदत्तादान करने वालो का हृदय मथ दिया जाता है और उनके अग-प्रत्यग चूर-चूर कर दिये जाते है।

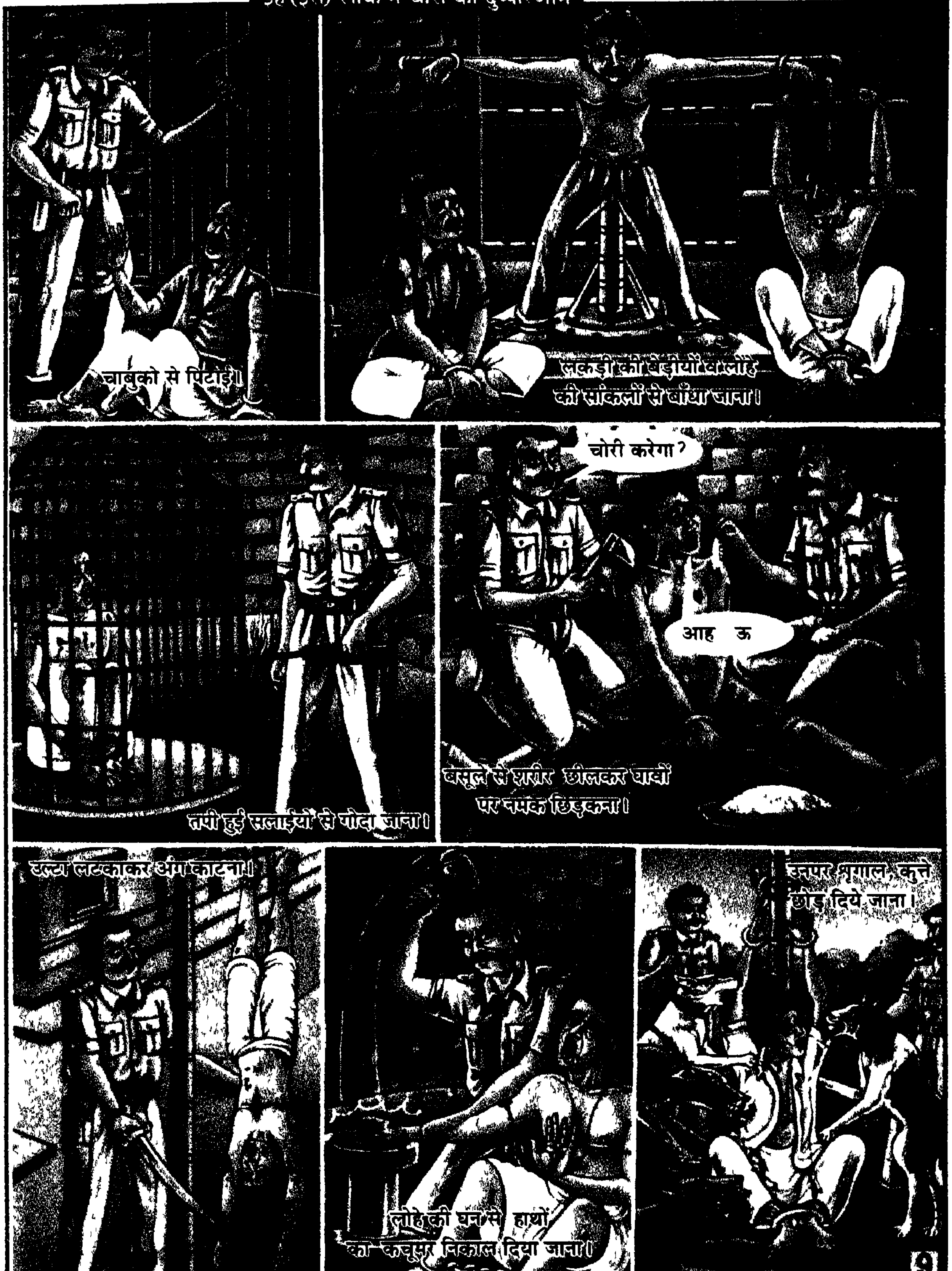
कोई-कोई चोर जिन्होने कोई बडा अपराध नही किया है, फिर भी वैर-भाव रखने वाले सिपाही या कारागार के कर्मचारी यमदूतो के समान उनको मारते-पीटते है। इस प्रकार कारागार मे अभागे-मन्दपुण्य चोरो को थप्पडो, मुक्को, चर्मपट्टो, लोहे के कुशो, लोहमय तीक्ष्ण शस्त्रो, चाबुको, लातो, मोटे रस्सो और बेतो के सैकडो प्रहारो से अग-अग को प्रताडित करके पीडित किये जाते है। शरीर पर लटकती हुई चमडी पर हुए घावो की वेदना से वे बेचारे चोर दिग्मूढ बन जाते है। लोहे के घनो से कूट-कूटकर बनायी हुई दोनो बेडियो को पहनाये रखने के कारण उनके अग सिकुड जाते है, मुड जाते है और शिथिल पड जाते है। यहाँ तक कि उनको मल-मूत्र त्याग भी नही करने देते। अथवा उन्हे बोलने भी नही दिया जाता है अर्थात् उनकी बोली भी बन्द कर दी जाती है। उनका चलना-फिरना रोक दिया जाता है। ये और इसी प्रकार की अन्यान्य वेदनाएँ वे अदत्तादान का पाप करने वाले पापी भोगते है।

72. [Q.] The thieves are chained in various ways What are those ways ?

[Ans.] One foot of the thief is trapped in wooden block They are chained in iron fetters They are bound with rope made of hair or with a special type wood which has a noose of rope at one end They are tied with thick rope made of leather They are tied with iron bars and handcuffs They are tied with leather belts Their feet are tied with rope They are tied with nishkotan—a special type of bondage They are troubled and tortured by the cruel jail officials with such bondage and in many other ways

Not just this, those sinning prisoners charged with theft are squeezed, bent and tied like that These thieves are confined and tortured by cruel jailers in many way including—putting in isolation chambers and locking, putting in an iron cage, locking them in an underground cell, suspending them in a deep well, tying them to iron bars, nailing their body-parts, tying them under a yoke (harnessing them

इह (इस) लोक में चोरी का दुष्परिणाम



चित्र-परिचय 9

Illustration No. 9

चोरों को बन्दीगृह में होने वाले दु:ख-दण्ड-यातनाएँ

अपनी इन्द्रियो के गुलाम होकर पराये धन को लूटने की लालसा रखने वाले चोरो को दिये जाने वाले उग्रतम दण्डो का चित्रण यहाँ किया गया है।

राज्यकर्मियो द्वारा पकडे जाने पर उन्हे चाबुको से पीटा जाता है। लोहे की बेडियाँ हाथ-पैरो मे डाल दी जाती है। काष्टमय बन्धनो के सिरे पर लकड़ी बाँधकर हथकड़ी से हाथ-पैर बाँध दिये जाते हैं। लोहे के पिजरे मे बन्द कर तपी हुई सलाईयो से उनके शरीर को गोद दिया जाता है। उनके शरीर को बसूले से छीलकर घावो पर नमक छिडक दिया जाता है। राजमार्ग या सार्वजनिक स्थानो पर उल्टा लटकाकर अग-अग काट दिये जाते हैं। कभी कभी लोहे के घन से हथेली का कचूमर निकाल दिया जाता है। उन्हे बाँधकर उनके ऊपर शृगाल और कुत्ते छोड दिये जाते हैं। जो उनके अगो को नोच-नोचकर खा जाते है।

चित्र को देखने से स्पष्ट हो जाता है कि प्राचीनकाल मे चोरी करना कितना भीषण अपराध माना जाता था और चोरी करने वालो को कितने भीषण दण्ड दिये जाते थे।

—सूत्र 72, पृ 150

TORMENT GIVEN TO THIEVES

This illustration presents the extreme punishment given to the thieves who being slaves of their senses, deprive others of their wealth

When apprehended by state officials they are whipped and shackled with iron chains After being shackled they are put in wooden traps They are put in iron cage and pierced with hot iron rods Their body is torn with planers and salt is sprinkled on the wounds They are hanged upside down in public places and sliced Also their palms are crushed with a blow of heavy hammer They are tied and thrown to jackals and dogs that snatch at and cut their body

The illustration reveals that in ancient times theft was considered a very serious crime and extreme punishment was given for it

— *Sutra-72, page-120*

in a cart in place of bullocks), tying them to a wheel (or placing a wheel on their necks), tying their hands, thighs or head tightly, tying them tight to a pillar, and suspending them from their feet

Thereafter, the neck of the thieves is lowered and the head and the chest are tied tightly When they exhale their breathing stops due to the tight bondage and their eyes bulge out. The heart beat increases due to fear and pain Their limbs are twisted They are again and again turned to face ground while lying They remain engrossed in sad thought and seek mercy

The employees working under the jail superintendent cause them tortures of various types They tie their forehead tightly with leather stripes They twist or split their thighs They put their knees, elbows, wrists and other joints in a special type of wooden block They prick their body with hot iron needles They peal their body with planing tool like planing of the wood They hurt their delicate parts They put salt on their wounds They put bitter substances like neem and chilly powder on the soft parts of their body Thus they are tortured in many ways

(The tortures are not stopped at this stage) A heavy piece of wood is placed on their chest and then it is pressed hard or the piece of wood is hit against them As a result of it their bones get fractured and their ribs get loosened Point sharp iron rods similar to those used to catch fist are pressed into their chest, belly, waist and back Then they bemoan bitterly because of pain Thus the heart of those who commit adattadan is shaken through suchlike tortures and every limb of their body is adversely affected

Some thieves have not committed a grave crime. But the policemen, who are inimical towards them, beat them like guardians of hell Thus the unfortunate thieves are beaten with slaps, fists, leather belts, iron rods, sharp iron weapons, lashes, legs, thick ropes and cane. Their limbs are troubled by hundreds of suchlike beatings They become deeply sad due to the wounds on their loosely hanging skin Their limbs shrink as they have to wear iron fetters, they also twist and become numb The officials do not allow them even to go for a call of nature They are not allowed even to utter a word. Their movement is stopped. The persons who commit the sin of adattadan undergo suchlike many tortures and troubles

७३. अदंतिंदिया वसट्टा बहुमोहमोहिया परधणम्मि लुद्धा फासिंदिय–विसय–तिव्वगिद्धा इत्थिगयरूवसद्दरसगंधइट्ठरइमहियभोगतण्हाइया य धणतोसगा गहिया य जे णरगणा, पुणरवि ते कम्मदुव्वियद्धा उवणीया।

रायकिंकराण तेसिं वहसत्थगपाढयाणं विलउलीकारगाणं लंचसयगेण्हगाणं कूडकवडमाया–णियडि–आयरणपणिहिवंचणविसारयाणं बहुविहअलियसयजंपगाणं परलोय–परम्मुहाणं णिरयगइगामियाणं।

तेहिं आणत्त–जीयदंडा तुरियं उग्घाडिया पुरवरे सिंघाडग–तिय–चउक्क–चच्चर–चउम्मुह–महापहपहेसु वेत–दड–लउड–कट्ठलेट्टु–पत्थर–पणालिपणोल्लिमुट्ठि–लया–पायपण्हि–जाणु–कोप्पर–पहारसंभग्ग–महियगत्ता।

७३. जिन्होने अपनी इन्द्रियो का दमन नही किया है अर्थात् इन्द्रियो के दास बन गये है, वशीभूत हो रहे है, जो तीव्र आसक्ति के कारण हिताहित का विवेक खो चुके है, पराये धन मे लुब्ध है, जो स्पर्शनेन्द्रिय के विषय मे तीव्र रूप से आसक्त है, स्त्री सम्बन्धी रूप, शब्द, रस और गध मे इष्ट रति तथा वाछित भोग की तृष्णा से व्याकुल है, जो केवल धन की प्राप्ति मे ही सन्तोष मानते है, ऐसे मनुष्यगण–राजपुरुषो द्वारा पकड लिए जाते है, फिर भी (पहले भी ऐसी यातनाएँ भोग लेने पर भी) वे पापकर्म के परिणाम को नही समझते।

वे राजपुरुष अर्थात् आरक्षक–पुलिस के सिपाही–वधशास्त्र पढे हुए होते है अर्थात् वध की विधियो को गहराई से समझते है। अन्याययुक्त दुष्ट कर्म करने वाले चोरो को गिरफ्तार करने मे चतुर होते है। वे तत्काल समझ जाते है कि यह चोर अथवा लम्पट है। वे सैकडो अथवा सैकडो बार रिश्वत लेते है। झूठ, कपट, माया, धूर्त्तता करके वेष–परिवर्तन आदि करके चोर को पकडने तथा उससे अपराध स्वीकार कराने मे अत्यन्त कुशल होते है, गुप्तचरी के काम मे अति चतुर होते है। वे नरकगतिगामी, परलोक से विमुख एव अनेक प्रकार से सैकडो असत्य भाषण करने वाले, ऐसे राजकिकरो–सरकारी कर्मचारियो के समक्ष उपस्थित कर दिये जाते है।

जिन्हे प्राण–दण्ड की सजा सुनाई गई है, उनको उन्ही राजकर्मचारियो द्वारा नगर मे त्रिकोण मार्गो, चौराहो, राजमार्गो, गलियो, बाजारो, देव मन्दिर आदि स्थानो मे जनसाधारण के सामने लाकर खडे कर दिये जाते है। तत्पश्चात् बेतो से, डण्डो से, लाठियो से, लकडियो से, ढेलो से, पत्थरो से, लम्बे लट्ठो से, पणोल्लि–एक विशेष प्रकार की लाठी से, मुक्को से, लताओ से, लातो से, घुटनो से, कोहनियो से उनके अग–अग भग कर दिये जाते है, उनके शरीर को मथ दिया जाता है।

73. The wretched people who have not controlled their senses, in fact they are slaves of their sense organs, they have lost the sense of discrimination between good and bad due to their deep attachment. They are drawn to others wealth, they are restless due to their sensual desire

relating to women for taking pleasure and enjoying their looks, words, fragrance, taste and touch They feel satisfied only in collecting money. Such people are caught by state officials Although they underwent tortures earlier, yet they do not understand the result of their condemnable deeds.

The state officials, the security guards and the policemen are well educated in the texts relating to tortures to criminals They know the depth of such tortures They are expert in arresting thieves who have committed grave crimes They immediately locate who is the thief or the person prone to sex They take bribe hundred times They are expert in catching the thief and getting the sin accepted by them through deceitful means Such as telling lies, crooked behaviour or posing in different dress They are adept in spying They (thieves) are then produced before such state officials who are engaged in activities leading to hell, who care a fig for the next life and who make hundreds of false speeches

The said state officials take the charge of those criminals who have been awarded capital punishment They are brought at three-way crossings, four-way crossings, highways, streets, bazaars, temples and other suchlike common places and made to stand there Then they are given thrashing with cane, sticks, stones, long rods, earthen lumps, special types of sticks (panolli), fists, legs, creepers, knees and elbows Thus their limbs are broken Their body is trampled

विवेचन प्रस्तुत पाठ मे चोरी रूप, पापकर्म के मूल मे निम्न कारण बताये गये है-

(१) इस पाप-प्रवृत्ति का प्रथम मूल कारण अपनी इन्द्रियो को वश मे न रखना है। इन्द्रियो की गुलामी ही चोरी का प्रेरक कारण है।

(२) दूसरा कारण है-परधन का लोभ।

Elaboration—In this aphorism, the following basic causes for committing theft have been mentioned

(1) The first basic cause is not to keep one's senses under control or to become slave of senses It inspires one to commit theft

(2) The second cause is to have greed for the money belonging to others

७४. अट्ठारसकम्मकारणा जाइयंगमंगा कलुणा सुक्कोट्ठकंठ-गलग-तालु-जीहा जायंता पाणीयं विगय-जीवियासा तण्हाइया वरागा तं वि य ण लभंति वज्झपुरिसेहिं धाडियंता। तत्थ य खर-

फरुसपडहघट्टिय-कूडग्गहगाढरुट्ठणिसट्ठपरामुट्ठा वज्झयरकुडिजुयणियत्था सुरत्तकणवीर-गहियविमुकुल-कंठे-गुण-वज्झदूयआविद्धमल्लदामा, मरणभयुप्पण्णसेय-आयतणेहुत्तुपियकिलिण्णगत्ता चुण्णगुंडियसरीर-रयरेणुभरियकेसा कुसुंभगोकिण्णमुद्धया छिण्ण-जीवियासा घुण्णंता वज्झयाणभीया।

तिलं तिलं चेव छिज्जमाणा सरीरविक्कित्तलोहिओलित्ता कागणिमंसाणि-खावियंता पावा खरफरुसएहिं तालिज्जमाणदेहा वातिग-णरणारीसंपरिवुडा पेच्छिज्जता य णगरजणेण बज्झणेवत्थिया पणेज्जति णयरमज्झेण किवणकलुणा अत्ताणा असरणा अणाहा अबंधवा बंधुविप्पहीणा विपिक्खिंता दिसोदिसिं मरणभयुव्विग्गा आघायणपडिदुवार-संपाविया अधण्णा सूलग्गविलग्गभिण्णदेहा।

७४. अठारह प्रकार के चोरो एव चोरी के प्रकारो के कारण उनके अग-अग पीडित कर दिये जाते है, उनकी दशा अत्यन्त करुणाजनक दयनीय होती है। उनके ओठ, कण्ठ, गला, तालु और जीभ सूख जाती है, जीवन की आशा उनकी समाप्त हो जाती है। वे बेचारे प्यास से पीडित होकर पानी माँगते है पर वह भी उन्हे नसीब नही होता। वहाँ कारागार मे वध (मृत्युदण्ड) के लिए नियुक्त पुरुष उन्हे धकेलकर या घसीटकर ले जाते है। अत्यन्त कर्कश ढोल बजाते हुए, राजकर्मचारियो द्वारा धकियाए जाते हुए तथा तीव्र क्रोध से भरे हुए राजपुरुषो, जल्लादो द्वारा फॉसी या शूली पर चढाने के लिए दृढतापूर्वक पकडे हुए वे अत्यन्त ही अपमानित होते है। उन्हे प्राणदण्ड प्राप्त मनुष्य के लिए खास दो वस्त्र पहनाये जाते है। लाल कन्नेर के फूलो की माला उनके गले मे पहनायी जाती है, जो वध्यदूत-सी (मृत्यु का दूत) प्रतीत होती है अर्थात् यह सूचित करती है कि इस पुरुष को शीघ्र ही मृत्युदण्ड दिया जाने वाला है। मौत के डर के कारण उनके शरीर से पसीना छूटता है, उस पसीने की चिकनाई से उनके सारे अग भीग जाते है-समूचा शरीर चिकना-चिकना हो जाता है। कोयले आदि के काले रग के चूर्ण से उनका शरीर पोत दिया जाता है। हवा से उडकर चिपटी हुई धूलि से उनके केश रूखे एव धूलभरे हो जाते है। उनके सिर केशो को कुसुभी-लाल रग से रग दिया जाता है। उनकी जिन्दा रहने की आशा नष्ट हो जाती है। अतीव भयभीत होने के कारण वे डगमगाते हुए चलते है-दिमाग मे चक्कर आने लगते है और वे वधको-जल्लादो से भयभीत बने रहते है।

उनके शरीर के तिल-तिल जितने-छोटे-छोटे टुकडे कर दिये जाते है। उन्ही के शरीर से काटे हुए और खून से लिप्त माँस के छोटे-छोटे टुकडे उन्हे खिलाए जाते है। कठोर एव कर्कश स्पर्श वाले नुकीले पत्थरो आदि से उन्हे पीटा जाता है। इस भयावह दृश्य को देखने के लिए अनियन्त्रित नर-नारियो की भीड एकत्र हो जाती है। नागरिक जन उन्हे (इस अवस्था मे) देखते है। फिर मृत्यु-दण्ड प्राप्त कैदी की पोशाक उन्हे पहनाई जाती है और नगर के बीचोबीच होकर ले जाया जाता है। उस समय वे चोर अत्यन्त दयनीय दिखाई देते है। त्राणरहित, अशरण, अनाथ, बन्धु-बान्धवविहीन, भाई-बदो द्वारा परित्यक्त वे इधर-उधर नजर डालते है (कि कोई सहायक-सरक्षक दीख जाये) और (सामने उपस्थित) मौत के भय से अत्यन्त घबराये हुए होते है। तत्पश्चात् उन्हे वध-स्थल पर पहुँचा दिया जाता है और उन अभागो को शूली पर चढा दिया जाता है, जिससे उनका शरीर छिन्न-भिन्न हो जाता है।

74. Their limb are tortured as they commit any of the eighteen types of thefts The thieves are thus of eighteen types Their condition is extremely pitiable Their lips, throats, tongues and palates get dried up They lose hope of survival They beg water as they feel extremely thirsty but they do not get water The officials pull them and push them into the prison Drums producing very harsh sounds are beaten They are pushed to the place of hanging by the state officials They are tightly held by the state officials and the hangmen in a state of extreme anger for hanging them on the scaffold They are cursed brutally The persons who have been awarded capital punishment have to wear two special clothes They are made to wear the garland of Kaner flowers of red colour It appears like guardian of death It indicates that the said criminal is going to be hanged soon They perspire due to the fear of death Their limbs become moist and muddy due to perspiration. Coal-like black powder is pasted on their body Their hair are dusty and dry due to flying dust sticking in them They move in a zig-zag manner in an extremely frightened condition They feel giddy They are frightened of the hangman

Their body is reduced to tiny pieces like sesame seeds They are made to eat small blood stained pieces of their own flesh They are beaten with pointed stones which are hard and rough There collects a crowd of men and women to see that dreadful scene The citizens see them in this condition Then they are dressed up in the apparel meant for the prisoner who has been awarded capital punishment They are taken out through the town At that times those thieves are seen in a very wretched condition They are without any protection or shelter They are orphans The relatives, family members discard them They look around in a pitiable condition (so that some one may help them). They feel extremely bewildered due to the fear of death Later they are brought to the scaffold ground and hanged on the scaffold Thus there souls become separated from their bodies

विवेचन प्राचीन काल मे चोरी करना कितना भारी अपराध गिना जाता था और चोरी करने वालो को कैसा भीषण दण्ड दिया जाता था, यह तथ्य इस वर्णन से स्पष्ट हो जाता है।

कल्पना कीजिए उस वीभत्स दृश्य की, जब वध्य का वेष धारण किये चोर नगर के बीच फिराया जा रहा हो ! उसके शरीर पर प्रहार हो रहे हो, अग काटे जा रहे हो और उसी का माँस उसी को खिलाया जा रहा हो, नर–नारियो के झुण्ड के झुण्ड उस दृश्य को देखने के लिए उमडे हुए हो। उस समय अभागे चोर की मनोभावनाएँ किस प्रकार की होती होंगी ? चोर को दिये जाने वाले घोर दण्ड की कल्पना से ही रोगटे खडे हो जाते है।

प्रस्तुत पाठ मे अठारह प्रकार के चोरो या चौर्य प्रकारो का उल्लेख किया गया है। वे अठारह प्रकार ये हैं-

भलनं कुशलं तर्जा, राजभागोऽवलोकनम्।
आमर्गदर्शनं शय्या, पदभंगस्तथैव च॥१॥

विश्रामः पादपतनमासन गोपन तथा।
खण्ड स्यखादन चैव, तथाऽन्यन्माहराजिकम्॥२॥

पद्याग्न्युदकरज्जूना प्रदान ज्ञानपूर्वकम्।
एता प्रसूतयो ज्ञेया अष्टादश मनीषिभि ॥३॥

१ डरते क्यो हो? मै तुम्हारा बाल बाँका नही होने दूँगा, इस प्रकार चोर को प्रोत्साहन देना।

२ चोर के मिलने पर उससे कुशल-क्षेम पूछना।

३ चोर को चोरी के लिए हाथ आदि से इशारा करना।

४ राजकीय कर--टैक्स नही देना या चुराना।

५ चोरी करते देखकर भी मौन रह जाना।

६ चोरो की खोज करने वालो को विपरीत मार्ग बताना।

७ चोरो को सोने के लिए शय्या आदि देना।

८ चोरो के पैरो के निशान मिटाना।

९ चोर को अपने घर मे छिपाना या विश्राम देना।

१० चोर को नमस्कार करके सन्मान देना।

११ चोर को 'आइये, बैठिये' कहकर आसन आदि देना।

१२ चोर को छिपाना--छिपाकर रखना।

१३ चोर को प्रेमपूर्वक मिठाई आदि खिलाना।

१४ चोर को गुप्त रूप से आवश्यक वस्तुएँ भेजना या 'महाराज' आदि सूचक शब्दो से पुकारना।

१५ थकावट दूर करने के लिए चोर को गर्म पानी, तेल आदि देना।

१६ भोजन पकाने आदि के लिए चोर को अग्नि देना।

१७ चोर को पीने के लिए ठण्डा पानी देना।

१८ चोर को चोरी करने के लिए अथवा चोरी करके लाये पशु को बाँधने के लिए रस्सी-रस्सा देना।

ये अठारह दोष चोरी की प्रसूति-उत्पत्ति के कारण है। चोरो के साथ जानबूझकर पूर्वोक्त व्यवहार करने वाले को चोरी का दोष लगता है।

चौरश्चौरार्पको मत्री, भेदज्ञ· काणकक्रयी।
अन्नद· स्थानदश्चैव, चोर· सप्तविध स्मृत·॥

(१) स्वय चोरी करने वाला, (२) चोरी करवाने वाला, (३) चोरी करने की सलाह देने वाला, (४) भेद (गुर) बताने वाला-कैसे, कब और किस विधि से चोरी करना इत्यादि बाते सिखाने वाला, (५) चोरी का माल (कम कीमत मे) खरीदने वाला, (६) चोर को खाने-पीने की सामग्री देने वाला-जंगल आदि गुप्त स्थानो में रसद पहुँचाने वाला, (७) चोर को छिपने के लिए स्थान देने वाला, ये सभी सात प्रकार के चोर कहलाते हैं।

नीतिकारो का कहना है-केवल चोरी करने वाला ही चोर नही होता।

Elaboration—In ancient times, stealing was considered an extremely grave crime This description indicates how dreadful was the punishment awarded to such criminals

Imagine the dreadful scene when a thief wearing the dress meant for criminal to be hanged is moved about in the town and his body is being tortured. His limbs are cut and he is made to eat his own flesh. Imagine the crowd of people collected to see such a horrible scene Imagine the mental state of such an unfortunate thief at that time One feels thunder struck when one just imagines the horrible punishment awarded to the thief

In the verses quoted here, eighteen types of thieves or modes of committing theft have been mentioned They are as follows—

(1) Why are you feeling afraid? I shall not allow any one to trouble you To encourage a thief in this manner

(2) To inquire about health and welfare of a thief when he meets

(3) To point out to the thief with hand and the like for committing theft

(4) Not to pay state tax or to pay less than due

(5) To remain silent even after seeing a thief committing theft.

(6) To tell different direction to the persons in search of thieves

(7) To provide bed to the thief

(8) To wipe out foot prints of thieves

(9) To conceal a thief in the house or to allow him to take rest there.

(10) To give respect to a thief by saluting him

(11) To greet a thief and provide him a seat.

(12) To keep a thief underground.

(13) To offer sweats to a thief with affection.

(14) To send necessary thing secretly to a thief or to address him with

words of honour. (Like 'Maharaj' or reverend sir)

(15) To offer hot water and oil to the thief for removing fatigue

(16) To provide fire to the thief for cooking food.

(17) To provide cold water to the thief for drinking

(18) To provide rope to thief for theft or for tying the stolen cattle he has brought

These eighteen faults are the causes for growth of stealing activities The person who knowingly engages in such acts collects the same sin as that of theft

Seven types of persons are called thieves namely—(1) one who commits theft himself, (2) one who gets the theft committed, (3) one who advises others to commit theft—how, when and in what manner it should be committed, (4) one who teaches such things, (5) one who purchases stolen goods at lower price, (6) one who provides food-stuff to thieves—one who sends food articles to thieves at their secret resort in the forest, (7) one who offers shelter to thief to hide

It is said by the moralists that only the person committing theft is not a thief, all the above said seven types of persons are thieves

चोरो की दी जाती हुई भीषण यातनाएँ DREADFUL TORTURES GIVEN TO THIEVES

७५. ते य तत्थ कीरंति परिकप्पियंगमंगा उल्लंविज्जंति रुक्खसालासु केइ कलुणाइं विलवमाणा, अवरे चउरंगधणियबद्धा पव्वयकडगा पमुच्चते दूरपातबहुविसमपत्थरसहा अण्णे, य गय–चलण–मलणयणिम्मद्दिया कीरति पावकारी अट्ठारसखडिया कीरंति मुंडपरसूहिं, केइ उक्कत्तकण्णोट्ठणासा उप्पाडियणयण–दसण–वसणा जिब्भिंदियछिया छिण्ण–कण्णसिरा पणिज्जंते छिज्जंते य असिणा।

णिव्विसया छिण्णहत्थपाया पमुच्चंते य जावज्जीवबंधणा य कीरंति, केइ परदव्वहरणलुद्धा कारग्गलणियलजुयलरुद्धा चारगाएहतसारा।

सयणविप्पमुक्का मित्तजणणिरक्खिया णिरासा बहुजण–धिक्कार–सद्द–लज्जाविया अलज्जा अणुबद्धखुहा पारद्धा सी–उण्ह–तण्ह–वेयण–दुग्घट्टघट्टिया विवण्णमुह–विच्छविया विहलमइल–दुब्बला किलंता कासंता वाहिया य आमाभिभूयगत्ता परूढ–णह–केस–मंसु–रोमा छगमुत्तम्मि णियगम्मि खुत्ता।

तत्थेव मया अकामगा बंधिऊण पाएसु कड्ढिया खाइयाए छूढा, तत्थ य वग–सुणग–सियाल–कोल–मज्जार–वडसं–दंसगतुंड–पक्खिगण–विविह–मुहसयल–विलुत्तगत्ता कय–विहंगा, केइ किमिणा य कुहियदेहा अणिट्ठवयणेहिं सप्पमाणा सुट्ठु कय जं मउत्ति पावो तुट्ठेणं जणेण हम्ममाणा लज्जावणगा य होंति सयणस्स वि य दीहकालं।

७५. वहाँ वध्यभूमि मे किन्ही–किन्ही चोरो के अग–प्रत्यग काटकर टुकडे–टुकडे कर दिये जाते है। उन्हे वृक्षो की शाखाओ पर टॉग दिया जाता है। उनके चार अगो–दोनो हाथो और दोनो पैरो को कसकर बाँध दिया जाता है। किन्ही को पर्वत की चोटी से नीचे लुढका दिया जाता है–फैक दिया जाता है। बहुत ऊँचाई से गिराये जाने के कारण उन्हे नुकीले ऊबड–खाबड पत्थरो की चोट सहनी पडती है। किसी–किसी को हाथी के पैर के नीचे कुचलकर कचूमर बना दिया जाता है। उन चोरी का पापकर्म करने वालो को भोथरे कुल्हाडो आदि से अठारह स्थानो मे खण्डित किया जाता है। कइयो के कान, आँख और नाक काट दिये जाते है तथा आँखे निकाल ली जाती है। दाँत उखाड दिये जाते है और अण्डकोश काट लिए जाते है। जीभ खीचकर बाहर निकाल ली जाती है, कान और शिराएँ काट दी जाती है। फिर उन्हे वधभूमि मे ले जाया जाता है और वहाँ तलवार से काट दिया जाता है।

किन्ही–किन्ही चोरो को हाथ–पैर काटकर देश से निर्वासित कर दिया जाता है–कई चोरो को आजीवन कारागार मे रखा जाता है। कारागार मे साँकल बाँधकर एव दोनो पैरो मे बेडियाँ डालकर रखा जाता है। पराये धन का अपहरण करने मे लुब्ध कई चोरो को कारागार मे बन्दी बनाकर उनका धन–माल छीन लिया जाता है।

उन चोरो को उनके परिवारजन छोड देते है–राजकोप या राजदण्ड के भय से कोई स्वजन उनसे सम्बन्ध नही रखता, मित्रजन उनकी रक्षा नही करते। सभी के द्वारा वे तिरस्कृत होकर सभी की ओर से निराश हो जाते है। बहुत–से लोग 'धिक्कार है तुम्हे' इस प्रकार लज्जित करते है। उन लज्जाहीन मनुष्यो को निरन्तर भूखा मरना पडता है। चोरी के वे अपराधी सर्दी, गर्मी और प्यास की पीडा से कराहते–चिल्लाते रहते है। उनका मुख–चेहरा सहमा हुआ और कान्तिहीन हो जाता है। वे सदा विह्वल या असफल' मलिन और दुर्बल बने रहते है। थके–हारे या मुर्झाए हुए से रहते है, कोई–कोई खाँसी आदि से पीडित रहते है और अनेक रोगो से ग्रस्त रहते है अथवा खाया हुआ भोजन भलीभाँति न पचने के कारण उनका शरीर क्षीण व पीडित रहता है। उनके नख, केश और दाढी–मूँछो के बाल तथा रोम बढ जाते है। वे कारागार मे अपने ही मल–मूत्र मे लिप्त रहते है (क्योकि मल–मूत्र त्यागने के लिए उन्हे अन्यत्र नही जाने दिया जाता)।

जब इस प्रकार की दुस्सह यातनाएँ भोगते–भोगते भी मरने की इच्छा न होने पर भी आयुष्य समाप्त होते ही मर जाते है (तब भी उनकी दुर्दशा का अन्त नही होता)। उनके शव के पैरो मे रस्सी बाँधकर कारागार से बाहर घसीटकर किसी गहरी खाई या गड्ढे मे फैक दिया जाता है। तत्पश्चात् भेडिया, कुत्ते, सियार, शूकर तथा सडासी जैसे अनेक पक्षी अपने तीक्ष्ण दाँतो से उनके शव को नोच–नोचकर खा जाते है। कई शवो को बाज, गीध आदि खा जाते है। कई चोरो के मृत कलेवर मे कीडे पड जाते है, उनके शरीर सड–गल जाते है। (इस प्रकार मृत्यु के पश्चात् भी उनके शरीर की ऐसी दुर्गति होती है। फिर भी उनके कष्टो का अन्त नही आता) उसके बाद भी अनिष्ट वचनो से लोग निन्दा करते है। उन्हे धिक्कारते है कि अच्छा हुआ जो पापी मर गया अथवा मारा गया। उसकी मृत्यु से सन्तुष्ट हुए लोग उसकी निन्दा करते है। इस प्रकार वे पापी चोर अपनी मौत के पश्चात् भी दीर्घकाल तक अपने स्वजनो–परिजनो को लज्जित करते रहते है।

75. At the scaffold area, the limbs of certain thieves are chopped off and cut into pieces They are hung with the branches of the tree Their hands and feet are tied tightly Some thieves are rolled down from the top of the hill or thrown away from there As they are pushed from a great height, they have to tolerate the hurt as a result of stones lying hither and thither Some thieves are trampled under the feet of an elephant Those thieves who do the criminal act of adattadan, they are chopped from eighteen places Ears, eyes and nose of some of them are cut Their tongue is pulled out Their nerves and ears are cut and then they are taken away to the place meant for killing There they are cut with a sword

The hands and feet of some thieves are cut and then they are expelled from the country Some thieves are awarded life imprisonment, they are kept in handcuffs and fetters The property of some thieves is taken away by the state and they are kept as prisoners in the jail

The family members discard those thieves The relatives do not have any contact with them out of fear of the state government The friends do not give them any protection They become depressed when they are condemned by every one Some people shout at them 'Curse on you' Those shameless thieves have to starve continuously. Those criminals cry due to severe cold, scorching heat and thirst Their faces look pale and blushed They always remain restless, dirty and weak They remain tired or depressed Some of them suffer from cough or several other diseases They are not able to digest their food properly So their body becomes weak Their nails, hair, moustaches and the hair on chin grow long They remain soaked with their own stool and urine in the prison (as they are not allowed to go anywhere else for the call of nature)

Their sad state does not come to an end even when they die undergoing such terrible tortures Their dead body is tied to a rope at their feet They are pulled out from the prison dragging and then thrown in a pit or in a ditch Thereafter, the leopards, dogs, jackals, pigs and birds having sharp beaks tear their body with their sharp teeth Eagles and vultrue eat away some of the dead corpses In some of the dead corpses of thieves, worms germinate and their dead body starts rotting (Thus even after their death, their dead body is treated in such a wretched manner Even then there is not an end to their troubles) People condemn them with unpalatable words even after their death

They say that it is good that the said criminal has died or has been killed The people feeling satisfied at his end, condemn him Thus the condemned thieves even after their death bring dishonour to their relatives for a long time

विवेचन उक्त सूत्र पाठ मे चोरो को राज्य शासन द्वारा दी जाने वाली असह्य प्राणान्तक यातनाओ का सजीव चित्रण किया है। जिसे पढ–सुनकर ही हृदय मे कँपकँपी छूट जाती है। यह उस युग मे दी जाने वाली यातनाओ का यथार्थ वर्णन है। इसका उद्देश्य यही है कि इसे पढ–सुनकर चौर्य कर्म से विरक्ति हो सके।

अगले सूत्र मे मरकर नरकगति आदि मे जाने पर प्राप्त होने वाली वेदनाओ का वर्णन है।

Elaboration—In the aphorism a vivid pictures of unbearable death-like tortures given to thieves by state administration has been shown One feels awe-stricken to hear or go through such an account It is the factual description of the punishment awarded in those days The purpose of narrating them is that after reading them or listening to them, one may avoid stealing completely

In the succeeding aphorism, there is a description of the pain and tortures they receive when they are re-born in hell

पाप और दुर्गति की परम्परा SIN AND THE TRADITION OF BAD EXISTENCE

७६. मया संता पुणो परलोग–समावण्णा णरए गच्छंति णिरभिरामे अंगार–पलित्तककप्प–अच्चत्थ–सीयवेयण–अस्साउदिण्ण–सययदुक्ख–सय–समभिद्दुए, तओ वि उव्वट्टिया समाणा पुणो वि पवज्जति तिरियजोणिं तहिं पि णिरयोवम अणुहवंति वेयणं, ते अणंतकालेण जइ णाम कहिं वि मणुयभावं लभति णेगेहिं णिरयगइ–गमण–तिरिय–भव–सयसहस्स–परियट्टेहिं। तत्थ वि य भवतऽणारिया णीय–कुल–समुप्पण्णा।

आरियजणे वि लोगबज्झा तिरिक्खभूया य अकुसला कामभोगतिसिया जहिं णिबंधंति णिरयवत्तणिभवप्पवचकरण–पणोल्लि पुणो वि संसारावत्तणेममूले धम्मसुइ–विवज्जिया अणज्जा कूरा मिच्छत्तसुइपवण्णा य होंति एगत–दंड–रुइणो वेढेंता कोसिकारकीडोव्व अप्पग अट्ठकम्मतंतु–घणबंधणेणं।

७६. (चोर अपने दु खमय जीवन का अन्त होने पर) परलोक मे नरकगति में उत्पन्न होते है। नरक मे सब कुछ अशुभ व अशुभतर ही है। वह स्थान आग से जलते हुए घर के समान (अतीव उष्ण वेदना वाला या) तथा अत्यन्त शीत वेदना वाला होता है। (तीव्र) असातावेदनीय कर्म के उदय के कारण सैकडो दु खो से व्याप्त है। (नरक की लम्बी आयु पूरी करने के पश्चात्) नरक से उद्वर्तन करके निकलकर फिर तिर्यचयोनि मे जन्म लेते है। वहाँ भी वे नरक–जैसी असातावेदना का अनुभव करते है। उस तिर्यंचयोनि मे अनन्त काल तक भटकते है। किसी प्रकार अनेको बार नरकगति और लाखो बार

तिर्यंचगति मे जन्म-मरण करते-करते यदि पुण्योदय से मनुष्यभव पा लेते है तो वहाँ भी नीच कुल मे उत्पन्न होते है और अनार्य, धर्म सस्कारो से हीन होते है।

कदाचित् सयोगवश आर्य-कुल मे जन्म मिल गया तो वहाँ भी अपने गदे आचरणो के कारण लोगो द्वारा बहिष्कृत निन्दित होते है। पशुओ जैसा जीवन यापन करते है, कुशलता से रहित होते है अर्थात् विवेकविहीन होते है, अत्यधिक कामभोगो की तृष्णा वाले और अनेको बार नरक-भवो मे (पहले) उत्पन्न होने के पूर्व बद्ध कुसस्कारो के कारण नरकगति मे उत्पन्न होने योग्य पापकर्म करने की प्रवृत्ति वाले होते है। अतएव ससार-चक्र मे परिभ्रमण कराने वाले अशुभ कर्मो का पुन बन्ध करते है। वे धर्मशास्त्र के श्रवण से वचित रहते है। पापकर्मो मे प्रवृत्त रहने के कारण धर्मशास्त्र श्रवण करने की रुचि ही उनके हृदय मे उत्पन्न नही होती। वे शिष्टजनोचित आचार-विचार से रहित, क्रूर-नृशस-निर्दय मिथ्यात्व के पोषक शास्त्रो को अगीकार करते है। एकान्तत हिंसा मे ही उनकी रुचि होती है। इस प्रकार रेशम के कीडे के समान वे अष्ट कर्मरूपी तन्तुओ से अपनी आत्मा को प्रगाढ बन्धनो से जकड लेते है।

76. The thieves after the end of their painful life take re-birth in hell In the hell every thing is bad and even worse That area is either as hot as a house on fire or extremely cold Due to the fructifying of pain-bearing karma, it is full of hundreds of troubles (After completing the long life in hell) they take birth in animal state of existence There also they experience hell-like pain and tortures They wander in animal state for an infinite period After several lives in hell and million times in animal state of existence, if due to the fructification of some merit karmas they take birth as human beings, there also they are born in low caste and are devoid of good (heritage) traits

If per chance, they take birth in a cultured family, there also they are expelled or condemned due to their bad conduct, they lead the life of an animal They do not have sense of discrimination They remain deeply attached to sexual desires Many a times due to their earlier births in hell, they have bad bent of mind and engage themselves in such sins that lead them to hell again They collect the bondage of such karmas that lead them again to hell They remain devoid of listening to scriptures As they remain engaged in bad activities they do not have any desire to listen to scriptures They are devoid of civilized conduct They are cruel, inhuman and lack compassion They take interest in such texts, which support wrong faith They have interest totally in violence Thus like a silkworm they bind their soul with the cobweb of eight karmas

विवेचन अदत्तादान पाप के फलस्वरूप आत्मा नरकगति और तिर्यचगति मे पुन -पुन जन्म लेता है। अनन्त काल तक असह्य दु ख भोगता है।

तत्पश्चात् कभी किसी पुण्य-प्रभाव से मनुष्यगति प्राप्त करता है तो नीच कुल मे जन्म लेता है और पशुओ सरीखा जीवन व्यतीत करता है। पूर्व कुसस्कारो के कारण उसकी रुचि पापकर्मों मे ही रहती है।

नरकगति और तिर्यंचगति मे होने वाले दु खो का प्रथम आस्रवद्वार मे विस्तारपूर्वक वर्णन किया जा चुका है।

पापी जीव अपनी आत्मा को किस प्रकार कर्मो से लिप्त कर लेता है, इसके लिए शास्त्र मे **'कोसिकारकीडोव्व'** अर्थात् कोशिकारकीट-रेशम के कीडे की यथार्थ उपमा दी गई है। यह कीडा अपनी ही लार से अपने आपको लपेटने वाले आवरण का निर्माण करता है। उसके मुख से निकली लार तन्तुओ का रूप धारण कर लेती है और उसी के शरीर पर लिपटकर उसे घेर लेती है। इस प्रकार वह कीडा अपने लिए आप ही बन्धन तैयार करता है। इसी प्रकार पापी जीव स्वय अपने किये कर्मों द्वारा बँधता जाता है।

Elaboration—As a result of the sin of theft (adattadan), the soul takes birth in hell and animal state again and again It suffers pain there for an infinite period

Thereafter as a result of some merit-bearing karma, this soul takes birth as a human being There also he is born in a low class family and is treated like animals He has an interest in sinful activities due to the earlier way of life inherited by him

A detailed account of troubles faced in hell and in animal state of existence has been given in the first Aasrava dvar

The words 'Kosikaarkeedov' has been used in scriptures to define how a sinner affects his self with bad karmas Here the most suitable example is given of kosikaarkeet which means silk-worm This worm with its saliva prepares its own cover The saliva turns into thread and covers its body with a bondage. Thus silk-worm prepares its own bondage itself Similarly the sinner binds himself with his own Karmas

ससार-सागर THE MUNDANE OCEAN

७७. एवं णरग-तिरिय-णर-अमर-गमण-पेरंतचक्कवालं जम्म-जरा-मरण-करण-गंभीरदुक्खपक्खुभिय-पउरसलिलं संजोगवियोगवीची-चिंतापसंग-पसरिय-वह-बंध-महल्ल-विपुलकल्लोलं कलुण-विलविय-लोभ-कलकलिंत-बोलबहुलं अवमाणणफेणं तिव्वखिंसणपुलंपुलप्पभूय-रोग-वेयण-पराभव विणिवायफरुस-धरिसण-समावडिय-कठिणकम्मपत्थर-तरंग-रंगंत-णिच्च-मच्चु-भयतोयपट्ठं।

कसायपायालसंकुलं भव-सयसहस्सजलसंचयं अणंतं उव्वेयणयं अणोरपारं महब्भयं भयंकरं पइभयं अपरिमियमहिच्छ-कलुस-मइ-वाउवेगउद्धम्ममाणं आसापिवासपायाल-काम-रइ-रागदोस-बंधण-बहुविहसंकप्प-विउलदगरयरयंधकारं।

मोहमहावत्त–भोगभममाणगुप्पमाणुच्छलंत–बहुगब्भवासपच्चोणियत्तपाणियं पहाविय–वसणसमावण्ण रुण्ण–चंडमारुयसमाहया मणुण्णवीची–वाकुलियभग्गफुट्टंतणिट्ठकल्लोल–संकुलजलं पमायबहुचंडदुट्ठसावयसमाहय–उद्धायमाणगपूरघोरविद्धंसणत्थबहुलं अण्णाणभमंत–मच्छपरिहत्थं अणिहुतिंदिय–महामगरतुरिय–चरिय–खोखुब्भमाण–संतावणिचयचलंत–चवल–चंचल–अत्ताण–असरण–पुव्वकयकम्मसंचयोदिण्ण–वज्जवेइज्जमाण–दुहसय–विवागघुण्णंतजल–समूहं।

इड्ढि–रस–साय–गारवोहार–गहिय–कम्मपडिबद्ध–सत्तकड्ढिज्जमाण–णिरयतलहुत्त–सण्णविसण्णबहुलं अरइ–रइ–भय–विसाय–सोगमिच्छत्तसेलसंकडं अणाइसंताण–कम्मबंधण–किलेसचिक्खिल्लसुदुत्तारं अमर–णर–तिरिय–णिरयगइ–गमण–कुडिलपरियत्त–विपुलवेल हिंसालिय–अदत्तादाण–मेहुणपरिग्गहारंभकरण–कारावणाणुमोयण–अट्ठविह–अणिट्ठकम्मपिंडिय–गुरुभारक्कंतदुग्गजलोघ–दूरपणोलिज्जमाण–उम्मुग्ग–णिमग्ग–दुल्लभतलं।

सारीरमणोमयाणि दुक्खाणि उप्पियंता सायस्सायपरितावणमयं उब्बुड्डणिब्बुड्डयं करेता चउरंतमहंत–मणवयग्गं रुइं संसारसागरं अट्ठिय अणालंबण–मपइट्ठाण–मप्पमेयं चुलसीइ–जोणि–सयसहस्सगुविलं अणालोकमंधयारं अणंतकालं णिच्चं उत्तत्थसुण्णभयसण्णसंपउत्ता वसंति, उव्विग्गवासवसहिं।

जहिं आउयं णिबंधंति पावकम्मकारी, बंधव–जण–सयण–मित्तपरिवज्जिया अणिट्ठा भवंति अणाइज्जदुव्विणीया कुठाणा–सण–कुसेज्ज–कुभोयणा असुइणो कुसंघयण–कुप्पमाण–कुसंठिया, कुरूवा बहु–कोह–माण–माया–लोहा बहुमोहा धम्मसण्ण–सम्मत्त–परिब्भट्ठा दारिद्दोवद्दवाभिभूया णिच्चं परकम्मकारिणो जीवणत्थरहिया किविणा परपिंडतक्कगा दुक्खलद्धाहारा अरस–विरस–तुच्छ–कय–कुच्छिपूरा परस्स पेच्छंता रिद्धि–सक्कार–भोयणविसेस–समुदयविहिं णिंदंता अप्पगं कयंतं च परिवयंता इह य पुरेकडाइं कम्माइ पावगाइं विमणसो सोएण डज्झमाणा परिभूया होंति, सत्तपरिवज्जिया य छोभा सिप्पकला–समय–सत्थ–परिवज्जिया जहाजायपसुभूया अवियत्ता णिच्च–णीय–कम्मोवजीविणो लोय–कुच्छणिज्जा मोघमणोरहा णिरासबहुला।

७७. (बन्धनो से जकडा वह जीव अनन्त काल तक ससार–सागर मे ही परिभ्रमण करता रहता है। ससार–सागर का स्वरूप कैसा है, यह एक रूपक द्वारा समझाया गया है।)

नरक, तिर्यंच, मनुष्य और देवगति मे गमनागमन करना ससार–सागर की बाह्य परिधि (घेरा) है। जन्म, जरा और मरण के कारण होने वाला गम्भीर दु ख ही ससार–सागर का अत्यन्त प्रचुर क्षुब्ध जल है। इसमे सयोग और वियोगरूपी लहरे उठती रहती हैं। निरन्तर बनी रही चिन्ता ही उसका प्रसार–विस्तार है। परस्पर वध और बन्धन ही उसमे लम्बी–लम्बी, ऊँची एव विस्तीर्ण तरगें है। उसमे करुण विलाप तथा लोभ की कलकलाहट की ध्वनि की प्रचुरता है। घोर गर्जना है। उसमे अवमानना या तिरस्काररूपी फेन (झाग) उठती रहती है। तीव्र–निन्दा, पुन –पुन उत्पन्न होने वाले रोग, वेदना, तिरस्कार पराभव, अध पतन, कठोर झिडकियाँ और डाँट–फटकार जिनके कारण प्राप्त होती है, ऐसे

कठोर ज्ञानावरणीय आदि कर्मों रूपी पाषाणो से उठी हुई तरगो के समान चचल है। सदैव बना रहने वाला मृत्यु का भय उस ससार-समुद्र के जल का तल है।

वह ससार-सागर कषायरूपी पाताल-कलशो से व्याप्त है। लाखो भवो की परम्परा उसकी विशाल जलराशि है। वह अनन्त है-उसका कही ओर-छोर दृष्टिगोचर नही होता। वह उद्वेग उत्पन्न करने वाला है। कही उसका तट-किनारा नही है। दुस्तर होने के कारण महान् भय रूप है। भय उत्पन्न करने वाला है। उसमे प्रत्येक प्राणी को एक-दूसरे के कारण प्रति भय बना रहता है। जिनकी कही कोई सीमा-अन्त नही, ऐसी विपुल कामनाओं और कलुषित बुद्धिरूपी पवन आँधी के प्रचण्ड वेग के कारण उत्पन्न तथा आशा-(अप्राप्त पदार्थ को प्राप्त करने की अभिलाषा) और **पिपासा**-(प्राप्त भोगोपभोगो को भोगने की लोलुपता) रूप पाताल, समुद्र तल से उठते हुए काम-रति शब्दादि विषयो सम्बन्धी अनुराग और द्वेष के बन्धन के कारण उत्पन्न विविध प्रकार के सकल्परूपी जल-कणो की प्रचुरता से वह अन्धकारमय हो रहा है।

इस ससार-सागर मे प्राणी मोहरूपी भँवरो (आवर्त्तों) मे गोलाकार चक्कर लगाते हुए व्याकुल होकर उछल रहे है तथा बहुत-से बीच के भाग मे फैलने के कारण ऊपर उछलकर नीचे गिर रहे है। इस ससार-सागर मे इधर-उधर दौडते हुए अनेक प्रकार के व्यसनो से ग्रस्त लोगो का प्रचण्ड वायु के थपेडो से टकराता हुआ तथा दु खदायी लहरो से विक्षुब्ध एव तरगो से फूटता हुआ तथा बडी-बडी अस्थिर कल्लोलो से व्याप्त रुदन रूप जल बह रहा है।

वह प्रमादरूपी अत्यन्त रौद्र एव दुष्ट हिंसक जन्तुओ द्वारा सताये गये एव इधर-उधर घूमते हुए प्राणियो के समूह का विध्वश करने वाले घोर अनर्थों से भरा है। उसमे अज्ञानरूपी बडे-बडे भयानक मच्छ घूमते रहते है। अनुपशान्त इन्द्रियो वाले जीवरूपी महामगरो की नयी-नयी उत्पन्न होने वाली उथल-पुथल मचाती चेष्टाओ से वह अत्यन्त क्षुब्ध हो रहा है। उसमे वाहवाही की तरह नाना प्रकार के सन्ताप विद्यमान है, ऐसे प्राणियो के द्वारा पूर्व सचित एव पापकर्मों के उदय से प्राप्त होने वाला तथा भोगा जाने वाला फलरूपी घूमता हुआ-चक्कर खाता हुआ जल-समूह है जो बिजली के समान अत्यन्त चचल रहता है। दु खी होते हुए प्राणियो को जैसे समुद्र मे कोई त्राण-शरण नही होता, इसी प्रकार ससार मे अपने पापकर्मों का फल भोगने से कोई बचाने वाला नही है।

ससार-सागर मे ऋद्धिगौरव, रसगौरव और सातागौरवरूपी अपहार-हिंसक जलचर जन्तु द्वारा पकडे हुए एव कर्मबन्धनो से बँधे हुए प्राणी जब नरकरूप पाताल-तल के सम्मुख पहुँचते है तो अत्यन्त खेद और विषादयुक्त हो जाते है, ऐसे विषम व खिन्न जीवो से यह भरा है। वह अरति, रति, भय, दीनता, शोक तथा मिथ्यात्वरूपी पर्वतो से विषम बना हुआ है। अनादि सन्तान-परम्परा वाले कर्मबन्धन एव राग-द्वेष आदि क्लेशरूप कीचड से भरा होने के कारण इसे पार करना अत्यन्त कठिन है। जैसे समुद्र मे ज्वार आते है, उसी प्रकार ससार-समुद्र मे देवगति, मनुष्यगति, तिर्यंचगति और नरकगति मे गमनागमन रूप टेढे-मेढे परिवर्तनो से युक्त विस्तीर्ण वेला-ज्वार-आते रहते है। हिंसा, असत्य, चोरी, मैथुन और परिग्रह रूप आरम्भ के करने, कराने और अनुमोदने से सचित ज्ञानावरण आदि आठ कर्मों

के गुरुतर भार से दबे हुए तथा व्यसन रूपी जलप्रवाह द्वारा दूर फैके गये प्राणियों के लिए इस संसार-सागर को तैर पाना अत्यन्त कठिन है।

इस ससार-सागर मे डूबे प्राणी शारीरिक और मानसिक दु खो का अनुभव करते रहते है। ससार सम्बन्धी सुख-दु ख से उत्पन्न होने वाले परिताप के कारण वे कभी ऊपर उठकर तैरने की और कभी डूबने की चेष्टाएँ करते रहते है। यह ससार-सागर चार दिशा रूप चार गतियो के कारण अत्यन्त विशाल है। यह अन्तहीन और विस्तृत है। सयम मे अस्थिर अर्थात् असयमी जीवो के लिए यहाँ कोई आलम्बन नही है, सुरक्षा के लिए कोई साधन नही है। यह छद्मस्थ जीवो के ज्ञान का विषय नही है, या इसकी कही अन्तिम सीमा नही है। यह चौरासी लाख जीवयोनियो से व्याप्त-भरपूर है। यहाँ अज्ञानान्धकार छाया रहता है और यह अनन्तकाल तक स्थायी है। यह ससार-सागर उद्वेग-प्राप्त-दु खी प्राणियो का निवास-स्थान है।

इस ससार-सागर मे रहने वाले पापकर्मकारी प्राणी जहाँ-जिस ग्राम, कुल आदि की आयु बाँधते है, वही पर वे बन्धु-बान्धवो, स्वजनो और मित्रजनो से रहित होते है, अर्थात् उनका कोई सहायक, आत्मीय या प्रेमी नही होता। वे सभी को अप्रिय लगते है। उनके वचनो को कोई मानता नही और वे स्वय दुर्विनीत-उद्दण्ड स्वभाव के होते है। उन्हे रहने को खराब स्थान, बैठने को खराब आसन, सोने को खराब शय्या और खाने को खराब भोजन मिलता है। वे अशुचि-अपवित्र या गन्दे तथा आचरण से अपवित्र रहते है अथवा अश्रुति-शास्त्रज्ञान से विहीन होते है। उनका सहनन (हाडो की बनावट) विकृत होता है, उनके शरीर का कोई ढाँचा सामान्य से अधिक छोटा अथवा बडा होता है। उनके शरीर की आकृति बेडौल होती है। वे दीखने मे बदसूरत होते है। उनमे क्रोध, मान, माया और लोभ तीव्र होता है-तीव्रकषायी होते है और मोह-आसक्ति की तीव्रता होती है। उनमे धर्मसज्ञा-धार्मिक सस्कार नही होते। वे सम्यग्दर्शन से रहित होते है। उन्हे दरिद्रता का कष्ट सदा सताता रहता है। वे सदा दूसरो के अधीन रहकर, नौकर-चाकर रहकर जिन्दगी बिताते है।

कृपण-रक-दीन-दरिद्र रहते है। दूसरो के द्वारा दिये जाने वाले आहार की ताक मे रहते है। वे सरलता से अपना पेट भी नही भर पाते। किसी प्रकार रूखे-सूखे, नीरस एव निस्सार भोजन से पेट भरते है। दूसरो का वैभव, सत्कार-सम्मान, भोजन, वस्त्र आदि उत्कर्ष देखकर वे अपनी निन्दा करते है-अपने दुर्भाग्य को कोसते रहते है। अपनी तकदीर को रोज रोते है। इस जन्म मे या पूर्वजन्म मे किये हुए पापकर्मों को कोसते रहते है। उदास मन रहकर शोक की आग मे जलते हुए अफसोस कर लज्जित होते है। साथ ही वे सत्त्वहीन, साहसहीन, चिडचिडे स्वभाव वाले तथा चित्रकला आदि शिल्प के ज्ञान से रहित, भौतिक विद्याओ से शून्य एव सिद्धान्त-शास्त्र के ज्ञान से रहित होते है। वे अज्ञान पशु के समान जड बुद्धि वाले, अविश्वसनीय या अप्रतीति उत्पन्न करने वाले होते है। सदा नीच कर्म करके अपनी आजीविका चलाते है-वे लोकनिदा के पात्र, असफल मनोरथ वाले, निराशा से ग्रस्त होते है।

77. The mundane soul due to its own bondage of Karmas keeps on wandering in the ocean of mundane existence for an infinite period What is the nature of the worldly ocean It has been explained with an analogy.

To move in hell, animal state, human state and celestial state of existence is the outer circumference of the worldly ocean. The serious trouble at the time of birth, old age and death is the extremely disturbed large quantity of water in that ocean The attachment and separation are the waves rising in the ocean The worry lasting uninterruptedly is the large expansion of the ocean Mutual hurt, killing and bondage are the long, high and vast currents There is the noise of pathetic bemoaning and the disturbance due to greed There is dreadful roaring sound The foam of contempt and disrespect rises in it It contains knowledge-obscuring karma and other karmas in the form of stones and the waves rising from them are unstable They cause deep hatred, diseases that appear again and again, pain, harsh rebukes and downfall. The bottom of the ocean is the ever-lasting fear of death

This worldly ocean is full of Pataal Kalash (huge pots) of passions (Kashaya) The tradition of millions of rebirths is its gigantic water-body. It is infinite and its end is not visible It creates bewilderment The end of its bank is nowhere It is highly dreadful as it is difficult to cross It is limitless It is full of a large number of sensual desires and the storm in the form of perverse intellect The hope (the desire to get what one has not got so far) and thirst (for sensual pleasures) are the currents rising from the bottom due to high speed of the storm Due to the bondage of attachment and hatred in respect of sensory objects, such as words and the like, water drops in the from of various types of thought activity rise in it So this ocean has become extremely dark

In this worldly ocean, the living beings deeply under the influence of attachment are feeling depressed moving about in the whirlpools Some are jumping upwards and some are falling down as the central part widens The water in the ocean is representing the distress of the people running hither and thither overwhelmed by many bad habits They are experiencing striking of stormy winds It is full of unstable currents in the form of bemoaning of the people that its water is indicating

This ocean is full of large number of living beings moving about in a troubled condition as they are troubled by extremely angry and violent beings, in the form of stupor, that are out to destroy them Thus it is full of dreadful misfortunes Large ferocious sea lions are moving about in the ocean and they represent ignorance The restless activities of the gigantic crocodiles represent the unsubdued or uncontrolled senses The

ocean is getting disturbed due to their various types of churning movements Many types of dejection is in the ocean The large quantity of water in the ocean indicates the fruits of bad Karmas collected by the living beings earlier and which is now being experienced in the form of rolling about in whirlpool (of birth and death) It is extremely unstable like lightening Just as there is no one in the ocean to provide protection to the aquatic animals in trouble, similarly in this world, there is none to provide relief to the people from experiencing fruits of their past bad Karmas

Ego of prosperity, taste and comfort in the world is represented in the ocean by aquatic creatures of violent nature They catch the living beings bound by their past Karmas and carry them away to hell just as the violent-natured acquatic animals carry away the other creatures to the bottom of the ocean Those living being then feel extreme pain and dejection in the hell as the caught acquatic animals feel at the bottom of the ocean This ocean is full of such troubled and dejected living beings There are protruding rocks in the sea, which represent dislike for ascetic restraint, liking for non-restraint, fear, seeking of mercy, sorrow and wrong perception in the worldly beings The prevalent mud in the sea represents bondage of Karma since the beginningless period and the disturbance caused by attachment and hatred So it is very difficult to cross this ocean The rising storms in the ocean represent the movement of the mundane soul in four states of existence namely the celestial state, human state, animal state and hellish state of existence The zig-zag changes represent this movement This is its vast expansion It is difficult to find the bottom of the ocean of existence, which is full of violence, falsehood, stealing, co-habitation and attachment and in doing, getting done and appreciating such activities leading to the collection of eight types of Karmas that make the mundane soul heavy with its load of Karmas Same is the case with ocean where it is difficult for aquatic beings to find the bottom as they are thrown away by the vast flow of water

The person deeply engrossed in this ocean of mundane existence experiences physical and mental troubles As a result of the influence of pleasure and pain concerning this worldly life, they sometimes try to come up and swim at the surface of this ocean and sometimes try to drown This worldly ocean is extremely large in the four directions due to

its flow in four states of existence It is without an end and very expansive. It is unstable in the field of self-restraint There is no support in it for the living beings. There are no means of protection It is not the subject of knowledge of the mundane souls It has no limit It is full of 8 4 million species The darkness of ignorance is spread over it It is going to remain for infinite period as the residence of living beings troubled by its influence

The people living in this world who commit sins, they collect bondage of karmas leading them to stay for their life-period in a particular village, family and the like There they do not have any friends, relatives or the members of the family In other words there is nobody to help them or to have affection for them Everyone dislikes them Nobody pays any attention to their words They themselves are very wild and of bad temperament They get bad place to live, ugly cloth to sit, hopeless bed to sleep and polluted food to eat They remain impure due to their ill temperament and bad behaviour They lack scriptural knowledge Their physical structure (bondage of bones) is deformed Some part of their body is smaller than that of the common man and some is longer Their shape is so strange that they look ugly They have anger, greed, ego and deceit in large proportion They have extreme attachment They do not have religious temperament They always remain troubled by their wretched condition They always remain in the service of others like a servant and thus they pass their entire life-span

They remain poor and miser They always wait for the foodstuff to be offered to them by others They cannot easily satisfy their hunger They somehow, satisfy their hunger with dry, tasteless food that is not energetic They curse themselves when they see the wealth, honour, clothes and good food of others They curse their ill luck They daily weep at their misfortune They curse their bad Karmas of this life and of earlier life They feel ashamed and sad in the painful agony of repentance Simultaneously they lack potency, courage and the knowledge of any art or painting They are peevish. They do not have knowledge of physical science They do not have knowledge of scriptures. They are dull like an animal They are not the subject of trust and love. They earn their livelihood always by low-class activities. They are unsuccessful in fulfilling their destinies They always remain in a state of dejection

विवेचन . ससार का अर्थ है-ससरण-गमनागमन करना। देव, मनुष्य, तिर्यंच और नरकगति मे जन्म-मरण करना ही ससार कहलाता है। इन चार गतियो मे परिभ्रमण करने के कारण इसे चातुर्गतिक भी कहते है।

प्रस्तुत पाठ मे ससार को सागर की उपमा देकर सागर के साथ इसकी विस्तृत तुलना की गई है, जैसे चार गतियाँ इसकी चारो ओर की बाह्य परिधि-घेरा है। समुद्र मे विशाल जलराशि होती है तो इसमे जन्म-जरा-मरण एव भयकर दु खरूपी अथाह जल है। सागर का जल जैसे चचल तरगायमान रहता है, उसी प्रकार ससार मे यह जल भी सदा तरगित रहता है। जैसे सागर मे आकाश को स्पर्श करती लहरे उठती रहती है, उसी प्रकार ससार मे इष्ट वियोग, अनिष्ट सयोग से उत्पन्न होने वाली बडी-बडी चिन्ताएँ एव वध-बधादि यातनाओ की लहरे उठती रहती है। जैसे समुद्र मे जगह-जगह पहाड-चट्टाने होती है, उसी प्रकार यहाँ ज्ञानावरण, दर्शनावरण आदि आठ कर्मरूपी विकट पर्वत है। इनके टकराने से भीषण लहरे उत्पन्न होती है। मृत्यु का भय इस समुद्र की सतह है। क्रोधादि चार कषाय ही ससार-सागर के पाताल-कलश है। निरन्तर चालू रहने वाले भव-भवान्तर ही इस समुद्र का निरन्तर आता-जाता असीम जल है। अनन्त-असीम तृष्णा, विविध प्रकार के मसूबे, कामनाएँ, आशाएँ तथा मलिन मनोभावनाएँ ही यहाँ प्रचण्ड वायु-वेग है, जिसके कारण ससार सदा क्षोभमय बना रहता है। काम-राग, लालसा, राग, द्वेष एव अनेकविध सकल्परूपी सलिल की प्रचुरता के कारण यहाँ अन्धकार छाया रहता है। जैसे समुद्र मे भयानक आवर्त्त भँवर उठते है तो यहाँ तीव्र मोह के आवर्त्त उठते है। समुद्र मे भयावह जन्तु निवास करते है तो यहाँ ससार मे प्रमादरूपी भयानक जन्तु विद्यमान है। अज्ञान एव असयत इन्द्रियाँ यहाँ विशाल मगर-मच्छ है, समुद्र मे वडवानल होता है तो इस ससार मे शोक-सन्ताप का वडवानल है। समुद्र मे पडा हुआ जीव शरणहीन, अनाथ, निराधार एव त्राणहीन बन जाता है, इसी प्रकार ससार मे जब जीव अपने किये हुए कर्मो के फल भोगता है तो वह दु खी होता है तो कोई भी उसकी रक्षा करने वाला नही होता, कोई उसके लिए आधारभूत नही बन सकता।

ऋद्धिगौरव-ऋद्धि का अभिमान, **रसगौरव**-सरस भोजनादि के लाभ का अभिमान, **सातागौरव**-प्राप्त सुख-सुविधा का अहकार रूप अपहार नामक समुद्री विशालकाय जन्तु इस ससार-सागर मे रहते है जो जीवो को खीच-खीचकर पाताल- तल की ओर घसीटकर ले जाते है।

इस ससार को अनादि और अनन्त कहा गया है। यह एक जीव की अपेक्षा से नही अपितु समग्र जीवो की अपेक्षा से समझना चाहिए। कोई-कोई जीव अपने कर्मो का अन्त करके ससार-सागर से पार उतर जाते है। तथापि अनन्तानन्त जीवो ने भूतकाल मे ससार मे परिभ्रमण किया है, वर्तमान मे कर रहे है और भविष्यकाल मे सदा करते ही रहेगे। अतएव यह अनादि और अनन्त कहा जाता है।

कर्मबन्ध को अनादि कहने का आशय भी कर्म-सन्तति की अपेक्षा से ही है। कोई भी एक कर्म ऐसा नही है जो जीव के साथ अनादिकाल से बँधा रहता है। प्रत्येक कर्म की स्थिति मर्यादित है और अपनी स्थिति पूर्ण होने पर वह जीव से पृथक् हो ही जाता है। किन्तु ससारी जीव प्रतिसमय नवीन-नवीन कर्मो का बन्ध करता रहता है, इस प्रकार कर्मो का प्रवाह अनादिकालिक कहा गया है।

मूल पाठ मे चौरासी लाख जीवयोनियो का उल्लेख किया गया है। जीवो की उत्पत्ति का स्थान योनि कहलाता है। ये चौरासी लाख जीवयोनियाँ इस प्रकार है-

पृथ्वीकाय की ७ लाख, अपकाय की ७ लाख, तैजस्काय की ७ लाख, वायुकाय की ७ लाख, प्रत्येक-

वनस्पतिकाय की १० लाख, साधारण–वनस्पतिकाय की १४ लाख, २ लाख द्वीन्द्रिय की, २ लाख त्रीन्द्रिय की, २ लाख चतुरिन्द्रिय की, ४ लाख नारको की, ४ लाख देवो की, ४ लाख पचेन्द्रिय तिर्यंचो की, १४ लाख मनुष्यो की। इनमे कुछ योनियाँ शुभ और कुछ अशुभ है।[1]

Elaboration—The word 'Sansar' means to come and go To take birth as celestial being, human being, animal state or hell is Sansar (the world) Since it is movement in four states of existence, it is also called 'Chaturgatik' (relating to four states of existence)

In the present aphorism, the world is compared with a sea in a detailed manner The four states of existence is its outer circumference The gigantic expanse of water in the sea represents dreadful troubles of birth, old age and death in the world The troubles in the world keep it always unstable as water due to currents In the world many worries and tortures in the shape of hurt and bondage arise due to departure of loved ones and contact with the despised ones They are like rising waves in the sea Just as there are rocks and hills in the sea hither and thither, similarly there are mountains of eight types of Karmas such as knowledge-obscuring Karmas, perception obscuring Karmas and others. When they strike each other ferocious waves arise. Fear of death is the surface of this sea Four passions namely anger and others are the gigantic pots (patal kalash) The continues birth and death in vicious circle is the continuously flowing limitless water Limitless desires, various types of plans, hopes and dirty thought-activity is the dreadful fast flowing wind Due to it the world always remains disturbed Due to lust, curiosity, attachment, hatred and many types of thought, which are in this ocean in the form for water in abundance, there is always darkness here In the sea dreadful bewildering whirlpools arise similarly in the world circles of intense fondness arise In the sea, ferocious acquatic animals reside. In the world dreadful animals in the form of stupor are present Ignorance and uncontrolled senses are the huge crocodiles in the sea The fire of dejection and sadness is the fire in the

---

1 शुभ योनियाँ इस प्रकार है–असख्य वर्ष की आयु वाले मनुष्य (युगलिया), सख्यात वर्ष की आयु वाले मनुष्यों मे राजा–ईश्वर आदि, तीर्थंकरनामकर्म के उपार्जक सर्वोत्तम शुभ योनि वाले है। सख्यात वर्ष की आयु वालो मे भी उच्चकुलसम्पन्न शुभ योनि वाले है, अन्य सब अशुभ योनि वाले है।

देवो मे किल्विष जाति वालो की अशुभ और शेष शुभ है। पचेन्द्रिय तिर्यंचो मे हस्तिरत्न और अश्वरत्न शुभ है, शेष अशुभ है। एकेन्द्रियादि मे शुभ वर्णादि वाले शुभयोनिक और शेष अशुभयोनिक है। देवेन्द्र, चक्रवर्ती, तीर्थंकर और भावितात्मा अनगारो को छोड कर शेष जीवो ने अनन्त–अनन्त बार योनियाँ प्राप्त की है।

– प्रश्नव्या सैलाना

sea. In the sea, one appears to be without support, orphan and without any protection Similarly in this world, due to the Karmas he has collected, a being feels pain when he experience the fruit of his Karmas At that there is none capable of lending him support or protection.

The gigantic aquatic animals reside in this sea in the form of Ridhi-Gaurav (ego of wealth), Ras-Gaurav (ego of taste) and Sata-Gaurav (ego of pleasant life) They drag the living beings to the bottom of patal-kalash

This world is stated to be without a beginning and without an end It is not to be understood in respect of one living being, but in respect of all the living beings Some living beings after destroying all the Karmas earlier collected by them cross the worldly ocean Still there are infinite living beings who in the past had wandered in the mundane world, are wandering at present and shall be wandering here always in future So this world is without any beginning or end

The purpose of saying bondage of karma as one without a beginning is that in respect of collection of Karmas one after the other, it is without beginning There is no karma which remains bound with a living being since a period without beginning Every karma has a limited duration and after completing its duration, it separates from the living being concerned But ordinarily the living being collects new Karmas every moment So the flow of Karmas is without a beginning and without an end

In the aphorism, it has been mentioned that there are 84 million Jiva Yonis Jiva Yoni means the genus or opecies where a soul takes birth The 84 million Jiva Yonis are as follows—

Earth bodied living beings have 0 7 million Jiva Yonis Water bodied living beings have 0 7 million Jiva Yonis Air bodied living beings have 0 7 million Jiva Yonis Fire bodied living beings have 0 7 million Jiva Yonis One bodied plant bodied living beings have 1 0 million Jiva Yonis Common seeded plant bodied living beings have 1 4 million Jiva Yonis Two-sensed living beings have 0.2 million Jiva Yonis Three-sensed living beings have 0 2 million Jiva Yonis Four-sensed living beings have 0 2 million Jiva yonis Five-sensed animal clan living beings have 0 4 million Jiva yonis Hellish beings have 0.4 million Jiva yonis Celestial beings have 0 4 million Jiva yonis Human beings have 1 4 million Jiva yonis Some of them are good and some are bad

७८. आसापास–पडिबद्धपाणा अत्थोपायाण–काम–सोक्खे य लोयसारे होंति अपच्चंतगा य सुट्ठु वि य उज्जमंता तद्दिवसुज्जुत्त–कम्मकय–दुक्खसंठवियसित्थपिंडसंचयपरा पक्खीणदव्वसारा णिच्चं अधुव–धण–धण्णकोस–परिभोगविवज्जिया रहिय–कामभोग–परिभोग–सव्वसोक्खा परसिरिभोगोवभोग–णिस्साणमग्गणपरायणा वरागा अकामियाए विणेंति दुक्खं। णेव सुहं णेव णिव्वुइं उवलभंति अच्चंतविउल–दुक्खसय–संपलित्ता परस्स दव्वेहिं जे अविरया।

एसो सो अदिण्णादाणस्स फलविवागो, इहलोइओ परलोइओ अप्पसुहो बहुदुक्खो महब्भओ बहुरयप्पगाढो दारुणो कक्कसो असाओ वाससहस्सेहिं मुच्चइ, ण य अवेयइत्ता अत्थि उ मोक्खोति।

७८. अदत्तादान का पाप करने वालो के प्राण भवान्तर मे भी अनेक प्रकार की आशाओ-कामनाओ के पाश मे बँधे रहते है। जगत् मे सारभूत माने जाने वाले अर्थोपार्जन एव कामभोगो के सुख के लिए अच्छी तरह प्रबल प्रयत्न करने पर भी उन्हे उचित सफलता प्राप्त नही होती। उन्हे प्रतिदिन कडा परिश्रम करने पर भी बडी कठिनाई से इधर-उधर बिखरा या फेका भोजन का अश ही नसीब होता है, थोडे-से दाने ही मिलते है। कदाचित् कोई उत्तम द्रव्य मिल जाये तो वह भी हाथ से निकल जाता है, अर्थात् प्राप्त धन भी क्षीण हो जाता है। इस अस्थिर धन, धान्य और कोश के भोग से वे सदा ही वचित रहते है। **काम**–(शब्द और रूप के विषय) तथा **भोग**–(गन्ध, स्पर्श और रस के विषय) के भोगोपभोग के सेवन से प्राप्त होने वाले समस्त सुख से भी वे वचित रहते है। वे सस्कारवश दूसरो की लक्ष्मी के भोग और उपभोग को अपने अधीन बनाने के प्रयास मे तत्पर रहते हुए भी वे बेचारे केवल दु ख के ही भागी होते है। उन्हे न तो सुख नसीब होता है, न शान्ति।

साराश यह है कि जो दूसरो के द्रव्य को हरण करने की इच्छा से निवृत्त नही होते, अदत्तादान का परित्याग नही करते, वे अत्यन्त एव प्रचुर सैकडो दु खो की आग मे जलते रहते है।

अदत्तादान पाप का यह फलविपाक है, बँधे कर्मों का कटु परिणाम है। जो इस लोक मे और परलोक-आगामी भवो मे भी भोगना होता है। यह सुख से रहित है और बहुत दु ख देने वाला है। अत्यन्त भयानक है। अतीव प्रगाढ कर्मरूपी रज वाला है। बडा ही दारुण है, कर्कश-कठोर है, असातामय है और हजारो वर्षो मे इससे पिण्ड छूटता है, किन्तु इसे भोगे बिना छुटकारा नही मिलता।

78. Those who commit the sin of Adattadan, they remain in the bondage of hopes and desires of many types even after the present life-span They do not achieve any success even after serious efforts to collect money for enjoying sensual pleasures, which they consider as essence of life Everyday only after serious efforts with great difficulty they get a bit of food stuff scattered hither and thither or that which has been thrown away. They get only a little amount of food grains If sometimes they get some good food that also gets lost. They always remain deprived of this unstable money, cereals and treasure for personal enjoyment. They remain deprived of all the worldly enjoyments through kaam

(sense of sight and sense of hearing) and bhog (sense of smell, sense of taste and sense of touch) They remain busy in efforts to usurp the means of enjoyment of others due to the inherited bent of mind but they get only troubles in the end They have neither peace nor pleasure.

In brief those persons remain suffering in the fire of extreme troubles in large number, who do not discard the desire to role the property of others and adattadan

This is the result of the sin of stealing It is the bitter result of Karmas collected by them It has to be borne in the present life and also in succeeding life or lives It is without any happiness It is going to provide great trouble It is extremely frightening It contains extremely thick Karmic dust as bondage. It is very troublesome and hard It provides pain It takes thousands of years to discard it It can not be discarded without experiencing its fruits.

उपसंहार CONCLUSION

७९. एवमाहंसु णायकुल-णंदणो महप्पा जिणो उ वीरवर-णामधेज्जो कहेसी य अदिण्णादाणस्स फलविवाग। एय त तइयं पि अदिण्णादाणं हर-दह-मरण-भय-कलुस-तासण-परसंतिकभेज्जलोहमूलं एवं जाव चिरपरिगय-मणुगय दुरतं।

॥ तइयं अहम्मदारं समत्तं ॥ त्ति बेमि ॥

७९. इस प्रकार ज्ञातकुलनन्दन, महान्-आत्मा महावीर नामक जिनेश्वर भगवान ने कहा है। अदत्तादान के इस तीसरे (आस्रव-द्वार के) फलविपाक को भी उन्ही तीर्थकर देव ने प्रतिपादित किया है। यह अदत्तादान, परधन-अपहरण, दहन, मृत्यु, भय, मलिनता, त्रास, रौद्रध्यान एव लोभ का मूल है। अधिक क्या यह चिरकाल से, अनादिकाल से (प्राणियो के साथ) लगा हुआ है। इसका अन्त कठिनाई से होता है।

॥ तृतीय अधर्मद्वार समाप्त ॥

This is what Omniscient Bhagavan Mahavir has said This third gateway of Asrava (inflow of Karma) it has also been propounded by Bhagavan Mahavir It is the very basis of usurping or burning the property of others It is the basis of death, fear, dejection, angry attitude and greed What else can be said, it is stuck to the living beings since a period without a beginning It ends only with great difficulty

● END OF THE THIRD CHAPTER ●

चतुर्थ अध्ययन : अब्रह्म
FOURTH CHAPTER : NON-CELIBACY (ABRAHM)

गणधर श्री सुधर्मा स्वामी अपने अन्तेवासी जम्बू स्वामी के समक्ष चौथे आस्रव द्वार अब्रह्मचर्य की प्ररूपणा करते हुए सर्वप्रथम उसका स्वरूप, तदनन्तर उसके नाम, सेवन करने वाले तथा उसके कटु फलो का यथाक्रम फरमाने लगे।

While describing non-celibacy, the fourth gateway of inflow of Karmas (Asrav dvaar) Ganadhar Sudharma Swami first of all told his disciple Jambu Swami about its nature and thereafter systematically mentioned its synonyms, the persons engaged in such thoughts and the bitter consequences thereof

अब्रह्मचर्य का स्वरूप NATURE OF NON-CELEBACY (ABRAHM)

८०. जबू ! अबंभं च चउत्थं सदेवमणुयासुरस्स लोयस्स पत्थणिज्जं पंकपणयपासजालभूयं थी–पुरिस–णपुंसग–वेयचिंधं तव–संजम–बंभचेरविग्घं भेयाययण–वहुपमायमूलं कायर–कापुरिससेवियं सुयणजणवज्जणिज्जं उड्ढ–णरय–तिरिय–तिल्लोकपइट्ठाणं जरा–मरण–रोग–सोगबहुलं वध–बंधविघाय–दुव्विघायं दसणचरित्तमोहस्स हेउभूयं चिरपरिगय–मणुगयरं दुरंतं चउत्थं अहम्मदारं॥१॥

८०. हे जम्बू ! चौथा अब्रह्मचर्य नामक यह आस्रवद्वार है। देव, मनुष्य और असुर सहित समूचा लोक इसकी अभिलाषा (इच्छा) रखता है। प्राणियो को फँसाने वाले दलदल के समान है। इसके सम्पर्क से जीव उसी प्रकार फिसल जाते है जैसे पनक या काई के ससर्ग से। ससारी प्राणियो को बाँधने के लिए यह पाश के समान है और फँसाने के लिए जाल के सदृश है। स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुसकवेद इसको पहचानने के चिह्न है। यह अब्रह्मचर्य तपश्चर्या, सयम और ब्रह्मचर्य के लिए विघ्नस्वरूप है। सदाचार–सम्यक्चारित्र का विनाशक 'प्रमाद' का मूल है। कायर–सत्त्वहीन, दुर्बल प्राणी और कापुरुष– निम्न वर्ग के पुरुष (जीव) इसका सेवन करते है। यह सुजनो–सदाचारी साधक पुरुषो द्वारा त्याज्य है। ऊर्ध्वलोक–(देवलोक), नरकलोक–(अधोलोक) एव तिर्यक्लोक–(मध्यलोक) मे, इस प्रकार तीनो लोको मे इसकी जडे फैली हुई है। जरा–(बुढापा), मरण–(मृत्यु), रोग और शोक चिन्ता का कारण है, वध–मारने–पीटने, बन्ध–बन्धन मे डालने और विघात–प्राणहीन कर देने पर भी इसका विघात–अन्त नही होता। दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीय कर्मबन्ध का मूल कारण यही है। जीव का अनादिकाल से परिचित है और सदा से–प्राणियो के पीछे लगा हुआ है। इसका अन्त बडी कठिनाई से होता है अर्थात् तीव्र मनोबल, दृढ सकल्प, उग्र तपस्या आदि साधना से ही इसका अन्त आता है अथवा इसका अन्त परिणाम अत्यन्त दु खप्रद होता है। ऐसा यह चौथा अधर्मद्वार है।

80. O Jambu ! Non-celebacy is the fourth gateway of inflow of Karma The entire world including celestial beings, human beings and demon

gods have a desire for it It is the slippery ground to involve the living beings With its contact the living beings go astray just as the touch of moss makes one slip. It is like a snare to trap the worldly beings and a net to catch them The feeling of lust in women for man (stri ved), lust in man for woman (purush ved) and lust for both (napunsak ved) are the expressions distinguishing it It is an obstacle in ascetic discipline, austerities and celibacy It is the very foundation of slackness that destroys right conduct or good behaviour Cowards, weak and persons belonging to depressed classes follow it People practicing good conduct discard it It has its roots in all the three worlds—the heaven, the hell and the central world (inhabited by animals and human beings) It is the cause of old age, death, disease, sorrow and worries It does not come to an end even when one is beaten, maimed or killed It is the cause of bondage of perception-deluding (darshan mohaniya) karma and conduct deluding Karma Since beginningless time the living beings are well acquainted with it and it is attached to them It can be ended only with great difficulty In other words, in order to discard it, on should have strong determination, high mental attitude, austere life and such like practices Its end result is extremely troublesome Such is the nature of the fourth adharm dvaar

विवेचन अब्रह्मचर्य इतना व्यापक है कि देवो, दानवो, मनुष्यो एव तिर्यचो मे इसका एकच्छत्र साम्राज्य है। यहाँ तक कि जीवो मे सबसे हीन सज्ञा वाले एकेन्द्रिय जीव भी इसके घेरे से बाहर नही है। हरि, हर, ब्रह्मा आदि से लेकर कोई भी शूरवीर पुरुष ऐसा नही है जो कामवासना–अब्रह्मचर्य के अधीन न हो। यदि किसी पर इसका वश नही चल पाता तो वह केवल वीतराग–जिन ही है, अर्थात् जिसने राग का समूल उन्मूलन कर दिया है, जो वासना से सर्वथा रहित हो गया है वही पुरुषपुगव अब्रह्मचर्य के फन्दे से बच सका है।

इसी कारण प्रस्तुत पाठ मे उसे 'दुरत' कहा है किन्तु 'अनत' नही कहा, अर्थात् यह नही कहा कि उसका अन्त नही हो सकता। हाँ, अब्रह्मचर्य पर पूर्ण विजय पाने के लिए तप और सयम मे दृढता होनी चाहिए। ध्यान, समाधि और वीतरागता द्वारा काम को जीता जा सकता है।

Elaboration—Non-celibacy (Abrahm) is prevalent to such an extent that its domain extends to celestial beings, demon-gods, human beings and animal kingdom Even the one-sensed living beings, the development of whose faculties are at a very low ebb, are also not beyond its field Even the gods such as Vishnu, Shiva and Brahma are a prey to lust (non-celibacy) Only Jinas (the controllers of all senses) are beyond its scope In other words only that person can save himself from its


अब्रह्मचर्य का स्वरूप
अब्रह्मचर्य सेवन
प्राणियों को फँसाने वाले दलदल के समान है
मछुआरे के जाल मे फँसी मछली
शिकारी के बंधन में बँधा हिरन
मदिरा पीकर बेभान व्यक्ति
गुरुदेव ! मै ब्रह्मचर्य का प्रत्यख्यान लेना चाहता हूँ।
नहीं !
साधु से प्रत्याख्यान लेते व्यक्ति को रोकती स्त्री।
अब्रह्मचर्य तपश्चर्या, संयम और ब्रह्मचर्य के लिए विघ्नस्वरूप है।
स्त्री के मोहपाश में पड़कर प्रमादवश प्रत्याख्यान नहीं लिया

चित्र-परिचय 10

Illustration No. 10

अब्रह्मचर्य का स्वरूप

चित्र मे अब्रह्मचर्य के स्वरूप को समझाने के लिये विभिन्न उपमाये दी गई है।

(1) इसे प्राणियो को फँसाने वाले दलदल के समान बताया गया है। जिस प्रकार दलदल मे फँसकर प्राणी उसके कीचड मे फिसलकर डूबता ही जाता है, उसी प्रकार अब्रह्मचर्य के दलदल मे फँसकर जीवात्मा पाप पङ्क से मलिन हो अधोगति मे जाता है।

(2) अब्रह्मचर्य का स्वरूप मछुआरे के फैंके हुये जाल के समान बताया गया है। जिस प्रकार फेके गये जाल मे मछली फँसकर असहाय हो जाती है, उसी प्रकार स्त्री द्वारा काम-भोग निमत्रण रूपी जाल मे फँसकर पुरुष असहाय हो जाता है।

(3) जैसे शिकारी हिरन को रस्सियो मे बाँध देता है, उसी प्रकार यह अब्रह्मचर्य सेवन ससारी प्राणियो की आत्मा को मोहपाश या कर्म-जाल मे बाँध देता है।

(4) जिस प्रकार मदिरा सेवन के प्रमाद मे बेभान व्यक्ति अपना हित अहित भूलकर पतन के गर्त मे गिर जाता है, उसी प्रकार अब्रह्मचर्य सेवन से ब्रह्मचर्य, तप सयम नष्ट करने वाला प्रमाद उत्पन्न होता है जिसके फलस्वरूप सदाचार और सम्यकचारित्र का विनाश हो जाता है।

स्त्री के मोहपाश मे पडकर व्रतो का प्रत्याख्यान लेता पुरुष रुक जाता है और भोग विलास मे मग्न हो जाता है। इसलिए अब्रह्मचर्य को दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीय कर्मबंध का मूल कारण कहा गया है।

--सूत्र 80, पृ 177

DEFINING NON-CELIBACY

In order to explain non-celibacy the illustration provides a few allegories

(1) It is said to be like a swamp that traps living beings Like a man caught in a swamp continues to be drawn into it, a soul caught in the swamp of non celibacy is smeared by the slime of sin and falls to a lower rebirth

(2) Non-celibacy is said to be like a fishing net thrown by fishermen A fish caught in the net becomes helpless in the same way a man caught in the net of carnal invitation by a woman becomes helpless

(3) Like a hunter ties a deer with ropes, in the same way indulgence in non-celibacy entraps the souls of worldly beings in the knots of fondness and net of karmas

(4) Intoxicated by drinking wine a man looses all sense of harm and benefit and falls into the void of disgrace In the same way indulgence in non-celibacy gives rise to the stupor that destroys celibacy penance and restraint As a consequence, good behaviour and right conduct are damaged

A person resolving to take vows is distracted when ensnared by love of a woman and gets involved in carnal pleasures That is why non-celibacy is said to be the root cause of acquiring the bondage of perception deluding and conduct deluding karmas

— Sutra-80, page-177

influence, who has destroyed the very root of attachment and who is without any feeling of lust for sensual desires

So in this aphorism, it is called 'durant' and not 'anant' In other words it is not mentioned that it cannot be ended In order to completely subdue the feeling of non-celibacy, one should be strong in austerities and self-discipline. Lust can be overpowered through meditation, state of equanimity and practice of complete non-attachment

अब्रह्म के गुण–निष्पन्न नाम **SYNONYMS OF ABRAHM BASED ON ITS QUALITIES**

८१. तस्स य णामाणि गोण्णाणि इमाणि होंति तीसं, तं जहा–१. अबंभं, २. मेहुणं, ३. चरंतं, ४ संसग्गि, ५. सेवणाहिगारो, ६ संकप्पो, ७ बाहणा पयाणं, ८. दप्पो, ९. मोहो, १०. मणसंखोभो, ११. अणिग्गहो, १२. वुग्गहो, १३. विघाओ, १४. विभंगो, १५. विब्भमो, १६. अहम्मो, १७. असीलया, १८ गामधम्मतित्ती, १९. रई, २०. रागचिंता, २१. कामभोगमारो, २२. वेरं, २३. रहस्सं, २४. गुज्झं, २५. बहुमाणो, २६. बंभचेरविग्घो, २७ वावत्ती, २८. विराहणा, २९. पसंगो, ३०. कामगुणोत्ति वि य तस्स एयाणि एवमाईणि णामधेज्जाणि होंति तीसं।

८१ पूर्व प्ररूपित अब्रह्मचर्य के सार्थक तीस नाम है। वे इस प्रकार है–

१ **अबभ**–आत्म–भाव से रहित अकुशल अनुष्ठान।

२ **मेहुणं**–मैथुन अर्थात् नर–नारी के सयोग से होने वाला कृत्य।

३ **चरत**–समूचे ससार मे व्याप्त।

४ **ससग्गि**–स्त्री और पुरुष (आदि) के ससर्ग या सम्पर्क से उत्पन्न होने वाला।

५ **सेवणाहिगारो**–असत्य, चोरी आदि अन्यान्य पापकर्मो का प्रेरक।

६ **सकप्पो**–मानसिक सकल्प से उत्पन्न होने वाला।

७ **बाहणा पयाणं**–सयम–स्थानो को बाधित, पीडित करने वाला।

८ **दप्पो**–शरीर एव इन्द्रियो के दर्प -अधिक पुष्ट होने–से उत्पन्न होने वाला।

९ **मोहो**–मोहनीय कर्म के उदय से उत्पन्न होने वाला। हिताहित के विवेक को नष्ट करने वाला।

१० **मणसंखोभो**–मन मे क्षोभ–उद्वेग–विकार उत्पन्न करने वाला या मन को चचल बना देने वाला।

११ **अणिग्गहो**–विषयो मे प्रवृत्त होते हुए मन व इन्द्रियो का निग्रह न करने से उत्पन्न होने वाला।

१२ **वुग्गहो**–लडाई–झगडा–क्लेश उत्पन्न करने वाला अथवा विपरीत देह के प्रति आकर्षण उत्पन्न करने वाला।

१३ **विघाओ**–आत्मा के सद्गुणो का घात करने वाला।

१४. **विभंगो**–सयम चारित्र आदि सद्गुणो को भग–विध्वस करने वाला।

१५. **विब्भमो**–भ्रम अर्थात् अहितकारी विषयो मे हित की भ्रान्ति उत्पन्न करने वाला।

१६. **अहम्मो**–अधर्म–पाप का मूल कारण।

१७ असीलया–शील–सदाचार का घातक।

१८ गामधम्मतित्ती–इन्द्रियो के शब्दादि विषय की गवेषणा का कारण।

१९. रई–रतिक्रीडा–सम्भोग करना।

२०. रागचिंता–नर–नारी के शृगार, हाव–भाव, विलास आदि के चिन्तन से उत्पन्न होने वाला।

२१ कामभोगमारो–कामभोगो मे अत्यन्त आसक्ति होने से मृत्यु का कारण।

२१ वेरं–वैर–विरोध का हेतु।

२३ रहस्स–एकान्त मे किया जाने वाला कृत्य।

२४. गुज्झं–लुक–छिपकर किया जाने वाला या छिपाने योग्य कर्म।

२५. बहुमाणो–ससारी जीवो द्वारा बहुत मान्य।

२६. बभचेरविग्घो–ब्रह्मचर्यपालन मे विघ्नकारी।

२७ वावत्ती–आत्मा के स्वाभाविक निज गुणो का विनाशक।

२८. विराहणा–सम्यक्‌चारित्र की विराधना करने वाला।

२९. पसगो–आसक्ति का कारण।

३०. कामगुणोत्ति–कामवासना का कार्य।

इस प्रकार अब्रह्मचर्य के ये तीस तथा इस प्रकार के अन्य नाम भी होते है।

81. There are thirty synonyms of abrahm They are as follows—

1. Abrahm—Improper act devoid of time nature of self

2. Maithun—Act of co-habiting between two sexes

3. Charant—Spread all over in the universe

4. Sansargi—Produced through contact of men and women with each other

5. Sevana-dhikar—Instigator of sinful activities like falsehood, stealing and the like

6. Sankalpi—It arises from mental attitude

7. Badhana Padanaam—It causes disturbance to places where self-restraint is practical

8. Darp—It arises when the body and sense organs become more energetic

9. Moh—It is the result of deluding Karma It destroys sense of discrimination

10. Manah Sankshobh—It causes instability or pollution in the mind

11. Anigraha—It arises when one is not able to control his mind and senses from involving in their sensual activities

12. Vigraha—It causes quarrel, disturbance and fight It attracts one to opposite body formation

13. Vighaat—It destroys good traits of the soul

14. Vibhanga—It destroys good qualities like self-restraint and good conduct

15. Vibhram—Illusions; leads to consider harmful as benign

16. Adharma—It is the basic cause of sin

17 Asheelata—It destroys good conduct of restraint

18 Gramdharma Tapti—It is the cause of search by sense organs of their subjects

19. Rati—Indulgence in sexy activities, mating

20. Raag Chinta—It arises when men and women think of their physical beauty, sensual enjoyment and suchlike activities

21. Kaam bhog maar—Due to extremely deep attachment in sex it becomes the cause of death

22. Vair—It is the cause of opposition

23. Rahasyam—It is an act done in privacy

24. Guhya—It is an act done secretly

25. Bahumaan—Worldly beings give it great importance

26. Brahmcharya Vighna—It disturbs life of celibacy

27. Vyapti—It destroys natural qualities of self

28. Viradhana—It adversely affects right conduct

29. Prasang—It is the cause of attachment

30. Kaamagun—It is the expression of lust

Non-celibacy has above-said thirty synonymous There are other synonyms also of such type

विवेचन अब्रह्मचर्यसेवन का मूल मन मे उत्पन्न होने वाला एक विशेष प्रकार का विकार है। अत इसे 'मनोज' भी कहते है। उत्पन्न होते ही मन को मथ डालता है, इस कारण इसका एक नाम 'मन्मथ' है। मन मे उद्भूत होने वाला यह विकार शुद्ध आत्मस्वरूप की उपलब्धि मे बाधक तो है ही साथ ही उसके लिए की जाने

वाली साधना-आराधना का भी विघातक है। यह चारित्र को पनपने नही देता। सयम मे विघ्न उपस्थित करता है। प्रथम तो सम्यक्चारित्र को उत्पन्न ही नही होने देता और उत्पन्न हुआ चारित्र भी इसके कारण नष्ट हो जाता है।

इसकी उत्पत्ति के कारणो की समीक्षा करते हुए शास्त्रकार ने बताया है कि इसका जन्म दर्प से होता है। इसका आशय यह है कि जब रसादि के सेवन से इन्द्रियाँ बलवान बन जाती है और शरीर पुष्ट होता है तो कामवासना को उत्पन्न होने का अवसर मिलता है। यही कारण है कि पूर्ण ब्रह्मचर्य की आराधना करने वाले साधक विविध प्रकार की तपश्चर्या करके अपनी इन्द्रियो को नियन्त्रित रखते है। इसके लिए जिह्वेन्द्रिय पर सयम रखना और पौष्टिक आहार का वर्जन करना अनिवार्य है।

तीस नामो मे एक नाम 'ससर्गी' भी आया है। इससे ध्वनित है कि अब्रह्मचर्य के पाप से बचने के लिए साधक को विरोधी वेद वाले के ससर्ग से दूर रहना चाहिए। नर के साथ नारी का और नारी के साथ नर का अमर्यादित ससर्ग कामवासना को उत्पन्न करता है।

अब्रह्मचर्य को मोह, विग्रह, विघात, विभ्रम, व्यापत्ति, बाधनापद आदि जो नाम दिये गये है उनसे ज्ञात होता है कि यह विकार मन मे विपरीत भावनाएँ उत्पन्न करता है। काम के वशीभूत हुआ प्राणी मूढ बन जाता है। वह हित-अहित को, कर्त्तव्य-अकर्त्तव्य को या श्रेयस्-अश्रेयस् को यथार्थ रूप मे समझ नही पाता। हित को अहित और अहित को हित मान बैठता है। उसका विवेक नष्ट हो जाता है। उसके विचार विपरीत दिशा पकड लेते है। उसके शील-सदाचार-सयम का विनाश हो जाता है।

'विग्रहिक' और 'वैर' नामो से स्पष्ट है कि अब्रह्मचर्य लडाई-झगडा, युद्ध, कलह आदि का कारण है। प्राचीनकाल मे कामवासना के कारण अनेकानेक युद्ध हुए है, जिनमे हजारो-लाखो मनुष्यो का रक्त बहा है। शास्त्रकार स्वय आगे ऐसे अनेक उदाहरण प्रस्तुत कर रहे है। आधुनिक काल मे भी अब्रह्मसेवन की बदौलत अनेक प्रकार के लडाई-झगडे होते ही रहते है। हत्याएँ भी होती रहती है।

इस प्रकार उल्लिखित तीस नाम जहाँ अब्रह्मचर्य के विविध रूपो को प्रकट करते है, वही उससे होने वाले भीषण अनर्थो को भी सूचित करते है।

Elaboration—The foundation of having sex is a special type of perverse thought arising in the mind So it is also called 'manoj' (arising in the mind) Immediately when it arises in the mind, it deeply disturbs it so it is called 'Manmath' Such a polluted thought arising in the mind is a hindrance in achieving pure nature of soul It also destroys or adversely affects the practices for self-purification It does not allow good conduct to flourish It causes disturbance in self-restraint Primarily it does not allow right conduct to appear In case right conduct has appeared, it destroys due to non-celibacy

While examining the causes that lead to non-celibacy, the author has said that it arises from darp (development of sense-organs) When one takes rich diet, the sense-organs becomes more powerful The physical body also develops Then there is a suitable occasion to express lust So the practitioner of total celibacy, controls his senses by various

types of austerities. It is essential to have a control over sense of taste and to avoid energetic diet.

One of the thirty synonyms is Sansargi It indicates that in order to avoid the sin of non-celibacy, one should avoid contact with opposite sex. The uncontrolled contact of man with woman or of woman with man produces feeling of lust

Moh, Vigraha, Vighaat, Vibhram, Vyapti, Badhanapad are also in the list of synonyms of abrahm (non-celibacy) These synonymns indicate that abrahm produces ill thoughts in the mind Man becomes non-discriminative under the influence of lust He is not able to understand that what is for his welfare and what is not, what is his duty and what is not his duty and what is good for him and what is not so He considers a matter concerning his welfare as the one not for his welfare He loses his sense of discrimination His thought activity follows the opposite direction He adversely affects his character, self-restraint and vows he had accepted

The synonymns Vigrahik and Vair clearly indicate that non-celibacy (abrahm) is the cause of quarrel, wars and mutual indifference Many wars took place in ancient times as a result of lust in which thousands and even millions of people lost their lives The author has given in paragraphs ahead many such examples Even now-a-days many disputes and battles are caused by prevalence of lust (non-celibacy) Even murders occur because of it

Thus the above mentioned thirty synonymns of abhrahm-charya indicate its different forms They also present a picture of grave consequences due to it.

अब्रह्मसेवी देवादि **CELESTIAL BEINGS ENGAGED IN LUST**

८२. तं च पुण णिसेवंति सुरगणा सअच्छरा मोहमोहियमई असुर–भुयग–गरुल–विज्जु–जलण–दीव–उदहि–दिसि–पवण–थणिया।

अणवण्णिय–पणवण्णिय–इसिवाइय–भूयवाइय–कंदिय–महाकंदिय–कहंड–पयंगदेवा।

पिसाय–भूय–जक्ख–रक्खस–किण्णर–किंपुरिस–महोरग–गंधव्वा।

तिरिय–जोइस–विमाणवासि–मणुयगणा, जलयर–थलयर–खहयरा।

मोहपडिबद्धचित्ता अवितण्हा कामभोगतिसिया, तण्हाए बलवईए महईए समभिभूया गढिया य अइमुच्छिया य अबंभे उस्सण्णा तामसेण भावेण अणुम्मुक्का दंसणचरित्तमोहस्स पंजरं पिव करेंति अण्णोण्णं सेवमाणा।

८२. जिनकी बुद्धि मोह से मोहित हो रही है, ऐसे देवगण उस अब्रह्म नामक पापास्रव का अपनी अप्सराओ (देवागनाओ) के साथ (मैथुन कर) सेवन करते है। वे देव इस प्रकार है– (१) असुरकुमार, (२) नागकुमार, (३) गरुडकुमार (सुपर्णकुमार), (४) विद्युत्कुमार, (५) अग्निकुमार, (६) द्वीपकुमार, (७) उदधिकुमार, (८) दिशाकुमार, (९) पवनकुमार, तथा (१०) स्तनितकुमार, ये दस प्रकार के भवनवासी देव।

(१) अणपन्निक, (२) पणपन्निक, (३) ऋषिवादिक, (४) भूतवादिक, (५) क्रन्दित, (६) महाक्रन्दित, (७) कूष्माण्ड, और (८) पतग देव (ये आठ व्यन्तर देवो के प्रकार है)।

(१) पिशाच, (२) भूत, (३) यक्ष, (४) राक्षस, (५) किन्नर, (६) किम्पुरुष, (७) महोरग, और (८) गन्धर्व (ये भी आठ प्रकार के निम्न जाति के वाणव्यन्तर देव है)।

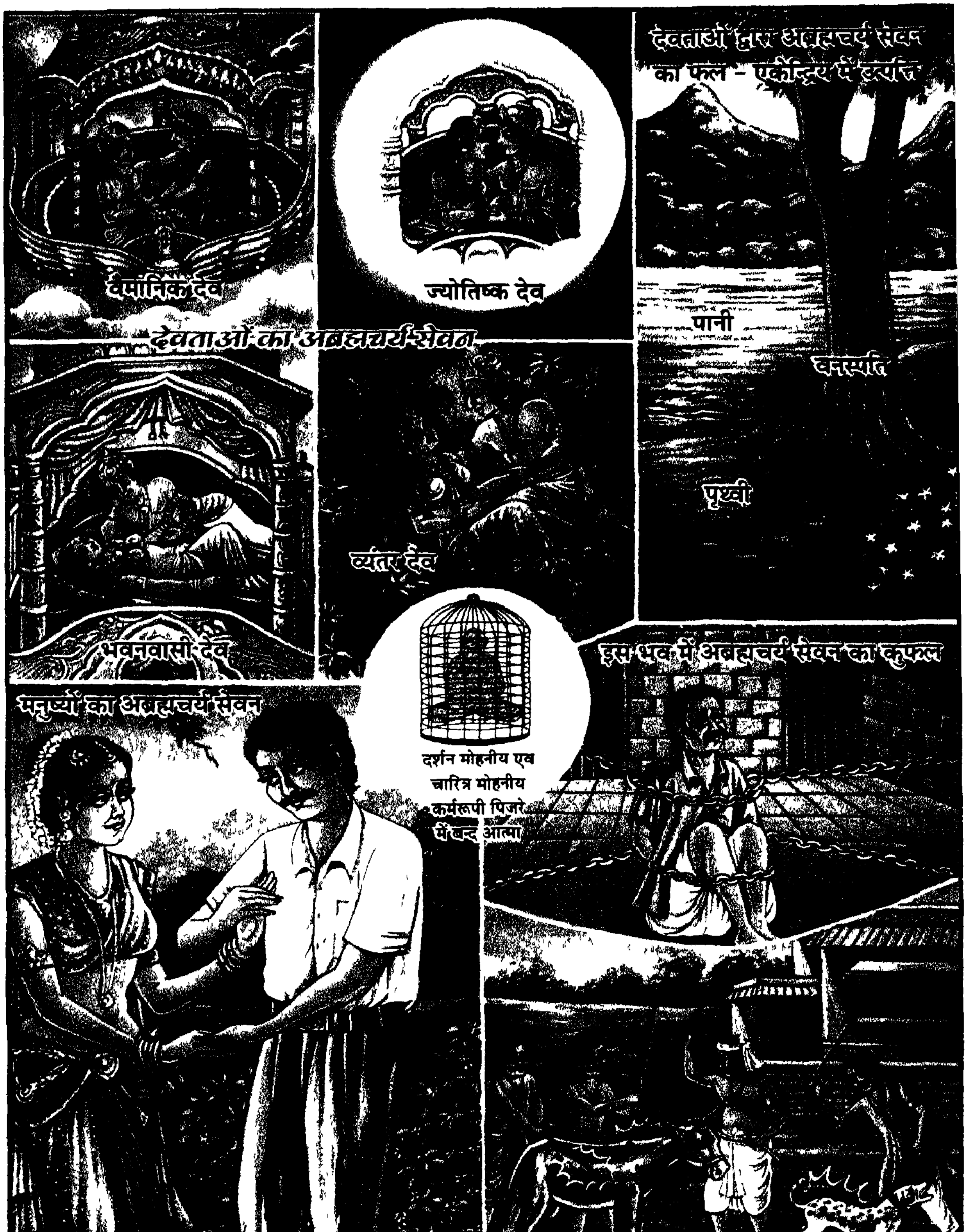
मध्य लोक मे विमानो मे निवास करने वाले ज्योतिष्क देव तथा मनुष्यगण, तथा जलचर, स्थलचर एव खेचर (ये तिर्यच पचेन्द्रिय जातीय जीव) अब्रह्म का सेवन करते है।

जिनका मन मोह से ग्रस्त हो गया है, जिनको प्राप्त हुए कामभोग सम्बन्धी तृष्णा का अन्त नही हुआ है और जो अप्राप्त कामभोगो के लिए तृष्णातुर है, जो तीव्र एव बलवती भोग तृष्णा से बुरी तरह पीडित है–जिनके मानस को प्रबल काम–लालसा ने पराजित कर दिया है, जो विषयो मे अत्यन्त आसक्त एव अतीव मूर्च्छित है–कामवासना की तीव्रता के कारण जिन्हे उससे होने वाले दुष्परिणामो का भान नही है, जो अब्रह्मचर्यरूपी कीचड मे फँसे हुए है और जो तामसभाव–अज्ञानमय जडता से मुक्त नही हुए है, ऐसे (देव, मनुष्य और पचेन्द्रिय तिर्यच) अन्योन्य–परस्पर नर–नारी के रूप मे अब्रह्म (मैथुन) का सेवन करते हुए अपनी आत्मा को दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीय कर्म के पिजरे मे डालते है, अर्थात् वे अपने आपको मोहनीय कर्म के बन्धन से ग्रस्त करते है।

82. Such celestial beings whose intellect is adversely affected with delusion, engage in the sin of non-celibacy by cohabitation with goddesses There are ten types of celestial beings called Bhavanavasi (celestial beings living in abodes) They are (1) Asur Kumar, (2) Nag Kumar, (3) Garud Kumar (Suparn Kumar), (4) Vidyut Kumar, (5) Agni Kumar, (6) Dveep Kumar, (7) Udadhi Kumar, (8) Disha Kumar, (9) Pavan Kumar and (10) Stanit Kumar

There are eight types of Vyantar gods They are (1) Anpannik, (2) Panapannik, (3) Rishivadik, (4) Bhootavadik, (5) Krandit, (6) Mahakrandit, (7) Kooshmand and (8) Patang

There are eight types of Vanavyantar devas (of lower status) They are (1) Pishach, (2) Bhoot, (3) Yaksh, (4) Rakshas, (5) Kinnar, (6) Kimpurish, (7) Mahorag and (8) Gandharv


वैमानिक देव
ज्योतिष्क देव
देवताओं द्वारा अब्रह्मचर्य सेवन का फल - एकेन्द्रिय में उत्पत्ति
पानी
वनस्पति
पृथ्वी
देवताओं का अब्रह्मचर्य सेवन
व्यंतर देव
भवनवासी देव
दर्शन मोहनीय एवं चारित्र मोहनीय कर्मरूपी पिंजरे में बन्द आत्मा
इस भव में अब्रह्मचर्य सेवन का कुफल
मनुष्यों का अब्रह्मचर्य सेवन
अगले भवों में अब्रह्मचर्य सेवन का कुफल

चित्र-परिचय 11 | **Illustration No. 11**

देवताओं और मनुष्यों द्वारा अब्रह्मचर्य सेवन

चित्र के ऊपर के भाग मे अब्रह्मचर्य सेवन करने वाले चार निकाय के देवता बताये गये हैं—**वैमानिक देव**—ये अपनी देवागनाओ के साथ अब्रह्म सेवन करते हैं (केवल प्रथम एवं द्वितीय देवलोक तक ही मैथुन सेवन है।)। फिर **ज्योतिष्क, भवनवासी** और **व्यंतर** देवो को कामवासना के चगुल मे फँसा बताया है।

इस अब्रह्म सेवन के फलस्वरूप ये देव अगले भवो मे पृथ्वी, पानी और वनस्पति रूप ऐकेन्द्रिय जीव बनकर उत्पन्न होते हैं।

अब्रह्म सेवन करते हुए ये देव अपनी आत्मा को दर्शन मोहनीय एव चारित्र मोहनीय कर्म रूपी पिजरे में बद कर लेते हैं।

मनुष्यों द्वारा अब्रह्म सेवन—काम-वासना के प्रबल वेग से प्रभावित होकर स्त्री-पुरुष अब्रह्मचर्य का सेवन करतै हैं। अब्रह्म सेवन के फलस्वरूप इस भव मे परस्त्रीगामी पुरुष को अनेक दुख भोगने पड़ते हैं। परस्त्री गमन करता हुआ जब वह पकड़ा जाता है तो बधनो से बाँधकर कारागार मे बद कर दिया जाता है। अगले भवो मे भी अब्रह्मचर्य सेवन के फलस्वरूप वह तिर्यंच गति पाता है और बधनों मे बाँधकर पीटा जाता है।

परस्पर अब्रह्म सेवन करते हुए वे नर-नारी अपनी आत्मा को दर्शनमोहनीय व चारित्र मोहनीय कर्म रूपी पिजरे में कैद कर लेते हैं।

—सूत्र 82, पृ. 184

GODS AND HUMANS INDULGING IN NON-CELIBACY

The illustration at the top shows gods of four divine classes indulging in non-celibacy Gods of celestial vehicles (Vaimanik Devs) indulge in carnal enjoyments with their divine damsels (sexual activity is limited only to the first and second heavens) Also shown are the Jyotishk, Bhavanvasi and Vyantar gods caught in the trap of lust

As a consequence of these carnal activities these gods take rebirth as one-sensed beings of earth, water and plant-bodied classes

Due to these carnal indulgences these gods push their souls into the cage of perception and conduct deluding karmas

Humans indulging in non-celibacy - Driven by intense lust men and women indulge in carnal pleasures As a consequence of non-celibacy, individuals enjoying sex out of wedlock have to suffer many miseries When caught they are tied and imprisoned Even in next birth they are born as animals, tied and beaten

Due to these carnal indulgences these men and women push their souls into the cage of perception and conduct deluding karmas

— Sutra-82, page-184

In the Madhya Lok (Middle world) there are five types of Jyotishk gods and human beings, acquatic animals, animals living on land and birds flying in skies (five-sensed animal) All these gods, men and animals engage themselves in non-celebate activities

There are living beings whose mind is engaged in delusion They are not yet fully satisfied with the means of sensual activities they possess They are keen to satisfy their sensual desires, which yet remain to be satisfied They are in deep distress due to their deep desire to satisfy their lust Their mind is strongly affected by their unsatisfied lust They are extremely attached to sensory objects Since they have strong lust, they do not look into its bad results They are caught in the slime of non-celibacy They have not yet overpowered their slackness and ignorance Such living beings (celestial beings, human beings and five-sensed animal beings), male and female, engaging themselves in mutual sexual activities bind themselves in shackles of perception-deluding Karma and conduct-deluding Karma In other words they collect deluding Karma

विवेचन उक्त पाठ मे अब्रह्म-कामसेवन करने वाले सासारिक प्राणियो का कथन है। वैमानिक, ज्योतिष्क, भवनवासी और व्यन्तर, ये चारो निकायो के देवगण, मनुष्य वर्ग तथा जलचर, स्थलचर और खेचर-ये तिर्यच-पचेन्द्रिय कामवासना के चगुल मे फँसे हुए है।

तिर्यंच पचेन्द्रिय जीव ही मैथुन सेवन कर सकते है, बाकी एकेन्द्रिय से लेकर चतुरिन्द्रिय तक के जीव बाह्य मैथुन सेवन नही कर सकते, उनके केवल नपुसकवेद के उदय से कामवासना अवश्य होती है।

प्रस्तुत पाठ मे अब्रह्मचर्यसेवियो मे सर्वप्रथम देवो का उल्लेख किया गया है। इसका कारण यह प्रतीत होता है कि देवो मे कामवासना अन्य गति के जीवो की अपेक्षा अधिक होती है। मनुष्य मे मैथुन सज्ञा ज्यादा होती है पर देवो की सख्या बहुत ज्यादा होने से देवो मे कामवासना अधिक समझनी चाहिए और भोग का अनुभाग ज्यादा होता है। अधिक विषय सेवन का कारण उनका अत्यन्त सुखमय जीवन है। वैक्रियशक्ति भी उसमे सहायक होती है। वे अनेक प्रकार से विषयसेवन करते है।

भगवती सूत्र मे बताया है, कि नीचे के देवलोक के देवता तो एक दूसरे की देवियो का अपहरण भी कर लेते है। देवियो के कारण उनमे विग्रह भी होते है।

चार जाति के देवो मे वैमानिक देवो के दो प्रकार है-कल्पोपपन्न और कल्पातीत। बारह देवलोको तक के देव कल्पोपपन्न और ग्रैवेयकविमानो तथा अनुत्तरविमानो के देव कल्पातीत होते है। अब्रह्म का सेवन कल्पोपपन्न वैमानिक देवो तक सीमित है, कल्पातीत वैमानिक देवो मे कामवासना उपशान्त रहती है। यद्यपि कल्पातीत देवो मे भी मोह की विद्यमानता है तथापि उसकी मन्दता व उपशान्तता के कारण वे मैथुन प्रवृत्ति से विरत होते है।

वैमानिक देव ऊर्ध्वलोक मे स्थित कल्प विमानो मे निवास करते है। ज्योतिष्क देवो का निवास इस पृथ्वी के समतल भाग से ७९० योजन से ९०० योजन तक ११० योजन के अन्तराल मे है। ये सूर्य, चन्द्र आदि के भेद से पाँच प्रकार के है। भवनवासी देवो के असुरकुमार आदि दस प्रकार है। अधोलोक मे रत्नप्रभा पृथ्वी का पिण्ड

एक लाख अस्सी हजार योजन का है। इसमे से एक हजार योजन ऊपरी और एक हजार योजन नीचे के भाग को छोडकर एक लाख अठहत्तर योजन मे १३ प्रतर और १२ अतर है। उसके ऊपर के दो अतर खाली है। नीचे के १० अतर मे १० भवनवासी देवो का निवास है। व्यन्तर देव विविध प्रदेशो (अतरो) मे रहते है, इस कारण इनका नाम वाणव्यन्तर है। रत्नप्रभा पृथ्वी के प्रथम भाग एक हजार योजन मे से एक-एक सौ योजन ऊपर और नीचे छोडकर बीच के ८०० योजन मे, तिर्यग्भाग मे व्यन्तरो के असंख्यात नगर है।

व्यन्तर देवो मे एक जाति बाणव्यन्तर देवो की है। वे प्राय वनो मे, पर्वतो की गुफाओ मे, वृक्षो के कोटरो व विविध जलाशयो, उद्यानो मे रहते है।

Elaboration—In the above-mentioned aphorism, there is the description of worldly living beings engaged in sexual activities Four types of gods namely Vaimanik gods, Bhavanvasi gods, Vyantar gods and Jyotishk gods, human beings and five-sensed living beings on land, in water and in air (the sky) are involved in lust for sexual activities

Five-sensed animal beings can engage in sex The living beings who are one-sensed upto four sensed cannot engage outwardly in sexual activities but they certainly have desire for it as they are in a slut of neutral feelings

In the present lesson, the very first description is of gods who engage in sexual activities It is because the celestial beings appear to have deeper desire for sex than that of living beings in other states of existence The cause of greater involvement in sex is that their life is extremely full of worldly pleasures There fluid power is also helpful to them in this respect They enjoy sex in many ways

It is mentioned in Bhagavati Sutra that the celestial beings of lower heaven abduct the goddesses of other celestial beings The quarrels also arise among them due to goddesses

Out of gods of four types, Vaimanik gods are of two types–namely Kalpopann (ten different categories according to their status) and Kalpateet (There is no difference of status among them They are equal in each heaven to which they belong) The gods residing in the first twelve heavens are Kalpopann while the gods in nine Graiveyiks and five Anuttar Vimans are kalpateet Engagement in lustful activities is limited to gods in Kalpopann heavens The lust of Kalpateet gods is totally subdued Although the delusion exists in kalpateet gods also, yet they do no engage in sex because their lust for it is subdued or at a very low level

Vaimanik celestial beings reside in upper region of the world in Kalp Vimans (abodes) Jyotish gods are in the region 790 yojans to 900 yojans above from the surface of this earth They are of five classes namely sun, moon and others Asur Kumar is one of the types of bhavanvasi gods and they are of ten types In the lower region of the world (Adholok) Ratnaprabha hell is 1,80,000 yojan thick Bhavanvasi gods reside in 1,78,000 yojans, excluding 1000 yojans from the top and 11,000 yojans from the bottom Vyantar gods reside in different gaps (antars) So they are called Vaan-Vyantar gods Out of the topmost 1,000 yojans of Ratnaprabha hell, leaving aside 100 yojan from the top and 100 yojan from the bottom, in the remaining 800 yojan there are innumerable towns of Vyantar gods One class of Vyantar gods is Vaan Vyantar gods. They usually live in forests, mountain caves, empty spaces in trees, gardens and various collections of water

देवो के वर्णन के पश्चात् अब मनुष्यो के भोग–सुखो के सन्दर्भ मे सर्वप्रथम चक्रवर्ती के भोग–सुखो का कथन किया जाता है।

After describing the celestial beings, human beings are described and first of all the pleasures of Chakravartis are narrated

चक्रवर्ती के विशिष्ट भोग UNIQUE WEALTH OF CHAKRAVARTIS

८३. भुज्जो य असुर–सुर–तिरिय–मणुयभोगरइविहरसंपउत्ता य चक्कवट्टी सुर–नरवइ–सक्कया सुरवरुव्व देवलोए।

८३. पुन जो असुरो, सुरो, तिर्यंचो और मनुष्यो सम्बन्धी शब्दादि विषयभोगो मे, विविध प्रकार की कामक्रीडाओ मे प्रवृत्त रहते है वे चक्रवर्ती सुरेन्द्रो और नरेन्द्रो द्वारा देवलोक मे देवेन्द्र के समान सम्मानित होते है।

83. They indulge in sensual enjoyments of various types as are enjoyed by demon-gods, gods, animal beings and human beings as well as a variety of lustful activities Their status in the human world is equivalent to that of god Indra respected by celestial beings and kings

चक्रवर्ती के राज्य विस्तार EXTENT OF KINGDOM OF CHAKRAVARTI

८४. भरह–णग–णगर–णिगम–जणवय–पुरवर–दोणमुह–खेड–कब्बड–मडंब–संवाह–पट्टण–सहस्समंडियं थिमियमेयणियं एगच्छत्तं ससागरं भुंजिऊण वसुहं।

८४. भरत क्षेत्र में हजारों पर्वतो, नगरो, निगमों, जनपदों–राजधानी आदि विशिष्ट नगरो, द्रोणमुखो, धूल के प्राकार वाली बस्तियो, कस्बो, छावनियो, पत्तनों–व्यापार प्रधान नगरियो से

सुशोभित, सुरक्षित होने के कारण भयरहित स्थिर लोगो के निवास वाली, एकच्छत्र समुद्र पर्यन्त पृथ्वी का उपभोग करके वे चक्रवर्ती बने है।

84. Their Kingdoms extends upto the sea in Bharat continent It includes thousands of mountains, cities, corporations, districts, important cities, harbours, suchlike colonies, villages, cantonments, ports and trade centres Since the people are well protected they permanently live there without any fear The Chakravarti enjoys the prosperity of such a large area

चक्रवर्ती नरेन्द्र के विशेषण SPECIAL CHARACTERISTICS OF CHAKRAVARTI

८५. [क] णरसीहा णरवई णरिंदा णरवसहा मरुयवसहकप्पा अब्भहियं रायतेयलच्छीए दिप्पमाणा सोमा रायवसतिलगा।

८५. (क) वे मनुष्यो मे सिह के समान शूरवीर होते है, जो नरपति है, नरेन्द्र है–मनुष्यो मे सर्वाधिक ऐश्वर्यशाली है, जो नर–वृषभ है–वृषभ के समान सामर्थ्यवान् है, अत्यधिक राज–तेज रूपी लक्ष्मी–वैभव से देदीप्यमान है, जो सौम्य–शान्त एव नीरोग है, राजवशो मे तिलक के समान श्रेष्ठ है।

85. (a) A Chakravarti is as bold as lion He is the master of human beings He is most prosperous among the people He is capable like a bullock so he is also called Nar-Vrishabh He is famous because of the grandeur of his kingdom He is quiet, peaceful and sobre He is free from all diseases He is the crown mark among the royal families

चक्रवर्ती के शुभ लक्षण GOOD SIGNS OF CHAKRAVARTI

(ख) रवि–ससि–संख–वरचक्क–सोत्थिय–पडाग–जव–मच्छ–कुम्म–रहवर–भग–भवण–विमाण–तुरय–तोरण–गोपुर–मणिरयण–णंदियावत्त–मुसल–णंगल–सुरइयवरकप्परुक्ख–मिगवइ–भद्दासण–सुरुचिथूभ–वरमउड–सरिय–कुंडल–कुंजर–वरवसह–दीव–मंदर–गरुलज्झय–इंदकेउ–दप्पण–अट्ठावय–चाव–बाण–णक्खत्त–मेह–मेहल–वीणा–जुग–छत्त–दाम–दामिणि–कमंडलु–कमल–घंटा–वरपोय–सूइ–सागर–कुमुदागर–मगर–हार–गागर–णेउर–णग–णगर–वइर–किण्णर–मयूर–वररायहंस–सारस–चकोर–चक्कवाग–मिहुण–चामर–खेडग–पव्वीसग–विपंचि–वरतालियंट–सिरियाभिसेय–मेइणि–खग्गं–कुस–विमल–कलस–भिंगार–वद्धमाणग–पसत्थउत्तमवि–भत्तवरपुरिसलक्खणधरा।

(ख) (चक्रवर्ती इन शुभ लक्षणो से शोभित होते है–) सूर्य, चन्द्र, शख, चक्र, स्वस्तिक, पताका, गौ, मत्स्य, कछुवा, उत्तम रथ, योनि, भवन, विमान, अश्व, तोरण, नगरद्वार, चन्द्रकान्त आदि मणि, रत्न, नद्यावर्त्त–नौ कोणो वाला स्वस्तिक, मूसल, हल, सुन्दर कल्पवृक्ष, सिह, भद्रासन, सुरुचि नामक आभूषण, स्तूप, सुन्दर मुकुट, मुक्तावली हार, कुण्डल, हाथी, उत्तम बैल, द्वीप, मेरु पर्वत या घर, गरुड, ध्वजा, इन्द्रकेतु–इन्द्रमहोत्सव मे गाडा जाने वाला स्तम्भ, दर्पण, अष्टापद–वह फलक या पट जिस पर

चौपड आदि खेली जाती है या कैलाश पर्वत, धनुष, बाण, नक्षत्र, मेघ, मेखला–करधनी, वीणा, गाडी का जूआ, छत्र, फूलो की माला, पैरो तक लटकती माला, कमण्डलु, कमल, घण्टा, उत्तम पोत–जहाज, सुई, सागर, कुमुद पुष्पो का सुरभित वन, मगर, हार, जलघट या एक प्रकार का आभूषण, नूपुर, पर्वत, नगर, वज्र, किन्नर–देवविशेष या वाद्यविशेष, मयूर, उत्तम राजहस, सारस, चकोर, चक्रवाक–युगल, चँवर, ढाल, पव्वीसक–एक प्रकार का बाजा, विपची–सात तारो वाली वीणा, श्रेष्ठ पखा, लक्ष्मी का अभिषेक, पृथ्वी, तलवार, अकुश, निर्मल कलश, भृगार–झारी और वर्धमानक–सिकोरा अथवा प्याला इत्यादि।

85. (b) There are special marks on the physical body of Chakravarti indicating good omen They are sun, moon, conch shell, wheel, swastika, bunting, barley, fish, tortoise, best chariot, yoni, building, aeroplane, horse, gate, gateway of the city, Chandrakant stone, jewel, nine cornered Swastika, thick rod (moosal), plough, beautiful tree that satisfies all desires, lion, special seat, Suruchi ornament, pillar, beautiful crown, garland of pearls, earrings, elephant, unique bullock, island, Meru mountain, house, guard, flag, pole erected to celebrate Indra festival, mirror, board for playing dice (astapad) or Kailash mountain, bow, arrow, constellation, rain-bearing cloud, waist-bend, Vina, yoke, umbrella, garland of flowers, garland hanging upto feet, bucket, lotus, hell, best ship, needle, sea, garden of fragrant flowers, crocodile, rosary, Jalaghat or a type of ornament, noopur (an ornament of the feet), hill, town, Vajra, special musical instrument, Peacock, Swan, Crane, Chakor, pair of Chakravak birds, whisk, shield, pavvisak (a type of musical instrument), Vipanchi (a Vina) having seven wires), unique fan, anointing of Lakshmi–goddess of wealth, piece of land, sword, short lance, spotless pot, small pitcher (bhringaar), cup (Vardhamanak) and others

चक्रवर्ती की ऋद्धि PROSPERITY OF CHAKRAVARTI

(ग) बत्तीसं वररायसहस्साणुजायमग्गा चउसट्ठिसहस्सपवरजुवतीणणयणकंता रत्ताभा पउमपम्ह कोरंट–गदामचंपकसुतवियवरकणकणिहसवण्णा सुवण्णा सुजायसव्वंगसुंदरंगा महग्घवरपट्टणुग्गयविचित्त–रागएणिपेणिणिम्मिय–दुगुल्लवरचीणपट्टकोसेज्ज–सोणिसुत्तगविभूसियंगा।

वरसुरभि–गंधवरचुण्णवासवर–कुसुमभरियसिरया कप्पियछेयायरिय–सुकयरइतमाल–कडगंगय–तुडियपवर–भूसणपिणद्धदेहा, एकावलिकंठसुर–इयवच्छा पालंब–पलंबमाणसुकय–पडउत्त–रिज्जमुद्दिया–पिंगलंगुलिया उज्जल–णेवत्थरइयचेल्लगविरायमाणा।

तेएण दिवाकरोव्व दित्ता सारयणवत्थणियमहुरगंभीरणिद्धघोसा उप्पण्णसमत्त–रयण–चक्करयणप्पहाणा णवणिहिवइणो समिद्धकोसा चाउरंता चाउराहिं सेणाहिं समणुजाइज्जमाणमग्गा तुरयवई

गयवई रहवई णरवई विपुलकुलवीसुयजसा सारयससिसकलसोमवयणा सूरा तिलोक्कणिग्गयपभावलद्धसद्दा समत्तभरहाहिवा णरिंदा ससेल–वण–काणण च हिमवंतसागरंतं धीरा भुत्तूण भरहवासं जियसत्तू पवररायसीहा पुव्वकडतवप्पभावा णिविट्ठसंचियसुहा, अणेगवाससयमायुवंतो भज्जाहि य जणवयप्पहाणाहिं लालियंता अतुल–सद्द–फरिस–रस–रूव–गंधे य अणुभवेत्ता ते वि उवणमंति मरणधम्मं अवितत्ता कामाणं।

(ग) बत्तीस हजार श्रेष्ठ मुकुटबद्ध राजा उनकी (चक्रवर्ती की) आज्ञा मे चलते है। वे चौसठ हजार श्रेष्ठ युवतियो (रानियो) के नेत्रो के प्रिय होते है। उनके शरीर की कान्ति रक्तवर्ण होती है। वे कमल के मध्य भाग, चम्पा के फूलो, कोरट की माला और तप्त सुवर्ण की कसौटी पर खीची हुई रेखा के समान गौर वर्ण वाले होते है। उनके सभी अगोपाग अत्यन्त सुन्दर और सुडौल होते है। बडे–बडे पत्तनो मे बने हुए विविध रगो के हिरनी तथा खास जाति की हिरनी के चर्म के समान कोमल एव बहुमूल्य वस्त्रो से या हिरनी के चर्म से बने वस्त्रो से तथा चीनी वस्त्रो, रेशमी वस्त्रो से तथा कटिसूत्र–करधनी से उनका शरीर सुशोभित होता है।

उनके मस्तिष्क उत्तम सुगन्धित द्रव्यो के चूर्ण (पाउडर) की गध से और उत्तम कुसुमो से युक्त होते है। कलाचार्यो–(शिल्पियो) द्वारा निपुणतापूर्वक बनाई हुई आराम देने वाली माला, कडे, अगद–बाजूबद, तुटिक–अनन्त तथा अन्य उत्तम आभूषण शरीर पर धारण किये रहते है। एकावली हार जिनके कण्ठ मे सुशोभित हो रहा है। वे लम्बी लटकती धोती एव दुपट्टा पहनते है। उनकी उँगलियाँ अँगूठियो से पीली रहती है। अपने उज्ज्वल एव सुखप्रद वेष–पोशाक से अत्यन्त शोभायमान होते है।

अपनी तेजस्विता से वे सूर्य के समान दमकते है। उनका आघोष (आवाज) शरद् ऋतु के नये मेघ की ध्वनि के समान मधुर, गम्भीर एव स्नेहयुक्त होता है। उनके यहाँ चक्ररत्न आदि चौदह रत्न उत्पन्न हो जाते है और वे नौ निधियो के स्वामी होते है। उनका कोश–कोशागार–अखूट (समृद्ध) होता है। उनके राज्य की सीमा तीन दिशाओ मे समुद्र पर्यन्त और एक दिशा मे हिमवान् पर्वत पर्यन्त फैली होती है। गजसेना, अश्वसेना, रथसेना एव पदातिसेना–यह चतुरगिणी सेना उनके मार्ग का अनुगमन करती है, उनकी आज्ञा का पालन करती है। वे अश्वो के अधिपति, हाथियो के अधिपति, रथो के अधिपति एव नरो–मनुष्यो के अधिपति होते है। उनका कुल विशाल व विश्रुत–दूर–दूर तक फैले यश वाला होता है। जिनकी प्रसिद्धि सारे लोक मे फैली है। उनका मुख शरद् ऋतु के पूर्ण चन्द्रमा के समान कान्तिमान होता है। वे शूरवीर होते है। उनका प्रभाव तीनो लोको मे फैला होता है एव सर्वत्र उनकी जय–जयकार होती है। वे सम्पूर्ण–छह खण्ड वाले भरत क्षेत्र के अधिपति, धीर, समस्त शत्रुओ के विजेता, बडे–बडे राजाओ मे सिह के समान होते है। पूर्वकाल मे किये तप के प्रभाव से सम्पन्न तथा सचित सुख को भोगने वाले, सैकडो वर्षों के आयुष्य वाले एव नरो मे इन्द्र–नरेन्द्र (चक्रवर्ती) होते है। पर्वतो, वनो और उद्यानो सहित उत्तर दिशा मे हिमवान् नामक वर्षधर पर्वत और शेष तीन दिशाओ मे लवणसमुद्र पर्यन्त समग्र भरत क्षेत्र–भारतवर्ष के स्वामित्व–राज्यशासन का उपभोग करते है तथा (विभिन्न) जनपदो मे

जन्मी उत्तम कन्याओ (भार्याओ) के साथ भोग-विलास करते हुए अनुपम शब्द, रूप, गंध रस और स्पर्श सम्बन्धी कामभोगो का भोगोपभोग करते है। विपुल ऐश्वर्य-सुख के स्वामी चक्रवर्ती भी वे कामभोगो से तृप्त हुए बिना ही मृत्यु को प्राप्त हो जाते है।

85. (c) Thirty two thousand crowned kings obey the orders of Chakravarti and consider him as king emperor He has 64,000 queens who deeply love him His body produces red glow He is as white as the central part of lotus, champa flowers, garland of Korant flowers and line drawn of gold on the testing stone All the limbs of a Chakravarti are extremely beautiful and properly developed His body is dressed in soft precious clothes made of special material as soft as the deer-skin of various colours, or with dress made of deer skin or Chinese silk On his waist there is a special waist-bend

His forehead is painted with powder of fragrant substances and flowers He is wearing beautiful garland prepared by experts, bangles, armlets and other five ornaments He wears ekavali garland He wears long hanging dhoti (on his legs) and piece of cloth (dupatta) on his shoulders His fingers look yellow due to the rings He looks grand in his beautiful dress

He shines like the sun due to the aura of his grandeur His voice is sweat, sobre and affectionate like the sound of rain-bearing cloud in winter Fourteen jewels including Chakra jewel appear in his treasure He is the master of nine nidhis (special treasures) His treasury is extremely rich The limit of his kingdom is upto the sea in three directions and upto Himavaan mountain in the fourth direction He has four types of armies namely of elephants, horses, chariot and of soldiers on foot They meticulously follow his orders He is the master of horses, elephants, chariots and men His family is very large. He is famous far and wide He is famous all around the world. His face is like the full moon in winter He is courageous His influence is in all the three worlds He is greeted everywhere He rules all the six divisions of Bharat area He has conquered all the enemies He is like a lion among the great rulers He obtains all this prosperity due to the austerities done in his previous life-span and the good karmas collected by him He is Indra among men. He rules in the north upto Himavan mountain and in the remaining three directions upto Lavan Sea (Salty Ocean)—the area of Bharat Continent He enjoys lustful pleasures with his wives–the

beautiful ladies born in different districts He enjoys with them various sensual pleasures of pleasant voice, touch, taste, sight and smell Such Chakravarti–the master of great wealth and prosperity also dies without satisfying his lusty wants.

विवेचन शास्त्रकार ने इस पाठ मे प्रदर्शित किया है कि कामभोगो से जीव की कदापि तृप्ति होना सम्भव नही है। कामभोगो की लालसा अग्नि के समान है। जैसे आग मे घी डालने से आग अधिक प्रज्ज्वलित होती है–शान्त नही होती, उसी प्रकार कामभोग से कामवासना कदापि शान्त नही हो सकती।

कामभोग ईंधन के तुल्य भोगतृष्णा की अभिवृद्धि के साधन है और उनके भोगने से तृप्ति होना सम्भव नही है, इसी तथ्य को अत्यन्त सुन्दर रूप से समझाने के लिए शास्त्रकार ने चक्रवर्ती के विपुल वैभव का विशद वर्णन किया है। क्योकि इस पृथ्वी पर चक्रवर्ती के समान अन्य किसी का भौतिक ऐश्वर्य नही होता। वह अनुपम कामभोगो का उपभोग करता है। उसके भोगोपभोगो की तुलना मे शेष मानवो के उत्तमोत्तम कामभोग निकृष्ट है, किसी गणना मे नही है। षट्खण्ड भारतवर्ष की सर्वश्रेष्ठ चौसठ हजार स्त्रियाँ उसकी पत्नियाँ होती है। वे सभी उसे हृदय से प्रेम करती है। उनके साथ अनेक शताब्दियो तक निश्चिन्त होकर भोग भोगने पर भी उसकी वासना तृप्त नही होती और अन्तिम क्षण तक–मरण सन्निकट आने तक भी वह अतृप्त–असन्तुष्ट ही रहता है और अतृप्ति के साथ ही अपनी जीवन–लीला समाप्त करता है। कई चक्रवर्ती इन भोगो को छोडकर दीक्षा ग्रहण कर लेते है। पर जो भोगो को नही छोडते वे अतृप्ति मे मरकर नरकगामी होते है। जो भोग को नही छोडते उसकी अपेक्षा से यह कथन समझना चाहिए।

जब चक्रवर्ती जैसे ससारी जीव की विपुलतम भोगो से भी तृप्ति न हुई तो सामान्य जनो को भोगोपभोगो से किस प्रकार तृप्ति हो सकती है ! इसी तथ्य को प्रकाशित करना प्रस्तुत सूत्र का एकमात्र लक्ष्य है।

चक्रवर्ती सम्पूर्ण भरतखण्ड के एकच्छत्र साम्राज्य का स्वामी होता है। चक्रवर्ती के विपुल वैभव व चौदह रत्न, नौ निधियो का विस्तृत वर्णन जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति, वक्षस्कार ३ मे किया गया है, वहाँ देखना चाहिए।

Elaboration—In the above-mentioned aphorism, the writer has discussed that a living being never feels satisfied with worldly enjoyments The greed for worldly enjoyment is like a fire Just as the fire brightens when ghee is added to it and does not cool down, similarly lust for worldly enjoyments is never subdued

The worldly enjoyments are like the fuel that increases the lustful desires It is never possible to get satisfaction by enjoying such pleasures In order to bring around this fact the writer has given a detailed account of the prosperity of a Chakravarti Nobody on the earth has prosperity greater than that of a Chakravarti He enjoys unique worldly pleasures Even grandest enjoyments of other human being feel shy before his enjoyments They are insignificant in comparison to the enjoyments of a Chakravarti Most beautiful 64,000 ladies of Bharat area are his queens All the wives love him from the core of their heart His lust does not feel satisfied even after enjoying them for several

centuries He remains unsatisfied even upto his dying moments He completes his life in a state of dissatisfaction

A Chakravarti remains unsatisfied although he has great prosperity How then can a common man get satisfaction in worldly enjoyments The purpose of this aphorism is to highlight this fact.

Chakravarti is the master of the entire Bharat area The detailed description of his wealth is available in Vakshaskar 3 of Jambudveep Prajnapti The reader should study it from there

बलदेव और वासुदेव के भोग **ENJOYMENTS OF BALDEV AND VASUDEV**

चक्रवर्ती के अपार ऐश्वर्य व कामभोगो का वर्णन करने के पश्चात् अब शास्त्रकार वासुदेव व बलदेव के वैभव व कामसुखो का वर्णन करते है।

After giving a detailed account of wealth and prosperity of a Chakravarti, the writer describes the wealth and prosperity of Vasudev and Baldev

८६. भुज्जो भुज्जो बलदेव–वासुदेवा य पवरपुरिसा महाबलपरक्कमा महाधणुवियट्टगा महासत्तसागरा दुद्धरा धणुद्धरा णरवसहा।

रामकेसवा भायरो सपरिसा वसुदेवसमुद्दविजयमाइयदसाराणं पज्जुण्ण–पईव–संब–अणिरुद्ध–णिसह–उम्मुय–सारण–गय–सुमुह–दुम्मुहाईण जायवाणं अद्धुट्ठाण वि कुमारकोडीणं हिययदइया देवीए रोहिणीए देवीए देवकीए य आणद–हिययभावणंदणकरा सोलसरायवर–सहस्साणुजायमग्गा सोलसदेवीसहस्सवरणयणहिययदइया।

णाणामणि–कणगरयणमोत्तियपवालधण–धण्णसंचयरिद्धिसमिद्धकोसा हयगयरहसहस्ससामी गामा–गर–णगर–खेड–कब्बड–मडंब–दोणमुह–पट्टणासम–संबाह–सहस्सा‍॓..मेय–णिव्वुयपमुइयजण–विविहसास–णिप्फज्जमाणमेइणिसरसरिय–तलाग–सेलकाणण–आरामुज्जाणमणाभिरामपरिमंडियस्स दाहिणड्ढवेयड्ढगिरिविभत्तस्स लवण–जलहि–परिगयस्स छव्विहकालगुणकामजुत्तस्स अद्धभरहस्स सामिगा।

धीरकित्तिपुरिसा ओहबला अइबला अणिहया अपराजियसत्तु–मद्दणरिपुसहस्समाणमहणा। साणुक्कोसा अमच्छरी अचवला अचंडा मियमंजुलपलावा हसिय–गंभीर–महुर–भणिया अब्भुवगय–वच्छला सरण्णा लक्खण–वंजण–गुणोववेया माणुम्माणपमाणपडिपुण्णसुजायसव्वंगसुंदरंगा ससिसोमागारकंतपियदंसणा अमरिसणा।

पयंडडंडप्पयारगभीरदरिसणिज्जा तालद्धउव्विद्धगरुलकेऊ बलवगगज्जंत दरियदप्पियमुट्ठियचाणूरमूरगा रिट्ठवसहघाइणो केसरिमुहविप्फाडगा दरियणागदप्पमहणा जमलज्जुणभंजगा महासउणि–पूयणारिवू कंसमउडमोडगा जरासंधमाणमहणा।

तेहि य अविरलसमसहियचंदमंडलसमप्पभेहिं सुरमिरीयिकवयं विणिम्मुयंतेहिं सपडिदंडेहिं, आयवत्तेहिं धरिज्जंतेहिं विरायंता।

ताहि य पवरगिरिकुहरविहरणसमुद्धियाहिं णिरुवहयचमरपच्छिमसरीरसंजायाहिं अमइलसेयकमलविमुकुलज्जलिय-रययगिरिसिहर-विमलससिकिरण-सरिसकलहोयणिम्मलाहिं पवणाहयचवलचलियसललिय-पणच्चियवीइपसरियखीरोदग-पवरसागरुप्पूरचंचलाहिं माणस-सरपसरपरिचियावासविसदवेसाहिं कणगगिरिसिहरसंसिताहिं उवायप्पायचवलजयिणसिग्घवेगाहिं हंस-वधूयाहिं चेव कलिया णाणामणिकणगमहरिहत-वणिज्जुज्जलविचित्तडडाहिं सललियाहिं णरवइसिरि-समुदयप्पगासणकरिहिं वरपट्टणुग्गयाहिं समिद्धरायकुलसेवियाहिं कालागुरुपवरकुंदरुक्कतुरुक्कधूववसवा-सविसदगंधुद्धुयाभिरामाहिं चिल्लिगाहिं उभओपासं वि चामराहिं उक्खिप्पमाणाहिं सुहसीययवायवीइयंगा।

अजिया अजियरहा हलमूसलकणगपाणी संचचक्कगयसत्तिणंदगधरा पवरुज्जलसुकयविमलकोथूभतिरीडधारी कुडलउज्जोवियाणणा पुंडरीयणयणा एगावलीकंठरइयवच्छा सिरिवच्छसुलंछणा वरजसा सव्वोउय-सुरभिकुसुमसुरइयपलंबसोहंतवियसंतचित्तवणमालरइयवच्छा अट्ठसयविभत्तलक्खणपसत्थसुंदरविराइयंगमंगा।

मत्तगयवरिंदललियविक्कमविलसियगई कडिसुत्तगणीलपीयकोसिज्जवाससा पवरदित्ततेया सारयणवत्थणियमहुरगंभीरणिद्धघोसा णरसीहा सीहविक्कमगई अत्थमियपवररायसीहा सोमा बारवइपुण्णचंदा।

पुव्वकयतवप्पभावा णिविट्ठसंचियसुहा अणेगवाससयमाउवंता भज्जाहि य जणवयप्पहाणाहिं लालियंता अउल-सद्दफरिसरसरूवगंधे अणुहवित्ता ते वि उवणमंति मरणधम्मं अवितत्ता कामाण।

८६. बलदेव और वासुदेव भी पुन -पुन कामभोगो के सेवन से तृप्त न होकर मौत के मुँह मे चले गये तो साधारण मनुष्य का तो कहना ही क्या? वे मनुष्यो मे श्रेष्ठ पुरुष थे, वे महाबली और महापराक्रमी थे। सारग आदि बडे-बडे धनुषो को चढाने वाले, महान् साहस के समुद्र, शत्रुओ से अजेय एव धनुर्धारियो मे प्रधान थे।

वे लिए हुए कार्यभार का निर्वाह करने मे धोरी बैल के समान नरवृषभ थे। (इस अवसर्पिणी मे) बलराम (नौवाँ बलभद्र) और केशव-वासुदेव (नौवाँ नारायण) दोनो भाई थे। उनका परिवार बडा विशाल था। उन्ही मे वसुदेव और समुद्रविजयजी आदि दश दशार्ह-पूज्य पुरुष हुए है तथा प्रद्युम्न, प्रतिव, शब, अनिरुद्ध, निषध, औल्मुक, सारण, गज, सुमुख और दुर्मुख आदि यादवो की सन्तानो के रूप मे साढे तीन करोड कुमार हुए है। रानी रोहिणी के पुत्र बलराम थे और महारानी देवकी के पुत्र थे-श्रीकृष्ण वासुदेव। वे रोहिणीदेवी और देवकीदेवी के हृदय मे उत्पन्न हुए आह्लाद की वृद्धि करने वाले थे। सोलह हजार मुकुटबद्ध राजा उनके मार्ग का अनुसरण करने वाले (उनकी आज्ञा मे चलने वाले) थे और सोलह हजार सुन्दर युवतियो के वे हृदयवल्लभ थे।

नाना प्रकार की मणियो, सोने, रत्न, मोती, मूँगो तथा धन-धान्यो के सचयरूप लक्ष्मी से जिनके खजाने भरे रहते थे। वे हजारो घोडो, हाथियो और रथो के स्वामी थे। वे हजारो सुन्दर गाँवो, नगरो, खानो, खेडो, कस्बो, मडबो, द्रोणमुखो, बन्दरगाहो, पत्तनो-मण्डियो, आश्रमो, सुरक्षित किलो (सवाहो) से युक्त अर्द्ध-भरत क्षेत्र के स्वामी थे, जिनमे लोग स्वस्थ, स्थिर, शान्त और प्रमुदित रहते थे, जहाँ विविध प्रकार के धान्य पैदा करने वाली उपजाऊ भूमि थी। वह बडे-बडे सरोवरो, नदियों, छोटे-छोटे

तालाबो, पर्वतो, वनो, स्त्री-पुरुषो के क्रीडा करने के योग्य लतागृहो से युक्त बगीचो, फुलवाडियो और उद्यानो से सुशोभित थे। दक्षिण की ओर का अर्द्ध-भरत वैताढ्य पर्वत से विभक्त एव लवणसमुद्र से घिरा हुआ तथा छह ऋतुओ के कार्यों से क्रमश· प्राप्त होने वाले अत्यन्त सुख से युक्त थे।

वे धैर्यवान और कीर्तिमान पुरुष थे। उनमे प्रवाहरूप से निरन्तर बल पाया जाता था। वे अत्यन्त बलवान थे। दूसरो के बलो से वे कभी मात नही खाते थे। वे अपराजित माने जाने वाले शत्रुओ का भी मानमर्दन करने वाले और हजारो शत्रुओ का अभिमान चूर-चूर करने वाले थे। उनका स्वभाव दयालु, मात्सर्यरहित यानी परगुणग्राही, चचलता से रहित था। वे अकारण क्रोध न करने वाले, परिमित और मृदुभाषी तथा मुस्कान के साथ गम्भीर और मधुर वचन बोलने वाले थे। वे पास आये हुए व्यक्ति के प्रति वत्सल थे तथा शरणागत को शरण देने वाले थे। सामुद्रिक शास्त्र मे बताये हुए शरीर के उत्तमोत्तम लक्षणो (चिह्नो) और तिल, मस्से आदि व्यजनो से युक्त थे। उनके शरीर के समस्त अग और उपाग मान एव उन्मान प्रमाण से परिपूर्ण थे। उनकी मुखाकृति चन्द्रमा के समान सौम्य थी, वे देखने वालो को मनोरम और सुहावने लगते थे। वे अपराध को नही सह सकते थे अथवा कर्त्तव्य-पालन मे आलस्य नही करते थे।

वे अपनी प्रचण्ड या प्रकाण्ड दण्डशक्ति का प्रसार-प्रचार करने मे बडे गम्भीर दिखाई देते थे। बलदेव की ध्वजा पर ताड वृक्ष का चिह्न तथा कृष्ण की ऊँची फहराती हुई ध्वजा पर गरुड का चिह्न अकित था। उन्होने घमण्ड से गर्जते हुए अत्यन्त बलशाली मौष्टिक और चाणूर नामक मल्लों का दर्प चूर कर दिया था। रिष्ट नामक दुष्ट बैल का भी दमन कर दिया था। वे सिह के मुँह मे हाथ डालकर उसे चीर डालने मे समर्थ थे। उन्होने गर्वोद्धत भयकर कालीयनाग के अभिमान को नष्ट कर दिया था और विक्रिया से वृक्षरूपधारी यमलार्जुन को खण्डित कर दिया था। वे कस पक्ष की महाशकुनी और पूतना नाम की दो विद्याधरियो के शत्रु थे। उन्होने कस का मुकुट मोडा था, यानी मुकुट पकडकर उसको नीचे पटका और मारा था। उन्होने जरासन्ध के मान का मर्दन कर दिया था।

वे ऐसे छत्रो से सुशोभित रहते थे, जो सघन, समान तथा ऊँची की गई सलाइयो, ताडियो से बनाये गये थे और चन्द्रमण्डल के समान प्रभा वाले थे। वे सूर्य किरण के प्रभामण्डल की तरह अपने चारो ओर तेज को बिखेरते थे। विशाल होने के कारण उनमे अनेक दण्ड लगे हुए थे।

इसी तरह अत्यन्त श्रेष्ठ पहाडो की गुफाओ मे घूमने वाली नीरोगी चमरी गायो की पूँछ के निर्मल श्वेतकमल, उज्ज्वल रजतगिरि के शिखर एव निर्मल चन्द्रमा की किरणो के समान शुभ्र, चाँदी के समान स्वच्छ तथा हवाओ से चचल हिलते और लीलापूर्वक नाचते हुए एव थिरकती हुई लहरो वाले क्षीरसमुद्र के जलप्रवाह के समान चचल, मान-सरोवर के विस्तार मे परिचित आवास वाली और श्वेत रूप वाली, स्वर्णगिरि पर बैठी हुई तथा ऊपर-नीचे गमन करने मे दूसरी चचल वस्तुओं को मात करने जैसे शीघ्र वेग वाली हसनियो के समान श्वेत चँवरो से वे युक्त थे। उन चँवरो के डण्डे (मुठे) नाना प्रकार की चन्द्रकान्त आदि मणियो से जटित होते है, कई लाल रग के तपे हुए, महामूल्यवान् सोने के बने हुए तथा कई पीले सोने के होते है। वे (चँवर) सौन्दर्य से परिपूर्ण और राजलक्ष्मी के अभ्युदय को प्रगट करने वाले हैं, वे कुशल कारीगरो द्वारा बनाये जाते है। समृद्धिशाली राजवशो मे उन (चँवरो) का उपयोग किया जाता है। काला अगर, उत्तम चीड की लकडी और तुरुक्क नामक सुगन्धित द्रव्य की धूप

देने के कारण उठी हुई सुलाव से उन चँवरो मे स्पष्ट और मनोहर सुगन्ध प्रगट होती है। इस प्रकार के चँवर उनके दोनो पार्श्वों मे डुलाए जाने से उनकी सुखद व शीतल हवा उनके अग-अग को स्पर्श करती है।

वे (वासुदेव-बलदेव) अजेय होते है। उनके रथ भी अपराजित होते है। बलराम हाथो मे हल, मूसल और बाण धारण करते है। वासुदेव पाँच जन्य शख, सुदर्शन चक्र, कौमुदी गदा शक्ति (त्रिशूल) और नन्द नामक तलवार धारण करते है। वे अत्यन्त उज्ज्वल और भलीभाँति बनाये हुए सुन्दर कौस्तुभमणि और मुकुट को धारण करते है। कुण्डलो से उनका मुख प्रकाशित रहता है। उनके नेत्र श्वेतकमल के समान विकसित होते है। उनके कण्ठ और वक्षस्थल पर श्रीवत्स नामक उत्तम चिह्न होता है। वे महायशस्वी होते है। सभी ऋतुओ के सुगन्धित पुष्पो से रचित लम्बी देदीप्यमान एव विकसित अनूठी वनमाला उनके वक्षस्थल पर सुशोभित होती है। मागलिक और सुन्दर विभिन्न १०८ लक्षणो से उनके अगोपाग शोभा पाते है।

मतवाले श्रेष्ठ हाथियो की तरह उनकी गति-चाल बडी ही सुन्दर और विलसित होती है। उनकी कमर मे कटिसूत्र (करधनी) होता है और वे नीले तथा पीले रेशमी वस्त्र पहनते है। वे प्रखर तेज से देदीप्यमान होते है। उनकी वाणी का घोष शरद् काल के नये मेघ की गर्जना के समान गम्भीर, मधुर और स्निग्ध होता है। वे मनुष्यो मे सिह के समान पराक्रमी होते है। उनकी सिह के समान पराक्रम व गति होती है, सिह के समान बडे-बडे पराक्रमी राजाओ के जीवन को उन्होने अस्त कर दिया है। वे सौम्य होते है। द्वारावती-द्वारिका नगरी के निवासियो के लिए वे पूर्ण चन्द्रमा के समान होते है।

उनमे पूर्वजन्म में किये हुए तप का प्रभाव होता है। वे पूर्वकालकृत पुण्यो के उदय से सचित इन्द्रिय-सुख वाले होते है। वे कई सौ वर्ष की आयु वाले होते है। वे प्रधान देशो की श्रेष्ठ पत्नियो के साथ भोग करते है और एक से एक बढकर इन्द्रियजन्य स्पर्श, रस, रूप और गन्ध-स्वरूप विषयो का उपभोग करते है। परन्तु अन्त मे, वे भी उन कामभोगो से तृप्त न होकर एक दिन मृत्यु की गोद मे चले जाते है।

विवेचन—पूर्व सूत्रपाठ मे चक्रवर्तियो के वैभव, सुख के साधन और अन्त मे कामभोगो से अतृप्त रहते हुए ही उनकी मृत्यु आदि का वर्णन किया है। अब इस सूत्र मे बलदेवो और वासुदेवो की ऋद्धि, समृद्धि और भोगविलासो का वर्णन करते हुए बताया है कि वे भी इन कामभोगो से अतृप्त होकर ही इस ससार से एक दिन विदा हो जाते है। कामभोगो से आज तक किसी को तृप्ति नही हुई।

चक्रवर्ती की तरह बलभद्र और नारायण भी प्रत्येक उत्सर्पिणी और प्रत्येक अवसर्पिणी काल मे होते है। चक्रवर्ती की अपेक्षा नारायण अर्थात् वासुदेव की ऋद्धि, शरीरसम्पत्ति, बल-वाहन, विभूति, आदि आधी होती है। बलभद्र उनके ज्येष्ठ भ्राता होते है।

प्रस्तुत सूत्र का मूल आशय सभी कालो मे होने वाले सभी बलभद्रो और नारायणो के भोगो एव व्यक्तित्व का वर्णन करके यह प्रदर्शित करना है कि ससारी जीव उत्कृष्ट से उत्कृष्ट भोग भोगने पर भी, अन्त तक तृप्ति नही पाता है। जीवन की अन्तिम वेला तक भी वह अतृप्त रह कर मरण को प्राप्त हो जाता है।

इस प्रकार सामान्य रूप से सभी बलभद्रो और नारायणो से सबध रखने वाले प्रस्तुत वर्णन मे वर्तमान अवसर्पिणी काल मे हुए नवम बलभद्र (बलराम) और नवम नारायण (श्री कृष्ण) का उल्लेख किया गया है। ऐसा क्यो ? इस प्रश्न का समाधान करते हुए टीकाकार श्री अभयदेवसूरि ने लिखा है कि – यद्यपि इस अवसर्पिणी काल मे नौ बलभद्र और नौ नारायण हुए है किन्तु उनमे बलराम और श्रीकृष्ण लोक मे अत्यन्त विख्यात है। उनकी इस ख्याति के कारण ही उनके नामो आदि का विशेष रूप से उल्लेख किया गया है।

तीर्थंकरो के पश्चात् दूसरा स्थान चक्रवर्तियो का है। ये बारह होते है। इनकी विभूति आदि का विस्तृत वर्णन पूर्व सूत्र मे किया गया है। बलदेव–वासुदेव के समकालीन प्रति वासुदेव भी नौ होते है, जो वासुदेव के द्वारा मारे जाते है। बलराम और श्रीकृष्ण नामक जो अन्तिम बलभद्र और नारायण हुए है, उनसे सम्बद्ध वर्णन का स्पष्टीकरण इस प्रकार है–

ये दोनो प्रशस्त पुरुष यादवकुल के भूषण थे। इस कुल मे दश दशार थे, जिनके नाम है– (1) समुद्रविजय (2) अक्षोभ्य (3) स्तिमित (4) सागर (5) हिमवान् (6) अचल (7) धरण (8) पूरण (9) अभिचन्द्र और (10) वसुदेव।

इस परिवार मे ५६ करोड यादव थे। उनमे साढे तीन करोड प्रद्युम्न आदि कुमार थे। बलराम की माता का नाम रोहिणी और श्रीकृष्ण की माता का नाम देवकी था। इनके शस्त्रो तथा वस्त्रो के वर्ण आदि का वर्णन मूल पाठ मे ही प्राय आ चुका है।

मुष्टिक नामक मल्ल का हनन बलदेव ने और चाणूर मल्ल का वध श्रीकृष्ण ने किया था। रिष्ट नामक साड को मारना, कालिय नाग को नाथना, यमलार्जुन का हनन करना, महाशकुनी एव पूतना नामक विद्याधरियो का अन्त करना, कस–वध और जरासन्ध के मान का मर्दन करना आदि घटनाओ का उल्लेख बलराम–श्रीकृष्ण से सम्बन्धित है, इसका तात्पर्य इतना ही है कि ऐसो ऐसो के दमन करने का सामर्थ्य बलदेवो और वासुदेवो मे होता है। ऐसे असाधारण बल, प्रताप और पराक्रम के स्वामी भी भोगोपभोगो से तृप्त नही हो पाते है।

86. When even Baldevs and Vasudevs, by engaging in sensual engagements again and again died in a state of discontentment, what to say of the common people They were the most important among men They were very powerful and courageous They could lift very heavy bows like Sarang They were as courageous as the sea They were invincible by enemies They were prominent amongst archers

They were the best amongst men in task performance like a healthy bull is in carrying the load In this span of descending (Avasarpini) period Balaram the ninth Baldev and Krishna, the ninth Vasudev were both brothers. They had a very large family Among them Vasudev and Samudra Vijay were two of the ten respectable Dasharhas. Pradyumn, Prativ, Shamb, Aulapukam, Saaran, Gaj, Sumukh and Dumukh were among the 35 million Yadava youth as the members of their family

Rohani was the mother of Balaram and Devaki was the mother of Krishna Vasudev They used to enhance happiness in the heart of their respective mothers Sixteen Thousand kings were their followers (obeying their orders) They were the beloved husbands of 16,000 young beauties each

Their treasuries were full of many types of precious stones, jewels, gold, pearls, corals, money and suchlike wealth They were the masters of thousands of horses, elephants and chariots They owned thousands of beautiful villages, towns, mines, colonies, madambs, harbours, poets, markets, ashrams and forts They were the master of half the Bharat area wherein people were living peacefully, happily and in stable and healthy state Its lands was fertile capable to producing grains in large quantity It looked beautiful due to large lakes, rivers, ponds, hills, forests, enclosures having creepers used by men and women for amorous activities, gardens, flower beds and orchards The Bharat area in the south of Vaitadhya mountain which was dividing Bharat into two parts was surrounded by Lavan Ocean and six seasons were consecutively providing a great pleasant atmosphere

They were courageous and famous persons There was continuous flow of energy in them They were never inferior to others in strength They could conquer even the invincible enemies They could defeat thousands of enemies They were compassionate and free from jealousy They used to imbibe good qualities of others and were free from childish behaviour They were never angry without specific purpose They always used to speak sweat and to the point with a smile They uttered sobre and pleasant words They were affectionate towards persons coming to them They provided protection to every one who came to them for help They had the meritorious signs such as moles and til as mentioned in the texts All the limbs and sub-parts of their body were well proportioned and fully developed There face was serene like the moon They were attractive to look at They could not tolerate criminal activity They were never slack in performing their duty

They appeared very serious in expressing their tremendous power of punishing crimes There was a symbol of palm tree on the flag of Baldev and that of eagle on the flag of Vasudev fluttering high They had

shattered the ego of powerful wrestlers named Maushtik and Chamar. They had controlled the cruel bull Risht also They were capable of tearing a lion with their hands They had destroyed the pride of dreadful Kaliya serpent They had destroyed Yamalarjun who had transformed into a tree with his fluid power. They were the enemies of Mahashakuni and Putana, the two Vidyadhar ladies belonging to the side of Kans. They had thrown down Kans by holding his crown and killed him They had subdued the ego of Jarasandh.

They were looking grand with such umbrellas which were thick, equal in size and were made of highly lifted reeds and ribs and were emitting glow like the moon They were spreading their aura all around like rays of the sun They were held on many rods as they were huge

The holy brooms were moving around them They were as white as the clean white lotus, like hair of the most unique healthy Chamari cows wandering in the caves of the hills, like the top of Rajat (silver) mountain or like the rays of spotless moon They were clean like silver They moved with the wind They were dancing and were waving like rising waves in Kshir Samudra (milky white sea) They were as white as fast moving female swans which were surpassing the other substances moving up and down, sitting on Swarnagiri mountain and having a white look and populerly dwelling in lake Mansarovar The handles of the brooms were studded with many types of Chandrakant precious stones Many of them were made of very precious purified gold Some were of red gold Those brooms were extremely beautiful They were indicating the arrival of Rajalakshami They are prepared by experts in the line Such brooms are used in prosperous royal families Clear beautiful smell was oozing out from the said brooms due to the incense of fragrant substances like black agar, best Cheer wood and Turukk Since the brooms were moving on both sides of them, its pleasant cool air was touching every part of their body

They (Vasudev and Baladev) and their chariots are invincible Balaram keeps in hand the plough, mace and arrow Vasudev keeps conch shell, Sudarshan Chakra (disc), trishul and Nand Sword They wear crowns and Kaustubh gem prepared neatly and carefully Their faces shine due to earrings Their eyes are bright like white lotus Their

neck and chest have the symbol of Shrivatsa They are very influential The unique garland prepared from fragrant flowers of all seasons decorates their chest Their body and limbs bear 800 beautiful different symbols that add to their beauty

Their gait was as beautiful as that of elephants of best breed They have waist-band at their waist They wear blue and black silken clothes They shine with their bright aura Their voice was sobre, sweat and soft, like the roaring sound of new cloud in winter They are brave like lion among human beings Their gait was also like that of lion They have defeated many powerful kings, like the lion They are excellent They are like full-moon for the natives of Dwarika

They have the effect of austerities of their previous life-span They enjoy the sensual pleasures as a result of meritorious deed of earlier period They have life-span of several hundred years They have amorous activities with their wives born in important areas They enjoy pleasures relating to sense of touch, taste, sight and smell But in the end they die in a state of non-satisfaction from worldly enjoyments

Elaboration—In the earlier aphorism, it was mentioned that Chakravartis have great prosperity and means of happiness but they remain not fully satisfied with those enjoyment and die in that condition In the present aphorism the prosperity, wealth and means of enjoyment of Baldevas and Vasudevas has been narrated and it is stated that at the time of death they are also in a state of non-satisfaction Until today nobody has become fully satisfied with sensual enjoyments

Each progressive and regressive cycle of time has Balbhadras and Narayans (titles for epoch making greatmen) besides Chakravartis The opulence, physical powers, strength, vehicles, glory and other qualities of a Narayan or Vasudev are half that of chakravarti A balabhadra is the elder brother of a Vasudev

In the aforesaid aphorism the description of Balbhadras and Narayans of every period has been included The details of their personalities and indulgences clearly convey that in spite of enjoying best of material pleasures a mundane being never feels contented Till the last moment of his life he remains discontented and dies That is the purpose of this narrative

This general description about all Balabhadras and Narayans also finds mention of the ninth Balabhadra (Balaram) and the ninth Narayan (Shri Krishna) of the current regressive cycle Why so? Answering this question, the commentator, Abhaya Dev Suri mentions— Although this regressive cycle saw nine Balabhadras and nine Nayaranas, Balaram and Shri Krishna were most famous among them That is the reason their stories feature more frequently

Tirthankars are followed by chakravarties in status They are twelve in number Their glory has been detailed in preceding aphorism Contemporary to Baladev-Vasudev are nine Prati-Vasudevs; they are eliminated by Vasudevs Some salient features about Balaram and Shri Krishna, the last Balabhadra and Narayan of this cycle are as follows—

These two great men belonged to the Yadav class This class had ten Dashars—(1) Samudra Vijaya, (2) Akshobhya, (3) Stimit, (4) Sagar, (5) Himavan, (6) Achala, (7) Dharan, (8) Puran, (9) Abhichandra and (10) Vasudev

This class had 560 million Yadavas Out of them 35 million were princes including Pradyumna Kumar Balaram's mother was Rohini and Shri Krishna's mother was Devaki The descriptions of their weapons and dresses has already appeared in the original text

Wrestlers Mushtik and Chanur were killed by Baladev and Shri Krishna respectively The incidents such as killing of Rishta bull, piercing the nose of Kalia, the great serpent, killing of Yamalarjun, killing of witches named Mahashakuni and Putana, killing of Kansa and Jarasandh are related to the life of Balaram and Shri Krishna. This is for the purpose of highlighting the powers of Baladevs and Vasudevs and conveying that even such uniquely endowed persous too are never contented with indulgence in mundane pleasures

अब आगे शास्त्रकार ने माण्डलिक राजाओ के ऐश्वर्य वैभव और कामभोगों का वर्णन किया है।

Now the author narrates the wealth, grandeur and enjoyments of Mandalik Rajas (regional kings)

८७. भुज्जो मंडलिय–णरवरिंदा सबला सअंतेउरा सपरिसा सपुरोहियामच्च–दंडणायग–सेणावइ–मंतणीइ–कुसला णाणामणिरयणविपुल–धणधण्णसंचयणिही–समिद्धकोसा रज्जसिरिं विउलमणुहवित्ता विक्कोसंता बलेण मत्ता ते वि उवणमंति मरणधम्मं अवितत्ता कामाणं।

८७. इसी तरह माण्डलिक राजा (विशाल राज्य का स्वामी) भी होते है। वे भी अत्यन्त बलवान अथवा सैन्य बल–सम्पन्न होते है। उनका अन्त पुर विशाल होता है। वे परिवार या परिषदा से युक्त होते है। शान्तिकर्म करने वाले पुरोहितो से, मत्रियो से, दडाधिकारियो–दडनायको से, सेनापतियो से जो गुप्त मत्रणा करने मे कुशल एव नीति निपुण होते है। अनेक प्रकार की मणियो, रत्नो, विपुल धन और धान्य आदि से उनके भण्डार समृद्ध होते है। वे अपनी विपुल राज्य–लक्ष्मी का भोगोपभोग करके, अपने शत्रुओ को जीतकर अक्षय भण्डार के स्वामी होकर (अपने) अपनी शक्ति के दर्प मे चूर रहते है। ऐसे माण्डलिक राजा भी कामभोगो से तृप्त नही हुए। वे भी अतृप्त रहकर ही मृत्यु को प्राप्त हो गये।

87. Mandalık kings are also rulers of vast kingdoms They are also extremely healthy and have great mılıtary strength They have a famıly and cabınet. Theır advısors consıst of prıests who perform actıvıtıes for theır peace, mınısters, polıce chıef and army general wıth whom they dıscuss secret plans as they are expert ın admınıstratıon Theır treasure ıs full of many types of precıous stones, jewels, money and other artıcles They are proud of theır power ın vıew of theır vast kıngdom They enjoy the pleasures of the great treasure accumulated by defeatıng the enemıes Such Mandalık rules are also not satısfied wıth the means of theır sensual enjoyments They also dıed ın a state of dıs-satısfactıon

अकर्मभूमिज मनुष्यो के भोग ENJOYMENTS OF MEN OF LANDS OF NON-ACTION

अब शास्त्रकार ने यहा उत्तरकुरु–देवकुरु क्षेत्र के भोग सम्पन्न मनुष्यो के वैभव और कामभोग साधनो की चर्चा की है और उनकी भी अतृप्ति का प्रतिपादन किया है –

Now the author dıscusses the wealth and enjoyments of humans of lands of non-actıon lıke Uttar-Kuru and Dev-Kuru and conveys the ensuıng dıssatısfactıon

८८. भुज्जो उत्तरकुरु–देवकुरु–वणविवर–पायचारिणो णरगणा भोगुत्तमा भोगलक्खणधरा भोगसस्सिरीया पसत्थसोमपडिपुण्णरूवदरिसणिज्जा सुजायसव्वंगसुंदरंगा रत्तुप्पलपत्तकंतकरचरण–कोमलतला सुपइट्ठियकुम्मचारुचलणा अणुपुव्वसुसंहयगुलीया उण्णयतणुतंबणिद्धणक्खा संठियसुसिलिट्ठगूढगुंफा एणीकुरुविंदवत्तवट्टाणुपुव्विजंघा समुग्गणिसग्गगूढजाणू वरवारणमत्ततुल्लविक्कम–विलासियगई वरतुरग–सुजायगुज्झदेसा आइण्णहयव्वणिरुवलेवा।

पमुइयवरतुरगसीहअइरेगवट्टियकडी गंगावत्तदाहिणावत्ततरंगभंगुर–रविकिरण–बोहिय–विकोसायंतपम्हगंभीरवियडणाभी साहतसोणंदमुसल–दप्पणणिगरियवरकणगच्छरुसरिसवरवइरवलियमज्झा उज्जुगसमसहियजच्चतणुकसिणणिद्ध–आइज्जल–डहसूमालमउयरोमराई झसविहगसुजायपीणकुच्छी झसोयरा पम्हविगडणाभी संणयपासा संगयपासा सुंदरपासा सुजायपासा मियमाइयपीणरइयपासा अकरंडुयकणगरुयगणिम्मलसुजायणिरुवहयदेहधारी कणगसिलातलपसत्थसमतल–उवइयवित्थिण्ण–पिहुलवच्छा जुयसण्णिभपीणरइयपीवरपउट्ठसंठियसुसिलिट्ठविसिट्ठलट्ठसुणि–चियघणथिरसुबद्धसंधी पुरवर–फलिहवट्टियभुया।

भुयईसरविउलभोगआयाणफलिउच्छूढदीहबाहू रत्ततलोवतियमउयमंसलसुजाय–लक्खणपसत्थ–अच्छिद्दजालपाणी पीवरसुजायकोमलवरंगुली तंबतलिणसुइरुइलणिद्धणखा णिद्धपाणिलेहा चंदपाणिलेहा सूरपाणिलेहा संखपाणिलेहा चक्कपाणिलेहा दिसासोवत्थियपाणिलेहा रविससिसंखवरचक्कदिसासो–वत्थियविभत्तसुविरइयपाणिलेहा वरमहिस वराहसीहसद्दूलरिसहणागवरपडिपुण्णविउलखंधा चउरंगुल–सुप्पमाणकंबुवरसिरसग्गीवा अवट्ठियसुविभत्तचित्तमंसू उवचियमंसलपसत्थसद्दूलविउलहणुया ओयविय–सिलप्पवालबिंबफलसण्णिभाधरोट्ठा पंडुरससिसकलविमलसंखगोखीरफेणकुंददगर यमुणालियाधवलदंतसेढी अखडदता अप्फुडियदंता अविरलदंता सुणिद्धदंता सुजायदंता एगदंतसेढिव्व अणेगदंता।

हुयवहणिद्धंतधोयतत्ततवणिज्जरत्ततला तालुजीहा गरुलायतउज्जुतुंगणासा अवदालियपोंडरीयणयणा कोकासियधवलपत्तलच्छा आणामियचावरुइलकिण्हब्भराजि–संठियसंगयायसुजायभुमगा अल्लीणपमाण–जुत्तसवणा सुसवणा पीणमंसलकवोलदेसभासा अचिरुग्गयबालचंदसंठियमहाणिलाडा उडुवइरिवपडिपुण्णसोमवयणा छत्तागारुत्तमंगदेसा घणणिचियसुबद्धलक्खणुण्णयकूडागारणिभपिंडियग्गसिरा हुयवहणिद्धं तधोयतत्ततवणिज्जरत्तकेसंतकेसभूमी सामलीपोंडघणणिचियछोडियमिउविसतपसत्थसुहुम–लक्खणसुगंधिसुंदरभुयमोयगभिंगणीलकज्जलपहट्ठभमर–गणणिद्धणिगुरुंबणिचियकुंचियपयाहिणा–वत्तमुद्धसिरया सुजायसुविभत्तसंगयंगा।

लक्खणवजण–गुणोववेया, पसत्थबत्तीसलक्खणधरा, हसस्सरा, कुंचस्सरा, दुंदुभिस्सरा, सीहस्सरा, (उज्ज) ओघसरा, मेघसरा, सुस्सरा, सुस्सरनिग्घोसा, वज्जरिसहनारायसंघयणा, समचउरंससंठाणसंठिया, छायाउज्जोवियंगमंगा, पसत्थच्छवी, निरातका, कंकग्गहणी, कवोतपरिणामा, सउ (गु) णि पोसपिट्ठंतरोरुपरिणया, पउमुप्पल–सरिसगंधुस्साससुरभिवयणा अणुलोमवाउवेगा, अवदायनिद्धकाला, विग्गहियउन्नयकुच्छी, अमयरसफलाहारा, तिगाउयसमूसिया, तिपलिओवमट्ठितीका तिन्नि य पलिओवमाइं परमाउं पालयित्ता तेवि उवणमंति मरणधम्मं अवितित्ता कामाणं।

८८. उत्तरकुरु और देवकुरु क्षेत्र के यौगलिक मानवगण, जो वनखण्डो, गुफाओ आदि मे पाद विहार करते है, उत्तमोत्तम भोग–साधनो से सम्पन्न होते है, प्रशस्तता के सूचक स्वस्तिक आदि उत्तम लक्षणो के धारक होते है, भोग लक्ष्मी से शोभायुक्त होते है, उनका रूप बडा ही दर्शनीय एव मागलिक,

शान्त और सुन्दर होता है, उनके शरीर के सभी अगो की बनावट अच्छी होने से उनके सभी अग सुन्दर होते है, उनकी हथेलियाँ और पैरो के तलुए लाल कमल के पत्तो की तरह कोमल और सुन्दर होते है, उनके पैर कछुए के समान उन्नत-उभरे हुए होते है, उनकी उँगलियाँ अनुक्रम से छोटी-बडी और छिद्ररहित होती है। उनके नख उभरे हुए, पतले, रक्तवर्ण और चिकने होते है। उनके पैरो के गुल्फ-टखने सुस्थित, सुघटित और माँसल होने के कारण दिखाई नही देते। उनकी जाँघे हिरनी की जाँघो के समान तथा कुरुविद नामक तृणविशेष और सूत कातने की तकली के समान गोल और उत्तरोत्तर स्थूल होती है। उनके घुटने गोल डिब्बे और उसके ढक्कन के समान स्वाभाविक रूप से माँस से ढके हुए होते है, मतवाले उत्तम हाथी के समान उनका पराक्रम और मस्त सुन्दर गति-चाल होती है। उनका गुप्ताग-जननेन्द्रिय उत्तम जाति के घोडे के गुप्ताग के समान सुनिर्मित होता है और उत्तम जाति के घोडे के समान मलद्वार (गुदा भाग) मल से लिप्त नही होता।

उनका कटि भाग-कमर हृष्ट-पुष्ट घोडे और सिह की कमर से भी श्रेष्ठ गोलाकार होता है, उनकी नाभि गगा नदी के आवर्त-भँवर के समान, दक्षिणावर्त्त लहरो के समूह के समान चक्करदार, सूर्य की किरणो से विकसित व कोश से बाहर निकले हुए कमल के समान गम्भीर और विशाल होती है। उनके शरीर का मध्य भाग समेटी हुई तिपाई या सिकुडी हुई दतौन की लकडी, मूसल और शुद्ध किये हुए श्रेष्ठ तपे हुए सोने की बनी हुई मूठ के समान और उत्तम वज्र के समान पतला होता है। उनकी रोमराजि सीधी, एक सरीखी, परस्पर सटी हुई, स्वभावत बारीक, काली, चमकीली, सौभाग्यसूचक, मनोहर व अत्यन्त कोमल तथा रमणीय होती है। उनका पार्श्व भाग-बगले मछली और पक्षी की कुक्षि के समान पुष्ट और सुन्दर रचना वाला होता है। उनका उदर भाग मछली के समान होता है। उनकी नाभि कमल के समान गम्भीर होती है। उनके पार्श्व प्रदेश नीचे की ओर झुके हुए होते है, इसलिए सुन्दर दिखाई देते है। यथायोग्य गुण वाले तथा परिमाण से युक्त, परिपुष्ट और रमणीय उनके पार्श्व होते है। उनकी पीठ और बगल की हड्डियाँ व पसलियाँ आदि माँसयुक्त होने से वे स्वर्ण के समान निर्मल, सुन्दर, पुष्ट और नीरोग होती है। उनका वक्ष स्थल सोने की शिला के तल के समान मागलिक, समतल, माँसल, पुष्ट, विशाल और नगर के फाटक समान चौडा होता है। उनकी कलाइयाँ (कुहनी से नीचे का भाग) गाडी के जूए के समान, यूप (खम्भे) के समान, माँस से पुष्ट, रमणीय और मोटी होती है, तथा उनके शरीर की सन्धियाँ-जोड सुन्दर आकृति वाली, अच्छी तरह गठी हुई मनोज्ञ, घनी, स्थिर, मोटी और अच्छी तरह बँधी हुई होती है। उनकी भुजाएँ महानगर के द्वार की भारी आगल के समान लम्बी और गोल होती है।

उन युगलियो के बाहु शेषनाग के शरीर के समान विस्तीर्ण और रम्य तथा अपने स्थान से बाहर निकाली हुई आगल के समान लम्बी होती है। उनके हाथ लाल-लाल हथेलियो से सुशोभित, माँस से पुष्ट, कोमल, सुन्दर बनावट वाले तथा स्वस्तिक आदि शुभ लक्षणो के कारण प्रशस्त एव सटी हुई उँगलियो वाले होते है। उनके हाथो की उँगलियाँ परिपुष्ट, सुरचित, कोमल और श्रेष्ठ होती है। उनके नख ताम्रवर्ण की लालिमा लिए हुए बारीक (पतले), स्वच्छ, सुन्दर और चमकीले होते है। उनके हाथ की

रेखाएँ चिकनी होती है तथा चन्द्र, सूर्य, शख, चक्र और दक्षिणावर्त स्वस्तिक के आकार से अकित होती है। यानी सूर्य, चन्द्रमा, शख, श्रेष्ठ चक्र, दिक्-स्वस्तिक आदि विभिन्न आकृतियो से युक्त उनकी हस्तरेखाएँ होती है। उनके कधे उत्तम जाति के बलवान महिष, सूअर, सिह, व्याघ्र, साड और गजेन्द्र के कधो के समान परिपूर्ण और पुष्ट होते है। उनकी गर्दन चार अगुल प्रमाण वाली एव शख जैसी सुन्दर होती है। उनकी दाढी-मूँछे सदा एक सरीखी अलग-अलग दिखाई देने वाली और शोभादायक होती है। उनकी ठुड्डी पुष्ट, माँसल, प्रशस्त, बाघ की ठुड्डी की तरह विस्तीर्ण-चौडी होती है। उनके नीचे के ओठ शुद्ध मूँगे तथा बिम्बफल के सदृश लाल होते है। उनके दाँतो की पक्ति चन्द्रमा के टुकडे, निर्मल शख, गाय के दूध, समुद्रफेन, कुन्दपुष्प, जलकण और कमलिनी के पत्ते पर पडे हुए जलबिन्दु या कमल की नाल की तरह श्वेत-धवल होती है। उनके दाँत अखण्डित होते है, बिना टूटे, सघन, चिकने और सुरचित एक-दूसरे से सटे हुए होते है। उनके बत्तीस दाँत एक ही दाँत की पक्ति के समान होते है।

उनके तलुए और जीभ का तलप्रदेश तपाये हुए निर्मल सोने के समान लाल-लाल होते है। उनकी नासिका गरुड की नाक के समान, लम्बी, सीधी और ऊँची उठी हुई होती है। उनके नेत्र खिले हुए श्वेत कमल के समान होते है तथा उनकी आँखे सदा प्रसन्न रहने के कारण विकसित धवल पपनी वाली होती है। उनकी भौहे किचित् नीचे झुके हुए धनुष के समान सुन्दर तथा जमे हुए काले-काले बादलो की रेखा के समान आकारयुक्त काली, समुचित लम्बी-चौडी और सुन्दर होती है। उनके कान परस्पर सटे हुए प्रमाणोपेत होते है, जिनसे वे खूब अच्छी तरह सुन सकते है। अथवा उनके कान अच्छी तरह सुनने की शक्ति वाले होते है। उनके गाल तथा आसपास का भाग पुष्ट और माँस से भरे होने से लाल-लाल प्रतीत होते है। कुछ ही समय पहले उदित हुए बाल-चन्द्रमा के आकार के समान उनका विशाल ललाट होता है। उनका मुख-मण्डल पूर्ण चन्द्रमा के समान ही सौम्य होता है। मस्तक छत्र के समान उभरा हुआ होता है। सिर का अग्र भाग लोहे के मुद्गर के समान सुदृढ नसो से आबद्ध, उत्तम लक्षणो-चिन्हो से सुशोभित, शिखरयुक्त भवन तथा गोलाकार पिण्ड के समान होता है। उनके मस्तक की त्वचा (चमडी) अग्नि से तपाये एव धोये हुए सोने-सी निर्मल, लाल तथा बीच मे केशो से युक्त होती है। उनके मस्तक के बाल सेमर वृक्ष के फल के समान अत्यन्त घने, घिसे हुए से-बारीक, कोमल, सुस्पष्ट, प्रशस्त-चिकने, उत्तम लक्षण से युक्त, सुवासित और सुन्दर होते है तथा भुजमोचकरत्न के समान काले, नीलमणि, काजल, गुनगुनाते हुए प्रसन्न भौरो के झुण्ड के समान काली कान्ति वाले, झुण्ड के झुण्ड इकट्ठे, टेढे-मेढे-घुँघराले एव दाहिनी ओर मुडे हुए होते है। उनके शरीर के अवयव सुडौल, सुरचित व यथा प्रमाण होते है।

वे यौगलिक उत्तम लक्षणो, तिल आदि व्यजनो तथा गुणो से सम्पन्न होते है। वे प्रशस्त उत्तमोत्तम शुभ-बत्तीस लक्षणो के धारक होते है। उनका स्वर हस के समान, क्रौच पक्षी के समान, दुन्दुभि के वादक एव सिह की गर्जना के समान होता है। उनका स्वर ओघ अविच्छिन्न और अत्रुटित होता है। उनकी ध्वनि मेघ की गर्जना जैसी होती है, अतएव कानो को प्रिय लगती है। उनका स्वर-आवाज और

निर्घोष शब्दोच्चारण दोनो ही सुन्दर होते है। वे वज्रऋषभनाराचसहनन और समचतुरस्रसस्थान के धारक होते है। उनके अग-प्रत्यग कान्ति से देदीप्यमान रहते है। उनके शरीर की त्वचा उत्तम होती है। वे नीरोग होते है और कक नामक पक्षी के समान अल्प आहार ग्रहण करते है। उनकी आहार को पचाने की शक्ति कबूतर जैसी होती है। उनका मल-द्वार पक्षी के समान होता है, जिसके कारण मल-त्याग के पश्चात् वह मल-लिप्त नही होता। उनकी पीठ, पार्श्व भाग और जघाएँ सुन्दर, सुपरिमित होती है। उनका श्वास एव मुख पद्म-कमल और उत्पल-नील कमल की सुगन्ध के सदृश मनोहर गन्ध से सुगन्धित रहता है। उनके शरीर की वायु का वेग सदा अनुकूल रहता है। वे गौर-वर्ण, स्निग्ध तथा श्याम होते है (या उनके सिर पर चिकने और काले बाल होते है)। उनका उदर शरीर के अनुरूप उन्नत होता है। वे अमृत के समान रसीले फलो का आहार करते है। उनके शरीर की ऊँचाई तीन गाऊ तीन कोस की और आयु तीन पल्योपम की होती है। पूरी तीन पल्योपम की आयु को भोगकर वे अकर्मभूमि-भोगभूमि के मनुष्य (अन्त तक) कामभोगो से अतृप्त रहकर ही मृत्यु को प्राप्त होते है।

88. The twin (Yaugalik) human beings of Devkuru and Uttarkuru area move in the forests and caves They have the best means of worldly enjoyment They have good signs on their body, which indicate that they shall lead a comfortable life Their facial expression is highly attractive, quiet, beautiful and meritorious The structure of all the limbs of their body is good So they look very beautiful Their palms and the lower side of their feet are soft and beautiful like leaves of the red lotus Their feet are bulged like a tortoise Their fingers are in order and without any gap Their nails are raised, thin, soft and of red colour Their ankles are well developed properly proportioned and are not visible because they are fleshy Their thighs are round and proportional and fleshy like those of a doe, Kuruvind (a type of reed) and the spinning spindel (Takali) Their knees are like a round box with a cover and they are naturally covered with flesh Their strength is like that of an intoxicated elephant Their gait is charming Their genitals are like those of a horse of good breed and are well developed Their anus is free from foul matter like that of a horse of good breed

Their waist is better than even that of a healthy horse or of a lion It is round in shape Their navel is like a whirlpool in river Ganga It is circular like number of waves moving round collectively It is deep and wide like a lotus flower in full bloom due to falling rays of the sun The central part of their body is sleek like bundled tripod, shrunk wood, a mace (moosal) or a handle of pure gold or Vajra of best quality Their

body hair are in straight line, identical and closely knit together. They are very fine, black, shining and indicator of good fortune They are extremely soft, beautiful and attractive Their flanks are well developed and beautifully built like a fish or a bird. Their belly is like a fish. Their navel is sobre like lotus The sides are bent downwards. So they look beautiful. They are in proper proportion, well developed and charming. The bones and ribs of their back and sides are fleshy and they are clean, beautiful, properly developed and healthy like gold Their breast is level like a slab of gold It is meritorious, smooth, levelled, fleshy, developed, broad and wide like the gateway of a town Their wrists are like yoke of a cart or a pillar They are fleshy, attractive and thick The joints of their body are beautiful in shape and closely knit, thick, stable, beautiful and properly joined Their arms are long and round like the bolt of the gate of a city

The arms of the Yugaliks are thick like the body of the great serpent and beautiful They are long like the door-bolt protruding out Their hands look charming because of red palms They are fleshy, soft and beautiful in shape They have properly proportioned fingers and they have good signs like Swastik Their fingers are developed, soft, fine and properly built Their nails are thin, clean, beautiful, shining and have the redness of copper The lines on their hands are smooth They bear the shapes of moon, sun, conch shell, nice wheel, swastik and other different shapes Their shoulders are like the shoulders of healthy he-buffalo, pig, lion, tiger, bull and the master elephant of best class They are complete and well developed Their neck in length is equal to thickness of four fingers and it is as beautiful as conch-shell Their beard and moustaches are symmetrical, distinct and beautiful in appearance. Their chins are strong, covered with flesh, good and broad like the bones of tiger Their lower lips are as red as pure coral or Bimb fruit The row of their teeth is white like a piece of moon, spotless conch shell, cow's milk, foam of the sea, Kunda flower, water drop, the water drop on lotus leaf or the lotus tube Their teeth are complete, well-set, soft, well built and none is broken They are very close to each other Their thirty two teeth look like a single wide teeth

Their palate and tongue are as red as heated gold. Their nose is long like that of a Garud It is straight and raised upwards. Their eyes are

like blossoming white lotus Since they are always happy, their eyes have white developed lids Their eye-brows are beautiful like a bow bent downwards a bit Their shape is like a line of black frozen clouds. It is in proper proportion and beautiful Their ears are properly set and in proper size, so they can properly hear They have the proper faculty of hearing Their cheeks are developed, fleshy and appear to be red Their broad forehead is like recently risen small moon Their face is as bright as full moon Their forehead is a bit bulging like an umbrella The front part of their head is strong like iron dumble It is well knit with sinews It has good signs It looks like a mansion having a spire or a round ball The skin of their head is as clean and red as the gold cleaned in fire It has hair in the centre The hair on the head are very thick like the fruit of Semal tree They are fine, soft, distinct, shining and have good signs They produce fragrance and look beautiful They are as black as Bhujamochak jewel, neelamani, coryllium, buzzing happy bumble bees They are in cluster, ring-shaped and turned to the right All the parts of their body are well built and in proper proportion

These Yugaliks are equipped with the best symbols, til and other good marks and qualities They have thirty two good features Their voice is sweat like that of a swan or that of cronch bird It is deep like that of drum (dundubhi) It is as roaring as that of a lion Their voice is not an interrupted one and not a disturbing one Their sound is as roaring as that of a cloud so it is pleasant to the ear Their voice, talk and pronunciation are all very beautiful Their physical constitution is extremely strong (Vajra-rishabh-naraach) and structure is symmetrical (Sam Chaturasra Sansthaan) Their parts and sub-parts of the body are bright The skin of their body is excellent They are free from diseases and they take only a little food like Kank bird Their digesting power is like that of a pigeon Their stool is like that of a bird So it does not stick to their body after the call of nature Their back, sides and thighs are beautiful and suited to the body Their breath is as fragrant as lotus flowers Their discharge is always normal They are white, bright or loveable black in complexion They have soft black hair on the head Their belly is in accordance with their body They take nectar like juicy fruit Their height is three kos (6 miles) There life-span is three palyopam (a measure of time) After completely passing that period of

three palyopam these human beings of akarm bhoomi (where one does not have to make any effort for livelihood) they die in a state of non-satisfaction.

विवेचन उपरोक्त सूत्रो मे यद्यपि देवकुरु और उत्तरकुरु नामक अकर्मभूमि-भोगभूमि के नाम का उल्लेख किया गया है, तथापि उपरोक्त वर्णन प्राय सभी तीस अकर्मभूमिज मनुष्यो के लिए और ५६ अतरद्वीप के युगलिको के लिए समझ लेना चाहिए। आयु और अवगाहना जहाँ जितनी है उतनी समझनी चाहिए। देवकुरु और उत्तरकुरु का नामोल्लेख करने का कारण यह प्रतीत होता है कि वह उत्तम अकर्मभूमि है।

अकर्मभूमि के मनुष्य युगलिक कहलाते है, क्योकि वे पुत्र और पुत्री के रूप मे-युगल के रूप मे ही उत्पन्न होते है। वे पुत्र और पुत्री ही आगे चलकर पति-पत्नी बन जाते है और एक युगल को जन्म देते है। अधिक सन्तान उत्पन्न नही होती।

इन युगलो का जीवन-निर्वाह वृक्षो से होता है। वनस्पतिभोजी एव पूर्ण रूप से प्राकृतिक जीवन व्यतीत करने के कारण उनकी शारीरिक रचना कितनी सुगठित, स्वस्थ एव स्पृहणीय होती है, यह तथ्य मूल पाठ मे वर्णित उनकी शरीरसम्पत्ति से कल्पना मे आ सकता है। उनका जीवन बहुत ही शान्त, निर्द्वन्द्व तथा कषाय की मदता वाला होता है। उनमे स्वार्थलिप्सा भी बहुत कम होती है।

उक्त विस्तृत वर्णन का उद्देश्य यही प्रदर्शित करना है कि तीन पल्योपम जितने दीर्घकाल तक और जीवन की अन्तिम घडी तक यौवन-अवस्था मे रहकर इच्छानुकूल एव श्रेष्ठ से श्रेष्ठ भोगो को भोगकर भी मनुष्य तृप्त नही हो पाता। जीवन पर्यन्त अतृप्ति बनी ही रहती है। प्रस्तुत सूत्र मे युगलो को बत्तीस प्रशस्त लक्षणो का धारक कहा गया है। वे बत्तीस लक्षण इस प्रकार होते है-

(१) छत्र, (२) कमल, (३) धनुष, (४) उत्तम रथ, (५) वज्र, (६) कूर्म, (७) अकुश, (८) वापी, (९) स्वस्तिक, (१०) तोरण, (११) सर, (१२) सिह, (१३) वृक्ष, (१४) चक्र, (१५) शख, (१६) गज-हाथी, (१७) सागर, (१८) प्रासाद, (१९) मत्स्य, (२०) यव, (२१) स्तम्भ, (२२) स्तूप, (२३) कमण्डलु, (२४) पर्वत, (२५) चामर, (२६) दर्पण, (२७) वृषभ, (२८) पताका, (२९) लक्ष्मी, (३०) माला, (३१) मयूर, और (३२) पुष्प। (जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति २/२८)

Elaboration—The description in these aphorisms is that of Devakuru and Uttarkuru area Yet it should be understood that similar account is of all the thirty akarm areas and 56 middle islands (Antardveep) It appears that Devakuru and Uttarkuru have been specifically mentioned because they are the best among them

The human beings of akarm area are called Yugalik because they take birth as twins—one male and the other female this son and daughter pair later on becomes husband and wife and gives birth to one couple. They do not have any more offspring

The livelihood of these Yugaliks is based on trees (that satisfy all desires) They lead a completely natural life based on vegetables The structure of their body is healthy and well built This fact can be derived from the description of their anatomical wealth Their life is very peaceful and free from quarrels Their passions are mild Their attachment to self is also pretty low

The purpose of detailed description of their life is to bring home the fact that even after leading a very long life of three palyopam, a human being at the fag end of his life does not feel satisfied although he had enjoyed sensual pleasures of his choice and of a very high order This feeling of non-satisfaction persists till the end of their life

In the present aphorism, it has been mentioned that Yugaliks had 32 noble signs They are as follows—

(1) Umbrella, (2) Lotus, (3) Bow, (4) Unique chariot, (5) Vajra, (6) Tortoise, (7) Short Lance (ankush), (8) Lake (Vapi), (9) Swastika, (10) Arch (Toran), (11) Pond, (12) Lion, (13) Tree, (14) Disc, (15) Conch shell, (16) Elephant, (17) Palace, (19) Fish, (20)) Barley (Yav), (21) Pillar, (22) Memorial mound (Stupa), (23) Gourd Bowl (Kamandalu), (24) Hill, (25) Whisk (Chamar) (26) Mirror, (27) Bull, (28) Flag, (29) Goddess (Lakshmi), (30) Garland, (31) Peacock, (32) Flower *(Jambudveep Prajnapti 2/28)*

अकर्मभूमिज नारियो की शरीर–सम्पदा PHYSICAL WEALTH OF WOMEN OF AKARM AREA

८९. पमया वि य तेसि होति सोम्मा सुजायसव्वगसुंदरीओ पहाणमहिलागुणेहिं जुत्ता अइकंतविसप्पमाणमउय– सुकुमालकुम्मसंठियसिलिट्ठचलणा उज्जुमउयपीवरसुसाहयंगुलीओ अब्भुण्णयर–इयतलिणतबसुइणिद्धणखा रोमरहियवट्टसंठियअजहण्णपसत्थलक्खणअकोप्पजंघजुयला सुणिम्मियसुणिगूढजाणू मसलपसत्थसुबद्धसंधी कयलीखभाइरेकसंठियणिव्वणसुकुमालमउयकोमलअविरलसमसहियसु–जायवट्टपीवरणिरंतरोरू अट्ठावयवीइपट्ठसंठियपसत्थविच्छिण्णपिहुलसोणी वयणायामप्पमाणदुगुणिय–विसालमंसलसुबद्धजहणवरधारिणीओ वज्जविराइयपसत्थलक्खणणिरोदरीओ तिवलिवलियत–णुणमियमज्झियाओ उज्जुयसमसहियजच्चतणुकसिणणिद्ध–आइज्जलडहसुकुमालमउयसुविभत्तरोमराईओ।

गंगावत्तगपदाहिणावत्ततरंगभंगरविकिरणतरुणबोहियअकोसायंत पउमगंभीरवियडणाभी अणुब्भड–पसत्थसुजायपीणकुच्छी सण्णयपासा सुजायपासा संगयपासा मियमाययिपीणरइयपासा अकरंडुयकणगरुयग–णिम्मलसुजायणिरुवहयगायलट्ठी कचणकलसपमाण–समसहियलट्ठचुचुय–आमेल–

गजमलजुयलवट्टियपयोहराओ भुयंगअणुपुव्वत--णुयगोपुच्छवट्टसमसहियण--मियआइज्जलडहबाहा तंबणहा मंसलग्गहत्था कोमलपीवरवरंगुलिया णिद्धपाणिलेहा ससिसूरसंखचक्कवरसोत्थियविभत्तसुविरइयपाणिलेहा।

पीणुण्णयकक्खवत्थीप्पएसपडिपुण्णगलकवोला चउरंगुलसुप्पमाणकंबुवरसरिसगीवा मंसलसंठिय--पसत्थहणुया दालिमपुप्फप्पगासपीवरपलंबकुंचियवराधरा सुंदरोत्तरोट्ठा दधिदगरयकुंदचंदवा--संतिमउल--अच्छिद्दविमलदसणा रत्तुप्पलपउमपत्तसुकुमालतालुजीहा कणवीरमउल--अकुडिलअब्भुण्णयउज्जुतुंगणासा सारयणवकमलकुमुयकुवल--यदलणिगरसरिसलक्खण--पसत्थअजिम्हकंतणयणा आणामिय--चावरुइल--किण्हब्भराइसंगय--सुजायतणुकसिणद्धभुमगा अल्लीणपमाणजुत्तसवणा सुस्सवणा पीणमट्ठगंडलेहा चउरंगुलविसालमणिडाला कोमुइरयणियरविमलपडिपुण्णसोमवयणा छत्तुण्णयउत्तमंगा अकविलसुसिणि--द्धदीहसिरया।

छत्त--ज्झय--जूव--थूभ--दामिणि--कमंडलु--कलस--वावि--सोत्थिय--पडाग--जव--मच्छ--कुम्भ--रहवर--मकरज्झय--अंक--थाल--अंकुस--अट्ठावय--सुपइट्ठअमरसिरियाभिसेय--तोरण--मेइणि--उदहिवर--पवरभवणगिरिवर--वरायंस--सुललियगय--उसभ--सीह--चामर--पसत्थबत्तीसलक्खणधरीओ।

हससरिसगईओ कोइलमहुरगिराओ कंता सव्वस्स अणुमयाओ ववगयवलिपलितवंग--दुव्वण्ण--वाहि--दोहग्ग--सोयमुक्काओ उच्चत्तेण य णराण थोवूणमूसियाओ सिंगारागारचारुवेसाओ सुन्दरथणजहण--वयणकरचरणणयणा लावण्णरूवजोव्वणगुणोववेया णंदणवणविवरचारिणीओ अच्छराओव्व उत्तरकुरुमाणु--सच्छराओ अच्छेरगपेच्छणिज्जियाओ तिण्णि य पलिओवमाइं परमाउ पालइत्ता ताओ वि उवणमंति मरणधम्मं अवितित्ता कामाणं।

८९. उन युगलिको की स्त्रियाँ भी सौम्य--शान्त स्वभाव वाली होती है। अगो से सुन्दर और महिलाओ के मुख्य--मुख्य उत्तम गुणो से युक्त होती है। उनके चरण अत्यन्त कमनीय, चलते समय कोमल वस्तुओ से भी अतिकोमल, सुकुमार, कछुए की तरह बीच मे उभरे हुए, मनोहर होते है। उनकी अगुलियाँ सीधी, कोमल, पुष्ट और परस्पर सटी हुई होती है, उनके नख आगे को उठे हुए, सुखद या सुरचित, पतले, ताँबे के समान लाल, साफ एव चिकने होते है। उनकी दोनो जघाएँ--पिण्डलियाँ रोओ से रहित, छाते की--सी उभरी हुई, गोलाकार, उत्तम और मागल्य चिह्नो से युक्त और देखने मे रमणीय होती है। उनके घुटने अच्छी तरह से बने हुए और माँस से ढके होने से सुन्दर प्रतीत होते है। उनकी सधियाँ जोडे माँस से पुष्ट, प्रशस्त और सुगठित--परस्पर बँधी हुई होती है। उनके दोनो उरु--जघाएँ साथल केले के खम्भे से भी अधिक गठे हुए आकार की, घाव आदि से रहित, सुकुमाल, मुलायम एवं चिकनी होती है, तथा अन्तररहित समप्रमाण वाले, सुन्दर, गोल और सुपुष्ट होती है। उनकी श्रोणि (कटिप्रदेश) जूए या चौपड--शतरज खेलने के पट्टे के समान आकार वाली रेखाओ सरीखी, सुन्दर लक्षणो सहित अथवा सहनशील, विस्तीर्ण और पृथुल होती है। वे अपने मुख की लम्बाई के प्रमाण (बारह अगुल) से दुगुनी (यानी २४ अगुल) लम्बी, विशाल, माँस से पुष्ट, सुगठित जघन--कमर के आगे

के भाग-पेडू को धारण करने वाली होती है। उनका उदर मध्य मे पतला-कृश होने से वज्र के समान शोभायमान, शुभ लक्षणो से युक्त और अत्यन्त कृश होता है। उनके शरीर का मध्य भाग त्रिवलियो-तीन रेखाओ से अकित, पतला और झुका हुआ होता है। उनकी रोमराजि सीधी, एक सरीखी, परस्पर मिली हुई, स्वाभाविक रूप से बारीक, काली, आकर्षक, ललित, सुकुमार, मुलायम और अलग-अलग रोमो से युक्त होती है।

उनकी नाभि गगा नदी के भँवरो के समान, दक्षिण की ओर चक्कर लगाने वाली तरगो के समान, सूर्य की किरणो का स्पर्श होते ही ताजे नये खिले हुए व कोश से अलग हुए कमल के समान गम्भीर और विशाल होती है। उनकी कुक्षि बाहर नही उभरी हुई-प्रशस्त, श्रेष्ठ और पुष्ट होती है। उनके पार्श्व भाग (काँख से नीचे का भाग-बगले) उचित प्रमाण मे नीचे की ओर अच्छी तरह झुके हुए होते है, सुन्दर होते है, परिपुष्ट और आनन्ददायक होते है। उनकी गात्रयष्टि देहरूपी यष्टि स्वाभाविक रूप से शुद्ध-साफ सोने के रुचक-एक प्रकार के आभूषण की तरह निर्मल-स्वच्छ, सुनिर्मित एव रोगादि से रहित होती है। उनके दोनो स्तन सोने के कलशो की तरह गोल, उन्नत, समान, कठिन, मनोहर, जुडवाँ जैसे, अग्रभाग पर लगी हुई दो चूचि (स्तनाग्र भाग) से युक्त होते है। उनकी दोनो बाँहे सर्प की आकृति के समान क्रमश पतली, गाय की पूँछ के समान गोल, एक सरीखी, शिथिलतारहित, झुकी हुई, आकर्षक और रमणीय होती है। उनके नख ताँबे के समान लाल होते है। उनके हाथ के पजे माँसल परिपुष्ट होते है, उनके हाथो की अगुलियाँ कोमल और पुष्ट होती है, उनके हाथो की रेखाएँ चिकनी होती है, तथा उनमे चन्द्रमा, सूर्य, शख, श्रेष्ठ चक्र, स्वस्तिक आदि शुभ विभिन्न चिह्न अकित होते है।

उनकी काँख और मलोत्सर्ग का स्थान-गुह्य प्रदेश उभरे हुए है तथा कपोल परिपूर्ण और गोलाकार होते है। उनकी ग्रीवा चार अगुल प्रमाण वाली, श्रेष्ठ शख के जैसी होती है, उनकी ठुड्डी माँस से भरी हुई, पुष्ट और आकर मे प्रशस्त होती है। उनके निचले ओठ अनार के खिले हुए फूल के समान चमकदार, लाल-लाल, कान्तिमय, कुछ लम्बे और सिकुडे हुए होते है, उनके ऊपर के ओठ भी बडे सुन्दर होते है। उनके तालु और जीभ लाल कमल के समान कोमल होते है। उनकी नाक कनेर की कलियो के समान टेढेपन से रहित, आगे से अन्दर की ओर उठी हुई, सीधी और ऊँची होती है। उनके नेत्र शरद्-ऋतु के ताजे सूर्यविकासी कमल और चन्द्रविकासी कुमुदपुष्प तथा नीलकमल के पत्तो के समूह के समान शुभ लक्षणो से श्रेष्ठ, कुटिलतारहित और कमनीय होते है। उनकी भौहे किचित् कुछ नमाये हुए धनुष के समान मनोहर, काले-काले बादलो की घटाओ की-सी सुन्दर, पतली, काली और चिकनी होती है। उनके कान अच्छी तरह सटे हुए और समुचित होते है। उनके कानो की श्रवण शक्ति अच्छी होती है, उनके कपोल प्रमाणयुक्त पुष्ट और चिकने होते है, उनका ललाट चार अगुल चौडा और विस्तीर्ण होता है। उनका मुख चाँदनी से युक्त निर्मल पूर्ण चन्द्रमा के समान गोल और सौम्य होता है। उनका मस्तक छत्र के समान गोल और उभरा हुआ होता है। उनके मस्तक के केश काले, चिकने और लम्बे-लम्बे होते है। उनकी गति-चाल हस के समान होती है। कोयल के समान उनकी मधुर वाणी होती

है। वे कान्ति वाली और सर्वजनप्रिय होती है। वे मुख पर झुर्रियो, सफेद बालो और अपगपन-अगविकलता से रहित होती है तथा कुरूपता, व्याधि, दुर्भाग्य और शोक से मुक्त है। वे ऊँचाई मे पुरुषो से कुछ कम (चार अगुल) ऊँची होती हैं। वे निम्नलिखित उत्तम बतीस लक्षणो से सम्पन्न होती है-

(१) छत्र, (२) ध्वजा, (३) यज्ञस्तम्भ, (४) स्तूप, (५) दामिनी-माला, (६) कमण्डलु, (७) कलश, (८) वापी, (९) स्वस्तिक, (१०) पताका, (११) यव, (१२) मत्स्य, (१३) कच्छप, (१४) प्रधान रथ, (१५) मकरध्वज (कामदेव), (१६) वज्र, (१७) थाल, (१८) अकुश, (१९) अष्टापद-जुआ खेलने का पट्ट या वस्त्र, (२०) स्थापनिका-ठवणी या ऊँचे पैदे वाला प्याला, (२१) देव, (२२) लक्ष्मी का अभिषेक, (२३) तोरण, (२४) पृथ्वी, (२५) समुद्र, (२६) श्रेष्ठ भवन, (२७) श्रेष्ठ पर्वत, (२८) उत्तम दर्पण, (२९) क्रीडा करता हुआ हाथी, (३०) वृषभ, (३१) सिह, और (३२) चमर।

वे कमनीय कान्ति से युक्त और सभी को प्रिय लगती है। वे शृगार के आगार के समान और सुन्दर वेश-भूषा से सुशोभित होती है। उनके स्तन, जघन, मुख, हाथ, पाँव और नेत्र-सभी अग अत्यन्त सुन्दर होते है। लावण्य, रूप और यौवन के गुणो से सम्पन्न होती है। वे नन्दनवन मे विहार करने वाली अप्सराओ सरीखी उत्तरकुरु क्षेत्र की मानवी अप्सराएँ होती है। उन्हे देखकर उनके अद्‌भुत सौन्दर्य पर आश्चर्य होता है कि मानवी मे भी इतना अपार सौन्दर्य सम्भव है! वे तीन पल्योपम जितने दीर्घकाल तक इष्ट एव उत्कृष्ट मानवीय भोगपभोगो का उपभोग करके भी कामभोगो से तृप्त नही हो पाती और अतृप्त रहकर ही कालधर्म को प्राप्त होती है।

89. The ladies of those Yugaliks are quiet and sobre by nature They have beautiful features and all the primary good qualities of women Their feet are very beautiful They are more soft than all the soft things, and with a bulge in the middle like a tortoise They look very charming Their fingers are straight, soft, well developed and very close to each other Their nails are a bit protruding, pleasant to look at and properly built They are thin and red like copper, neat and slippery Their thighs and shins are free from hair and raised like an umbrella They are round in shape and possess auspicious marks They are very charming to look at Their knees are well built and covered with flesh So they look graceful Their joints are healthy, fleshy and properly shaped. Their two thighs are like banana trunk in shape and more closely knit. They are soft, levelled, slippery and free from any mark of wound They are in proper proportion, round, beautiful and well built Their waist is like the lines in a chess board They are beautiful having good signs, broad and smooth They are twice the size of the mouth (12 fingers thick), fleshy, well knit and have the pubis at its front Their belly looks like Vajra as it

is slim at the centre It is very slim and has good marks on it The middle part of their body has three lines It is thin and bent. The lines of hair on their body are identical, straight, closely connected to each other and very fine (subtle) by nature They are black, attractive, beautiful, smooth, soft and have distinct hair

Their navel is like whirlpools in Ganga river It is like currents in circular motion towards the south It is deep and spread like freshly blossoming lotus at the touch of sun rays Their armpit is beautiful and properly developed It is not bulging out Their sides are in proper shape and tapering down properly They are charming and pleasant to the eye Their body is as pure, clean, properly developed as the ornament made of pure gold They are free from disease Their breasts are round like golden pitchers, developed, identical, shapely, beautiful and close to each other They have nipples at their tips Their arms are serpent-like in shape gradually becoming thinner. They are round like the tail of a cow, identical, free from weakness, bent, attractive and beautiful Their hands are fleshy Their fingers are soft and properly built The lines on their hands are smooth and various signs such as those of moon, sun, conch shell, good wheel, Swastika and others are visible on them

Their armpit and private parts are plump Their cheeks are round and properly developed Their neck in length is equal to thickness of four fingers It is like good conch shell Their chin is covered with flesh and good in shape Their lower lips are red like blossoming flower of pomegranate They are bright, shining and slim Their upper lips are also very beautiful Their palate and tongue are soft like red lotus Their nose, like Kaner flower, is free from any bend It is tapered inside, straight and high Their eyes are like fresh sunflowers of winter They bear good marks like flowers blossoming in moonlight and bunch of leaves of blue lotus flowers They are beautiful and free from any crookedness Their eye-brows are as beautiful as a little bent bow They are as black and beautiful as the black clouds bearing rain They are thin and soft Their ears are in proper proportion and clinching to their body Their hearing power is good Their cheeks are developed, smooth and in proper proportion Their forehead is four finger broad and wide Their voice is as sweat as that of a Cuckoo It is liked by every one They do not have wrinkles, white hair or any deformity of limbs. They are free

from ugliness, diseases, ill luck or sorrow They are a little less in height than men They have the following 32 meritorious signs—

(1) Umbrella, (2) Flag, (3) Yajna Pillar, (4) Memorial mound, (5) Garland, (6) Bucket, (7) Pot, (8) Lake, (9) Swastika, (10) Buntings, (11) Yav (barley), (12) Fish, (13) Tortoise, (14) Main chariot, (15) Cupid, (16) Vajra, (17) Plate, (18) Short lance, (19) Cloth board for gambling, (20) Cup with high bottom, (21) Celestial being, (22) Anointing of Lakshmi, (23) Welcome gate, (24) Ground, (25) Sea, (26) Mansion, (27) Holy hill, (28) Holy mirror, (29) Playing elephant, (30) Bull, (31) Lion, and (32) Whisk

They have a beautiful glow and are loved by all They are abode of embellishment and adorned in beutiful dress Their breasts, thighs, face, hands, feet and eyes are all extremely beautiful They have all the charms of the youth They are fairies in human form of Uttarkuru area like the fairies moving in Nandan forest One feels wonder struck at their beauty and feels how it is possible to see such a grand beauty in human beings They do not feel satisfied with the worldly pleasures they enjoy for a long period of three palyopam They die in a state of non-satisfaction

विवेचन प्रस्तुत पाठ मे भोगभूमि की महिलाओ का नख से शिख तक का विस्तृत वर्णन किया गया है। इस वर्णन मे उनके शरीर के समस्त अगोपागो का पृथक्-पृथक् वर्णन है, जो विविध उपमाओ द्वारा स्पष्ट किया गया है।

यह सब कथन उनके बाह्य सौन्दर्य का प्रदर्शक है। उनकी आन्तरिक प्रकृति, स्वभाव आदि के विषय मे यहाँ कोई उल्लेख नही है। इसका कारण यह है कि इससे पूर्व भोगभूमिज पुरुषो के वर्णन मे जो कहा जा चुका है, वह यहाँ भी समझ लेना है। तात्पर्य यह है कि वहाँ के मानव-पुरुष जैसे अल्पकषाय एव सात्त्विक स्वभाव वाले होते है वैसे ही वहाँ की महिलाएँ भी होती है। जैसे पुरुष पूर्णतया निसर्गजीवी होते है वैसे ही नारियाँ भी सर्वथा निसर्ग-निर्भर होती है। प्रकृतिजीवी होने के कारण उनका समग्र शरीर सुन्दर होता है, नीरोग रहता है और अन्त तक उन्हे वृद्ध अवस्था जनित विडम्बना नही भुगतनी पडती। उन्हे बुढापा नही आता। जीवन-पर्यन्त वे आनन्द, भोग-विलास मे मग्न रहती है। फिर भी अन्त मे भोगो से अतृप्त रहकर ही मरण को प्राप्त होती है।

Elaboration—In the present lesson the beauty of ladies of bhog land (land of enjoyment) has been described from tip to toe In this narration each part of their body has been separately described and it has been elaborated by suitable analogies

All this description expresses their external beauty There is no mention of their inner nature, behaviour and the like It is because whatever has been said earlier about the men of the land of enjoyment (bhog bhoomi) should be considered here also In nutshell the women of this area have mild passion and good nature like men Just as men live on nature, so do the women Since they live on nature their entire body is beautiful It is always free from diseases They do not have to face decline in health even in old age In fact they never look old, they remain engrossed in worldly pleasures and enjoyment throughout their life, still they die in a state of non-satisfaction

परस्त्री लुब्ध जीवो की दुर्दशा **BAD CONDITION OF MEN ATTRACTED TO OTHER'S WOMEN**

प्रस्तुत सूत्र पाठ मे बताया गया है कि अब्रह्मचर्य सेवन का आचरण करने वाले किस तरह का आचरण करते है।

९०. मेहुणसण्णासंपगिद्धा य मोहभरिया सत्थेहिं हणंति एक्कमेक्क। विसयविसउदीरएसु अवरे परदारेहिं हम्मति विसुणिया धणणासं सयणविप्पणासं य पाउणंति। परस्स दाराओ जे अविरया मेहुणसण्णासंपगिद्धा य मोहभरिया अस्सा हत्थी गवा य महिसा मिगा य मारेंति एक्कमेक्कं।

मणुयगणा वाणरा य पक्खी य विरुज्झंति, मित्ताणि खिप्पं हवंति सत्तू। समए धम्मे गणे य भिंदंति पारदारी। धम्मगुणरया य बंभयारी खणेण उल्लोट्टए चरित्ताओ। जसमंतो सुव्वया य पावेंति अयसकित्तिं।

रोगत्ता वाहिया पवड्ढेति रोगवाही।

दुवे य लोया दुआराहगा हवंति–इहलोए चेव परलोए परस्स दाराओ जे अविरया।

तहेव केइ परस्स दारं गवेसमाणा गहिया य हया य बद्धरुद्धा य एवं जाव गच्छंति विउलमोहाभिभूयसण्णा।

९०. जो मनुष्य मैथुनसज्ञा मे अर्थात् मैथुन सेवन की वासना मे अत्यन्त आसक्त रहते है और मूढता अथवा कामवासना से भरे हुए होते है, वे परस्पर मे एक–दूसरे का शस्त्रो से घात करते रहते है।

कोई–कोई विषयरूपी विष की उदीरणा करने वाली अर्थात् विषयवासना बढाने वाली परकीय स्त्रियो मे प्रवत्त होकर दूसरो के द्वारा मारे जाते है। जब उनकी परस्त्री लम्पटता प्रकट हो जाती है तब (राजा या शासन द्वारा) उनकी सम्पत्ति और कुटुम्ब का विनाश किया जाता है।

जो परस्त्रियो से विरत नही है और मैथुनसेवन की वासना मे अतीव आसक्त है और मोह से भरपूर है, ऐसे घोडे, हाथी, बैल, भैसे और मृग–वन्य पशु परस्पर लडकर एक–दूसरे को मार डालते है। मनुष्यगण, बन्दर और पक्षीगण भी मैथुनसज्ञा के कारण परस्पर विरोधी बन जाते है। मित्र शीघ्र ही शत्रु बन जाते है।

परस्त्रीगामी पुरुष अपने सिद्धान्तो या शपथो को, अहिंसा, सत्य आदि धर्मों को तथा गण-समान आचार-विचार वाले समूह को या समाज की मर्यादाओ का लोप कर देते है, यहाँ तक कि धर्म और सयमादि गुणो मे निरत ब्रह्मचारी पुरुष भी मैथुनसज्ञा के वशीभूत होकर क्षणभर मे चारित्र-सयम से भ्रष्ट हो जाते है।

बडे-बडे यशस्वी और व्रतो का समीचीन रूप से पालन करने वाले भी अपयश और अपकीर्ति के भागी बन जाते है। ज्वर आदि रोगों से ग्रस्त तथा कोढ आदि व्याधियो से पीडित प्राणी मैथुनसज्ञा की तीव्रता के कारण रोग और व्याधि की अधिक वृद्धि कर लेते है, अर्थात् मैथुनसेवन की अधिकता रोगो को और व्याधियो को बढावा देने वाली है। जो मनुष्य परस्त्रियो मे आसक्त होते है, वे इहलोक और परलोक दोनो लोको मे दुराराधक होते है। अर्थात् इहलोक मे और परलोक मे भी आराधना करना उनके लिए कठिन है।

इसी प्रकार परस्त्री की तलाश मे रहने वाले कोई-कोई मनुष्य जब पकडे जाते है तो पीटे जाते है, बन्धनो से बाँधे जाते है और कारागार मे बन्द कर दिये जाते है। इस प्रकार जिनकी बुद्धि तीव्र मोह या मोहनीय कर्म के उदय से नष्ट हो जाती है, वे यावत् अधोगति को प्राप्त होते है।

This aphorism details the kind of inflow incurred by those who indulge in non-celibacy —

90. Those men who are deeply engrossed in feeling for mating and are in a state of ignorance about its results, they hunt each other with their weapons

Some are killed by others when they engage in sex with the women folk of others attracted by their amorous activities When their such behaviour becomes apparent the king or the ruler snatches their wealth and destroys their family

Such horses, elephants, bullocks, he-buffaloes, deer and other beasts of the forest fight among themselves who are not devoid of attraction for females of others and who are deeply attached to cohabitation and delusion

Even human beings, monkeys and birds become inimical to each other due to their desire for mating. Friends soon turn into enemies on account of it

The man who has sex with the wife of another person disregard the principles and their vows, the basic tenets of non-violence truth and the like, the social code and the dictum laid down by the society. Even the person observing the life of self-restraint and celibacy continuously lose their life of restraint in a moment due to their inclination to cohabit

Even those who are highly respectable and are meticulously following their vows bring dishonour due to it

Persons suffering from fever, leprosy and other suchlike diseases aggravate their suffering by engaging in sex Non-celibacy increases such diseases

Persons attached to women of others spoil their present life and also the succeeding life It is difficult for them to follow the religious order in the present life and the life to follow

Similarly, the persons who are in search of women of others (for illicit activities) are beaten, chained and put in prison when they are caught Thus these persons whose intellect is adversely affected by delusion or by the affect of deluding Karma, are in the end re-born in low category of state of existence

विवेचन मानव के मन मे जब तीव्र मैथुनसज्ञा-कामवासना उभरती है तब उसकी मति विपरीतगामी हो जाती है और उसका विवेक-कर्त्तव्य-अकर्त्तव्यबोध विलीन हो जाता है। वह भविष्य मे होने वाले भयानक परिणामो का सम्यक् विचार करने मे असमर्थ बन जाता है। इसी कारण उसे विषयान्ध कहा जाता है। उस समय वह अपने यश, कुल, शील आदि का तनिक भी विचार नही कर सकता।

सूत्र मे **'विषयविसस्स उदीरएसु'** कहकर स्त्रियो को विषयरूपी विष की उदीरणा या उद्रेक करने वाली कहा गया है। इसी प्रकार इस कथन का अभिप्राय यह है कि जैसे स्त्री के दर्शन, सान्निध्य, सस्पर्श आदि से पुरुष मे कामवासना का उद्रेक होता है, उसी प्रकार पुरुष के दर्शन, सान्निध्य आदि से स्त्रियो मे वासना की उदीरणा होती है। स्त्री और पुरुष दोनो ही एक-दूसरे की वासनावृद्धि मे बाह्य निमित्तकारण होते है। अन्तरग निमित्तकारण वेदमोहनीय आदि का उदय है तथा बहिरग निमित्तकारण स्त्री-पुरुष के शरीर आदि है। बाह्य निमित्त मिलने पर वेद-मोहनीय की उदीरणा होती है। मैथुनसज्ञा की उत्पत्ति के चार मुख्य कारण बतलाते हुए कहा गया है-

पणीदरसभोयणेण य तस्सुवजोगे कुसीलसेवाए।
वेदस्सुदीरणाए, मेहुणसण्णा हवदि एव॥

(१) इन्द्रियो को उत्तेजित करने वाले गरिष्ठ रसीले भोजन से, (२) पूर्व जीवन मे सेवन किये गये विषय-सेवन का स्मरण करने से, (३) कुशील के सेवन से, और (४) वेद-मोहनीयकर्म के उदय से मैथुनसज्ञा उत्पन्न होती है।

Elaboration—When the deep desire for mating arises in the mind of a human being, his thinking becomes adverse He loses his faculty of discrimination. He becomes incapable of understanding the grave

consequences of his activities So he is called saturated in adverse sensual desires. He cares a fig for his honour, family and conduct

In the aphorism there is the phrase 'Visaya Visassa Udeerayesu'. It means that sexual desire increases when one sees a women—the very cause of the poison of sex Just as the very sight, contact or touch of a woman creates the amorous sexual feeling in men Similary the sight contact and the like of men creates the desire for amorous activities in women Both men and women are the cause of increase of amorous feeling among each other The inner cause is the effect of the deluding Karma while the external cause is the physical body of men and women The appearance of external cause is the source for the rising effect of deluding Karma There are four causes for the appearance of the desire for mating They are—(1) rich diet that energises the senses, (2) the memory of marital activities of the past, (3) engaging in illicit contact, and (4) the effect of deluding Karma

अब्रह्मचर्य का दुष्परिणाम BAD RESULTS OF NON-CELEBACY

यहा सूत्रकार ने बताया है कि अब्रह्माचरण का कितना भयकर फल प्राप्त होता है।

९१. मेहुणमूलं य सुव्वए तत्थ तत्थ वत्तपुव्वा संगामा जणक्खयकरा सीयाए, दोवईए कए, रुप्पिणीए, पउमावईए, ताराए, कंचणाए, रत्तसुभद्दाए, अहिल्लियाए, सुवण्णगुलियाए, किण्णरीए, सुरूवविज्जुमईए, रोहिणीए य, अण्णेसु य एवमाइएसु बहवे महिलाकएसु सुव्वंति अइक्कंता संगामा गामधम्ममूला अबंभसेविणो। इहलोए ताव णट्ठा, परलोए वि य णट्ठा।

महया मोहतिमिसंधयारे घोरे तसथावरसुहुमबायरेसु पज्जत्तमपज्जत्त–साहारणसरीरपत्तेयसरीरेसु य अंडय–पोयय–जराउय–रसय–संसेइम–सम्मुच्छिम–उब्भिय–उववाइएसु य णरय–तिरिय–देव–माणुसेसु जरामरणरोगसोगबहुले पलिओवमसागरोवमाइं अणाईयं अणवदग्गं दीहमद्धं चाउरंत–संसार–कंतारं अणुपरियट्टंति जीवा मोहवससण्णिविट्ठा।

९१. मैथुन सेवन के निमित्त विभिन्न ग्रन्थो में सीता के लिए, द्रौपदी के लिए, रुक्मिणी के लिए, पद्मावती के लिए, तारा के लिए, काचना के लिए, रक्तसुभद्रा के लिए, अहिल्या के लिए, स्वर्णगुटिका के लिए, किन्नरी के लिए, सुरूपविद्युन्मती के लिए और रोहिणी के लिए अतीत काल मे अनेक मनुष्यो का सहार करने वाले सग्राम होने के वर्णन सुने जाते है, इन्द्रियो की विषयासक्ति अर्थात् मैथुन सेवन के कारण ही ये सग्राम हुए है। इस प्रकार अन्य स्त्रियो के निमित्त भी सग्राम हुये है जो अब्रह्म मूलक है। अब्रह्म का सेवन करने वाले इस लोक मे तो नष्ट होते ही है, वे परलोक मे भी नष्ट होते हैं।

मोह के वशीभूत प्राणी पर्याप्त और अपर्याप्त, साधारण और प्रत्येकशरीरी जीवो मे, अण्डज, पोतज, जरायुज, रसज, सस्वेदिम, उद्भिज्ज और औपपातिक जीवो मे, तथा नरक, तिर्यंच, देव और मनुष्यगति के जीवो मे, महामोहरूपी अधकार से व्याप्त एव घोर-दारुण परलोक मे अनेक पल्योपमो एव सागरोपमो जितने सुदीर्घकाल पर्यन्त दारुण कष्ट भोगते है तथा अनादि और अनन्त, दीर्घ मार्ग वाले और चार गति वाले ससाररूपी महावन मे बार-बार परिभ्रमण करते रहते है।

Here the author informs about the terrible consequences of non-celibacy—

91. In many texts, we see the description of many wars in the ancient period leading to the death of many persons and the cause of them was women such as Sita, Draupadi, Rukmani, Padmavati, Tara, Kanchana, Rakt-Subhadra, Ahilya, Swarn-gutika, Kinnari, Surup-Vidyunmati and Rohini The basis of these was the desire for sex or infatuation for sensual pleasures In the same way wars have been fought due to sexual desires for other women

Persons engaging in illicit marital relations adversely affect their present life and also the succeeding life

As a result of the deluding Karma, a living being has to go through severe suffering for a very long period running into many Palyopam and Sagaropam in the next life-span in which there is the darkness of extreme delusion in the state of existence in hell, as celestial being, as human being or as animal (tiryanch state) He may be born in aparyapt (when sense organs are not yet complete) state or in paryapt state He may be born in plant life where one life is one seed (pratyek sharir) or infinite number of lives in one body (Sadharan Sharir) He may take birth in egg form or as potaj (as the elephant is born) or as Jaraayuj (as a calf is born) or in juice or in perspiration (Sansvedaj) or may come out from the earth by breaking it (udbhij) or as aupapatik (as the hellish and celestial beings with fluid body are born) They continue taking birth and re-birth in the world of four states of existence again and again since beginningless period.

विवेचन प्रस्तुत सूत्र मे प्राचीनकाल मे स्त्रियो के निमित्त हुए सग्रामो का उल्लेख करते हुए सीता, द्रोपदी आदि के नामो का निर्देश किया गया है। किन्तु इनके अतिरिक्त भी सैकडो अन्य उदाहरण इतिहास मे विद्यमान है। परस्त्रीलम्पटता के कारण आये दिन होने वाली हत्याओ के लोमहर्षक समाचार आज भी समाचार-पत्रो मे अनायास ही पढने को मिलते रहते है।

इस कामवासना के कारण ससार मे हजारो तो क्या, लाखो और कभी-कभी करोडो मनुष्यो को अपने प्राणो से हाथ धोना पडा है। रुधिर की नदियाँ बही है। देश को भारी क्षति सहनी पडी है। अतएव यह पाप बडा ही दारुण है। सूत्र मे निर्दिष्ट नामो से सबद्ध सक्षिप्त कथाएँ परिशिष्ट मे दी गई है।

सूत्र मे संसारी जीवो के पर्याप्त-अपर्याप्त आदि विविध भेदो का उल्लेख करके बताया है। अत्यन्त अल्प आयुष्य वाले जीव भी काम-मोह से पीडित है। सागरोपम की आयुष्य वाले प्राणी भी सुदीर्घकाल तक काम-सुख भोगने के पश्चात् भी उनसे अतृप्त ही रहते है। कामभोग भोगने से आज तक किसी को तृप्ति नही हुई। इससे जो निवृत्त हो गये वे ही तृप्ति-सुख का अनुभव कर सकते है।

आशय यह है कि जो प्राणी अब्रह्म के पाप से विरत नही होते, उन्हे दीर्घकाल पर्यन्त जन्म-जरा-मरण की तथा अन्य अनेक प्रकार की भीषण एव दुस्सह यातनाओ का भागी बनना पडता है।

Elaboration—In the present aphorism, the names of Sita, Draupadi and others have been mentioned in the context of wars that had taken place in the ancient period due to women In the history there are hundreds of such examples Even now-a-days we find heart-rending news in the newspapers quite often relating to deaths due to mating with the women of others (women other than one's wife)

In the world, there are thousands of instances of such lustful activities Sometimes millions of people had to leave their life as a result thereof There was great bloodshed. The country had to bear great loss on this account So this sin is very grave In the annexure, some stories relating to the names mentioned in this aphorism have been narrated in brief

In the aphorism, different types of worldly beings—complete or incomplete (aparyapt) in form have been mentioned Even those living beings whose life-span is extremely minute, suffer as a result of their lust Even those living beings whose life-span is Sagaropam, remain unsatisfied after enjoying amorous activities for a very long period Nobody has got satisfaction in sexual enjoyment till today Those who have subdued their sexual desires, only they experience satisfaction and happiness.

In other words, the living beings who have not detached themselves from the sin of non-celibacy, they go through the sufferings of birth, old age and death for a long period and also many other dreadful unbearable troubles

९२. एसो सो अबंभस्स फलविवागो इहलोइओ परलोइओ य अप्पसुहो बहुदुक्खो महब्भओ बहुरयप्पगाढो दारुणो कक्कसो असाओ वाससहस्सेहिं मुच्चइ, ण य अवेयइत्ता अत्थि हु मोक्खोत्ति, एवमाहंसु णायकुलणंदणो महप्पा जिणो उ वीरवरणामधिज्जो कहेसी य अबंभस्स फलविवागं एयं।

तं अबंभंवि चउत्थं सदेवमणुयासुरस्स लोयस्स पत्थणिज्जं एवं चिरपरिचियमणुगयं दुरंतं। त्ति बेमि।

॥ चउत्थं अहम्मदार समत्तं ॥

९२. इस प्रकार पूर्व पाठ मे अब्रह्म रूप अधर्म का यह इहलोक सम्बन्धी और परलोक सम्बन्धी फलविपाक बताया है। यह सुख से रहित अथवा लेशमात्र सुख वाला किन्तु बहुत दु खो वाला है। यह फलविपाक अत्यन्त भयकर है और अत्यधिक पाप-रज से सयुक्त है। बडा ही दारुण और कठोर है। असाता का जनक है-हजारो वर्षों मे अर्थात् बहुत दीर्घकाल के पश्चात् इससे छुटकारा मिलता है, किन्तु इसे भोगे बिना छुटकारा नही मिलता, ऐसा ज्ञातकुल के नन्दन वीरवर-(महावीर) महात्मा, जिनेन्द्र-तीर्थंकर ने कहा है और अब्रह्म का फलविपाक प्रतिपादित किया है।

यह चौथा आस्रव अब्रह्म है। सभी देवता, मनुष्य और असुर सहित समस्त लोक के प्राणी इनकी वाछा करते है। प्राणियो को यह चिरकाल से परिचित है। पीछे लगा हुआ और दुरन्त है-दु खप्रद है अथवा बडी कठिनाई से इसका अन्त आता है।

॥ चतुर्थ अब्रह्मचर्य अधर्म द्वार समाप्त॥

92. Thus in the preceding aphorism the consequence of the activities besmeared with non-chastity (abrahm) in this life and in succeeding lives has been narrated It is either devoid of happiness or provides insignificant happiness But it is full of great distress This result is extremely dreadful and it is extremely polluted with the karmic matter It is very harsh and troublesome It produces pain One is freed from it after a very long period of thousands of years One cannot avoid it without experiencing Such is the version of Tirthankar Mahavir of Jnatri clan This is how he has explained the result of non-chastity

This is the fourth asrava (inflow of Karma) All the living beings including celestial beings, human beings and demon gods have a desire for it They are well acquainted with it since a very long period It is attached to them It is very harsh in the end It causes great distress It can be finished with a great difficulty

• END OF THE FOURTH CHAPTER •

पंचम अध्ययन : परिग्रह
FIFTH CHAPTER : ATTACHMENT (PARIGRAHA)

शास्त्रकार ने इस पचम् अध्ययन मे परिग्रह आश्रव के रूप मे पाचवे अधर्मद्वार की प्ररूपणा की है। पिछले अध्ययनों की ही शैली में सर्वप्रथम परिग्रह का स्वरूप बताया है। उसके पश्चात् इसके पर्यायवाची नाम, इसे सेवन करने वाले, अन्त मे इसके अवश्यभावी दुर्गुणो का वर्णन किया है।

परिग्रह का स्वरूप **NATURE OF PARIGRAHA**

९३. [१] जंबू ! इत्तो परिग्गहो पंचमो उ णियमा।

णाणामणि-कणग-रयण-महरिहपरिमलसपुत्तदार-परिजण-दासी-दास-भयग-पेस-हय-गय-गो-महिस-उट्ट-खर-अय-गवेलग-सीया-सगड-रह-जाण-जुग्ग-संदण-सयणासण-वाहण-कुविय-धणधण्ण-पाण-भोयणाच्छायण-गंध-मल्ल-भायण-भवणविहिं चेव बहु-विहीयं।

भरहं णग-णगर-णिगम-जणवय-पुरवर-दोणमुह-खेड-कब्बड-मडंब-संबाह-पट्टण-सहस्स-परिमंडियं। थिमियमेइणीयं एगच्छत्तं ससागरं भुंजिऊण वसुहं।

९३. [१] गणधर श्री सुधर्मा स्वामी अपने शिष्य जम्बू स्वामी से कहते है-हे जम्बू ! चौथे अब्रह्म नामक आस्रवद्वार का निरूपण करने के पश्चात् यह पाँचवाँ परिग्रह (आस्रव) बताता हूँ। (इस परिग्रह का स्वरूप इस प्रकार है-)

अनेक जाति के मणियो, सोना, कर्केतन आदि रत्नो, कस्तूरी आदि बहुमूल्य सुगधमय द्रव्यो, पुत्र और पत्नी समेत परिवार, दासी-दास, काम करने वाले नौकर-चाकर, कर्मचारी, घोडे, हाथी, गाय, भैस, ऊँट, गधो, बकरो, बकरियो, भेडो, पालकियो, शकट-गाडी-छकडा, रथ, यानो युग्य-दो हाथ लम्बी विशेष प्रकार की सवारी गाडियो, क्रीडारथ, शयन, आसन, वाहन तथा घर के उपयोग मे आने वाले विविध प्रकार का सामान, धन, धान्य-गेहूँ, चावल आदि, पेय पदार्थ, भोजन, पहनने-ओढने के वस्त्र, गन्ध-कपूर आदि, माला-फूलो की माला, बर्तन-भाडे तथा भवन आदि अनेक प्रकार की सामग्री को (भोग लेने पर भी)।

और हजारो पर्वतो, नगरो, निगमो, जनपदो, महानगरो, द्रोणमुखो, खेट (चारो ओर धूल के कोट वाली बस्तियाँ), कर्बटो-कस्बो, मडबो, सबाहो तथा पत्तनो आदि ऐसे बडे नगरो से सुशोभित भरत क्षेत्र-भारतवर्ष को भोगकर भी अर्थात् सम्पूर्ण भारतवर्ष का आधिपत्य भोग लेने पर भी, तथा जहाँ के लोग निर्भय तथा निश्चिन्ततापूर्वक निवास करते है ऐसी सागरपर्यन्त पृथ्वी को एकच्छत्र-अखण्ड राज्य भोगने पर भी (परिग्रह से तृप्ति नही होती)।

In this fifth chapter the author describes the fifth door of impiety as inflow (asrava) through covetousness (Parigraha). Following the style of preceding chapters parigraha has been defined first of all. After that are

narrated its synonyms, those who indulge and, in the end, its inevitable harms

93. [1] Ganadhar Sudharma Swami told his disciple Jambu Swami, 'O Jambu ! After describing non-chastity (abrahm), the fourth gateway of inflow of Karma, I am now going to tell about desire of possessions, attachment (parigraha), the fifth asrava (inflow of Karma)

There are persons in the world who enjoy the possession of precious stones of many types, gold, karketa and other gems, many precious incense producing articles, large family consisting of wife, son, servants, employees, horses, elephants, buffaloes, cows, camels, donkeys, he-goats, goats, sheep, palanquins, carts, chariots, two cubit long carriages, sports chariots, beds, seats, vehicles, various articles of common use in the houses, foodstuffs such as wheat, rice, drinks, clothes, fragrant material like camphor, garlands, utensils and other material for personal use

Some have a command over the entire Bharat area consisting of thousands of hills, towns, cities, districts, harbours, colonies, ports and the like They continuously enjoy the rule over the land upto the sea where people reside without any fear or worry Even then they do not feel satisfied

परिग्रह महावृक्ष GREAT TREE OF PARIGRAHA

[२] अपरिमियमणंत–तण्ह–मणुगय–महिच्छसारणिरयमूलो, लोहकलिकसायमहक्खंधो, चिंतासयणिचियविउलसालो, गारवपविरल्लियग्गविडवो, णियडि–तयापत्तपल्लवधरो पुप्फफलं जस्स कामभोगा, आयासविसूरणा कलह–पकंपियग्गसिहरो।

णरवईसंपूइओ बहुजणस्स हिययदइओ इमस्स मोक्खवरमोत्तिमग्गस्स फलिहभूओ।

चरिमं अहम्मदारं।

[२] जिसका कभी और कही अन्त नही आता ऐसी अपरिमित एव अनन्त तृष्णा रूप इच्छाएँ ही इस अक्षय एव अशुभ फलवाले वृक्ष के मूल है। लोभ, कलह और क्रोधादि कषाय इसके विशाल महास्कन्ध है। सैकडो प्रकार की चिन्ताएँ, मानसिक सताप जिसकी निरन्तर फैलती, विस्तीर्ण होती शाखाएँ है। ऋद्धि, रस और सातारूप गौरव ही इसकी विस्तीर्ण शाखाओ के अग्र भाग–टहनियाँ है। दूसरो को ठगने के लिए किया जाने वाला छल, दभ या कपट ही इस वृक्ष के छाल, पत्र और पुष्प है। कामभोग ही इस वृक्ष के पुष्प और फल है। शारीरिक श्रम, मानसिक खेद और कलह ही इसका कम्पायमान (सतत काँपता हुआ) अग्र शिखर–ऊपरी भाग है।


क्षेत्र
वस्तु
हिरण्य
स्वर्ण
धान्य
द्विपद
चतुष्पद
बाह्य परिग्रह का स्वरूप
परिवार में ममत्व


शारीरिक श्रम
सातागौरव
चित्त का खेद
काम भोग रूपी फल
रस गौरव
भय संज्ञा
कपट
आहार संज्ञा
शोक
संताप
मैथुन संज्ञा
चिन्ता
ऋद्धि गौरव
काम भोग रूपी फल
लोभ, कलह, क्रोध आदि
कषाय रूपी महास्कन्ध
कपट रूपी छाल
परिग्रहरूपी महावृक्ष
अनंत तृष्णा रूपी मूल
12

चित्र-परिचय 12

Illustration No. 12

परिग्रह का स्वरूप

चित्र में परिग्रह के स्वरूप को दिखाया गया है।

अनेक प्रकार के मणि, सोना, रत्न, स्त्री, पुत्र-पुत्री और समस्त परिवार, दास-दासी, गृह-सेवक, पलग, आसन, वाहन, वस्त्र, गध, माला, भवन आदि पर ममत्व रखना परिग्रह है। बाह्य परिग्रह के दस प्रकार हैं—(1) क्षेत्र, (2) वस्तु, (3) हिरण्य, (4) सुवर्ण, (5) धन, (6) धान्य, (7) द्विपद-चतुष्पद, (8) दास-दासी, (9) कुप्य, (10) धातु।

परिग्रहरूपी महावृक्ष—अनन्त तृष्णा रूपी इच्छाएँ वृक्ष का मूल है। लोभ, क्रोध आदि कषाय इसके विशाल महास्कध हैं। सैंकड़ो प्रकार की चिन्ताएँ, शोक-सताप इसकी फैलती हुई शाखाएँ हैं। ऋद्धि, रस और साता रूप गौरव इसकी शाखाओ की अग्र टहनियाँ हैं। ठगाई, छल, दभ, कपट इस वृक्ष की छाल, पत्ते और फूल हैं। कलह, खेद, शारीरिक श्रम इसका अग्र शिखर है।

इस परिग्रह को अधर्म महावृक्ष की उपमा दी गई है। यह वृक्ष राजा-महाराजाओ, देवताओ द्वारा पूजित है।

—सूत्र 93, पृ. 220

DEFINING PARIGRAHA (COVETOUSNESS)

The illustration shows objects of covetousness

To have fondness and craving for a variety of possessions like gems, gold, wife, son, daughter, family, slaves, servants, bed, chair, vehicle, dresses, perfumes, ornaments, and buildings is called parigraha or covetousness External Parigraha is of ten types - (1) Area, (2) things, (3) silver, (4) gold, (5) money, (6) grains, (7) bipeds and quadrupeds (8) slaves, (9) utensils, and (10) metals

Great tree of parigraha – Infinite cravings and desires are the roots of the tree of Parigraha Passions including greed and anger form its great trunk Hundreds of worries, grief and pain are its spreading branches Wealth, taste, pleasure and pride are its smaller branches Cheating, deceit, ego, and slight are its bark, leaves and flowers Quarrel, sorrow and physical labour are its top

This parigraha is given the metaphor of the tree of sin Kings, monarchs and divine beings worship this tree

— Sutra-93, page-220

ऐसा यह परिग्रह (रूप वृक्ष) राजा-महाराजाओ द्वारा भलीभाँति आदर पाया हुआ है, अनेक लोगो को अत्यन्त प्यारा लगता है और मोक्ष के निर्लोभता रूप मार्ग के लिए यह अर्गला के समान है। अर्थात् परिग्रह मुक्ति का बाधक है।

ऐसा यह अन्तिम आस्रव परिग्रह रूप अधर्मद्वार है।

93. [2] The wants and desires are unlimited There is no end to them They are the root of such a tree which provides bad fruit Its great trunk is greed, quarrel, passions and the like Its continuously spreading branches are worries of hundreds of types and mental anxiety Its stalks at the tips of large branches are prosperity, pleasure and worldly enjoyment Its bark, leaves and flowers are deceit that cheats others, ego and crookedness

The amorous worldly enjoyments are its flowers and fruit. Its upper trembling part is the physical effort, the mental distress and quarrelsome attitude

Such a tree of attachment (parigraha) is treated with honour by great rulers and kings Many people love it very much It is like a hinderance (a speed breaker) in the path of selflessness that leads to liberation (moksha) In fact attachment is an obstacle to salvation

Such is parigraha, the last asrava (inflow of Karma).

विवेचन अब्रह्म के साथ परिग्रह का सम्बन्ध बतलाते हुए श्री अभयदेव सूरि ने टीका मे लिखा है-परिग्रह के होने पर ही अब्रह्म आस्रव होता है, अतएव अब्रह्म के अनन्तर परिग्रह का निरूपण किया जाना आवश्यक है।

सूत्र का आशय सुगम है। साराश इतना ही है कि नाना प्रकार की मणियो, रत्नो, स्वर्ण आदि मूल्यवान् अचेतन वस्तुओ का, हाथी, अश्व, दास-दासियो, नौकर-चाकरो आदि का, रथ-पालकी आदि सवारियो का, नग (पर्वत) नगर आदि से युक्त समुद्र पर्यन्त सम्पूर्ण भरत क्षेत्र का, यहाँ तक कि सम्पूर्ण पृथ्वी के अखण्ड साम्राज्य का उपभोग कर लेने पर भी मनुष्य की तृष्णा शान्त नही होती है। **'जहा लाहो तहा लोहो'** ज्यो-ज्यो लाभ होता जाता है, त्यो-त्यो लोभ अधिकाधिक बढता जाता है। अतएव परिग्रह की वृद्धि करके जो सन्तोष प्राप्त करना चाहते है, वे आग मे घी होमकर उसे बुझाने का प्रयत्न करना चाहते है। लोभ को शान्त करने का एक मात्र उपाय है शौच-निर्लोभता-मुक्ति धर्म का आचरण।

परिग्रह का अर्थ है, किसी वस्तु के प्रति ममत्वभाव। आगम मे कहा है-**मुच्छा परिग्गहो वुत्तो**-मूर्च्छा परिग्रह है। परिग्रह के दो भेद है-अन्तरग परिग्रह तथा बाह्य परिग्रह। अथवा भाव परिग्रह और द्रव्य परिग्रह। अन्तरग परिग्रह १४ प्रकार का है-

१ मिथ्यात्व	२ राग	३ द्वेष	४ क्रोध
५ मान	६ माया	७ लोभ	८ हास्य

९ रति   १० अरति   ११ शोक   १२ भय
१३ जुगुप्सा   १४ वेद

मिथ्यात्व आदि ने आत्मा को अनादिकाल से पकड रखा है। ये भाव परिग्रह है। इन्ही के कारण बाह्य वस्तुओ, जैसे–शरीर, वस्त्र, धन, स्त्री आदि पर मोह या ममत्वभाव, मेरापन जागता है। जब अन्तरग मे परिग्रह बुद्धि होती है तभी बाह्य वस्तुएँ परिग्रह बनती है। शास्त्र मे बाह्य परिग्रह के निम्नोक्त १० प्रकार बताये है–

१. **क्षेत्र**–खेत आदि खुली भूमि आदि।

२. **वस्तु**–रहने के भवन आदि।

३ **हिरण्य**–चाँदी आदि के सिक्के।

४ **सुवर्ण**–सोना (सोने के आभूषण आदि)।

५. **धन**–हीरा, पन्ना, मणि, मोती, पैसा, रुपया आदि।

६ **धान्य**–गेहूँ, चावल आदि अनाज।

७. **द्विपद–चतुष्पद**–दो पैर वाले मनुष्य तथा चार पैर वाले गाय, भैस आदि पशु।

८ **दासी–दास**, नौकर चाकर–सेविकाए आदि।

९ **कुप्य**–सोने–चाँदी के अतिरिक्त वस्त्र, बर्तन, अलमारी आदि सभी प्रकार का सामान।

१० **धातु**–चाँदी, ताँबा, लोह आदि धातु।

बाह्य परिग्रह का विस्तृत रूप **'णाणा मणि'**–पद से मूल पाठ मे बताया गया है।

इस परिग्रह को अधर्म वृक्ष की उपमा दी है। तृष्णा इस वृक्ष की जड है। विस्तृत स्पष्ट वर्णन मूल पाठ मे बताया जा चुका है।

Elaboration—Narrating the link of attachment with non-chastity, Shri Abhayadev Suri in his commentary has said, 'Non-chastity occurs only as the result of attachment so it is necessary to narrate it after non-chastity'

The purport of this aphorism is quite simple It simply proves that the desire for worldly things of a human being do not cool down A man may have many types of precious stones, jewels, gold and other precious material things, he may have servants, employees and others, he may have chariots and the like to ride, he may have a large area containing hills and town extending upto the sea under his control; he may enjoy the kingdom extending upto the whole earth, but his wants shall never subdue With gain, greed increases further So the persons who want to have contentment along with increase in belongings, their condition is such as that of a person who wants to extinguish fire adding ghee to it

The only method to subdue greed is to adopt the spirit of selflessness (non-attachment) in one's life

Parigraha means attachment towards a thing. In Agams it is said 'Muchha pariggaho vuttaa, it means deep attachment is parigraha Parigraha is of two types—inner parigraha and external parigraha. Inner parigraha (attachment) is of fourteen types —

1 Wrong belief (mithyatva), 2 Attachment, 3 Hatred, 4. Anger, 5 Ego, 6 Crookedness (deceit), 7 Greed, 8 Laughter, 9. Pleasure in worldly things, 10 Displeasure in restraints, 11. Sadness, 12 Fear, 13 Jealousy, 14 Feelings for opposite sex

The self is attached to the above, such as wrong belief and the like, since beginningless period Such an attitude is parigraha As a result of it one has attachment or feeling of my-ness towards his physical body, clothes, money, wife and suchlike When there is the attitude of attachment in the inner self, only then the external objects come within the ambit of parigraha In scriptures external parigraha is of ten types These are as under

1 Land — open area

2 Building (Vastu) — Place to live in

3 Silver (Hiranya) — Silver and coins

4 Gold (Swarn) — Gold and gold ornaments

5 Valuables (Dhan) — Jewels, pearls, diamonds etc

6 Grains (Dhanya) — Wheat, rice and others

7 Two legged and four legged living beings (men, cow, buffalo)

8 Servants, employees

9 Utensils (Kupya) — Garments, pots, safe and other things

10 Metals — Silver, copper, iron etc

The detailed description of external parigraha has been given in the original text.

This parigraha has been compared with a tree Desire is the root of this tree It has been discussed clearly and in detail in the text

९४. तस्स य णामाणि गोण्णाणि होंति तीसं, तं जहा—१. परिग्गहो, २. संचयो, ३. चयो, ४. उवचयो, ५. णिहाणं, ६. संभारो, ७. संकरो, ८. आयरो, ९. पिंडो, १०. दव्वसारो, ११. तहा महिच्छा, १२. पडिबंधो, १३. लोहप्पा, १४. महद्दी, १५. उवकरणं, १६. संरक्खणा य, १७. भारो, १८. संपाउप्पायओ, १९. कलिकरंडो, २०. पवित्थरो, २१. अणत्थो, २२ संथवो, २३. अगुत्ति, २४. आयासो, २५. अविओगो, २६. अमुत्ती, २७ तण्हा, २८. अणत्थओ, २९. आसत्ती, ३० असंतोसो त्ति वि य, तस्स एयाणि एवमाईणि णामधिज्जाणि होंति तीसं।

९४. उस परिग्रह नामक अधर्म के गुणनिष्पन्न अर्थात् उसके गुण–स्वरूप को अथवा परिग्रह के व्यापक रूप को प्रकट करने वाले तीस नाम है। वे नाम इस प्रकार है–

१ **परिग्गहो**–शरीर, धन, धान्य आदि पदार्थो को ममत्व बुद्धि से ग्रहण करना।

२ **संचयो**–किसी भी वस्तु को अधिक मात्रा मे सग्रह करना।

३. **चयो**–भविष्य मे मिले या नही, इस आशका से वस्तुओ को एकत्र करना।

४ **उपचयो**–प्राप्त पदार्थो की वृद्धि करना।

५. **णिहाण**–धन को भूमि मे गाडकर रखना, तिजोरी मे रखना या बैक मे जमा करवाकर रखना, दबाकर–छुपाकर रख लेना।

६ **संभारो**–धान्य वस्त्र आदि वस्तुओ को अधिक मात्रा मे भरकर रखना।

७ **सकरो**–भिन्न–भिन्न प्रकार के पदार्थो को मिलाकर रखना। यहाँ इसका विशेष अभिप्राय है–कोई बहुमूल्य वस्तु को जल्दी जान न सके और ग्रहण न कर सके। कीमती मूल्यवान पदार्थो मे अल्पमूल्य वस्तु मिलाकर रखना।

८. **आयरो**–पर–पदार्थो मे आदरबुद्धि रखना, शरीर, धन आदि को अत्यन्त प्रीतिभाव से सँभालना आदि।

९ **पिंडो**–किसी पदार्थ का या विभिन्न पदार्थो का ढेर करना, उन्हे लोभवश एकत्रित करना।

१० **दव्वसारो**–द्रव्य अर्थात् धन को ही सारभूत समझना। धन को प्राणो से भी अधिक मानना।

११ **महिच्छा**–असीम इच्छा या असीम इच्छा का कारण।

१२ **पडिबधो**–किसी पदार्थ के साथ बँध जाना। स्त्री, धन आदि के मोह मे जकड जाना, उसे छोडना चाहकर भी छोड न पाना भावनात्मक प्रतिबन्ध है।

१३. **लोहप्पा**–लोभ ही जिसका स्वभाव है।

१४ **महद्दी**–बडी–बडी आकाक्षा करना अथवा याचना करना।

१५. **उवकरणं**–जीवनोपयोगी साधन–सामग्री उपकरण है। आवश्यकता का विचार न करके अनापसनाप साधन–सामग्री एकत्र करते रहना।

१६. **संरक्खणा य**–प्राप्त पदार्थों का आसक्तिपूर्वक सरक्षण करना।

१७. **भारो**–परिग्रह जीवन के लिए सबसे बडा भारभूत है।

१८. **संपाउप्पायओ**–परिग्रह नाना प्रकार के उपद्रवो तथा सकल्पो–विकल्पो का उत्पादक है।

१९ **कलिकरंडो**–कलह का पिटारा। कलह, युद्ध, वैर, विरोध, सघर्ष आदि का प्रमुख कारण परिग्रह है। अतएव इसे 'कलह का पिटारा' नाम दिया गया है।

२०. **पवित्थरो**–धन–धान्य आदि का विस्तार। व्यापार–धन्धा आदि का चारो तरफ फैलाव करना परिग्रह का रूप है।

२१. **अणत्थो**–परिग्रह नानाविध अनर्थों वध–बन्धनादि दुष्परिणामो अथवा अनर्थों का मूल है।

२२ **संथवो**–सस्तव का अर्थ है परिचय, बारम्बार निकट का सम्बन्ध। सस्तव मोह एव आसक्ति को बढाता है।

२३ **अगुत्ति**–अपनी इच्छाओ या कामनाओ का गोपन न करना, उन पर नियन्त्रण न रखकर स्वच्छन्द छोड देना।

'अगुप्ति' के स्थान पर कही 'अकीर्ति' नाम उपलब्ध होता है। परिग्रह अपकीर्ति–अपयश बदनामी का कारण बनता है।

२४. **आयासो**–आयास का अर्थ है–खेद या प्रयास। परिग्रह जुटाने के लिए मानसिक और शारीरिक खेद होता है, प्रयास करना पडता है। अत इसे आयास कहा जाता है।

२५ **अविओगो**–विभिन्न पदार्थो के रूप मे–धन, मकान या दुकान आदि के रूप मे जो परिग्रह एकत्र किया है, उसे बिछुडने न देना। चमडी चली जाये पर दमडी न जाये, ऐसी मनोवृत्ति।

२६ **अमुत्ती**–मुक्ति अर्थात् निर्लोभता। उसका न होना अर्थात् लोभ की वृत्ति होना। यह मानसिक भाव परिग्रह है।

२७. **तण्हा**–तृष्णा का सामान्य अर्थ है–अप्राप्त पदार्थों की लालसा और प्राप्त वस्तुओ की वृद्धि की अभिलाषा। तृष्णा ही परिग्रह का मूल है।

२८. **अणत्थओ**–परिग्रह का एक नाम 'अनर्थ' पहले बताया जा चुका है। वहाँ अनर्थ का आशय उपद्रव या दुष्परिणाम से था। यहाँ 'अनर्थक' का अर्थ 'निरर्थक' है। पारमार्थिक हित और सुख के लिए परिग्रह निरर्थक–निरुपयोगी है। अथवा जो जीवन निर्वाह के लिए आवश्यक न हो उसका सग्रह करना निरर्थक होता है।

२९. **आसत्ती**–गहरी ममता, मूर्च्छा, गृद्धि–ये सभी परिग्रह के रूप है।

३०. **असंतोसो**–मन मे बाह्य पदार्थों के प्रति सन्तुष्टि न होना। भले ही पदार्थ उपलब्ध न हो परन्तु अन्त मे यदि 'असन्तोष' है तो वह भी परिग्रह है।

94. There are thirty synonyms of the impiety called aparigraha based on its basic attributes They express the extent of parigraha They are as under

1. **Parigraha**—To keep cash, material things and even one's body with feeling of attachment

2. **Sanchaya**—To store things much more than one's need

3. **Chaya**—To store things with a feeling that he may or may not get them in future

4. **Upachaya**—To increase the quantity of things one possesses

5. **Nidhaan (Treasure)**—To keep mony buried underground, in safe, in bank or in any other concealed manner

6. **Sambhaar**—To keep greater stock of food grains, clothes and the like

7. **Sankar**—To collect and store different things Here the purpose is that the other person may not easily be able to locate the precious thing and may not take it away. With this attitude to mix a thing of much lesser value in a thing of greater value

8. **To care more than necessary (Aadar)**—To have sense of care in other things To have extremely great care of ones body, money and the like

9. **Pind**—To have heap like stock of a thing or of different things To collect them out of greed

10. **Dravyasaar**—To consider money as the essence of life To consider money more important than one's life

11. **Mahechha**—Cause of extreme unlimited desire

12. **Pratibandh**—To become attached to a thing To get deeply bound to a woman or money out of delusion Not to discard it even if one wants to discard it.

13. **Lobhatma**—One whose very nature is greed

14. **Mahaddika**—To have very great ambition or to beg for a thing

15. Upakaran—Things needed in daily life are called upakaran To go on collecting such things without calculating actual need

16. Sanrakshana—To safeguard the articles one possesses with a feeling of great attachment

17 **Bhaar**—Parigraha is the greatest load (hurdle) in life.

18. Sampatotpadak—Parigraha gives rise to many types of troubles and ill thoughts.

19. Kali-Karand—It is the box of quarrels The main cause of war, enmity, opposition or fight is parigraha

20. Pravistar—It lies in extending the stock of money, food grains and the like To extend one's trade or business in all direction is a form of parigraha.

21. Anarth—Parigraha is at the root of many types of calamities, killings and the like or suchlike troubles.

22. Sanstav—Sanstav means introduction; a closer contact. Sanstav increases delusion and attachment.

23. Agupti or Akirti—To conceal one's desire or lust Not to keep them under control but to allow them full freedom. In some texts the term akirti is found instead of agupti.

Parigraha is the cause of disrespect so it is called Apakirti also.

24. Aayaas (to make effort)—To collect items of external parigraha one has to make great mental and physical effort He has to keep on contemplating or worrying about it

25. Aviyog—Not to allow money, house, shop and other suchlike things which one has collected, to go astray To have such attitude that one may undergo physical serious trouble but not loss money

26. Amukti—Mukti means selflessness. Not to have it means to have greed Such a mental attitude is parigraha

27. Trishna—Ordinary meaning of Trishna is to have a keen desire to have such things, which one does not have and to increase the number of substances one has Such a desire (Trishna) is the very root of parigraha

28. Anarthak—Earlier the word was anarth, which means ill result. Here it is anarthak, which means nirarthak or worthless. Parigraha is of

no use for having the ecstatic pleasure of salvation the lasting welfare of the soul

29. Aasakti—Deep attachment, total absorption – all this is parigraha

30. Asantosh—Not to feel satisfied in the mind with the external things Even if one does not have such things, if there is feeling of dissatisfaction in the mind at the end, it is parigraha

देव एव मनुष्यगण भी परिग्रह के पाश मे बँधे है **GODS AND HUMANS VICTIMS OF PARIGRAHA**

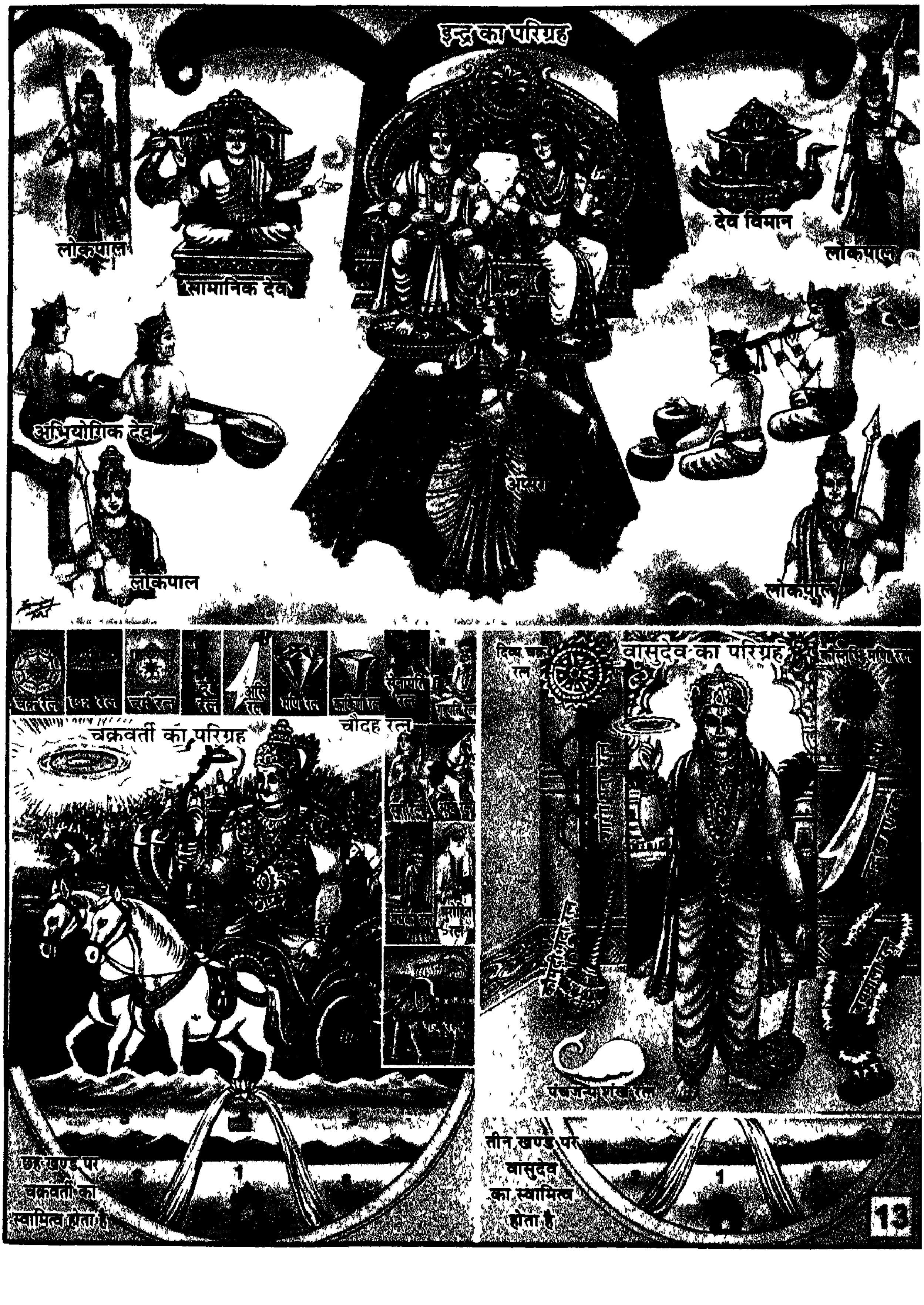
९५. तं च पुण परिग्गहं ममायंति लोहघत्था भवणवर–विमाण–वासिणो परिग्गहरुई परिग्गहे विविहकरणबुद्धी देवणिकाया य असुर–भुयग–गरुल–विज्जु–जलण–दीव–उदहि–दिसि–पवण–थणिय–अणवण्णिय–पणवण्णिय–इसिवाइय–भूयवाइय–कंदिय–महाकंदिय–कुहंड–पयंगदेवा पिसाय–भूय–जक्ख–रक्खस–किण्णर–किंपुरिस–महोरग–गंधव्वा य तिरियवासी। पंचविहा जोइसिया य देवा बहस्सई–चंद–सूर–सुक्क–सणिच्छरा राहु–धूमकेउ–बुहा य अंगारका य तत्ततवणिज्जकणयवण्णा जे य गहा जोइसिम्मि चारं चरंति, केऊ य गइरईया अट्ठावीसइविहा य णक्खत्तदेवगणा णाणासंठाणसंठियाओ य तारगाओ ठियलेस्सा चारिणो य अविस्साम–मंडलगई उवरिचरा।

उड्ढलोयवासी दुविहा वेमाणिया य देवा सोहम्मी–साण–सणंकुमार–माहिंद–बंभलोय–लंतक–महासुक्क–सहस्सार–आणय–पाणय–आरण–अच्चुया कप्पवरविमाणवासिणो सुरगणा, गेविज्जा अणुत्तरा दुविहा कप्पाईया विमाणवासी महिड्ढिया उत्तमा सुरवरा।

एवं च ते चउव्विहा सपरिसा वि देवा ममायति भवण–वाहण–जाण–विमाण–सयणासणाणि य णाणाविहवत्थभूसणापवरपहरणाणि य णाणामणिपंचवण्णदिव्वं य भायणविहिं णाणाविहकामरूवे वेउव्वियअच्छरगणसंघाते दीव–समुद्दे दिसाओ विदिसाओ चेइयाणि वणसंडे पव्वए य गामणयराणि य आरामुज्जाणकाणणाणि य कूव–सर–तलाग–वावि–दीहिय–देवकुल–सभप्पव–वसहिमाइयाइं बहुयाइं कित्तणाणि य परिगिण्हित्ता परिग्गहं विउलदव्वसारं देवावि सइंदगा ण तित्तिं ण तुट्ठिं उवलभंति।

अच्चंत–विउललोहाभिभूयसत्ता वासहर–इक्खुगार–वट्ट–पव्वय–कुडल–रुयग–वरमाणुसोत्तर–कालोदहि–लवण–सलिल–दहपइ–रइकर–अंजणक–सेल–दहिमुह–ओवाउप्पाय–कंचणक–चित्त–विचित्त–जमकवरिसिहरिकूडवासी।

वक्खार–अकम्मभूमिसु सुविभत्तभागदेसासु कम्मभूमिसु जे वि य णरा चाउरंतचक्कवट्टी वासुदेवा बलदेवा मंडलीया इस्सरा तलवरा सेणावई इब्भा सेट्ठी रट्ठिया पुरोहिया कुमारा दंडणायगा माडंबिया सत्थवाहा कोडुंबिया अमच्चा एए अण्णे य एवमाई परिग्गहं संचिणंति।


इन्द्र का परिग्रह
लोकपाल
सामानिक देव
देव विमान
लोकपाल
अभियोगिक देव
लोकपाल
लोकपाल
चक्र रत्न
छत्र रत्न
चर्म रत्न
मणि रत्न
काकिणी रत्न
सेनापति रत्न
चौदह रत्न
चक्रवर्ती का परिग्रह
वासुदेव का परिग्रह
दिव्य चक्र रत्न
कौस्तुभ मणि रत्न
पांचजन्य शंख रत्न
छह खण्ड पर चक्रवर्ती का स्वामित्व होता है
तीन खण्ड पर वासुदेव का स्वामित्व होता है

चित्र-परिचय 13

Illustration No. 13

परिग्रह के जाल में फँसे देवगण, चक्रवर्ती एवं वासुदेव

देवों का परिग्रह—महान ऋद्धि सम्पन्न इन्द्र और सामानिक देव भी अपनी-अपनी परिषद् के साथ परिग्रह में अत्यन्त आसक्त रहते हैं। वे देव-भवन, वाहन, यान, विमान, शयन, आसन और विविध प्रकार के वस्त्राभूषण, उत्तमकोटि के शस्त्र, पाँच प्रकार के वर्ण वाली दिव्य मणियो के समूह और इच्छानुसार विविध प्रकार के मोहक रूप बनाने वाली अप्सराओ, अपने अभियोगिक देवो आदि पर ममत्व भाव रखते हैं।

चक्रवर्ती का परिग्रह—चारो दिशाओ और भरत क्षेत्र के छह खण्डो पर अधिकार रखने वाले चक्रवर्ती भी अपने चौदह रत्नो और नव निधियो पर ममत्व रखते हैं और परिग्रह मे आसक्त रहते हैं।

वासुदेव का परिग्रह—भरत क्षेत्र के तीन खण्डो पर अधिकार रखने वाले वासुदेव भी अपने दिव्य चक्ररत्न, धनुष, गदा, शख, खड्, मणि, जयमाला आदि रत्नो पर ममत्व रखते हैं और परिग्रह मे मूर्च्छा भाव रखते हैं।

—सूत्र 95, पृ 230

GODS, CHAKRAVARTIS AND VASUDEVS ENTRAPPED IN PARIGRAHA

Covetousness of gods – Glorious Indra and other Samanik gods along with their assembly are intensely attached to their possessions They are very fond of their mansions, vehicles, celestial-vehicles, beds, seats, variety of dresses and ornaments, special weapons, heaps of multi-coloured gems, goddesses capable of changing appearance at will, and attendant gods

Possessions of Chakravartis – A chakravarti, the lord of four directions and six divisions of Bharat Area is also very fond of his fourteen jewels and nine treasures He too is intensely attached to his possessions

Possessions of Vasudevs – A Vasudev, the lord of three divisions of Bharat area, is also attached to his Divine Disc (Chakra Ratna), bow, mace, conch-shell, sword, gems and garland of victory He too is intensely attached to his possessions

— Sutra-95, page 230

अणंत असरणं दुरंतं अधुवमणिच्चं असासयं पावकम्मणेम्मं अवकिरियव्वं विणासमूलं वहबंधपरिकिलेसबहुलं अणंतसंकिलेसकारणं, ते तं धणकणगरयणणिचयं पिंडिया चेव लोहघत्था संसारं अइवयंति सव्वदुक्खसंणिलयणं।

९५. परिग्रह के लोभ से ग्रस्त–लालच के जाल मे फँसे हुए, परिग्रह मे रुचि रखने वाले, श्रेष्ठ भवनो मे और विमानो मे निवास करने वाले (भवनवासी एव वैमानिक देव) ममत्वपूर्वक इसे ग्रहण करते है। नाना प्रकार से परिग्रह को सचित करने की बुद्धि वाले देवो के समूह–निकाय, यथा–असुरकुमार, नागकुमार, सुपर्णकुमार, विद्युत्कुमार, ज्वलन (अग्नि) कुमार, द्वीपकुमार, उदधिकुमार, दिक्कुमार, पवनकुमार, स्तनितकुमार (ये दस प्रकार के भवनवासी देव) तथा अणपन्निक, पणपन्निक, ऋषिवादिक, भूतवादिक, क्रन्दित, महाक्रन्दित, कूष्माण्ड और पतग (ये आठ प्रकार व्यन्तरनिकाय के अन्तर्गत देव) और (पिशाच, भूत, यक्ष, राक्षस, किन्नर, किम्पुरुष, महोरग एव गन्धर्व, ये आठ प्रकार के महर्द्धिक व्यन्तर देव) तथा तिर्यक्लोक–मध्यलोक मे विचरण करने वाले पाँच प्रकार के ज्योतिष्क देव, बृहस्पति, चन्द्र, सूर्य, शुक्र और शनैश्चर, राहु, केतु, बुध, (तपाये हुए स्वर्ण जैसे वर्ण वाला–मगल), और अगारक, केतु अन्य जो भी ग्रह ज्योतिष्वक्र मे सचरण करते है, तथा गति मे प्रीति अनुभव करने वाले, अट्ठाईस प्रकार के नक्षत्र देवगण, नाना प्रकार के सस्थान–आकार वाले तारागण, स्थिर कान्ति वाले अर्थात् मनुष्य क्षेत्र–अढाई द्वीप से बाहर स्थिर रहने वाले ज्योतिष्क और मनुष्य क्षेत्र के भीतर सचरण करने वाले, जो तिर्यक् लोक के ऊपरी भाग मे (समतल भूमि से ७९० योजन से लगाकर ९०० योजन तक की ऊँचाई मे) रहने वाले तथा अविश्रान्त–लगातार–बिना रुके वर्तुलाकार गति करने वाले है (ये सभी देव परिग्रह मे आसक्त रहते है)।

(इनके अतिरिक्त) ऊर्ध्वलोक मे निवास करने वाले वैमानिक देव दो प्रकार के है–कल्पोपपन्न और कल्पातीत। सौधर्म, ईशान, सनत्कुमार, माहेन्द्र, ब्रह्मलोक, लान्तक, महाशुक्र, सहस्रार, आनत, प्राणत, आरण और अच्युत, ये उत्तम कल्प–विमानो मे वास करने वाले–कल्पोपपन्न है। (इनके ऊपर) नौ ग्रैवेयको और पाँच अनुत्तर विमानो मे रहने वाले दोनो प्रकार के देव कल्पातीत है। ये विमानवासी (वैमानिक) देव महान् ऋद्धि के धारक, श्रेष्ठ सुरवर है।

ये चारो निकायो के (देव), अपनी–अपनी परिषद् (परिवार) सहित परिग्रह मे मूर्च्छाभाव रखते है। 'ये मेरे है' इस प्रकार की ममत्व बुद्धि रखते है। ये सभी देव भवन, हस्ती आदि वाहन, रथ आदि अथवा विमान आदि यान, पुष्पक आदि विमान, शय्या, भद्रासन, सिहासन प्रभृति आसन, विविध प्रकार के वस्त्र एव उत्तमोत्तम शस्त्रास्त्रो को, अनेक प्रकार की मणियो से बने पचरगी दिव्य भाजनो–पात्रो को, वैक्रियलब्धि से इच्छानुसार रूप बनाने वाली कामरूपा अप्सराओ के समूह को और द्वीपो, समुद्रो, पूर्व आदि दिशाओ, ईशान आदि विदिशाओ, चैत्य वृक्षो, वनखण्डो और पर्वतो को, ग्रामो और नगरो को, आरामो, उद्यानो–और जगलो को, कूप, सरोवर, तालाब, बावडी, लम्बी बावड़ी, देवालय, सभा, प्रपा और बस्ती को और बहुत–से स्तुतियोग्य धर्मस्थानो को ममत्वपूर्वक स्वीकार करते है। इस प्रकार विपुल

विशिष्ट द्रव्य वाले परिग्रह को ग्रहण करके भी इन्द्रो सहित देवगण को तृप्ति और सन्तुष्टि का अनुभव नही होता।

सब देव अत्यन्त तीव्र लोभ से अभिभूत सज्ञा वाले है, अत हेमवन्त, महाहिमवन्त आदि वर्षधर पर्वतो, **इषुकार**–(धातकीखण्ड और पुष्करवर द्वीपो को विभक्त करने वाले दक्षिण और उत्तर दिशाओ मे लम्बे) पर्वत, **वृत्तपर्वत**–(शब्दापाती आदि गोलाकार पर्वत), **कुण्डल**–(जम्बूद्वीप से ग्यारहवे कुण्डल नामक द्वीप मे कुण्डलाकार) पर्वत, **रुचकवर**–(पन्द्रहवे रुचक नामक द्वीप मे मण्डलाकार रुचकवर नामक पर्वत), **मानुषोत्तर**– (मनुष्यक्षेत्र की सीमा निर्धारित करने वाला) पर्वत, कालोदधिसमुद्र, लवणसमुद्र, गगा आदि महानदियाँ, पद्म, महापद्म आदि ह्रद–सरोवर, **रतिकर पर्वत**–(आठवे नन्दीश्वर नामक द्वीप के कोण मे स्थित झालर के आकार के चार पर्वत), अजनक पर्वत (नन्दीश्वर द्वीप के चक्रवाल मे रहे हुए कृष्ण वर्ण के पर्वत), **दधिमुख पर्वत**–(अजनक पर्वतो के पास की सोलह पुष्करणियो मे स्थित १६ पर्वत), **अवपात पर्वत**–(वैमानिक देव मनुष्य क्षेत्र मे आने के लिए जिन पर उतरते है), **उत्पात पर्वत**–(भवनपति देव जिनसे ऊपर उठकर मनुष्य क्षेत्र मे आते है–वे तिगिछ कूट आदि), **काचनक**– (उत्तरकुरु और देवकुरु क्षेत्रो मे स्थित स्वर्णमय पर्वत), **चित्र–विचित्र पर्वत** (निषध नामक वर्षधर पर्वत के निकट शीतोदा नदी के किनारे चित्रकूट और विचित्रकूट नामक पर्वत), **यमकवर**–(नीलवन्त नामक वर्षधर पर्वत के समीप के शीता नदी के तट पर स्थित दो पर्वत), **शिखरी**–(समुद्र मे स्थित गोस्तूप आदि पर्वत) **कूट**–(नन्दनवन के कूट) आदि मे रहने वाले ये देव भी असीम परिग्रह के सुख–भोग से तृप्ति और सतुष्टि का अनुभव नही कर पाते है। (फिर अन्य प्राणियो का तो कहना ही क्या ! वे परिग्रह से कैसे तृप्त हो सकते है ?)

वक्षस्कार पर्वतो (विजयो को विभक्त करने वाले चित्रकूट आदि पर्वत) मे तथा अकर्मभूमियो मे (हैमवत आदि भोगभूमि के क्षेत्रो मे) और भलीभाँति विभक्त प्रदेश वाली भरत, ऐरवत आदि पन्द्रह कर्मभूमियो मे जो भी मनुष्य निवास करते है, जैसे–चक्रवर्ती, वासुदेव, बलदेव, माण्डलिक राजा (मण्डल के अधिपति महाराजा), ईश्वर–युवराज, बडे–बडे ऐश्वर्यशाली लोग, तलवर (राज–सम्मानित मस्तक पर स्वर्णपट्ट बाँधे हुए राजस्थानीय), सेनापति, इभ्य (हस्ति प्रमाण स्वर्ण राशि के स्वामी), श्रेष्ठी (श्री देवता द्वारा अलकृत चिह्न को मस्तक पर धारण करने वाले सेठ), राष्ट्रिक (राष्ट्र अर्थात् देश की उन्नति–अवनति के विचार के लिए नियुक्त अधिकारी), पुरोहित (शान्तिकर्म करने वाले), राजकुमार, दण्डनायक (कोतवाल), माडम्बिक (मडम्ब के अधिपति–छोटे राजा), सार्थवाह (अनेक छोटे व्यापारियो आदि को साथ लेकर विदेश यात्रा करने वाले बडे व्यापारी), कौटुम्बिक (बडे कुटुम्ब के प्रधान या गाँव के मुखिया) और अमात्य (मत्री), ये सब और इनके अतिरिक्त अन्य जो भी मनुष्य है, वे सब परिग्रह का सचय करते है।

वह परिग्रह अनन्त है–जिसका कोई अन्त या परिमाण नही है। जो किसी को भी शरण देने मे समर्थ नही है। अर्थात् दु ख से रक्षा करने मे असमर्थ है, दु:खमय अन्त वाला है, अस्थिर एव प्रतिक्षण विनाशशील होने से अशाश्वत है, पापकर्मों का मूल है, ज्ञानीजनो के लिए त्याज्य है, विनाश का मूल

कारण है, वध और बन्धन का कारण है, अर्थात् परिग्रह के कारण जीवो को वध-बन्धन-क्लेश-परिताप उत्पन्न होता है अथवा परिग्रह स्वय परिग्रही के लिए वध-बन्धन आदि नाना प्रकार के घोर क्लेश का कारण बन जाता है, इस प्रकार वे पूर्वोक्त देव आदि धन, कनक, रत्नो आदि का संचय करते हुए लोभ से ग्रस्त होते है और समस्त प्रकार के दु खो के केन्द्र इस संसार मे परिभ्रमण करते हैं।

95. Bhavanavasi celestial beings and those living in Vimans who are greedy and have an interest in attachment to wealth get involved in it with great keenness Such celestial beings have an interest in collecting various types of worldly things Those gods are ten type of Bhavanpati gods namely Asur Kumar, Nag Kumar, Suparn Kumar, Vidyut Kumar, Agni (Jvalan) Kumar, Dveep Kumar, Udadhi Kumar, Dik Kumar, Pawan Kumar, Stanit Kumar and eight types of Vyantar gods namely Annapannik, Panapannik, Rishivadik, Bhootvadik, Krandit, Mahakrandit, Kooshamand and Patang, eight types of opulent Vyantar gods namely Pishach, Bhoot, Yaksh, Rakshas, Kinnar, Kimpurush, Mahorag and Gandharva In the Madhya (middle) world (Tiryak Lok), there are five types of Jyotishk gods namely Brihaspati, Moon, Sun, Planets such as Brihaspati, Shukra, Saturn, Rahu, Ketu, Budh, molten gold-like Mars (Mangal), Angarak and Ketu, constellations and stars, which move in the Jyotishk circle The twenty eight types of celestial beings of constellations and the star gods of different shape that spread stable light as they remain static outside the human area while within the human inhabited two and a half dveep, they move They are located in the space between 790 yojans and 900 yojans higher from the levelled ground They move in circle continuously All these celestial beings are attached to their mundane wealth

In addition, the gods in heavens are of two types—Kalpopapanna and Kalpateet. Saudharm, Ishan, Sanat Kumar, Mahendra, Brahmlok, Lantak, Mahashukra, Sahasrar, Aanat, Pranat, Aaran, Achyut reside in their heavenly abodes They are Kalpopapanna Above them, there are nine Graiveyaks, and gods living in five Anuttar vimans. All these gods are Kalpateet (without any distinction in status) All these gods who reside in Vimans possess great wealth and are prominent among gods.

These four types of gods remain in a state of attachment with their family and their cabinet They have feeling of possessiveness. They have attachment in their bhawans, elephants, means of transport, chariots, Vimans such as Pushpak, beds, seats, clothes of various types, weapons,

divine pots studded with many types of precious stones in five colours, the lusty fairies they create with their fluid power, continents, seas, the directions such as east and others, sub-directions, holy trees, forests, hills, villages, towns, gardens, orchards, forests, wells, tanks, lakes, long lakes, temples, assembly halls, colonies and many famous religious places Thus even after possession of such great wealth, the celestial beings including their masters (Indras) do not have a feeling of satisfaction

All the celestial beings experience a state of delusion due to their extreme greed Some gods reside in Himavant, Mahahimavant mountains, long mountains that divide Dhataki region and Pushkaravar continent in southern and northern direction, round Shabdapati mountains, Kundal mountain which is in the Kundal dveep—the eleventh from Jambu dveep in the shape of ear ring, spherical Ruchakavar mountain which is in thirteenth Ruchak dveep Manushottar mountain that determines the limits of area inhabited by human beings, Kalodadhi Sea, Lavan Sea, great rivers like Ganga, great lakes like Padma, Mahapadma, four Ratikar mountains which are located at the corner of Nandishvar dveep like a margin, black mountains called Anjanak mountains lying within the area of Nandishvar dveep, sixteen Dadhimukh mountains situated near sixteen lakes close to Anjanak mountains, Avapat mountains where Vaimanik gods get down for coming to the world inhabited by human beings, Utpat mountains such as Tiginchh Koot from where the bhavanpati gods go up in order to come to human world, golden kanchanak mountains located in Devakuru and Uttarkuru areas, two yamkar mountains located at the bank of Sita river flowing near Neelavant mountain, two Chitrakoot and Vichitrakoot mountains at the bank of Sitoda river near Nishadh mountain, Shikhari—the Gostup mountain located in the sea, Khoot—the koots of Nandan forest These gods also do not feel fully satisfied with the unlimited possessions and means of enjoyment they have When such living beings do not feel satisfied with their possessions how then the other living beings can attain satisfaction

Human beings reside in Vakshaskar mountains such as Chitrakoot mountain and others that divide the Vijayas There are human beings in Akarma areas such as Haimavat and others Fifteen Karma Bhoomis

such as Bharat, Airavat and others are also inhabited by men like Chakravati, Vasudev, Baladeva, Mandlik Kings, Crown princes; many prosperous people, persons honoured by the state (having gold ornament on their forehead as a mark of that honour), commandar in chiefs, rich people having wealth upto the height of an elephant, noblemen (who wear the emblem given to them by the king—the god of wealth), the state officials (appointed to look after the welfare and to save the country from decline), traders (who move out for business with other small traders), headmen of villages or heads of large families and ministers All these people and suchlike others also collect more and more articles that increase their attachment

Parigraha (attachment in worldly objects) has no end It is not capable of helping anyone It is incapable of saving people from misery Its end is also painful It is unstable. It is not permanent as it is destroyed every moment. It is the fundamental cause of all sins It is worthy to be discarded by the person learned in scriptures It is the cause of killing and bondage People experience trouble, pain, hurt and bondage because of the feeling of attachment (parigraha) Attachment itself becomes the cause of dreadful quarrels leading to killings and bondage for the persons involved in it Thus the above-mentioned celestial beings and the prosperous human beings, who collect and store money, gold and jewels remain engrossed in greed They move in this world, which is full of all type of troubles

विवेचन . प्रस्तुत पाठ से यह स्पष्ट ध्वनित होता है कि अब्रह्मचर्य की तरह परिग्रह ने भी सभी ससारी प्राणियो को अपने जाल मे फँसा रखा है। ऊँची से ऊँची श्रेणी के देव जिन्हे मन इच्छित कामभोग प्राप्त हैं, वे भी आसक्ति और ममत्वरूप परिग्रह से बँधे है। यद्यपि यहा चारो निकाय के देवो को परिग्रही बताया है फिर भी पञ्चम स्वर्ग–ब्रह्मलोक के अन्त मे सारस्वत, आदित्य, वह्नि, अरुण, गर्दतोय, तुषित, अव्याबाध और अरिष्ट, ये पूर्वोत्तर आदि आठ दिशाओ मे निवास करने वाले लोकान्तिक देव प्राय एक भव–मनुष्यजन्म धारण करके मोक्ष पाते हैं, ये परिग्रह के प्रति अत्यल्प ममत्व रखते है। तीर्थंकर–प्रभु जब विरक्त होकर मुनिदीक्षा धारण करने के अभिमुख होते है, तब ये लोकान्तिक देव उन्हे प्रतिबोधित करने आते है। ये देवर्षि होते हैं, जिनवाणी के ज्ञाता और अध्येता होते है। ये अपनी समस्त आयु प्राय इसी प्रकार के उत्तम चिन्तन–मनन मे व्यतीत कर देते है। इसी प्रकार अनुत्तरविमानवासी देवो का भी मोह उपशान्त होता है। इसलिए चारो निकाय के देवो मे इन्हे परिग्रह के बारे मे अपवाद समझना चाहिए। मानवो मे षट्खण्ड चक्रवर्ती सम्राट् १६ हजार देव जिसकी सेवा करते हैं और छह खण्ड के विशाल साम्राज्य का स्वामी होता है वह भी इस आसक्ति और ममत्व से ग्रस्त सदा असतुष्ट और अतृप्त ही रहता है।

परिग्रह का वास्तविक स्वरूप प्रकाशित करने के लिए शास्त्रकार ने उसे **'अणंतं असरणं दुरंतं'** कहने के साथ **'अधुवमणिच्चं, असासयं, पावकम्मणेम्मं, विणासमूल, वहबंधपरिकिलेसबहुलं, अणंततंकिलेसकारणं, सव्वदुक्खसंनिलयण'** इत्यादि विशेषणो द्वारा परिग्रह की व्यापकता, अस्थिरता और सब प्रकार के अनर्थों व पापो का मूल कारण बताया है।

परिग्रह से उत्पन्न होने वाले विविध प्रकार के मानसिक सक्लेश शारीरिक यातनाएँ अनुभवसिद्ध है और समग्र लोक इनका साक्षी है। अतएव शास्त्रकार ने परिग्रह को अनन्त सक्लेश का कारण कहा है।

अन्तिम पाठ मे शास्त्रकार यही बताते हैं कि परिग्रह की सीमा अनन्त है। इसको सीमित करने के लिए सन्तोष और विरक्ति की जरूरत है। जिसने परिग्रह त्याग कर विरति ले ली वही लोभरूपी महाशत्रु को जीतता है और सभी प्रकार के दु खो से मुक्त होता है।

Elaboration—The present lesson clearly indicates that like non-chastity, attachment also has kept the living beings in this mundane world in its grip. Even the gods of high categories who have desired means of enjoyment and who are capable of creating the things they like with their fluid power, are bound in the chains of attachment Among the human beings Chakravarti is the ruler of all the six parts of Bharat or Airavat He has 16,000 gods at his service He also remains always not fully satisfied due to his attachment for wealth and the family

In order to indicate the real nature of parigraha, the author has called it 'Anant Asarnam durantam' and also 'adhuvamanichcham, asasyam, pavakammanemam, vinasamulam, vahabandhparikilesabahulam, anantsankilesakaranam, savvadukhasannilayanam' With these characteristics he has brought home that attachment (parigraha) is the fundamental cause of all the sins and misfortunes and that it is prevalent all over and keeps one restless

One experiences the mental distress and physical troubles as a result of this attachment The entire world is witness to it So it is mentioned in scriptures that parigraha is the cause of mundane troubles.

In the last aphorism, the author has mentioned that there is no limit to attachment Contentment and detachment are essential to bring it within limits only then a person can conquer his great enemy, the greed He then becomes liberated of all troubles.

९६. परिग्गहस्स य अट्ठाए सिप्पसयं सिक्खए बहुजणो कलाओ य बावत्तरिं सुणिउणाओ लेहाइयाओ सउणरुयावसाणाओ गणियप्पहाणाओ, चउसट्ठिं च महिलागुणे रइजणणे, सिप्पसेवं, असि-मसि-किसि-वाणिज्जं, ववहारं अत्थसत्थईसत्थच्छरुप्पगयं, विविहाओ य जोगजुंजणाओ, अण्णेसु एवमाइएसु बहुसु कारणसएसु जावज्जीवं णडिज्जए संचिणंति मंदबुद्धी।

परिग्गहस्सेव य अट्ठाए करंति पाणाण-वहकरणं अलिय-णियडिसाइसंपओगे परदव्वाभिज्जा सपरदारअभिगमणासेवणाए आयासविसूरणं कलहभंडणवेराणि य अवमाणणविमाणणाओ इच्छामहिच्छप्पिवाससययतिसिया तण्हगेहिलोहघत्था अत्ताणा अणिग्गहिया करेंति कोहमाणमायालोहे।

अकित्तणिज्जे परिग्गहे चेव होंति णियमा सल्ला दंडा य गारवा व कसाया सण्णा य कामगुण-अण्हगा य इंदियलेस्साओ सयणसंपओगा सचित्ताचित्तमीसगाइं दव्वाइं अणंतगाइं इच्छंति परिघेत्तुं।

सदेवमणुयासुरम्मि लोए लोहपरिग्गहो जिणवरेहिं भणिओ णत्थि एरिसो पासो पडिबंधो अत्थि सव्वजीवाणं सव्वलोए।

९६. परिग्रह के लिए बहुत लोग सैकडो प्रकार के शिल्प या हुनर तथा उच्च श्रेणी की-निपुणता उत्पन्न करने वाले लेखन से लेकर पक्षियो की बोली तक की, गणित आदि बहत्तर कलाएँ सीखते है तथा नारियाँ रति उत्पन्न करने वाले चौसठ महिलागुणो-कलाओ को सीखती है। कोई शिल्प द्वारा बडे लोगो की सेवा करते है। कोई असिकर्म-तलवार आदि शस्त्रो को चलाने का अभ्यास करते है, कोई मसिकर्म-लिपि आदि लिखने की शिक्षा लेते है, कोई कृषि कर्म, खेती करते है, कोई वाणिज्य-व्यापार सीखते है, कोई व्यवहार अर्थात् विवाद के निपटारे की, न्यायशास्त्र की शिक्षा लेते है। कोई अर्थशास्त्र-राजनीति आदि की, कोई धनुर्वेद आदि शास्त्र एव छुरी आदि शस्त्रो को पकडने और चलाने की शिक्षा लेते है। कोई अनेक प्रकार के वशीकरण आदि योगो की शिक्षा ग्रहण करते है। इसी प्रकार परिग्रह के सैकडो कारणो-उपायो मे प्रवृत्त होकर मनुष्य आजीवन विडम्बना पाते है। परिग्रह के गुलाम बनकर नाचते है वे मन्दबुद्धि परिग्रह का सचय करने मे लगे रहते है।

परिग्रह के लिए लोग प्राणियो की हिंसा करते है, झूठ बोलते है, दूसरो को ठगते है, निकृष्ट घटिया वस्तु की मिलावट करके उत्कृष्ट दिखलाते है और पराये द्रव्य मे लालच करते है। स्वदार-गमन मे शारीरिक एव मानसिक खेद का तथा परस्त्री की प्राप्ति न होने पर मानसिक पीडा का अनुभव करते है। परिग्रह के लिए कलह-विवाद लडाई तथा वैर-विरोध करते है, अपमान तथा यातनाएँ सहन करते है और चक्रवर्ती आदि के समान बडी-बडी इच्छाओ की पिपासा से निरन्तर प्यासे बने रहते है। तृष्णा प्राप्त-अप्राप्त द्रव्य की प्राप्ति की लालसा पदार्थों सम्बन्धी गृद्धि-आसक्ति तथा लोभ मे ग्रस्त रहते है। वे त्राणहीन अपनी इन्द्रियो तथा मन पर किसी प्रकार के नियत्रण नही करके क्रोध, मान, माया और लोभ मे रचे-पचे रहते है।

इस सर्वत्र निन्दनीय परिग्रह मे ही तीनो शल्य-(१) मायाशल्य, (२) मिथ्यात्वशल्य, और (३) निदानशल्य पैदा होते है, इसी मे तीन दण्ड-(१) मनोदण्ड, (२) वचनदण्ड, और (३) कायदण्ड-

अपराध पैदा होते है-(१) ऋद्धि, (२) रस, तथा (३) साता रूप तीन गौरव-सम्पत्ति, गरिष्ट भोज्य पदार्थों एव सुख-साधनो की प्राप्ति का अहकार उत्पन्न होता है, क्रोधादि चार कषाय होते है। इसी मे आहारसज्ञा, भयसंज्ञा, मैथुनसज्ञा और परिग्रह नामक चारो सज्ञाएँ होती है, इन्द्रियो के शब्दादि विषय तथा हिंसादि पाँच आस्रवद्वार, इन्द्रियविकार तथा कृष्ण, नील एव कापोत नामक तीन अशुभ लेश्याएँ होती है। परिग्रह के कारण ही स्वजनो के साथ सयोग सम्बन्ध होते है। और परिग्रहवान् असीम-अनन्त सचित्त, अचित्त एव मिश्र-द्रव्यो को ग्रहण करने की इच्छा करते है।

देवो, मनुष्यो और असुरो सहित इस त्रस-स्थावररूप जगत् मे जिनेन्द्र भगवन्तो-तीर्थंकरो ने (पूर्वोक्त स्वरूप वाले) लोभ-परिग्रह का प्रतिपादन किया है। (वास्तव मे) परिग्रह के समान ससार मे अन्य कोई दूसरा फंदा पाश व प्रतिबन्ध नही है।

96. Many persons learn arts of hundreds of types for parigraha (increasing attachment to wealth) In order to gain expertise of highest quality, they learn seventy two arts of men which include art of writing, mathematics and learning the language of birds Women learn sixty four arts that produce sensual enjoyment With the help of such education, they serve the elite Some persons train themselves in handling swords and other weapons Some learn the art of writing Some learn agriculture Some learn trade and commerce Some learn law to dispense justice Some learn economics, political science while some get military training Some learn astrology to overcome effect of constellations Thus by engaging themselves in hundreds of suchlike causes of parigraha, many people remain disturbed throughout their life They remain slaves of attachment They have low intellect They remain engaged in increasing wealth that causes attachment

People cause violence to living beings due to attachment to wealth (parigraha) They tell a lie They cheat others They mix low quality substance and declare the mixture as of best quality They are greedy for property of others They experience physical weakness and mental agony in mating with their own wife They experience mental distress when they are unable to have the woman belonging to others They resort to quarrel and inimical behaviour due to this attachment for wealth They undergo troubles and dishonour. They remain continuously obsessed in efforts of satisfying their mighty desires and ambitions They remain engaged in craving what they do no have and the greed for it They are without any protection They have no control over their senses They remain engrossed in passions like anger, greed, ego and deceit

The three cursed thorns—namely crookedness, wrong faith or perception and desire of specific fruit of efforts (nidaan) arise due to this feeling of attachment which is condemned everywhere They lead to mental, vocal and physical punishment They feel pride in their wealth, enjoyments and comforts They remain in a state affected by four passions — anger, greed, ego and deceit They have desire for food, mating, attachment and also a sense of fear They are slave to the subject of their senses They engage in violence and the like—the gateway of inflow of Karmas They remain adversely affected by desire for sensual gratification They remain absorbed in adverse thought activity called black, blue and grey leshyas (thought reflection or thought colours) The family relationship develops due to parigraha (attachment). One who is deeply engaged in attachment, he has a desire to have living, non-living and mixed substances without any limit

In this world inhabited by celestial beings, human beings, demon-gods, mobile and immobile living beings, Tirthankars have laid a stress on greed (as mentioned above) in the form of attachment In reality, there is no other bondage more important and tight than parigraha (feeling of attachment)

विवेचन मूल पाठ मे बहत्तर कलाओ और चौसठ महिलागुणो का निर्देश किया गया है। कलाओ के नाम जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति वक्षस्कार २, रायपसेणिय आदि अनेक आगमो मे उल्लिखित है, उनका वर्णन कई बार किया जा चुका है। वस्तुत कलाओ की कोई सख्या निर्धारित नही हो सकती। समय-समय पर कलाओ की सख्या और स्वरूप बदलता रहता है। आधुनिककाल मे अनेक नवीन कलाओ का आविष्कार हुआ है। प्राचीनकाल मे जो कलाएँ प्रचलित थी, उनका वर्गीकरण, बहत्तर कलाएँ तथा महिलाओ के चौसठ गुणो के वर्णन मे किया गया है।

पुरुषो की बहत्तर कलाओ का तथा ६४ महिलागुणो का उल्लेख पढने पर प्राचीनकालीन शिक्षा-पद्धति एव जीवन-पद्धति का अच्छा चित्र हमारे समक्ष उभरकर आता है। आगमो से यह भी विदित होता है कि ये कलाएँ सूत्ररूप मे, अर्थरूप और प्रयोग से सिखलाई जाती थीं।

इस समग्र वर्णन का साराश यह है कि परिग्रह के लिए मनुष्य आजीवन विविध कार्य करता है, उसके लिए मथता है, मगर कभी तृप्त नही होता और अधिकाधिक परिग्रह के लिए तरसता-तरसता ही मृत्यु के शिकजे मे फँस जाता है।

Elaboration—In the original text seventy two arts of men and sixty four arts of women have been mentioned The names of these arts are mentioned in Vakshaskar 2 of Jambudveep Prajnapti, Raipaseniya Sutra and many other Agams In fact there is no definite limit of the number of arts The number and the nature of the arts change from time to time. In

the present age, many new arts have been invented The arts which were prevalent in the ancient period have been listed as 72 arts for men and 64 arts for women

One can have a good understanding of the education and way of life of the ancient period by going though these 72 arts of men and 64 arts of women It is also mentioned in the scriptures that the training in these arts was provided in those day

The very essence of this entire description is that man engages himself in different activities for parigraha (increasing his possessions and becoming attached to them) He makes all out efforts for them and never feels satisfied He tries more and more for it and in the process succumbs to death

परिग्रह पाप का कटुफल **BITTER FRUITS OF ATTACHMENT**

१७. परलोगम्मि य णट्ठा तमं पविट्ठा महयामोहमोहियमई तिमिसंधयारे तसथावरसुहुमबायरेसु पज्जत्तमपज्जत्तग–साहारण–पत्तेयसरीरेसु य अण्डय–पोयय–जराउय–रसय–संसेइम–सम्मुच्छिम–उब्भिय–उववाइएसु य णरय–तिरिय–देव–मणुस्सेसु जरामरणरोगसोगबहुलेसु पलिओवमसागरोवमाइं अणाइयं अणवयग्गं दीहमद्धं चाउरंतसंसारकंतारं अणुपरियट्टंति जीवा लोहवससण्णिविट्ठा। एसो सो परिग्गहस्स फलविवागो इहलोइओ परलोइओ अप्पसुहो बहुदुक्खो महब्भओ बहुरयप्पगाढो दारुणो कक्कसो असाओ वाससहस्सेहिं मुच्चइ ण अवेयइत्ता अत्थि हु मोक्खोत्ति।

एवमाहंसु णायकुलणंदणो महप्पा जिणो उ वीरवरणामधिज्जो कहेसी य परिग्गहस्स फलविवागं।

एसो सो परिग्गहो पचमो उ णियमा णाणामणिकणगरयण–महरिह एवं जाव इमस्स मोक्खवरमोत्तिमग्गस्स फलहभूओ।

चरिमं अहम्मदारं समत्तं। त्ति बेमि॥

१७. परिग्रह मे आसक्त प्राणी परलोक मे और इस लोक मे सुगति एव सुख–शान्ति को नष्ट कर देते है। (सन्मार्ग से भ्रष्ट हो जाते है) अज्ञानरूपी घोर अधकार मे डूबे रहते है। तीव्र मोहनीयकर्म के उदय से मोहित मति वाले विवेकशून्य हो जाते है। लोभ के वश मे पडे हुए जीव त्रस, स्थावर, सूक्ष्म और बादर पर्यायो मे तथा पर्याप्तक और अपर्याप्तक अवस्थाओ मे यावत् चार गति वाले ससार–कानन मे सतत परिभ्रमण करते रहते है।

परिग्रहरूप अधर्म का यह फलविपाक इस लोक और परलोक मे अल्प सुख और अत्यन्त दु ख प्रदान करने वाला है। घोर भय से परिपूर्ण है, गाढ कर्मबन्ध का कारण है, दारुण है, कठोर है और असाता (दु खो) का हेतु है। हजारो वर्षों मे अर्थात् बहुत दीर्घकाल के प्रयत्न पश्चात् इससे छुटकारा मिलता है। किन्तु इसके फल को भोगे बिना कदापि छुटकारा नही मिलता।

इस प्रकार ज्ञातकुलनन्दन महात्मा महावीर जिनेश्वर देव ने पूर्वोक्त परिग्रहरूप आस्रवद्वार कहा है। अनेक प्रकार की चन्द्रकान्त आदि मणियो, स्वर्ण, कर्केतन आदि रत्नो तथा बहुमूल्य अन्य द्रव्यरूप यह परिग्रह निर्लोभता सुखरूप मोक्षमार्ग के लिए अर्गला के समान प्रतिरोधक है।

इस प्रकार यह अन्तिम आस्रवद्वार समाप्त हुआ।

॥ पचम आस्रव द्वार समाप्त ॥

97. The persons deeply absorbed in feeling of attachment (parigraha) adversely affect their present life and also the next life, their happiness and the peace of mind They go astray from the right path They remain overpowered by the dreadful darkness of ignorance They lose sense of discrimination due to the effect of serious deluding Karma As a result of their greed, the mobile, immobile, subtle and gross living beings wander about in the mundane world of continuous chain of birth, death and rebirth consisting of four states of existence in various forms—complete and incomplete

Such result of adharm in the form of attachment provides very little happiness and extreme trouble in this life and in succeeding life It is full of dreadful fear It is the cause of thick bondage of Karma It is harsh, troublesome and cause of pain One can be free from this bondage only after serious efforts lasting for a very long period of thousands of years One can never discard it without experiencing its consequences

Bhagavan Mahavir has propounded that parigraha is a hurdle in the path of liberation This parigraha (attachment) leads to collection of many types of precious stones, gold, jewels and other valuables It dries up happiness Thus the last door of inflow is concluded

● END OF THE FIFTH CHAPTER ●

आस्रवद्वार का उपसंहार
CONCLUSION OF ASRAV DVAR

शास्त्रकार ने पूर्वोक्त पाँच अध्ययनो मे पाँच आश्रवो का वर्णन किया है। अब पाँच गाथाओ द्वारा उनका उपसहार करते है।

९८. एएहिं पंचहिं असंवरेहिं, रयमादिणित्तु अणुसमयं।
चउविहगइपेरंतं, अणुपरियट्टंति संसारे ॥१॥

९८. इन पूर्वोक्त (प्राणातिपात आदि) पाँच आस्रवद्वारो के निमित्त से जीव प्रतिसमय आत्म-प्रदेशो के साथ कर्मरूपी रज का सचय करके चार गतिरूप ससार मे परिभ्रमण करता रहता है।

The author has described five asravas (inflow of Karma) in the preceding five chapters Now he concludes them with five verses

98. A living being collects every moment the Karmic matter with the above said five gateways of asravas (inflow of Karma) namely violence to life force and others As a result thereof he wanders in the mundane world consisting of four states of existence

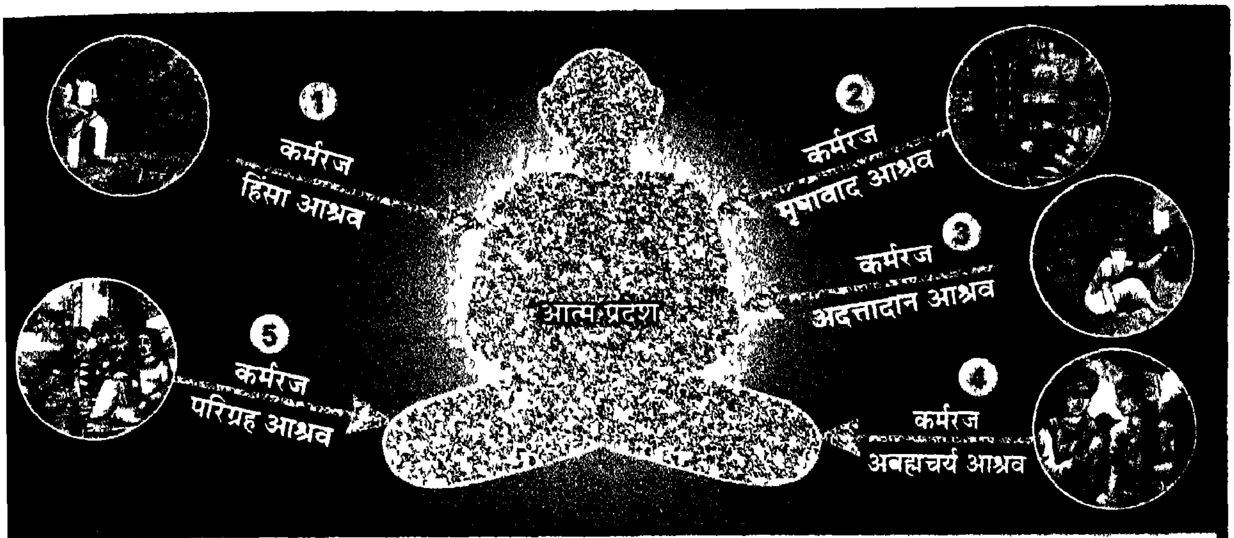
९९. सव्वगइपक्खंदे, काहिंति अणंतए अकयपुण्णा।
जे य ण सुणंति धम्मं, सोऊण य जे पमायंति ॥२॥

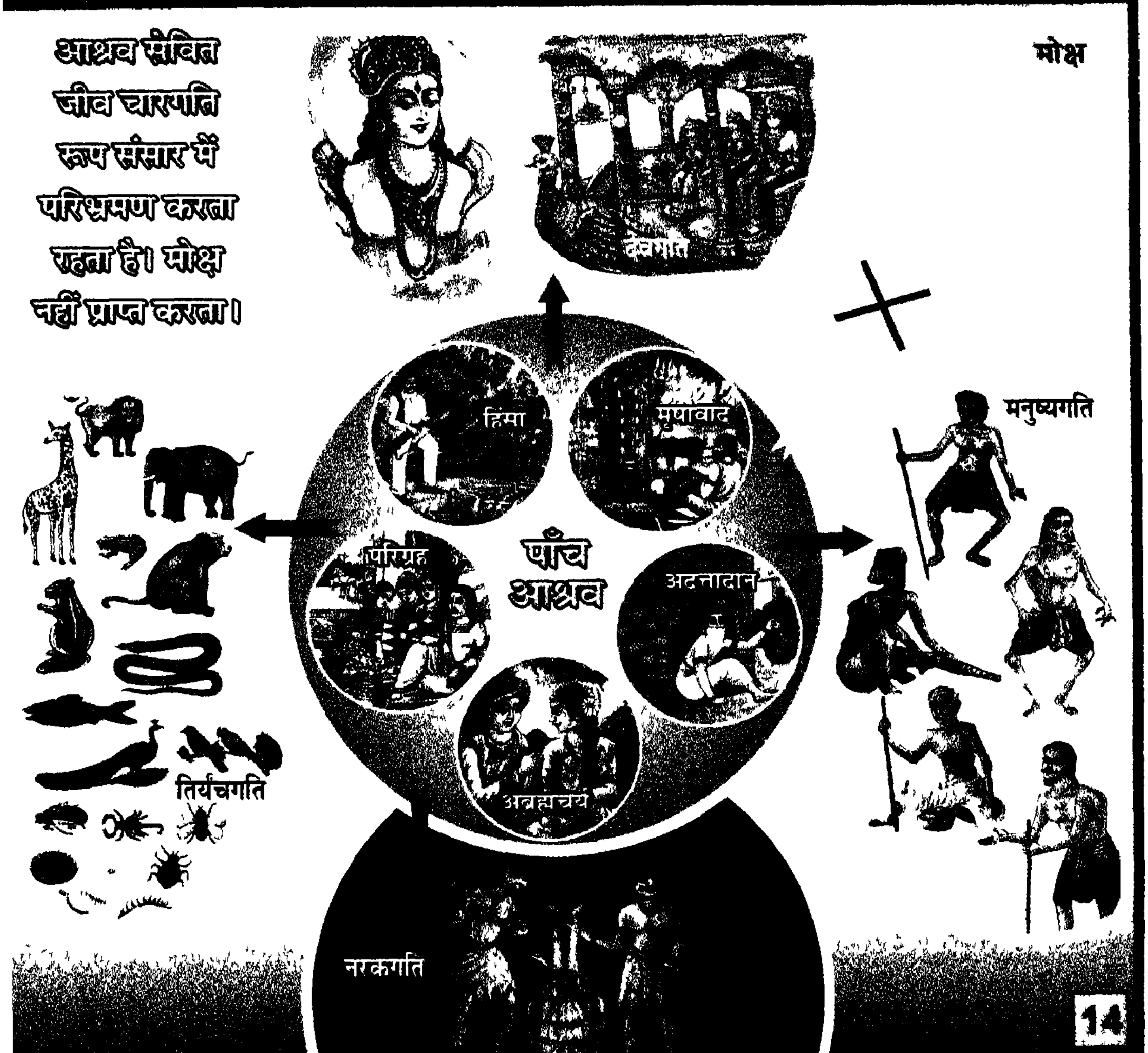
९९. जो आस्रवद्वारो का निरोध नही करते वे पुण्यहीन प्राणी धर्म का श्रवण नही कर पाते। अथवा श्रवण करके भी उसका आचरण करने मे प्रमाद करते है, व अनन्तकाल तक चार गतियो मे गमनागमन (जन्म-मरण) करते रहेगे।

99. Those unlucky persons who do not close the asrava dvars (inflow of Karma) cannot listen to scriptures Even if they listen to scriptures, they remain slack in putting them into practice They shall remain wandering in the mundane world of four states of existence for an infinite period

१००. अणुसिट्ठं वि बहुविहं, मिच्छदिट्ठिया जे णरा अहम्मा।
बद्धणिकाइयकम्मा, सुणंति धम्मं ण य करेंति ॥३॥

१००. जो पुरुष मिथ्यादृष्टि है, धर्म से हीन है, जिन्होने निकाचित (अत्यन्त प्रगाढ) कर्मो का बन्धन किया है, वे उत्तम गुरुजनो के पास अनेक तरह से शिक्षा (ज्ञान) पाकर, धर्म का श्रवण तो करते है किन्तु उसका आचरण नही कर सकते है।


1 कर्मरज हिंसा आश्रव
2 कर्मरज मृषावाद आश्रव
3 कर्मरज अदत्तादान आश्रव
4 कर्मरज अब्रह्मचर्य आश्रव
5 कर्मरज परिग्रह आश्रव
आत्म प्रदेश


आश्रव सेवित जीव चारगति रूप संसार में परिभ्रमण करता रहता है। मोक्ष नहीं प्राप्त करता।
मोक्ष
देवगति
हिंसा
मृषावाद
पाँच आश्रव
परिग्रह
अदत्तादान
अब्रह्मचर्य
मनुष्यगति
तिर्यंचगति
नरकगति

चित्र-परिचय 14

Illustration No. 14

आस्रवद्वार का उपसंहार

हिंसा, असत्य, चौर्य, अब्रह्मचर्य और परिग्रह– इन पाँचो आस्रवद्वार के निमित्त से आत्मा प्रतिसमय कर्मरूपी रज का संग्रह करके चार गतिरूप (नरक, तिर्यच, मनुष्य एव देव) संसार सागर मे परिभ्रमण करता रहता है। ऊपर के चित्र मे आस्रवो के माध्यम से आत्मा पर कर्म रज का सग्रह दिखाया है और नीचे के चित्र मे आस्रव सेवित आत्मा को चार गतिरूप ससार में परिभ्रमण करता बताया है। आश्रव सेवित जीव मोक्ष नहीं जा सकता।

—*सूत्र 98, पृ. 244*

CONCLUSION OF DOOR OF INFLOW

Violence, falsity, stealing, non-celibacy, and covetousness, these five doors of inflow of karma cause the soul to acquire Karmic dust every moment and as a consequence it continues to drift in the sea of the cycles of rebirth in four genuses (infernal, animal, human and divine) The illustrations at the top show this acquisition of karmic dust Those at the bottom show the entrapped soul moving about in four genuses A soul open to inflow of karmas does not get liberated

— ***Sutra-98, page-244***

100. There are persons who have wrong faith or wrong perception They are ignorant about dictum of scriptures They have collected Nikachit Karma (karmas the effect of which can never be avoided). Such persons may gain scriptural knowledge in different ways from the teachers But they cannot mould their conduct accordingly

१०१. किं सक्का काउं जे, णेच्छह ओसहं मुहा पाउं।

जिणवयणं गुणमहुरं, विरेयणं सव्वदुक्खाणं ॥ ४॥

१०१. जिन भगवान के वचन समस्त दु खो का नाश करने के लिए गुणयुक्त मधुर विरेचन - औषध के समान है, किन्तु नि स्वार्थ बुद्धि से दी जाने वाली इस औषध को जो पीना ही नही चाहते, उनके लिए क्या किया जा सकता है !

101. The sermon of Tirthankar is the sweat medicine having the quality of bringing an end to all the troubles But what can be done in case of those persons who do not want to make use of such a medicine although it is provided with an attitude of selflessness

१०२. पचेव य उज्झिऊण, पंचेव य रक्खिऊणं भावेणं।

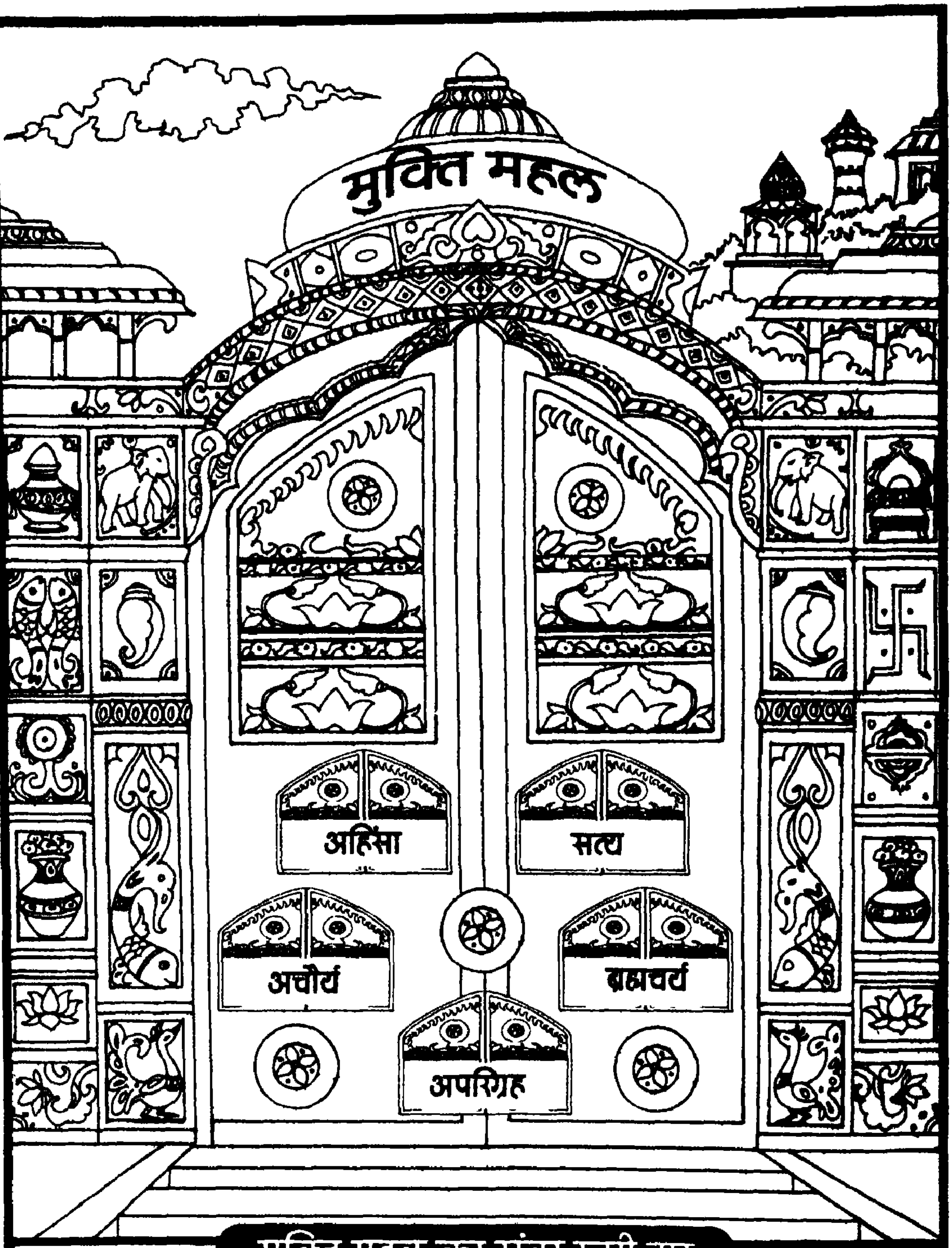
कम्मरय–विप्पमुक्कं, सिद्धिवर–मणुत्तरं जंति ॥ ५॥

१०२. जो प्राणी हिसा आदि पाँच आस्रवो को त्यागकर, अहिंसा आदि पाँच सवरो का भावपूर्वक पालन करते है, वे समस्त कर्मरूपी रज से सर्वथा रहित होकर सर्वोत्तम सिद्धि (मुक्ति) प्राप्त कर लेते है।

॥ आस्रवद्वार नामक प्रथम श्रुतस्कन्ध समाप्त ॥

102. Those persons attain the unique state of salvation, who discard five asravas namely violence and others and meticulously practice five samvars (stoppages of inflow of Karmas)

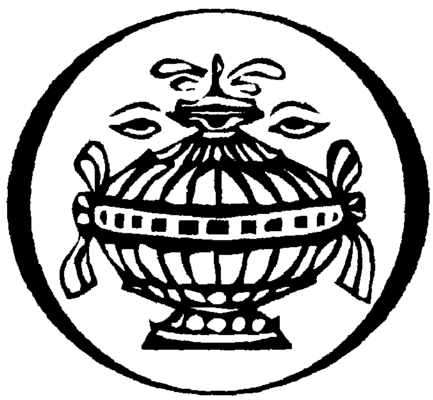
● FIRST SHRUT SKANDH CONCLUDED ●



मुक्ति महल का संवर रूपी द्वार

द्वितीय श्रुतस्कंध : संवरद्वार

Second Volume : GATEWAYS OF SAMVAR



संवरद्वार
GATEWAYS OF SAMVAR

प्रथम श्रुत स्कन्ध मे पाँच आश्रवो का विस्तृत विवेचन किया गया है। आश्रव का विपरीत सवर है। सवर का महत्त्व जाने बिना आश्रवो से विरक्ति नही हो सकती। इसलिये यहाँ सर्वप्रथम पाँच सवरो का दिग्दर्शन निम्नोक्त पाठो द्वारा कराया गया है।

Five Asravas (causes of inflow) have been discussed in detail in the first section (Shrutskandh) Samvar (blockage of inflow) is opposite of Asrava Without knowing the importance of Samvar apathy for Asravas cannot be attained That is why introduction of five samvars is given hereunder as the starting point

भूमिका **INTRODUCTION**

१०३. जंबू ! एत्तो संवरदाराइ, पंच वोच्छामि आणुपुव्वीए।
जह भणियाणि भगवया, सव्वदुक्खविमोक्खणट्ठाए॥ १॥

१०३. श्री सुधर्मा स्वामी कहते है-हे आयुष्मान् जम्बू ! अब मै उसी प्रकार पाँच सवरद्वारो का अनुक्रम से कथन करूँगा जिस प्रकार भगवान ने सर्वदु खो से मुक्ति पाने के लिए कहे है॥ १॥

103. Shri Sudharma Swami states, 'O Jambu ! I shall now tell you five gateways of Samvar (stoppage of inflow of Karma) in the very order as they have been narrated by Bhagavan Mahavir for salvation from all miseries (1)

१०४. पढमं होइ अहिंसा, बिइयं सच्चवयणं ति पण्णत्तं।
दत्तमणुण्णाय संवरो य, बंभचेर–मपरिग्गहत्तं च॥ २॥

१०४. (इन सवरद्वारो मे) प्रथम द्वार अहिंसा है, दूसरा सत्यवचन है, तीसरा स्वामी की आज्ञा से दिया हुआ और अनुमति प्रदत्त (अदत्तादानविरमणद्वार) है, चौथा ब्रह्मचर्य और पाँचवा परिग्रह त्याग रूप अपरिग्रह द्वार है॥ २॥

104. (Out of the gateways of Samvar), the first is Ahimsa (non-violence) The second is truth The third is to take only that which is given with the order and consent of its master The fourth is chastity (celibacy) and the fifth is non-attachment (aparigraha) or discarding the feeling of attachment (2)

१०५. तत्थ पढमं अहिंसा, तस–थावर–सव्वभूय–खेमकरी।
तीसे सभावणाओ, किंचि वोच्छं गुणुद्देसं॥३॥

१०५. इन सवरद्वारो मे प्रथम जो अहिंसा है, वह त्रस और स्थावर-समस्त प्राणियो का क्षेम-कुशल करने वाली है। मै पाँच भावनाओ सहित उस अहिंसा के गुणो का सक्षिप्त कथन करूँगा॥ ३॥

105. Of these gateways of Samvar the first, Ahımsa, ıs ınstrumental ın the well beıng of all lıvıng beıngs, mobıle and ımmobıle I wıll state ın brıef the attrıbutes of that Ahımsa alongwıth the five ıntrınsıc sentıments (3)

विवेचन ज्ञानावरणीय आदि आठ कर्मों के बन्ध का कारण आस्रव कहलाता है। आस्रव द्वारो को रोक देने का कार्य सवर कहलाता है। सवर के पाँच भेद कहे गये है- अहिंसा, सत्य, दत्तादान, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह। तीन गुप्ति, पाँच समिति, दस श्रमण धर्म, अनित्यत्व आदि बारह भावनाये ये सभी सवर के साधन है। अत इन सब सवरो को अहिसादि पाँच सवरो एव उनकी भावनाओ मे अन्तर्गत कर लिया गया है।

सरलतापूर्वक सवर का अर्थ समझाने के लिए एक उदाहरण दिया गया है-जिस प्रकार एक नौका अथाह समुद्र मे स्थित है। पानी मे पडा काष्ठ धीरे-धीरे गल जाने या जीर्ण हो जाने से नौका मे कुछ छिद्र हो गये और समुद्र का जल नौका मे प्रवेश करने लगा। जल के भार के कारण वह नौका कभी भी डूब सकती है। तब चतुर नाविक ने उन छिद्रो को देखकर उन्हे बन्द कर दिया। नौका के डूबने की आशका समाप्त हो गई। अब नौका सकुशल किनारे लग जायेगी।

इसी प्रकार इस ससार-सागर मे कर्म-वर्गणारूपी अथाह जल भरा है, अर्थात् सम्पूर्ण लोक मे अनन्त-अनन्त कार्मण-वर्गणाओ के सूक्ष्म पुद्गल ठसाठस भरे हुए है। उस अथाह जल के बीच मे आत्मारूपी नौका स्थित है। हिसा आदि आस्रवरूपी छिद्रो के द्वारा उसमे कर्मरूपी जल भरा जा रहा है। यदि उस जल को रोका न जाये तो कर्मों के भार से वह नौका एक दिन डूब जायेगी-अर्थात् आत्मा नरकादि अधोगति मे चली जायेगी। मगर विवेक ज्ञान-सम्पन्न नाविक कर्मागमन के कारणो को देखता है और उन्हे शीघ्र बन्द कर देता है, अर्थात् अहिंसा आदि के आचरण से हिंसादि आश्रवो को रोक देता है। जब आस्रव रुक जाते है, कर्मबन्ध के कारण समाप्त हो जाते है तो कर्मो का नवीन बन्ध रुक जाता है और आत्मारूपी नौका कुशलक्षेम ससार-सागर से पार पहुँच जाती है।

यहाँ इतना और समझ लेना चाहिए कि नवीन पानी के आगमन को रोकने के साथ ही नौका मे जो जल पहले भर चुका है, उसे भी उलीचकर हटा देना पडता है। इसी प्रकार जो कर्म पहले बँध चुके है, उन्हे निर्जरा द्वारा नष्ट करना आवश्यक है। किन्तु यह क्रिया सवर का नही, निर्जरा का विषय है। यहाँ केवल सवर का ही प्रतिपादन किया जा रहा है।

प्रथम गाथा मे प्रयुक्त **'आणुपुव्वीए'** पद से यह प्रकट किया गया है कि सवरद्वारो की प्ररूपणा अनुक्रम से की जायेगी। अनुक्रम द्वितीय गाथा मे स्पष्ट कर दिया गया है। प्रथम सवरद्वार अहिंसा है, दूसरा सत्य, तीसरा दत्त (अदत्तादानत्याग), चौथा ब्रह्मचर्य और पाँचवाँ अपरिग्रहत्व है। इनमे अहिसा को प्रथम स्थान दिया गया है, क्योकि अहिसा प्रधान और मूल व्रत है। सत्यादि चारो व्रत अहिसा की रक्षा के लिए है। निर्युक्तिकार ने कहा है-

निद्दिट्ठ एत्थ वय इक्कं चिय जिणवरेहिं सव्वेहिं।
पाणाइवायवेरमणमवसेसा तस्स रक्खट्ठा॥

अर्थात् समस्त तीर्थंकर भगवन्तो ने एक प्राणातिपातविरमणव्रत का ही कथन किया है। शेष (चार) व्रत उसी की रक्षा के लिए है।

अहिसा को 'तस–थावर–सव्वभूयखेमकरी' कहकर उसकी असाधारण महिमा प्रकट की गई है। अहिंसा प्राणीमात्र के लिए मगलमयी है, सब जीवो का क्षेम कल्याण करने वाली है।

Elaboration—It has been mentioned earlier that the cause of bondage of eight types of Karma such as knowledge obscuring Karma and others is called Asrava The antonym of Asrava is Samvar Samvar closes the gateways of asrava (inflow of Karma) Samvar is also of five types (non violence, truth, to take what is given, chastity and non-attachment) The methods of attaining Samvar are three guptis, five samitis, ten duties of a monk and twelve deep thought activities about real nature of the world such as its non-permanence and others So all this has been included in these five Samvars namely non-violence and others and their intrinsic sentiments

An illustration is narrated in order to make one understand easily the meaning of Samvar A boat is stationed in deep sea Slowly and gradually the wood of the boat gets damaged as it remained in sea for a long period So some holes appear in the boat and the water of the sea starts entering the boat Due to the weight of that water, the boat can sink any time The expert boatsman closed those holes when he saw them So the fear of sinking withered away Now boat will safely arrive at the bank

Similarly the water of Karma particles is in the sea of mundane existence In other words subtle Karmic molecules, infinite in number, are fully occupying the entire space in the world They are so subtle that they are invisible The soul in the form of boat is stationed in that sea The water of Karma has entered the said boat through the holes of non-violence and other Asravas If this inflow of water of Karma is not stopped, that boat shall sink one day In other words, the soul than shall go to the lower state of existence namely, hell But the person, who is equipped with the knowledge of discrimination, is watchful about the causes of inflow of Karmas He stops that inflow with practice of non-violence When the inflow of Karmic matter stops, the causes of bondage of Karma come to an end. So the new bondage of Karma stops Then the boat in the form of soul crosses the sea of wanderings in mundane world safely

Here one should further understand that simultaneously with the stopping of inflow of water in the boat one has to remove the water that has already entered the boat So it is essential to destroy the already collected Karma through Nirjara But that is the subject of nirjara and not of Samvar (stoppage of inflow) Here only Samvar is being discussed

The word anupuvviye in the first verse indicates that the gateways of Samvar shall be discussed in their respective order and that order has been classified in the second verse. First gateway of Samvar is non-violence, second is truth, third is what is given (to discard stealing), fourth is chastity and fifth is non-attachment In this order the first place is of non-violence because non-violence is the primary vow The other four vows namely truth and others are to assist it in its practice The commentator has also said All the Tirthankars have laid stress on the vow of avoiding violence to life force The other four vows are for its support

By calling Ahimsa (non-violence) as thavar-savrabhiya khemakari its unique importance has been depicted Ahimsa is meritorious for all the living beings It incorporates the protection and welfare of all

संवरद्वारों की महिमा IMPORTANCE OF SAMVAR

१०६. ताणि उ इमाणि सुव्वय ! महव्वयाइं लोयहियसव्वयाइं सुयसागर-देसियाइं तवसंजममहव्वयाइं सीलगुणवरव्वयाइं सच्चज्जवव्वयाइं णरय-तिरिय-मणुय-देवगइ-विवज्जगाइं सव्वजिणसासणगाइं कम्मरयविदारगाइं भवसयविणासगाइं दुहसयविमोयणगाइं सुहसयपवत्तणगाइं कापुरिसदुरुत्तराइं सप्पुरिसणिसेवियाइं णिव्वाणगमणसग्गप्पयाणगाइं संवरदाराइं पंच कहियाणि उ भगवया।

१०६. श्री सुधर्मा स्वामी अपने अन्तेवासी जम्बू स्वामी से कहते है-हे सुव्रत ! हे उत्तम व्रतो के धारक और पालक जम्बू ! पहले जिन नामो का उल्लेख किया जा चुका है ऐसे ये अहिंसादि पाँच महाव्रत समस्त लोक के लिए हितकारी है या लोक का सर्वहित करने वाले है। श्रुतरूपी सागर मे इनका वर्णन किया गया है। ये तप और सयमरूप व्रत है या इनमे तप एव सयम का कभी क्षय नही होता है। इन महाव्रतो मे शील और उत्तम गुणो का समूह सन्निहित है। सत्य और ऋजुता-सरलता-निष्कपटता इनमे मुख्य है। ये महाव्रत नरकगति, तिर्यचगति, मनुष्यगति और देवगति मे परिभ्रमण करने से रक्षा करने वाले है, अर्थात् मुक्ति को देने वाले है। समस्त तीर्थंकरो ने इनका उपदेश दिया है। ये कर्मरूपी रज का क्षय करने वाले है। सैकडो भवो-जन्म-मरणो का अन्त करने वाले है। सैकडो दु खो से छुटकारा दिलाकर सैकडो सुखो की प्राप्ति कराने वाले है। कायर पुरुषो के लिये इन महाव्रतो का निष्ठापूर्वक पालन करना दुष्कर है। सत्पुरुषो के द्वारा सेवित है, अर्थात् धीर-वीर पुरुषो ने इनका सेवन किया है

(सेवन करते है और करेगे)। ये मोक्ष मे जाने का सम्यक् मार्ग है, और सुगति मे पहुँचाने वाले है। ऐसे इन पॉच महाव्रत रूप सवरद्वार का कथन भगवान महावीर ने किया है।

106. Shri Sudharma Swami said to his disciple Jambu Swami, 'O Jambu ! The five great vows namely non-violence and other, which have been mentioned earlier are beneficial for the entire world The welfare of the universe is in their practice They have been narrated in the scriptures These vows are in the nature of austerities and self-restraint. They are never devoid of austerities and restraint They contain most important code of conduct Most prominent among them are truth and straight forwardness or non-crookedness They (the great vows) protect the living beings from wandering in hellish, animal, human and celestial state of existence In other words they lead one to salvation All the Tirthankars have stressed upon them in their teachings They destroy the Karmic dust attached to the soul They bring an end to hundreds of wanderings in births and deaths These vows save the living beings from hundreds of troubles and provide hundreds of pleasures. The courageous, noble and good natured persons have practiced them (practice them and shall practice) They are the true path leading to liberation. Bhagavan Mahavir has narrated them in detail

विवेचन सवरद्वारो को महाव्रत कहा गया है। किन्तु एक अपेक्षा से अणुव्रतो को भी सवर के अन्तर्गत माना है। श्रावको के पालन करने योग्य व्रत अणुव्रत कहलाते है। अणुव्रतो मे हिंसादि पापो का पूर्णतया त्याग नही होता-एक मर्यादा रहती है किन्तु महाव्रत कृत, कारित और अनुमोदना रूप तीनो करणो से तथा मन, वचन और काय रूप तीनो योगो से पालन किये जाते है। अणुव्रतो की अपेक्षा महान् होने से इन्हे महाव्रत कहा गया है।

इन महाव्रतो से सवर और निर्जरा-दोनो की सिद्धि होती है, अर्थात् नवीन कर्मों का आना भी रुकता है और पूर्वबद्ध कर्मों की निर्जरा भी होती है। सयम सवर का और तप निर्जरा का कारण है। मुक्ति-प्राप्ति के लिए सवर और निर्जरा दोनो अपेक्षित है। इसी तथ्य को स्पष्ट करने के लिए इन्हे **कर्म-रजविदारक** कहा गया है।

महाव्रतो को **भवशतविनाशक** भी कहा है, अर्थात् इनकी आराधना से बहुत से भवों-जन्म-मरणो का अन्त हो जाता है। इनकी आराधना से जीव दु खो से बच जाता है और सुखो को प्राप्त करने मे समर्थ होता है।

महाव्रतो या सवरो का वर्णन प्रत्येक महाव्रत की पाँच-पाँच भावनाओ सहित किया जायेगा। कारण यह है कि भावनाएँ एक प्रकार से व्रत का अग है और उनका अनुसरण करने से व्रतो के पालन मे सरलता होती है, सहायता मिलती है और व्रत मे पूर्णता आ जाती है। भावनाओ की उपेक्षा करने से व्रत-पालन मे बाधा आती है। अतएव व्रतधारी को व्रत की भावनाओ को भलीभाँति समझकर उनका यथावत् पालन करना चाहिए।

Elaboration—Here the gateways of Samvar (stoppage of inflow of Karma) is called great vows (Mahavrat) But in another context even minor vows (anuvrat) have been included in Samvar The vows laid down for the householder devotees (Shravaks) are called anuvrat In minor vows, the sins such as violence and other are not avoid completely They are avoided to a limited extent But the major vows are practiced mentally, vocally, physically in doing, getting done and also in supporting or appreciating activity being done Since great vows or major vows are very great as compared to minor vows they are called great vows (Mahavrat)

The great vows result in both Samvar (stoppage of inflow of new Karma) and nirjara (destruction of Karma already collected) Self-restraint is the cause of Samvar while austerity is the cause of nirjara To attain liberation, both Samvar and nirjara are necessary so they are called the sifters of Karma dust

Major (great) vows are also called destroyers of hundred of wandering in life-spans Their practice brings an end to many births and deaths A living being saves himself from hundreds of troubles by their practice He becomes capable of having many pleasures

The great vows or the Samvars shall be discussed along with five thought reflections of each vow This is because the thought reflections are in fact a part of the vows By following them, it becomes easy to practice the vows They assist in practice of the vows The vows then can be meticulously followed In case one ignores the thought reflections, he shall face difficulty in practicing the vows So the practitioner of vows should properly understand the relevant thought activities and practice them meticulously.

●●

प्रथम अध्ययन : अहिंसा
FIRST CHAPTER · AHIMSA

शास्त्रकार ने प्रथम सवरद्वार का प्रारम्भ करने से पूर्व उसकी भूमिका मे पाँचो सवरद्वारो के निरूपण का उद्देश्य, उनका स्वरूप, महत्त्व बताने के साथ उनमे अहिंसा सवर को सबसे प्रमुख मानने का कारण बताया है। अब यहाँ शास्त्रकार ने अपनी चिर परिचित शैली के अनुसार सर्वप्रथम अहिंसा भगवती के गुण निष्पन्न साठ नाम बताये है।

Before commencing the first Samvardvar, the author has detailed the purpose, definition and importance of all the five doors He has also mentioned in the introduction the reason for Ahimsa being the most important of these doors Now the author, in his known style, first of all gives sixty synonyms of Ahimsa derived from the attributes

अहिंसा भगवती के साठ नाम SIXTY SYNONYMS OF NON-VIOLENCE (AHIMSA)

१०७. तत्थ पढमं अहिंसा जा सा सदेवमणुयासुरस्स लोयस्स भवइ दीवो ताणं सरणं गई पइट्ठा।

१ णिव्वाणं २ णिव्वुई ३ समाही ४ सत्ती ५ कित्ती ६ कंती ७ रई य ८ विरई य ९ सुयंग १० तित्ती ११ दया १२ विमुत्ती १३ खंती १४ सम्मत्ताराहणा १५ महंती १६ बोही १७ बुद्धी १८ धिई १९ समिद्धी २० रिद्धी २१ विद्धी २२ ठिई २३ पुट्ठी २४ णंदा २५ भद्दा २६ विसुद्धी २७ लद्धी २८ विसिट्ठदिट्ठी २९ कल्लाणं ३० मंगलं ३१ पमोओ ३२ विभूई ३३ रक्खा ३४ सिद्धावासो ३५ अणासवो ३६ केवलीण ठाणं ३७ सिवं ३८ समिई ३९ सील ४० संजमो त्ति य ४१ सीलपरिघरो ४२ संवरो य ४३ गुत्ती ४४ ववसाओ ४५ उस्सओ ४६ जण्णो ४७ आययणं ४८ जयणं ४९ अप्पमाओ ५० अस्साओ ५१ वीसाओ ५२ अभओ ५३ सव्वस्स वि अमाघाओ ५४ चोक्ख ५५ पवित्ता ५६ सूई ५७ पूया ५८ विमल ५९ पभासा य ६० णिम्मलयर त्ति एवमाईणि णिययगुणणिम्मियाहं पज्जवणामाणि होंति अहिंसाए भगवईए।

१०७. उन (पूर्वोक्त) पाँच सवरद्वारो मे प्रथम सवरद्वार '**अहिंसा**' है। यह अहिंसा देवो, मनुष्यो और असुरो सहित समग्र लोक के लिए-**द्वीप** के समान आश्रय देने वाली है, शरण देने वाली है अथवा दीपक के समान ज्ञान का प्रकाश देने वाली है। **त्राण** है-ससार के विविध प्रकार के दु खो से पीडित जनो के लिए यही एकमात्र **गति** है, प्राप्त करने योग्य है तथा समस्त सद्‌गुण एव सुख इसी मे प्रतिष्ठित सन्निहित है। अहिंसा के गुण निष्पन्न नाम इस प्रकार है –

(१) **निर्वाण**–मुक्ति का कारण है।

(२) **निवृत्ति**–आत्मिक एव मानसिक स्वस्थतारूप है।

(३) **समाधि**–समता का कारण है।

(४) **शक्ति**–आध्यात्मिक शक्ति का कारण है। कहीं–कही **'सत्ती'** के स्थान पर 'संती' पद मिलता है, जिसका अर्थ है–शान्ति। अहिंसा मे समस्त विग्रह विरोध, समाप्त हो जाने से वह परम 'शान्ति' भी कहलाती है।

(५) **कीर्ति**–कीर्ति या प्रशसा का कारण है।

(६) **कान्ति**–अहिंसा के आराधक मे शारीरिक एव आत्मिक कान्ति–तेजस्विता उत्पन्न हो जाती है।

(७) **रति**–प्राणीमात्र के प्रति प्रीति, मैत्री, अनुरक्ति–आत्मीयता को उत्पन्न करने वाली है।

(८) **विरति**–पापो व दुष्कृत्यो से विरक्ति देने वाली है।

(९) **श्रुताङ्ग**–श्रुतज्ञान देने के कारण अर्थात् सत्–शास्त्रो के अध्ययन–मनन से अहिंसा उत्पन्न होती है, इस कारण इसे 'श्रुताग' कहा गया है।

(१०) **तृप्ति**–सन्तोषवृत्ति या तृप्ति भी अहिंसा का एक रूप है।

(११) **दया**–कष्ट पाते हुए, मरते हुए या दु खित प्राणियो की करुणाप्रेरित भाव से रक्षा करना, यथाशक्ति दूसरे के दु ख का निवारण करना अहिंसा का रूप है।

(१२) **विमुक्ति**–कर्म बन्धनो से पूरी तरह छुडाने वाली है।

(१३) **क्षान्ति**–क्षमा अथवा सहिष्णुता भी अहिसा का ही अग है।

(१४) **सम्यक्त्वाराधना**–सवेग, निर्वेद, अनुकम्पा और आस्थारूप सम्यक्त्व की आराधना–सेवना का कारण है।

(१५) **महती**–समस्त व्रतो मे या समस्त जगत् मे अहिसा महान्–प्रधान है।

(१६) **बोधि**–रत्नत्रयरूप बोधि का कारण है।

(१७) **बुद्धि**–बुद्धि को सार्थकता एव सफलता प्रदान करने वाली है।

(१८) **धृति**–चित्त की धीरता–दृढता है।

(१९) **समृद्धि**–मानसिक और आत्मिक–सब प्रकार की सम्पन्नता से युक्त है। जीवन को आनन्दित करने वाली है।

(२०) **ऋद्धि**–आत्मिक एव भौतिक ऋद्धि–प्राप्ति का कारण है।

(२१) **वृद्धि**–पुण्य–धर्म की एव दया आदि सद्‌गुणो की वृद्धि का कारण है।

(२२) **स्थिति**–मुक्ति मे प्रतिष्ठित करने वाली है।

(२३) **पुष्टि**–पाप का क्षय करके पुण्य वृद्धि के द्वारा जीवन को पुष्ट बनाने वाली है।

(२४) **नन्दा**–स्व और पर को आनन्द–प्रमोद प्रदान करने वाली है।

(२५) **भद्रा**–स्व का और पर का भद्र–कल्याण करने वाली है।

(२६) **विशुद्धि**–आत्मा को शुद्ध बनाने वाली है।

(२७) **लब्धि**–केवलज्ञान आदि समस्त लब्धियो का कारण है।

(२८) **विशिष्ट दृष्टि**–विचार और आचार मे अनेकान्त–प्रधान सम्यक् दृष्टि प्रदान करने वाली है।

(२९) **कल्याण**– शारीरिक एव मानसिक आरोग्य प्रदान करने वाली है / आत्मा का कल्याण करने वाली है।

(३०) **मंगल**–समस्त पापो का विनाश कर, सुख उत्पन्न करने वाली है।

(३१) **प्रमोद**–स्वय को तथा दूसरो को हर्ष उत्पन्न करने वाली है।

(३२) विभूति–समस्त आध्यात्मिक ऐश्वर्य का कारण है।

(३३) रक्षा–प्राणियो को दु ख से बचाने वाली है, आत्मा की पापो से रक्षा करने वाली है।

(३४) **सिद्धावास**–मुक्तिधाम मे पहुँचाने वाली, मोक्ष का हेतु है।

(३५) **अनास्रव**–आते हुए कर्मों का निरोध करने वाली है।

(३६) **केवलि–स्थानम्**–केवलियो के लिए स्थानरूप है। केवली सदा अहिंसाभाव मे स्थित रहते है।

(३७) **शिव**–सुख स्वरूप, समस्त उपद्रवो का शमन करने वाली है।

(३८) **समिति**–सम्यक् प्रवृत्ति है।

(३९) **शील**–सदाचार स्वरूप वाली है।

(४०) **सयम**–मन और इन्द्रियो की प्रवृत्ति का निरोध तथा जीवरक्षा रूप है।

(४१) **शीलपरिग्रह**–सदाचार अथवा ब्रह्मचर्य का घर है।

(४२) **सवर**–आस्रव का निरोध करने वाली है।

(४३) **गुप्ति**–मन, वचन, काय की असत् प्रवृत्तियो को रोकने वाली है।

(४४) **व्यवसाय**–विशिष्ट–उत्कृष्ट निश्चय या उत्कृष्ट सकल्परूप है।

(४५) **उच्छ्रय**–प्रशस्त भावो की उन्नति–वृद्धि करने वाली है।

(४६) **यज्ञ**–अभयदान, सेवा, करुणा, परोपकार रूप यज्ञ है। अथवा आत्मदेव की भाव पूजा है।

(४७) **आयतन**–समस्त सद्गुणो का स्थान या आश्रय है।

(४८) **जयना**–अहिंसा यतना रूप है। प्राणियों की रक्षा के प्रति जागरूक रहना। यह अभय दान दात्री है।

(४९) **अप्रमाद**–प्रमाद लापरवाही आदि का त्याग सतत जागरूकता है।

(५०) **आश्वास**–समस्त प्राणियो के लिए आश्वासन सान्त्वनारूप है। कष्ट मे धैर्य बधाने वाली है।

(५१) **विश्वास**–समस्त जीवो के विश्वास का कारण है।

(५२) **अभय**–प्राणियो को निर्भयता प्रदान करने वाली तथा आराधक को भी निर्भय बनाने वाली है।

(५३) **सर्वस्य अमाघात**–प्राणिमात्र की हिसा का निषेध करने वाली अमारी–घोषणा स्वरूप है।

(५४) **चोक्ष**–चोखी, सर्वोत्तम, शुद्ध तथा भली है।

(५५) **पवित्रा**–अत्यन्त पावन है तथा वज्र सरीखे घोर पाप के आघात से रक्षा करने वाली है।

(५६) **शुचि**–भाव की शुद्धता एव निर्मलता है।

(५७) **पूता**–पूजा, विशुद्ध या प्रशस्तभाव से देवपूजारूप है।

(५८) **विमला**–आत्मा की निर्मलता का कारण है।

(५९) **प्रभासा**–आत्मा को दीप्ति प्रदान करने वाली, प्रकाशमय है।

(६०) **निर्मलतरा**–अत्यन्त निर्मल अथवा आत्मा को अतीव निर्मल बनाने वाली है।

अहिसा भगवती के (पूर्वोक्त तथा इसी प्रकार के अन्य) अपने गुणो से निष्पन्न हुए नाम है।

107. Out of the five gateways of Samvar the first one is non-violence The following are synonyms of non-violence It is like an **island** for the entire world consisting of gods, human beings and demon gods as it gives them **support** It serves as a lamp providing the light of knowledge It provides **protection** or shelter to the people suffering various types of troubles in the world All the good qualities and happiness are in it Non-violence has the following attribute-based synonyms

(1) Nirvan (Liberation)—It is the cause of salvation (liberation)

(2) Nirvriti—It provides metaphysical and mental health

(3) Samadhi—It provides equanimity

(4) Strength (Shakti)—It is the cause of spiritual strength In some text the word is Santi instead of Satti, which means peace Since non-violence finishes all disputes or opposition, it is called ultimate peace

(5) Kirti (Praise)—Non-violence is the cause of praise or appreciation

(6) Kanti (Glow)—Practitioner of Ahimsa gets physical and spiritual glow


आत्मिक लक्ष्मी
ऋद्धि
15

चित्र-परिचय 15

Illustration No. 15

अहिंसा के गुण निष्पन्न नाम

प्रथम संवरद्वार मे अहिंसा के 60 गुण निष्पन्न नाम बताये गये हैं। जिसमे से कुछ प्रमुख को चित्रो के माध्यम से प्रदर्शित किया गया है—

(1) **द्वीप**—अहिसा को द्वीप के समान आश्रय देने वाला कहा गया है। यह देव, मनुष्य और असुर सहित सम्पूर्ण लोक के प्राणियो को द्वीप के समान शरण देने वाली है। इसे **दीपक** के समान ज्ञान का प्रकाश देने वाली भी कहा है। अहिसा सवर से भावित सुसाधु इस द्वीप मे सर्वोच्च स्थान पर बैठा दिखाया गया है।

(2) **निर्वाण**—अहिसा को मोक्ष का हेतु बताया गया है।

(3) **निवृत्ति-समाधि**—यह अहिसा समस्त पाप दुर्ध्यान एव दु खो से निवृत्त करके शान्ति एव प्रसन्नता प्रदान करने वाली। चित्त को शान्त एव एकाग्र रखने वाली है।

(4) **ऋद्धि**—अहिसा को आत्मिक एव भौतिक लक्ष्मी प्राप्ति का कारण माना है।

(5) **बोधि**—सम्यक्ज्ञान, सम्यक्दर्शन, सम्यक्चारित्र रत्नत्रय रूपी बोधि का कारण माना गया है।

(6) **कान्ति-शान्ति-रति**—अहिसा के आराधक मे शारीरिक एव आत्मिक कान्ति—तेजस्विता उत्पन्न हो जाती है। उसके अन्दर प्राणिमात्र के प्रति प्रीति मैत्री का भाव उत्पन्न हो जाता है। क्षमा, सहिष्णुता भी अहिसा से ही उत्पन्न होते हैं।

—सूत्र 107, पृ 254-257

QUALITIVE SYNONYMS OF AHIMSA

In the first door of Samvar 60 synonyms based on quality of Ahimsa are mentioned Some important ones are explained here with the help of illustrations –

(1) Dveep (Island) – Ahimsa is said to be a place of refuge like an island It provides refuge to all living beings of this universe, including divine beings humans, and demons With Ahimsa enkindled a noble ascetic is shown sitting at the highest place on the island It is also said to be the source of light of knowledge, like a lamp

(2) Nirvana (Liberation) It is said to be cause of liberation

(3) Nivritti-Samadhi Ahimsa releases mind from all sins, evil thoughts and miseries and provides peace and joy It keeps the mind calm and focused

(4) Riddhi (Wealth) Ahimsa is believed to be the source of spiritual and material wealth

(5) Bodhi (Enlightenment) It is said to be the cause of enlightenment in the form of the three gems - right knowledge, right perception faith and right conduct

(6) Kanti Shanti-Rati A practitioner of Ahimsa is endowed with physical and spiritual glow (kanti) He is infused with the feeling of universal fraternity Forgiveness and tolerance are also born out of Ahimsa

— Sutra-107, pages-254-257

(7) **Rati (Affection)**—It produces love and affection for all the living beings

(8) **Virati**—It saves one from indulging in sins

(9) **Shrutang (Part of scriptures)**—It generates from the study of scriptures So it is called shrutanga.

(10) **Satisfaction (Tripti)**—Satisfaction or the state of contentment is also a form of non-violence

(11) **Compassion (Daya)**—To provide probition out of compassion to a being in suffering or dying and to make effort to remove his trouble is a synonym of Ahimsa

(12) **Vimukti (Freedom)**—It provides total release from bondage.

(13) **Kshanti (Forgiveness)**—Forgiveness or tolerance is also a part of Ahimsa

(14) **Samyaktvaradhana (Practice of right faith)**—Craving for liberation, freedom from sensual feelings, compassion and faith which are the symptoms of right faith are in fact the cause of non-violence.

(15) **Most Important (Mahati)**—Non-violence is most important among all the vows or in the entire world

(16) **True Knowledge (Bodhi)**—It is the cause of attainment of right knowledge

(17) **Buddhi (Wisdom)**—It imparts purpose and success to wisdom

(18) **Firmness (Dhriti)**—It is the firmness of mind

(19) **Wealth (Smriddhi)**—It is full of mental and spiritual wealth. It provides bliss in life

(20) **Riddhi**—It is the cause of attainment of mental and spiritual wealth

(21) **Vriddhi**—It is the cause of increase in good qualities such as meritorious activities compassion and others

(22) **Sthiti**—It stabilises one in salvation

(23) **Pushti**—It develops or fortifies the human life by reducing the sin and increasing noble and meritorious qualities

(24) **Nanda**—It provides ecstatic pleasure to the self and to others

(25) **Bhadra**—It brings about welfare of the self and of others

(26) **Vishudhi**—It purifies the soul

(27) **Labdhi**—It is the cause of all merits namely perfect knowledge and others

(28) **Vishisht Drishti**—It provides right perception in thought and conduct—proper assessment of many viewpoints

(29) **Kalyan**—It provides physical and mental health or welfare leading to spiritual beatitude

(30) **Mangal (Auspcious)**—It destroys all sins and generates happiness

(31) **Pramod**—It provides happiness to self and to others

(32) **Vibhuti**—It is the cause of all supernatural wealth

(33) **Raksha (Protection)**—It saves the living being from sins or troubles It protects the souls from sins

(34) **Sidhavas**—It leads one to salvation It is the cause of liberation

(35) **Anasrav**—It stops the inflow of Karma

(36) **Kevali-sthanam**—The place of stay for omniscients The omniscients always remain in a state of non-violence

(37) **Shiva**—It is manifestation of happiness It subsides all the troubles

(38) **Samiti**—It is the right behaviour

(39) **Sheel**—It is good conduct

(40) **Samyam**—It is the restraint of mind and senses It is instrumental in protection of living beings

(41) **Sheel Parigraha**—It is the abode of good conduct or chastity

(42) **Samvar**—It stops asrav (inflow of Karma).

(43) **Gupti**—It stops wrong activities of mind, word and body.

(44) **Vyavasaya**—It is in strong determination

(45) **Uchharaya**—It increases good thoughts

(46) **Yajna**—To make one free from fear, to serve, to be compassionate, to help others—all these are yajna (sacrifice) It is the worship that pleases the soul—the godhood in the soul.

(47) **Ayatan**—It is the seat of all good qualities

(48) **Jayana**—It lies in alertness towards protection of beings It inspires fearlessness

(49) **Apramaad (Devoid of Slackness)**—It is discarding of slackness It lies in being ever alert

(50) **Aashvasan (Support)**—It is support for all living beings It provides solace in pain

(51) **Vishvas (Trust)**—It is the cause of trust in all living beings

(52) **Abhaya (Fearlessness)**—It provides freedom from fear to all living beings It makes the practitioner fearless

(53) **Sarvasya Amaghat**—It is the declaration prohibiting violence to all the living beings

(54) **Choksha**—It is the best and meritorious for all

(55) **Pavitra**—It is extremely pure It saves from the attack of dreadful, vajra-like sin

(56) **Shuchi**—It is purity of thought

(57) **Poota (Worship)**—It is the worship of god with a pure or meritorious bent of mind

(58) **Vimala (Spotless)**—It is the cause of dirt-free (spotless) state of soul

(59) **Prabhasa (Brightness)**—It provides brightness or aura to the soul

(60) **Nirmalatara**—It makes the soul totally clean

The (above said and other suchlike) synonyms of Ahimsa are based on its qualities

विवेचन : प्रस्तुत पाठ मे अहिसा को भगवती कहकर भगवान की तरह असख्य गुणो वाली बताकर उसकी असाधारण महिमा प्रकट की गई है। साथ ही यह भी स्पष्ट किया गया है कि चाहे नर हो, सुर हो अथवा असुर हो, या इनसे भिन्न पशु-पक्षी आदि हो, सबके लिए अहिंसा ही शरणभूत है। अथाह सागर मे डूबते हुए मनुष्य को जैसे द्वीप मिल जाये तो उसकी रक्षा हो जाती है, उसी प्रकार ससार-सागर मे दु ख पा रहे हुए प्राणियो के लिए भगवती अहिंसा त्राणदायिनी है।

अहिंसा के साठ नामो का साक्षात् उल्लेख करने के पश्चात् शास्त्रकार ने बतलाया है कि इसके इनके अतिरिक्त अन्य नाम भी है और वे भी गुणनिष्पन्न ही है।

जो लोग अहिंसा का अत्यन्त सकीर्ण अर्थ करते है, उन्हे अहिंसा के इन साठ नामो से फलित होने वाले अर्थ पर गम्भीरता से विचार करना चाहिए। निर्वाण, निर्वृत्ति, समाधि, तृप्ति, क्षान्ति, बोधि, धृति, विशुद्धि आदि-आदि नाम साधक की आन्तरिक भावनाओ को प्रकट करते है, अर्थात् मानव की इस प्रकार की सात्विक भावनाएँ भी अहिंसा मे गर्भित है। ये भगवती अहिंसा के विराट् स्वरूप के अग है। रक्षा, समिति, दया आदि नाम पर के प्रति चरितार्थ होने वाले साधक के व्यवहार के द्योतक है। तात्पर्य यह है कि इन नामो से प्रतीत होता है कि दु खो से पीडित प्राणी को दु ख से बचाना भी अहिंसा है, पर-पीडाजनक कार्य न करते हुए यतनाचार-समिति का पालन करना भी अहिंसा का अग है और विश्व के समग्र जीवो पर दया-करुणा करना भी अहिंसा है। कीर्ति, कान्ति, रति, चोक्षा, पवित्रा, शुचि, पूता आदि नाम उसकी पवित्रता के प्रकाशक है। नन्दा, भद्रा, कल्याण, मगल, प्रमोदा आदि नाम प्रकट करते है कि अहिंसा की आराधना का फल क्या है ! इसकी आराधना से आराधक की चित्तवृत्ति किस प्रकार कल्याणमयी, मगलमयी बन जाती है।

इस प्रकार अहिसा के उल्लिखित नामो से उसके विविध रूपो का, उसकी आराधना से आराधक के जीवन मे प्रादुर्भूत होने वाली प्रशस्त वृत्तियो का एव उसके परिणाम-फल का स्पष्ट चित्र उभर आता है। अहिंसा का अन्तिम फल निर्वाण परम पद मोक्ष अथवा असीम शान्ति की प्राप्ति है।

Elaboration—In the present lesson non-violence is termed as God It has been expressed as one having innumerable good traits like God Its unique grandeur has been described Simultaneously it has been clearly pointed that it is the support for all—human beings, gods, demons, animals, birds and others Just as a drowning person saves himself if he finds an island, similarly ahimsa is the support for living beings drowning in the mundane world of life and death

The author, after mentioning sixty synonyms of ahimsa, has stated that it has other synonyms also based on its qualities

Those persons who give a very limited meaning to non-violence, they should deeply study the meanings arising out of the above sixty synonyms of non-violence (ahimsa) and contemplate over them deeply. The synonyms nirvan (liberation), nirvriti (controlling activity), samadhi (equanimity), tripti (satisfaction), kshanti (benevolence), bodhi (true spiritual knowledge), dhriti (patience), vishuddhi (purity) and others indicate the inner attitude of the practitioner Such noble feelings of people lie in non-violence They are the limbs of the gigantic state of ahimsa The synonyms protection (raksha), equanimity, compassion, declaration prohibiting all types of killings indicate the behaviour of its

practitioner towards others In a nutshell these synonyms indicate that to save a living being adversely affected by troubles from that sad state is also ahimsa While not engaging oneself in activities causing harm to others, to practice discernment in conduct is also a part of non-violence To have compassion for all living beings in the would is also ahimsa The synonyms keerti, (honour), kanti (brightness), rati (affection), choksha (extremely pure), pavitra (chaste), shuchi (purity), poota and others indicate its sanctity Synonyms nanda, bhadra, kalyan, mangal, pramoda indicate what are the consequences of practicing non-violence They indicate that the nature of its practitioner becomes beneficial and meritorious

Thus the above synonymous of ahimsa vividly depict its different forms, the noble thought-activities generating in the person by its practice and the consequences airing out of it The ultimate result of practice of non-violence is attainment of salvation or liberation that provides unlimited peace

अहिसा की महिमा GLORY OF ASHIMSA

१०८. एसा सा भगवई अहिंसा जा सा भीयाण विव सरणं,

पक्खीणं विव गमणं, तिसियाणं विव सलिलं, खुहियाणं विव असणं, समुद्दमज्झे व पोयवहणं, चउप्पयाणं व आसमपयं, दुहट्ठियाणं व ओसहिबलं, अडवीमज्झे व सत्थगमणं, एत्तो विसिट्ठतरिया अहिंसा जा सा पुढवी–जल–अगणि–मारुय–वणस्सइ–बीय–हरिय–जलयर–थलयर–खहयर–तस–थावर–सव्वभूय–खेमकरी।

१०८. यह अहिसा भगवती (अद्‌भुत महिमा वाली) है, (ससार के समस्त) भयभीत प्राणियो के लिए शरणदाता है। पक्षियो के लिए आकाश मे गमन करने–उडने के समान (स्वतत्र अवकाश देने वाली) है। यह अहिसा प्यास से पीडित प्राणियो के लिए जल के समान (शान्तिप्रदायिका) है। भूखो के लिए भोजन के समान (तृप्ति व पुष्टि देने वाली) है। समुद्र के मध्य मे डूबते हुए जीवो के लिए जहाज समान (तारने वाली) है। चतुष्पद–पशुओ के लिए आश्रम पद (पशुशाला के समान सुरक्षित स्थान) के समान है। दु खो से पीडित–रोगी जनो के लिए औषध–बल के समान (आरोग्य प्रदात्री) है। भयानक जगल मे सार्थ–सघ के साथ गमन करने के समान (सुरक्षा देने वाली) है।

(क्या भगवती अहिंसा वास्तव मे जल, अन्न, औषध, यात्रा मे सार्थ (समूह) आदि के समान ही है? नही।) भगवती अहिंसा इनसे भी अत्यन्त विशिष्ट और श्रेष्ठ है, जो पृथ्वीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, वनस्पतिकायिक, बीज, हरितकाय, जलचर, स्थलचर, खेचर, त्रस और स्थावर सभी प्राणियो का क्षेम–कुशल–मगल कल्याण करने वाली है।

108. Non-violence has unique grandeur It provides support (to all the living beings) who are afraid in the world For birds it is like flying in the sky (It provides them independence) It provides peace to the troubled just as water gives relief to the person in sad state due to thirst It is like food for the hungry (It provides them satisfaction and strength) It is like a ship to the persons drowning in the ocean (It saves them) It is the place of safety for living beings just as a shed is the place of safely for animals Just as medicine provides relief to the diseased, it provides improvement in health It provides protection just as the travellers in the company of a caravan feel protected while passing through dreadful forest

(Is non-violence, in reality similar to water, food, medicine, a caravan in travels?) In fact it is much more helpful than these above mentioned One saves himself immediately when he gets the support of non-violence It causes welfare of all the living beings—earth-bodied, water-bodied, fire-bodied, air-bodied, plant-bodied living beings, seeds, greenery, living beings moving in water, on land, in sky, the mobile and the immobile living beings

विवेचन जो प्राणी भय से ग्रस्त है, जिसके सिर पर चारो ओर से भय मडरा रहा हो, उसे यदि निर्भयता का स्थान-शरण मिल जाये तो कितनी प्रसन्नता होती है ! अहिसा समस्त प्राणियो के लिए इसी प्रकार शरणप्रदात्री है।

खुले आकाश मे विचरण करने वाले पक्षी को धरती पर अनेक सकट आने की आशका बनी रहती है। वह थोडी-सी भी आपत्ति की सभावना होते ही धरती छोडकर आकाश मे उडने लगता है। आकाश उसके लिए अभय का तथा स्वतत्रता का स्थल है। अहिंसा भी अभय का स्थान है। प्यास से पीडित को पानी और भूखे को भोजन मिल जाये तो उसकी पीडा एव पीडाजनित व्याकुलता मिट जाती है, उसे शान्ति प्राप्त होती है, उसी प्रकार अहिसा परम शान्तिदायिनी है। जैसे समुद्र मे डूबते के प्राणो पर सकट आ जाता है तब जहाज का सहारा मिलता है और उसके प्राणो की रक्षा हो जाती है, उसी प्रकार ससार-समुद्र मे डूबने वाले प्राणियो की रक्षा करने वाली, उबारने वाली अहिंसा है। चौपाये जैसे अपने वाडे (पशुशाला) मे पहुँचकर निर्भयता का अनुभव करते है। इसी प्रकार भगवती अहिंसा भी अभय का स्थान है। जैसे सुनसान तथा हिंसक जन्तुओ से व्याप्त भयानक अटवी मे एकाकी गमन करना सकटमय होता है। सार्थ (समूह) के साथ जाने पर भय नही रहता, इसी प्रकार जहाँ अहिंसा है, वहाँ भय नही रहता।

इन उपमाओ के निरूपण के पश्चात् सूत्रकार ने स्पष्ट किया है कि अहिंसा के लिए ये उपमाएँ पूर्णोपमाएँ नही है। तात्पर्य यह है कि दु ख या भय का प्रतीकार करने वाली इन वस्तुओ से न तो सदा के लिए दु ख दूर होता है और न परिपूर्ण रूप से रक्षा होती है। कभी-कभी तो भोजन, औषध आदि उल्टे दु ख के कारण भी बन जाते है।

किन्तु अहिंसा मे कोई ऐसा खतरा नही है। एक बार प्राप्त होने के पश्चात् उसका विनाश नही होता। इस आशय को व्यक्त करने के लिए शास्त्रकार ने कहा है-'एत्तो विसिट्ठतरिया अहिंसा' अर्थात् अहिसा इन सब उपमाभूत वस्तुओ से भी अत्यन्त विशिष्ट है।

Elaboration—A person is very much frightened He senses fear all around He shall feel extremely happy if he finds a place where he can be fearless Non-violence provides similar support to all the living beings

A bird flying in the air has many lurking doubts in its mind when it comes on earth It starts flying away from the earth leaving that place when it feels the possibility of the slightest trouble Sky is the place of fearless state and the area of freedom for it Non-violence also is a place where one can remain without any fear

In case a person troubled due to thirst gets water and a hungry person gets food, his trouble and restlessness arising out of it disappears He experiences peace similarly in non-violence, which provides unique peace Just as a ship saves the life-force of a drowning person, similarly non-violence protects the living beings drowning in the worldly ocean of life, death and re-birth Quadruped, experience freedom from fear when they reach the cowshed Similarly non-violence is such as place where one experiences freedom from fear

Just as it is troublesome to move alone in wilderness and in dreadful forest full of ferocious violent beasts That fear no longer persists if one is in the company of a group Similarly one does not have fear if he is in the company of non-violence

After narrating these comparative examples, it is mentioned in the scriptures that these synonyms do not completely indicate all the qualities In brief, such things which treat pain or fear cannot remove the same forever They cannot provide protection forever Sometimes even food or medicine become the cause of trouble But there is no such danger in non-violence Once attained it never dies down. To describe it the writer has mentioned that non-violence is by far the best even as compared to these illustrations

अहिंसा के विशुद्ध द्रष्टा और आराधक TRUE PRACTITIONERS OF NON-VIOLENCE

१०९. एसा भगवई अहिंसा जा सा अपरिमिय–णाणदंसणधरेहिं सील–गुण–विणय–तव–संयम–णायगेहिं तित्थयरेहिं सव्वजगजीववच्छलेहिं तिलोयमहिएहिं जिणवरेहिं (जिणचंदेहिं) सुट्ठुदिट्ठा।

ओहिजिणेहिं विण्णाया, उज्जुमईहिं विदिट्ठा, विउलमईहिं विदिआ, पुव्वधरेहिं अहीया, वेउव्वीहिं पतिण्णा, आभिणिबोहियणाणीहिं सुयणाणीहिं ओहिजाणीहिं मणपज्जवणाणीहिं केवलणाणीहिं आमोसहिपत्तेहिं खेलोसहिपत्तेहिं जल्लोसहिपत्तेहिं विप्पोसहिपत्तेहिं सव्वोसहिपत्तेहिं बीयबुद्धीहिं कुट्ठबुद्धीहिं पयाणुसारीहिं संभिण्णसोएहिं सुयधरेहिं मणबलिएहिं वयबलिएहिं कायबलिएहिं णाणबलिएहिं दंसणबलिएहिं चरित्तबलिएहिं खीरासवेहिं महुआसवेहिं सप्पियासवेहिं अक्खीणमहाणसिएहिं चारणेहिं विज्जाहरेहिं।

चउत्थभत्तिएहिं एवं जाव छम्मासभत्तिएहिं उक्खित्तचरएहिं णिक्खित्तचरएहिं अंतचरएहिं पंतचरएहिं लूहचरएहिं समुयाणचरएहिं अण्णइलाएहिं मोणचरएहिं संसट्ठकप्पिएहिं तज्जायससट्ठकप्पिएहिं उवणिएहिं सुद्धेसणिएहिं सखादत्तिएहिं दिट्ठलाभिएहिं पुट्ठलाभिएहिं आयंबिलिएहिं पुरिमड्ढिएहिं एक्कासणिएहिं णिव्विइएहिं भिण्णपिंडवाइएहिं परिमियपिंडवाइएहिं अंताहारेहिं पंताहारेहिं अरसाहारेहिं विरसाहारेहिं लूहाहारेहिं तुच्छाहारेहिं अंतजीवीहिं पंतजीवीहिं लूहजीविहिं तुच्छजीवीहिं उवसंतजीवीहिं पसंतजीवीहिं विवित्तजीवीहिं अखीरमहुसप्पिएहिं अमज्जमंसासिएहिं ठाणाइएहिं पडिमंठाईहिं ठाणुक्कडिएहिं वीरासणिएहिं णेसज्जिएहिं डंडाइएहिं लगंडसाईहिं एगपासगेहिं आयावएहिं अप्पावएहिं अणिट्ठुमएहिं अकडूयएहिंधुयकेसमंसुलोमणएहिं सव्वगायपडिकम्मविप्पमुक्केहिं समणुचिण्णा, सुयहरविइयत्थकायबुद्धीहिं।

धीरमइबुद्धिणो य जे ते आसीविसउग्गतेयकप्पा णिच्छयववसायपज्जत्तकयमईया णिच्चं सज्झायज्झाणअणुबद्धधम्मज्झाणा पंचमहव्वयचरित्तजुत्ता समिया समिइसु, समियपावा छव्विहजगवच्छला णिच्चमप्पमत्ता एएहिं अण्णेहि य जा सा अणुपालिय भगवई।

१०९. यह भगवती अहिंसा वह है जिसे अपरिमित–अनन्त केवलज्ञान–दर्शन को धारण करने वाले, शील गुण, विनय, तप और सयम के नायक–मार्गदर्शक धर्म तीर्थ की सस्थापना करने वाले, जगत् के समस्त जीवो के प्रति असीम वात्सल्य धारण करने वाले, तीन लोको मे पूजनीय जिनवरो (जिनचन्द्रो) ने अपने केवलज्ञान–दर्शन द्वारा सम्यक् रूप मे देखा है।

विशिष्ट अवधिज्ञानियो ने इसे विशेष रूप से जाना है। ऋजुमति–मन पर्यवज्ञानियो ने विशेष रूप मे देखा–परखा है। विपुलमति–मन पर्यायज्ञानियो ने भलीभाँति ज्ञात किया है। चतुर्दश पूर्वश्रुत के धारक मुनियो ने इसका अध्ययन किया है। वैक्रियलब्धि के धारको ने इसका आजीवन पालन किया है। इसी प्रकार मतिज्ञानियो ने, श्रुतज्ञानियो ने, अवधिज्ञानियो ने, मन पर्यवज्ञानियो ने, केवलज्ञानियो ने, आमर्षौषधिलब्धि के धारको, श्लेष्मौषधिलब्धिधारको, जल्लौषधिलब्धिधारको, विप्रुडौषधिलब्धिधारको, सर्वौषधिलब्धिप्राप्त, बीजबुद्धि–कोष्ठबुद्धि–पदानुसारिबुद्धि–लब्धि के धारको, सभिन्नश्रोतस्लब्धि के धारको, श्रुतधरो, मनोबली, वचनबली और कायबली मुनियो, ज्ञानबली, दर्शनबली तथा चारित्रबली महापुरुषो ने, मध्वास्रवलब्धिधारी, सर्पिरास्रवलब्धिधारी तथा अक्षीणमहानसलब्धि के धारको ने इसकी आराधना की है।

इसी प्रकार चारणो और विद्याधरो ने, एक-एक उपवास करने वालो चतुर्थभक्तिको से लेकर दो, तीन, चार, पाँच दिनो, इसी प्रकार एक मास, दो मास, तीन मास, चार मास, पाँच मास एव छह मास तक का अनशन-उपवास करने वाले तपस्वियो ने, इसी प्रकार उत्क्षिप्तचरक, निक्षिप्तचरक, अन्तचरक, प्रान्तचरक, रूक्षचरक, समुदानचरक, अन्नग्लायक, मौनचरक, ससृष्टकल्पिक, तज्जातससृष्टकल्पिक, उपनिधिक, शुद्धैषणिक, सख्यादत्तिक, दृष्टलाभिक, अदृष्टलाभिक, पृष्ठलाभिक, आचाम्लक, पुरिमार्धिक, एकाशनिक, निर्विकृतिक, भिन्नपिण्डपातिक, परिमितपिण्डपातिक, अन्ताहारी, प्रान्ताहारी, अरसाहारी, विरसाहारी, रूक्षाहारी, तुच्छाहारी, अन्तजीवी, प्रान्तजीवी, रूक्षजीवी, तुच्छजीवी, उपशान्तजीवी, प्रशान्तजीवी, विविक्तजीवी साधको ने एव दूध, मधु और घृत का यावज्जीवन त्याग करने वालो ने, मद्य और माँस से रहित आहार करने वालो ने, कायोत्सर्ग करके एक स्थान पर स्थित रहने का अभिग्रह करने वालो ने, प्रतिमा-स्थायिको ने, स्थानोत्कटिको ने, वीरासनिको ने, नैषधिको ने, दण्डायतिको ने, लगण्डशायिको ने, एकपार्श्वको ने, आतापको ने, अपाव्रतो ने, अनिष्ठीवको ने, अकडूयको ने, धूतकेश-श्मश्रु लोम-नख अर्थात् सिर के बाल, दाढी, मूँछ और नखो का सस्कार करने का त्याग करने वालो ने, सम्पूर्ण शरीर के प्रक्षालन आदि सस्कार के त्यागियो ने, श्रुतधरो के द्वारा तत्त्वार्थ को अवगत करने वाली बुद्धि के धारक महापुरुषो ने (अहिंसा भगवती का) सम्यक् प्रकार से आचरण किया है।

(इनके अतिरिक्त) आशीविष सर्प के समान उग्र तेज से सम्पन्न महापुरुषो ने, वस्तुतत्त्व का निश्चय करके पुरुषार्थ मे पूर्ण कार्य करने वाली बुद्धि से सम्पन्न प्रज्ञापुरुषो ने, नित्य स्वाध्याय और चित्तवृत्तिनिरोध रूप ध्यान करने वाले तथा धर्मध्यान मे निरन्तर चित्त को लीन रखने वाले पुरुषो ने, पॉच महाव्रतरूप चारित्र से युक्त तथा पाँच समितियो से सम्पन्न, पापो का शमन करने वाले, षट्जीवनिकायरूप जगत् के वत्सल, निरन्तर अप्रमादी रहकर विचरण करने वाले महात्माओ ने तथा अन्य विवेकविभूषित सत्पुरुषो ने अहिसा भगवती की आराधना की है।

109. Tirthankars, the omniscients who establish the order, whose knowledge and perception was unlimited, who had immense compassion for all the living beings in the world and who are honoured by the living beings of all the three worlds have seen it (Ahimsa) clearly and fully through their perfect knowledge and perfect perception

Prominent persons having transcendental knowledge have specially known it Those who had mental knowledge of simple order (rijumati) also saw it and judged it The possessors of mental knowledge of high order (vipulmati) had known it quite clearly. Those who had knowledge of fourteen Purvas studied it Those who had fluid power, practiced it throughout their life Similarly those who had sensory knowledge scriptural knowledge, transcendental knowledge, mental knowledge, perfect knowledge, who had unique qualities such as curing others with

their saliva, perspiration, stool and any thing from their body practiced it Those who had such an intellect that they could understand the whole text from just a word or from a line, those saints who were based in scripture, practiced it The saints who possessed power of mind, speech, body, knowledge, perception, knowing everything with one sense organ only, who could satisfy hunger of others with their special power practiced non-violence throughout their life.

Similarly there are Charans, Vidyadhars and those observing one day fast, two days fast, three days fast, four days fast, five days fast and so on, one month fast, two months fast, three months fast, four months fast, five months fast and six months fast, ukshipt charak (saints who accept food kept outside the cooking vessel), nikshipt charak (who accept food kept in the cooking pot), ant charak (who accept tasteless food), pranta charak (who accept only the left out food), ruksh charak (who accept dry food), samudaan charak (who accept food from all class–high, medium and low), mauna charak (who observe total silence while collecting food) There are Sansrisht Kalpik, tajjat Sansrisht Kalpik, Upanidhik, Shuddhaishanik, Sankhyadattik, Drisht labdhik, Adrisht labdhik, Prishth labdhik, Aachamlak, Purimardhik, Ekaashanik, Nirvrikritik, Bhinnapindpatik, Antahari, Prantahari, Arasahari, Virasahari, Rukshahari, Tuchhahari, Antajivi, Prantajivi, Rukshajivi, Tuchhajivi, Upashantjivi, Prashantjivi, Viviktajivi practitioners There are those who have discarded milk, honey and ghee for the entire life There are those who take foods that has no wine and meat There are those who have taken a vow to remain at one place in the state of meditation There are those who have installed idols, Sthanotkatiks (those who remain in a particular posture of sitting on raised feet at one place) Veerasaniks, Naishadhiks, Dandayatiks, Lagandashayiks, Ekaparshvaks, Aatapaks, Apavrats, Anishthivaks, Akanduyaks, Dhootakesh, Shmashniloamas (those who have discarding setting the hair, beard, mountains, nails in order) There are those who have discarded full bath There are those who have an intellect that can make one understand all the essentials and their true nature All those persons had practiced non-violence in proper way

(In addition) there are great men who have an aura like a snake that has poison in its molars. There are intelligent people who after

determining the real nature use their intellect in completing the task through efforts There are persons who study scriptures and practice meditation daily in which they control their thoughts There are persons who remain continuously absorbed in meditation according to code laid in scriptures There are people who practice five major vows of the monk, who observe five Samitis, who subdue sinful activities, who have a great affection for living beings of six categories and those monks who continuously remain vigilant during their wanderings There also those who have a sense of discernment All such persons have practiced non-violence

विवेचन आगम की उक्त स्पष्ट सूची के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि तीर्थंकर भगवन्तो से लेकर विशिष्ट ज्ञान के धारको, अतिशय लोकोत्तर बुद्धि के धनियो, विविध लब्धियो से सम्पन्न उग्र तपस्वियो, महामुनियो, आहार-विहार मे अतिशय सयमशील एव ध्यानयोग निरत साधको आदि ने इस अहिंसा भगवती की सम्यक् रूप मे निर्दोष परिपालना की है।

सूत्र मे बताया है-अनेक प्रकार की लब्धियो के धारक सत्पुरुषो ने इस अहिंसा भगवती की सम्यक् रूप मे आराधना की है। इस प्रसग मे कुछ लब्धियो का तथा विभिन्न प्रकार की प्रतिभाओ का उल्लेख भी यहाँ किया गया है। यो तो भगवतीसूत्र मे १० प्रकार की लब्धियो का वर्णन है। औपपातिकसूत्र मे भगवान के विविध लब्धिधारी श्रमणो का वर्णन है तथा प्रवचन सारोद्धार आदि ग्रन्थो मे भी २८ प्रकार की एव ३१ प्रकार की लब्धियो का वर्णन मिलता है। दशाश्रुतस्कध, औपपातिक एव स्थानागसूत्र आदि मे विविध प्रतिभाओ का भी वर्णन आता है। विस्तृत वर्णन वहाँ पर किया गया है। यहाँ उनका सामान्य परिचय इस प्रकार है-

आमर्षौषधिलब्धिधारक-विशिष्ट तपस्या के प्रभाव से किसी-किसी तपस्वी मे ऐसी शक्ति उत्पन्न हो जाती है कि उसके शरीर का स्पर्श होने पर सब प्रकार के रोग नष्ट हो जाते है। वह तपस्वी आमर्षौषधिलब्धि का धारक कहलाता है।

श्लेष्मौषधिलब्धिधारी-जिनका श्लेष्म-कफ रोगनाशक है।

जल्लौषधिलब्धिधारी-जिनके शरीर के मैल मे रोगनाशक सामान्य शक्ति हो।

विप्रुडौषधिलब्धिधारी-जिनका मल-मूत्र, रोग विनाशक औषधि रूप हो।

सर्वौषधिलब्धिधारी-जिनका मल, मूत्र, कफ, मैल आदि सभी कुछ व्याधिविनाशक हो।

बीजबुद्धिधारी-जैसे छोटे बीज से विशाल वृक्ष उत्पन्न हो जाता है, उसी प्रकार बीजक के समान एक साधारण अर्थ के ज्ञान के सहारे अनेक अर्थों को विशद् रूप से ज्ञान करने की क्षमता वाली क्षयोपशमजनित बुद्धि के धारक।

कोष्टबुद्धिधारी-जैसे कोठे मे भरा धान्य क्षीण नही होता, वैसे ही प्राप्त ज्ञान चिरकाल तक उतना ही बना रहे-कम न हो, ऐसी शक्ति से सम्पन्न।

पदानुसारीबुद्धिधारक-एक पद को सुनकर ही अनेक पदो को जान लेने की बुद्धि-सामर्थ्य।

संभिन्नश्रोतसूलब्धिधारी—एक ही इन्द्रिय से देखना, सुनना, सूँघना आदि सभी इन्द्रियो के विषय को ग्रहण करने की क्षमता वाले। जैसे नाक से सुनना, कान से देखना आदि।

श्रुतधर—आचाराग आदि आगमो के विशिष्ट ज्ञाता।

मनोबली—जिनका मनोबल अत्यन्त सुदृढ हो।

वचनबली—जिनके वचनो मे कुतर्क, कुहेतु का निरसन करने का विशिष्ट सामर्थ्य हो।

कायबली—भयानक परीषह और उपसर्ग आने पर भी पर्वत के समान अचल रहने की शारीरिक शक्ति के धारक।

ज्ञानबली—मतिज्ञान आदि ज्ञानो के बल वाले।

दर्शनबली—सुदृढ तत्त्वार्थश्रद्धा के बल से सम्पन्न।

चारित्रबली—विशुद्ध चारित्र की शक्ति से युक्त।

क्षीरास्रवी—जिनके वचन दूध के समान मधुर प्रतीत हो।

मधुरास्रवी—जिनकी वाणी मधु-सी मीठी हों।

सपिरास्रवी—जिनके वचन घृत जैसे स्निग्ध-स्नेहयुक्त हो। अथवा जिनके पात्र मे पडा तुच्छ अन्न भी क्षीर-मधु-घृत की तरह तृप्ति व पुष्टि देने वाला है।

अक्षीणमहानसिक—इस लब्धि के धारक जब तक स्वय भोजन न कर ले तब तक लाखो को तृप्तिजनक भोजन करा सकते है। वह भोजन तभी समाप्त होता है जब लाने वाला स्वय भोजन कर ले।

चारण—आकाश मे विशिष्ट गमन करने की शक्ति वाले। विद्याचारण और जघाचारण।

विद्याधर—विद्या के बल से आकाश मे चलने की शक्ति वाले।

उत्क्षिप्तचरक—अन्न पकाने के पात्र मे से बाहर निकालकर रखे हुए भोजन मे से ही आहार ग्रहण करने के अभिग्रहधारी।

निक्षिप्तचरक—पकाने के पात्र मे रक्खे हुए भोजन को ही लेने का अभिग्रह करने वाला।

अन्तचरक—नीरस या चना आदि साधारण कोटि का ही आहार लेने का अभिग्रह करने वाले।

प्रान्तचरक—बचा-खुचा ही आहार लेने की प्रतिज्ञा-अभिग्रह वाले।

रूक्षचरक—रूखा-सूखा ही आहार लेने की प्रतिज्ञा वाले।

समुदानचरक—सधन, निर्धन एव मध्यम श्रेणी के घरो से समभावपूर्वक भिक्षा ग्रहण करने वाले।

अन्नग्लायक—ग्लानि उत्पन्न करने जैसी ठण्डी-बासी भिक्षा स्वीकार करने वाले।

मौनचरक—मौन धारण करके भिक्षा के लिए जाने वाले श्रमण।

ससृष्टकल्पिक—भरे (लिप्त) हाथ या पात्र से आहार लेने की प्रतिज्ञा वाले।

तज्जातसंसृष्टकल्पिक—जो पदार्थ ग्रहण करना है उसी से भरे हुए हाथ या पात्रादि से भिक्षा लेने के कल्प वाले मुनि।

उपनिधिक—समीप मे ही भिक्षार्थ जाने के अथवा समीप मे रहे हुए पदार्थ को ही ग्रहण करने के अभिग्रह वाले मुनि।

शुद्धैषणिक—निर्दोष आहार की गवेषणा करने वाले मुनि।

सख्यादत्तिक—दत्तियो की सख्या निश्चित्त करके आहार लेने वाले।

दृष्टलाभिक—दृष्ट स्थान से दी जाने वाली या दृष्ट पदार्थ की भिक्षा ही ग्रहण करने वाले श्रमण।

अदृष्टलाभिक—अदृष्टपूर्व—पहले नही देखे दाता के हाथ से भिक्षा लेने वाले।

पृष्टलाभिक—'महाराज ! यह वस्तु लेगे ?' इस प्रकार प्रश्न पूछने पर प्राप्त भिक्षा लेने वाले।

आचाम्लिक—आयबिल तप करने वाले।

पुरिमार्धिक—दो पौरुषी दिन चढे बाद आहार लेने वाले।

एकासनिक—नित्य एकाशन तप करने वाले।

निर्विकृतिक—घी, दूध, दही आदि के त्यागी या इन रसो (विगयो) से रहति भिक्षा लेने वाले।

भिन्नपिण्डपातिक—पात्र मे बिखरे पडे आहार को लेने वाले।

परिमितपिण्डपातिक—घरो एव आहार के परिमाण का निश्चय करके परिमित आहार ग्रहण करने वाले।

अरसाहारी—रसहीन—हीग आदि वघार से रहित आहार लेने वाले।

विरसाहारी—पुराना होने से नीरस हुए धान्य का आहार लेने वाले।

उपशान्तजीवी—भिक्षा मिलने और न मिलने की स्थिति में उद्विग्न न होकर शान्तभाव मे स्थिर रहने वाले।

प्रतिमास्थायिक—एकमासिकी आदि भिक्षुप्रतिमाओ को धारण करने वाले।

स्थानोत्कुटुक—उकडू आसन से एक जगह बैठने वाले।

वीरासनिक—वीरासन से बैठने वाले। (पैर धरती पर टेककर कुर्सी पर बैठे हुए मनुष्य के नीचे से कुर्सी हटा लेने पर उसका जो आसन रहता है, वह वीरासन है।)

नैषधिक—दृढ आसन से बैठने वाले।

दण्डायतिक—डडे के समान लम्बे लेटकर रहने वाले।

लगण्डशायिक—सिर और पाँवो की एडियो को धरती पर टिकाकर और शेष शरीर को अधर रखकर शयन करने वाले।

एकपार्श्विक—एक ही पसवाडे से सोने वाले।

आतापक—गर्मी मे आतापना लेने वाले तथा सर्दी मे शीत सहने वाले।

अप्रावृत्तिक—प्रावरण—वस्त्ररहित होकर शीत, उष्ण, दश—मशक आदि के परीषह सहन करने वाले।

अनिष्ठीवक–नही थूकने वाले।

अकण्डूयक–शरीर को खुजली आने पर भी नही खुजलाने वाले।

सुयधर विदित्थ काम बुद्धि–श्रुत एव अर्थ दोनो के विशिष्ट ज्ञाता मुनि।

इस प्रकार के महान् तपोधनी सत्पुरुषो द्वारा आचरित अहिसा प्रत्येक कल्याणकामी के लिए आचरणीय है।

Elaboration—A study of the above comprehensive list mentioned in the scriptures, makes it crystal clear that there are Tirthankars, other learned people, persons having advanced intellect, ascetics, persons who have accumulated special powers by practicing austerities, persons who observe strict restraint in wanderings and in acceptance of food, persons who continuously practice meditation All such great men had practiced non-violence meticulously in a faultless manner in the past

In the text there are many words which cannot be understood without knowing their detailed meaning So they are being explained in brief

In the aphorism it has been stated that many persons who possessed several special powers had practiced non-violence in a proper manner In this context some special powers and various types of vows (pratimas) have also been mentioned In Bhagavati Sutra ten special powers (labdhis) have been mentioned In Aupapatik Sutra there is the description of several monks who possessed such powers In Pravachan Saroddhar and other texts there is the description of 28 types and of 31 types of special powers (labdhis) There they have been mentioned in detail Here a brief description is being given It is as follows

Aamarshaushadhi labdhi dharak—Due to special austerities, some monk gets such a power that his very touch destroys all diseases That monk is called aamarshaushadhi labdhi dharak

Shleshamaushadhi labdhi dhari—The monk whose cough cures diseases

Jallaushadhi labdhi dhari—One whose dirt collected on the body due to perspiration is capable of curing diseases

Viprudaushadhi labhdi dhari—One whose urine and stool are capable of curing diseases

Sarvaushadhi labdhi dhari—One whose dust on the body, urine, stool, saliva and all suchlike discharges are capable of curing diseases

Beej-buddhi dhari—Just as a small seed grows into a large tree, a person with such an intellect is capable of having deeper knowledge leading to several interpretations by first having an ordinary knowledge from teacher

Koshth-buddhi dhari—One who can retain knowledge in the same condition for a very long time and it is not forgotten just as foodgrain remains intact in a silo

Padanusari-buddhi dharak—One who is capable of knowing many stanzas by just listening to one stanza

Sambhinnasrotasa labdhi dhari—One who is capable to see, hear, smell and the like with just one sense organ

Shrutadhar—One who has expert knowledge of Acharanga and other Agams

Manobali—One whose mind is extremely firm

Vachanbali—One who is capable of giving a suitable, logical, rational reply to the misinterpretations raised by any person

Kayabali—One who has such a physical strength that he is capable of being stable as a rock even at the time of troubles and turbulations or sufferings or tortures by any one

Jnanabali—One who has sensory knowledge, scriptural knowledge and others

Darshanbali—One who has staunch faith in true meaning

Chaaritrabali—One who has strength of pure character

Ksheerasravi—One whose speech is sweet as milk

Madhurasravi—One whose voice is as sweat as honey

Sarpirasravi—One whose words are loveable like butter One whose foodstuff in the pot is satisfying and nutritive like milk etc , though ordinary

Akshinamahanasik—With this special power one can satisfy millions of monks with the food that he has. The food finishes only when he, himself eats

Charan—Those who have special power to move (fly) in the air

Vidyadhar—Those who can move in the air with the help of their special acquired skill

Utkshipt Charak—Those who have taken a vow to accept only that food which had already been taken out from cooking put

Nikshipt Charak—Those who accept only that food which is still in the cooking pot.

Anta charak—Those who accept only tasteless food such as gram

Pranta charak—Those who have a vow to accept only the left out food after every one has taken

Ruksha charak—Those who accept dry food (which normally no one accepts)

Samudan Charak—Those who accept alms from rich, medium and poor with equanimity

Annaglayak—Those who accept only cold, stale food which is normally disliked

Mauna charak—Those who remain silent while collecting alms.

Sansrishtakalpik—Those who accept food only if the hand or pot of the giver is besmeared with it

Tajjaat sansrishtakalpik—Those who have a view to accept desired thing only if the hands of the giver is already besmeared with it

Upanidhik—Those who accept only that food which is very near the giver or near which he (the monk) has come

Shudhaishanik—Those who accept only that food which is strictly according to prescribed code for collecting it.

Sankhyadattik—Those who decide earlier how many servings they can accept and then accept strictly according to it

Dashtalabhik—Those who accept food etc only if it is offered from a visible place

Adrishtalabhik—Those who accept food only from that person unseen earlier

Prishtalabhik—Those who accept food only if the giver asks, Sir, will you accept this thing

Aachamlik—Those who practice aayambil

Purimardhik—Those who go for collection of alms only after two quarters of the day have passed

Ekasanik—Those who take food only once in a day (always do ekasana).

Nirvikritiki—Those who accept food free from butter, milk, curd and the like.

Bhinnapindpatik—Those who accept food, which is scattered in the pot

Parimitapindapatik—Those who decide about number of houses and areas of food before going out for collection

Arasahari—Those who accept food free from such elements that makes it tasty

Virasahari—Those who accept food prepared from old grain and thus tasteless

Upashantajivi—Those who remain in a state of equanimity whether they get alms or not

Pratimasthayik—Those who have accepted special vows of a monk such as lasting for one months or so in a particularly defined manner

Sthanotkatik—Those who sit at a place as a person sits while milking a cow

Virasanik—Those who sit as one sits in a chair but there is no chair

Naishayik—Those who sit firmly in a particular posture

Dandayatik—Those who lie down straight like a stick.

Lagandashayik—Those who sleep keeping only the heels and head touching the ground and not any other part of the body

Ekaparshavik—Those who sleep only on one side

Atapik—Those who bask in the sun in summer and tolerate cold in winter

Apravritik—Those who train themselves in bearing heat, cold, mosquito, lute and suchlike troubles

Anishthivik—Those who never spit.

Akanduyak—Those who do not scratch their body even at the time of itching

Suyadhar vidith kaam budhi—Those who have expert knowledge of scriptures and their meaning

The practice of non-violence by the great saints undergoing suchlike austerities is worthy of practice by every one who desires his welfare

आहार की निर्दोष विधि FAULTLESS METHOD OF TAKING FOOD

११०. इमं च पुढवि–दग–अगणि–मारुय–तरुगण–तस–थावर–सव्वभूयसंजमदयट्ठयाए सुद्धं उञ्छं गवेसियव्वं।

अकयमकारियमणाहूयमणुद्दिट्टं अकीयकडं णवहि य कोडिहिं सुपरिसुद्धं, दसहि य दोसेहिं विप्पमुक्कं, उग्गम–उप्पायणेसणासुद्ध ववगयचुयचावियचत्तदेहं च फासुयं च ण णिसज्जकहापओयणक्खासुओवणीयं ति ण तिगिच्छा–मंत–मूल–भेसज्जकज्जहेउं, ण लक्खणुप्पाय–सुमिण–जोइस–णिमित्त–कहकप्पउत्तं, ण वि डंभणाए, ण वि रक्खणाए, ण वि सासणाए, ण वि डंभण–रक्खण–सासणाए भिक्खं गवेसियव्वं, ण वि वंदणाए, ण वि माणणाए, ण वि पूयणाए, ण वि वंदण–माणण–पूयणाए भिक्खं गवेसियव्वं।

११०. अहिंसा का सम्यक् पालन करने के लिए उद्यत श्रमण को पृथ्वीकाय, अप्काय, अग्निकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय-इन स्थावर और (द्वीन्द्रिय आदि) त्रस, इस प्रकार सभी प्राणियो के प्रति सयमरूप दया पालन के लिए शुद्ध-निर्दोष भिक्षा की गवेषणा करनी चाहिए।

निर्दोष भिक्षा कैसी होती है? जो आहार साधु के लिए नही बनाया गया हो, दूसरे से नही बनवाया गया हो, जो गृहस्थ द्वारा निमत्रण देकर या पुन बुलाकर न दिया गया हो, जो साधु के निमित्त तैयार न किया गया हो, साधु के उद्देश्य से खरीदा नही गया हो, जो नव कोटियो से विशुद्ध हो, शकित आदि दश दोषो से सर्वथा रहित हो, जो उद्गम के सोलह, उत्पादन के सोलह और एषणा के दस दोषो से रहित हो, जिस देय वस्तु मे से बाहर आकर गिरने वाले जीव-जन्तु स्वत पृथक् हो गये हो, वनस्पतिकायिक आदि जीव स्वत या किसी के द्वारा मृत हो गये हो या दाता द्वारा दूर करा दिये गये हो अथवा दाता ने स्वय दूर कर दिये हो, इस प्रकार जो भिक्षा अचित्त हो, जो सर्वथा शुद्ध अर्थात् भिक्षा सम्बन्धी अन्य दोषो से रहित हो, रमणीय हो, ऐसी भिक्षा की गवेषणा करनी चाहिए।

गृहस्थ के घर भिक्षा के लिए गए हुए साधु को आसन पर बैठकर, धर्मोपदेश देकर या कथा-कहानी सुनाकर प्राप्त किया हुआ आहार नही ग्रहण करना चाहिए। वह आहार चिकित्सा, मत्र, जडी-बूटी, औषध आदि बताकर उसके निमित्त प्राप्त नही होना चाहिए। स्त्री-पुरुष आदि के शुभाशुभसूचक लक्षण, उत्पात-भूकम्प, अतिवृष्टि, दुर्भिक्ष आदि स्वप्न ग्रहदशा, मुहूर्त्त आदि का प्रतिपादक ज्योतिषशास्त्र, विस्मयजनक चामत्कारिक प्रयोग या जादू के प्रयोग के कारण दिया जाता आहार नही होना चाहिए, अर्थात् साधु को लक्षण, उत्पात, स्वप्नफल या कुतूहलजनक प्रयोग आदि बतलाकर भिक्षा नही ग्रहण करनी चाहिए। दम्भ अर्थात् माया का प्रयोग करके भिक्षा नही लेनी चाहिए। गृहस्वामी के घर

की रक्षा या पुत्र आदि की रखवाली करने के बदले प्राप्त होने वाली भिक्षा नही लेनी चाहिए-गृहस्थ के पुत्रादि को शिक्षा देने या पढाने के बदले मे भी भिक्षा नही लेनी चाहिए। पूर्वोक्त निमित्तो से भिक्षा नही स्वीकार करनी चाहिए। गृहस्थ का वन्दन-स्तवन-प्रशसा करके, सन्मान-सत्कार करके अथवा पूजा-सेवा करके और वन्दन, मानन एव पूजन-इन तीनो को करके भिक्षा की गवेषणा नही करनी चाहिए।

110. A monk who has taken a vow to practice non-violence properly in respect of earth-bodied, water-bodied, fire-bodied, air-bodied, plant-bodied immobile living being, two-sensed and other mobile living beings and so he has a feeling of self-restraint and of compassion for all, he should therefore seek only faultless food according to the code

What is the faultless food? The food which has not been prepared, or got prepared for a monk, which has no been offered through invitation or with the request to the monk for visiting again, which has not been specially prepared for the monk, which has not been purchased specially for the monk, which is pure in nine ways (mind, word and deed—doing, getting done and appreciating it), which is free from all the ten faults such as doubt and others, which is free from ten faults of origin, sixteen faults of preparing and ten faults of collecting it by monk is called faultless food The substance from which living beings have already separated themselves, from which the plant-bodied living beings have themselves or through some one have already died, from which the giver has already separated or got separated the living beings and thus which has become free from life, is called faultless food A monk should seek such food which is totally pure, which means totally free from faults relating to alms

A monk should not accept food after sitting in the house of the householder, after delivering lecture on scriptures or after telling a story He should not collect the food on the basis of telling medicine, herbs and the like for treatment He should not accept food by telling good or bad signs of men and women, predicting about earthquake, famine, dreams, good time for household activity, astrology, or any wonder-causing incident or by using magic A monk should not collect alms by making use of ego, crookedness or in exchange of his services like looking after the son of the householder or teaching that son. He should not accept food by serving or by appreciating, honouring or respecting the householder

विवेचन · प्रस्तुत पाठ मे अहिंसा के आराधक साधु को निर्दोष भिक्षा की गवेषणा करने का प्रतिपादन किया गया है। सूत्र मे जिन दोषो का उल्लेख हुआ है, उनमे कतिपय विशिष्ट पदो का स्पष्टीकरण इस प्रकार है–

नवकोटिपरिशुद्ध–आहारशुद्धि की नौ कोटियाँ (मर्यादा) ये है–(१) आहारादि की प्राप्ति हेतु साधु स्वय हिंसा न करे, (२) दूसरो से हिंसा न करावे, (३) उस निमित्त हिंसा करने वाले का अनुमोदन न करे, (४) स्वय न पकावे, (५) दूसरे से न पकवावे, (६) पकाने वाले का अनुमोदन न करे, (७) स्वय न खरीदे, (८) दूसरे से क्रय नही करावे, और (९) क्रय करते हुए या किये हुए का अनुमोदन न करे। मन, वचन और काय के योग से ये नव कोटियाँ है।

Elaboration—In the present aphorism, it has been mentioned that a monk who is a practitioner of non-violence should seek only faultless food Some special words occurring in the aphorism regarding faults about food are defined as follows—

Navakotiparishudh—There are nine limitations regarding purity of food They are—(1) monk should not commit any violence for procuring food. (2) He should not get any violence done (3) He should not appreciate one who commits violence (4) He should not cook food himself (5) He should not get the food cooked from others (6) He should not appreciate one who cooks food. (7) He should not purchase himself (8) He should not get anything purchased by others (9) He should not appreciate who purchases for him These nine restrictions should be practised through mind, word and action

एषणा सम्बन्धी दस दोष

(१) **शकित**–दोष की आशका होने पर भी भिक्षा ले लेना।

(२) **म्रक्षित**–भिक्षा देते समय हाथ, पात्र या आहार सचित्त पानी आदि से लिप्त होना।

(३) **निक्षिप्त**–सचित्त पदार्थ पर रखी अचित्त वस्तु ग्रहण करना।

(४) **पिहित**–सचित्त पदार्थ से ढँकी वस्तु लेना।

(५) **सहृत**–किसी पात्र मे से दोषयुक्त वस्तु पृथक् करके उसी पात्र से दी जाने वाली भिक्षा ग्रहण करना।

(६) **दायक**–अबोध बालक आदि अयोग्य दाता से भिक्षा लेना।

(७) **उन्मिश्र**–सचित्त अथवा सचित्तमिश्रित से मिला हुआ आहार लेना।

(८) **अपरिणत**–जो पूर्ण रूप से अचित्त न हुआ हो, ऐसा आहार लेना।

(९) **लिप्त**–तत्काल लीपी हुई भूमि पर से भिक्षा लेना।

(१०) **छर्दित**–जो आशिक रूप से नीचे गिर रहा हो या टपक रहा हो, ऐसा आहार लेना।

Ten Faults Relating to Food

(1) **Shankit**—To accept doubtful food

(2) **Prakshit**—To accept food with hands, pot or food full of life-bearing water

(3) **Nikshipt**—To accept lifeless food kept on a living thing.

(4) **Pihit**—To accept food covered with a thing bearing life

(5) **Sanhrit**—To accept food from the same pot from which faulty material has been separated

(6) **Dayak**—To accept food from a child or incapable person who is ignorant about faults regarding food

(7) **Unmishra**—To accept faultless food mixed with faulty food

(8) **Aparinat**—To accept food which has not becomes completely free from life

(9) **Lipt**—To accept food from ground that has just been plastered

(10) **Chhardit**—The food that is partly falling down or dripping

(१) सोलह उद्गम–दोष

दाता के कारण लगने वाले भिक्षा सम्बन्धी १६ दोष–

(१) **आधाकर्म**–किसी एक–अमुक साधु–विशेष के निमित्त से छह काय के जीवो की हिंसा करके किसी वस्तु को पकाना आधाकर्म कहलाता है। यह दोष चार प्रकार से लगता है–(१) आधाकर्म दोष से दूषित आहार का सेवन करना, (२) आधाकर्मी आहार के लिए निमत्रण स्वीकार करना, (३) आधाकर्मी आहार का सेवन करने वालो के साथ रहना, (४) आधाकर्मी आहारसेवी की प्रशसा करना।

(२) **औद्देशिक**–भिक्षुओ के लिए तैयार किया हुआ आहारादि औद्देशिक कहलाता है। आधाकर्मी आहार किसी विशिष्ट–अमुक एक साधु के उद्देश्य से और औद्देशिक सामान्य रूप से किन्ही भी साधुओ के लिए बनाया गया होता है। यही इन दोनो मे अन्तर है। जिन साधु के लिए बना वही साधु को देना आधाकर्म है। एक साधु के लिए बना और दूसरे साधु को दिया वो उसके लिए औदेशिक है। बीच के 22 तीर्थंकरो के और महाविदेह के साधुओ को औद्देशिक आहार कल्पता है। पर आधाकर्म तो किसी भी साधु को नही कल्पता है।

(३) **पूतिकर्म**–निर्दोष आहार मे दूषित आहार का अश मिला हो तो वह पूतिकर्म दोष से दूषित होता है।

(४) **मिश्रजात**–अपने लिए तथा साधु के लिए दोनो के लिए तैयार किया गया आहार मिश्रजात दोषयुक्त कहलाता है।

(५) **स्थापना**–साधु के लिए अलग रखा हुआ आहार लेना स्थापना दोष है।

(६) **प्राभृतिका**–साधु को आहार देने के निमित्त से जीमनवार के समय को आगे–पीछे करना।

(७) **प्रादुष्करण**–अन्धेरे मे रक्खी हुई वस्तु को लाने के लिए उजाला करके या अन्धकार मे से प्रकाश मे लाया आहार लेना।

(८) **क्रीत**–साधु के निमित्त खरीदकर लाया आहार लेना।

(९) **प्रामित्य**–साधु के लिए उधार लिया हुआ आहार लेना।

(१०) **परिवर्तित**–साधु के लिए आहार मे अदल-बदल करना।

(११) **अभिहृत**–साधु के सामने-उपाश्रय आदि मे आहार लाकर देना।

(१२) **उद्भिन्न**–साधु को देने के लिए किसी बन्द पात्र आदि को खोलना, जैसे-लाख आदि के लेप को हटाना।

(१३) **मालापहृत**–ऊपर रखा आहार निसरणी आदि पर चढकर उतारकर देना।

(१४) **आच्छेद्य**–दुर्बलो से या आश्रित जनो से छीनकर साधु को आहार देना।

(१५) **अनिसृष्ट**–अनेक स्वामियो की वस्तु को उन सबकी अनुमति के बिना देना।

(१६) **अध्यवपूर**–अपने लिए बनने वाले भोजन मे अधिक सामग्री मिला देना-अधिक रसोई तैयार करना।

उद्‌गम के इन सोलह दोषो का निमित्त दाता होता है, अर्थात् दाता के कारण ये दोष होते है।

Sixteen Faults of Production

Sixteen faults that occur due to the person who offers food are as follows—

(1) Aadhakarm—To cook food for a particular monk by causing violence to six types of living beings is called aadhakarm This fault is committed in four ways—(1) To accept such a faulty food, (2) To accept invitation for such a food, (3) To live with those who accept such food, (4) To appreciate those who accept such food

(2) Auddeshik—Food prepared for monks is called auddeshik, Aadhakarmi food is that which is prepared for a particular monk while auddheshik food is that which is prepared in general for monks This is the only difference between them To give food to the monk for whom it is cooked is aadhakarm To give food prepared for a particular monk to some other monk is auddeshik Tirthankars other than the first and the last as well as the ascetics living in Mahavideh area can accept auddeshik food But addhakarmic food is prohibited for all ascetics at all times

(3) Pootikarm—Faultless food in which faulty food is mixed

(4) **Mishrajat**—Food prepared for both oneself and the monk collectively

(5) **Sthapana**—To keep separately for monks To accept such food.

(6) **Prabhritika**—To shift the time of feast for serving the guest in order to offer food to the monks

(7) **Pradushkaran**—To switch on light in order to offer food kept in the dark

(8) **Kreet**—To purchase food for the monk

(9) **Pramilya**—To get food on credit for the monk

(10) **Parivartit**—To exchange food for offering to the monk

(11) **Abhihrit**—To bring food in the place of stay of monk for offering to him

(12) **Udbhinn**—To open a sealed box for offering food brought in it

(13) **Malaphrit**—To bring the food for offering by using a ladder

(14) **Aachhedya**—To snatch food from the weak or dependents for offering to the monk

(15) **Anisrisht**—To offer a thing belonging to many persons jointly without consent of all

(16) **Adhyavapoor**—To add more quantity in the thing to be prepared for oneself in order to offer out of it to a monk

The cause of these faults is the giver So monk commits these faults due to slackness of the giver

(२) सोलह उत्पादन दोष

जो दोष भिक्षा ग्रहण करने वाले साधु के निमित्त से लगते है, वे उत्पादन दोष है।

(१) धात्री—धायमाता जैसे कार्य—बच्चे को खिलाना आदि कार्य करके आहार प्राप्त करना।

(२) दूती—गुप्त अथवा प्रकट सन्देश पहुँचाकर आहार प्राप्त करना।

(३) निमित्त—शुभ—अशुभ निमित्त बतलाकर आहार प्राप्त करना।

(४) आजीव—प्रकट या अप्रकट रूप से अपनी जाति या कुल का परिचय देकर भिक्षा प्राप्त करना।

(५) वनीपक—याचक की भाँति दीनता दिखलाकर आहार प्राप्त करना।

(६) चिकित्सा—वैद्यवृत्ति से आहार प्राप्त करना।

(७) क्रोध–क्रोध करके या गृहस्थ को शाप आदि का भय दिखाकर आहार प्राप्त करना

(८) मान–अभिमान से अपने को प्रतापी, तेजस्वी इत्यादि बतलाकर आहार प्राप्त करना।

(९) माया–छल करके आहार प्राप्त करना।

(१०) लोभ–आहार मे लोभ करना, आहार के लिए जाते समय लालचवश ऐसा निश्चय करके जाना कि आज तो अमुक वस्तु ही लायेगे और उस वस्तु के न मिलने पर उसके लिए भटकना।

(११) पूर्व–पश्चात् सस्तव–आहार देने से पहले या पश्चात् दाता की प्रशसा करके आहार लेना।

(१२) विद्या–विद्या के प्रयोग से आहारलाभ करना।

(१३) मत्र–मत्र के प्रयोग से आहार प्राप्त करना।

(१४) चूर्ण–अदृश्य करने वाले चूर्ण–सुरमा आदि का प्रयोग करके भिक्षालाभ करना।

(१५) योग–पैर मे लेप करने आदि द्वारा सिद्धियाँ दिखलाकर आहार प्राप्त करना।

(१६) मूलकर्म–गर्भाधान, गर्भपात आदि भवभ्रमण के हेतुभूत पापकृत्य बतलाकर आहार प्राप्त करना।

अहिसा धर्म का आराधक श्रमण उक्त दोषो का परिहार करके भिक्षा प्राप्त करता है। आहार व भिक्षा सम्बन्धी विविध दोषो व विधियो का विस्तृत वर्णन दशवैकालिक – अध्ययन ५ तथा आचाराग – भाग २ प्रथम अध्ययन मे किया गया है।

SIXTEEN FAULTS OF METHODS PROCUREMENT

The faults committed due to negligence of an ascetic are called faults of procurement

(1) **Dhatri—**A nurse or governess caring for a child is called dhatri To collect alms by attending to the children like a dhatri

(2) **Dooti—**To collect alms by serving as messanger, secretly or openly

(3) **Nimitt—**To collect alms by telling good and bad omens

(4) **Aajeev—**To collect alms by revealing ones clan or family in a distinct or non-distinct way

(5) **Vaneepak—**To collect food like a beggar expressing one's distressed condition

(6) **Chikitsa—**To collect food as a reward for treating persons

(7) **Krodh—**To collect food by becoming angry or causing fear of bad prophecy

(8) **Maan—**To collect alms by showing himself as very remarkable, auspicious and the like

(9) **Maya**—To collect alms in a deceitful manner.

(10) **Lobh**—To be greedy for food, to decide greedily about specific food before going for alms and to wander about if that food is not available.

(11) **Poorva-Pashchat-Sanstav**—To appreciate the doner before or after he offers

(12) **Vidya**—To collect food by using some art or skill.

(13) **Mantra**—To collect food by reciting some mantra

(14) **Churna**—To collect alms by using some powder or coryllium that makes one invisible

(15) **Yoga**—To collect alms by applying some paste on foot and showing that he has attained super powers

(16) **Moolakarm**—To collect alms by telling methods of having conception or abortion which are causes of sin

A monk practicing non-violence avoids such faults The detailed description of various faults concerning food and the ways of collecting food is available in Chapter 5 of Dashavaikalik Sutra and first Chapter of Acharanga Sutra Part-II

११९. ण वि हीलणाए, ण वि णिंदणाए, ण वि गरहणाए, ण वि हीलण–णिंदण–गरहणाए भिक्खं गवेसियव्वं। ण वि भेसणाए, ण वि तज्जणाए, ण वि तालणाए, ण वि भेसण–तज्जण–तालणाए भिक्खं गवेसियव्वं। ण वि गारवेणं, ण वि कुहणयाए, ण वि वणीमयाए, ण वि गारव–कुहण–वणीमयाए भिक्खं गवेसियव्वं।

ण वि मित्तयाए, ण वि पत्थणाए, ण वि सेवणाए, ण वि मित्त–पत्थण–सेवणाए भिक्खं गवेसियव्वं। अण्णाए अगढिए अदुट्ठे अदीणे अविमणे अकलुणे अविसाई अपरितंतजोगी जयणघडणकरणचरियविणयगुणजोगसंपउत्ते भिक्खू भिक्खेसणाए णिरए।

११९. (शुद्ध निर्दोष भिक्षा की एषणा करने वाले श्रमण को) न तो गृहस्थ की हीलना करके-जाति आदि के आधार पर बदनामी करके, न दाता की निन्दा करके न गर्हा करके–अन्य लोगो के समक्ष दाता के दोष बताकर भिक्षा नही लेनी चाहिए या हीलना, निन्दना एव गर्हा-तीनो को एक साथ करके भी भिक्षा ग्रहण नही करनी चाहिए। इसी तरह साधु को भय दिखलाकर, डॉटकर या धमकी देकर और थप्पड–मुक्का मारकर भी भिक्षा नही ग्रहण करनी चाहिए या तीनो एक साथ करके भी भिक्षा की गवेषणा नही करनी चाहिए। ऋद्धि, रस और साता का गौरव करके भी भिक्षा प्राप्त नही करनी चाहिए, न अपनी दरिद्रता दिखाकर, या मायाचार करके, न भिखारी की भाँति दीनता दिखाकर भिक्षा की

गवेषणा करनी चाहिए और न यह तीनो–गौरव–दरिद्रता और भिखारी की तरह दीनता दिखाकर भिक्षा की गवेषणा करनी चाहिए।

इसी प्रकार मित्रता प्रकट करके, प्रार्थना करके और सेवा करके भी अथवा मित्रता प्रदर्शन, प्रार्थना और सेवा तीनो एक साथ करके भी भिक्षा की गवेषणा नही करनी चाहिए। किन्तु अपने स्वजन, कुल, जाति आदि का परिचय न देते हुए, अज्ञात रूप से आहार मे आसक्ति–मूर्छा से रहित होकर, आहार और आहारदाता के प्रति द्वेष न करते हुए, अदीन–दैन्यभाव से मुक्त रहकर, भोजनादि न मिलने पर मन मे उदासी न लाते हुए, अपने प्रति हीनता–करुणता का भाव न रखते हुए–दयनीय न होकर, विषादरहित वचन–चेष्टा रखकर, निरन्तर मन–वचन–काय को धर्मध्यान मे लगाते हुए–प्राप्त सयमयोग मे उद्यम, अप्राप्त सयम योगो की प्राप्ति मे चेष्टा, विनय के आचरण और क्षमादि के गुणों के योग से युक्त होकर साधु को भिक्षा की गवेषणा मे तत्पर होना चाहिए।

विवेचन आहारादि–ग्रहण के साथ अनेकानेक विधिनिषेध जुडे हुए है। उन सबका अभिप्राय यही है कि साधु ने जिन महाव्रतो को अगीकार किया है, उनका भलीभाँति रक्षण एव पालन करते हुए ही उसे आहारादि प्राप्त करना चाहिए। आहारादि के लिए उसे सयमविरुद्ध कोई क्रिया नही करनी चाहिए। इस प्रकार शरीर, आहार आदि के प्रति ममत्वविहीन होकर सब दोषो से बचकर भिक्षा की गवेषणा करने वाला मुनि ही अहिसा भगवती की विधिवत् आराधना करने मे समर्थ होता है।

111. A true monk seeks faultless food He does not disgrace the householder He does not dishonour others or talk ill of others on the basis of caste He does not condemn the donor in front of others by pointing out the faults of the donor, or of the food given The alms should be collected without condemning, dishonouring or disgracing the giver Similarly a monk should not collect alms by frightening, threatening or slapping the donor He should not collect alms in a fit of ego of prosperity, comforts and enjoyments He should not collect it by expressing his pitiable condition, or by deceit or by expressing his anger He should not collect alms by exhibiting his status, anger or wretched state

Similarly one should not seek bhiksha by exhibiting friendship, by requesting for it or by serving others. He should seek it without mentioning his relatives, family or caste He should collect it without any attachment in food He should have no hatred for the food or for the donor He should be free from feeling of wretchedness He should not feel sad if he finds no food He should not have any disgust or pity towards his own self He should be free from disgust He should engage mind, speech and body continuously in sacred thoughts He should make sincere efforts towards gratification of his self-restraint and to attain the

state in restraint, which he has not got as yet He should practice humility and benevolence In such a state he should go for collection of food (always)

Elaboration—Many codes and restrictions have been laid down in respect of collection of food The purpose of all these is that the monk should be able to follow properly all the major vows, that he has accepted He should accept food meticulously safe-guarding the restrictions and following his ascetic conduct He should not do any activity against his ascetic discipline while seeking alms Thus he should remain non-attached towards his body and the food He should seek alms avoiding all the faults relating to Bhiksha Only such a monk is capable of properly practicing non-violence

जिन प्रवचन का उद्देश्य और फल PURPOSE OF WORD OF THE OMNISCIENT AND ITS RESULT

११२. इमं च णं सव्वजगजीव–रक्खणदयट्ठयाए पावयणं भगवया सुकहियं अत्तहियं पेच्चाभावियं आगमेसिभद्दं सुद्धं णेयाउयं अकुडिलं अणुत्तरं सव्वदुक्खपावाणविउसमणं।

११२. यह प्रवचन (धर्मशास्त्र) श्रमण भगवान महावीर ने जगत् के समस्त जीवो की रक्षा–दया की समीचीन आराधना के लिए कहा है। यह जिन प्रवचन आत्मा के लिए हितकर है, परलोक–आगामी जन्मो मे शुद्ध फल प्रदान करने वाला भविक है तथा भविष्यत् काल मे भी कल्याणकर है। यह भगवद्–प्रवचन शुद्ध–निर्दोष है और दोषो से मुक्त रखने वाला है, नीति एव तर्कसगत है और किसी के प्रति अन्यायकारी नही है, मुक्ति–प्राप्ति का सरल–सीधा मार्ग है, यह अनुत्तर–सर्वोत्तम है तथा समस्त दु खो और पापो को उपशान्त करने वाला है।

112. For practicing compassion for all the living beings and protecting them, Bhagavan Mahavir has delivered this sermon It is beneficial for the soul It is certainly going to provide meritorious results in succeeding lives It is good in future also It is faultless It is going to keep one free from faults It is logical and is not unjust towards anyone It is the straight and easy path for attaining liberation. It is unique. It is capable of pacifying all the troubles and the sins

अहिंसा महाव्रत की पाँच भावनाएँ–प्रथम भावना : ईर्यासमिति
FIVE SENTIMENTS OF MAJOR VOW OF AHIMSA—FIRST SENTIMENT IRIYA SAMITI

अब शास्त्रकार ने यहाँ अहिसा सवर मे रूचि, जिज्ञासा श्रद्धा, उत्साह, दृढता मे वृद्धि करने वाली पाँच भावनाओ का वर्णन किया है। इन पाच भावनाओ का अनुसरण करके अहिंसा भगवती की पूर्ण रूप से उपासना हो सकती है। इन पाच भावनाओ का स्वरूप इस प्रकार है–

११३. तस्स इमा पंच भावणाओ पढमस्स वयस्स होंति—पाणाइवायवेरमण—परिरक्खणट्ठयाए।

पढमं ठाण—गमण—गुणजोगजुंजणजुगंतरणिवाइयाए दिट्ठीए ईरियव्वं कीड—पयंग—तस—थावर—दयावरेण णिच्चं पुप्फ—फल—तय—पवाल—कंद—मूल—दग—मट्टिय—बीय—हरिय—परिवज्जिएण सम्मं। एवं खलु सव्वपाणा ण हीलियव्वा, ण णिंदियव्वा, ण गरहियव्वा, ण हिंसियव्वा, ण छिंदियव्वा, ण भिंदियव्वा, ण वहेयव्वा, ण भयं दुक्खं च किंचि लब्भा पावेउं, एवं ईरियासमिइजोगेण भाविओ भवइ अंतरप्पा असबलमसंकिलिट्ठणिव्वणचरित्तभावणाए अहिंसए संजए सुसाहू।

११३. पाँच महाव्रतो मे से प्रथम महाव्रत की पॉच भावनाएँ प्राणातिपातविरमण अर्थात् अहिंसा महाव्रत की रक्षा के लिए कही गई हैं, जो इस प्रकार है–

इनमे प्रथम है– खडे होने, ठहरने और गमन करने मे स्व और पर किसी को पीडा नही देते हुए गाडी के युग (जूवे) प्रमाण भूमि पर दृष्टि रखकर अर्थात् ३ ५ हाथ आगे की भूमि देखते हुए निरन्तर कीट, पतग, त्रस, स्थावर जीवो की दया मे तत्पर होकर, फूल, फल, छाल, प्रवाल–पत्ते–कोपल–कद, मूल, जल, मिट्टी, बीज एव हरितकाय–दूब आदि को (कुचलने से) बचाते हुए, सम्यक् प्रकार की यतना के साथ चलना चाहिए। इस प्रकार चलने वाले साधु को किसी भी प्राणी की हीलना–उपेक्षा नही करनी चाहिए, निन्दा नही करनी चाहिए, गर्हा नही करनी चाहिए, उनकी हिसा नही करनी चाहिए, उनका छेदन नही करना चाहिए, भेदन नही करना चाहिए, उन्हे व्यथित नही करना चाहिए। इन पूर्वोक्त जीवो को लेश मात्र भी भय या दु ख नही पहुँचाना चाहिए। इस प्रकार के सम्यक् आचरण से साधु ईर्यासमिति मे मन, वचन, काय की प्रवृत्ति से भावित होता है तथा शबलता–(मलिनता) से रहित, सक्लेश से रहित, निरतिचार चारित्र की भावना से युक्त, सयमशील एव अहिसक सुसाधु कहलाता है।

Now the author describes the five sentiments that infuse interest, curiosity, faith, enthusiasm and resolve in Ahimsa Samvar One can immaculately practice Ahimsa by acquiring these five sentiments The sentiments are detailed as follows

113. Out of the five major vows, five sentiments have been mentioned in context of the first major vow of non-violence so as to ensure its proper practice They are as follows—

The first one is — one should properly use his sense of discrimination in standing staying and in going He should not cause trouble to any one He should properly look at a distance of one yoke or 3 5 cubits from himself He should continuously have a feeling of compassion for all mobile living beings such as ants, moths and also for immobile living beings He should avoid trampling flowers, fruits, bark, leaves, buds, root, water, earth, tiny grass etc He should walk with a sense of right

discrimination, while walking in such a manner, the monk should not cause harm or condemn any living being He should not disgrace or despise any one He should not cause violence to them. He should not cut or pierce them. He should not trouble them He should not cause even the slightest fear or trouble to the above-mentioned living beings. By following such a proper conduct, the monk develops the sentiment saturated with iriya samiti (the principle laid down for proper movement) He is then considered a monk free from faulty behaviour and free from any disturbing conduct He then has the faultless conduct. He is called a monk truly following the life of self-restraint and of non-violence

द्वितीय भावना . मन समिति **SECOND SENTIMENT EQUANIMITY OF MIND**

११४. बिइयं च मणेण पावएणं पावगं अहम्मियं दारुणं णिस्संसं वह–बंध–परिकिलेसबहुलं भय–मरण–परिकिलेससंकिलिट्ठं ण कयावि मणेण पावएणं पावगं किंचि वि झायव्वं। एवं मणसमिइजोगेण भाविओ भवइ अतरप्पा असबलमसंकिलिट्ठणिव्वणचरित्तभावणाए अहिंसए संजए सुसाहू।

११४. दूसरी भावना मन समिति है। पापरूप दुष्ट मन से पापमय, अधर्मयुक्त दारुण–भयानक, निर्दय, वध, बन्ध और सताप से भरपूर एव भय, मृत्यु और सक्लेश से कलुषित–मलिन पाप मे डूबे हुये धृष्ट मन से लेशमात्र भी पाप युक्त चिन्तन नही करना चाहिये। इस प्रकार के शुद्ध आचरण से–मन समिति की प्रवृत्ति से अन्तरात्मा भावित होती है तथा निर्मल, सक्लेशरहित, अखण्ड निरतिचार चारित्र की भावना से युक्त, सयमशील एव अहिसक आत्मा सुसाधु कहलाता है।

114. Second sentiment is equanimity of mind One should never have sinful, dreadful, cruel thoughts in his mind which are against the scriptures One should not have thoughts wherein there is predominance of killing, bondage and quarrel He should not have even the slightest thought wherein there is an element of fear, death or trouble with such pure conduct Thus following the equanimity of mind, the inner soul gets benefited A soul which is free from dirt, free from disputes and which is following continuously faultless conduct, which is saturated in the spirit of self-restraint and non-violence, is called a good monk.

तृतीय भावना : वचनसमिति **THIRD SENTIMENT : EQUANIMITY IN SPEECH**

११५. तइयं च वईए पावियाए पावगं ण किंचि वि भासियव्वं। एवं वइ–समिति–जोगेण भाविओ भवइ अंतरप्पा असबलमसंकिलिट्ठणिव्वणचरित्तभावणाए अहिंसए संजए सुसाहू।

११५. अहिंसा महाव्रत की तीसरी भावना वचनसमिति है। पापरूप वाणी के द्वारा किंचित् मात्र भी सावद्य अधर्मयुक्त कठोर, घातक एव सक्लेशजनक वचन का प्रयोग नही करना चाहिए। इस प्रकार की वाक्समिति (भाषासमिति) के योग से युक्त अन्तरात्मा वाला निर्मल, सक्लेशरहित और अखण्ड चारित्र की भावना से ओतप्रोत अहिंसक साधु सुसाधु होता है।

115. The third sentiment of the great vow of non-violence is equanimity of speech One should not utter harsh, pinching or hurting word that may cause even the slightest fault in respect of practice of Dharma He should not use language having an element of sin A monk who practices equanimity of speech, has dirtless inner self and faultless conduct, he is saturated with the feeling of non-violence He is called a real true monk

चतुर्थ भावना · आहारैषणासमिति FOURTH SENTIMENT EQUANIMITY IN SEEKING FOOD

११६. चउत्थं आहारएसणाय सुद्धं उंछं गवेसियव्वं अण्णाए अगढिए अदुट्ठे अदीणे अकलुणे अविसाई अपरितंतजोगी जयण–घडण–करण–चरिय–विणय–गुण–जोग–संपओगजुत्ते भिक्खू भिक्खेसणाए जुत्ते समुदाणेऊण भिक्खचरिय उछ घेत्तूण आगओ गुरुजणस्स पासं गमणागमणाइयारे पडिक्कमण–पडिक्कते आलोयणदायण य दाऊण गुरुजणस्स गुरुसंदिट्ठस्स वा जहोवएस णिरइयारं च अप्पमत्तो पुणरवि अणेसणाए पयओ पडिक्कमित्ता पसते आसीणसुहणिसण्णे मुहुत्तमित्तं च झाणसुहजोगणाणसज्झायगोवियमणे धम्ममणे अविमणे सुहमणे अविग्गहमणे समाहियमणे सद्धासंवेगणिज्जरमणे पवयणवच्छलभावियमणे उट्ठिऊण य पहट्ठतुट्ठे जहारायणियं णिमंतइत्ता य साहवे भावओ य विइण्णे य गुरुजणेण उपविट्ठे।

संपमज्जिऊण ससीसं कायं तहा करयल, अमुच्छिए अगिद्धे अगढिए अगरहिए अणज्झोववण्णे अणाइले अलुद्धे अणत्तट्ठिए असुरसुरं अचवचवं अदुयमविलबियं अपरिसाडियं आलोयभायणे जयं पयत्तेण ववगय–संजोग–मणिंगालं च विगयधूमं अक्खोवंजणाणुलेवणभूयं संजमजायामायाणिमित्तं संजम–भारवहणट्ठयाए भुंजेज्जा पाणधारणट्ठयाए संजएण समियं एवं आहारसमिइजोगेणं भाविओ भवइ अंतरप्पा असबलमसंकिलिट्ठणिव्वणचरित्तभावणाए अहिंसए संजए सुसाहू।

११६. चौथी भावना एषणासमिति है। आहार की एषणा सम्बन्धी समस्त दोषो से रहित, मधुकरी वृत्ति से–अनेक घरो से थोडी–थोडी भिक्षा की गवेषणा करनी चाहिए। भिक्षा लेने वाला साधु अज्ञात रहे–अज्ञात सम्बन्ध वाला रहे, अर्थात् अपने कुल, परिवार व सम्बन्धो का परिचय देकर भिक्षा प्राप्त न करे। गृद्धि–आसक्ति से रहित हो, अदुष्ट–द्वेष से रहित हो, अर्थात् भिक्षा न देने वाले, अपर्याप्त भिक्षा देने वाले या नीरस भिक्षा देने वाले दाता पर द्वेष न करे। करुण–दीन या दयनीय–दयापात्र न बने। भिक्षा न मिलने पर विषाद न करे। मन–वचन–काय की सम्यक् प्रवृत्ति मे निरन्तर निरत रहे। प्राप्त सयमयोगो


ईर्या समिति भावना
छः काय जीवों की हिंसा से बचना चाहिए।
मन समिति भावना
संसार में सभी जीव जीना चाहते हैं, कोई मरना नहीं चाहता। अतः किसी की हिंसा मत करो।
वचन समिति भावना
एषणा समिति भावना
सचित्त हरी सब्जी पर खड़े होकर भिक्षा देना
चूल्हे पर से ताजी रोटी उतारकर देना
शुद्ध भिक्षा न मिलने पर मुनि द्वारा अस्वीकार
दूध को फूंककर देना
भिक्षा में सचित्त नमक की डली देना
सचित्त पानी देना
आदान निक्षेपण समिति भावना
पात्र को सावधानीपूर्वक रखना
पात्र आदि का प्रमार्जन
प्रतिलेखन
प्रतिदिन सुबह शाम वस्त्र आदि का प्रतिलेखन विवेकपूर्वक करना

चित्र-परिचय 16

Illustration No 16

अहिंसा संवर की पाँच भावनाएँ

इस अहिसा सवर को पुष्ट करने के लिए पाँच भावनाएँ बताई गई है—

(1) **इर्यासमिति भावना**—इस भावना मे भावित साधु खडे होने, ठहरने और चलने मे 'स्व' और 'पर' को पीडा नहीं देते हुए, साढे तीन हाथ (युग प्रमाण) आगे की भूमि देखते हुए त्रस एव स्थावर जीवो की हिसा से बचते हुए सम्यक् प्रकार से यतना के साथ चलते है।

(2) **मन समिति भावना**—इस भावना मे भावित साधु अपने मन म पापकारी कलुषित विचारो को नहीं आने देते और छह काय जीवो की हिसा से सदैव हा बचने का शुद्ध भाव मन मे रखते है।

(3) **वचन समिति भावना**—वचन समिति भावना मे भावित साधु अहिसक निर्दोष वाणी का उपयोग करते है।

(4) **एषणा समिति भावना**—आहार की गवेषणा करते समय साधु गृहस्थ के घर मे जाये तब यदि भोजन चूल्हे पर चढा हो, अग्नि आदि का स्पर्श होता हो, सचित्त वस्तु का स्पर्श होता हो, दाता कच्चा जल देवे नमक के ढले आदि सचित्त वस्तु देवे तो वह मुनि को लेना नही कल्पता।

(5) **आदान-निक्षेपण समिति**—सयम साधना मे उपयोगी उपकरणो—वस्त्र पात्र, रजोहरण, मुखवस्त्रिका आदि का यत्नापूर्वक ग्रहण करना और यत्नापूर्वक रखना, आदान निक्षेपण समिति है। इन उपकरणो की प्रतिदिन प्रात और साय क समय प्रतिलेखना (देखना- निरीक्षण करना), प्रमाजना (पूजना) आदि करना चाहिए।

—सूत्र 113-117, पृ 285-290

FIVE SENTIMENTS OF AHIMSA SAMVAR

Five sentiments have been prescribed for enhancing this Ahimsa Samvar

(1) Care in movement Ascetics enkindled with this feeling move taking proper care while standing walking and stopping They move observing three and half cubit ground in front, avoiding mobile and immobile beings and not causing pain to self and others

(2) Care of mind - Ascetics enkindled with this feeling do not allow sinful thoughts to rise in their mind They always nurture attitude of refraining from indulgence in violence towards all six classes of living beings

(3) Care of speech - Ascetics enkindled with this feeling always employ faultless non-violent speech

(4) Care in alms-seeking - Ascetics enkindled with this feeling avoid accepting faulty food Some of these faults are – food being cooked food in touch of fire or any thing having living organism non-boiled water lump of salt or any other thing with living organism

(5) Care in taking and placing things Ascetics enkindled with this feeling accept and places ascetic equipment with proper care This includes clothes pots, ascetic-broom, and handkerchief They also inspect and cleanse these every morning and evening

— Sutra-113-117, pages-285-290

की रक्षा के लिए यतनाशील एव अप्राप्त संयमयोगो की प्राप्ति के लिए उद्यमवान, विनय का आचरण करने वाला तथा क्षमा आदि गुणो की प्रवृत्ति से युक्त रहे। ऐसी भिक्षाचर्या मे तत्पर भिक्षु ऊँच-नीच अनेक घरो मे भ्रमण करके थोडी-थोडी भिक्षा ग्रहण करे। भिक्षा प्राप्त करके अपने स्थान पर गुरुजन के समक्ष आये। जाने-आने मे लगे हुए अतिचारो-दोषो का प्रतिक्रमण करे। प्रतिक्रमण से निवृत्त होकर लाया हुआ आहार-पानी गुरुजनो को दिखला दे, फिर गुरुजन के अथवा गुरुजन द्वारा निर्दिष्ट किसी अग्रगण्य साधु के आदेश पर मार्गदर्शन के अनुसार, सब अतिचारो-दोषो से रहित एव अप्रमत्त होकर विधिपूर्वक अनेषणाजनित दोषो की निवृत्ति के लिए पुन प्रतिक्रमण (कायोत्सर्ग) करे। तत्पश्चात् शान्त भाव से सुखपूर्वक बैठकर मुहूर्त्तभर धर्मध्यान, गुरु की सेवा आदि शुभ योग, तत्त्वचिन्तन अथवा स्वाध्याय के द्वारा अपने मन को, चित्त को स्थिर करके श्रुत-चारित्ररूप धर्म मे सलग्न करे, चित्तशून्यता से रहित होकर, सक्लेश से मुक्त रहकर, कलह अथवा दुराग्रह से रहित मन वाला होकर, समाधियुक्त मन वाला-अपने चित्त को उपशम मे स्थापित करने वाला, श्रद्धा, सवेग-मोक्ष की अभिलाषा और कर्मनिर्जरा मे चित्त को सलग्न करने वाला होकर, मन मे तीर्थंकर के प्रवचनो के प्रति वात्सल्य भाव से ओतप्रोत होकर, ऐसा साधु अपने आसन से उठे और हृष्ट-तुष्ट होकर यथारात्निक-दीक्षा मे छोटे-बडे के क्रमानुसार अन्य साधुओ को आहार के लिए भावपूर्वक निमन्त्रित करे।

गुरुजनो द्वारा लाये हुए आहार को वितरण कर देने के बाद उचित आसन पर बैठे। फिर मस्तक सहित शरीर को तथा हथेली को भलीभाँति प्रमार्जित करके-पूज करके आहार मे अनासक्त होकर, स्वादिष्ट भोजन की लोलुपता से रहित होकर तथा रसो मे आसक्तिरहित होकर, दाता की तथा भोजन की निन्दा नही करता हुआ, सरस वस्तुओ मे आसक्ति न रखता हुआ, अकलुषितभावपूर्वक, लोलुपता से रहित होकर, परमार्थ बुद्धि का धारक साधु (भोजन करते समय) 'सुड्-सुड्' ध्वनि न करता हुआ, 'चप-चप' आवाज न करता हुआ, न बहुत जल्दी-जल्दी और न बहुत देर से, भोजन को भूमि पर न गिराता हुआ, प्रकाशयुक्त चौडे पात्र मे (भोजन करे।) भोजन करते हुए यतनापूर्वक, आदरपूर्वक एव सयोजनादि सम्बन्धी दोषो से रहित, अगार तथा धूम दोष से रहित होकर आहार करे, जिस प्रकार गाडी की धुरी मे तेल देते हो, अथवा घाव पर मलहम लगाते हो, उसी प्रकार केवल सयमयात्रा के निर्वाह के लिए एव सयम के भार को वहन करने के लिए प्राणो को धारण करने के उद्देश्य से साधु को सम्यक् प्रकार से-यतना के साथ भोजन करना चाहिए।

इस प्रकार आहारसमिति (एषणासमिति) मे समीचीन रूप से प्रवृत्ति के योग से अन्तरात्मा भावित करने वाला साधु, निर्मल, सक्लेशरहित तथा अखण्डित चारित्र की भावना वाला अहिंसक सयमी मोक्षमार्ग का आराधक होता है।

116. The fourth sentiment is equanimity in collection of alms A monk should collect food free from all faults relating to it as mentioned in the scriptures He should act like a bumble-bee collecting a little each from many houses He should remain away from familiarity. He should not

develop familiarity. He should not introduce himself by stating his family, his caste and his relatives He should be free from attachment for food. He should be free from hatred He should not despise a person who uses to offer food, who offers insufficient food or who offers tasteless food. He should not seek mercy He should not feel sad if he is not able to get any offering He should continuously engage himself in right state of mind, speech and action A monk should strive for safe-guarding the element he has got beneficial to his ascetic discipline and he should make efforts to procure those beneficial things in ascetic life which he has not got as yet He should be humble He should have good qualities like benevolence and others Such a monk while collecting alms visits houses high and low and should accept only a little form each of them After collecting bhiksha, he should come to his spiritual master He should repent for the faults if any incurred in coming and going After pratikarman (prescribed code of repentance), he should show the food and water that he has collected to his master Thereafter as directed by his master or any senior monk appointed by the master for guidance, he should again do repentance keeping his body in a state of meditation (non-attachment towards the body) and free from slackness, for the faults incurred in collection of alms as prescribed in the scriptures Thereafter he should sit quietly in meditation about Dharma for 48 minutes He should engage in service of his master He should engage his mind in study of scriptures and meditate on its inner thought He should engage himself in right knowledge and right conduct He should avoid the state of mental void He should be free from disturbance, quarrel or stubborn attitude He should have an equanimous mind He should establish his mind in a state of subdued passions. He should have deep faith He should have a keen desire for liberation and shedding of Karmas He should have deep interest in lessons about scriptures He should get up in such a state of mind and invite happily and in a contented manner other monks, junior and senior to him, for food according to their seniority in ascetic life

After distributing the food among the monks, he should take his seat He should then clean his body and the palm of his hand properly. He should then take his food in a detached manner He should not be greedy about tasty food He should not be attached to their juices. He should not condemn the food or the doner He should not have attachment in tasty

food He should not have hatred against anyone He should be totally free from greed He should have an attitude of service to all. He should not make any condemnable sound while eating He should neither eat very quickly nor very slowly He should not drop any food on the ground while eating He should take food in a careful manner from a broad pot and where there is light He should take food in a dignified manner He should avoid faults regarding mixing the food He should avoid other faults regarding eating food He should take food in such a manner as a cart is oiled or an ointment is placed on the wound He should take food only to properly lead the life of self-restraint, to undergo ascetic discipline in a proper manner and to keep his life-force in order in ascetic conduct A monk should engage himself in the state of equanimity regarding food, keep his soul free from dirt or troubles and lead the life of faultless conduct Such a saint following the principles of non-violence is a true practitioners of path leading to salvation

पाँचवी भावना आदान–निक्षेपणसमिति

FIFTH SENTIMENT DISCRIMINATION IN KEEPING AND PICKING UP THINGS

११७. पंचमं आयाणणिक्खेवणसमिई–पीढ–फलग–सिज्जा–संथारग–वत्थ–पत्त–कंबल–दंडग–रयहरण–चोलपट्टग–मुहपोत्तिय–पायपुंछणाई एयं पि संजमस्स उवबूहणट्ठयाए वायातव–दंसमसग–सीयपरिरक्खणट्ठयाए उवगरणं रागदोसरहियं परिहरियव्वं संजमेणं णिच्चं पडिलेहण–पप्फोडण–पमज्जणयाए अहो य राओ य अप्पमत्तेण होइ सययं णिक्खियव्वं च गिण्हियव्वं च भायणभंडोवहिउवगरणं एवं आयाणभडणिक्खेवणासमिइजोगेण भाविओ भवइ अंतरप्पा असबलमसंकिलिट्ठणिव्वणचरित्तभावणाए अहिंसए सजए सुसाहू।

११७. अहिसा महाव्रत की पाँचवी भावना आदान–निक्षेपणसमिति है। इसका स्वरूप इस प्रकार है–सयम के उपकरण पीठ–पीढा, चौकी, फलक पाट, शय्या–शयन का आसन, सस्तारक–घास का बिछौना, वस्त्र, पात्र, कम्बल, दण्ड, रजोहरण, चोलपट्ट, मुखवस्त्रिका, पादप्रोछन–पैर पोछने का वस्त्रखण्ड, ये अथवा इनके अतिरिक्त उपकरण सयम की रक्षा या वृद्धि के उद्देश्य से तथा पवन, धूप, डास, मच्छर और शीत आदि से शरीर की रक्षा के लिए धारण–ग्रहण करना चाहिए। (शोभावृद्धि आदि किसी अन्य प्रयोजन से नही)। साधु सदैव इन उपकरणो के प्रतिलेखन, प्रस्फोटन–झटकारने और प्रमार्जन करने मे, दिन मे और रात्रि मे सतत अप्रमत्त रहे और भाजन–पात्र, भाण्ड–मिट्टी के बर्तन, उपधि–वस्त्र तथा अन्य उपकरणो को यतनापूर्वक रखे या उठाये।

इस प्रकार आदान–निक्षेपणसमिति के योग से भावित अन्तरात्मा वाला साधु निर्मल, असक्लिष्ट तथा अखण्ड–निरतिचार चारित्र की भावना से युक्त अहिंसक सयमशील सुसाधु होता है अथवा ऐसा सुसाधु ही अहिंसक होता है।

117. Fifth sentiment of the major vow of non-violence is equanimity in keeping and picking of things Its nature is as follow

The items of use in ascetic life are small seat, small table, board, bedding of hay, cloth to sit, cloth to wear, pots, blanket, wooden rod, broom, cloth to cover the body, mukhvastrika (cloth at the mouth) piece of cloth for cleaning the feet and other suchlike articles used to save oneself from wind, sun, mosquito bite and cold He should accept them only for advancement in ascetic life and not for outward grandeur A monk should always be vigilant in inspecting these articles, in spreading them, in cleaning them during the day and at night He should place his articles carefully and pick them up in a very careful manner.

Thus a monk who practices equanimity in keeping them and in picking them up, his inner self remains free from pollution, or disturbance He has the sentiment of practicing faultless ascetic conduct He is non-violent and strict in ascetic discipline He is the true monk Only such a monk can be fully non-violent

विवेचन · पूर्वोक्त पाठ मे अहिंसा महाव्रत के परिपूर्ण पालन के लिए आवश्यक पाँच भावनाओ के स्वरूप का दिग्दर्शन कराया गया है और यह स्पष्ट किया है कि इन भावनाओ के अनुसार आचरण करने वाला ही पूर्ण अहिंसक हो सकता है, वही सुसाधु कहलाने योग्य है, वही चारित्र को निर्मल-निरतिचार रूप से पालन कर सकता है। अहिंसाव्रत की पाँच भावनाएँ पाँच समितियो के नाम से प्रसिद्ध है।

प्रथम ईर्यासमिति भावना- साधु को अनेक प्रयोजनो से गमनागमन करना पडता है। किन्तु उसका गमनागमन विशिष्ट विधि के अनुसार होना चाहिए। गमन करते समय उसे अपने महाव्रत को ध्यान मे रखना चाहिए और पृथ्वीकायिक, अप्कायिक, तेजस्कायिक, वायुकायिक एव वनस्पतिकायिक स्थावर जीवो को तथा कीडे-मकोडे आदि छोटे-मोटे त्रस जीवो को किचित् मात्र भी आघात न लगे, उनकी विराधना न हो जाये, इस ओर सतत सावधान रहना चाहिए। उसके सामने यह सिद्धान्त स्पष्ट होना चाहिये कि "मै विश्व मे प्राणिमात्र की रक्षा और दया के लिये साधु बना हूँ।" उसे छोटे-बडे सभी प्राणियो के प्रति दया परायण रहना चाहिये। साधु को वार्त्तालाप मे चित्त न लगाते हुए गन्तव्य मार्ग पर ही दृष्टि रखनी चाहिए। आगे की साढे तीन हाथ प्रमाण भूमि को देखते हुए एकाग्र भाव से चलना चाहिए। इस प्रकार का चिन्तन और प्रयोग इस भावना के साथ होना चाहिये।

दूसरी मन समिति भावना- अहिंसा का पूर्ण रूप से पालन करने के लिए मन मे उठने वाले बुरे विचार या भावो से सदा बचते रहना चाहिए। मन आत्मा का सूक्ष्म किन्तु अत्यन्त शक्तिशाली साधन है। वह कर्मबन्ध का और कर्मनिर्जरा का भी प्रधान हेतु है। उस पर नियन्त्रण रखने के लिए सतत् जागरूक रहने की आवश्यकता

है। जरा-सी सावधानी हटी और वह कही का कही दौड जाता है। अत सावधान रहकर सदैव यह चिन्तन करना आवश्यक है कि मन मे किसी भी प्रकार का पापमय, अधार्मिक या अप्रशस्त विचार उत्पन्न न हो, इसके लिए सदा शुद्ध भावों, शुभ ध्यानो मे मन को सलग्न रखना चाहिए।

तीसरी वचन-समिति भावना- इसमें वाणी-प्रयोग सम्बन्धी विवेक को जगाए रखने की मुख्यता है। वध-बन्धकारी, क्लेशोत्पादक, पीडाजनक अथवा तीखे, मन को चुभने वाले वचनो का प्रयोग नही करना चाहिए। साधु के लिए मौन सर्वोत्तम है किन्तु वचनप्रयोग आवश्यक होने पर हित-मित, सत्य और मधुर वचनो का ही प्रयोग करना चाहिए।

चौथी आहार-एषणा भावना- आहार की प्राप्ति साधु को भिक्षा द्वारा ही होती है। अतएव जैनागमो मे भिक्षा सम्बन्धी विधि बहुत विस्तारपूर्वक प्रतिपादित की गयी है। भिक्षा सम्बन्धी दोषो का उल्लेख पहले किया जा चुका है। आहार पकाने मे हिसा अवश्यभावी है। किन्तु इस हिंसा से पूरी तरह बचाव भी हो और भिक्षा भी प्राप्त हो जाए, ऐसा मार्ग भगवान् ने बतलाया है। इसी प्रयोजन से साधु जीवन के लिए उद्‌गमदोष, उत्पादनदोष से रहित शुद्ध भिक्षा चर्या बताई है।

पाँचवी आदान-निक्षेपणसमिति भावना- साधु अपने शरीर पर भी ममत्वभाव नही रखते, किन्तु 'शरीरमाद्य खलु धर्मसाधनम्' उक्ति के अनुसार सयम-साधना का निमित्त मानकर उसकी रक्षा के लिए अनेक उपकरणो को स्वीकार करते है। इन उपकरणो को उठाते समय एव रखते समय यतना रखनी चाहिए। यथासमय शास्त्र विधिनुसार उनका प्रतिलेखन तथा प्रमार्जन भी अप्रमत्त रूप से करते रहना चाहिए।

इस प्रकार अहिंसा महाव्रत की इन भावनाओ के यथावत् परिपालन से व्रत निर्मल, निरतिचार बनता है और इन निरतिचार व्रतो का पालक साधु ही सुसाधु है, वही मोक्ष की साधना मे सफलता प्राप्त करता है।

Elaboration—In the above mentioned aphorism relating to five sentiments, the nature of five sentiments, which are essential for meticulously practicing the major vow of Ahimsa have been discussed Only such person who conducts his life according to them, can be totally non-violent Only that person is fit to be called a good monk He alone can lead a faultless ascetic life

The five thought-reflections relating to the vow of non-violence are famously known as five samitis

First sentiment is equanimity in movement (Iriya Samiti) A monk has to move about for various purposes But his movement should be according to the special code He should keep in mind his major vow while moving about So that it may not cause hurt to any earth-bodied, water-bodied, fire-bodied, air-bodied and plant-bodied immobile living being or any small or gross mobile living being He should be vigilant continuously that it may not cause any disgust in them He should be clear about the fact that he has become a monk. So in order to save

oneself from activity causing hurt to oneself and others, one should not look hither and thither He should not engage himself in any talk He should keep an eye only on the path he is treading He should move with concentration looking closely upto a distance of 3 5 cubits ahead of him Such thought and action should accompany this sentiment

The second sentiment is equanimity of the mind in order to practice non-violence meticulously One should keep his mind continuously away from bad thoughts and activities Mind is the subtlest and extremely powerful instruments of the soul It is the primary cause of bondage of Karma and also of shedding of Karma In order to control it, one has to be continuously vigilant A little slackness may take it far away So it is necessary to look after it continuously In case any type of sinful, irreligious or bad thought arises one should immediately engage himself in religious contemplation

In the third sentiment regarding speech, one should keep awake his sense of discrimination regarding speech He should not use such words which cause killing, bondage, quarrels, hurt or which are harsh To observe silence is the best for a monk But when it is necessary to speak, he should only use limited words and these also should be sweet, to the point and relating to the welfare of others

Fourth sentiment is about collection of food A monk collects food through offering So in Jain scriptures the method for it and the taboos relating to it have been described in detail The faults relating to collection of alms have already been discussed earlier Violence is certainly there in cooking food But the lord has stated the method with which it (the violence) can be totally avoided and the food can also be procured To keeping this fact in mind, the faults relating to preparation and collection of food have been narrated

Fifth sentiment is equanimity in taking and placing a thing A monk does not have any attachment for his body But the physical body is necessary for religious practices So he accepts various articles necessary for leading the life of self restraint as a monk He should have proper care or vigilance while picking up such articles He should look into them at regular intervals as prescribed in the code He should clean them without any slackness

Thus by following these five sentiments of the major vow of non-violence, the practice of vow becomes spotless and free from all faults Only that monk is a real monk who practices his vow in a faultless manner. He alone attains success in his practice for salvation.

११८. एवमिणं संवरस्स दारं सम्मं संवरियं होइ सुप्पणिहियं इमेहिं पंचहिं पि कारणेहिं मण-वयण-कायपरिरक्खिएहिं णिच्चं आमरणंतं च एस जोगो णेयव्वो धिइमया मइमया अणासवो अकलसो अच्छिद्दो असंकिलिट्ठो सुद्धो सव्वजिणमणुण्णाओ।

११८. इस प्रकार मन, वचन और काय से सुरक्षित इन पाँच भावना रूप उपायो से यह अहिंसा-सवरद्वार पालित-सुप्रणिहित होता है। अतएव धैर्यशाली और मतिमान् पुरुष को सदा जीवनपर्यन्त सम्यक् प्रकार से इसका पालन करना चाहिए। यह अनास्रव है, अर्थात् नवीन कर्मो के आस्रव को रोकने वाला है, दीनता से रहित है, कालुष्य-मलीनता से रहित और अच्छिद्र-अनास्रवरूप है, अपरिस्रावी-कर्मरूपी जल के आगमन को अवरुद्ध करने वाला है, मानसिक सक्लेश से रहित है, शुद्ध है और सभी तीर्थंकरो द्वारा अनुज्ञात-अभिमत है।

118. Thus non-violence, the gateway of Samvar is guarded through five methods above-mentioned, meticulously followed mentally, vocally and physically So the intelligent steadfast person should follow them properly throughout his life It is Anasrava, which means that it stops the inflow of Karma It is devoid of wretchedness It is free from polluted bent of mind It is free from any gaps It stops the entrance of Karma water in the self It is free from mental disturbances It is pure It is the dictum of all the Tirthankars

विवेचन हिंसा आस्रव का कारण है तो उसकी विरोधी अहिंसा आस्रव को रोकने वाली हो, यह स्वाभाविक ही है।

अहिसा के पालन मे दो गुणो की अपेक्षा रहती है-धैर्य की और विवेक की। विवेक के अभाव मे अहिंसा के वास्तविक आशय को समझा नही जा सकता और वास्तविक आशय को समझे बिना उसका आचरण नही किया जा सकता है। विवेक विद्यमान हो और अहिंसा के स्वरूप को वास्तविक रूप मे समझ भी लिया जाए, मगर साधक मे यदि धैर्य न हो तो भी उसका पालन होना कठिन है। अहिंसा के उपासक को व्यवहार मे अनेक कठिनाइयाँ आती है, सकट भी झेलने पडते है, ऐसे प्रसगो पर धीरज ही उसे अपने व्रत मे अडिग रख सकता है। अतएव पाठ मे **'धिइमया मइमया'** इन दो पदो का प्रयोग किया गया है।

Elaboration—Violence is the cause of inflow of Karma So it is natural that non-violence stops the inflow

Two qualities are necessary for the practice of non-violence in life, namely perseverance and sense of discrimination. In the absence of

discrimination, the real nature of non-violence cannot be understood and without understanding the real nature, non-violence cannot be practiced in conduct In case discrimination is there and the real nature of non-violence has also been understood, still in the absence of perseverance, it is difficult to follow it One who practices non-violence, he faces many difficulties in daily life He has to undergo many troubles, on such occasions, only perseverance can keep him firm in his vow. So in the aphorism two words 'dhiyimaya mayimaya' have been used

११९. एवं पढमं संवरदारं फासियं पालियं सोहियं तीरियं किट्टियं आराहियं आणाए अणुपालियं भवइ। एव णायमुणिया भगवया पण्णवियं परूवियं पसिद्धं सिद्धं सिद्धवरसासणमिणं आघवियं सुदेसियं पसत्थं।

॥ पढमं संवरदारं समत्तं। त्ति बेमि॥

११९. इस प्रकार (विधि पूर्वक पाचो भावनाओ का पालन करने से) प्रथम (अहिसा) सवर द्वार स्पष्ट होता है, पालित होता है, शोधित होता है, तीर्ण होता है, कीर्तित, आराधित और (जिनेन्द्र भगवान की) आज्ञा के अनुसार पालित होता है। ऐसा ज्ञात कुल नन्दन भगवान महावीर ने प्रज्ञापित किया है एव प्ररूपित किया है। यह सिद्धवरशासन प्रसिद्ध है, सिद्ध है, बहुमूल्य है, सम्यक् प्रकार से उपदिष्ट है और प्रशस्त है।

प्रथम सवर द्वार समाप्त हुआ। वैसा मै कहता हूँ। (जैसा मैने सुना है।)

119. Following the method mentioned above, one can practice the first gateway of Samvar He can purify his self He can meticulously follow it His reputation spreads far and wide He becomes a true follower of the order He is than practitioner according to the order laid by Tirthankars Such is the famous, precious and properly defined order of Siddhas It is meritorious

This concludes the first door of Samvar So I say (as I have heard)

विवेचन यहाँ प्रथम अहिंसा सवरद्वार की महिमा अनेक विशेषणो द्वारा व्यक्त करते हुये इसका उपसहार किया गया है। इस सवरद्वार मे जो-जो कथन किया गया है, उसी प्रकार से इसका समग्र रूप मे परिपालन किया जाता है।

॥ प्रथम संवरद्वार समाप्त॥

Elaboration—Here the first door of Samvar, Ahimsa, has been concluded by mentioning its importance in the form of adjectives Whatever has been mentioned here is observed completely and meticulously

• FIRST GATEWAY OF SAMVAR CONCLUDED •

द्वितीय अध्ययन : सत्य
SECOND CHAPTER : TRUTH

प्रथम सवरद्वार प्राणातिपात विरमण रूप अहिंसा के विशद् विवेचन के पश्चात् द्वितीय सवरद्वार सत्य का निरूपण किया जा रहा है। अहिंसा की पूर्ण साधना के लिए असत्य से विरत होकर सत्य की समाराधना आवश्यक है। सत्य की समाराधना के बिना अहिंसा की आराधना नही हो सकती। वस्तुत सत्य अहिंसा को पूर्णता प्रदान करता है। वह अहिंसा को अलंकृत करता है। अतएव अहिंसा के पश्चात् सत्य का निरूपण किया जाता है। सत्य की महिमा और उसके स्वरूप का वर्णन निम्नलिखित सूत्र पाठ मे किया गया है।

After discussing in detail non-violence, the first gateway of Samvar, truth, the second gateway is narrated here. In order to properly follow non-violence in all aspects, it is essential to discard falsehood and to practice truth meticulously. Without practicing truth, non-violence cannot be practiced. In fact truth provides completeness to non-violence It beautifies non-violence So after non-violence, truth is going to be discussed The concept of truth and its glory has been described in the following text

सत्य की महिमा THE GLORY OF TRUTH

१२०. [१] जंबू ! बिइयं य सच्चवयणं सुद्धं सुचियं सिवं सुजायं सुभासियं सुव्वयं सुकहियं सुदिट्ठं सुपइट्ठियं सुपइट्ठियजसं सुसंजमिय–वयण–बुइयं सुरवर–णरवसभ–पवरबलवग–सुविहियजणबहुमयं, परमसाहुधम्मचरणं, तव–णियमपरिग्गहियं सुगइपहदेसगं य लोगुत्तमं वयमिणं।

विज्जाहरगगणगमणविज्जाण साहकं सग्गमग्ग–सिद्धिपहदेसगं अवितहं, तं सच्चं उज्जुयं अकुडिलं भूयत्थं अत्थओ विसुद्धं उज्जोयकरं पभासगं भवइ सव्वभावण जीवलोए, अविसंवाइ जहत्थमहुरं।

पच्चक्खं दयिवयं व जं तं अच्छेरकारगं अवत्थंतरेसु बहुएसु मणुसाणं सच्चेण महासमुद्दमज्झे वि मूढाणिया वि पोया। सच्चेण य उदगसंभमम्मि वि ण वुज्झइ ण य मरंति थाहं ते लहंति।

सच्चेण य अगणिसंभमम्मि वि ण डज्झंति उज्जुगा मणुस्सा।

सच्चेण य तत्ततेल्ल–तउलोहसीसगाइं छिवंति धरेंति ण य डज्झंति मणुस्सा।

पव्वयकडकाहिं मुच्चंते ण य मरंति। सच्चेण य परिग्गहिया, असिपंजरगया समराओ वि णिइंति अणहा य सच्चवाई। वहबंधभियोगवेर–घोरेहिं पमुच्चंति य अमित्तमज्झाहिं णिइंति अणहा य सच्चवाई। सादेव्वाणि य देवयाओ करेंति सच्चवयणे रत्ताणं।

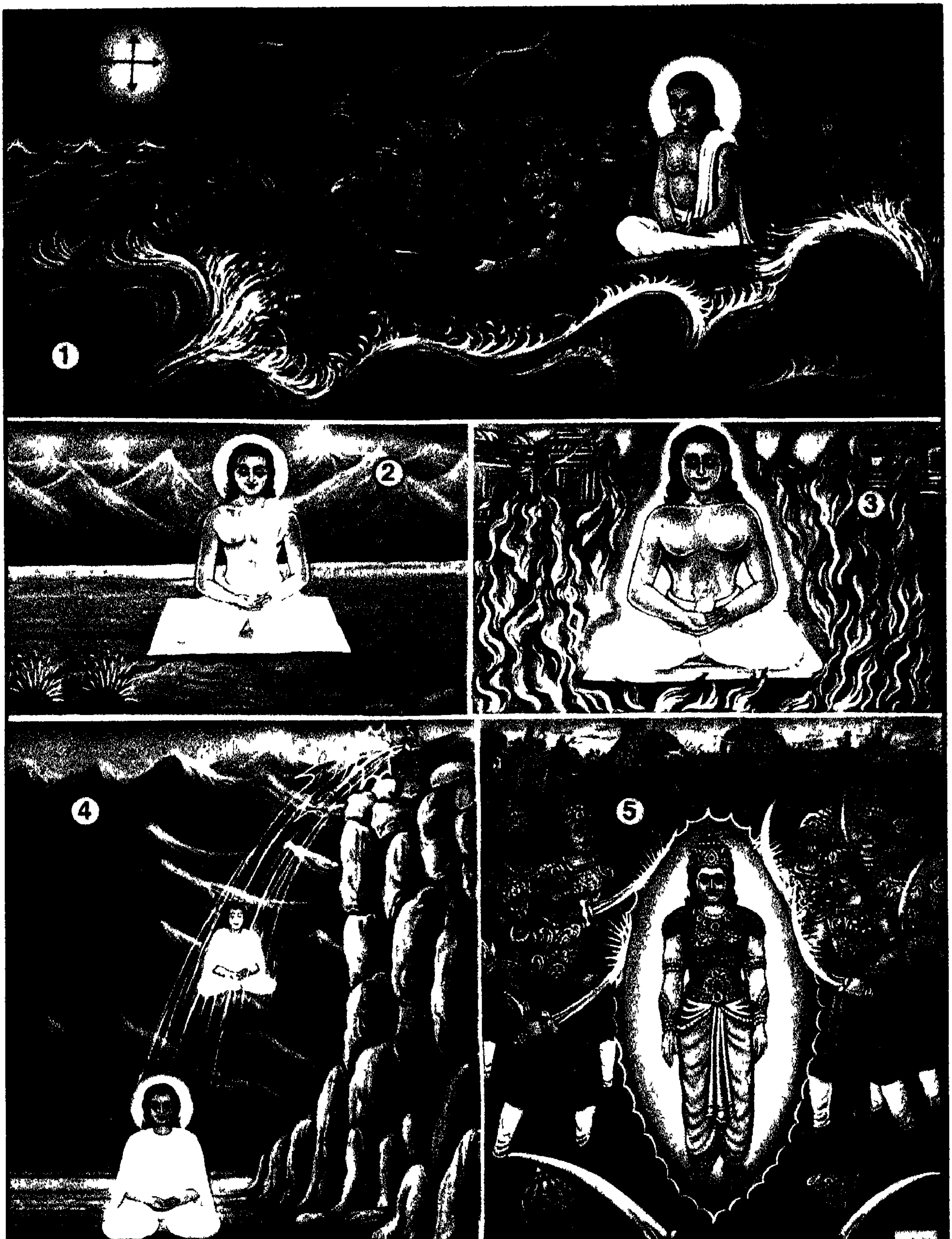
तं सच्चं भगवं तित्थयरसुभासियं दसविहं, चोद्दसपुव्वीहिं पाहुडत्थविइयं, महरिसीण य समयप्पइण्णं, देविंदणरिंदभासियत्थं, वेमाणियसाहियं, महत्थं, मंतोसहिविज्जासाहणत्थ, चारणगणसमणसिद्धविज्जं, मणुयगणाणं वंदणिज्जं, अमरगणाणं अच्चणिज्जं, असुरगणाण य पूयणिज्जं, अणेगपासंडिपरिग्गहियं जं तं लोगम्मि सारभूयं, गंभीरयरं महासमुद्दाओ, थिरयरगं मेरुपव्वयाओ, सोमयरगं चंदमंडलाओ, दित्तयरं सूरमंडलाओ, विमलयर सरयणहयलाओ, सुरभियरं गंधमादणाओ, जे वि य लोगम्मि अपरिसेसा मंतजोगा जवा य विज्जा य जंभगा य अत्थाणि य सत्थाणि य सिक्खाओ य आगमा य सव्वाइं पि ताइं सच्चे पइट्ठियाइं।

१२०. [१] श्री सुधर्मा स्वामी ने अपने प्रमुख शिष्य श्री जम्बू स्वामी से कहा-हे जम्बू ! यह **सत्यवचन** नाम का दूसरा सवर है। सत्य शुद्ध-निर्दोष, शुचि-पवित्र, शिव-समस्त प्रकार के उपद्रवो से रहित, सुजात-प्रशस्त-विचारो से उत्पन्न होने के कारण सुभाषित-सुन्दर सुस्पष्ट वचन रूप है। यह उत्तम व्रतरूप है और सम्यक् विचारपूर्वक कहा गया है। इसे ज्ञानीजनो ने कल्याण के साधन के रूप मे देखा है, अर्थात् ज्ञानियो की दृष्टि मे सत्य कल्याण का कारण है। यह सुप्रतिष्ठित है-सुस्थिर कीर्ति वाला है, समीचीन रूप मे सयमयुक्त वाणी से कहा गया है। सत्य सुरवरो-उत्तम कोटि के देवो, नरवृषभो-श्रेष्ठ मानवो, अतिशय बलधारियो एव सुसाधुजनो द्वारा बहुमत-अतीव मान्य किया गया है। श्रेष्ठ-उत्कृष्ट साधुओ का धार्मिक अनुष्ठान है और तप एव नियम से स्वीकृत किया गया है। सद्गति के पथ का प्रदर्शक है और यह व्रत लोक मे उत्तम माना गया है।

यह सत्य विद्याधरो की आकाशगामिनी विद्याओ को सिद्ध करने वाला है। स्वर्ग के मार्ग का तथा मुक्ति के मार्ग का प्रदर्शक है। यथातथ्य अर्थात् मिथ्याभाव से रहित है, ऋजुक-सरलभाव से युक्त है, कुटिलता से रहित है, विद्यमान पदार्थो का ही प्रयोजनवश कथन करने वाला है, सर्व प्रकार से शुद्ध है-असत्य या अर्द्धसत्य की मिलावट से रहित है (असत्य का सम्मिश्रण जिसमे नही होता वही विशुद्ध सत्य कहलाता है) सत्य ज्ञान को प्रकाशित करने वाला है, इस जीवलोक मे समस्त पदार्थों का विसवादरहित-यथार्थप्ररूपक है। यह यथार्थ होने के कारण मधुर है और मनुष्यो का बहुत-सी विभिन्न प्रकार की अवस्थाओ मे आश्चर्यजनक कार्य करने वाले देवता के समान है, अर्थात् मनुष्यो पर आ पडे घोर सकट की स्थिति मे वह देवता की तरह सहायक बनकर सकट से उबारने वाला है।

किसी महासमुद्र के बीच मे दिशा भ्रम से ग्रस्त हो जाने के कारण जिनकी बुद्धि कार्य नही कर रही हो, ऐसे सैनिको के जहाज भी सत्य के प्रभाव से ठहर जाते है, डूबते नही है। सत्य का ऐसा प्रभाव है कि भँवरो से युक्त जल के प्रवाह मे भी मनुष्य बहते नही है, मरते नही है, किन्तु थाह पा लेते है।

सत्य के प्रभाव से जलती हुई अग्नि के भयकर घेरे मे पडे हुए मानव जलते नही है। सत्यनिष्ठ सरल हृदय वाले सत्य के प्रभाव से तपे-उबलते हुए तेल, राँगे, लोहे और सीसे को छू लेते है, हथेली पर रख लेते है, फिर भी जलते नही है। मनुष्य पर्वत के शिखर से गिरा दिये जाते है-नीचे फैक दिये जाते है, फिर भी (सत्य के प्रभाव से) मरते नही है।


1
2
3
4
5
17

चित्र-परिचय 17

Illustration No. 17

सत्य की महिमा

सत्यभाषी मनुष्य को यदि विपत्तियाँ आकर घेर ले तो भी उसका सत्य-व्रत उसके लिए देव के समान आश्चर्यकारी प्रत्यक्ष सहायक होता है। चित्र मे सत्य की इसी महिमा को दिखाया गया है।

1 महासमुद्र की ऊँची-ऊँची लहरो मे चलती नौका के नाविको की बुद्धि भ्रमित होने पर भी वह नौका उस महासमुद्र मे डूबती नहीं है, किनारे लग जाती है। क्योंकि उस नौका मे सत्यवादी मनुष्य बैठा हुआ है।

2 विषैला सर्प भी बिना दश मारे ही सत्यवादी व्यक्ति के पास से गुजर जाता है।

3 सत्य के प्रभाव से भयकर अग्नि का उपद्रव भी सत्यव्रती व्यक्ति को नहीं जला सकता है।

4 सत्यनिष्ठ व्यक्ति को पर्वत के शिखर से नीचे फैंकने पर भी वह सुरक्षित बच जाता है।

5 सत्यव्रती मनुष्य सग्राम मे शत्रुओ द्वारा तलवार से घेरे जाने पर भी अक्षत शरीर सकुशल बाहर निकल आता है।

—सूत्र 120, पृ 296

GLORY OF TRUTH

Even when a truthful person is in great trouble his vow of truthfulness miraculously protects him like a god These illustrations show this glory of truth

(1) A boat rocking on high waves in a turbulent ocean does not drown in spite of confused boatmen It reaches the shore because a truthful person is sitting in the boat

(2) A poisonous snake crawls away from near a truthful person without biting him

(3) Even a forest fire does not burn a truthful man because of the power of truth

(4) A truthful person is saved even when thrown from a hilltop

(5) A truthful person comes out unharmed from a battle even after being surrounded by swordsmen

— Sutra-120, page-296

सत्य के (सुरक्षा-कवच को) धारण करने वाले मनुष्य चारो ओर से तलवारो के घेरे मे घिरे होने पर भी अक्षत-शरीर (सकुशल) सग्राम से बाहर निकल आते है।

सत्यवादी मानव वध, बन्धन सबल प्रहार और घोर वैर-विरोधियो के बीच मे से मुक्त हो जाते है-बच निकलते है। सत्यवादी शत्रुओ के घेरे मे से बिना किसी क्षति के सकुशल बाहर आ जाते है। सत्य वचन मे अनुरागी जनो का देवता भी सान्निध्य करते है-उसके साथ रहकर उनकी सेवा-सहायता करते है।

तीर्थंकरो द्वारा भली प्रकार से वर्णित यह सत्य भगवान् दस प्रकार का है। इसे चौदह पूर्वो के ज्ञाता महामुनियो ने प्राभृतो (पूर्वगत विभागो) से जाना है एव महर्षियो ने इसे सिद्धान्त रूप मे जाना है-साधुओ के द्वितीय महाव्रत मे सिद्धान्त द्वारा स्वीकार किया गया है। देवेन्द्रो और नरेन्द्रो ने इसका अर्थ कहा है अथवा देवेन्द्रो एव नरेन्द्रो को इसका अर्थ तत्त्वरूप से कहा गया है। यह सत्य वैमानिक देवो द्वारा समर्थित एव आसेवित है। महान् प्रयोजन वाला है। यह मत्र औषधि और विद्याओ की सिद्धि का कारण है-सत्य के प्रभाव से मत्र और विद्याओ की सिद्धि होती है। यह चारण (विद्याचारण, जघाचारण) आदि मुनिगणो की विद्याओ को सिद्ध करने वाला है। मानवगणो द्वारा वंदनीय है-स्तवनीय है, अर्थात् स्वय सत्य तथा सत्यनिष्ठ पुरुष, मनुष्यो की प्रशसा-स्तुति का पात्र बनता है। अमरगणो-देवसमूहो के लिए भी अर्चनीय तथा असुरकुमार आदि भवनपति देवो द्वारा भी पूजनीय होता है। अनेक प्रकार के व्रत धारण करने वाले पाखण्डी साधुओ ने भी इसे स्वीकार किया है। इस प्रकार की महिमा से मण्डित यह सत्य लोक मे सारभूत है। महासागर से भी अधिक गम्भीर है। सुमेरु पर्वत से भी अधिक स्थिर-अटल है। चन्द्रमण्डल से भी अधिक सौम्य-शान्तिदायक है। सूर्यमण्डल से भी अधिक तेजस्वी है। शरत्-काल के आकाश तल से भी अधिक निर्मल है। गन्धमादन (गजदन्त गिरि-विशेष) से भी अधिक सुगन्धित है। लोक मे जो भी समस्त मत्र है, वशीकरण आदि योग है, जप है, प्रज्ञप्ति प्रभृति विद्याएँ है, दस प्रकार के जृंभक देव है, धनुष आदि अस्त्र है, जो भी तलवार आदि शस्त्र है अथवा अर्थनीति आदि लौकिक शास्त्र है, कलाएँ है, आगम आदि धर्म शास्त्र है, वे सभी सत्य मे प्रतिष्ठित है अर्थात् ये सब सत्य से ही उपलब्ध या सिद्ध होते है।

120. [1] Shri Sudharma Swami told his principal disciple, Jambu Swami, "O Jambu ! The second Samvar is true word Truth is pure and faultless It is sacred It causes welfare as it is free from all disturbances It arises from good, noble thoughts, so it is said in a good dignified manner It is in the form of the best vow It is said after right contemplation The learned have seen it as a means of welfare for mankind According to scholars, it is the cause of welfare It has a stable reputation It is uttered by the persons whose words are blessed with self-restraint It is respected by the gods of higher heavenly abode,

prominent men, persons who have extreme power and the learned It is the religious practice of grand monks It is accepted as an austerity and as a doctrine. It is the guide for treading the right path. This vow of truth is prominent in the world

Truth provides success to Vidyadhars in accomplishing the art of flying in the sky It is the guide for the path leading to heavenly abode and the path leading to salvation It is free from wrong perception It is saturated with simplicity It is free from deceit It propounds only what is right It is pure from all angles It is free from falsehood or partial truth, only that is truth which has absolutely no mixture of falsehood So it is faultless It defines all substances in the world truly as they are in reality It is sweet because it is true It is like a good instrument for human beings in performing wonderful deeds in different situations In other words when men are in deep trouble, it helps them like a god to get out

There is a great sea The soldiers sailing in a ship have become non-plussed They have lost the direction. So their intelligence does not function properly Even then the ship becomes stable and does not sink due to the practice of truth Such is the effect of truth that man does not drown even in rapid flow and whirlpool He does not drown or die but is able to find the land

As a result of truth, persons surrounded by fire from all sides do not burn

A person with a simple heart who has faith in truth, he, as a result of that truth, does not get burnt even if he touches boiling oil, iron or lead or holds such an articles on his palm

A man is thrown or dropped from the top of a hill, still he does not die due to the influence of truth

A person who has armour of truth is surrounded by swordsmen or he is facing such person in the battle, he comes out safe and sound from there since he practices truth A truthful person gets himself liberated even when surrounded by terrible enemies or even when he is attacked or chained He comes out safe and sound without any damage even when he is surrounded by enemies Even the gods accompany a person who strictly practices truth They help him and serve him

The truth as propounded by Tithankars is of ten types The monks who are learned in fourteen Purvas have understood it from their relevant Chapters It has been provided to the saints as the fundamental principle. The monks have accepted it as the second major vow It has been told to the kings of gods and of human beings as a basic essential The truth is supported and followed by celestial beings of heavenly abodes It serves great purpose It is the cause of success in mantra, medicines and skills It is only with the help of truth that one can achieve success in them It provides success to Charan monks in training in flying with the help of their skill. It is appreciated by human hangs People praise the person who speaks the truth and have firm faith in him The celestial beings, the demon gods and Bhavanapati gods worship the follower of truth Many types of mendicants accept it in their way of life Truth appreciated in such a manner is the very essence in this world It is more serene than the ocean It is more stable than the Sumeru mountain It is more pleasant than the lunar circle It is more bright than the solar orbit It is cleaner than the sky in winter It is more pleasant than the Gajadant mountain that emits fragrance All the mantras in the world, all the processes to control others in the world, all the recitations, all the systems of education, the ten types of Jrimbhik gods, all the arts including art of handling bow, sword and other weapons and all the Agams are based on truth They depend only on truth

दोषयुक्त सत्य का त्याग AVOIDANCE OF FAULTY TRUTH

[२] सच्चं वि य संजमस्स उवरोहकारग किंचि ण वत्तव्वं, हिंसासावज्जसंपउत्तं भेयविकहकारगं अणत्थवायकलहकारगं अणज्जं अववाय-विवायसंपउत्तं वेलंबं ओजधेज्जबहुलं णिल्लज्जं लोयगरहणिज्जं दुद्दिट्ठं दुस्सुयं अमुणियं, अप्पणो थवणा परेसु णिंदा; ण तंसि मेहावी, ण तंसि धण्णो, ण तसि पियधम्मो, ण तंसि कुलीणो, ण तंसि दाणवई, ण तंसि सूरो, ण तंसि पडिरूवो, ण तंसि लट्ठो, ण पंडिओ, ण बहुस्सुओ, ण वि य तंसि तवस्सी, ण यावि परलोयणिच्छयमई असि, सव्वकालं जाइ-कुल-रूव-वाहि-रोगेण वावि जं होई वज्जणिज्जं दुहओ उवयारमइक्कंतं एवं विहं सच्चं वि ण वत्तव्वं।

[२] किन्तु जो सत्य सयम मे बाधक हो-रुकावट पैदा करता हो, वैसा सत्य तनिक भी नही बोलना चाहिए (क्योकि जो वचन तथ्य होते हुए भी हितकर नही, प्रशस्त नही, हिंसाकारी है, वह सत्य मे परिगणित नही होता)। जो वचन हिंसा एव पाप से युक्त हो, जो भेद-फूट उत्पन्न करने वाला हो, जो

विकथाकारक हो-स्त्री आदि से सम्बन्धित चारित्रनाशक या अन्य प्रकार से अनर्थ का हेतु हो, जो निरर्थक वाद या कलहकारक हो अर्थात् जो वचन निरर्थक वाद-विवादरूप हो और जिससे कलह उत्पन्न हो, जो वचन अनार्य हो-अनाडी लोगो के योग्य हो-आर्य पुरुषो के बोलने योग्य न हो अथवा अन्याययुक्त हो, जो अन्य के दोषो को प्रकाशित करने वाला हो, विवादयुक्त हो, दूसरो की विडम्बना-फजीहत करने वाला हो, जो विवेकशून्य जोश और धृष्टता से भरा हुआ हो, जो लज्जा रहित हो, जो ससार मे या सत्पुरुषो द्वारा निन्दनीय हो, ऐसा वचन नही बोलना चाहिए। जो घटना भलीभाँति स्वय न देखी हो, जो बात सम्यक् प्रकार से सुनी न हो, जिसे ठीक तरह-यथार्थ रूप मे जान नही लिया हो, उसे या उसके विषय मे बोलना नही चाहिए।

इसी प्रकार अपनी स्तुति और दूसरो की निन्दा भी (नहीं करनी चाहिए), जैसे-तू बुद्धिमान नही-बुद्धिहीन है, तू धनवान नही-दरिद्र है, तू धर्मप्रेमी नही है, तू कुलीन नही है, तू दानपति-दानेश्वरी नही है, तू शूरवीर नही है, तू सुन्दर नही है, तू भाग्यवान नही है, तू पण्डित नही है, तू बहुश्रुत-अनेक शास्त्रो का ज्ञाता नही है, तू तपस्वी भी नही है, तुझमे परलोक सम्बन्धी निश्चय करने की बुद्धि भी नही है, आदि। अथवा ऐसा वचन जो सदा-सर्वदा जाति (मातृपक्ष), कुल (पितृपक्ष), रूप (सौन्दर्य), व्याधि (कोढ आदि बीमारी), रोग (ज्वरादि) से सम्बन्धित हो, जो पीडाकारी या निन्दनीय होने के कारण वर्जनीय हो-न बोलने योग्य हो, अथवा जो वचन द्रोह-कारक अथवा द्रव्य-भाव से आदर एव उपचार से रहित हो-शिष्टाचार के अनुकूल न हो अथवा उपकार का उल्लघन करने वाला हो, इस प्रकार का यथार्थ-सद्भूतार्थ वचन भी नही बोलना चाहिए।

[2] The truth which causes obstruction in life of self-restraint, should not be uttered even in the slightest form (It is because such a word although true, is not auspicious It does not cause welfare It is violent So it cannot be termed as truth) There is a talk which is true but it contains elements of violence It is going to create friction It is going to result in bad opinion about women, administration or the state or in some other way It is going to produce useless discussion or dispute It is not the talk of civilised people It is the talk of the rustic It contains elements of injustice It is just to publicise faults of others It is full of disgust for them It is affecting the reputation of others It lacks sense of discrimination It is full of false ego It is shameless It is condemned by the common people and the worthy One should not engage in such a talk A person has not seen an incident properly himself He has not rightly heard about it He has not understood it properly in true context. In such a case he should not talk about it

Similarly one should not praise his own act He should also not condemn others He should not address other as worthless, poor,

irreligious or as not belonging to a good family, not engaging in charity, not brave, not beautiful, not a lucky one, not educated, not having knowledge of scriptures or not observing austerities He should not call a person as one not having a proper understanding about future or of next life A word which relates to one's class, family, complexions, diseases (such as leprosy), illness (such as fever) and which is going to hurt or condemn others, should not be used It is not worthy to be uttered Such a word is going to cause bitterness It is devoid of respect or cultured behaviour It is transgressing the limits of gratitude Such a word may be expressing the truth but even then it should not be uttered

बोलने योग्य सत्य वचन **WORDS WORTHY TO BE UTTERED**

[३] अह केरिसगं पुणाई सच्चं तु भासियव्वं ?

जं त दव्वेहिं पज्जवेहि य गुणेहि कम्मेहिं बहुविहेहिं सिप्पेहिं आगमेहि य णामक्खायणिवायउवसग्ग-तद्धिय-समास-संधि-पद-हेउ-जोगिय-उणाइ-किरियाविहाणधाउ-सर-विभत्ति-वण्णजुत्तं तिकल्लं दसविहं पि सच्चं जह भणियं तह य कम्मुणा होइ। दुवालसविहा होइ भासा, वयणं वि य होइ सोलसविह। एवं अरहंतमणुण्णायं समिक्खिय संजएण कालम्मि य वत्तव्वं।

[३] (यदि पूर्वोक्त प्रकार के तथ्य-वास्तविक वचन भी बोलने योग्य नही है तो) प्रश्न उपस्थित होता है कि फिर किस प्रकार का सत्य बोलना चाहिए ?

(प्रश्न का उत्तर यह है-) जो सत्य वचन द्रव्यो-त्रिकालवर्ती पुद्गलादि द्रव्यो से, पर्यायों से-नवीनता, पुरातनता आदि क्रमवर्ती अवस्थाओ से तथा गुणो से अर्थात् वर्णादि सहभावी गुणो से युक्त हो अर्थात् द्रव्यो, पर्यायो या गुणो के प्रतिपादक हो तथा कृषि आदि कर्मो से अथवा उठाने-रखने आदि क्रियाओ से, अनेक प्रकार की चित्रकला, वास्तुकला आदि शिल्पो से तथा आगमो के सिद्धान्तसम्मत अर्थो से युक्त हो और जो नाम देवदत्त आदि सज्ञापद, आख्यात-तीनो कालो के वाचक क्रियापदो, निपात-'वा, च' आदि अव्यय, प्र, परा आदि उपसर्ग, तद्धितपद-जिनके अन्त मे तद्धित प्रत्यय लगा हो, जैसे 'नाभेय' आदि पद, समास-अनेक पदो को मिलाकर एक पद बना देना, जैसे 'राजपुरुष' आदि, सन्धि-समीपता के कारण अनेक पदो का जोड, जैसे विद्या + आलय = विद्यालय आदि, हेतु-अनुमान का वह अग जिससे साध्य को जाना जाए, जैसे धूम से अग्नि का किसी विशिष्ट स्थल पर अस्तित्व जाना जाता है, यौगिक-दो आदि के सयोग वाला पद अथवा जिस पद के अवयवार्थ से समुदायार्थ जाना जाए, जैसे 'उपकरोति' आदि, उणादि-उणादिगण के प्रत्यय जिन पदो के अन्त मे हो, जैसे 'साधु' आदि, क्रिया को सूचित करने वाला पद, जैसे 'पाचक' (पकाने की क्रिया करने वाला), धातु-क्रियावाचक 'भू-हो' आदि, स्वर-'अ, आ' इत्यादि अथवा सगीतशास्त्र सम्बन्धी षड्ज, ऋषभ, गान्धार आदि सात स्वर, विभक्ति-प्रथमा आदि, वर्ण-'क, ख' आदि व्यंजनयुक्त अक्षर, इनसे युक्त हो

(ऐसा वचन बोलना चाहिए)। त्रिकालविषयक सत्य दस प्रकार का होता है। जैसा मुख से कहा जाता है, उसी प्रकार कर्म से अर्थात् लेखन क्रिया से तथा हाथ, पैर, आँख आदि की चेष्टा से, मुँह बनाना आदि आकृति से अथवा जैसा कहा जाए वैसी ही क्रिया करके बतलाने से अर्थात् कथन के अनुसार अमल करने से सत्य होता है। बारह प्रकार की भाषा होती है। वचन सोलह प्रकार का होता है। इस प्रकार अरिहन्त भगवान द्वारा अनुज्ञात-आदिष्ट तथा सम्यक् प्रकार से विचारित सत्य-वचन अवसर आने पर ही सयमी साधु को बोलना चाहिए।

[3] In case the true words of the above-mentioned type are not worthy to be uttered, then what type of truth should be uttered ?

The reply to the said question is as follows—The words should have basic attribute of truth in fundamentals and in modes It should express properly the past, the present and the future state in its respective order It should explain properly the attributes It should properly express activities like agriculture, the placing and picking up of things, various types of acts like painting and architecture It should express meaning in accordance with scriptures It should be grammatically correct It should express the tense and the name correctly as laid down in the grammar It should properly express prefix, suffix, conjunction, the use of word by joining two or more words according to the rules defined in grammar In Sanskrit grammar there is a detailed account how words expressing different activities are to be formed just as cook (pachak)—one who does cooking is formed from the word paach (to cook) There are rules about vowels, consonants and use of seven tones concerning music All these rules should be kept in mind while pronouncing such words The action should be in accordance with the word uttered Even the facial expression should be there accordingly, only then it can be termed as truth Language is of twelve types The word is of sixteen types A monk should speak strictly in accordance with the rules laid down by the omniscient, keeping in mind the occasion when it should be used

विवेचन उपरोक्त पाठ मे सत्य की महिमा का विशद निरूपण किया है, जो वचन सत्य-तथ्य होने पर भी किसी को पीडा उत्पन्न करने वाला अथवा अनर्थकारी होने से सदोष हो, वैसा वचन भी बोलने योग्य नही है। यह कथन अनेक उदाहरणो सहित प्रतिपादित किया गया है तथा किस प्रकार का सत्य भाषण करने योग्य है, इसका भी उल्लेख किया गया है। सत्य, भाषा और वचन के भेद भी बतलाये गये है।

इस सम्पूर्ण कथन से साधक के समक्ष सत्य का सुस्पष्ट चित्र उभर आता है। सत्य की महिमा का प्रतिपादन करने वाला अश सरल-सुबोध है। उस पर अधिक विवेचन की आवश्यकता नही है।

सत्य के दस प्रकार

शास्त्रकार ने ठाणाग सूत्र के दशवे स्थान मे मूल पाठ मे दस प्रकार के सत्य बताये है। इनका स्वरूप इस प्रकार है-

जणवय-सम्मय-ठवणा नाम-रूवे पडुच्चसच्चे य।
ववहार-भाव-जोगे, दसमे ओवम्मसच्चे य॥

१. **जनपदसत्य**-जिस देश-प्रदेश मे किसी वस्तु विशेष के लिए जो शब्द प्रयुक्त होता हो, वहाँ उस वस्तु विशेष के लिए उसी शब्द का प्रयोग करना जनपद सत्य कहलाता है, जैसे महाराष्ट्र मे माता को 'आई' कहना, पजाब मे नाई को 'राजा' कहना।

२ **सम्मतसत्य**-बहुत लोगो ने जिस शब्द को जिस वस्तु का वाचक मान लिया हो, उसे सम्मत सत्य कहते है जैसे 'देवी' शब्द पटरानी का वाचक मान लिया गया है। अत पटरानी को 'देवी' कहना सम्मत सत्य है।

३ **स्थापनासत्य**-जिसकी मूर्ति हो उसे उसी के नाम से कहना, स्थापना सत्य कहलाता है। जैसे-इन्द्रमूर्ति को इन्द्र कहना या शतरज की गोटियो को हाथी, घोडा आदि कहना।

४ **नामसत्य**-जिसका जो नाम हो उसे गुण न होने पर भी उस शब्द से कहना, जैसे-कुल की वृद्धि न करने वाले को भी 'कुलवर्द्धन' कहना।

५ **रूपसत्य**-इसमे गुण की अपेक्षा रूप को प्रधानता दी जाती है। साधु के गुण न होने पर भी वेषमात्र से असाधु को साधु कहना।

६ **प्रतीत्यसत्य**-अपेक्षाविशेष से कोई वचन बोलना, जैसे-दूसरी उँगली की अपेक्षा से किसी उँगली को छोटी या बडी कहना, द्रव्य की अपेक्षा सब पदार्थों को नित्य कहना या पर्याय की अपेक्षा से सबको क्षणिक कहना।

७ **व्यवहारसत्य**-जो वचन लोकव्यवहार की दृष्टि से सत्य हो, जैसे-रास्ता तो कही जाता नही, किन्तु कहा जाता है कि यह रास्ता अमुक नगर को जाता है, गाँव आ गया आदि।

८. **भावसत्य**-अनेक गुणो की विद्यमानता होने पर भी किसी प्रधान गुण की विवक्षा करके कहना, जैसे-तोते मे लाल वर्ण होने पर भी उसे हरा कहना।

९. **योगसत्य**-सयोग के कारण किसी वस्तु को किसी शब्द से कहना, जैसे-दण्ड धारण करने के कारण किसी को दण्डी कहना।

१०. **उपमासत्य**-समानता के आधार पर किसी शब्द का प्रयोग करना, जैसे-मुख-चन्द्र आदि।

भाषा के बारह प्रकार

आगमो मे भाषा के विविध दृष्टियो से अनेक भेद-प्रभेद बताये गये है। उन्हे विस्तार से समझने के लिए दशवैकालिक तथा प्रज्ञापनासूत्र का भाषापद देखना चाहिए। बोलियो की दृष्टि से उस समय भारतवर्ष मे प्रचलित भाषाये बारह मानी जाती थी इसलिये प्रस्तुत पाठ मे उस समय प्रचलित बारह प्रकार की भाषाएँ बतलाई गई है, जिनके नाम ये है-(१) प्राकृत, (२) सस्कृत, (३) मागधी, (४) पैशाची, (५) शौरसेनी, और (६) अपभ्रश। ये गद्य और पद्य के भेद मिलाकर बारह प्रकार की है।

सोलह प्रकार के वचन

एक वचन, बहुवचन आदि वचनो स्त्री-पुरुष आदि तीन लिगो, प्रत्यक्ष-परोक्ष आदि तीनो कालो का तथा अपनीतवचन और अध्यात्मवचन आदि के विवेक सत्यवादी को होना चाहिये इस अपेक्षा से 16 प्रकार के वचनो का उल्लेख मूल पाठ मे किया है। टीकाकार श्री अभयदेव सूरि ने सोलह प्रकार के वचन निम्नलिखित गाथा उद्धृत करके गिनाये है-

वयणतियं लिंगतियं कालतियं तह परोक्ख पच्चक्खं।
उवणीयाइ चउक्कं अज्झत्थं चेव सोलसम॥

अर्थात् वचनत्रिक, लिगत्रिक, कालत्रिक, परोक्ष, प्रत्यक्ष, अपनीत आदि चतुष्क और सोलहवाँ अध्यात्मवचन, ये सब मिलकर सोलह वचन है।

वचनत्रिक-एकवचन, द्विवचन, बहुवचन।

लिगत्रिक-स्त्रीलिग, पुलिग, नपुसकलिग।

कालत्रिक-भूतकाल, वर्तमानकाल, भविष्यत्काल।

प्रत्यक्षवचन-यथा यह पुरुष है।

परोक्षवचन-यथा वह मुनिराज।

अपनीतादिचतुष्क-(१) अपनीतवचन अर्थात् प्रशसा का प्रतिपादक वचन, जैसे-यह रूपवान् है। (२) उपनीतवचन-दोष प्रकट करने वाला वचन, जैसे यह दुराचारी है। (३) उपनीतापनीतवचन-प्रशसा के साथ निन्दावाचक वचन, जैसे-यह रूपवान् है किन्तु दुराचारी है। (४) अपनीतोपनीतवचन-निन्दा के साथ प्रशसा प्रकट करने वाला वचन, जैसे-यह दुराचारी है किन्तु रूपवान् है।

अध्यात्मवचन-जिस अभिप्राय को कोई छिपाना चाहता है, फिर भी अकस्मात् उस अभिप्राय को प्रकट कर देने वाला वचन। जैसे – मै दु खी हूँ अथवा आत्मा को लेकर अध्यात्म भावना से वचन योग करना अध्यात्म वचन कहलाता है।

अत दस प्रकार के सत्य का, बारह प्रकार की भाषा का और सोलह प्रकार के वचनो का सयमी पुरुष को तीर्थंकर भगवान की आज्ञा के अनुसार, अवसर के अनुकूल प्रयोग करना चाहिए, जिससे किसी को पीडा उत्पन्न न हो-जो हिंसा का हेतु न बने।

Elaboration—In the said aphorism, the importance of truth has been explained in detail and in an effective manner A word, which is based on facts and reality but is going to cause hurt to other or is harmful due to some fault, is bad and should not be used This fact has been explained through many examples It has also been described what type of truth is worth uttering. The forms of truth, language and word formation have also been narrated

This puts forth a clear picture of truth before its practitioner The text that conveys the importance of truth is simple and easy to comprehend It does not need any further elaboration

TEN TYPES OF TRUTH

In the tenth chapter of Sthananga Sutra ten forms of truth have been mentioned They are as follows—

1. **Janpad Satya**—A word commonly used in any area or in any state for a particular thing It should be used there accordingly For instance barber is called Raja in Panjab

2. **Sammat Satya**—The word that has been accepted as proper expression by the majority For instance the chief queen is addressed as devi (the goddess)

3. **Sthapana Satya**—To call an idol by the same name which it represents for instance to call items of the chessboard as elephant, horse and others To address idol of Indra as Indra

4. **Naam Satya**—To address a person by his name although he has not the qualities that the social name represents For instance a person is christened as 'Kul-vardhan' but he is not bringing any development in the family

5. **Roop Satya**—To call a monk as a monk on the basis of his dress although he has no traits of a monk

6. **Pratitya Satya**—To utter a word in certain context For instance to call one finger as small and the other as long with reference to a particular finger. To call everything permanent in substantial context or to call everything transient in context of mode

7. **Vyavahar Satya**—The word that is true due to its common use in expression. For instance to say this path leads to a particular town whereas it does not lead to anything.

8. Bhaava Satya—For instances a substance has many qualities but to express it with that which is most prominent. For instance to call a parrot as green although it has red beak also

9. Yog Satya—To address a thing with a particular word as it is joined with another thing For instance to call a person as dandi (one holding stick) as he is holding danda (the stick)

10. Upama Satya—To express a word due to its certain similarity with the illustration for instance to call a beautiful woman as Chandra-mukhi (one who has face as beautiful as the moon)

TWELVE TYPES OF LANGUAGE

In the scriptures (Agams) language has been classified from different angles In order to understand them in detail one should study Dashvaikalik Sutra and Prajnapana Sutra In the present aphorism, twelve types of languages have been mentioned They are the languages prevalent at that time They are—(1) Prakrit, (2) Sanskrit, (3) Magadhi, (4) Paishachi, (5) Shauraseni, and (6) Apabhramsh Six in prose and six in verse So there are twelve languages

SIXTEEN PARTS OF SPEECH

The original text mentions sixteen parts of speech covering three numbers including singular, three genders including masculine, three tenses including present, adjectives of four kinds and concealed meaning The person who wants to speak truth should have knowledge of these sixteen

Abhayadev Suri has mentioned sixteen parts of speech They are as follows—

Three on the basis of number (Vachan trik)—Singular, to express two, plural

Three genders (Ling trik)—Masculine, feminine, neutral gender

Three tense (Kaal trik)—Past, present and future

Expression of Present State (Pratyaksh Vachan)

For instance—This is the man

Expression about distant person—(Paroksh Vachan)

For instance 'that monk'

Upaneetadi Chatushk—(1) Upaneet Vachan (word expressing appreciation for instance beautiful), (2) Apneet Vachan (word expressing disgust For instance he is a rogue), (3) Upaneetapaneet Vachan (word expressing appreciation and disgust both for instance to say he is beautiful but of bad character), (4) Apaneetapaneet Vachan—(To express disgust and also some appreciation For instance to say he is of bad conduct but beautiful)

Adhayatma Vachan—A word which expresses the truth although one wanted to conceal it

A person practicing life of self-restraint should use the said types of truth including twelve types of language and sixteen types of words as laid down by the Omniscient and according to the occasion, so that it may not cause any hurt or violence to any one

सत्य वचन बोलने का सुफल GOOD RESULT OF MAJOR VOW OF TRUTH

१२१. इमं च अलिय–पिसुण–फरुस–कडुय–चवलवयण–परिरक्खणट्ठयाए पावयणं भगवया सुकहिय अत्तहियं पेच्चाभावियं आगमेसिभद्दं सुद्धं णेयाउयं अकुडिलं अणुत्तरं सव्वदुक्खपावाणं विउसमणं।

१२१. भगवान महावीर ने इस प्रवचन सत्य सिद्धान्त को अलीक–मिथ्या वचन, पिशुन–चुगली, परुष–कठोर, कटु–कटुक और चपल–चचलतायुक्त वचनो से (जो असत्य के रूप है) आत्मा की सुरक्षा के लिये सम्यक् प्रकार से फरमाया है। यह भगवत्प्रवचन आत्मा के लिए हितकर है, जन्मान्तर मे शुभ भावना से युक्त है, भविष्य के लिये श्रेयस्कर है, शुद्ध–निर्दोष है, न्यायसगत है, मोक्ष के लिये सीधा–सरल मार्ग है, सर्वोत्कृष्ट है अत समस्त दु खो और पापो को पूरी तरह उपशान्त–नष्ट करने वाला है।

121. Falsehood (aleek), back-biting (pishun), harsh (parush), bitter (katu) and incoherent (chapal) are different forms of untrue speech. The Omniscient Tirthankar has given this direction lucidly so that one may guard the self from such words. This word of the Omniscient is beneficial for the soul It is full of good attitude in later life and worthy in future It is chaste, faultless, just and straight path leading to salvation It is the best of all It completely subsides or destroys all the troubles and the consequences of sins

सत्य महाव्रत की पाँच भावनाएँ FIVE SENTIMENTS OF MAJOR VOW OF TRUTH

शास्त्रकार ने सत्य सवर का दृढता, उत्साह और श्रद्धापूर्वक पालन करने के लिये पाच भावनाये तथा उनके चिन्तन और प्रयोग का तरीका आगे के पाठ मे बतलाये है।

In the following text the author has narrated five sentiments and method of pondering over them and applying in order to observe the Satya Samvar resolutely with enthusiasm and faith

प्रथम भावना–अनुवीचिभाषण **FIRST SENTIMENT—IMPROPER WORD (ANUVEECH BHASHAN)**

१२२. तस्स इमा पंच भावणाओ बिइयस्स वयस्स अलियवयणस्स वेरमण–परिरक्खणट्ठयाए।

पढमं–सोऊण संवरट्ठं परमट्ठं सुट्ठु जाणिऊणं ण वेगिय ण तुरियं ण चवल ण कडुयं ण फरुसं ण साहसं ण य परस्स पीडाकरं सावज्ज, सच्च च हिय च मिय च गाहगं च सुद्धं संगयमकाहलं च समिक्खियं संजएण कालम्मि य वत्तव्वं।

एवं अणुवीइसमिइजोगेण भाविओ भवइ अतरप्पा सजयकर–चरण–णयण–वयणो सूरो सच्चज्जवसंपुण्णो।

१२२. द्वितीय व्रत– सत्य महाव्रत की ये आगे कही जाने वाली ये पाँच भावनाएँ है, जो असत्य वचन के विरमण की रक्षा के लिए है अर्थात् इन पॉच भावनाओ का विचारपूर्वक पालन करने से असत्य-विरमणरूप सत्य महाव्रत की पूरी तरह रक्षा होती है।

प्रथम अनुवीचिभाषण रूप भावना है। सद्गुरु से सत्यव्रतरूप सवर के अर्थ–आशय को सुनकर एव उसके शुद्ध परमार्थ–रहस्य को सम्यक् प्रकार से जानकर जल्दी–जल्दी–सोच-विचार किये बिना नही बोलना चाहिए, कडवा वचन नही बोलना चाहिए, चपलतापूर्वक नही बोलना चाहिए, कठोर शब्दो का प्रयोग नही करना चाहिए, विचारे बिना सहसा नही बोलना चाहिए, दूसरों को पीडा पहुचाने वाला एव पापयुक्त वचन भी नही बोलना चाहिए। किन्तु सत्य, हितकारी, परिमित, अपने अभिप्राय को स्पष्ट करने वाला, शुद्ध-निर्दोष, सगत-युक्तियुक्त एव पूर्वापर-अविरोधी, स्पष्ट तथा पहले बुद्धि द्वारा सम्यक् प्रकार से विचारित वचन अवसर के अनुसार साधु को बोलना चाहिए।

इस प्रकार अनुवीचि समिति के-निरवद्य वचन बोलने की यतना के योग से भावित अन्तरात्मा-साधक हाथो, पैरो, नेत्रो और मुख पर सयम रखने वाला होकर, पराक्रमी तथा सत्य और आर्जव धर्म से सम्पन्न हो जाता है।

122. There are five sentiments of truth—the second great vow They are for properly avoiding false speech One who meticulously follows them, he can properly practice the major vow of truth

The first of the said five sentiments is thoughtful speech After carefully listening the meaning and purport of the vow of truth from his teacher and understanding its underlying secret, he should not speak in a hurry without properly considering its likely effect He should never speak harsh word. He should not utter pinching word He should not

speak in a distorted manner He should not speak without proper thought He should not speak such word that may cause trouble to others He should not speak with an attitude of causing harm. He should speak what is true, beneficial, limited and reflects proper meaning It should be clear and faultless and logical It should be in proper context, distinct and properly thought of from all angles A monk should speak in such a manner according to the situation

Thus a monk should ensure thoughtful speech taking care that it causes no harm He should have restraint on hands, feet, eyes and mouth Such a monk is a true practitioner of courage, truth and self-restraint

दूसरी भावना–अक्रोध SECOND SENTIMENT NOT TO BE ANGRY

१२३. बिइयं–कोहो ण सेवियव्वो, कुद्धो चंडिक्किओ मणूसो अलियं भणेज्ज, पिसुणं भणेज्ज, फरुसं भणेज्ज, अलियं–पिसुणं–फरुसं भणेज्ज, कलहं करिज्जा, वेरं करिज्जा, विकहं करिज्जा, कलहं–वेर–विकहं करिज्जा, सच्च हणेज्ज, सीलं हणेज्ज, विणयं हणेज्ज, सच्चं–सीलं–विणयं हणेज्ज, वेसो हवेज्ज, वत्थुं हवेज्ज, गम्मो हवेज्ज, वेसो–वत्थुं–गम्मो हवेज्ज, एयं अण्णं च एवमाइयं भणेज्ज कोहग्गिसंपलित्तो तम्हा कोहो ण सेवियव्वो। एवं खंतीइ भाविओ भवइ अंतरप्पा संणयकर–चरण–णयण–वयणो सूरो सच्चज्जवसंपण्णो।

१२३. दूसरी भावना क्रोधनिग्रह–क्षमाशीलता है। (सत्य के आराधक को) क्रोध का सेवन नही करना चाहिए क्योकि क्रोधी मनुष्य रौद्रभाव वाला हो जाता है और (ऐसी अवस्था मे) मिथ्या वचन बोलता है, वह चुगलखोरी के वचन बोलता है, कठोर वचन बोलता है। मिथ्या, पिशुन और कठोर–तीनो प्रकार के वचन बोलता है। कलह करता है, वैर–विरोध करता है, विकथा करता है तथा कलह–वैर–विकथा–ये तीनो करता है। वह सत्य का घात करता है, शील–सदाचार का नाश करता है, विनय का विघात करता है और सत्य, शील तथा विनय–इन तीनो का घात करता है। असत्यवादी द्वेष का पात्र बनता है, दोषो का घर बन जाता है और तिरस्कार का पात्र बनता है तथा द्वेष, दोष और तिरस्कार–इन तीनो का पात्र बनता है। क्रोधाग्नि से प्रज्वलित हृदय मनुष्य ऐसे और इसी प्रकार के अन्य पापयुक्त वचन बोलता है। अतएव क्रोध का सेवन नही करना चाहिए। इस तरह क्षमा से भावित सुसस्कृत अन्तरात्मा–अन्त करण वाला हाथो, पैरो, नेत्रो और मुख को सयमित करने वाला, धर्मवीर साधक, सत्यता और सरलता से परिपूर्ण हो जाता है।

123. Second sentiment is control over anger—a state of forgiveness One who practices truth, he should not be in a fit of anger. An angry person is ferocious. In such a state he can adopt falsehood in speech He

back-bites He speaks harsh words He speaks false, back-biting and harsh words He quarrels He becomes inimical He takes interest in talk about women, food, administration and the state He may do all the said three. He goes against truth and good conduct He adversely affects feelings of gratitude He ignores all the three namely truth, good conduct and humility A false person becomes the subject of hatred in the world He becomes a storehouse of faults and a subject of dishonour He becomes subject of all the three namely hatred, faults and disrespect A person whose heart is burning with anger utters suchlike unpalatable words So one should never be angry A person who remains forgiving is a true practitioners of the restraint of hands, feet and mouth Such a monk is courageous and straight forward in his ascetic conduct

तीसरी भावना–निर्लोभता THIRD SENTIMENT ABSENCE OF GREED

१२४. तइय–लोभो ण सेवियव्वो, १ लुद्धो लोलो भणेज्ज अलिय खेत्तस्स व वत्थुस्स व कएण, २ लुद्धो लोलो भणेज्ज अलिय, कित्तीए लोभस्स व कएण, ३ लुद्धो लोलो भणेज्ज अलियं, इड्ढीए व सोक्खस्स व कएण, ४ लुद्धो लोलो भणेज्ज अलियं, भत्तस्स व पाणस्स व कएण, ५ लुद्धो लोलो भणेज्ज अलियं, पीढस्स व फलगस्स व कएण, ६ लुद्धो लोलो भणेज्ज अलियं, सेज्जाए व संथारगस्स व कएण, ७ लुद्धो लोलो भणेज्ज अलियं, वत्थस्स व पत्तस्स व कएण, ८ लुद्धो लोलो भणेज्ज अलिय, कंबलस्स व पायपुंछणस्स व कएण, ९ लुद्धो लोलो भणेज्ज अलिय, सीसस्स व सिस्सिणीए व कएण, १० लुद्धो लोलो भणेज्ज अलियं, अण्णेसु य एवमाइसु बहुसु कारणसएसु।

लुद्धो लोलो भणेज्ज अलीयं, तम्हा लोभो ण सेवियव्वो, एवं मुत्तीए भाविओ भवइ अंतरप्पा सजयकर–चरण–णयण–वयणो सूरो सच्चज्जवसपण्णो।

१२४. तीसरी भावना लोभसयम-निर्लोभता युक्त है। लोभ का सेवन नही करना चाहिए। (क्योकि) –

(१) लोभी मनुष्य लोभ के वशीभूत होकर क्षेत्र–खेत–खुली भूमि और वास्तु–मकान आदि के लिए असत्य भाषण करता है।

(२) लोभी–लालची मनुष्य प्रतिष्ठा के लिये या लोभ–धन–प्राप्ति के लिए असत्य भाषण करता है।

(३) लोभी–लालची मनुष्य ऋद्धि–वैभव या इन्द्रिय सुख के लिए असत्य भाषण करता है।

(४) लोभी–लालची मनुष्य भोजन के लिए या पानी (पेय) के लिए असत्य भाषण करता है।

(५) लोभी–लालची मनुष्य पीठ–पीढा या फलक–पाट प्राप्त करने के लिए असत्य भाषण करता है।

(६) लोभी-लालची मनुष्य शय्या या संस्तारक-छोटे बिछौने के लिए असत्य भाषण करता है।

(७) लोभी-लालची मनुष्य वस्त्र या पात्र के लिए असत्य भाषण करता है।

(८) लोभी-लालची मनुष्य कम्बल या पादप्रोछन के लिए असत्य भाषण करता है।

(९) लोभी-लालची मनुष्य शिष्य या शिष्या के लिए असत्य भाषण करता है।

(१०) लोभी-लालची मनुष्य इस प्रकार के सैकडो कारणो-प्रयोजनो से असत्य भाषण करता है।

अर्थात् लोभ भी असत्य भाषण का एक कारण है, अतएव (सत्य के आराधक को) लोभ का सेवन नही करना चाहिए। इस प्रकार मुक्ति-निर्लोभता से भावित अन्त करण वाला साधु हाथो, पैरो, नेत्रो और मुख पर अकुश रखने वाला धर्मवीर साधक, सत्यता और सरलता से परिपूर्ण हो जाता है।

124. Third sentiment is control over greed One should not be greedy because—

(1) A greedy person, tells lies due to greed for land, field, houses and the like

(2) A greedy persons makes false statement to attain money and respect

(3) A greedy person adopts falsehood in speech in order to have wealth, prosperity and pleasures

(4) A greedy person makes false statement to have food and water

(5) A greedy person utters false words to have wooden plank and seat

(6) A greedy person tells a lie in order to have a bedding and the like.

(7) A greedy monk tell a lie in order to have clothes and pots

(8) A greedy monk makes false statement to procure blanket and cloth for cleaning the fect

(9) A greedy monk utters false words in order to have male and female disciples

(10) A greedy monk makes false statement due to hundreds of reasons of the type mentioned above

A greedy persons utters false words as greed is a cause of falsehood. One (who practices truth) should not be greedy A monk who has a heart saturated with selflessness has restraint of hands, feet, eyes and mouth. He is courageous and equipped with truth and simplicity

चौथी भावना–निर्भयता FOURTH SENTIMENT—FEARLESSNESS

१२५. चउत्थं–ण भाइयव्वं, भीयं खु भया अइंति लहुयं, भीओ अबितिज्जओ मणूसो, भीओ भूएहिं घिप्पइ, भीओ अण्णं वि हु भेसेज्जा, भीओ तवसजमं वि हु मुएज्जा, भीओ य भरं ण णित्थरेज्जा, सप्पुरिसणिसेवियं च मग्गं भीओ ण समत्थो अणुचरिउं, तम्हा ण भाइयव्वं। भयस्स वा वाहिस्स वा रोगस्स वा जराए वा मच्चुस्स वा अण्णस्स वा एवमाइयस्स। एवं धेज्जेण भाविओ भवइ अंतरप्पा संजयकर–चरण–णयण–वयणो सूरो सच्चज्जवसंपण्णो।

१२५. चौथी भावना निर्भयता–भय का त्याग है। भयभीत नही होना चाहिए। भयग्रस्त मनुष्य को अनेक भय शीघ्र ही जकड लेते है। भीरु मनुष्य अकेला–असहाय होता है। भयाक्रात मनुष्य भूत–प्रेतो से ग्रस्त हो जाता है। दूसरो को भी डरा देता है। भयभीत हुआ पुरुष निश्चय ही तप और सयम को भी छोड बैठता है। भीरु साधक भार का निस्तार नही कर सकता अर्थात् स्वीकृत कार्यभार अथवा सयमभार का भलीभाँति निर्वाह नही कर सकता है। भीरु सत्पुरुषो द्वारा सेवित मार्ग का अनुसरण करने मे समर्थ नही होता। इसलिये (किसी मनुष्य, पशु–पक्षी या देवादि अन्य निमित्त के द्वारा जनित अथवा आत्मा द्वारा जनित) भय से, व्याधि–कुष्ठ आदि से, ज्वर आदि रोगो से, वृद्धावस्था से, मृत्यु से या इसी प्रकार के अन्य इष्टवियोग, अनिष्टसयोग आदि के भय से डरना नही चाहिए। इस प्रकार का चिन्तन करके धैर्य–चित्त की स्थिरता अथवा निर्भयता से भावित अन्तरात्मा–अन्त करण वाला साधु हाथो, पैरो, नेत्रो और मुख से सयत, सत्य व्रत पालन मे शूरवीर तथा सत्यता और निष्कपटता से युक्त (भवित) हो जाता है।

125. Fourth sentiment is absence of fear One should not feel frightened A frightened person soon falls a prey to fear He is without any assistance He causes fear to others also A frightened person certainly discards austerities and self-restraint A frightened person cannot overcome fear He cannot properly discharge his social or religious duties He cannot properly practice monkhood A coward person is not capable of treading the path followed by the true monks So one should not feel frightened as a result of the fear, disease, illness, state of old age or death created by human beings, animals, birds or celestial beings He should not feel afraid of any segregation from things of his liking and forced acceptance of things he does not like Such a monk has a stable state of mind He has control over his hands, feet, eyes and mouth He is brave and truthful He leads the life of straightforwardness

पाँचवी भावना–हास्य–संयम FIFTH SENTIMENT—DISCARDING LAUGHTER

१२६. पंचमगं–हासं ण सेवियव्वं अलियाइं असंतगाइ जंपंति हासइत्ता। परपरिभवकारणं च हासं, परपरिवायप्पिय च हासं, परपीलाकारगं च हासं, भेयविमुत्तिकारगं च हासं, अण्णोण्णजणियं च होज्ज

हासं, अण्णोण्णगमणं च होज्ज मम्मं, अण्णोण्णगमणं च होज्ज कम्मं, कदंप्पाभियोगगमणं च होज्ज हासं, आसुरियं किब्बिसत्तणं च जणेज्ज हासं, तम्हा हासं ण सेवियव्वं। एवं मोणेण भाविओ भवइ अंतरप्पा संजयकर–चरण–णयण–वयणो सूरो सच्चज्जवसंपण्णो।

१२६. पाँचवी भावना हास्य सयम–वचन सयम रूप है। हास्य का सेवन नही करना चाहिए। हँसोड व्यक्ति अलीक–दूसरे मे विद्यमान गुणो को छिपाने वाले असत्य वचन तथा अविद्यमान को प्रकाशित करने वाले या अशोभनीय और अशान्तिजनक वचनो का प्रयोग करते है। परिहास दूसरो के परिभव–अपमान–तिरस्कार का कारण होता है और हँसी मे परकीय निन्दा ही प्रिय लगती है। हास्य दूसरो को पीडा पहुचाने वाला होता है। हास्य चारित्र का विनाशक, शरीर की आकृति को विकृत करने वाला है और मोक्षमार्ग का भेदन करने वाला है। हास्य परस्पर एक दूसरे से होता है, फिर परस्पर मे परदारगमन आदि कुचेष्टा–मर्म का कारण होता है। एक–दूसरे के मर्म–गुप्त चेष्टाओ को प्रकाशित करने वाला बन जाता है, हँसी–हँसी मे लोग एक–दूसरे की गुप्त चेष्टाओ को प्रकट करके फजीहत करते है। हास्य कन्दर्प–हास्यकारी अथवा आभियोगिक–आज्ञाकारी सेवक जैसे देवो मे जन्म का कारण होता है। हास्य असुर जाति के भवनवासी देवो की पर्याय मे एव किल्विषिक देवो की पर्याय मे उत्पन्न कराता है, अर्थात् साधु तप और सयम के प्रभाव से कदाचित् देवगति मे उत्पन्न हो तो भी अपने हँसोडपन के कारण निम्न कोटि के देवो मे उत्पन्न होता है। वैमानिक आदि उच्च कोटि के देवो मे नही उत्पन्न होता। इस कारण हँसी का सेवन नही करना चाहिए। इस प्रकार मौन से भावित अन्त करण वाला साधु हाथो, पैरो, नेत्रो और मुख पर नियन्त्रण करने वाला धर्मवीर तथा सत्य और निष्कपट भाव से सम्पन्न हो जाता है।

126. Fifth contemplation is avoiding laughter A monk should not laugh at others A clown tries to conceal good qualities of others and project such things, which actually do not exist He utters unpleasant words that disturb peace. Laughter becomes the cause of disrespect to others In laughter, there is disgust for others He likes dishonouring others Laughter causes pain to others; laughter adversely affects good conduct It spoils physical expression. It disturbs path leading to salvation Laughter is mutual among two or more persons Later it becomes the cause of illicit relation with the wife of the other person It becomes the cause of making public the secrets or bad behaviour of others People make a fool of others by publicising their secret activities Laughter results in leading one soul to have re-birth among low category of gods who are in service of other gods or assist them to enjoy through their clownish activities. Laughter produces non-godliness and wretchedness In other words a monk due to his austerities and

restraints may take re-birth as a celestial being but due to his clownish nature, he shall take birth in gods of low category. He does not take birth in gods of heavenly abode A monk who observes silence develops restraint of hands, feet and mouth He then possess the qualities of courage, truth and simplicity

विवेचन : उपरोक्त पाँच सूत्रो मे अहिंसा महाव्रत के समान सत्य महाव्रत की पाँच भावनाये बताई है, इनकी निरन्तर अनुप्रेक्षा करते रहने से ये भावनाये साधक की अन्तर आत्मा मे मजबूत सस्कार रूप मे जम जाती है और यह सस्कार अमिट हो जाते है।

वाणी व्यवहार मानव की एक महत्वपूर्ण विशिष्टता है। पशु-पक्षी भी अपनी-अपनी वाणी से बोलते है किन्तु मानव की वाणी की अर्थपरकता या सोद्देश्यता उनकी वाणी मे नही होती। अतएव व्यक्त वाणी मनुष्य की एक अनमोल विभूति है।

विचारणीय है कि जो वस्तु अनमोल है, जो प्रबलतर पुण्य के प्रभाव से प्राप्त हुई है, उसका उपयोग किस प्रकार करना उचित है ? यदि कोई मनुष्य अपनी वाणी का प्रयोग पाप के उपार्जन मे करता है तो वह निश्चय ही अभागा है, विवेकविहीन है। इस वाणी की सार्थकता और सदुपयोग यही हो सकता है कि इसे धर्म और पुण्य की प्राप्ति मे व्यय किया जाये। यह तभी सम्भव है जब इसे पापोपार्जन का निमित्त न बनाया जाये।

इसी उद्देश्य से सत्य को महाव्रत के रूप मे स्थापित किया गया है और इससे पूर्व सत्य की महिमा का प्रतिपादन किया गया है।

असत्य के प्रधान कारण पाँच है। उनके त्याग की यहाँ प्रेरणा की गई है। असत्य का एक कारण है-सोच-विचार किये बिना, जल्दबाजी मे, जो मन मे आये, बोल देना। इस प्रकार बोल देने से अनेको बार घोर अनर्थ उत्पन्न हो जाते है। 'अन्धे की सन्तान अन्धी होती है' द्रौपदी के इस अविचारित वचन ने कितने भीषण अनर्थ उत्पन्न नही किये ? स्वय द्रौपदी को अपमानित होना पडा, पाण्डवो की दुर्दशा हुई और महाभारत जैसा दुर्भाग्यपूर्ण सग्राम हुआ, जिसमे करोडो को प्राण गँवाने पडे। अतएव जिस विषय की जानकारी न हो, जिसके विषय मे सम्यक् प्रकार से विचार न कर लिया गया हो, जिसके परिणाम के सम्बन्ध मे पूरी तरह सावधानी न रखी गई हो, उस विषय मे वाणी का प्रयोग करना उचित नही है। तात्पर्य यह है कि जो भी बोला जाये, सुविचारित एव सुज्ञात ही बोला जाये। भलीभाँति विचार करके बोलने वाले को पश्चाताप करने का अवसर नही आता, उसे लाछित नही होना पडता और उसका सत्यव्रत अखडित रहता है।

सत्य महाव्रत की पाच भावनाओ मे प्रथम भावना का नाम '**अनुवीचिसमिति**' कहा गया है। तत्त्वार्थसूत्र की सर्वार्थसिद्धि टीका मे इसका अर्थ किया गया है-'**अनुवीचिभाषणम्-विरवद्यानुभाषणम्**' अर्थात् निरवद्य भाषा का प्रयोग करना अनुवीचिभाषण कहलाता है। तत्त्वार्थभाष्य मे भी सत्यव्रत की प्रथम भावना के लिए '**अनुवीचि**' भाषण शब्द का ही प्रयोग किया गया है। अतएव भलीभाँति विचारकर बोलने के साथ-साथ भाषा सम्बन्धी अन्य दोषो से बचना भी इस भावना के अन्तर्गत है।

दूसरी भावना क्रोध निग्रह रूप क्षमा भावना का पालन करने के लिए क्रोधवृत्ति पर विजय प्राप्त करना भी आवश्यक है। क्रोध ऐसी वृत्ति है जो मानवीय विवेक को विलुप्त कर देती है और कुछ काल के लिए पागल बना

देती है। क्रोध का उद्रेक होने पर सत्-असत् का भान नही रहता और असत्य बोला जाता है। कहना चाहिए कि क्रोध के अतिशय आवेश मे जो बोला जाता है, वह असत्य ही होता है। अतएव सत्य महाव्रत की सुरक्षा के लिए क्रोध-प्रत्याख्यान अथवा अक्रोधवृत्ति परमावश्यक है।

तीसरी भावना लोभत्याग या निर्लोभता है। क्रोध के बाद सत्य महाव्रत के पालन में बाधक लोभ है, लोभ से होने वाली हानियो का मूल पाठ मे ही विस्तार से कथन कर दिया गया है। शास्त्र मे लोभ को समस्त सद्‌गुणो का विनाशक कहा है। जब मनुष्य के सिर पर लोभ का भूत सवार हो जाता है तो उसे भले बुरे किसी का भी भान नही रहता। उसकी वाणी लुब्धता के कारण सत्य वचन से हट जाती है। अतएव सत्यव्रत की सुरक्षा चाहने वाले को निर्लोभवृत्ति धारण करनी चाहिए। किसी भी वस्तु के प्रति लालच उत्पन्न नही होना चाहिए।

चौथी भावना भय-प्रत्याख्यान है। भय मनुष्य की बडी से बडी दुर्बलता है। भय मनुष्य के मस्तिष्क मे छिपा हुआ विषाणु है जो उसे कायर, भीरु, निर्बल, सामर्थ्यशून्य और निष्प्राण बना देता है। भय वह पिशाच है जो मनुष्य की वीर्यशक्ति को पूरी तरह सोख देता है। शास्त्रकार ने कहा है कि भयभीत पुरुष को भूत-प्रेत ग्रस्त कर लेते है। बहुत बार तो भय स्वय ही भूत बन जाता है और उस मनोविनिर्मित भूत के आगे मनुष्य घुटने टेक देता है। मनुष्य के मन मे व्याधि, रोग, वृद्धावस्था, मरण आदि के अनेक प्रकार के भय विद्यमान रहते है। इसलिये शास्त्रकार ने साधको को सत्य की सुरक्षा के लिये स्पष्ट निर्देश दिया है कि किसी भी प्रकार के भय से विचलित नही होना चाहिये। साथ ही भय आत्मा को तभी तक ज्यादा सताता है जब तक उसे स्वपर का भेद विज्ञान नही हो जाता।

साराश यह है कि भय की भावना आत्मिक शक्ति के परिबोध मे बाधक है, साहस को तहस-नहस करने वाली है, समाधि की विनाशक है और सक्लेश को उत्पन्न करने वाली है। वह सत्य पर स्थिर नही रहने देती। अतएव सत्य भगवान के आराधक को निर्भय होना चाहिए।

पाँचवी भावना है हास्यप्रत्याख्यान। सत्य महाव्रत और सत्य अणुव्रत दोनों के लिये हास्य बाधक है। सरल भाव से यथातथ्य वचनो के प्रयोग से हँसी-मजाक का रूप नही बनता। हास्य के लिए सत्य को विकृत करना पडता है। किसी के सद्‌गुणो को छिपाकर दुर्गुणो को उघाडा करना होता है। अभिप्राय यह है कि सर्वांश या अधिकाश मे सत्य को छिपाकर असत्य का आश्रय लिए बिना हँसी-मजाक नही होता। इससे सत्यव्रत का विघात होता है और अन्य को पीडा होती है। अतएव सत्यव्रत के सरक्षण के लिए हास्यवृत्ति का परिहार करना आवश्यक है।

जो साधक हास्यशील होता है, साथ ही तपस्या भी करता है, वह तप के फलस्वरूप यदि देवगति पाता है तो भी किल्विषिक या आभियोगिक जैसे निम्न कोटि के देवो मे जन्म पाता है। श्री भगवतीसूत्र के शतक १, उ २ मे बताया गया है कि हास्य करने वाला साधु मरकर सौधर्म देवलोक से ऊपर नही जाता है और नीचे के देवलोक मे जहाँ जाता है वहाँ वह देवगणो मे अस्पृश्य दास जैसी स्थिति मे रहता है। उसे उच्च्य श्रेणी का देवत्व प्राप्त नही होता और यदि उसे अवधिज्ञान प्राप्त हुआ हो तो हास्यशील होने से वो भी नष्ट हो जाता है। इस प्रकार हास्यवृत्ति महान् फल को भी तुच्छ बना देती है।

साधु को इस प्रकार का चिन्तन करना चाहिये कि हास्य ससार वर्द्धक और चारित्रनाशक चेष्टा है। इससे मेरी आत्मा का कोई लाभ नही है। बल्कि इतने शुद्ध सयम पालन के साथ हास्यक्रिया करना दूध के लोटे मे

थोड़ा सा जहर डालने के समान है। इस प्रकार हास्य मुक्ति और वचन पालन के संस्कार जब अन्तरात्मा में जम जाते है, तो वह सत्यवीर साधक अपने साधु जीवन को सार्थक कर लेता है।

Elaboration—In the above said aphorisms 122 to 126, five sentiments of the vow of truth have been narrated just as the sentiments of the major vow of non-violence had been enumerated earlier

Proper way of talking is an important trait of human beings Animals also speak with their vocal power but their speech is meaningless and without any particular purpose so distinct power of speech is a precious wealth of man

It is, therefore, worth consideration how that thing should be properly used, which is unique and which has been got as a result of very great meritorious Karmas That person is certainly unlucky who uses his faculty of language in collecting demerit He has no sense of discrimination The proper utilization of this faculty lies in making use of it in activities relating to dharma and in such activities which can generate merit It is possible only if it is not made a factor in collecting demerit (though sins)

So truth has been establish as a major vow Its importance has already been narrated earlier

There are five primary causes of falsehood One has been advised to avoid them One such cause is to speak without proper contemplation, to speak in a hurry or to speak whatever arises in mind without considering its likely result such a speech results in many calamities Draupadi's words that the off-spring of a blind person is blind became the cause of a dreadful war Draupadi herself had to face disgrace The Pandavas had to pass through a terrible situation The ferocious war Mahabharat took place in which millions of people lost their lives So it is not proper to speak about the matter about which one does not have complete knowledge, which has not been properly considered and whose consequences have not been properly thought of In a nutshell whatever is spoken, it should be well considered and properly known The person who speaks after proper contemplation, he does not have to repent Nobody casts aspersions on him He does not adversely affect the practice of his vow of truth

The first sentiment of the major vow of truth is Anuvichi Samiti. In the Sarvarthsiddhi commentary of Tattvarth Sutra, it has been interpreted as not to use language that is sinful—to use language free from sin In Tattvarth Bhashya also the same term has been used for the first sentiment So it should be understood that while speaking with proper contemplation one should avoid the other faults also relating to language

In order to practice major vow of Truth faultlessly, it is essential to totally subdue anger Anger wipes out the faculty of discrimination It turns one mad for some time In a fit of rage one loses the power of distinguishing truth and untruth He then utters false It can be said that whatever is uttered in extreme influence of anger, it is certainly false So in order to safeguard the major vow of truth, one should avoid anger It is essential to have the nature of remaining cool (free from anger)

The third contemplation is to discard greed In the aphorism the disadvantages due to greed have been discussed in detail In scriptures, greed is termed as destroyer of all good qualities When a person is in the grip of greed, it does not remain difficult for him to do any bad deed So the person who wants to meticulously safeguard his vow of truth, he should practice non-greediness He should not have a sense of greed for any substance

Fourth contemplation is avoiding fear Fear is the greatest weakness of a man. It is the particle of poison hidden in his head which turns him coward, weak frightened, incapable and lifeless Fear is that demon which dries up the entire potentiality of a man, fear is that behaviour which makes one to think about himself that he is worthless, useless and insignificant The author has stated that the ghosts overpower a frightened person Many times fear itself turns into a ghost and the man kneels down before it

A man develops many types of fear in his mind such as that of illness, diseases, old age and death In the aphorism, it has been directed that one should not have fear of illness

In brief, the state of fear is an obstacle in the generation of the power of soul It districts courage It destroys the state of equanimity It

generates hatred It does not allow one to remain firm in truth So the person who practices truth, should be fearless

Fifth sentiment is avoidance of laughter It is detrimental both to the major and minor vow of truth The talk based on facts and is in simple manner does not take the form of laughter or mockery. Truth has to deform itself to create laughter One has to speak in a self-created form One has to conceal the virtues of the other and expose the faults In other words one cannot resort to laughter or mockery without wholly or partly keeping the truth in the background and taking the support of falsehood It adversely affects the vow of truth and causes pain to other So one should avoid the nature of laughter in order to safely practice the vow of truth

A person who is by nature resorting to mockery (laughter) and simultaneously he practices austerities, in case he takes re-birth as a god due to his practice of austerities, he shall be a god of very low status It is mentioned in Bhagavati Sutra (1/2) that a monk indulging in laughter is not reborn in divine realms higher than Saudharma Even there he is considered untouchable by other gods or as a servant He does not become god of high status Laughter even destroys acquired Avadhi Jnana Thus the nature of laughter turns the auspicious result into an insignificant one

उपसहार CONCLUSION

१२७. एवमिणं सवरस्स दार सम्मं सवरियं होइ सुप्पणिहियं, इमेहिं पंचहिं वि कारणेहिं मण-वयण-काय-परिरक्खिएहिं णिच्चं आमरणंतं च एस जोगो णेयव्वो धिइमया मइमया अणासवो अकलुसो अच्छिद्दो अपरिस्सावी असंकिलिट्ठो सव्वजिणमणुण्णाओ।

१२७. इस प्रकार यह सवर का सत्य रूप द्वार, मन वचन और काया तीनो की सब प्रकार से रक्षा करने वाली इन पाच कारण रूप भावनाओ से सम्यक् प्रकार से सवृत्त-आचरित एव अच्छी तरह से दिल दिमाग मे स्थापित हो जाता है। अतएव धैर्यवान तथा बुद्धिमान साधक को चाहिए कि वह आस्रव का निरोध करने वाले, निर्मल (अकलुष), निश्छिद्र-कर्म-जल के प्रवेश को रोकने वाले, कर्मबन्ध के प्रवाह से रहित, सक्लेश का अभाव करने वाले एव समस्त तीर्थंकरो द्वारा आज्ञापित इस योग को निरन्तर जीवनपर्यन्त आचरण मे उतारे।

127. Thus by practicing properly and meticulously all the five sentiments mentally, vocally and physically, this major vow of truth—the

gateway of Samvar—becomes rightly established, rightly practiced and rightly conducted. So the practitioner of religious order who is perseverant and intelligent, he should continuously practice it throughout his life as it is defined by all the Tirthankars. It stops the inflow of Karmic matter It destroys disturbances It stops the entry of the water of Karma It is dirtless and without any holes It is without the flow of Karmas

१२८. एवं बिइयं संवरदारं फासियं पालियं सोहियं तीरियं किट्टियं अणुपालियं आणाए आराहियं भवइ। एवं णायमुणिणा भगवया पण्णवियं परूवियं पसिद्धं सिद्धं सिद्धवरसासणमिणं आघवियं सुदेसियं पसत्थं।

॥ बिइयं संवरदारं समत्तं ॥ त्ति बेमि ॥

१२८. इस प्रकार (पूर्वोक्त रीति से) सत्य नामक सवरद्वार उचित समय पर अगीकृत, पालित, शोधित-निरतिचार आचरित या शोभाप्रदायक, तीरित-अन्त तक पार पहुँचाया हुआ, कीर्तित-दूसरो के समक्ष आदरपूर्वक कथित, अनुपालित-निरन्तर सेवित और भगवान की आज्ञा के अनुसार आराधित होता है। इस प्रकार ज्ञात वश मे उत्पन्न-भगवान महावीर स्वामी ने इस सिद्धवरशासन का कथन किया है, विशेष प्रकार से विवेचन किया है। यह तर्क और प्रमाण से सिद्ध है, सुप्रतिष्ठित किया गया है, भव्य जीवो के लिए इसका उपदेश किया गया है, यह प्रशस्त-कल्याणकारी-मगलमय है।

॥ द्वितीय संवरद्वार समाप्त ॥ वैसा मै कहता हूँ। (जैसा मैने सुना है।)

विवेचन इस प्रकार सुबोधिनी व्याख्या सहित द्वितीय सवर द्वार समाप्त हुआ। उल्लिखित पाठो मे प्रस्तुत प्रकरण मे कथित अर्थ का उपसहार किया गया है। सुगम होने से इनके विवेचन की आवश्यकता नही है।

128. If in the above-mentioned form truth, the gateway of Samvar, is continuously practiced according to the order laid down by the omniscient, it is accepted, nourished and faultlessly practiced at the proper time, it provides grace It leads to the end of the mundane world Bhagavan Mahavir, the omniscient has described the order of the omniscient in this manner He has narrated in detail It is based on logic and proper proof It is well established He has preached it for the worthy It is noble, beatific and auspicious

Elaboration—In the above-mentioned aphorism, the purport of this aphorism has already been explained. It is easily intelligible So it does not need any further elucidation

● SECOND GATEWAY OF SAMVAR CONCLUDED ●

तृतीय अध्ययन : दत्तानुज्ञात
THIRD CHAPTER TO GET WITH PERMISSION

द्वितीय सवरद्वार के विविध पहलुओ का भलीभाति निरूपण करने के पश्चात् अचौर्य नामक तृतीय सवरद्वार का विवेचन प्रस्तुत है। सत्य के पश्चात् अचौर्य के विवेचन के टीकाकार ने दो कारण बतलाये है-प्रथम यह कि सूत्रक्रम के अनुसार अब अस्तेय का निरूपण ही सगत है, दूसरा असत्य का त्यागी वही हो सकता है जो अदत्तादान का त्यागी हो। अदत्तादान करने वाले सत्य का निर्वाह नही कर सकते। अतएव सत्यसवर के अनन्तर अस्तेयसवर का निरूपण करना उचित है। सर्वप्रथम अस्तेय का स्वरूप बताया गया है।

After discussing the second gateway of Samvar, non-stealing, the third gateway, is described here The commentator has given two reasons for stating non-stealing after truth The first reason is that according to the order in text non-stealing is discussed at this stage The second reason is that only that person can discard falsehood who discards non-stealing One who is engaged himself in stealing, he cannot follow truth So it is appropriate to discuss non-stealing after discussing truth First of all stealing has been defined

अस्तेय का स्वरूप **NATURE OF NON-STEALING**

१२९. जंबू ! दत्तमणुण्णाय-संवरो णाम होई तइयं सुव्वया ! महव्वयं गुणव्वयं परदव्वहरणपडिविरइकरणजुत्तं अपरिमियमणंततण्हाणुगयमहिच्छमणवयणकलुसआयाणसुणिग्गहियं सुसंजमिय-मण-हत्थ-पायणिहुय णिग्गथं णिट्ठियं णिरुत्तं णिरासव णिब्भयं विमुत्त उत्तमणरवसभपवरवलवगसुविहियजणसम्मतं परमसाहुधम्मचरणं।

१२९. हे उत्तम व्रतो के धारक जम्बू ! तीसरा 'दत्तानुज्ञात' नामक सवरद्वार है। यह महान् व्रत है तथा यह गुणव्रत- इहलोक-परलोक सम्बन्धी उपकारो का कारणभूत भी है। यह पराये द्रव्य-पदार्थो के हरण से निवृत्तिरूप क्रिया से युक्त है, अर्थात् इस व्रत मे परायी वस्तुओ के अपहरण का त्याग किया जाता है। यह व्रत अपरिमित-असीम अनन्त तृष्णा से युक्त महा-अभिलाषा वाला मन एव वचन द्वारा पापमय परद्रव्य हरण का भलीभाँति निग्रह करता है। इस व्रत के प्रभाव से मन इतना सयमशील बन जाता है कि परधन को ग्रहण करने मे प्रवृत्त हुए हाथ और पैर रुक कर निश्चल हो जाते है, यह बाह्य और आभ्यन्तर परिग्रह की ग्रन्थियो से रहित है, सब धर्मों की पराकाष्ठा तक पहुचा हुआ है। सर्वज्ञ भगवन्तो ने इसे उपादेय कहा है। यह आस्रव का निरोध करने वाला है। निर्भय है-इसका पालन करने वाले को राजा या शासन आदि का भय नही रहता और लोभ उसका स्पर्श भी नही करता। यह प्रधान बलशालियो तथा शास्त्रोक्त विधि से आचरण करने वाले साधुजनो द्वारा सम्मत है, श्रेष्ठ साधुओ का धर्माचरण है।

129. O Jambu, the practitioner of meritorious vows ! The third gateway of Samvar is to receive whatever is needed only with permission. It is a major vow It is the cause of favours relating to this world and the next It lies in discarding the desire of stealing things belonging to others In this vow one takes an oath not to steal things belonging to others This vow has no limit, mentally and vocally one subdues his infinite desire to engage in sinful act of robbing articles belonging to others As a result of this vow, the mind gets involved so much in self-restraint that hands and feet become disinterested in having money belonging to others. It is without any internal or external hurdles It is in all the religions. The omniscient have declared it as worthy of being followed It stops the inflow of Karma One who practices it does not have any fear of the king or of the administration. Greed cannot affect him It is approved by heroic people and the true monks It is the conduct of best monks

विवेचन अस्तेय महाव्रत है। जीवन पर्यन्त सूखे तिनके जैसे अत्यन्त तुच्छ पदार्थ को भी अदत्त या अननुज्ञात ग्रहण न करना अपने आप मे एक महान् साधना है। इसका निर्वाह करने मे आने वाली बडी-बडी कठिनाइयो को समभाव से, मन मे तनिक भी मलीनता लाये बिना, सहन कर लेना और वह भी स्वेच्छा से, कितना कठिन है ! अतएव इसे महाव्रत कहना सर्वथा समुचित ही है।

अस्तेय शब्द के तीन और पर्यायवाचक मिलते है। 1 अचौर्य, 2 अदत्तादान विरमण, 3 दत्तानुज्ञात

यह व्रत अनेकानेक गुणो का जनक है। इसके धारण और पालन से इस लोक मे भी उपकार होता है और परलोक मे भी, अतएव इसे गुणव्रत भी कहा गया है। यह व्रत सभी व्रतो के साथ सम्बद्ध होने से उनकी पराकाष्ठा तक को यह स्पर्श करता है। क्योकि अहिंसा, सत्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह का भी तभी पालन हो सकता है जब जीवन मे मन-वचन-काया से अचौर्य वृत्ति आ जायेगी।

अस्तेयव्रत की आराधना से अपरिमित तृष्णा और अभिलाषा के कारण कलुषित मन का निग्रह होता है। जो द्रव्य प्राप्त है, उसका व्यय न हो जाये, इस प्रकार की इच्छा को यहाँ तृष्णा कहा गया है और अप्राप्त वस्तु की प्राप्ति की बलवती लालसा को महेच्छा कहा गया है।

'सुसंजमिय-मण-हत्थ-पायनिहुय' इस विशेषण के द्वारा शास्त्रकार ने यह सूचित किया है कि मन पर यदि सम्यक् प्रकार से नियत्रण कर लिया जाये, मन पूरी तरह काबू मे रहे तो हाथो और पैरो की प्रवृत्ति स्वत रुक जाती है। जिस ओर मन नही जाता उस ओर हाथ-पैर भी नही हिलते। यह सूचना साधको के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण और उपयोगी है। साधको को सर्वप्रथम अपने मन को सयत बनाने का प्रयत्न करना चाहिए। ऐसा करने पर वचन और काय अनायास ही सयत हो जाते है।

Elaboration—Non-stealing is a major vow. It is a great spiritual practice not to accept even an insignificant article such as a piece of straw without the permission of its owner throughout life One faces

many difficulties in practicing it But he endures them in a state of equanimity with his own free will and without having even the slightest dejection in his mind It is really very difficult So it is totally proper to term it as a major vow

There are three synonyms of Asteya - 1 Achorya (non-stealing), 2. Adattadan Viraman (abstain from taking what is not given) and 3 Dattanujnata (taking what is given)

This vow generates many virtues Its practice is beneficial in this world and also in the next life So it is also called Gunavrat. As it is associated with all other vows it touches their perfection This is because Ahimsa, truth, celibacy and non-possession can be observed only when the attitude of non-stealing is embraced through mind, speech and body

The mind is full of unlimited wants and desires The practice of this vow subdues that polluted mind One may not spend all what he has got, such a feeling is called want (trishna) The strong lust to have that which one has not get is called intense desire (Mahechchha)

The author has used the adjectives 'Susanjamiya-nun-hath-payanihuyam' It means that if the mind is properly controlled and totally subdued, then the activity of hands and feet stops itself Hands and feet do not move in that direction which is not followed by the mind So the practitioner of spirituality should first of all try to bring his mind in self-restraint. By doing so, the speech and the body shall be controlled automatically

१३०. जत्थ य गामागर–णगर–णिगम–खेड–कब्बड–मडंब–दोणमुह–संबाह–पट्टणासमगयं च किंचि दव्वं मणि–मुत्त–सिलप्पवाल–कंस–दूस–रयय–वरकणग–रयणमाइं पडियं पम्हुट्ठं विप्पणट्ठं, ण कप्पइ कस्सइ कहेउं वा गिण्हिउं वा अहिरण्णसुवण्णियेण समलेट्ठुकंचणेणं अपरिग्गहसंवुडेणं लोगम्मि विहरियव्वं।

१३०. जिसमे (अदत्तादानविरमण व्रत मे) गाँव, खान, नगर, निगम, खेट, कर्बट, मडब, द्रोणमुख, सबाध, पट्टन अथवा आश्रम (अथवा इनके अतिरिक्त किसी अन्य स्थान) मे पडी हुई, उत्तम मणि, मोती, शिला, मूँगा, काँसा, वस्त्र, चाँदी, सोना, रत्न आदि कोई भी वस्तु गिरी हो, कोई उसे भूल गया हो, खोई हुई हो तो (उसके विषय मे) किसी को कहना अथवा स्वय उठा लेना नहीं कल्पता है। क्योंकि साधु को चादी–सोने का त्यागी होकर, पाषाण और स्वर्ण मे समभाव रखकर, परिग्रह से सर्वथा रहित और सभी इन्द्रियो से सवृत्त–सयत होकर ही लोक मे विचरना चाहिए।


साधू के लिए
रास्ते में पड़ी वस्तुयें
भी अग्राह्य है।
क्या मैं यहाँ रात्रि में रुक
सकता हूँ
उपाश्रय में रुकने की आज्ञा लेते हुए
यह रस आपके
बीमार गुरुजी के
लिए है।
गुरुदेव! रस
ग्रहण करें।
नहीं मुझे
आवश्यकता
नहीं है।
गुरुदेव को रस
की आवश्यकता
नहीं है।
कृपया आप
ले लेवें।
क्या मैं प्रवचन देने के लिए
इस पाट का प्रयोग कर
सकता हूँ ?

चित्र-परिचय 18

Illustration No. 18

अस्तेय व्रत

चित्र मे दिखाया गया है कि अस्तेय व्रत के आराधक साधु रास्ते मे पडी हुई कीमती से कीमती वस्तु भी ग्रहण नहीं करते है। यहाँ तक कि आज्ञा प्राप्त किये बिना उपाश्रय मे भी नहीं रुकते हैं।

उदाहरण द्वारा अस्तेय व्रत का स्वरूप स्पष्ट किया गया है—गोचरी के लिए आये हुए साधु को गृहस्थ ने उनके बीमार गुरुजी के लिए रस दिया। रस लेकर वह गुरुजी के पास गये परन्तु गुरुजी ने उसे लेने से मना कर दिया। साधु वापस उस रस को लेकर गृहस्थ के पास आये और दोबारा गृहस्थ की आज्ञा प्राप्त कर रस स्वय ग्रहण किया। इससे स्पष्ट हो जाता है कि जो वस्तु जिसके लिए दी गई है, उसके अलावा दूसरे को उपयोग करना भी इस व्रत के आराधक को नही कल्पता।

नीचे के चित्र मे बताया गया है कि व्याख्यान देने के लिए उपाश्रय मे आये साधु पाट का प्रयोग भी आज्ञा लेकर ही करते हैं। जिससे स्पष्ट होता है कि उपाश्रय मे प्रवेश की आज्ञा लेने पर भी उसमे पडी हुई वस्तुओ के प्रयोग के लिए अलग से आज्ञा लेनी चाहिए।

—सूत्र 131, पृ 319

VOW OF NON-STEALING

The illustration at top left shows that an ascetic observing vow of non-stealing does not ake even costly things lying on the path He even does not stay in an Upashraya without getting permission (top right illustration)

Example of immaculate observation of the vow of non-stealing—A householder gives juice to an alms-seeking ascetic meant for his teacher The ascetic brings the juice to the teacher who declines to consume it The ascetic returns to the householder and only after seeking his permission drinks the juice himself This clarifies that an observer of this vow cannot use a thing meant for some specific person (center illustration)

The illustration at the bottom shows an ascetic, staying in an Upashraya, uses even a seat for discourse after seeking permission This clarifies that even after getting permission to stay at a place an ascetic must seek permission he wants to use anything lying there

— Sutra-131, pages-319

130. An articles such as precious stone, pearl, rock, coral, bronze, cloth, silver, gold, jewel and the like is lying or someone has forgotten or has lost in a village, shop, town, corporation, kheta, karbat, port, harbour, ashrama or at any other place A person who is practicing the vow of adattadan virman (discarding that which is not given) can neither pick up such an article himself nor ask anyone to pick it up It is because a monk has detached himself from desire for gold and silver He considers gold and stone of same value for his self. He is totally without any feeling of attachment or collecting with such a feeling He should wander in the world keeping his senses in self-restraint

१३१. [१] जं वि य हुज्जाहि दव्वजायं खलगयं खेत्तगयं रण्णमंतरगयं वा किंचि पुप्फ–फल–तयप्पवाल–कंद–मूल–तण–कट्ठ–सक्कराइ अप्पं च बहुं च अणुं च थूलगं वा ण कप्पइ उग्गहम्मि अदिण्णंम्मि गिण्हिउं जे, हणि हणि उग्गहं अणुण्णविय गिण्हियव्वं, वज्जेयव्वो सव्वकालं अचियत्तघरप्पवेसो अचियत्तभत्तपाणं अचियत्तपीढ–फलग–सिज्जा–संथारग–वत्थ–पत्त–कंबल–दंडग–रयहरण–णिसिज्ज–चोलपट्टग–मुहपोत्तिय–पायपुंछणाइ भायण–भंडोवहि–उवगरणं परपरिवाओ परस्स दोसो परववएसेणं जं च गिण्हइ, परस्स णासेइ जं च सुकयं, दाणस्स य अंतराइयं दाणविप्पणासो पिसुण्णं चेव मच्छरियं च।

१३१. [१] (साधु को) कोई भी वस्तु, जो खलिहान मे पडी हो, या खेत मे पडी हो, या जगल मे पडी हो, जैसे कि फूल हो, फल हो, प्रवाल हो, कन्द, मूल, तृण, काष्ठ या ककर आदि हो, वह अल्प हो या बहुत हो, सूक्ष्म हो या स्थूल हो, स्वामी के दिये बिना या उसकी आज्ञा प्राप्त किये बिना ग्रहण करना नही कल्पता। घर और स्थडिलभूमि भी आज्ञा प्राप्त किये बिना ग्रहण करना उचित नही है।

(तो फिर साधु को किस प्रकार ग्रहण करना चाहिए? यह विधान किया जाता है कि) साधु को उपाश्रय मे रहने वाली वस्तु का उपभोग या ग्रहण वहा के स्वामी या अधिकारी की प्रतिदिन आज्ञा लेकर करना चाहिए तथा अप्रीतिकारक घर मे प्रवेश वर्जित करना चाहिए अर्थात् जिस घर के लोगो मे साधु के प्रति अप्रीति हो, ऐसे घरो मे किसी वस्तु के लिए प्रवेश करना योग्य नही है। अप्रीतिकारक के घर से आहार–पानी तथा पीठ, फलक–पाट, शय्या, सस्तारक, वस्त्र, पात्र, कबल, दण्ड–विशिष्ट कारण से लेने योग्य लाठी और पादप्रोछन–पैर साफ करने का वस्त्रखण्ड आदि एव भाजन–पात्र, भाण्ड–मिट्टी के पात्र तथा उपधि–वस्त्रादि उपकरण भी ग्रहण नही करने चाहिए। साधु जो दूसरे की निन्दा करता है, दूसरे के दोष देखता है या किसी पर द्वेष करता है। (आचार्य, उपाध्याय, स्थविर, रुग्ण अथवा शैक्ष आदि) दूसरे के नाम से जो कोई वस्तु ग्रहण करता है तथा जो उपकार को या किसी के सुकृत को छिपाता है–नष्ट करता है, जो दान मे अन्तराय करता है, अर्थात् दिये जाने वाले दान मे किसी प्रकार से विघ्न डालता है, जो दान का विप्रणाश करता है अर्थात् दाता के नाम को छिपाता है, जो पैशुन्य

करता-चुगली करता है और मात्सर्य-ईर्ष्या-द्वेष करता है। वह सर्वज्ञ भगवान की आज्ञा से विरुद्ध करता है, अतएव इनसे बचना चाहिये।

131. (1) An article is lying at a threshing ground, in a farm or a forest It may be a flower, a fruit, a vegetable, a straw, a piece of wood, or a piece of stone It may be in small quantity or in large quantity It may be little or large A monk is not allowed to accept it without the permission of its owner or without being offered by the owner It is not proper for him to occupy a place for stay or to use vacant land for call of nature without permission

(How then a monk should have a thing?) It is laid down in the code that daily a monk should seek permission everyday from the owner or manager of the place of stay He should avoid those houses, wherein his entry is not liked or those houses whose residents have an ill feeling towards him He should not go to such houses for any desired article From any such house he should not seek food, water, plank, bedding, cloth, pot, blanket, stick, cloth for cleaning feet, or earthen put and the like A monk should not condemn any person He should not see faults of others He should not have hatred towards anyone A monk accepts any article in the name of the acharya, upadhyaya, old monk, sick monk or a recently initiated monk He conceals the gratitude or a good act of others He conceals the name of the donor He causes any hurdle in the offering He back bites He is jealous of others (Such a monk transgresses the order of Bhagavan or the omniscient So one should avoid such a behaviour)

ये अस्तेय व्रत के आराधक नहीं NOT TRUE PRACTITIONER OF THE VOW OF NON-STEALING

[२] जे वि य पीढ-फलग-सिज्जा-संथारग-वत्थ-पाय-कंबल-मुहपोत्तिय-पायपुंछणाइ-भायण-भंडोवहिउवगरणं असंविभागी, असंगहरुई, तवतेणे य वइतेणे य रूवतेणे य आयारे चेव भावतेणे य, सद्दकरे झझकरे कलहकरे वेरकरे विकहकरे असमाहिकरे सया अप्पमाणभोई सयय अणुबद्धवेरे य णिच्चरोसी से तारिसए णाराहए वयमिणं।

[२] जो भी चौकी; पाट, शय्या, बिछौना, वस्त्र, पात्र, कम्बल, दण्ड, रजोहरण, आसन, चोलपट्टक, मुखवस्त्रिका और पादप्रोछन आदि, पात्र, मिट्टी के पात्र-भाण्ड और अन्य उपकरणो का जो आचार्य आदि साधर्मिको मे उचित रूप से विभाजन नही करता, वह अस्तेयव्रत का आराधक नही होता। जो असग्रहरुचि है अर्थात् एषणीय पीठ, फलक आदि गच्छ के लिए आवश्यक या उपयोगी

उपकरणो का जो स्वार्थी (आत्मभरी) होने के कारण सग्रह करने मे रुचि नही रखता, जो तपस्तेन है अर्थात् तपस्वी न होने पर भी तपस्वी के रूप मे अपना परिचय देता है, वचनस्तेन-वचन का चोर है, जो रूपस्तेन है अर्थात् सुविहित साधु न होने पर भी जो सुविहित साधु का वेष धारण करता है, जो आचार का चोर है अर्थात् आचार से दूसरो को धोखा देता है और जो भावस्तेन है अर्थात् दूसरे के ज्ञानादि गुण के आधार पर अपने आपको ज्ञानी प्रकट करता है, जो रात्रि मे उच्च स्वर से स्वाध्याय करता या बोलता है अथवा गृहस्थो जैसी भाषा बोलता है, जो गच्छ मे भेद उत्पन्न करने वाले कार्य करता है, जो कलहकारी, वैरकारी और विकथा करने वाला, अशान्ति पैदा करने वाला है, जो शास्त्रोक्त प्रमाण से सदा अधिक भोजन करता है, जो सदा वैर बाँधकर रखने वाला और तीव्र क्रोध करने वाला है, ऐसा पुरुष इस अस्तेयव्रत की आराधना नहीं कर सकता।

[2] The Acharya and the like has stools, beds, bedding, pieces of cloth, pots, blankets, sticks, brooms, mats, covering cloth, mouth-kerchiefs (mukh-vastrika) and cloth for cleaning feet, earthen pots and others articles of common use by the monks If he does not properly distribute them, he transgresses the vow of non-stealing Such a bent of mind is that of attachment, the stool, board and the like are useful and essential for monks But due to his selfish nature, he does not keep them in store for other monks He does not practice austerities but introduces himself as an austere monk So he is a thief in respect of austerities He does not make correct interpretation or statement so he is thief of speech. He is dressing himself as a monk but is not practising the code meant for the monk So he is thief in respect of appearance He is not following the ascetic conduct and is thus deceiving others So he is thief in respect of conduct He poses himself as expert in scriptures on the basis of the knowledge of other monks So he is thief in respect of monkhood He recites in a loud voice at night or talks loudly at night He talks like a householder He does such acts that cause friction in the organisation He is quarrelsome He creates enmity and disturbs equanimity He always takes more food then the amount prescribed in scriptures. He prolongs enmity He continues his angry attitude Such a monk transgresses the code He is not true practitioner of the vow of non-stealing

विवेचन . अस्तेयव्रत की आराधना की विधि यहाँ बतलाई गई है। प्रारम्भ मे कहा गया है कि अस्तेयव्रत के आराधक को कोई भी वस्तु, चाहे वह मूल्यवान हो या मूल्यहीन हो, बहुत हो या थोडी हो, छोटी हो या मोटी हो, यहाँ तक कि धूल या ककर जैसी तुच्छतर वस्तु ही क्यो न हो, बिना दी हुई या अननुज्ञात ग्रहण नही करना

चाहिए। ली जाने वाली वस्तु का दाता अथवा अनुज्ञाता भी वही होना चाहिए जो उसका स्वामी हो। व्रत की पूर्ण आराधना के लिए यह नियम सर्वथा आवश्यक ही है। मगर प्रश्न यह उठता है कि साधु जब मार्ग मे चल रहा हो, ग्राम, नगर आदि से दूर जगल मे हो और उसे अचानक तिनका जैसी किसी वस्तु की आवश्यकता हो जाये तो वह क्या करे ?

इसका समाधान यह है कि शास्त्र मे अनुज्ञा देने वाले पाँच बतलाये गये है-(१) देवेन्द्र, (२) राजा, (३) गृहपति (मण्डलेश, जागीरदार या ठाकुर), (४) सागारी (गृहस्थ), और (५) साधर्मिक। भगवती सूत्र के शतक १६, उ० २ मे इसका उल्लेख है कि पूर्वोक्त परिस्थिति मे तृण, ककर आदि तुच्छ-मूल्यहीन वस्तु की यदि आवश्यकता हो तो साधु देवेन्द्र की अनुज्ञा से उसे ग्रहण कर सकते है।

इस आशय को व्यक्त करने के लिए मूल पाठ मे इस व्रत या सवर के लिए **दत्तमणुण्णायसंवरो** (दत्त-अनुज्ञातसवर) शब्द का प्रयोग किया गया है, केवल 'दत्तसवर' नही कहा गया। इसका तात्पर्य यही है कि जो पीठ फलक आदि वस्तु किसी गृहस्थ के स्वामित्व की हो उसे स्वामी के देने पर ग्रहण करना चाहिए और जो धूलि या तिनका जैसी तुच्छ वस्तुओ का कोई स्वामी नही होता-जो सर्व साधारण के लिए मुक्त है, उन्हे देवेन्द्र की अनुज्ञा से ग्रहण किया जाये तो वे अनुज्ञात है। उनके ग्रहण से व्रतभग नहीं होता।

अदत्तादान के विषय मे कुछ अन्य शकाएँ भी उठाई जाती है, यथा-

शका-साधु कर्म और नोकर्म का जो ग्रहण करता है, वह अदत्त है। फिर व्रतभग क्यो नही होता ?

समाधान-जिसका देना और लेना सम्भव होता है, उसी वस्तु मे स्तेय-चौर्य-चोरी का व्यवहार होता है। कर्म-नोकर्म के विषय मे ऐसा व्यवहार नही हो सकता, अत उनका ग्रहण अदत्तादान नही है।

शका-साधु रास्ते मे या नगरादि के द्वार मे प्रवेश करता है, वह अदत्तादान क्यो नही है ?

समाधान-रास्ता और नगरद्वार आदि सामान्य रूप से सभी के लिए मुक्त है, साधु के लिए भी उसी प्रकार अनुज्ञात है जैसे दूसरो के लिए। अतएव यहाँ भी अदत्तादान नही समझना चाहिए। अथवा जहाँ प्रमादभाव है वही अदत्तादान का दोष होता है। रास्ते आदि मे प्रवेश करने वाले साधु मे प्रमत्तयोग नही होता, अतएव वह अदत्तादानी नही है। तात्पर्य यह है कि जहाँ सक्लेशभावपूर्वक प्रवृत्ति होती है वही अदत्तादान होता है, भले ही वह बाह्य वस्तु को ग्रहण करे अथवा न करे।

अभिप्राय यह है कि जिन वस्तुओ मे देने और लेने का व्यवहार सम्भव हो और जहाँ सक्लिष्ट परिणाम के साथ बाह्य वस्तु को ग्रहण किया जाये, वही अदत्तादान का दोष लागू होता है। जो अस्वामिक या सस्वामिक वस्तु सभी के लिए मुक्त है या जिसके लिए देवेन्द्र आदि की अनुज्ञा ले ली गई है, उसे ग्रहण करने अथवा उसका उपयोग करने से अदत्तादान नही होता। साधु को दत्त और अनुज्ञात वस्तु ही ग्राह्य होती है।

सूत्र मे असविभागी और असग्रहरुचि पदो द्वारा व्यक्त किया गया है कि गच्छवासी साधु को गच्छवर्ती साधुओ की आवश्यकताओ का भी ध्यान रखना चाहिए। उसे स्वार्थी नही होना चाहिए। आहारादि शास्त्रानुसार जो भी प्राप्त हो उसका उदारतापूर्वक यथोचित सविभाग करना चाहिए। किसी दूसरे साधु को किसी उपकरण की या अमुक प्रकार के आहार की आवश्यकता हो और वह निर्दोष रूप से प्राप्त भी हो रहा हो तो केवल स्वार्थीपन के कारण उसे ग्रहण मे अरुचि नही करनी चाहिए। गच्छवासी साधुओ को एक-दूसरे के उपकार और अनुग्रह मे प्रसन्नता अनुभव करनी चाहिए।

उल्लिखित पाठ मे 'तपस्तेन' अर्थात् 'तप का चोर' आदि पदो का प्रयोग किया गया है, उनका उल्लेख दशवैकालिकसूत्र में भी आया है। स्पष्टीकरण इस प्रकार है–

तप-स्तेन–किसी स्वभावत कृशकाय साधु को देखकर किसी ने पूछा–महाराज, अमुक गच्छ में मासखमण की तपस्या करने वाले सुने है, क्या आप वही मासक्षपक है?

यह सुनकर वह कृशकाय साधु मासक्षपक न होते हुए भी यदि अपने को मासक्षपक कह देता है तो वह तप का चोर है अथवा धूर्त्ततापूर्वक उत्तर देता है–'भई, साधु तो तपस्वी होते ही है, उनका जीवन ही तपोमय है।'

इस प्रकार गोलमोल उत्तर देकर वह तपस्वी न होकर भी यह धारणा उत्पन्न कर देता है कि यही मासक्षपक तपस्वी है। ऐसा साधु तप स्तेन कहलाता है।

वचनस्तेन–इसी प्रकार किसी वाग्मी-कुशल व्याख्याता साधु का यश छल के द्वारा अपने ऊपर ओढ लेना-धूर्त्तता से अपने को वाग्मी प्रकट करने या कहने वाला वचनस्तेन साधु कहलाता है।

रूपस्तेन–किसी सुन्दर रूपवान् साधु का नाम किसी ने सुना है। वह किसी दूसरे रूपवान् साधु को देखकर पूछता है–क्या अमुक रूपवान् साधु आप ही है? 'वही साधु' न होने पर भी वह साधु यदि हाँ कह देता है अथवा छलपूर्वक गोलमोल उत्तर देता है, जिससे प्रश्नकर्त्ता की धारणा बन जाये कि यह वही प्रसिद्ध रूपवान् साधु है, तो ऐसा कहने वाला साधु रूप का चोर है।

रूप दो प्रकार का है–शरीर की सुन्दरता और सुविहित साधु का वेष। जो साधु सुविहित तो न हो किन्तु लोगो को अपने प्रति आकर्षित करने के लिए, अन्य साधुओ की अपेक्षा अपनी उत्कृष्टता प्रदर्शित करने के लिए सुविहित साधु का वेष धारण कर ले–मैला चोलपट्ट, मैल से भरा शरीर, सिर्फ दो पात्र आदि रखकर विचरे तो वह रूप का चोर कहलाता है।

आचारस्तेन–जो साधु समाचारी आदि का चोर है, वह आचारस्तेन कहलाता है। किसी साधु के आचार की उत्कृष्ट ख्याति किसी ने सुनी है। वह किसी दूसरे साधु से पूछता है–क्या आप वही हो जिनके आचार की ख्याति सुनी है। वही साधु न होने पर भी यदि हाँ कहे अथवा छलपूर्वक उत्तर दे कि साधु तो आचारवान् होते ही है। ऐसा कहने वाला साधु आचार का चोर है।

भावस्तेन–जो साधु श्रुतज्ञान आदि भाव की चोरी करे वह भावस्तेन कहलाता है। किसी और के मुँह से दूसरे साधु का शास्त्र सबधी अपूर्व व्याख्यान सुनकर जो साधु ऐसा कहे कि यह व्याख्यान तो मैने ही दिया है तो वह साधु भाव का चोर है।

Elaboration—The procedure of practising the vow of non-stealing has been narrated here in detail It has been stated in the beginning that a practitioner of this vow should not pick up or take any thing however insignificant it may be, without the permission of its owner. The thing concerned may be costly or of a little value. It may be in large quantity or in small quantity. It may be thin or thick. It may be sand or stone. It should not be accepted without the consent of the owner In order to

practice the vow of non-stealing this principle is essential. But the question may arise that a monk may suddenly find a straw which he needs when he is in a forest away from a village or a town during his wanderings what should he do then ?

The reply to it is that in scriptures, there are five beings who can grant permission They are—(1) god Indra, (2) a king, (3) the owner of the house or the state, (4) a householder devotee, and (5) a co-religionist In the above said condition, in case an insignificant thing like stone or straw is needed by the monk He can accept it with the permission of Indra

To distinctly express it in the aphorism the words 'datt manunnaya samvaro' have been used. Simply the word 'datt Samvar' has not been used It means that the articles such as stool, beds and the like which belong to a householder should be accepted only if their owner offers them and the articles such as dust or stone, which do not belong to anyone, and which are free for use of the common men, should be take by a monk with the permission of god Indra By accepting in this manner, he does not transgress the vow

There are some other doubts relating to the vow of non-stealing namely when a monk acquires Karma or no-Karma, which is not offered Why then it is said that he does not transgress the vow?

In respect of the said doubt, the reply is that stealing is in respect of that article which can be given and taken In case of Karma and no-Karma such an activity is not possible So to accept it is not stealing

Another doubt is that a monk enters the gate or gate of the town during his wanderings Why cannot it be termed as 'adattadan'

The reply to it is that the road and the gate of the town is common for all passers-by It is for the monks also in the same fashion as it is for others so it should not be considered as adattadan (act without permission of the owner) The fault of adattadan is only where there is slackness A monk which coming to a road from any side is not in a state of slackness So he is not committing the fault of stealing (adattadan). In a nutshell adattadan is only (in that condition) where any activity is with bad contemplation or planning whether the external object concerned is taken away or not.

The gist is that the fault of stealing (adattadan) is only in case of those things wherever the giving and taking is possible in normal behaviour and that thing is taken with an evil mind. In case a thing is owned or not owned by any person and is for free use for all or for which the permission of god Indra has been taken, its possession or use does not amount to stealing A monk can take only the thing that is offered to him or a thing for which permission of god Indra has been taken

The words 'asamvihhagi' and 'asangraharuchi' in the aphorism indicate that a monk belonging to a particular class (gachh) should take into consideration, the needs of all the monks in that class or group He should not be selfish He should with a broad mind divide among the monks the food and the like that has been collected according to the procedure laid down in the scriptures He should not show lack of interest in acceptance of an article or food due to his selfish nature which is needed for any particular monk and which is being offered according to the code The monks in the group should experience happiness in gratifying each other

In the above aphorism, the words tapahsten (thief of austerities) and the like have been used They are mentioned in Dashavaikalik Sutra also They are explained hereunder—

Tapahsten—While looking at a naturally weak monk a person asked, 'Sir, I have heard that in this group some monks are observing fast for one month Are you the same monk ?'

If after hearing it, the monk while not actually practising fast for one month, says that he is observing fast for one month, then he is a thief of austerities If he replies in a cunning manner, 'O dear, monks always practice fasting Their life is full of austerities Then also he is thief of austerities

Thus by replying in a crooked manner, he creates the impression in the mind of the other that he is the one doing austerities although he is not actually practicing austerities. Such a monk is thief of austerities (tapah sten)

Vachasten (Thief of Speech)—Similarly in a deceitful manner, to gain fame for himself about being an eloquent orator or commentator while actually that quality is in some other monk, and thus to declare oneself as an expert is thief of speech

Thief of looks (Rupasten)—A person heard the fame of good looks of a monk He after seeing a good-looking monk asks him if he is the same monk who is famous for his looks If that monk replies in affirmative although actually he is not the monk whose fame of looks has spread far and wide or replies deceitfully in a crooked manner so that the person asking him may have the impression that he is the concerned monk famous for his looks, then he is thief of looks

Beauty is of two types, namely the beauty of the physical body and the beauty of the dress of the monk in accordance with the code in scriptures A monk is not strictly following the code as mentioned in scriptures But in order to attract the public and to create an impression that he is the best amongst all in following the rules, he dresses himself in a dirty cloth, has his body besmeared with dirt and keeps only two pots, then he is called thief of looks or appearance

Similarly one should understand thief of conduct (acharasten) and thief of contemplation

अस्तेय के आराधक कौन ? WHO IS PRACTITIONER OF NON-STEALING

१३२. [प्र.] अह केरिसए पुणाइं आराहए वयमिणं ?

[उ.] जे से उवहि–भत्त–पाण–संगहण–दाण–कुसले अच्चंतबाल–दुब्बल–गिलाण–वुड्ढ–खवग–पवत्ति–आयरिय–उवज्झाए सेहे साहम्मिए तवस्सी–कुल–गण–संघ–चेइयट्ठे य णिज्जरट्ठी वेयावच्चं अणिस्सियं दसविहं बहुविहं करेइ, ण य अचियत्तस्स गिहं पविसइ, ण य अचियत्तस्स गिण्हइ भत्तपाणं, ण य अचियत्तस्स सेवइ पीढ–फलग–सिज्जा–संथारग–वत्थ–पाय–कंबल–दंडग–रयहरण–णिसिज्ज–चोलपट्टय–मुहपोत्तियं पायपुंछणाइ–भायण–भंडोवहिउवगरणं ण य परिवायं परस्स जंपइ, ण यावि दोसे परस्स गिण्हइ, परववएसेण वि ण किंचि गिण्हइ, ण य विपरिणामेइ किंचि जणं, ण यावि णासेइ दिण्णसुकयं दाऊणं य ण होइ पच्छाताविए संभागसीले संगहोवग्गहकुसले से तारिसए आराहए वयमिणं।

१३२. [प्र.] (यदि पूर्वोक्त प्रकार के साधक इस व्रत की आराधना नही कर सकते) तो फिर कौन–सा साधक इस व्रत की आराधना कर सकता है।

[उ.] इस अस्तेयव्रत का आराधक वही साधु हो सकता है जो–वस्त्र, पात्र आदि धर्मोपकरण, आहार–पानी आदि का सग्रह करने और सविभाग करने मे कुशल हो। जो अत्यन्त बाल, दुर्बल, रोगी, वृद्ध और मासक्षपक–मासिक उपवास आदि तपश्चर्या करने वाले साधु की, प्रवर्त्तक, आचार्य, उपाध्याय की, नवदीक्षित साधु की तथा साधर्मिक–लिग एव प्रवचन से समानधर्मा साधु की, तपस्वी, कुल, गण, सघ के चित्त की प्रसन्नता के लिए सेवा करने वाला हो।

जो निर्जरा का अभिलाषी हो-कर्मक्षय करने का इच्छुक हो, जो यश-कीर्ति आदि की कामना न करते हुए किसी पर निर्भर न रहता हो, वही दस प्रकार का वैयावृत्य, अन्न-पान आदि अनेक प्रकार से करता है। वह अप्रीतिकारक गृहस्थ के कुल मे प्रवेश नही करता और न अप्रीतिकारक के घर का आहार-पानी ग्रहण करता है। अप्रीतिकारक से पीठ, फलक, शय्या, सस्तारक, वस्त्र, पात्र, कम्बल, दण्ड, रजोहरण, आसन, चोलपट्ट, मुखवस्त्रिका एव पादप्रोछन भी नही लेता है। वह दूसरो की निन्दा (परपरिवाद) नही करता और दूसरे के दोष नहीं देखता या प्रकट नही करता। जो दूसरे के नाम से (अपने लिए) कुछ भी ग्रहण नही करता और न किसी को दानादि धर्म भावना से विमुख करता है, दूसरे के दान आदि सुकृत का अथवा धर्माचरण का खण्डन नही करता है, जो दानादि देकर और वैयावृत्य आदि करके पश्चात्ताप नही करता है तथा जो प्राप्त आहारादि का यथा योग्य सविभाग करता हो, गच्छ के लिये उपकारी वस्तुओ या शिष्यादि का सग्रह करने तथा उन्हे भोजन-वस्त्र या अध्ययन आदि उपकारो से सन्तुष्ट करने मे दक्ष हो, ऐसा साधु ही इस अस्तेय व्रत का आराधक होता है।

132. [Q.] In case the persons mentioned above cannot practice this vow of non-stealing then what type of human beings can practice it ?

[Ans.] The monk who practices properly the vow of non-stealing should be expert in collection and distribution of cloth, pots and the like, articles needed for ascetic discipline and also food water, and the like He should always keep in mind the needs of extremely weak, diseased, aged monks, recently initiated monks, the monks practicing fast for one month, the monks observing austerities, the head of a group (pravartak), the acharya, the upadhyaya, the monks of the same organisation and dress, the monks that preach the same faith, the monks practicing fasts, the clan, the group and the organisation so that they really experience hearty satisfaction and he should properly serve them

Only such a monk can practice ten types of service (Vaiyavritya) who is desirous of destroying his Karma, shedding his Karma, who is self-dependent and has no desire of fame. He takes food and water in different ways according to the code He does not enter the house wherein the members of the family do not like others and does not collect food or water from such a house He does not take stool, plank, bed, bedding, cloth, pot, blanket, stick, broom, mat, cloth to cover the body, mouth-kerchief or cloth for cleaning feet from such a house. He does not condemn others. He does not look into faults of others. He does not collect any thing using the name of others He does not keep any one devoid of charity (in the form of guidance in accordance with scriptures). He does not criticise good acts like charity or good conduct of others. He

does not repent after making any offering or after serving others. He is expert in properly dividing the articles among Acharya, Upadhyaya and others He stores the things properly He is expert in assisting others in need. Such a monk is truly practicing the vow of non-stealing

विवेचन · उपरोक्त पाठ मे बताया गया है कि अस्तेयव्रत की आराधना के लिए किन-किन योग्यताओ की आवश्यकता है? जिस साधक मे मूल पाठ मे उल्लिखित गुण विद्यमान होते है, वही वास्तव मे इस व्रत का पालन करने मे समर्थ होता है। शास्त्रकार ने अचौर्य व्रत की आराधना को सरल बनाने के लिये वैयावृत्य-सेवा करने का उल्लेख किया है। वैयावृत्य (सेवा) के दस भेद है, जो इस प्रकार है-

वेयावच्च वावडभावो इह धम्मसाहणनिमित्त।
अन्नाइयाण विहिणा, सपायणमेस भावत्थो॥

आयरिय-उवज्झाए-थेर-तवस्सी-गिलाण-सेहाणं।
साहम्मिय-कुल-गण-सघ-सगय तमिह कायव्वं॥[1]

अर्थात्-धर्म की साधना के लिए विधिपूर्वक आचार्य आदि के लिए अन्न आदि उपयोगी वस्तुओ का सग्रह करना-प्राप्त करना वैयावृत्य कहलाता है। वैयावृत्य के दस पात्र है। साधु को इन दस की सेवा करनी चाहिए, अतएव वैयावृत्य के भी दस प्रकार होते है।

१. **आचार्य**-सघ के नायक, पचविध आचार का पालन करने-कराने वाले।

२ **उपाध्याय**-विशिष्ट श्रुतसम्पन्न, साधुओ को सूत्रशिक्षा देने वाले।

३ **स्थविर**-श्रुत, वय अथवा दीक्षा की अपेक्षा से वृद्ध साधु, अर्थात् स्थानाग-समवायाग आदि आगमो के विज्ञाता, साठ वर्ष से अधिक वय वाले अथवा कम से कम बीस वर्ष की दीक्षा वाले।

४. **तपस्वी**-बेला-तेला आदि तथा आतापन योग आदि करने वाले।

५ **ग्लाग**-रुग्ण मुनि।

६ **शैक्ष**-नवदीक्षित।

७ **साधर्मिक**-समान वेष और समान धर्मानुयायी।

८. **कुल**-एक गुरु के शिष्यो का समुदाय अथवा एक वाचनाचार्य से ज्ञानाध्ययन करने वाले।

९. **गण**-अनेक कुलो के समूह या वृद्ध साधुओ की शिष्य परम्परा।

१०. **सघ**-साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविकाओ का समूह।

इन सबकी वैयावृत्य निर्जरा के हेतु करनी चाहिए, यश-कीर्ति आदि के लिए नही। भगवान ने वैयावृत्य को आभ्यन्तर तप के रूप मे प्रतिपादित किया है। इसका सेवन दोहरे लाभ का कारण है-वैयावृत्यकर्त्ता कर्मनिर्जरा का लाभ करता है और जिनका वैयावृत्य किया जाता है, उनके चित्त मे समाधि, सुख-शान्ति उत्पन्न होती है।

१. अभयदेव टीका से उद्धृत।

एक प्रश्न सहज ही उत्पन्न होता है कि पर-निन्दा और पर को दोष देना दोष तो है किन्तु अदत्तादान के साथ उनका सम्बन्ध जोड़ना कैसे उपयुक्त हो सकता है? अर्थात् जो पर-निन्दा करता है और पर के साथ द्वेष करता है, वह अदत्तादानविरमण व्रत का पालन नही कर सकता और जो यह नही करता वही पालन कर सकता है, ऐसा क्यो कहा गया है ?

इस प्रश्न का समाधान आचार्य अभयदेव ने इस प्रकार किया है-

सामीजीवादत्त तित्थयरेण तहेव य गुरूहिं।

अर्थात् अदत्त चार प्रकार का है-**स्वामी अदत्त** अर्थात् स्वामी के द्वारा बिना दिया, **जीव-अदत्त**, **तीर्थंकर-अदत्त** और **गुरु-अदत्त**।

निन्दा निन्दनीय व्यक्ति द्वारा तथा तीर्थंकर और गुरु द्वारा अननुज्ञात (अदत्त) है, इसी प्रकार दोष देना भी दूषणीय जीव एव तीर्थंकर-गुरु द्वारा अननुज्ञात है, अतएव इनका सेवन अननुज्ञात-अदत्त का सेवन करना है। इस प्रकार अदत्तादान-त्यागी को पर-निन्दा और दूसरे को दोष लगाना या किसी पर द्वेष करना भी त्याज्य है।

Elaboration—In the present aphorism, the capabilities that are necessary for properly practicing the vow of non-stealing have been narrated Only that monk who has the qualities as mentioned in the aphorism, is capable of properly practicing this vow.

Service is stated to be of tens types to collect properly the articles needed from practice of dharma by acharya and others is called vaiyavritya (service) The monks who should be served are of ten types namely—Acharya, Upadhyaya, Sthavir, Tapasvi, Glaan, Shaiksh, Saudharmik, Kula, Gana and Sangh A monk should serve monks of these ten categories Thus service is of ten types—

1. **Acharya**—The head of the organisation. He practices five types of conduct and ensures that the other monks follow it

2. **Upadhyaya**—He has expert knowledge of scriptures He teaches scriptures to other monks

3. **Sthavir**—An experienced monk is in three froms namely due to his age, knowledge of scriptures or span of life as a monk. Here knowledge of scriptures means study Sthanang and Samvayang Sutra, age means at least sixty years of age and life as a monk means at least twenty years experience as a monk

4. **Tapasvi**—It means that monk who has practiced part for a monk and suchlike special austerities.

5. **Glaan**—It means a sick monk.

6. Shaiksh—It means newly initiated

7. Saudharmik—It means monks who have similar dress and fallow the same code

8. Kula—It means the group under the same teacher

9. Gana—It means formation that consists of many groups (Kuls)

10. Sangh—The organisation of monks, nuns, householder devotees both male and female

All these should be served with a desire to shed Karma and not for any fame The omniscient has termed it as internal austerity It provides two benefits—one who serves sheds his Karmas, secondly one who has been served gets equanimity, peace and comfort

A question arises that it is bad to criticise others, to caste aspersion on others, but how far it is proper to call it stealing (adattadan). It is said that a person who criticise others or has hatred for others, he cannot practice the vow of non-stealing But why is it so ?

Acharya Abhayadev has replied to it in the following manner—Stealing (adatt–not offered) is of four types—not offered by the owner, not offered by a living being, not offered by Tirthankar and not offered by the teacher

Criticism is not an offering by the person who is being criticised, or the Tirthankar or by the spiritual master Similarly condemnation is also not offered by the person condemned, the Tirthankar or the spiritual master So such an activity is practicing stealing (adattadan) The person who has discarded adattadan, he should not indulge in criticising or condemning others or having hatred towards others

अस्तेय व्रत की आराधना का फल **ADVANTAGE OF ITS PRACTICE**

१३३. इमं च परदव्वहरणवेरमणपरिरक्खणट्ठयाए पावयणं भगवया सुकहियं अत्तहियं पेच्चाभावियं आगमेसिभद्दं सुद्धं णेयाउयं अकुडिलं अणुत्तरं सव्वदुक्खपावाणं विउवसमणं।

१३३. यह अचौर्य व्रत्त के सिद्धान्त रूप प्रवचन भगवान तीर्थंकर देव ने भलीभाति फरमाया है। यह प्रवचन आत्मा के लिए हितकारी है, आगामी भव मे शुभ फल प्रदान करने वाला और भविष्य मे कल्याणकारी है। यह प्रवचन शुद्ध है, न्याय-युक्ति-तर्क से सगत है, कुटिलता से रहित है, सर्वोत्तम है तथा समस्त दु खो और पापो को विशेष रूप से शान्त कर देने वाला है।

विवेचन : प्रस्तुत पाठ मे अस्तेयव्रत सम्बन्धी भगवत्प्रवचन की महिमा बतलाई गई है। साथ ही व्रत के पालनकर्त्ता को प्राप्त होने वाले फल का भी निर्देश किया गया है।

133. This vow of avoiding taking away (stealing) an article belonging to others, has been narrated in a logical manner by Tirthankar. This lesson is beneficial for the soul It is going to provide good result in the succeeding life It is meritorious in future It is best and logical It easily leads to salvation It is the best of all It pacifies all the troubles and sins completely.

Elaboration—In the present lesson, the importance of the word of Tirthankar has been narrated Simultaneously the benefits of it to the person who practices this vow have been mentioned

पूर्वोक्त सूत्रपाठो मे शास्त्रकार ने अस्तेय व्रत की महिमा, उसका स्वरूप और इसके विराधक-आराधक के बारे मे स्पष्ट विवेचन किया है। अब यहा अचौर्य सवर को साधक के मन-वचन-काया मे बद्धमूल करने हेतु इसकी पाच भावनाये निम्नोक्त सूत्र पाठो मे बताई है –

In the aforesaid aphorisms the author has lucidly elaborated the importance of vow of non-stealing, its definition as well as its practicers and non practicers Now he procedes to narrate the five sentiments that absorb this Achorya Samvar mentally, vocally and physically—

अस्तेय व्रत की पाँच भावनाएँ FIVE SENTIMENTS OF THE VOW OF NON-STEALING

१३४. तस्स इमा पंच भावणाओ होंति परदव्व-हरण-वेरमण-परिरक्खणट्ठयाए।

१३४. परद्रव्यहरणविरमण (अदत्तादानत्याग) व्रत की पूरी तरह रक्षा करने के लिए पाँच भावनाएँ है, जो आगे कही जा रही है।

134. There are five sentiments to completely safe-guard the vow of non-stealing The same are being narrated here

प्रथम भावना-निर्दोष उपाश्रय FIRST SENTIMENT- FAULTLESS UPASHRAYA

१३५. पढमं-देवकुल-सभा-प्पवा-वसह-रुक्खमूल-आराम-कंदरागर-गिरि-गुहा-कम्मंतउज्जाण-जाणसाला-कुवियसाला-मंडव-सुण्णघर-सुसाण-लेण-आवणे अण्णम्मि य एवमाइयम्मि दग- मट्टिय-बीज-हरिय-तसपाणअसंसत्ते अहाकडे फासुए विवित्ते पसत्थे उवस्सए होइ विहरियव्वं।

आहाकम्मबहुले य जे से आसित्त-सम्मज्जिय-उवलित्त-सोहिय-छायण-दूमण-लिंपण-अणुलिंपण- जलण-भंडचालणं अंतो बहिं च असंजमो जत्थ वट्टइ संजयाण अट्ठा वज्जियव्वो हु उवस्सओ से तारिसए सुत्तपडिकुट्ठे।

एवं विवत्तवासवसहिसमिइजोगेण भाविओ भवइ अंतरप्पा णिच्चं-अहिगरणकरणकारावण-पावकम्मविरओ दत्तमणुण्णाय उग्गहरुई।

१३५. प्रथम भावना है। (विविक्त एव निर्दोष वसति का सेवन करना) वह इस प्रकार है-देवालय, सभा-विचार-विमर्श का स्थान अथवा व्याख्यानस्थान, प्रपा-प्याऊ, आवसथ-परिव्राजको के ठहरने का स्थान, वृक्षमूल, आराम-लतामण्डप आदि से युक्त, दम्पत्तियो के रमण करने योग्य बगीचा, कन्दरा-गुफा, आकर-खान, गिरिगुहा-पर्वत की गुफा, कर्म-जिसके अन्दर सुधा (चूना) आदि तैयार किया जाता है, बाग-बगीचे, यानशाला-रथ आदि रखने की वाहनशालायें, कुप्यशाला-घर का सामान रखने का स्थान, मण्डप-विवाह आदि के लिए या यज्ञादि के लिए बनाया गया मण्डप, शून्य घर, श्मशान, पहाड मे बना गृह तथा दुकान तथा इसी प्रकार के अन्य स्थानो मे जो भी सचित्त जल, मिट्टी, बीज, दूब हरी वनस्पति और चीटी-मकोडे आदि त्रस जीवो से रहित हो, जिसे गृहस्थ ने अपने लिए बनवाया हो, ऐसे प्रासुक-जीव-जन्तु रहित हो, स्त्री, पशु एवं नपुसक के ससर्ग से रहित हो और इस कारण जो योग्य हो, ऐसे उपाश्रय मे साधु को विहरना चाहिए-ठहरना चाहिए।

(किस प्रकार के उपाश्रय-स्थान मे नही ठहरना चाहिए ? इसका उत्तर यह है-) साधुओ के निमित्त जिसके लिए हिंसा की जाये, ऐसे आधाकर्म के दोष से परिपूर्ण, आसिक्त-जल के छिडकाव वाले, समार्जित-बुहारी से साफ किये हुए, उत्सिक्त-पानी से खूब सीचे हुए, शोभित-सजाये हुए, छादन-डाभ आदि से छाये हुए, दूमन-कलई आदि से पोते हुए, लिम्पन-गोबर आदि से लीपे हुए, अनुलिपन-लीपे को फिर लीपा हो, ज्वलन-अग्नि जलाकर गर्म किये हुए या प्रकाशित किये हुए, भाण्डो-सामान को इधर-उधर हटाये हुए अर्थात् साधु के लिए कोई सामान इधर-उधर किया गया हो और जिस स्थान के अन्दर या बाहर (समीप मे) जीवविराधना होती हो, ये सब जहाँ साधुओ के निमित्त से हो, वह स्थान-उपाश्रय साधुओ के लिए वर्जनीय है। ऐसा स्थान शास्त्र द्वारा निषिद्ध है।

इस प्रकार विविक्ति वास वसति (निर्दोष स्थान मे निवास) रूप समिति के योग -चिन्तन युक्त प्रयोग से सस्कारित साधु का अन्तरात्मा सदा दोषयुक्त आचरण के करने और करवाने के पापकर्म से विरत हो जाता है तथा दत्त-अनुज्ञात अवग्रह में रुचि वाला होता है।

135. The first of the five sentiments is to have a lonely and faultless place of stay Such a place is a temple, common place to assemble, a place meant for lectures, a place meant for serving water, a place meant for stay of mendicants, the root of a tree, a place covered with creeper for taking rest, a garden suitable for amorous enjoyments of couples, a cave, a mine, a hilly cave, a place where lime is prepared, a garden of flowering trees, a place stationing chariots, the store in a house, an enclosure for celebrating marriages, a place for yajnas, a vacant house (ruin), a cremation ground, a shop or house on a hill and any suchlike

place free from organic water, earth, seed, green grass, ants and suchlike mobile living beings, which the householder has build for his own use It should be free from living beings It should not have women, animals or eunuchs It should be worthy due to above reasons A monk should stay in such a place.

(What kind of place of stay should be avoided? The answer to this question is—) The following places of stay are prohibited in scriptures—A place replete with the Adhakarmi fault like indulging in violence for arranging a place of stay for monks. A place sprinkled with water, cleaned with a broom, drenched with water, decorated, thatched with coir etc., white-washed with lime, plastered with cow-dung etc, repeatedly plastered, warmed or lit by fire, made vacant by shifting things to accomodate monks and a place where living beings are harmed in the neighbourhood When all this is being done to accomodate monks, such places are prohibited for monks This is according to scriptures

Thus a monk who stays in such a place free from faults and suitable for practicing state of equanimity, always saves himself from cause of bad state of existence and sins He is the one interested in the vow of non-stealing

द्वितीय भावना—निर्दोष संस्तारक SECOND SENTIMENT FAULTLESS BEDDING

१३६. बिइयं—आराम—उज्जाण—काणण—वणप्पदेसभागे जं किंचि इक्कडं च कठिणगं च जंतुगं य परामेरकुच्च—कुस—डब्भ—पलाल—मूयग—वल्लय—पुप्फ—फल—तय—प्पवाल—कंद—मूल—तण—कट्ठ—सक्कराइ गिण्हइ सेज्जोवहिस्स अट्ठा ण कप्पए उग्गहे अदिण्णम्मि गिण्हिउं जे हणि हणि उग्गहं अणुण्णवियं गिण्हियव्वं।

एवं उग्गहसमिइजोगेण भाविओ भवइ अंतरप्पा णिच्चं अहिगरण—करण—कारावण—पावकम्मविरए दत्तमणुण्णाय उग्गहरुई।

१३६. दूसरी भावना अनुज्ञात सस्तारक ग्रहण रूप है। वाटिका, बाग, बगीचे, कानन—नगर के समीप का वन और वन—नगर से दूर का वनप्रदेश आदि स्थानो मे जो कुछ भी (अचित्त) सूखा घास तथा कठिन—घास की एक जाति विशेष, जन्तुक—पानी मे उत्पन्न होने वाला घास, परा नामक घास, मेरा—मूज का तृण, कूर्च—कूची बनाने योग्य घास, कुश, डाभ, पलाल, मूयक नामक घास, वल्वज घास, पुष्प, फल, छाल, प्रवाल, कन्द, मूल, तृण, लकडी और ककड आदि द्रव्य संस्तारक रूप उपधि के लिए अथवा सस्तारक एव उपधि के लिए ग्रहण करता है तथा उपाश्रय के भीतर की ग्राह्य वस्तुओ को भी दाता द्वारा दिये बिना ग्रहण करना नहीं कल्पता। तात्पर्य यह है कि उपाश्रय की अनुज्ञा ले लेने पर भी

उपाश्रय के भीतर की घास आदि लेना हो तो उनके लिए पृथक् रूप से अनुज्ञा प्राप्त करनी चाहिए। उपाश्रय की अनुज्ञा प्राप्त कर लेने मात्र से उसमे रखी अन्य तृण आदि वस्तुओ के लेने की अनुज्ञा ले ली, ऐसा नही मानना चाहिए।

इस प्रकार अवग्रहसमिति के योग से भावित अन्त करण वाला साधु सदा दोषयुक्त आचरण के कारणभूत पापकर्म के करने और कराने से निवृत्त होता-बचता है और दत्त-अनुज्ञात अवग्रह की रुचि वाला होता है।

136. The second sentiment is about the bedding The bedding a monk accepts is the lifeless grass, hard grass, grass growing in water, the hay, the grass with which broom is prepared, soft grass, such types of grass as para, mera, moojak, valvaj, flowers, fruit, skin of a tree, root, its wood and the like which he takes for use as bedding If such articles are lying in the upashraya, the monks do not use them unless they are specifically offered by the owner or the donor In other words, even if the permission for stay in the upashraya has been obtained, if he wants to use the grass and the like lying in it, he should seek permission for it Simply by securing the permission for use of upashraya he should not take it for granted as permission for using things lying therein

Thus a monk whose heart is in a state of equanimity regarding collection of articles saves himself from committing sin and getting sin committed The sins leading to bad state of existence He has a bent of mind to accept that only which is properly offered

तृतीय भावना–शय्या–परिकर्मवर्जन

THIRD SENTIMENT AVOIDING SINFUL ACTIVITIES FOR GETTING BED

१३७. तइयं–पीढफलगसिज्जासंथरगट्ठयाए रुक्खा ण छिंदियव्वा, ण छेयणेण भेयणेण सेज्जा कारियव्वा, जस्सेव उवस्सए वसेज्ज सेज्जं तत्थेव गवेसिज्जा, ण य विसमं समं करेज्जा, ण णिवाय–पवायउस्सुगत्तं, ण डंसमसगेसु खुभियव्वं, अग्गी धूमो ण कायव्वो, एवं संजमबहुले संवरबहुले संवुडबहुले समाहिबहुले धीरे काएण फासयंतो सययं अज्झप्पज्झाणजुत्ते समिए एगे चरिज्ज धम्मं।

एवं सेज्जासमिइजोगेण भाविओ भवइ अंतरप्पा णिच्चं अहिगरण–करणकारावण–पावकम्मविरए दत्तमणुण्णाय उग्गहरुई।

१३७. तीसरी भावना शय्या-परिकर्मवर्जन है। (साधु को) चौकी, पट्टे, शय्या और संस्तारक के लिए वृक्षो का छेदन नही करना चाहिए। वृक्षो के छेदन या भेदन से शय्या तैयार नही करवानी चाहिए। साधु जिसके उपाश्रय मे निवास करे-ठहरे, वही शय्या की गवेषणा करनी चाहिए। वहाँ की भूमि यदि

विषम (ऊँची-नीची) हो तो उसे सम न करे। पवनहीन स्थान को अधिक पवन वाला अथवा अधिक पवन वाले स्थान को पवनरहित-कम पवन वाला बनाने के लिए उत्सुक न हो-ऐसा करने की अभिलाषा भी न करे, डास-मच्छर आदि के होने पर क्षुब्ध नही होना चाहिए और उन्हे हटाने के लिए आग या धुँआ आदि नही करना चाहिए। इस प्रकार सयम मे प्रवीण, सवर की प्रधानता वाला, कषाय एव इन्द्रियो के निग्रह की प्रधानता वाला, चित्त की समाधि की प्रधानता वाला धैर्यवान मुनि काय से इस व्रत का पालन करता हुआ निरन्तर आत्मा के ध्यान मे लीन रहकर, समितियुक्त रहकर और एकाकी (राग-द्वेष से रहित) होकर धर्म का आचरण करे।

इस प्रकार शय्यासमिति के योग से भावित अन्तरात्मा वाला साधु सदा दुर्गति के कारणभूत पापकर्म से विरत होता है और दत्त-अनुज्ञात अवग्रह की रुचि वाला होता है।

137. The third sentiment is avoidance of sin for procuring bed Its nature is as follows One should not cut trees for preparing planks He should not get prepared the bed by getting the trees cut A monk should seek bed only in the locality where he is staying In case the floor of the upasharaya (place of stay) is uneven, he should not make it even He should not be anxious to make the place airy which is not airy and the place, which is very airy as not airy He should not have a desire to do so He should not feel dejected about mosquitoes He should not create smoke to remove them Thus a monk who is awakened towards his self-restraint, who is avoiding inflow of Karma, who is controlling his passions and senses, who is courageous in maintaining the state of equanimity remains continuously cautious about his soul while practicing this vow of non-stealing He should remain in a state of equanimity, devoid of attachment and hatred while practicing his dharma

Thus a monk who keeps his inner self in a state of equanimity towards bed remains detached from sinful activities, which are the cause of bad state of existence He has an attitude to accept only, that which is offered to him according to the code in scriptures

चतुर्थ भावना-अनुज्ञातभक्तादि FOURTH SENTIMENT FOOD OFFERED ACCORDING TO CODE

१३८. चउत्थं-साहारण-पिंडपायलाभे सति भोत्तव्वं संजएणं समियं, ण सायसूपाहियं, ण खद्धं, ण वेगियं, ण तुरियं, ण चवलं, ण साहसं, ण य परस्स पीलाकरसावज्जं तह भोत्तव्वं जह से तइयवयं ण सीयइ। साहारणपिंडपायलाभे सुहुमं अदिण्णादाणवयणियमविरमणं।

एवं साहारणपिंडपायलाभे समिइजोगेण भाविओ भवइ अंतरप्पा णिच्चं अहिगरण–करण–कारावण–पावकम्मविरए दत्तमणुण्णाय उग्गहरुई।

१३८. चौथी भावना अनुज्ञातभक्तादि है। वह इस प्रकार है–सघ के सब साधुओ के लिए सम्मिलित आहार–पानी आदि मिलने पर साधु को सम्यक् प्रकार से–यतनापूर्वक खाना चाहिए। शाक और दाल ही अधिक नही खानी चाहिये। सरस–स्वादिष्ट भोजन अधिक (या शीघ्रतापूर्वक) नही खाना चाहिए (क्योकि ऐसा करने से अन्य साधुओ को अप्रीति उत्पन्न होती है और वह भोजन अदत्त हो जाता है) तथा जल्दी–जल्दी कवल निगलते हुए भी नही खाना चाहिए। ग्रास को झटपट मुँह मे नही डालना चाहिये। चचलतापूर्वक–हाथ गर्दन आदि बहुत हिला डुलाकर नही खाना चाहिए और न विचारविहीन होकर खाना चाहिए। जो दूसरो को पीडाजनक हो और सावद्य पापयुक्त हो इस तरह नही खाना चाहिए। साधु को इस रीति से भोजन करना चाहिए जिससे उसके तीसरे व्रत मे बाधा उपस्थित न हो। यह अदत्तादानविरमणव्रत का सूक्ष्म–अत्यन्त रक्षा करने योग्य नियम है।

इस प्रकार सम्मिलित भोजन के लाभ मे समिति के योग से भावित अन्त करण वाला साधु सदा दुर्गति हेतु पापकर्म से विरत होता है और दत्त एव अनुज्ञात अवग्रह की रुचि वाला होता है।

138. Fourth sentiment is regarding taking offered food and the like It is like this When food and water is procured collectively for all the monks, a monk should eat it with proper discrimination. He should not consume the sweat juicy rich food in greater quantity (or hurriedly as it may cause dejection in the mind of other monks as that food then becomes not offered) He should not take the morsels of food hurriedly swallowing them He should not take his meal in a state of restlessness He should not eat without proper care and in a way that may cause trouble to others A monk should take his food in such a way that it may not cause any transgression in the practice of this third vow of non-stealing This is the subtle principle of properly safeguarding the vow of avoiding stealing.

Thus a monk who maintains a state of equanimity in his mind while jointly having his food, is always away from such sinful acts that may lead to bad state of existence in next life He has an inclination of taking only that, which is offered strictly according to the code

पाँचवी भावना–साधर्मिक–विनय FIFTH SENTIMENT HUMILITY TOWARDS CO-RELIGIONIST

१३९. पंचमगं–साहम्मिए विणओ पउंजियव्वो, उवगरणपारणासु विणओ पउंजियव्वो, वायणपरियट्टणासु विणओ पउंजियव्वो, दाणगहणपुच्छणासु विणओ पउंजियव्वो, णिक्खमणपवेसणासु

विणओ पउंजियव्वो, अण्णेसु य एवमाइसु बहुसु कारणसएसु विणओ पउंजियव्वो। विणओ वि तवो, तवो वि धम्मो तम्हा विणओ पउंजियव्वो गुरुसु साहुसु तवस्सीसु य।

एवं विणएण भाविओ भवइ अंतरप्पा णिच्चं अहिगरण करण-कारावण-पावकम्मविरए दत्तमणुण्णाय उग्गहरुई।

१३९. पाँचवी भावना साधर्मिक-विनय है। साधर्मिक साधुओ के प्रति विनय का प्रयोग करना चाहिए। (रुग्णता आदि की स्थिति मे) उपकार और तपस्या की पारणा-पूर्ति मे विनय का प्रयोग करना चाहिए। वाचना अर्थात् सूत्रग्रहण मे और गृहीत सूत्र की पुनरावृत्ति मे विनय का प्रयोग करना चाहिए। भिक्षा मे प्राप्त अन्न आदि अन्य साधुओ को देने मे तथा उनसे ग्रहण करने मे और विस्मृत अथवा शकित सूत्रार्थ सम्बन्धी पृच्छा करने मे विनय का प्रयोग करना चाहिए। उपाश्रय से बाहर निकलते और उसमे प्रवेश करते समय विनय का प्रयोग करना चाहिए। इनके अतिरिक्त इसी प्रकार के अन्य सैकडो कारणो मे (कार्यों के प्रसग मे) विनय का प्रयोग करना चाहिए। क्योकि विनय भी अपने आप मे तप है और तप भी धर्म है। अतएव विनय का आचरण करना चाहिए। (विनय किनका करना चाहिए ?) गुरुजनो का, साधुओ का और (तेला आदि) तप करने वाले तपस्वियो का।

इस प्रकार विनय से युक्त अन्त करण वाला साधु अधिकरण-पाप के करने और करवाने से विरत तथा दत्त-अनुज्ञात अवग्रह मे रुचि वाला होता है।

139. Fifth sentiment is humility towards co-religionist One should follow it He should behave with humility while dealing with a monk who is sick or who is completing his long fasting He should practice it when he is taking lesson in scriptures and when he is revising them He should practice it in offering the collected food to other monks and in accepting food from others He should practice it when he wants to ask about the lesson, which he has forgotten or about which he has any doubt regarding its real meaning He should practice it while going out from the Upashraya and while coming in He should practice it in other suchlike activities also because humility is also a form of austerity and austerity is also dharma So one should practice humility. For whom one should have a sense of humility ? He should exhibit it for his teachers, monks and those who are fasting for three days or more

Thus a monk with his inner bent of mind practicing humility, remains detached in doing and getting done the sinful activities He is interested in accepting only, that which is offered to him according to code

विवेचन (सूत्राङ्क १३५ से १३९ तक) तृतीय व्रत की पाँच भावनाएँ कही गई है। प्रथम भावना मे निर्दोष उपाश्रय को ग्रहण करने का विधान किया गया है। आधुनिक काल मे उपाश्रय शब्द से एक विशिष्ट प्रकार के स्थान का बोध होता है और सर्वसाधारण मे वही अर्थ अधिक प्रचलित है। किन्तु वस्तुत जिस स्थान मे साधुजन ठहर जाते है वही स्थान उपाश्रय कहलाता है। यहाँ ऐसे कतिपय स्थानो का उल्लेख किया गया है जिनमे साधु ठहरते थे। वे स्थान है-देवकुल-देवालय, सभाभवन, प्याऊ, मठ, वृक्षमूल, बाग-बगीचे, गुफा, खान, गिरिगुहा, कारखाने, उद्यान, यानशाला (रथादि रखने के स्थान), कुप्यशाला-घर-गृहस्थी का सामान रखने की जगह, मण्डप, शून्यगृह, श्मशान, पर्वतगृह, दुकान आदि।

इन या इस प्रकार से अन्य जिन स्थानो मे साधु निवास करे वह निर्दोष होना चाहिए। साधु के निमित्त से उसमे किसी प्रकार का झाडना-पौछना, लीपना-पोतना आदि आरम्भ-समारम्भ न किया जाये।

द्वितीय भावना का आशय यह है कि निर्दोष उपाश्रय की अनुमति प्राप्त हो जाने पर अपने सस्तारक (बिछौने) के लिये वहाँ रखे हुए सूखे घास, पवाल आदि की साधु को आवश्यकता हो तो उसके लिए पृथक् रूप से उसके स्वामी की अनुज्ञा प्राप्त करनी चाहिए। ऐसा नही मानना चाहिए कि उपाश्रय की अनुमति ले लेने से उसके भीतर की वस्तुओ की भी अनुमति प्राप्त कर ली। जो भी वस्तु ग्रहण करनी हो वह निर्दोष और दत्त ही होनी चाहिए।

तीसरी भावना शय्यापरिकर्मवर्जन है। इसका अभिप्राय है कि साधु के निमित्त से पीठ, फलक आदि बनवाने के लिए वृक्षो का छेदन-भेदन नही होना चाहिए। उपाश्रय मे ही शय्या की गवेषणा करनी चाहिए। वहाँ की भूमि विषम हो तो उसे समतल नही करनी चाहिए। वायु अधिक आये या कम आये, इसके लिए उत्कठित होना नही चाहिए। उपाश्रय मे डास-मच्छर सताये तो चित्त मे क्षोभ उत्पन्न नही होने देना चाहिए-उस समय मे समभाव रहना चाहिए। डास-मच्छर भगाने के लिए आग या धूम का प्रयोग करना नही चाहिए आदि।

चौथी भावना का सम्बन्ध प्राप्त आहारादि के उपभोग के साथ है। साधु जब अन्य साधुओ के साथ आहार करने बैठे तो सरस आहार जल्दी-जल्दी न खाये, अन्य साधुओ को ठेस पहुँचे, इस प्रकार न खाये। साधारण अर्थात् अनेक साधुओं के लिए सम्मिलित भोजन का उपभोग समभावपूर्वक, अनासक्त रूप से करे।

पाँचवी भावना साधर्मिक विनय है। समान आचार-विचार वाले साधु साधर्मिक कहलाते है। बीमारी आदि की अवस्था मे अन्य के द्वारा जो उपकार किया जाता है, वह उपकरण है। उपकरण एव तपश्चर्या की पारणा के समय विनय का प्रयोग करना चाहिए, अर्थात् इच्छाकारादि देकर, जबर्दस्ती न करते हुए एकत्र या अनेकत्र गुरु की आज्ञा से भोजन करना चाहिए। वाचना, परिवर्तन एव पृच्छा के समय विनय-प्रयोग का आशय है वन्दनादि विधि करना। आहार के देते-लेते समय विनयप्रयोग का अर्थ है-गुरु की आज्ञा प्राप्त करके देना-लेना। उपाश्रय से बाहर निकलते और उपाश्रय मे प्रवेश करते समय विनयप्रयोग का अर्थ आवश्यकी और नैषेधिकी करना आदि है। अभिप्राय यह है कि प्रत्येक क्रिया आगमादेश के अनुसार करना ही यहाँ विनयप्रयोग कहा गया है।

Elaboration—In aphorism 135 to 139, five sentiments of the third vow of non-stealing have been described In the first sentiment the procedure of having faultless place of stay (upashraya) has been narrated In the present age the word upashraya is understood to mean a particular place specially designated as such and this meaning is commonly prevalent. But in reality upashraya is that place where the monks stay Here some such places are mentioned where they stay They are the temple, the place where assembly is held, the place where water is served, hermitage, the root of a tree, a garden, a cave, a mine, a cave in hills, a factory, a orchard, a place where chariots are stationed, a store of a householder, an enclosure, a vacant house, a cremation ground, a house on a hill, a shop and the like

Such and other suchlike places where a monk stays should be faultless They should not in any way be cleaned, plastered and the like specifically for the stay of the monks No activity involving hurt to living being should be done for monks

The gist of the second sentiment is that even after securing the permission for stay in a faultless Upashraya, he should again seek permission if he has a need to use any hay or grass or straw lying therein He should not take it for granted that the permission for use of Upashraya includes the permission for using the things lying therein Whatever a monk wants to have should be free from any fault and should be the one that is properly offered

The third sentiment is avoiding activity regarding preparation of bed It means that trees should not be cut or pierced in order to get prepared stool, plank and the like specifically for a monk A bed should be sought in the Upashraya itself In case the ground is uneven, it should not be levelled, one should not feel bad whether it is airy or not One should not feel disgusted if the mosquitoes trouble in the Upashraya He should remain in a state of equanimity at that time He should not lit fire or create smoke so that the mosquitoes may fly away

The fourth sentiment is about food and its consumption When a monk sits with other monks to take his meals, he should not take juicy food in a hurry He should not take his food in such a way that it causes disturbance to other monks He should take food in a state of equanimity and with a feeling of detachment while having it with other monks

Fifth contemplation is humility towards co-religionist A monk who practices the same code of conduct and has the same faith is called co-religionist. The attention given by other monks at the time of illness is called upakarn. A monk should be in a state of humility at the time of upakarn and also when one is completing the period of long fasting In other words he should first seek permission He should not compel others He should seek permission of his spiritual master or those who are there Humility at the time of taking lessons or seeking clarification about scriptures means that he should properly bow to them according to the code of humility at the time of taking or giving food means that he should take or offer only with the permission of the spiritual master Humility at the time of going out and entering in the Upashraya means that he should utter the words 'avashyaki' and 'Naishedhiki' respectively at those times In fact every activity should be according the code laid down in the scriptures and humility lies in following that code

उपसहार CONCLUSION

१४०. एवमिणं संवरस्स दारं सम्मं संवरियं होइ, सुप्पणिहियं, एवं जाव पंचहिं वि कारणेहि मण-वयण काय-परिरक्खिएहिं णिच्च आमरणंतं च एस जोगो णेयव्वो धिइमया मइमया अणासवो अकलुसो अछिद्दो अपरिस्सावी असंकिलिट्ठो सुद्धो सव्वजिणमणुण्णाओ।

एवं तइयं संवरदारं फासियं पालियं सोहिय तीरियं किट्टियं आराहियं आणाए अणुपालियं भवइ।

एवं णायमुणिणा भगवया पण्णवियं परूविय पसिद्ध सिद्ध सिद्धवरसासणमिणं आघवियं सुदेसियं पसत्थं।

॥ तइयं संवरदारं समत्त त्ति बेमि॥

१४०. इस प्रकार यह तीसरा सवर द्वार मन-वचन-काया द्वारा पाच भावनाओ के चिन्तन प्रयोग से सुरक्षित होकर साधु के दिल-दिमाग मे सस्कार रूप मे अच्छी तरह बैठ जाता है। इन पाच भावनाओ का पालन जीवन पर्यन्त करना चाहिए। यह महाव्रत आश्रव का निरोधक, कलुषित भावो से रहित अछिद्र, शुभ भावो से युक्त एव सक्लेश से रहित है। यह भावना योग समस्त जिनेन्द्रो द्वारा अनुज्ञात है। इस प्रकार यह तीसरा सवर द्वार सम्यक् रूप से पालित होता है, शोभित होता है। पार पहुचाया जाता है। कीर्तित एव आराधित होता है। ऐसा तीर्थकर भगवान महावीर स्वामी ने कहा है। प्ररूपित किया है। यह प्रसिद्ध एव प्रमाणो से सिद्ध है। सुप्रतिष्ठित है। भव्य जीवो के लिये इसका उपदेश किया गया है। यह प्रशस्त कल्याणकारी मगलमय है।

॥ तृतीय संवरद्वार समाप्त॥ वैसा मैं कहता हूँ (जैसा मैंने सुना है।)

140. Thus bolstered by application and contemplation of the five sentiments through mind, speech and body this third Samvar dvar fixes into the mind of a monk as an intrinsic attitude (samskar) These five sentiments should be observed throughout life. This great vow blocks the inflow of karmas, is free of pervert feelings and any leakage, has noble thoughts and is free of troubles This association of sentiments has been conveyed by all jinas Thus this third Samvar dvar is rightly observed, concluded, praised and practiced Tirthankar Bhagavan Mahavir Swami has said and preached so This is well known and authenticated and established This has been preached for the benefit of the deserving This is noble, benefic and auspicious

• THIRD GATEWAY OF SAMVAR CONCLUDED, SO I SAY •

चतुर्थ अध्ययन : ब्रह्मचर्य

FOURTH CHAPTER . BRAHMCHARYA (CHASTITY)

पिछले अध्ययन मे तृतीय सवरद्वार अदत्तादानविरमणव्रत का निरूपण किया गया है। अचौर्य महाव्रत का सम्यक् प्रकार से परिपालन ब्रह्मचर्य व्रत को धारण और पालन करने पर ही हो सकता है। इसलिये अदत्तादानविरमण के पश्चात् ब्रह्मचर्य व्रत का निरूपण किया जा रहा है।

In the third gateway of Samvar the vow of avoiding stealing (adatt) has been described The practice of this vow can be properly done only if one takes the vow of chastity (brahmcharya) and practices it properly After the vow of non-stealing, the vow of chastity is going to be discussed

ब्रह्मचर्य की महिमा **IMPORTANCE OF CHASTITY**

१४१. जंबू ! इत्तो य बंभचेर उत्तम–तव–णियम–णाण–दंसण–चरित्त–सम्मत्त–विणय–मूलं, यम–नियम–गुणप्पहाणजुत्त, हिमवतमहततेयमंत, पसत्थगभीरथिमियमज्झं, अज्जवसाहुजणाचरिय, मोक्खमग्गं, विसुद्धसिद्धिगइणिलय, सासयमव्वाबाहमपुणब्भवं, पसत्थ, सोम, सुभ, सिवमयलमक्खयकर, जइवरसारक्खिय, सुचरिय, सुभासिय, णवरि मुणिवरेहिं महापुरिसधीरसूरधम्मियधिइमंताण य सया विसुद्धं, सव्वं भव्वजणाणुचिण्ण, णिस्संकियं णिब्भय णित्तुसं, णिरायासं णिरुवलेव णिव्वुइघरं णियमणिप्पकपं तवसंजममूलदलियणेम्म पंचमहव्वयसुरक्खियं समिइगुत्तिगुत्त।

झाणवरकवाडसुकय अज्झप्पदिण्णफलिहं सण्णद्धोच्छइयदुग्गइपहं सुगइयहदेसगं च लोगुत्तमं च।

वयमिण पउमसरतलागपालिभूय महासगडअरगतुंबभूय महाविडिमरुक्खखधभूयं महाणगरपागारकवाडफलिहभूय रज्जुपिणिद्धो व इदकेऊ विसुद्धणेगगुणसपिणद्ध, जम्मि य भग्गम्मि होइ सहसा सव्व संभग्गमथियचुण्णियकुसल्लिय–पल्लट्ट–पडिय–खडिय–परिसडिय–विणासियं विणयसीलतवणियम–गुणसमूह। त बभ भगवत।

१४१ श्री सुधर्मा स्वामी अपने प्रमुख शिष्य जम्बू स्वामी से कहते है– हे जम्बू ! इस अदत्तादानविरमण के बाद ब्रह्मचर्य व्रत है। यह ब्रह्मचर्य व्रत, उत्तम तप का, नियमो–उत्तरगुणो का, ज्ञान का, दर्शन का, चारित्र का, सम्यक्त्व का और विनय का मूल है। यह अहिसा आदि यमो और अभिग्रहादि रूप नियम के प्रधान गुणो से युक्त है। यह हिमवान् पर्वत से भी महान् और तेजोवान् है।। इसका पालन करने से साधको का अन्त करण उदार, गम्भीर और स्थिर हो जाता है। यह सरलात्मा साधुजनो द्वारा आचरित है और मोक्ष का मार्ग है। विशुद्ध–रागादिरहित सिद्ध गति का आश्रय है। शाश्वत एव बाधा रहित तथा पुनर्भव से रहित बनाने वाला है। यह प्रशस्त–उत्तम गुणो वाला, सौम्य–शुभ या सुखरूप है। शिव–सर्व प्रकार के उपद्रवो से रहित, अचल और अक्षय–कभी क्षीण न


धर्म रूपी सरोवर
व्रतरूपी कमल
सरोवर की रक्षा करने वाले
किनारे (पाल) ।
ध्यान रूपी कपाट
उत्तम भावना रूप अर्गला
रथ का पहिया
आरों को धारण
करने वाली नाभि
धर्मरूपी महानगर
प्रकोट के कपाट
की अर्गला
विशाल वृक्ष
का स्कंध
ब्रह्मचर्य के खण्डित होने पर
खण्डित घट
शल्ययुक्त शरीर
पर्वत से गिरी शिला
अग्नि से जला
हुआ काष्ठ
चूर्ण-चूर्ण
होकर आटा बना गेहूँ

चित्र-परिचय 19

Illustration No. 19

ब्रह्मचर्य का स्वरूप

चित्र मे उदाहरणो द्वारा ब्रह्मचर्य का स्वरूप बतलाया गया है–

(1) जिस प्रकार सरोवर की रक्षा उसके किनारे (पाल) करते है उसी प्रकार धर्म रूपी सरोवर की रक्षा ब्रह्मचर्य रूपी पाल द्वारा होती है। (2) जिस प्रकार कपाट के बद दरवाजो की रक्षा अर्गला करती है, उसी प्रकार ब्रह्मचर्य की रक्षा के लिए धर्म-ध्यान रूपी कपाट है, उस पर उत्तम भावना रूपी अर्गला लगी है, जो कपाट को खुलने नहीं देती। ब्रह्मचर्य व्रत दुर्गति के मार्ग को बद कर देता है। (3) जिस प्रकार रथ के पहियो के आरो को उसकी नाभि धारण करती है, उसी प्रकार शाति आदि गुणो को ब्रह्मचर्य धारण करता है। (4) जैसे विशाल वृक्ष का स्कध, शाखाएँ, टहनियाँ, पुष्प आदि का आधार होता है, उसी प्रकार समस्त प्रकार के व्रतो का आधार ब्रह्मचर्य है। (5) धर्मरूपी महानगर की रक्षा के लिए ब्रह्मचर्य व्रत प्रकोट के कपाट की अर्गला के समान है। (6) अनेक रस्सियो से बँधा इन्द्रध्वज महोत्सव की शोभा बढाता है उसी प्रकार ब्रह्मचर्य अनेक गुणो से सुशोभित है।

ब्रह्मचर्य के खण्डित होने पर–

(1) जिस प्रकार भूमि पर पटका हुआ मिट्टी का घडा फूट जाता है, उसी प्रकार ब्रह्मचर्य के नष्ट होने पर विनय, शील, तप आदि सभी गुण नष्ट हो जाते है। (2) काँटे लगने से शरीर शल्ययुक्त छिन्न भिन्न हो जाता है, उसी प्रकार धर्म भी छिन्न भिन्न हो जाता है। (3) पर्वत से लुढका हुआ शिला खण्डित हो जाती है, उसी प्रकार अन्य व्रत भी खण्डित हो जाते है। (4) जिस प्रकार अग्नि द्वारा जली लकडी पिसा हुआ गेहूँ चूर्ण चूर्ण हो जाते है, उसी प्रकार ब्रह्मचर्य के नष्ट हो जाने से सभी गुण चूर चूर हो जाते है।

—सूत्र 141, पृ 346

EXPLAINING CELIBACY

The illustrations explain the greatness of celibacy with metaphors

(1) Like the parapet protects a pool celibacy protects the pool of religion (2) A bolt on the door protects a cupboard In the same way the bolt of noble attitude protects the cupboard of religious meditation that contains the gem of celibacy Also celibacy acts as bolt on the door that prevents passage to disgrace (3) Like the central socket of a wheel holds its spokes celibacy holds virtues like serenity (4) As the trunk of a tree is the base of its branches leaves and flowers, so is the vow of celibacy for all other vows (5) For the security of the city of religion the vow celibacy acts as the door bolt of city gate (6) The giant festival flag held with numerous holding ropes adds to the beauty of a festival, in the same way the flag of the vow of celibacy held with numerous holding ropes of virtues adds to the beauty of ascetic conduct

When vow of celibacy is broken—

(1) As a pitcher thrown on ground shatters to pieces so on breaking of the vow of celibacy all virtues including modesty, uprightness and penance get destroyed (2) As a body is filled with wounds when pierced by thorns, so religion gets damaged when vow of celibacy is broken (3) As a rock tumbling down the slope of a hill breaks to pieces, so does all other vows shen vow of celibacy is broken (4) As a piece of wood on burning and wheat grains on grinding turn to powder, so do all virtues when the vow of celibacy is broken

— Sutra-141, pages-346

होने वाले पद (पर्याय-मोक्ष) को प्रदान करने वाला है। उत्तम मुनियो द्वारा सुरक्षित है, सम्यक् प्रकार से आचरित है और उपदिष्ट है। श्रेष्ठ मुनियो-महापुरुषो द्वारा जो धीर, शूरवीर और धार्मिक धैर्यशाली है, सदा अर्थात् कुमार आदि अवस्थाओ में भी विशुद्ध रूप से पाला गया है। यह कल्याण का कारण है। भव्यजनो द्वारा इसका आराधन-पालन किया गया है। यह शकारहित है अर्थात् ब्रह्मचारी पुरुष विषयो के प्रति विरक्त होने से लोगो के लिए शकनीय नही होते-उन पर कोई शका नही करता। पहले के काल मे शुद्ध ब्रह्मचारी पर इतना विश्वास किया जाता था कि उसे राजा के रनवास (रानियो के आवास) मे आने जाने की छूट थी। अशकनीय होने से ब्रह्मचारी निर्भीक रहता है-उसे किसी से भय नही होता है। यह व्रत तुष रहित चावल के समान सार युक्त है। इसके पालन मे कोई खेद नही होता और यह रागादि के लेप से रहित है। चित्त की शान्ति का स्थल है और नियमत अविचल है। यह तप और सयम का मूलाधार-नीव है। पाँचो महाव्रत इससे सुरक्षित रहते है अथवा पच महाव्रतो मे इसका अच्छी तरह रक्षण-जतन आवश्यक है। यह पाँच समितियो और तीन गुप्तियो से गुप्त (रक्षित) है।

(ब्रह्मचर्य की) रक्षा के लिए उत्तम ध्यान रूप सुनिर्मित कपाट वाला तथा अध्यात्म-सद्भावनामय चित्त ही (ध्यान रूपी कपाट को दृढ करने के लिए) लगी हुई अर्गला वाला है। यह व्रत दुर्गति के मार्ग को अवरुद्ध एव आच्छादित कर देने वाला अर्थात् रोक देने वाला है और सद्गति के मार्ग का पथ प्रदर्शक है। यह ब्रह्मचर्यव्रत लोक मे उत्तम है।

यह व्रत कमलो से सुशोभित सर (स्वत बना तालाब) और तडाग (पुरुषो द्वारा निर्मित तालाब) के समान (मनोहर) धर्म की पाल के समान है, अर्थात् धर्म की रक्षा करने वाला है। किसी महाशकट के पहियो के आरो के लिए नाभि के समान है, अर्थात् धर्म-चारित्र का आधार है-ब्रह्मचर्य के सहारे ही क्षमा आदि धर्म टिके हुए है। यह किसी विशाल वृक्ष के स्कन्ध के समान है, अर्थात् जैसे विशाल वृक्ष की शाखाये, प्रशाखाये, टहनियाँ, पत्ते, पुष्प, फल आदि का आधार स्कन्ध होता है, उसी प्रकार समस्त प्रकार के धर्मो का आधार ब्रह्मचर्य है। धर्मरूपी महानगर की रक्षा करने के लिये ब्रह्मचर्य प्रकोट के कपाट की दृढ अर्गला के समान है। डोरी से बँधे इन्द्रध्वज के सदृश है। अनेक निर्मल गुणो से व्याप्त है। (यह ऐसा आधारभूत व्रत है) जिसके भग होने पर सहसा-एकदम सब विनय, शील, तप और गुणो का समूह मिट्टी के फूटे घडे की तरह नष्ट हो जाते है, दहीं की तरह मथित हो जाते है, आटे की भाँति चूर्ण-चूरा-चूरा हो जाते है, काँटे लगे शरीर की तरह शल्ययुक्त हो जाते है, पर्वत से लुढकी शिला के समान लुढका हुआ-गिरा हुआ, चीरी या तोडी हुई लकडी की तरह खण्डित हो जाते है तथा दुरवस्था को प्राप्त और अग्नि द्वारा दग्ध होकर बिखरे काष्ठ के समान विनष्ट हो जाते हैं। वह ब्रह्मचर्य भगवान है-अतिशयसम्पन्न है।

141. Sudharm Swami says to his principle disciple Jambu Swami—O Jambu ! The vow of chastity is after the vow of non-stealing The vow of chastity is at the root of all austerities like fasting, codes, special qualities, knowledge, perception, conduct, right belief and humility. It

contains important qualities of non-violence and other basic principles It is more gigantic than Himavan mountain and is grand In its presence, the heart of man becomes generous, serene and stable It is practiced by the monks who are straight formered It is the path leading to salvation It is pure, free from attachment, spotless and is like the home of liberated souls It makes one immortal and free from all hurdles and also free from pangs of re-birth It contains unique attributes It is auspicious and in the forms of time happiness It is free from all troubles, stable and provides that status (liberation) which is permanent It is properly practiced by saints of the best category They properly follow it and preach it It is practiced by monks, great man, the brave, the courageous and those who have perseverance in dharma They follow it meticulously always and even when they are young (or unmarried) It is beneficial It is practiced by the worthy It is free from any suspicion A chaste person is free from any lust So no body casts any aspersion on them A chaste person remains fearless as nobody has any doubt about his conduct He is not afraid of any one This vow is like pure rice—devoid of husk It is free from any dejection or element of attachment It is the place for peace of the mind It is always stable It is the foundation of austerities and self-restraint It is the protector of all the five vows, five states of equanimity and three guptis

The heart full of good contemplation is like the door-bolt for the well-built gate in the form of best meditation This vow stops the path leading to bad state of existence It exposes the path leading to good state of existence This vow of chastity is the best in the world

This vow is the protective wall of Dharma, like the attractive banks of a pond or walls of a pool (man made) filled with beautiful lotus flowers In other words it protects religion It is like the centre socket for the spokes of a wheel of a cart It is the foundation of the practice of dharma The dharma of benevolence rests on the support of the vow of chastity It is like the trunk of a large tree Just as the branches, small branches, stalks, leaves, flowers of a large tree are on the support of the trunk, similarly all type of dharma is based on chastity It is like the sturdy door-bolt of the main gate of the great city of religion It is like the ceremonial flag tied to a rope It is full of many spotless characteristics. It is such a vow that with the deviation from it, all the good qualities of

humility, virginity, austerity wither away suddenly like a pot that breaks They get churned like curd. They get groomed like flour. They get pierced like the body having thorn pricked into it. They get fallen like a rock fallen from a hill They get pierced like a sawn piece of wood They reach a sad state. They get destroyed like the scattered wood burnt with fire The vow of chastity is like god. It is the most worthy one

विवेचन शास्त्रकार ने प्रस्तुत पाठ मे प्रभावशाली शब्दो मे ब्रह्मचर्य के महात्मय और स्वरूप का निरूपण किया है। उसे तप, नियम, ज्ञान, दर्शन, चारित्र, सम्यक्त्व एव विनय का मूल कहा है।

जइ ठाणी जइ मोणी, जइ झाणी वक्कली तवस्सी वा।
पत्थतो य अबभ, बंभावि न रोयए मज्झ॥

स पढिय तो गुणियं, तो मुणिय तो य चेइओ अप्पा।
आवडियपेल्लियामतिओवि न कुणइ अकज्ज॥[2]

अर्थात् भले कोई कायोत्सर्ग मे स्थित रहे, भले मौन धारण करके रहता हो, ध्यान मे मगन हो, छाल के कपडे धारण करता हो या तपस्वी हो, यदि वह अब्रह्मचर्य की अभिलाषा करता है तो मुझे नही सुहाता, फिर भले ही वह साक्षात् ब्रह्मा ही क्यो न हो !

शास्त्रादि का पढना, गुनना-मनन करना, ज्ञानी होना और आत्मा का बोध होना तभी सार्थक है जब विपत्ति आ पडने पर भी और सामने से आमत्रण मिलने पर भी मनुष्य अकार्य अर्थात् अब्रह्म सेवन न करे।

तात्पर्य यह है कि ब्रह्मचर्य की विद्यमानता मे ही तप, नियम आदि का निर्दोष रूप से पालन सम्भव है। जिसका ब्रह्मचर्य खण्डित हो गया उसका समग्र आचार खण्डित हो जाता है। इस तथ्य पर मूल पाठ मे बहुत बल दिया गया है। जमीन पर पटका हुआ घडा जैसे फूट जाता है-किसी काम का नही रहता वैसे ही ब्रह्मचर्य के विनष्ट होने पर समग्र गुण नष्ट हो जाते है। ब्रह्मचर्य के भग होने पर अन्य समस्त गुण मथे हुए दही जैसे, पिसे हुए धान्य जैसे चूर्ण-विचूर्ण (चूरा-चूरा) हो जाते है। इत्यादि अनेक उदाहरणो से इस तथ्य को समझाया गया है।

मूल पाठ मे ब्रह्मचर्य के लिए **'सया विसुद्ध'** विशेषण का प्रयोग किया गया है। टीकाकार ने इसका अर्थ सदा अर्थात् 'कुमार आदि सभी अवस्थाओ मे' किया है। कुछ लोग कहते है कि-

अपुत्रस्य गतिर्नास्ति, स्वर्गो नैव च नैव च।
तस्मात्पुत्रमुखं दृष्ट्वा, पश्चाद्धर्मं चरिष्यसि॥

अर्थात् पुत्रहीन को सद्गति प्राप्त नही होती। फलत उसे स्वर्ग तो कदापि मिल ही नही सकता। अतएव पुत्र का मुख देखकर-पहले पुत्र को जन्म देकर पश्चात् चारित्र धर्म का आचरण करना चाहिये। यह मान्यता रखने वालो से हम पूछते है कि जब देवव्रत ने ब्रह्मचर्य की प्रतिज्ञा की तो उसे 'भीष्म' क्यो कहा गया ? और उम्र भर उसे वदन और पूजन के योग्य क्यो समझा गया। उसे इच्छा मृत्यु का वरदान क्यो मिला ? और मरने के बाद उसकी उत्तम गति क्यो हुई ? इसका जवाब सिर्फ एक है कि उसने अखण्ड ब्रह्मचर्य का पालन किया।

2 अभयदेत टीका पृ 132 (आगमोदय)

वस्तुत उपर्युक्त श्लोक कथन किसी मोहग्रस्त पिता का अपने कुमार पुत्र को सन्यास ग्रहण करने से विरत करने के लिए है। 'चरिष्यसि' इस क्रियापद से यह आशय स्पष्ट रूप से ध्वनित होता है। यह किसी सम्प्रदाय या परम्परा का सामान्य विधान नही है, अन्यथा 'चरिष्यसि' के स्थान पर 'चरेत्' अथवा इसी अर्थ को प्रकट करने वाली कोई अन्य क्रिया होती।

परन्तु धृतिमान और धर्मज्ञ पुरूष इस रीति को नहीं मानते। वे प्रमाण प्रस्तुत करते हुए कहते है-

अनेकानि सहस्राणि, कुमारब्रह्मचारिणाम्।
दिवगतानि विप्राणामकृत्वा कुलसन्ततिम्।।

अर्थात् हजारो बाल ब्रह्मचारी सतान उत्पन्न किये बिना ही स्वर्ग मे चले गये।

तात्पर्य यह है कि स्वर्ग-प्राप्ति के लिए पुत्र को जन्म देना आवश्यक नही है। स्वर्ग-प्राप्ति यदि पुत्र उत्पन्न करने से ही होती हो तो वह बडी सस्ती, सुलभ और सुसाध्य हो जाये ! फिर तो कोई विरला ही स्वर्ग से वचित रहे !

ब्रह्मचर्य उत्तमोत्तम धर्म है और वह प्रत्येक अवस्था मे आचरणीय है। आर्हत परम्परा मे तथा भारतवर्ष की अन्य परम्पराओ मे भी ब्रह्मचर्य की असाधारण महिमा का गान किया गया है और अविवाहित महापुरुषो के प्रव्रज्या एव सन्यास ग्रहण करने के अगणित उदाहरण उपलब्ध है।

ब्रह्मचर्य मत निरपवाद होता है बाकि के अहिसा आदि व्रतो मे तो कदाचित् अपवाद वश छूट भी दी जाती है। लेकिन ब्रह्मचर्य मे जरा भी छूट नही है। किसी भी हालत मे इसका खण्डन विहित नही है। जैसा कि भाष्यकार ने कहा है।

न वि किचि अणुण्णाय, पडिसिद्ध वावि जिणवरिंदेहिं।
मोत्तुं मेहुणभाव, न त विना रागदोसेहिं॥

अर्थात् तीर्थकरो ने मैथुन के सिवाय न तो किसी बात को एकान्त रूप से अनुमत किया है और न एकान्तत किसी चीज का निषेध किया है-सभी विधि-निषेधो के साथ आवश्यक अपवाद जुडे है। सिर्फ मैथुन भाव का ही निरपवाद रूप से त्याग बताया है। कारण यह है कि मैथुन (तीव्र) राग-द्वेष अथवा रागरूप दोष के बिना नही होता।

ब्रह्मचर्य की इस असामान्य महिमा के कारण ही-

देव-दाणव-गधव्वा, जक्ख-रक्खस-किन्नरा।
बभयारिं नमसंति, दुक्कर ज करेंति ते॥

अर्थात् देव, दानव, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस और किन्नर आदि सभी उस ब्रह्मचारी को नमस्कार करते है, जो इस दुष्कर व्रत का आचरण करता है।

Elaboration—The author has narrated chastity and its importance in very important words. It is stated to be at the roots of austerities, codes, knowledge, perception conduct, right faith and humility The purport is that only the person practicing chastity meticulously can practice

austerities of the high order. In the absence of chastity, they cannot be practiced properly It is said, 'a person may be stable in meditation, he may practice silence, he may remain absorbed in concentration, he may wear bark of a tree as his dress, he may practice fasting, but I won't like him if he desires non-chastity even if he is god Brahma himself'

The study of scriptures, reciting it, remembering it, to become scholar and to get knowledge about soul can be meaningful only if he does not resort to despicable act namely sex even when he is facing trouble or is instigated by the person before him

In brief austerities, self-restraint and the vows can be practiced faultlessly only if one practices chastity A person who liquidates his chastity, he adversely affects his entire conduct, this fact has been emphatically established in the aphorism Just as a pot thrown on the ground breaks and is no longer of any use, similarly when one loses his chastity, he loses all the good qualities when chastity is destroyed, all other virtues becomes meaningless like churned curd or grinded corn This fact has been explained with many examples

Just as the boundary wall brings grace to the tank of lotus flowers Similarly chastity protects dharma

Central socket is the starting point of the spokes of a wheel and they cannot remain steady when it gets destroyed or damaged The chariot cannot move in the absence of the wheel Similarly in the absence of chastity dharma or conduct proves useless It cannot bring about desired result Many such illustrations depict the importance of celibacy the reader can easily understands its meaning

In the aphorism the adjective 'Saya Visudham' has been used. The commentator has interpreted it as 'in all the conditions such as youth and others' Since people say that a childless person does not get re-birth in good state of existence. He can never be born in heavenly abode so one should adopt ascetic conduct only after having a son

Here is a question to those who subscribe to this belief—Why Devadutta was called Bhishma when he took the vow of celibacy ? Why, after that, he was considered object of salutation and worship ? Why he was blessed with the power of dying only when he desired ? The reply to all these questions is that he strictly and sincerely observed the vow of celibacy

In fact such a statement is of a father out of his attachment in order to inspire his son to avoid monkhood. It is not a normal code of any sect or tradition as is evident from the use of word 'Charishyasi' and not 'Charet' in the verse

Further in the same tradition there is another verse, which means that thousands of unmarried persons practicing chastity have taken rebirth in heavenly abode This is what wise and religious people believe

In brief, it is not necessary to give birth to a son in order to attain heaven In case heaven could be attained just by giving birth to a son, it could be easily and cheaply got without much effort Then the persons left out from a seat in heaven would have been only a few

Chastity is the most important dharma It is worthy to be practiced at every stage of life According to the tradition of the omniscients and even in other tradition practiced in India, chastity is uniquely appreciated Innumerable instances are available where unmarried persons have accepted monkhood

In Jainism, exceptions have been narrated in respect of other vows in certain conditions but there is no exception or laxity permitted in case of the vow of chastity

In other words, Tirthankars have not described any other matter except mating (sex) as totally acceptable or totally prohibited. In every case there are exceptions in certain essential conditions It is because mating does not occur without extreme attachment or hatred It does not happen without the fault of attachment

The reason for such an exceptional importance of the vow of chastity is that only the very fortunate follow the extremely difficult vow of chastity even celestial beings, demon gods, gandharvas, yakshas, rakshasas and kinnar gods bow to those who practice the difficult vow of chastity or celibacy They place their forehead at their feet

बत्तीस उपमाओ से मण्डित ब्रह्मचर्य THIRTY TWO SIMILES OF VOW OF CHASTITY

१४२. तं बंभं भगवंतं – १. गहगणणक्खत्ततारगाणं वा जहा उडुवई। २.मणिमुत्तसिलप्पवालरत्तरयणागराणं य जहा समुद्दो। ३. वेरुलिओ चेव जहा मणीणं। ४. जहा मउडो चेव भूसणाणं। ५. वत्थाणं चेव खोमजुयलं। ६. अरविंदं चेव पुप्फजेट्ठं। ७. गोसीसं चेव चंदणाणं। ८.हिमवंतो

चेव ओसहीणं। ९. सीतोदा चेव णिण्णगाणं। १०. उदहीसु जहा सयंभूरमणो। ११. रुगयवरे चेव मंडलियपव्वयाणं पवरे। १२. एरावण इव कुंजराणं। १३. सीहोव्व जहा मियाणं पवरे। १४. पवगाणं चेव वेणुदेवे। १५. धरणो जहा पण्णगिंदराया। १६. कप्पाणं चेव बंभलोए। १७. सभासु य जहा भवे सुहम्मा। १८. ठिइसु लवसत्तमव्व पवरा। १९. दाणाणं चेव अभयदाणं। २०. किमिराउ चेव कंबलाणं। २१.संघयणे चेव वज्जरिसहे। २२. संठाणे चेव समचउरंसे। २३. झाणेसु य परमसुक्कज्झाणं। २४.णाणेसु य परमकेवलं तु पसिद्धं। २५. लेसासु य परमासुक्कलेस्सा। २६. तित्थयरे चेव जहा मुणीणं। २७.वासेसु जहा महाविदेहे। २८. गिरिराया चेव मंदरवरे। २९. वणेसु जहा णंदणवणं पवरं। ३०. दुमेसु जहा जंबू, सुदंसणा विस्सुयजसा जीए णामेण य अयं दीवो। ३१.तुरगवई गयवई रहवई णरवई जह वीसुए चेव राया। ३२. रहिए चेव जहा महारहगए।

एवमणेगा गुणा अहीणा भवंति एगम्मि बंभचेरे। जम्मि य आराहियम्मि आराहियं वयमिणं सव्वं सीलं तवो य विणओ य संजमो य खती गुत्ती मुत्ती तहेव इहलोइय–पारलोइयजसो य कित्ती य पच्चओ य, तम्हा णिहुएण बंभचेरं चरियव्वं सव्वओ विसुद्धं जावज्जीवाए जाव सेयट्ठिसंजओ त्ति एवं भणियं वयं भगवया।

१४२. इस प्रकार प्रशस्त लक्षणो वाले भगवान ब्रह्मचर्य की बत्तीस उपमाये इस प्रकार है–

१ जिस प्रकार ग्रहगण, नक्षत्रो और तारो के बीच मे चन्द्रमा प्रधान है, ऐसे ही सब व्रतो के बीच मे ब्रह्मचर्य प्रधान है।

२ मणि, मुक्ता, शिला, प्रवाल और लाल (रत्न) की उत्पत्ति के स्थानो (खानो) मे समुद्र प्रधान है, उसी प्रकार ब्रह्मचर्य सर्व व्रतो का श्रेष्ठ उद्‌भव स्थान है।

३ मणियो मे वैडूर्यमणि जैसे श्रेष्ठ है, वैसे ही व्रतो मे ब्रह्मचर्य श्रेष्ठ है।

४ आभूषणो मे मुकुट के समान है।

५ समस्त प्रकार के वस्त्रो मे क्षौमयुगल-कपास के वस्त्रयुगल के सदृश है।

६ पुष्पो मे श्रेष्ठ अरविद कमलपुष्प के समान है।

७ चन्दनों मे गोशीर्ष चन्दन के समान है।

८ सब औषधियो के जनक हिमवान् पर्वत की तरह यह भी सब व्रतो का जनक है।

९ जैसे नदियों मे शीतोदा नदी प्रधान है, वैसे ही सब व्रतो मे ब्रह्मचर्य प्रधान है। (यहा सीतानदी भी समझ लेनी चाहिए, क्योकि दोनो समान है)

१० समस्त समुद्रो मे स्वयभूरमण समुद्र जैसे महान् है, उसी प्रकार व्रतो मे ब्रह्मचर्य महत्त्वशाली है।

११ जैसे माण्डलिक अर्थात् गोलाकार पर्वतो में रुचकवर (तेरहवे द्वीप मे स्थित) पर्वत प्रधान है, उसी प्रकार सब व्रतों मे ब्रह्मचर्य प्रधान है।

१२ इन्द्र का ऐरावत नामक गजराज जैसे सर्व गजराजों मे श्रेष्ठ है, उसी प्रकार सब व्रतो मे ब्रह्मचर्य श्रेष्ठ है।

१३ वन्य जन्तुओ मे सिह प्रधान है। वैसे ही सर्व व्रतो मे ब्रह्मचर्य प्रधान (आधिपत्य रखने वाला है।)

१४ ब्रह्मचर्य सुपर्णकुमार देवो मे वेणुदेव इन्द्र के समान श्रेष्ठ है।

१५ जैसे नागकुमार जाति के देवो मे धरणेन्द्र प्रधान है, उसी प्रकार सर्व व्रतो मे ब्रह्मचर्य प्रधान है।

१६ ब्रह्मचर्य कल्पो मे ब्रह्मलोक कल्प के समान उत्तम है, क्योकि प्रथम तो ब्रह्मलोक का क्षेत्र महान् है सभी देवलोको मे ब्रह्मलोक देवलोक की चौडाई सबसे ज्यादा (5 रज्जू) है और तीर्थंकर को दीक्षा की प्रेरणा करने वाले लोकातिक देव इसी देवलोक मे रहते है इसलिए इसे उत्तम देवलोक कहा गया है और फिर वहाँ का इन्द्र अत्यन्त शुभ परिणाम वाला होता है।

१७ जैसे उपपात सभा, अभिषेक सभा, अलकार सभा, व्यवसाय सभा और सुधर्मा सभा, इन पाँचो मे सुधर्मा सभा श्रेष्ठ है, उसी प्रकार व्रतो मे ब्रह्मचर्य है।

१८ जैसे स्थितियो मे लवसत्तमा-अनुत्तरविमानवासी देवो की उत्कृष्ट स्थिति है, उसी प्रकार सब व्रतो मे ब्रह्मचर्य उत्कृष्ट है। लवसत्तम देव 33 सागर की स्थिति वाले होते है और वे नियम से एकावतारी होते है (ये पाचो अनुत्तर विमान मे होते है)।

१९ सब दानो मे अभयदान के समान ब्रह्मचर्य सब व्रतो मे श्रेष्ठ है।

२० सब प्रकार के कम्बलो मे किरमिची रग के विशेष कम्बल के समान यह व्रतो मे विशिष्ट है।

२१ सहननो मे वज्रऋषभनाराचसहनन के समान ब्रह्मचर्य सर्वश्रेष्ठ है।

२२ सस्थानो मे समचतुरस्रसस्थान के समान ब्रह्मचर्य समस्त व्रतो मे उत्तम है।

२३ ध्यानो मे परमशुक्लध्यान के समान ब्रह्मचर्य सर्वप्रधान है।

२४ समस्त ज्ञानो मे जैसे केवलज्ञान प्रधान है, उसी प्रकार सर्व व्रतो मे ब्रह्मचर्य प्रधान है।

२५ लेश्याओ मे परम शुक्ललेश्या सर्वोत्तम है, वैसे ही सब व्रतो मे ब्रह्मचर्यव्रत सर्वोत्तम है।

२६ जैसे सब मुनियो मे तीर्थकर उत्तम होते हैं, ब्रह्मचर्यव्रत सब व्रतो मे इसी प्रकार उत्तम है।

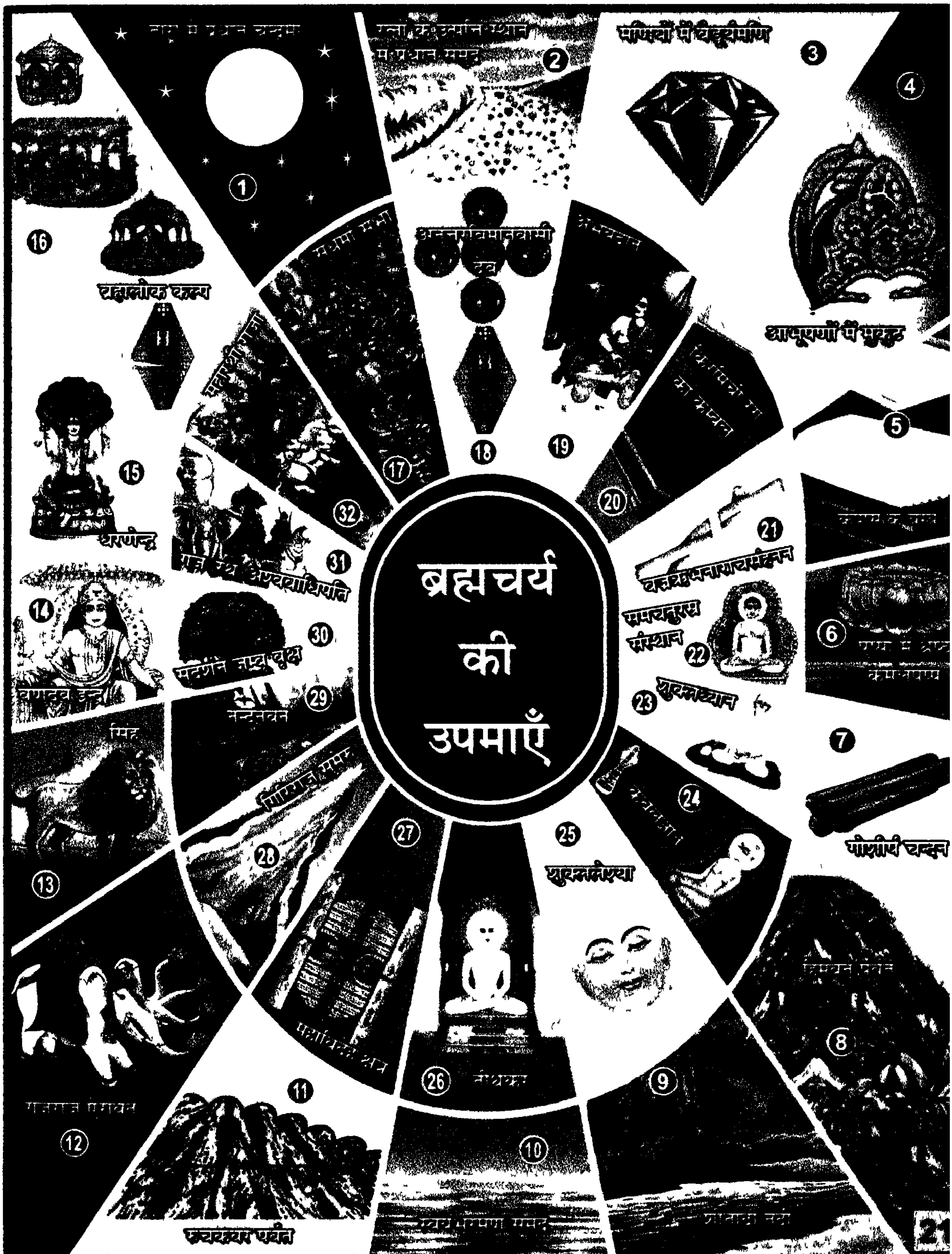
२७ जैसे सब क्षेत्रो मे महाविदेह क्षेत्र उत्तम है, ब्रह्मचर्य सभी व्रतो मे वैसा ही श्रेष्ठ है।

२८ पर्वतो मे गिरिराज सुमेरु की भाँति ब्रह्मचर्य सर्वोत्तम व्रत है।

२९ जैसे समस्त वनो मे नन्दनवन प्रधान है, उसी प्रकार समस्त व्रतो मे ब्रह्मचर्य प्रधान है।

३० जैसे समस्त वृक्षो मे सुदर्शन जम्बू विख्यात है, उसी प्रकार समस्त व्रतो मे ब्रह्मचर्य विख्यात है।

३१ जैसे अश्वाधिपति, गजाधिपति और रथाधिपति राजा विख्यात होता है, उसी प्रकार ब्रह्मचर्यव्रताधिपति विख्यात है।



ब्रह्मचर्य
की
उपमाएँ
मणियों में वैडूर्यमणि
आभूषणों में मुकुट
ब्रह्मलोक कल्प
धरणेन्द्र
गोशीर्ष चन्दन
समचतुरस्र संस्थान
शुक्लध्यान
शुक्ललेश्या
नन्दनवन
सिंह
रुचकवर पर्वत

चित्र-परिचय 21

Illustration No. 21

ब्रह्मचर्य की उपमाएँ

चित्र मे ब्रह्मचर्य की बत्तीस उपमाएँ दिखाई गई हैं–(1) गृह-नक्षत्रो के समूह मे चन्द्रमा सर्वश्रेष्ठ है, उसी प्रकार समस्त व्रतो मे ब्रह्मचर्य प्रधान है। (2) रत्नो की उत्पत्ति स्थानो मे समुद्र प्रधान है, (3) मणियो मे वैडूर्यमणि सर्वश्रेष्ठ है, (4) आभूषणो मे मुकुट, (5) सभी प्रकार के वस्त्रो मे कपास के वस्त्र युगल, (6) पुष्पो मे कमल पुष्प, (7) चन्दन मे गोशीर्ष चदन, (8) औषधियो के पर्वतो मे हिमवान् पर्वत, (9) नदियो मे शीतोदा नदी, (10) समुद्रो मे स्वयभूरमण, (11) गोलाकार पर्वतो मे रुचकवर पर्वत, (12) हाथियो मे इन्द्र का ऐरावत, (13) वन्य जीवो मे सिह, (14) सुपर्णकुमार देवो मे वेणुदेव इन्द्र, (15) नागकुमार जाति मे धरणेन्द्र, (16) कल्पविमानो मे ब्रह्मलोक, (17) सभाओ मे इन्द्र की सुधर्म सभा, (18) स्थिति मे लव सप्तम देवो की स्थिति, (19) दानो मे अभयदान, (20) कम्बलो मे किरमिची रग का कम्बल, (21) सहननो मे वज्र-ऋषभनाराच सहनन, (22) सस्थानो मे समचतुरस्र सस्थान, (23) ध्यानो मे परम शुक्ल-ध्यान, (24) ज्ञानो मे प्रसिद्ध परम केवलज्ञान, (25) लेश्याओं मे परम शुक्ल-लेश्या, (26) मुनियो मे तीर्थकर, (27) क्षेत्रो मे महाविदेह, (28) पर्वतो मे गिरिराज मेरु पर्वत, (29) वनो मे श्रेष्ठ नन्दन वन और (30) वृक्षो मे सुदर्शन नामक जम्बू वृक्ष, (31) जिस प्रकार अश्वपति गजपति एव रथपति राजा विख्यात होते हैं, उसी प्रकार सभी व्रतो मे ब्रह्मचर्य विख्यात है (32) जैसे रथिका मे महारथी (वासुदेव) श्रेष्ठ होता है, उसी प्रकार सभी व्रतो म ब्रह्मचर्य श्रेष्ठ है।

—सूत्र 142, पृ 354

METAPHORS FOR VOW OF CELIBACY

(1) As moon is prominent among planets and constellations, so is the vow of celibacy among all vows (2) Sea is the best among sources of gems (3) Catseye is the best among gems, (4) crown among ornaments, (5) cotton cloth among all clothes (6) lotus flower among flowers, (7) Goshirsh sandal-wood among types of sandal-wood (8) Himvan mountain among herbs bearing mountains, (9) Shitoda river among rivers (10) Svayamburaman sea among seas, (11) Ruchakvar mountain among circular mountains (12) Aiavat the elephant of Indra, among elephants (13) lion among wild animals, (14) Venudev Indra among Suparna Kumar gods, (15) Dharanendra among Naag Kumar gods (16) Brahmalok among Kalp Vimans (17) Sudharma assembly of Indra among assemblies (18) life-span of Lava Saptam gods (19) charity of non-fear among charities, (20) crimson coloured blanket among blankets (21) Vajra-rishabh-narach samhanan among types of body structures, (22) Samachaturasra Samsthan among types of body constitutions (23) ultimate Shukla Dhyan among types of meditation, (24) Keval-jnana among types of knowledge (25) ultimate Shukla leshya among soul complexions (26) Tirthankar among sages, (27) Mahavideh Kshetra among areas (geographical), (28) Meru mountain among mountains, (29) Nandan Van among forests and (30) Jambu tree called Sudarshan among trees (31) as a king having horses, elephants and chariots is famous among kings, so is the vow of celibacy among vows, and (32) as Maharathi (Vaasudev) is best among great warriors so is the vow of celibacy among all vows

— Sutra-142, pages-354

३२ जैसे रथिको मे महारथी राजा श्रेष्ठ होता है, उसी प्रकार समस्त व्रतो मे ब्रह्मचर्यव्रत सर्वश्रेष्ठ है। (श्री सूत्र कृताग सूत्र के छठे अध्ययन मे भगवान के लिए जो उपमाऐं दी गई है, उसमे से कई उपमाऐ यहा ब्रह्मचर्य के लिए दी गई है और शुरू मे ही 'बभं भगवंतं' बताकर शास्त्रकार ने ब्रह्मचर्य को भगवान बताया है। इससे ये कितना महान है इसकी प्रतिति होती है)

इस प्रकार एक ब्रह्मचर्य की आराधना करने पर अनेक गुण स्वत अधीन-प्राप्त हो जाते है। ब्रह्मचर्यव्रत के पालन करने पर निर्ग्रन्थ प्रव्रज्या सम्बन्धी सम्पूर्ण व्रत अखण्ड रूप से पालित हो जाते है, तथा-शील, तप, विनय, सयम, क्षमा, गुप्ति, मुक्ति और इसी प्रकार इहलोक और परलोक सम्बन्धी यश और कीर्ति ब्रह्मचर्य व्रत के प्रभाव से प्राप्त हो जाती है। लोगो मे प्रतीति होती है अर्थात् ब्रह्मचारी पर सबका विश्वास होता है। अतएव एकाग्र-स्थिरचित्त से तीन करण और तीन योग से विशुद्ध-सर्वथा निर्दोष ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए और वह भी जीवनपर्यन्त, मृत्यु के आगमन तक। इस प्रकार भगवान महावीर ने ब्रह्मचर्यव्रत का कथन किया है।

142. Chastity with noble attributes is illustrated in thirty two ways They are as follows

(1) Just as moon is prominent among planets, constellations and stars, the vow of chastity is most important among all vows

(2) Just as sea is most important among places (sources) that produce precious stones, pearls, rocks, coral and jewels, vow of chastity is the best source of all vows

(3) Just as Vaidurya (catseye) is best among precious stones chastity as best among the vows

(4) It is like the crown among ornaments

(5) It is like a dress of cotton among all dresses

(6) Chastity is most important like crown among ornaments

(7) Chastity is like lotus, the best among flower

(8) Just as Himvaan mountain is the producer of medicinal herbs, similarly chastity is the source of all other vows.

(9) Just as Sitoda (and Sita) river is most important among rivers the vow of chastity is most important among vows

(10) Brahmcharya is great among vows just as Svayamburaman seas is among all the seas

(11) Just as Ruchakvar mountain is most important among all the mountains, vow of chastity is among all the vows.

(12) Brahmcharya is best among all vows just as Airawat elephant is among all the elephants

(13) Brahmcharya is best (king) like lion among beasts

(14) Brahmcharya is best like Venudev among Suparn Kumar gods.

(15) Bramcharya is prominent among vows just as god Dharnendra is prominent among gods of Nagakumar clans

(16) Brahmalok is best among all heaven as its area is the largest and its Indra (master) has extremely meritorious thoughts Its width is 5 Rajju The gods who inspire a Tirthankar to get initiated belong to this heaven Similarly vow of chastity is best among all the vows

(17) Just as Sudharma assembly is best among all the five assemblies where gods take birth, where coronation takes place, where ornaments and rich robes are stored, where business is conducted, Bramcharya is best among vows

(18) Just as the duration of life of gods of Anuttar heavenly abodes is the longests among all the life-span of living beings, Brahmcharya is best among all the vows The Lavasaptama gods have a life-span of 33 Sagaropam, they reincarnate as Tirthankers and belong to the five Anuttar Vimans

(19) Just as granting of pardon by making one free from fear of death penalty is the best among all charities, Brahmcharya is best among all vows

(20) Kirmichi colour blanket is the best of all blankets Similarly brahmcharya is among all the vows

(21) Vajra-rishabh Narach structure of the body is the strongest among all body-structures Similarly brahmcharya is among all the vows

(22) Chaturasra-sansthan is the best among all shapes Similarly brahmcharya is among all the vows

(23) Shukla meditation (concentration) is the best among all meditations Similarly brahmcharya is among all the vows

(24) Omniscience is the best among all types of knowledge. Similarly vow of brahmcharya is among all vows

(25) Shukla leshya is the best among all soul-complexions. Similarly brahmcharya is among all vows.

(26) Tirthankar is excellent among all monks Similarly brahmcharya is among all the vows

(27) Mahavideh area is the best among all lands Similarly vow of brahmcharya (chastity) is among all the vows

(28) Sumeru mountain is the highest among all mountains Similarly brahmcharya is among all the vows

(29) Nandan forest is the best among all forests Similarly brahmcharya is among all the vows

(30) Sudarshan Jambu is famous among all the trees Similarly brahmcharya vow is famous among all the vows

(31) The king who is master of horses, elephants and chariots is the most famous similarly brahmcharya is among all the vows.

(32) The Maharathi king is most famous among all warrior kings Similarly vow is brahmcharya is among all the vows

In the sixth chapter of Sutrakritanga Sutra numerous adjectives and superlatives have been mentioned for Bhagavan (Jina) Many of those have been repeated here for Brahmacharya Even the epithet Bhagavan has been used for Brahmacharya at the begining This indicates the greatness of this vow

Thus by practicing the vow of charity one gets many virtues spontaneously By practicing this vow all the vows of monkfood are practiced completely according to the code without any deviation, namely the vows of equanimity, austerity, humility, self-restraint, self-control, selflessness Due to the practice of vow of brahmcharya, one gets fame in this life and in the next life. It is the cause of ones trustworthiness. Every one has a faith in brahmchari (one who practices vow of chastity) So one should practice this vow in doing, getting done and in supporting it, mentally, vocally and physically with a stable mind He should practice it faultlessly throughout his life Bhagavan Mahavir has mentioned it in this manner

१४३. तं च इमं–

पंच महव्वयसुव्वयमूलं, समणमणाइलसाहुसुचिण्णं।
वेरविरामणपज्जवसाणं, सव्वसमुद्दमहोदहितित्थं ॥१॥

१४३. यह ब्रह्मचर्य व्रत इस प्रकार है–

यह ब्रह्मचर्यव्रत पाँच महाव्रतरूप उत्तम व्रतो का मूल है, शुद्ध आचार या स्वभाव वाले मुनियो के द्वारा भावपूर्वक सम्यक् प्रकार से सेवन किया गया है, यह वैरभाव की निवृत्ति और उसका अन्त करने वाला है तथा समस्त समुद्रो मे स्वयभूरमण समुद्र के समान दुस्तर है तथा तैरने का उपाय होने के कारण तीर्थस्वरूप है।

143. This vow of Brahmacharya is as follows :-

This vow of brahmcharya is the basis of all vows It is practiced by all monks who observe pure conduct and behaviour They practice it heartily in the proper way as mentioned in the code It liquidates the feeling of enmity It is very difficult to master as is Svayambhuraman sea But it provides method to cross the worldly ocean So it is Teerth

विवेचन पूर्वोक्त गाथा मे ब्रह्मचर्य की महिमा प्रतिपादित करते हुये शास्त्रकार ने बताया है कि ब्रह्मचर्य पॉचो महाव्रतो का मूलाधार है, क्योकि इसके खण्डित होने पर सभी महाव्रतो का खण्डन हो जाता है और इसका पूर्णरूपेण पालन करने पर ही अन्य महाव्रतो का पालन सम्भव है। जैसे लवण समुद्र आदि समग्र समुद्रो मे बडा एव महा दुस्तर स्वयभूरमण समुद्र है, वैसे ही ब्रह्मचर्य सब व्रतो मे महादुस्तर है तथा ससार समुद्र से पार कराने वाला होने के कारण तीर्थ भी है।

जहॉ सम्पूर्ण रूप से ब्रह्मचर्य का पालन होता है, वहॉ वैर-विरोध का स्वत अन्त हो जाता है। यद्यपि इसके विशुद्ध पालन करने के लिए धैर्य, दृढता एव सयम की आवश्यकता होती है, अतीव सावधानी बरतनी पडती है तथापि इसका पालन करना अशक्य नही है। मुनियो ने इसका पालन किया है और भगवान ने इसके पालन करने का उपाय भी बतलाया है।

गाथा मे प्रयुक्त '**पचमहव्वयसुव्वयमूल**' इस पद के अनेक अर्थ होते है, जो इस प्रकार है-(१) अहिंसा, सत्य आदि महाव्रत नामक जो सुव्रत है, उनका मूल। (२) पाँच महाव्रतधारी साधुओ के उत्तम नियमो का यह मूल है, (३) पाँच महाव्रतो का तथा सुव्रतो अर्थात् अणुव्रतो का मूल, और (४) हे पचमहाव्रत ! अर्थात् हे पाँच महाव्रतो को धारण करने के कारण सुव्रत-शोभन व्रत वाले (शिष्य !) यह ब्रह्मचर्य मूल (व्रत) है।

Elaboration—In the above aphorism, the importance of the vow of chastity has been described Chastity is the very basis of all the five vows because all the vows are broken when this vow is transgressed

When this vow is practiced completely according to the code, there is possibility of meticulously following other vows. Among all seas, including Lavan Samudra, Svayambhu raman sea is the most difficult to cross, in the same way brahmacharya is most difficult to master This vow is like the teerth to cross the worldly ocean of life, death and re-birth

When the vow of brahmcharya is meticulously followed, the enmity comes to an end itself Although there is a need of perseverance, firmness and self-restraint for its proper practice and one has to be extremely cautions, yet its practice is not impossible. Monks have practiced it and Bhagavan Mahavir has told the method how it can be practiced

The word Panch mahavya suvvayamulam has many meanings They are as follows (1) The root of all good vows such as non-violence, truth and others (2) The basis of all the worthy principles relating to the vows of monks who practice five major vows (3) The basis of five major vows and of partial vows (4) Practitioners of five major vows are addressed as those who observe good vows when they meticulously follow this vow so brahmcharya is the fundamental vow

१४४. तित्थयरेहि सुदेसियमग्गं, णरयतिरिच्छविवज्जियमग्गं।
सव्वपवित्तिसुणिम्मियसारं, सिद्धिविमाणअवंगुयदारं॥ २॥

१४४. तीर्थंकर भगवन्तो ने ब्रह्मचर्य व्रत के पालन करने का गुप्ति आदि मार्ग भलीभाँति बताया है। यह नरकगति और तिर्यंचगति के मार्ग को रोकने वाला है, अर्थात् ब्रह्मचर्य आराधक को नरक-तिर्यंचगति से बचाता है, सभी पवित्र अनुष्ठानो को सारयुक्त बनाने वाला तथा मुक्ति और वैमानिक देवगति के द्वार को खोलने वाला है।

144. Revered Tirthankars have narrated clearly the path or the method to properly practice the vow of chastity (brahmcharya). It blocks the very path leading to hellish or animal state of existence In other words it saves one from re-birth in hell or in animal state It turns all the practices beneficial and opens the gateway for heaven

विवेचन : तीर्थंकर भगवान ने ब्रह्मचर्यव्रत का निर्दोष पालन करने के लिए नौ गुप्ति आदि उपाय बताये हैं। (नव गुप्ति की विस्तार से जानकारी के लिए देखिये स्थानाग सूत्र स्थान-9 और उत्तराध्ययन सूत्र अ -16) तीर्थंकर निर्दिष्ट उन उपायो का आलम्बन नही लिये जाने पर ब्रह्मचर्य की आराधना नही हो सकती।

इस गाथा मे यह भी स्पष्ट किया गया है कि ब्रह्मचर्य का निर्मल रूप से पालन करने वाला सिद्धि प्राप्त करता है। यदि उसके कर्म कुछ अवशेष रह गये हो तो वह वैमानिक देवो में उत्पन्न होता है।

Elaboration—Tirthankars have stated the methods for properly practicing the vow of chastity Those methods are guptis and others They include nine prohibitions. In their absence brahmcharya cannot be practiced (For details of nine Guptis see chapter-9 of Sthananga Sutra and chapter 16 of Uttradhyayan Sutra)

It is clearly stated in this aphorism that one who practices faultlessly chastity, he can attain salvation In case some Karmas are still in existence, he takes birth among heavenly celestial beings.

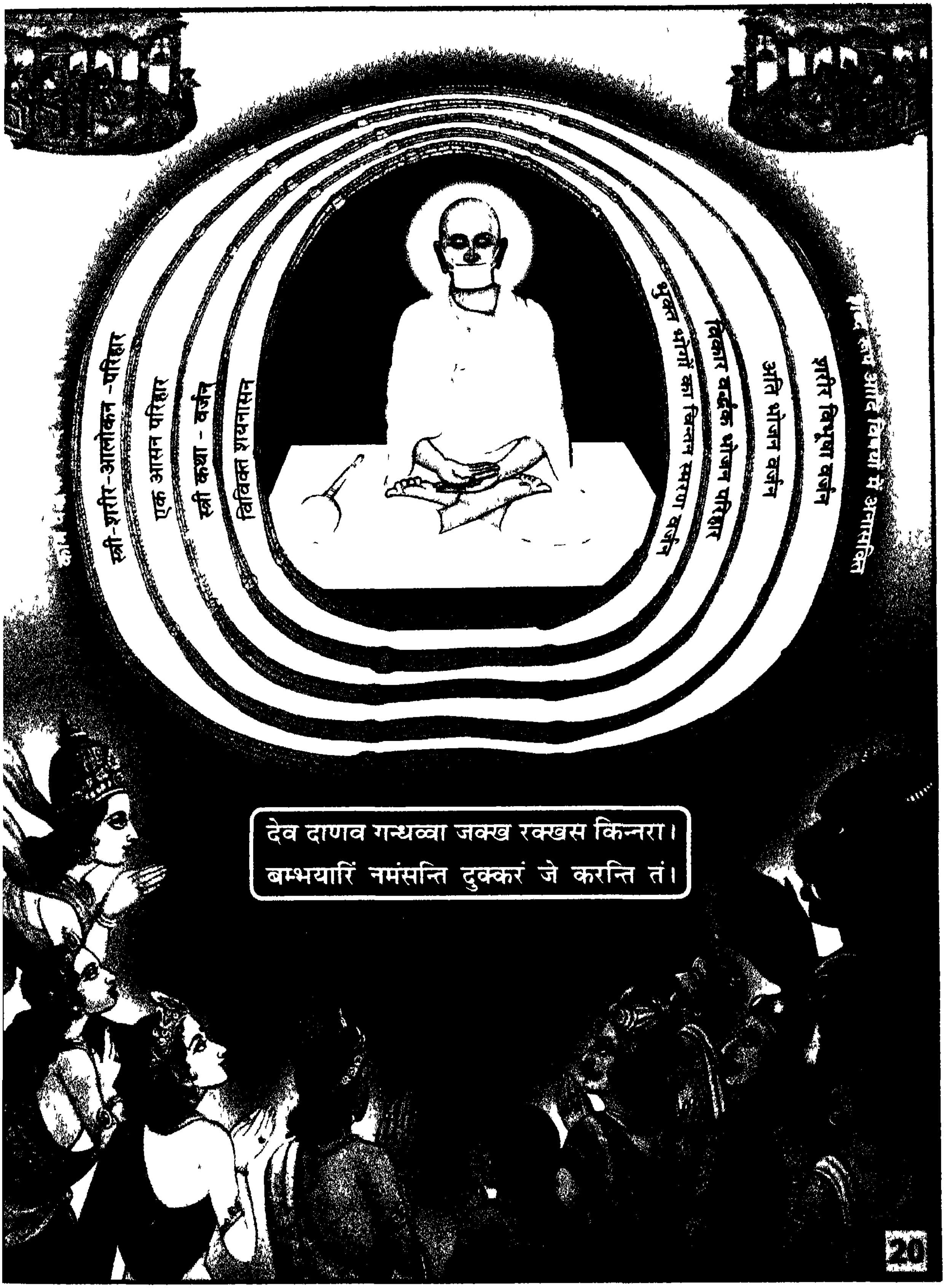
१४५. देव–णरिंद–णमंसियपूयं, सव्वजगुत्तममंगलमग्गं।
दुद्धरिसं गुणणायगमेक्कं, मोक्खपहस्स वडिंसगभूयं॥ ३॥

१४५. देवेन्द्रो और नरेन्द्रो के द्वारा जो नमस्कृत है, अर्थात् देवेन्द्र और नरेन्द्र जिनको नमस्कार करते है, उन महापुरुषो के लिए भी ब्रह्मचर्य पूजनीय है। जगत् के सब मगल कार्यो का यह मार्ग रूप है। कोई इसका पराभव नही कर सकता या इसका पराभव करना दुष्कर है। यह सभी गुणो का एकमात्र नायक है और मोक्ष मार्ग के लिये मस्तक के मुकुट के समान है।

145. Persons to whom kings of gods and those of human beings bow, they too worship chastity It is the primary path to everything auspicious in the world Nobody can reduce its importance It is very difficult It is unique among all the virtues It is like crown among methods of salvation

विवेचन देवेन्द्र–नरेन्द्र आदि गणधरो की पूजा करते है और गणधर आदि महापुरुष ब्रह्मचर्य की अर्चना करते है, अत ब्रह्मचर्य पूज्यो का भी पूज्य है। ब्रह्मचर्य को सब मगलो का उपाय बताया गया है। तात्पर्य यह है मगल का अर्थ है म – पाप को, गलं – गलाने वाला अथवा मंग – सुख को, लं – देने वाला। ससार मे अर्हत् भक्ति आदि जितने भी मगल कार्य है उन सबका मार्ग ब्रह्मचर्य है।

Kings of gods and those of humans worship Ganadhars and they in turn worship Bramacharya Thus it is revered by the revered It is said to be the instrument of all that is auspicious (Mangal) The word Mangal is derived two ways—Man means sin and galam means that which eats up. And mang means happiness and lam means that which endows. Thus Brahmacharya is instrumental in all the auspicious deeds including worship of Arhat.


स्त्री-शरीर-आलोकन -परिहार
एक आसन परिहार
स्त्री कथा - वर्जन
विविक्त शयनासन
भुक्त भोगों का चिन्तन स्मरण वर्जन
विकार वर्धक भोजन परिहार
अति भोजन वर्जन
शरीर विभूषा वर्जन
देव दाणव गन्धव्वा जक्ख रक्खस किन्नरा।
बम्भयारिं नमंसन्ति दुक्करं जे करन्ति तं।

चित्र-परिचय 20

Illustration No. 20

ब्रह्मचर्य की महिमा

देव दाणव गन्धव्वा जक्ख रक्खस किन्नरा।
बम्भयारिं नमंसन्ति दुक्करं जे करन्ति तं।।

दस समाधि के स्थान कहे गये है—(1) विविक्त शयनासन, (2) स्त्री कथा-वर्जन, (3) एक आसन परिहार, (4) स्त्री-शरीर- आलोकन- परिहार, (5) कामवर्द्धक शब्द श्रवण वर्जन, (6) भुक्त भोगो का चिन्तन स्मरण वर्जन, (7) विकार वर्द्धक भोजन परिहार, (8) अति भोजन वर्जन, (9) शरीर विभूषा वर्जन, (10) शब्द रूप आदि विषयो मे अनासक्ति।

इन दस समाधि स्थानो मे सरक्षित दुष्कर ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करने वाले मुनि को देव, दानव, गधर्व, यक्ष, राक्षस, किन्नर आदि सभी नमस्कार करते है।

—सूत्र 141, पृ 360

THE GLORY OF CELIBACY

Even divine beings like Asurs Gandharvas Yakshas, Rakshasas and Kinnars bow to those who practice the difficult vow of celibacy protected by the following ten places of restraint related to this vow – (1) Isolated place of sleeping and sitting (2) Avoiding talk about women (3) Not sitting on the same seat with women (4) Not looking at the body of a woman (5) Not listening to lustful talks (6) Avoiding recalling instances of past enjoyments (7) Avoiding eating of exciting food (8) Avoiding excessive eating (9) Avoiding embellishment of body (10) Apathy towards indulgence in activities of sense organs including those of hearing and taste

—Sutra-141, pages-360

१४६. जेण सुद्धचरिएण भवइ सुबंभणो सुसमणो सुसाहू स इसी स मुणी स संजए स एव भिक्खू जो सुद्धं चरइ बंभचेरं। इमं च रइ-राग-दोस-मोह-पवड्ढणकरं किंमज्झ-पमायदोसपासत्थ-सील-करणं अब्भंगणाणि य तेल्लमज्जणाणि य अभिक्खणं कक्ख-सीस-कर-चरण-वयण-धोवण-संबाहण-गाय-कम्म-परिमद्दणाणुलेवण-चुण्णवास-धुवण-सरीर-परिमंडण-बाउसिय-हसिय-भणिय-णट्ट-गीय-वाइय-णडणट्टग-जल्ल-मल्ल- पेच्छणवेलंबगं जाणि य सिंगारागाराणि य अण्णाणि य एवमाइयाणि तव-संजम-बंभचेर-घाओवघाइयाइं अणुचरमाणेणं बंभचेरं वज्जियव्वाइं सव्वकालं।

१४६. ब्रह्मचर्य महाव्रत का शुद्ध रूप से पालन करने से ही मनुष्य सुब्राह्मण-यथार्थ नाम वाला, सुश्रमण-सच्चा तपस्वी और सुसाधु-निर्वाण साधक वास्तविक साधु कहा जाता है। जो शुद्ध ब्रह्मचर्य का आचरण करता है वही श्रेष्ठ ऋषि अर्थात् यथार्थ तत्त्वद्रष्टा है, वही मुनि-तत्त्व का वास्तविक मनन करने वाला है, वही सयत-सयमवान् है और वही सच्चा भिक्षु-निर्दोष भिक्षाजीवी है।

ब्रह्मचर्य का सेवन करने वाले पुरुष को इन आगे कहे जाने वाले व्यवहारो का त्याग करना चाहिए-रति-इन्द्रिय-विषयो के प्रति राग-परिवारिक जनो के प्रति स्नेह, द्वेष और मोह-मूढता को बढाने वाला, निस्सार प्रमाददोष तथा पार्श्वस्थ-शिथिलाचारी साधुओ का शील-आचार (जैसे निष्कारण शय्यातरपिण्ड का उपभोग आदि) और घृतादि की मालिश करना, तेल लगाकर स्नान करना, बार-बार बगल, सिर, हाथ, पैर और मुँह धोना, पैर आदि दबाना-पगचम्पी करना, परिमर्दन करना-समग्र शरीर को मलना, विलेपन करना, चूर्णवास-सुगन्धित चूर्ण-पाउडर से शरीर को सुवासित करना, अगर आदि की धूप देना-शरीर को धूपयुक्त करना, शरीर को मण्डित करना-सुशोभित करना, बाकुशिक कर्म करना-नखो, केशो एव वस्त्रो को सँवारना, हँसी-ठट्ठा करना, विकारयुक्त भाषण करना, नाट्य, अश्लील गीत, वादित्र, नटो, नृत्यकारको और जल्लो-रस्से पर खेल दिखलाने वालो और मल्लो-कुश्तीबाजो का तमाशा देखना तथा इसी प्रकार की अन्य बाते जो श्रृगार का आगार है-श्रृगार के स्थान है और जिनसे तपश्चर्या, सयम एव ब्रह्मचर्य का उपघात-आशिक विनाश या घात-पूर्णत विनाश होता है, ब्रह्मचर्य का आचरण करने वाले को सदैव के लिए त्याग देना चाहिए।

146. The monk who faultlessly practices the major vow of brahmcharya is one who is worthy of his name. He is a true practitioner of austerities He is a true monk One who meticulously practices brahmcharya, he is rishi. It means he has true perception of essentials He truly ponders over the essentials. He is the real follower of restraints He is the real saint leading the life based on faultless offerings

A practitioner of the vow of brahmcharya should detach himself from the activities mentioned ahead He should avoid attachment towards

senses, attachment towards the members of his family, the hatred and the delusion that increases the ignorance, slackness, the conduct followed by monks who have gone astray (just as those who accept food from the owner of the home who has provided the place of stay and suchlike others) The activities like massaging with ghee, taking bath after using oil, washing armpits, head, hand, feet and face again and again, massaging, rubbing the feet, rubbing the entire body, applying paste or fragrant powder or any sweet smelling thing on the body, decorating the body, trimming nails, locks of hair and clothes, engaging in loud laughter, *making speech* with a polluted mind, dancing, seeing actors, dancers, exhibiting their performance on ropes, witnessing wrestling and other suchlike acts which are sources of temporal enjoyment, should be totally avoided for ever Such activities adversely affect self-restraint, austerities and chastity partially or totally

ब्रह्मचर्य–रक्षक नियम **CODES SAFE-GUARDING CHASTITY**

१४७. भावियव्वो भवइ य अंतरप्पा इमेहिं तव–णियम–सील–जोगेहिं णिच्चकालं।

किं ते ?

अण्हाणग–अदंतधोवण–सेय–मल–जल्लधारण मूणवय–केसलोय–खम–दम–अचेलग–खुप्पिवासलाघव–सीउसिण–कट्ठसिज्जा–भूमिणिसिज्जा–परघरपवेस–लद्धावलद्ध–माणावमाण–णिदण–दंसमसग–फास–णियम–तव– गुण–विणय–माइएहिं जहा से थिरतरगं होइ बंभचेरं।

इमं च अबंभचेर–विरमण–परिरक्खणट्ठयाए पावयणं भगवया सुकहियं अत्तहिय पेच्चाभावियं आगमेसिभद्दं सुद्ध णेयाउयं अकुडिलं अणुत्तर सव्वदुक्ख–पावाणं विउसमणं।

१४७. (ब्रह्मचर्य साधक की) आगे कहे जाने वाले तप, नियम और शील के प्रवृत्ति योगो से अन्तरात्मा को नित्य–निरन्तर भावित–वासित करना चाहिए।

वे कौन–से प्रवृत्ति योग है ?

(वे ये है–) स्नान नही करना, दन्तधोवन नही करना, स्वेद (पसीना) और पसीने से मिश्रित मैल को शरीर से पृथक् नही करना या धारण करना, मौनव्रत रखना, केशो का लुचन करना, क्षमा करना, इन्द्रियो का दमन करना, अचेलकता–वस्त्ररहित होना अथवा अल्प वस्त्र धारण करना, भूख–प्यास सहना, लाघव–उपधि अल्प रखना, सर्दी, गर्मी सहना, काष्ठ की शय्या, भूमिनिषद्या–जमीन पर आसन, परगृहप्रवेश–शय्या या भिक्षादि के लिए गृहस्थ के घर मे जाना और प्राप्ति या अप्राप्ति (को समभाव से सहना), मान, अपमान, निन्दा एव दश–मशक का क्लेश सहन करना, नियम अर्थात् द्रव्यादि सम्बन्धी

अभिग्रह करना, तप तथा मूलगुण आदि एव विनय आदि योगो से अन्त करण को भावित करना चाहिए; जिससे ब्रह्मचर्यव्रत खूब स्थिर-दृढ हो।

अब्रह्मनिवृत्ति (ब्रह्मचर्य) व्रत की रक्षा के लिए भगवान महावीर ने यह प्रवचन कहा है। यह प्रवचन परलोक मे फलप्रदायक है, भविष्य मे कल्याण करने वाला है, शुद्ध है, न्याययुक्त है, अकुटिल (सरल) है, सर्वोत्तम है और दु खो और पापो का उपशमन करने वाला है।

147. Avoiding the prohibitions, the practitioner of vow of celibacy should engage himself in activities mentioned ahead.

What are these activities ? Those activities are as under

Not to take bath, not to wash teeth, to allow perspiration to stick to the body to allow the dirt stick to the body, to practice complete silence, to remove hair by hand, to forgive, to subdue senses, to remain without clothes or to wear a little clothing, to endure calmly pangs of hunger and thirst, to keep only a few articles, to endure heat and cold, to sleep on a piece of wood, to have a seat on ground, to go to the houses for seeking offerings and to remain in state of equanimity both when he gets or does not get alms, to tolerate disgrace, praise or adverse talk about him, to tolerate mosquito bite and the like are such activities. He should make a decision in his mind in what manner he shall accept the offering and stick to it (the abhigraha) He should practice austerities and other basic principles He should sense the masters with a sense of humility so that he may remain completely steadfast in his vow of brahmacharya

Bhagavan Mahavir has given this sermon in order to remain safe in practice of the vow of brahmcharya It is beneficial in the next life and in future It is pure, based on justice and free from crookedness It is the best of all It eliminates or subdues pains and sins

विवेचन कामवासना ऐसी प्रबल है कि तनिक-सी असावधानी होते ही मनुष्य के मन को विकृत कर देती है। यदि मनुष्य तत्काल न सँभल गया तो वह उसके वशीभूत होकर दीर्घकालिक साधना से पतित हो जाता है और फिर न घर का न घाट का रहता है। उसकी साधना खोखली, निष्प्राण, दिखावटी या आडम्बरमात्र रह जाती है। ऐसा व्यक्ति अपने साध्य से दूर पड जाता है। उसका बाह्य कष्टसहन निरर्थक बन जाता है।

प्रस्तुत पाठो मे अत्यन्त तेजस्वी एव प्रभावशाली शब्दो मे ब्रह्मचर्य की महिमा का वर्णन किया गया है। यह महिमागान जहाँ उसकी श्रेष्ठता को प्रदर्शित करता है, वही उसकी दुराराध्यता का भी सूचक है। यही कारण है कि इसकी आरधना के लिए अनेकानेक विधि-निषेधो का दिग्दर्शन कराया गया है।

सच्चे साधक को अपने उच्चतम साध्य पर-मुक्ति पर और उसके उपायों पर ही अपना सम्पूर्ण मनोयोग

केन्द्रित करना चाहिए। उसे शारीरिक वासना से ऊपर उठ जाना चाहिए। जो शरीर-वासना से ऊपर उठ जाता है, उसे स्नान, दन्तधोवन, देह के स्वच्छीकरण आदि की आवश्यकता नही रहती। 'ब्रह्मचारी सदा शुचि.' इस कथन के अनुसार ब्रह्मचारी सदैव पवित्र होता है, उसे जल से पवित्र होने की आवश्यकता नही होती। स्नान 'काम' के आठ अगो मे एक अग माना गया है। जैसे-गाय, भैस आदि पशु रूखा-सूखा, स्नेहहीन और परिमित आहार करते है, अतएव उनके दाँत बिना धोये ही स्वच्छ रहते है, उसी प्रकार अन्त-प्रान्त और परिमित आहार करने वाले मुनि के दाँतो को भी धोने की आवश्यकता नही होती।

अभिप्राय यही है कि ब्रह्मचर्य के पूर्ण आराधक को शास्त्रोक्त सभी विधि-निषेधो का अन्त करण से, आत्मशोधन के उद्देश्य से पालन करना चाहिए। ऐसा करने पर ही उसका यह महाव्रत सुरक्षित रहता है। सुरक्षित ब्रह्मचर्य के अलौकिक तेज से साधक की समग्र साधना तेजोमय बन जाती है, उसकी आन्तरिक अद्‌भुत शक्तियाँ चमक उठती है और आत्मा तेज पुञ्ज बन जाता है। ऐसी स्थिति मे ही सुरेन्द्र, असुरेन्द्र और नागेन्द्र साधक के चरणो मे नतमस्तक होते है।

पाँच भावनाओ के रूप मे आगे भी ब्रह्मचर्य की सुरक्षा के उपायो का प्ररूपण किया गया है।

Elaboration—Amorous lust is so strong that a little slackness pollutes the mind In case the person concerned does not become cautious immediately, he as a result of it, falls down from his life of long austere practices He is not then respected by the public or his family His ascetic practice then becomes meaningless, lifeless and artificial Such a person goes very much astray from his goal His tolerance of troubles becomes meaningless

In the current aphorisms, the vow of brahmcharya has been appreciated in a forceful and effective manner It exhibits its sublime nature and also indicates that it is very difficult to be practiced So many methods for its practice and several prohibitions have been underlined

A true practitioner should concentrate fully on liberation and the methods which help in attaining it One who rises above physical pleasures has no need for bathing, washing teeth, washing body and the like He is always clean due to celibacy He has no need to clean himself with water Bathing is one of the ingredients that produces lust A cow, buffalo and suchlike take dry food in limited quantity and their teeth remain clean even without washing them Similarly a monk who takes only tasteless food and in limited quantity, he has no need to wash his teeth

In brief a person who totally practices brahmcharya, he should follow all the principles laid down in the scriptures meticulously and avoid all the prohibitions from the core of his heart for self-purification Thus his vow shall remain secure Due to the unique aura of such a well-guarded

chastity, his entire ascetic practice becomes bright. The unique inner power starts shining and his soul becomes grand. When he attains that stage, only then the masters of gods and the masters of asuras and nagas—The demon gods bow to him

Further five sentiments for the protection of the vow of chastity have been narrated.

ब्रह्मचर्यव्रत की पाँच भावनाएँ FIVE SENTIMENTS OF VOW OF CHASTITY

पूर्वोक्त सूत्रो मे ब्रह्मचर्य की महिमा, गौरव, स्वरूप तथा ब्रह्मचर्य पालने वाले को ब्रह्मचर्य की रक्षा के लिये किस प्रकार सावधान रहना चाहिए, इसका विशद निरूपण किया गया है। अब आगे ब्रह्मचर्य व्रत की सुरक्षा के लिये पाच भावनाये बताई गई है।

In preceding aphorisms the importance, glory and description of the vow of Brahmacharya has been given in details Also mentioned is the awareness needed for protecting the vow taken Now the five sentiments for bolstering the vow of celibacy are detailed

प्रथम भावना–विवित्त–शयनासन FIRST SENTIMENT ALOOF BED

१४८. तस्स इमा पंच भावणाओ चउत्थवयस्स होंति अबंभचेरविरमणपरिरक्खणट्ठयाए–

पढमं–सयणासण–घर–दुवार–अंगण–आगास–गवक्ख–साल–अभिलोयण–पच्छवत्थुक–पसाहणग–ण्हाणिगावगासा, अवगासा जे य वेसियाणं, अच्छंति य जत्थ इत्थियाओ अभिक्खणं मोहदोस–रइराग–वड्ढणीओ, कहिंति य कहाओ बहुविहाओ, ते वि हु वज्जणिज्जा। इत्थि–संसत्त–संकिलिट्ठा, अण्णे वि य एवमाई अवगासा ते हु वज्जणिज्जा।

जत्थ मणोविब्भमो वा भंगो वा भंसणा [भसंगो] वा अट्टं रुद्दं च हुज्ज झाणं तं तं वज्जेज्जऽवज्जभीरू अणाययणं अंतपंतवासी।

एवमसंसत्तवास–वसहीसमिइ–जोगेण भाविओ भवइ अंतरप्पा, आरयमण–विरयगामधम्मे जिइंदिए बंभचेरगुत्ते।

१४८. अब्रह्मचर्य से विरतिरूप चतुर्थ ब्रह्मचर्य व्रत की रक्षा के लिए ये पाँच भावनाएँ है–

प्रथम असंसक्त वासवसति समिती भावना : (उनमे से) प्रथम भावना इस प्रकार है–शय्या, आसन, गृहद्वार (घर का दरवाजा), आँगन, आकाश–ऊपर से खुला स्थान, गवाक्ष–झरोखा, शाला–सामान रखने का कमरा आदि स्थान, अभिलोकन–बैठकर देखने का ऊँचा स्थान, पश्चादृगृह–पिछवाडा–पीछे का घर, प्रसाधनक–नहाने और श्रृगार करने का स्थान इनके अतिरिक्त जहा वेश्याओ के स्थान–अड्डे है और जहाँ स्त्रियाँ बैठती–उठती है और बार–बार मोह, द्वेष, कामराग और स्नेहराग की वृद्धि करने

वाली बहुत प्रकार की कथाएँ कहती है-बाते करती है, उनका भी ब्रह्मचारी को वर्जन करना चाहिए। ऐसे स्त्री के ससर्ग के कारण सक्लिष्ट-सक्लेशयुक्त अन्य जो भी स्थान हो, वे भी निश्चय ही त्यागने योग्य है। इसी प्रकार के अन्य स्थान भी वर्जनीय समझने चाहिए जहाँ रहने से मन मे काम विकलता होती हो, ब्रह्मचर्य भग्न होता हो या उसका आशिक रूप से खण्डन होता हो, जहाँ रहने से आर्त्तध्यान-रौद्रध्यान होता हो, उन-उन अनायतनो-अयोग्य स्थानो का पापभीरु ब्रह्मचारी-परित्याग करे। साधु तो ऐसे स्थान पर ठहरता है जो अन्त-प्रान्त हो अर्थात् इन्द्रियो के प्रतिकूल हो।

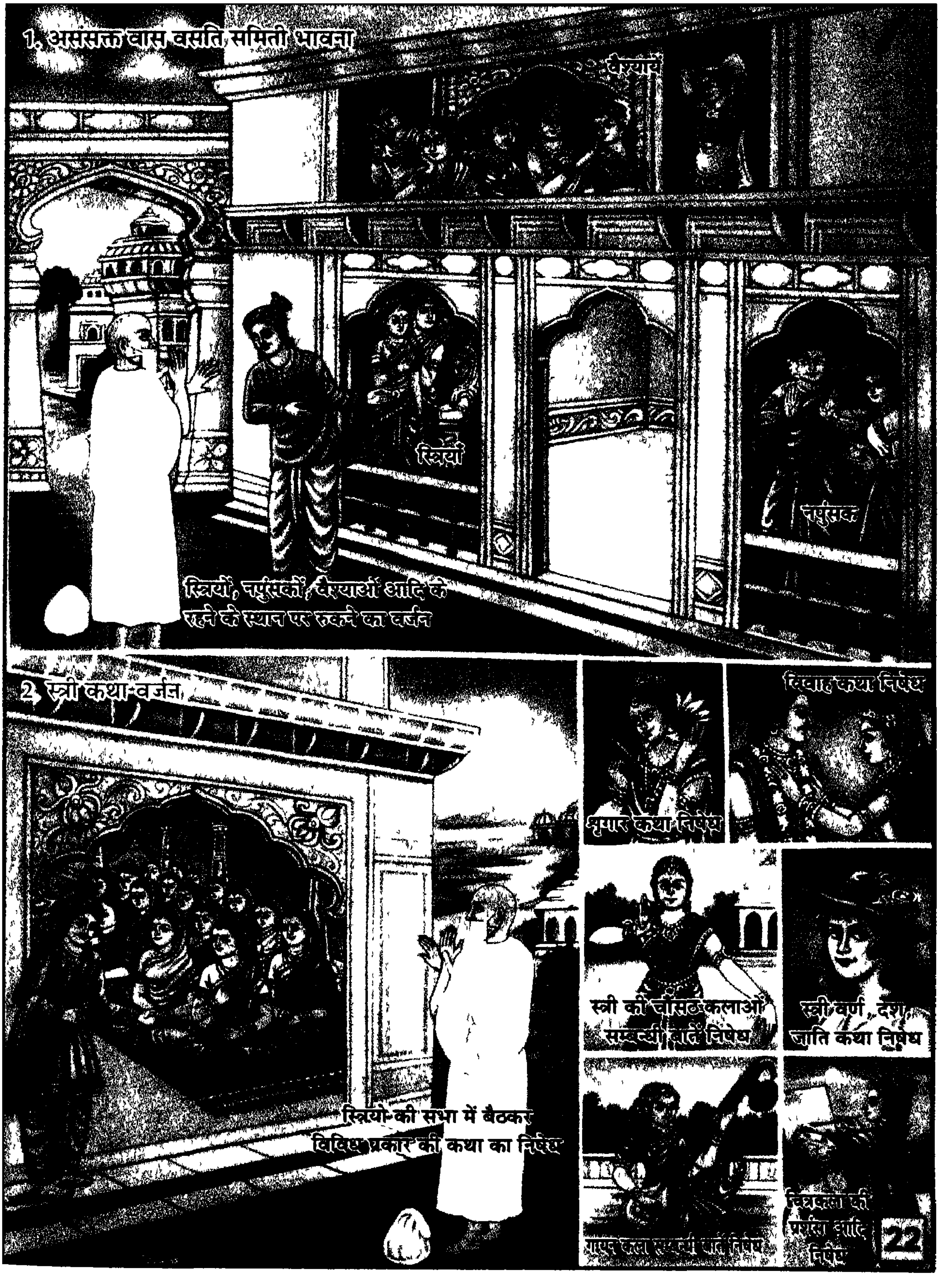
इस प्रकार असंसक्तवास-वसति-समिति के अर्थात् स्त्रियो के ससर्ग से रहित स्थान का त्याग रूप समिति के चिन्तनयुक्त प्रयोग से साधु की अन्तरात्मा ब्रह्मचर्य के सस्कारो से पुष्ट हो जाती है, उसका मन ब्रह्मचर्य मे लीन हो जाता है और उसकी इन्द्रियाँ विषयो से निवृत्त हो जाती है। वह इन्द्रिय विजेता साधु ब्रह्मचर्य की पूर्णतया सुरक्षा कर लेता है।

148. There are five sentiments for safeguarding the fourth vow of avoiding non-chastity

First Sentiment—It is avoidance of the place where women stay It is as follows—bed, seat, gate of the house, courtyard, open space, window, store room, a higher place where one can see others while sitting, back yard of the home, bath room, dressing room—all these places should be avoided by the person who practices chastity as they are places where he can come in contact with women

Further, the whorehouses and the places where generally women sit and recite many types of stories These and other such places that increase lust, delusion, hatred, affection and the like should be avoided by the brahmchari He should avoid even other suchlike places which can create adverse sensitivity in the mind due to contact with women There are places, which create restlessness or adversely affect the mind. This eliminates the vow of brahmcharya partially or totally and creates feelings of sorrow or anger A brahmchari is afraid of such sinful activities. He should therefore avoid such undesirable places A monk stays only at such a place which is isolated and according to his codes

Thus a person who stays, in a place devoid of contact with women, maintains his mind in a state of equanimity, in a state wherein he is with the limits prescribed for chastity and he is in control of his senses. He is able to practice there his vow meticulously.


1. असंसक्त वास वसति समिती भावना
वैश्यायें
स्त्रियाँ
नपुंसक
स्त्रियों, नपुंसकों, वैश्याओं आदि के
रहने के स्थान पर रुकने का वर्जन
2. स्त्री कथा वर्जन
स्त्रियों की सभा में बैठकर
विविध प्रकार की कथा का निषेध
विवाह कथा निषेध
शृंगार कथा निषेध
स्त्री की चौंसठ कलाओं
सम्बन्धी बातें निषेध
स्त्री वर्ण, देश,
जाति कथा निषेध
चित्रकला की
प्रशंसा आदि
निषेध
22

चित्र-परिचय 22

Illustration No. 22

ब्रह्मचर्य व्रत की पाँच भावनाएँ-1

ब्रह्मचर्य नामक चौथे सवर रूप महाव्रत की पाँच भावनाएँ कही गई हैं—

(1) **असंसक्त वास वसति समिति भावना**—ब्रह्मचर्य व्रत के साधक को ऐसे किसी स्थान पर नहीं रहना चाहिए, जहाँ स्त्रियो उठती-बैठती हो, वैश्याएँ रहती हो, नपुसको का निवास स्थान हो, उसे ऐसे सभी स्थानो पर रहना वर्जित बताया गया है। क्योंकि ऐसे स्थान पर रुकने से चित्त मे चचलता उत्पन्न हो सकती है।

(2) **स्त्री-कथा वर्जन समिति भावना**—इस भावना का अभिप्राय यह है कि ब्रह्मचर्य व्रत के पालक साधु को स्त्रियो की सभा के बीच बैठकर वार्तालाप से बचना चाहिए। स्त्रियो से सम्बन्धित विलास, हास्य, शृगार, उनकी चौसठ कलाएँ, वर्ण, जाति आदि सम्बन्धित विकार उत्पादक कथाएँ नही करनी चाहिए।

—सूत्र 148-149, पृ 365-367

FIVE SENTIMENTS OF VOW OF CELIBACY (1)

There are said to be five sentiments of the great vow of celibacy the fourth Samvar

(1) Disturbance-free place of stay – An aspirant observing the vow of celibacy should not stay at a place where women frequent whores live or eunuchs live For him staying at any such place is prohibited This is because staying at such places may disturb the required mental serenity

(2) Refrain from talk about women – An ascetic observing the vow celibacy should avoid joining a meeting of women and talk with them He should also avoid talking or story telling about women and their activities including their entertainment, beautification, 64 skills, complexion, and caste

— Sutra-149, page-367

१४९. बिइयं–णारीजणस्स मज्झे ण कहियव्वा कहा–विचित्ता विब्बोय–विलास–संपउत्ता हाससिंगार–लोइयकहव्व मोहजणणी, ण आवाह–बिवाह–वर–कहा, इत्थीणं वा सुभग–दुब्भगकहा, चउसट्ठिं च महिलागुणा, ण वण्ण–देस–जाइ–कुल–रूव–णाम–णेवत्थ–परिजण–कहा इत्थियाणं, अण्णा वि य एवमाइयाओ कहाओ सिंगार–कलुणाओ तव–संजम–बंभचेर–घाओवघाइयाओ अणुचरमाणेणं बंभचेरं ण कहियव्वा, ण सुणियव्वा, ण चिंतियव्वा।

एवं इत्थीकहाविरइसमिइजोगेणं भाविओ भवइ अंतरप्पा आरयमण–विरयगामधम्मे जिइंदिए बंभचेरगुत्ते।

१४९. दूसरी स्त्रीकथा विरति भावना : इस प्रकार है–केवल स्त्रियो की ही सभा के बीच बैठकर अनेक प्रकार की कथा–वार्त्ता नही करनी चाहिए अर्थात् नाना प्रकार की बाते नही करनी चाहिए, जो बाते विब्बोक–स्त्रियों की कामुक चेष्टाओ से और विलास–स्मित, कटाक्ष आदि के वर्णन से युक्त हो, जो हास्यरस और श्रृगाररस की प्रधानता वाली लौकिक कथा हो, जो मोह उत्पन्न करने वाली हो। इसी प्रकार द्विरागमन–गौने या विवाह सम्बन्धी बाते भी नही करनी चाहिए। स्त्रियो के सौभाग्य–दुर्भाग्य की भी चर्चा–वार्त्ता नही करनी चाहिए। स्त्रियो की कलाओ, स्त्रियो के रग–रूप, देश, जाति, कुल, रूप–सौन्दर्य, भेद–प्रभेद, पोशाक तथा परिजनो सम्बन्धी कथाएँ तथा इसी प्रकार की जो भी अन्य कथाएँ श्रृगाररस से करुणता उत्पन्न करने वाली हो और जो तप, सयम तथा ब्रह्मचर्य का घात–उपघात करने वाली हो, ऐसी कथाएँ ब्रह्मचर्य का पालन करने वाले साधुजनो को नही कहनी चाहिए। ऐसी कथाएँ–बाते उन्हे सुननी भी नही चाहिए और उनका मन मे चिन्तन भी नही करना चाहिए।

इस प्रकार स्त्रीकथाविरति–समिति के योग से भावित अन्त करण वाला, ब्रह्मचर्य मे अनुरक्त चित्त वाला तथा इन्द्रिय विकार से विरत रहने वाला, जितेन्द्रिय साधु ब्रह्मचर्य से गुप्त–सुरक्षित रहता है।

149. The second sentiment is avoidance of talk about women. Its nature is as follows—He should not narrate various types of stories among women In other words he should not have loose talk with women—the talk which contains amorous activities, their lustful enjoyments, laughter beautification or like and talk of the common people He should avoid talk that generates delusion or attraction for them. Similarly he should not talk about marriage He should not talk about good or bad luck of women He should not talk about sixty four arts of ladies, their complexion, country, clan, family, facial beauty, dress and relatives. He should not indulge in other suchlike talks about them which may produce compassion in the context of their beautification and which are likely to adversely affect austerities self-restraint and chastity.

A monk observes the vow of brahmcharya, he should therefore not indulge in suchlike talk He should not listen such talk. He should not think about such matters in his mind

Thus a monk who has his mind influenced with avoidance of talk about women, who is absorbed in chastity and who is totally detached from bad attitude of senses, who has full control over his senses keeps himself in complete practice of the vow of chastity (brahmacharya)

तृतीय भावना–स्त्रियो के रूप–दर्शन का त्याग

THIRD SENTIMENTS AVOIDING LOOKING AT BEAUTY OF WOMEN

१५०. तइयं–णारीणं हसिय–भणिय–चेट्ठिय–विप्पेक्खिय–गइ–विलास–कीलियं, विब्बोइय–णट्टगीय–वाइय–सरीर–संठाण–वण्ण–कर–चरण–णयण–लावण्ण–रूव–जोव्वण–पयोहरा–धर–वत्थालंकार–भूसणाणि य, गुज्झोकासियाइं, अण्णाणि य एवमाइयाइं तव–संजम–बंभचेर–घाओवघाइयाइं अणुचरमाणेणं बंभचेरं ण चक्खुसा, ण मणसा, ण वयसा पत्थेयव्वाइं पावकम्माइं।

एवं इत्थीरूवविरइ–समिइजोगेण भाविओ भवइ अंतरप्पा आरयमणविरयगामधम्मे जिइंदिए बंभचेरगुत्ते।

१५०. **तीसरी स्त्री रूप दर्शन विरति समिति भावना** · यह इस प्रकार है–नारियो के मधुर हास्य को, विकारमय कथन को, हाथ पैर आदि की चेष्टाओ को, विप्रेक्षण–कटाक्षयुक्त निरीक्षण को, गति–चाल को, विलास और क्रीडा को, विब्बोकित–अनुकूल–इष्ट वस्तु की प्राप्ति होने पर अभिमानपूर्वक किया गया तिरस्कार, नाट्य, नृत्य, गीत, वीणा आदि वाद्यो के वादन, शरीर का गठन, गौर श्याम आदि वर्ण, हाथो, पैरो एव नेत्रो का लावण्य, रूप, यौवन, स्तन, अधर–ओष्ठ, वस्त्र, अलकार और भूषण–ललाट की बिन्दी आदि को तथा उनके गोपनीय अगो को एव स्त्री सम्बन्धी अन्य अगोपागो या चेष्टाओ को जिनसे ब्रह्मचर्य, तप तथा सयम का घात–उपघात होता है, उन्हे ब्रह्मचर्य का अनुपालन करने वाला मुनि न नेत्रो से देखे, न मन से सोचे और न वचन से उनके सम्बन्ध मे कुछ बोले और न पापमय कार्यों की अभिलाषा करे।

इस प्रकार स्त्रीरूपविरति–समिति के योग से भावित अन्त करण वाला मुनि ब्रह्मचर्य मे अनुरक्त चित्त वाला, इन्द्रियविकार से विरत, जितेन्द्रिय और ब्रह्मचर्य से गुप्त–सुरक्षित होता है।

150. The third sentiment is prohibition of looking at women The monk who practices the vow of chastity should not attend to the laughter of women and their talk which creates adverse thoughts. He should not see such movements of their hands, their amorous activities, their gait, their acrobatics, their act of belittling in ego at having an article of their choice, their dance, dramatic performance, their song, their playing


3. स्त्री रूप दर्शन विरति समिति भावना
5. स्निग्ध सरस भोजन त्याग
यह नहीं कल्पता
मिठाई आदि गरिष्ठ भोज्य पदार्थों का त्याग
4. पूर्व भोग चिन्तन त्याग भावना
निर्ग्रन्थ को पूर्व रति और क्रीड़ा का स्मरण नहीं करना चाहिये
पूर्व काम क्रीड़ा का स्मरण
पुत्र-जन्म स्मरण
पत्नी के द्विरागमन का स्मरण
नट के खेल का स्मरण

चित्र-परिचय 23

Illustration No. 23

ब्रह्मचर्य व्रत की पाँच भावनाएँ-2

(3) **स्त्री रूप दर्शन विरति समिति भावना**—इस भावना के अन्तर्गत ब्रह्मचारी साधक के लिये स्त्रियो के रूप दर्शन, हाथ-पैर आदि की चेष्टाओ को, विलास और क्रीडाओ को तथा अन्य ऐसी सभी चेष्टाओ को जिससे ब्रह्मचर्य व्रत का घात होता हो, देखने व सोचने का निषेध किया गया है।

(4) **पूर्व भोग चिन्तन त्याग भावना**—पूर्व काल (गृहस्थ अवस्था) मे भोगे हुए भोग, जैसे—पुत्र-जन्म, पूर्व कामक्रीडा, पत्नी का द्विरागमन, नट-नर्तक का नाच देखना आदि जिनसे चित्त चलायमान हो जाता है, उन्हे स्मरण नहीं करना चाहिए।

(5) **स्निग्ध सरस भोजन त्याग भावना**—ब्रह्मचर्य के साधक को अपनी जिह्वा पर नियत्रण रखना चाहिए और सरस स्वादिष्ट और पौष्टिक भोजन जैसे—घी, तेल, खाड, मिश्री, मिठाई, तले हुए पदार्थ आदि का सर्वथा त्याग कर देना चाहिए।

—सूत्र 150-152, पृ. 368-370

FIVE SENTIMENTS OF VOW OF CELIBACY (2)

(3) Avoid looking at women – An ascetic observing the vow celibacy should avoid looking and enjoying the beauty of the female body, the movement of its limbs and activities of entertainment and enjoyment In other words he should avoid looking at any appearance or activity that inspires him to transgress his vow of celibacy He should not even think of these

(4) Avoid recalling enjoyments from the past - An ascetic observing the vow celibacy should avoid recalling enjoyments from the past, which means his life as a householder This includes recalling memories of birth of a son, sexual activities, wife's homecoming after marriage and other incidents that incite excitement

(5) Avoid eating rich and tasty food – An ascetic observing the vow celibacy should exercise control over his taste buds He should completely avoid rich and tasty food such as butter, oil, sugar, sweets, fried things etc

— Sutra-150-152, pages-368-370

musical instrument, their shape of the body, their complexion, the beauty of their eyes and feet, their facial expression, their youth, breasts, lips, clothes, ornaments, the red mark on their forehead and the like, their private parts and other suchlike activities which may adversely affect the chastity, austerity and self restraint of the monk He should not contemplate about such activities of the women in his mind. He should not speak about such things He should not have a desire for such things

Thus a monk who is mentally detached from women, is engaged in chastity He is detached from polluted activity of senses He keeps his chastity quite safe

चतुर्थ भावना–पूर्वभोग–चिन्तन–त्याग

FOURTH SENTIMENT AVOIDING RECOLLECTION OF EARLIER ENJOYMENTS

१५१. चउत्थं–पुव्वरय–पुव्व–कीलिय–पुव्व–संगंथगंथ–संथुया जे ते आवाह–विवाह–चोल्लगेसु य तिहिसु जण्णेसु उस्सवेसु य सिंगारागारचारुवेसाहिं हावभावपललिय–विक्खेव–विलास–सालिणीहिं अणुकूल–पेम्मिगाहिं सद्धिं अणुभूया सयणसंपओगा, उउसुहवरकुसुम–सुरभि–चंदण–सुगंधिवर–वास–धूव–सुहफरिस–वत्थ–भूसण–गुणोववेया, रमणिज्जाओज्जगेय–पउर–णड–णट्टग–जल्ल–मल्ल–मुट्ठिग–वेलंबग–कहग–पवग–लासग–आइक्खग–लंख–मंख–तूणइल्लतुंब–वीणिय–तालायर–पकरणाणि य बहूणि महुरसरगीय–सुस्सराइं, अण्णाणि य एवमाइयाणि तव–संजम–बंभचेर–घाओवघाइयाइं अणुचरमाणेणं बंभचेरं ण ताइं समणेण लब्भा दट्ठुं, ण कहेउं, ण वि सुमरिउं।

जे एवं पुव्वरय–पुव्वकीलिय–विरइ–समिइ–जोगेण भाविओ भवइ अंतरप्पा आरयमण–विरयगामधम्मे जिइंदिए बंभचेरगुत्ते।

१५१. चौथी पूर्वरत पूर्व क्रीड़ित विरति समिती भावना : (चौथी भावना मे पूर्वकाल मे भोगे भोगो के स्मरण के त्याग का विधान किया गया है।) यह इस प्रकार है–पहले (गृहस्थावस्था में) किया गया रमण–विषयोपभोग, पूर्वकाल मे की गई क्रीडाएँ–द्यूत आदि क्रीडा, पूर्वकाल के श्वसुरकुल–ससुराल सम्बन्धी जन, साली या साले की स्त्री आदि के साथ हुए मोहक सम्बन्ध और स्त्री पुत्रादि के साथ स्नेहादि तथा सश्रुत–पूर्व काल के परिचित जन, इस सबका स्मरण नही करना चाहिए। इसके अतिरिक्त वैवाहिक प्रसग, पत्नी का द्विरागमन, चूडाकर्म–शिशु का मुण्डन तथा पर्वतिथियो मे, यज्ञो–नागपूजा आदि के अवसरो पर, श्रृगार के आगार जैसी सजी हुई, हाव–मुख की चेष्टा, भाव–चित्त के अभिप्राय, प्रललित–लालित्ययुक्त कटाक्ष, विक्षेप–ढीली चोटी, पत्रलेखा, आँखो में अजन आदि श्रृगार, विलास–हाथो, भौहो एव नेत्रो की विशेष प्रकार की चेष्टा–इन सबसे सुशोभित, अनुकूल प्रेम वाली स्त्रियो के साथ अनुभव किये हुए शयन आदि विविध प्रकार के कामशास्त्रोक्त प्रयोग, ऋतु के अनुकूल

सुख प्रदान करने वाले उत्तम पुष्पो की सौरभ एव चन्दन की सुगन्ध, चूर्ण किए हुए अन्य उत्तम वासद्रव्य, धूप, सुखद स्पर्श वाले वस्त्र, आभूषण–इनके गुणो से युक्त, रमणीय आतोद्य–वाद्यध्वनि, गायन, प्रचुर नट, नर्तक–नाचने वाले, जल्ल–रस्सी पर खेल दिखलाने वाले, मल्ल–कुश्तीबाज, मौष्टिक–मुक्केबाज, विडम्बक–विदूषक, कथा–कहानी सुनाने वाले, प्लवक–उछलने वाले, रास गाने या रासलीला करने वाले, शुभाशुभ बतलाने वाले, लख–ऊँचे बाँस पर खेल करने वाले, मख–चित्रमय पट्ट लेकर भिक्षा माँगने वाले, तूण नामक वाद्य बजाने वाले, वीणा बजाने वाले, तालाचर–एक प्रकार के तमाशबीन–इन सबकी क्रीडाएँ, गायको के नाना प्रकार के मधुर ध्वनि वाले गीत एव मनोहर स्वर और इस प्रकार के अन्य विषय, जो तप, सयम और ब्रह्मचर्य का घात–उपघात करने वाले है, उन्हे ब्रह्मचर्यपालक श्रमण को देखना नही चाहिए, इनसे सम्बद्ध वार्त्तालाप नही करना चाहिए और पूर्वकाल मे जो देखे–सुने हो, उनका स्मरण भी नहीं करना चाहिए।

इस प्रकार पूर्वरत–पूर्वक्रीडितविरति–समिति के योग से भावित अन्त करण वाला साधक, ब्रह्मचर्य मे अनुरक्त चित्त वाला, मैथुनविरत, जितेन्द्रिय साधु ब्रह्मचर्य से गुप्त–सुरक्षित होता है।

151. In the fourth sentiment, there is provision of discarding recollection of earlier enjoyments During his life as a householder, prior to monkhood, the monk had enjoyed mundane pleasures of worldly life, sensual activities, gambling, the loose talk of in-laws and of the people well-acquainted He should not recollect those events Further he should not attend marriages, hair-cutting ceremony of children, the women well decorated at the time of performance of yajnas and washing of demon-gods Their amorous looks, their loose lock of hair, the collerium in their eye, their hands, eye-brows and movement of eyes that creates sensitivity in the mind He should not recollect the sexual enjoyments with the women he had in his earlier life He should not recollect the sweet smell of flowers, sandalwood powder and of other powders incense, clothes pleasant in touch, ornaments, musical sounds, songs, dancers, rope dancers, wrestles, boxers, clowns, storytellers, jumpers, astrologers, pole dancers, players of different musical instruments, flute players and other suchlike activities that affect austerities, self-restraint and chastity. He should not engage in talk about such matters. He should not recollect such activities seen or heard in the past.

Thus a monk who mentally keeps himself detached from the sexual enjoyment he had with the women in the past, who remains absorbed in chastity, who is detached from mating, who has full control over his senses, his vow of chastity remains fully intact.

पाँचवी भावना–स्निग्ध सरस भोजन–त्याग

FIFTH SENTIMENT AVOIDING RICH TASTY JUICY FOOD

१५२. पंचमगं–आहार–पणीय–णिद्ध–भोयण–विवज्जए संजए सुसाहू व वगय–खीर–दहि–सप्पि–णवणीय–तेल्ल–गुल–खंड–मच्छंडिग–महु–मज्ज–मंस–खज्जग–विगइ–परिचित्तकयाहारे ण दप्पणं ण बहुसो ण णिइगं ण सायसूपाहियं ण खद्धं, तहा भोत्तव्वं जहा से जायामाया य भवइ, ण य भवइ विब्भमो ण भंसणा य धम्मस्स।

एवं पणीयाहार–विरइ–समिइ–जोगेण भाविओ भवइ अंतरप्पा आरयमण–विरय–गामधम्मे जिइंदिए बंभचेरगुत्ते।

१५२. **पाँचवी प्रणीत आहार त्याग समिति भावना** : वह इस प्रकार है। स्वादिष्ट स्निग्ध–चिकनाई वाले भोजन का त्यागी सयमशील सुसाधु दूध, दही, घी, मक्खन, तेल, गुड, शक्कर, मिश्री, मधु, मद्य, माँस, खाद्यक–पकवान और खाद्य विकृतियो से रहित आहार करे। वह इन्द्रियो मे उत्तेजना उत्पन्न करने वाला आहार न करे। दिन मे कई बार न खाये और न प्रतिदिन लगातार खाये। न दाल साग अधिक खाये और न प्रमाण से अधिक भोजन करे। साधु उतना ही हितकर और परिमित आहार करे जितना उसकी सयम–यात्रा के लिये पर्याप्त निर्वाहक हो, जिससे मन मे उद्विग्नता उत्पन्न न हो और धर्म (ब्रह्मचर्य) से च्युत न हो।

इस प्रकार प्रणीत–आहार की विरति रूप समिति के योग से सुसस्कृत अन्त करण वाला, ब्रह्मचर्य की आराधना मे अनुरक्त चित्त वाला और मैथुन से विरत जितेन्द्रिय साधु ब्रह्मचर्य को पूर्णतया सुरक्षित कर लेता है।

152. Fifth sentiment of a monk is prohibition of tasty food and the food that contains lot of butter The monk practicing restraints should take food free from milk and ghee, butter, oil, sugar, honey, intoxicating substances and roasted things which disturb the mind He should not take such food that disturbs the senses He should not eat more than his absolute need during the day He should not eat continuously daily He should not take food that contains more of pulses and tasty products. He should take only that much food which is absolutely essential for his life of ascetic restraint, which may not create restlessness in his mind and due to which he may not fall from his ascetic discipline.

Thus a monk who keeps his mind detached from rich food in a state of equanimity, is practicing vow of chastity and is detached from sex he is in control of his senses and remains well secure in his vow of brahmcharya

विवेचन . शास्त्रकार ने अब्रह्मचर्य के विविध स्थानो से साधक की आत्मा को बचाने तथा ब्रह्मचर्य पालन के सस्कारो को हृदय मे जमाने हेतु ये पाच भावनाये बताई है-

१ विविक्तशयनासन,

२ स्त्रीकथा का परित्याग,

३ स्त्रियो के रूपादि को देखने का परिवर्जन,

४ पूर्वकाल मे भुक्त भोगो के स्मरण से विरति,

५ सरस बलवर्द्धक आदि आहार का त्याग।

१ **विविक्तशयनासन भावना** . सर्वप्रथम ब्रह्मचर्य के विघातक तत्वो पर रोक लगाई गई है अर्थात् ब्रह्मचारी को ऐसे स्थान मे नही रहना चाहिए जहाँ नारी जाति का सामीप्य हो-ससर्ग हो, जहाँ स्त्रियाँ उठती-बैठती हो, बाते करती हो, और जहाँ वेश्याओं का सान्निध्य हो। ऐसे स्थान पर रहने से ब्रह्मचर्यव्रत के भग का खतरा रहता है, क्योकि ऐसा स्थान चित्त मे चंचलता उत्पन्न करने वाला है। यही इस भावना का प्रयोग है।

२. **स्त्रीकथा का परित्याग** : इरू भावना स्त्रीकथा विरति समिति का प्रयोग है। इसका अभिप्राय यह है कि ब्रह्मचर्य के साधक को स्त्रियो के बीच बैठकर वार्त्तालाप करने से बचना चाहिए। यही नही, स्त्रियो सम्बन्धी कामुक चेष्टाओ का, विलास, हास्य आदि का, स्त्रियो की वेशभूषा आदि का, उनके रूप-सौन्दर्य, जाति, कुल, भेद-प्रभेद का तथा विवाह आदि का वर्णन करने से भी बचना चाहिए। ऐसी बाते कामवर्द्धक एव तप-सयम-ब्रह्मचर्य विघातक होती है। दूसरा कोई इस प्रकार की बाते करता हो तो उन्हे सुनना नही चाहिए और न ही ऐसे विषयो का मन मे चिन्तन करना चाहिए। यही इस भावना का प्रयोग है, जो साधक को ब्रह्मचर्यनिष्ठ एव इन्द्रिय विजेता बना देता है।

३ **स्त्रियो के रूपादि को देखने का परिवर्जन** तीसरी भावना का सम्बन्ध चक्षुरिन्द्रिय के साथ है। जो दृश्य काम-राग को बढाने वाला हों, मोहजनक हों, आसक्ति जागृत करने वाला हों, ब्रह्मचारी उससे बचता रहे। स्त्रियो के हास्य, बोल-चाल, विलास, क्रीडा, नृत्य, शरीर, आकृति, रूप-रग, हाथ-पैर, नयन, लावण्य, यौवन आदि पर तथा उनके स्तन, गुप्त अग, वस्त्र, अलकार एव टीकी आदि भूषणो पर ब्रह्मचारी को दृष्टिपात नही करना चाहिए। तात्पर्य यह है कि जो दृश्य तप, सयम और ब्रह्मचर्य को अशत अथवा पूर्णत विघात करने वाले हो, उनसे ब्रह्मचारी को सदैव बचते रहना चाहिए। इस प्रकार की भावना के चिन्तन और प्रयोग से साधु के अन्त करण मे ब्रह्मचर्य के सस्कार सुदृढ हो जाते हैं।

४ **पूर्वकाल मे भुक्त भोगो के स्मरण से विरति** . चौथी भावना मे पूर्व काल मे अर्थात् गृहस्थावस्था मे भोगे हुए भोगो के चिन्तन न करने की प्रेरणा की गई है। बहुत से साधक ऐसे होते है जो गृहस्थदशा मे दाम्पत्य जीवन यापन करने के पश्चात् मुनिव्रत अगीकार करते हैं। उनके मस्तिष्क मे गृहस्थ जीवन की घटनाओ के सस्कार या स्मरण सचित होते है। वे सस्कार यदि निमित्त पाकर उभर उठे तो चित्त को विभ्रान्त कर देते हैं, चित्त को विकृत बना देते है और कभी-कभी मुनि अपने कल्पना-लोक मे उसी पूर्वावस्था मे पहुँचा हुआ अनुभव करने लगता है। वह अपनी वर्तमान स्थिति को कुछ समय के लिए भूल जाता है। यह स्थिति उसके तप, संयम एव ब्रह्मचर्य का विघात करने वाली होती है। अतएव ब्रह्मचारी पुरुष को ऐसे प्रसगो से निरन्तर बचना चाहिए, जिनसे कामवासना को जागृत होने का अवसर मिले।

५ सरस बलवर्द्धक आदि आहार का त्याग : ब्रह्मचर्य पर जैसे काम विकारयुक्त बातो का प्रभाव पडता है, वैसे ही भोजन का भी प्रभाव पडता है। अत. पाँचवी भावना आहार सम्बन्धी बताई गई है। जो साधक जिह्वा इन्द्रिय पर पूरी तरह नियत्रण स्थापित कर पाता है, वही निरतिचार ब्रह्मव्रत आराधन करने में समर्थ होता है। इसके विपरीत जिह्वालोलुप सरस, स्वादिष्ट एव पौष्टिक भोजन करने वाला इस व्रत का सम्यक् प्रकार से पालन नही कर सकता। अतएव इस भावना में दूध, दही, घृत, नवनीत, तेल, गुड, खाँड, मिश्री आदि के भोजन के त्याग का विधान किया गया है। मधु, माँस एव मदिरा, ये महाविकृतियाँ है, इनका सर्वथा परित्याग तो अनिवार्य ही है। बडे-बडे साधक स्वाद के कारण रसनेन्द्रिय के गुलाम बने हुये हैं। ब्रह्मचारी पुरुष को ऐसा नीरस, रूखा-सूखा एव सात्त्विक भोजन ही करना चाहिए जो वासना के उद्रेक मे सहायक न बने और जिससे सयम का भलीभाँति निर्वाह भी हो जाये।

यहाँ एक स्पष्टीकरण आवश्यक है। आगम 'पुरुष' की प्रधानता को लक्ष्य मे रखकर विरचित होते हैं। इस कारण यहाँ ब्रह्मचारी पुरुष को स्त्रीससर्ग, स्त्रीकथा, स्त्री के अगोपागो के निरीक्षण आदि के वर्जन का विधान किया गया है। किन्तु नारी साधिका-ब्रह्मचारिणी के लिए पुरुषसंसर्ग, पुरुषकथा आदि का वर्जन समझ लेना चाहिए। नपुसको की चेष्टाओ का अवलोकन ब्रह्मचारी और ब्रह्मचारिणी दोनो के लिए समान रूप से वर्जित है।

Elaboration—In the above mentioned aphorism five contemplations of the vow of brahmcharya have been narrated so that one may properly practice this vow according to scriptures. They are as follows—

1 Aloof bed (or place of rest).

2 Discarding talk about women

3 Not to see closely the beauty and the like of the women

4 Not to recollect the worldly enjoyments of the previous period

5 To avoid tasty rich food that increases physical strength.

The gist of the first sentiment namely aloof bed is that one who practices vow of chastity, he should not stay in such a pace where ladies are nearby, they move about, they talk or where prostitutes are in the neighbourhood There is a danger that the vow may break by living at such a place as it creates disturbance in mind

The second sentiment is avoiding talk about women. One who practices vow of chastity, he should avoid discussion by sitting among women Further, he should avoid giving an account about the sexual enjoyment of women, their awareness activities, laughter and the like, their dress, their beauty, their caste, family, their types and their marriage celebrations; such a talk also produces delusion. In case anyone else in making such like talk, he should not listen to it He should not even think about such matters in his mind

The third sentiment is primarily connected with the sense of sight A practitioner of vow of chastity avoids seeing such a scene what is likely to infuse desire for sexual enjoyments, lust and attachment He should not stare at the laughter, talk and sexual activities of women, their dance, their physical appearance, their body, their complexion, their hand and feet, their beauty, their beauty of youth, their breasts, private parts, clothes, ornaments and lustre He should immediately remove his attention from that site where he happens to see a woman By doing so the chance of attachment or delusion does not arise in the mind In brief one who practices chastity, he should avoid such scene, which adversely affect austerities, restraints and partially or completely affect his life of brahmcharya

Fourth sentiment is to avoid the amorous enjoyments of the period spent as householder There are many followers of ascetic path who had spent a married life in their state as a householder and adopted monkhood thereafter Their brain has the memories of the events of that period In case those thoughts due to any event arise in the mind again, they make it restless They pollute the heart and sometime the monk feels in his imagination that he is experiencing the same pleasures He forgets for sometime his present state as a monk Such a condition adversely affects his austerities, self-restraint and chastity, so a brahmchari should avoid such situations which may awaken desire for sexual pleasures

Fifth sentiment is about food It is deeply related to vow of chastity Energetic food that instigates the ego and the senses adversely affects chastity Only that person is capable of properly practicing the vow of chastity who has full control over his sense of taste He who takes tasty, sweet and energetic food, he cannot practice this vow properly So it is said down that one should not take milk, curd, ghee, butter, oil and the like in his meals Honey, meat and wine should be completely avoided as they are the cause of great disturbance in the mind. In a nutshell, the person who is practicing the vow of chastity, he should take tasteless, dry food that does not cause any hurt to living being His food should not assist in creating or increasing lust so that he may properly lead his ascetic life of restraint

Here it is essential to clarify one thing. Agams have been written keeping in mind the importance of the man. So it is laid down that the person who practices chastity, he should avoid contact with women, talk about women, staring at women and looking at her limbs. It should be understood that the woman practitioner of chastity should avoid contact with men, talk about men and the like Both the male and female practitioners of the vow should avoid seeing activities of eunuch.

उपसंहार CONCLUSION

१५३. एवमिणं संवरस्स दारं सम्मं संवरियं होइ सुप्पणिहियं इमेहिं पंचहि वि कारणेहिं मण–वयण–काय–परिरक्खिएहिं। णिच्चं आमरणंतं च एसो जोगो णेयव्वो धिइमया मइमया अणासवो अकलुसो अच्छिद्दो अपरिस्सावी असंकिलिट्ठो सव्वजिणमणुण्णाओ।

एवं चउत्थं संवरदारं फासियं पालियं सोहियं तीरियं किट्टियं आराहियं आणाए अणुपालियं भवइ। एवं णायमुणिणा भगवया पण्णवियं परूवियं पसिद्धं सिद्धं सिद्धवरसासणमिणं आघवियं सुदेसियं पसत्थं। त्ति बेमि॥

॥ चउत्थं संवरदारं समत्तं॥

१५३. इस प्रकार ब्रह्मचर्यव्रतरूप यह सवरद्वार सम्यक् प्रकार से संवृत और सुरक्षित–पालित होता है। मन, वचन और काय, इन तीनो योगो से परिरक्षित इन (पूर्वोक्त) पाँच भावनारूप कारणो से सदैव, आजीवन यह योग धैर्यवान् और मतिमान् मुनि को पालन करना चाहिए। यह सवरद्वार आस्रव से रहित है, मलिनता से रहित है और भावछिद्रो से रहित है। इससे कर्मो का आस्रव नही होता। यह सक्लेश से रहित है, शुद्ध है और सभी तीर्थकरो द्वारा अनुज्ञात है।

इस प्रकार यह चौथा सवरद्वार स्पृष्ट–विधिपूर्वक अगीकृत, पालित, शोधित–अतिचार–त्याग से निर्दोष किया गया, पार–किनारे तक पहुँचाया हुआ, कीर्तित–दूसरो को उपदिष्ट किया गया, आराधित और तीर्थंकर भगवान की आज्ञा के अनुसार अनुपालित होता है, ऐसा ज्ञात वश मे उत्पन्न मुनि भगवान (महावीर) ने कहा है, युक्तिपूर्वक समझाया है। यह प्रसिद्ध–जगद्विख्यात है, प्रमाणो से सिद्ध है। यह भवस्थित सिद्धो–अर्हन्त भगवानो का शासन है। सुर, नर आदि की परिषद् मे उपदिष्ट किया गया है और मगलकारी है। जैसा मैने भगवान से सुना, वैसा ही मै (सुधर्मा स्वामी) कहता हूँ।

॥ चतुर्थ संवरद्वार समाप्त॥

विवेचन : इस प्रकार मन–वचन–काया को परिरक्षित करने पर यह चौथा ब्रह्मचर्य रूप सवरद्वार सम्यक् प्रकार से सुरक्षित हो जाता है और धैर्यवान विवेकवान साधक जब इसकी पाचो भावनाओ का निरन्तर प्रयोग करता रहता है तो ब्रह्मचर्य उसके मूल सस्कारो मे जम जाता है। इस प्रकार सुगम्य व्याख्या सहित यह चतुर्थ ब्रह्मचर्य सवरद्वार पूर्ण होता है।

153. In this manner this Samvar Dvar of the vow of Brahmacharya is practiced properly It remains well guarded mentally, vocally and physically due to the above-said five sentiments. A perseverant and intelligent monk should always practice it throughout his life This gateway of Samvar is free from inflow of Karmas (asrava). It is free from dirt and fluctuations or pollution of thoughts It does not cause inflow of Karma It is free from all disturbances It is pure and all the Tirthankars have propounded it

Thus the fourth gateway of Samvar is properly accepted, followed, experimented and have been made faultless by avoiding deviations It leads to the other end It is taught to others and accepted by them It is followed as ordered by Tirthankars Bhagavan Mahavir and logically taught It is famous and prominent in the world It has been proved logically It is the order of the omniscient It has been preached in the assembly of celestial beings and human beings I have narrated it as I heard it from Bhagavan Mahavir

Thus this fourth Samvar Dvar, Brahamacharya, is properly secured through mind, speech and body When the aspirant regularly employes this five sentiments with patience and sagacity, it is established within his intrinsic attitude Here concludes this fourth Samvar Dvar, Brahmacharya, with easy to comprehend elaboration

• FOURTH SAMVAR GATEWAY CONCLUDED •

पंचम अध्ययन : परिग्रहत्याग
FIFTH CHAPTER : DISCARDING PARIGRAHA (ATTACHMENT)

शास्त्रकार ने चौथे सवरद्वार अब्रह्मचर्य विरमण व्रत के पश्चात् अपरिग्रह संवरद्वार का निरूपण किया है। क्योकि सर्वथा परिग्रह के परित्याग के पश्चात् ही ब्रह्मचर्य व्रत का पालन हो सकता है। अत सूत्रक्रम के अनुसार यहा परिग्रह विरति रूप पचम सवर द्वार की व्याख्या की जा रही है।

According to the order laid down in scriptures, Samvar of non-attachment has been narrated after Samvar of chastity (brahmcharya) Avoidance of mating (or sex) has been mentioned earlier which is possible only if attachment is discarded So now Samvar in the form of avoidance of attachment is going to be described.

उत्क्षेप INTRODUCTION

१५४. जंबू ! अपरिग्गहसंवुडे य समणे आरंभ–परिग्गहाओ विरए, विरए कोह–माण–माया–लोहा।

एगे असंजमे। दो चेव रागदोसा। तिण्णि य दंडा, गारवा य, गुत्तीओ तिण्णि, तिण्णि य विराहणाओ। चत्तारि कसाया झाण–सण्णा–विकहा तहा य हुंति चउरो। पंच य किरियाओ समिइ–इंदिय–महव्वयाइं च। छज्जीवणिकाया, छच्च लेसाओ। सत्त भया। अट्ठ य मया। णव चेव य बंभचेर–वयगुत्ती। दसप्पगारे य समणधम्मे। एग्गारस य उवासगाणं। बारस य भिक्खुपडिमा। तेरस किरियाठाणा य। चउद्दस भूयगामा। पण्णरस परमाहम्मिया। गाहा सोलसया। सत्तरस असंजमे। अट्ठारस अबंभे। एगुणवीसइ णायज्झयणा। वीसं असमाहिट्ठाणा। एगवीसा य सवला य। बावीसं परिसहा य। तेवीसए सूयगडज्झयणा। चउवीसविहा देवा। पण्णवीसाए भावणा। छब्बीसा दसाकप्पववहाराणं उद्देसणकाला। सत्तावीसा अणगारगुणा। अट्ठावीसा आयारकप्पा। एगुणतीसा पावसुया। तीसं मोहणीयट्ठाणा। एगतीसाए सिद्धाइगुणा। बत्तीसा य जोगसंग्गहे। तित्तीसा आसायणा।

एक्काइयं करित्ता एगुत्तरियाए वुड्ढीए तीसाओ जाव उ भवे तिगाहिया विरइपणिहीसु य एवमाइसु बहुसु ठाणेसु जिणपसत्थेसु अवितहेसु सासयभावेसु अवट्ठिएसु संकं कंखं णिराकरित्ता सद्दहए सासणं भगवओ अणियाणे अगारवे अलुद्धे अमूढमणवयणकायगुत्ते।

१५४. श्री सुधर्मा स्वामी अपने शिष्य श्री जम्बू स्वामी को सम्बोधित करते हुए कहते है–हे जम्बू! जो मूर्च्छा–ममत्वभाव से रहित है, इन्द्रियसवर तथा कषायसवर से युक्त है एव आरम्भ–परिग्रह से तथा क्रोध, मान, माया और लोभ से रहित है, वही श्रमण या साधु होता है।

१ परिग्रह का एक भेद असंयम है।

२ सक्षेप विवक्षा से बन्धन दो प्रकार के है-(१) रागबन्धन और (२) द्वेषबन्धन।

३ मन-वचन-काया के भेद से दण्ड तीन है-(१) मनोदण्ड, (२) वचनदण्ड, (३) कायदण्ड। गौरव तीन है-(१) ऋद्धिगौरव, (२) रसगौरव, (३) सातागौरव। गुप्ति तीन प्रकार की है-(१) मनोगुप्ति, (२) वचनगुप्ति, (३) कायगुप्ति। विराधना तीन प्रकार की है-(१) ज्ञान की, (२) दर्शन की, और (३) चारित्र की।

४ कषाय चार है-(१) क्रोध, (२) मान, (३) माया, (४) लोभ। ध्यान चार है-(१) आर्त्त, (२) रौद्र, (३) धर्म और (४) शुक्ल। सज्ञा चार प्रकार की है-(१) आहारसज्ञा, (२) भयसज्ञा, (३) मैथुनसज्ञा, (४) परिग्रहसज्ञा। विकथा चार प्रकार की है-(१) स्त्रीकथा, (२) भोजनकथा, (३) राजकथा, (४) देशकथा।

५ क्रियाएँ पाँच है-(१) कायिकी, (२) आधिकरणिकी, (३) प्राद्वेषिकी, (४) पारितापनिकी, (५) प्राणातिपातिकी। समितियाँ पाँच है-(१) ईर्यासमिति, (२) भाषासमिति, (३) एषणासमिति, (४) आदान-निक्षेपणसमिति, (५) परिष्ठापनिकासमिति। इन्द्रियाँ पाँच है-(१) स्पर्शनेन्द्रिय, (२) रसनेन्द्रिय, (३) घ्राणेन्द्रिय, (४) चक्षुरिन्द्रिय (५) श्रोत्रेन्द्रिय। महाव्रत पाँच है-(१) अहिंसामहाव्रत, (२) सत्यमहाव्रत, (३) अस्तेयमहाव्रत, (४) ब्रह्मचर्यमहाव्रत, (५) अपरिग्रह महाव्रत

६ जीवनिकाय अर्थात् ससारी जीवो के छह समूह-वर्ग है-(१) पृथ्वीकाय, (२) अप्काय, (३) तेजस्काय, (४) वायुकाय, (५) वनस्पतिकाय, (६) त्रसकाय। लेश्याएँ छह है-(१) कृष्णलेश्या, (२) नीललेश्या, (३) कापोतलेश्या, (४) तेजोलेश्या, (५) पद्मलेश्या, (६) शुक्ललेश्या।

७ भय सात प्रकार के है-(१) इहलोकभय, (२) परलोकभय, (३) आदानभय, (४) अकस्मात्भय, (५) आजीविकाभय, (६) अपयशभय, (७) मृत्युभय।

८ मद आठ है-(१) जातिमद, (२) कुलमद, (३) बलमद, (४) रूपमद, (५) तपमद, (६) लाभमद, (७) श्रुतमद, (८) ऐश्वर्यमद।

९ ब्रह्मचर्य की नौ गुप्तियाँ है-(१) विविक्तशयनासनसेवन, (२) स्त्रीकथावर्जन, (३) स्त्रीयुक्त आसन का परिहार, (४) स्त्री के रूपादि के दर्शन का त्याग, (५) स्त्रियो को श्रृंगारमय, करुण तथा हास्य आदि सम्बन्धी शब्दो के श्रवण का परिवर्जन, (६) पूर्वकाल मे भोगे हुए भोगों के स्मरण का वर्जन, (७) इन्द्रिय दर्पकारक स्वादिष्ट गरिष्ठ पदार्थों का सेवन न करना, (८) अति मात्रा में आहार का त्याग, और (९) शरीर को विभूषित न करना।

१० श्रमणधर्म दस है-(१) खति-क्षमा, (२) मुक्ति-निर्लोभता, (३) आर्जव-निष्कपटता-ऋजुता, (४) मार्दव-मृदुता-नम्रता, (५) लाघव-उपधि की अल्पता, (६) सत्य, (७) सयम, (८) तप, (९) त्याग, और (१०) ब्रह्मचर्य।

११ श्रावक की प्रतिमाएँ ग्यारह है-(१) दर्शन, (२) व्रत, (३) सामायिक, (४) पौषध, (५) कायोत्सर्ग, (६) ब्रह्मचर्य, (७) सचित्तत्याग, (८) आरम्भत्याग, (९) प्रेष्यप्रयोगत्याग, (१०) उद्दिष्टत्याग, और (११) श्रमणभूत।

१२ भिक्षु-प्रतिमाएँ बारह है। वे इस प्रकार है-

मासाई सत्तंता पढमा बिय तिय सत्त राइदिणा।
अहराइ एगराई भिक्खू पडिमाण बारसगं॥

अर्थात् एकमासिकी, द्विमासिकी, त्रिमासिकी से लेकर सप्तमासिकी तक की सात प्रतिमाएँ सात-सात अहोरात्र की आठवीं, नौवी और दसवी, एक अहोरात्र की, ग्यारहवीं और बारहवी प्रतिमा एक रात्रि की (विशेष विवरण दशाश्रुतस्कन्धसूत्र से जानना चाहिए)।

१३ क्रियास्थान तेरह है, जो इस प्रकार है-

अट्ठाऽणट्ठाहिंसाऽकम्हा दिट्ठी य मोसऽदिन्ने य।
अज्झप्पमाणमित्ते मायालोभेरिया वहिया॥

अर्थात् (१) अर्थदण्ड, (२) अनर्थदण्ड, (३) हिसादण्ड, (४) अकस्मात्दण्ड, (५) दृष्टिविपर्यासदण्ड, (६) मृषावाद दण्ड, (७) अदत्तादानदण्ड, (८) अध्यात्म दण्ड, (९) मानदण्ड, (१०) मित्रद्वेषदण्ड, (११) मायादण्ड, (१२) लोभदण्ड, और (१३) ऐर्यापथिकदण्ड। (इनका विशेष विवेचन सूत्रकृताग आदि सूत्रो से जान लेना चाहिए।)

१४ भूतग्राम अर्थात् जीवो के चौदह समास समूह है, जो इस प्रकार है-(१) सूक्ष्म एकेन्द्रिय पर्याप्तक, (२) सूक्ष्म एकेन्द्रिय अपर्याप्तक, (३) बादर एकेन्द्रिय पर्याप्तक, (४) बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्तक, (५) बेइन्द्रिय पर्याप्तक, (६) बेइन्द्रिय अपर्याप्तक, (७) त्रीन्द्रिय पर्याप्तक, (८) त्रीन्द्रिय अपर्याप्तक, (९) चतुरिन्द्रय पर्याप्तक, (१०) चतुरिन्द्रिय अपर्याप्तक, (११) पचेन्द्रिय असज्ञी पर्याप्तक, (१२) पचेन्द्रिय असज्ञी अपर्याप्तक, (१३) पचेन्द्रिय सज्ञी पर्याप्तक (१४) पचेन्द्रिय सज्ञी अपर्याप्तक।

१५ नारक जीवो को, तीसरे नरक तक जाकर पीडा देने वाले असुरकुमार देव परमाधार्मिक कहलाते है। वे पन्द्रह प्रकार के है-(१) अम्ब, (२) अम्बरीष, (३) श्याम, (४) शबल, (५) रौद्र, (६) महारौद्र, (७) काल, (८) महाकाल, (९) असिपत्र, (१०) धनु, (११) कुभ, (१२) बालुक, (१३) वैतरणिक, (१४) खरस्वर, और (१५) महाघोष। (इनके द्वारा उत्पन्न की जाने वाली यातनाओ का वर्णन प्रथम आस्रवद्वार मे आ गया है।)

१६ जिसमें गाथा नामक १६वाँ अध्ययन है, ऐसे सूत्र कृतागसूत्र के प्रथम श्रुतस्कन्ध मे सोलह अध्ययन है। उनके नाम ये है-(१) समय, (२) वैतालीय, (३) उपसर्गपरिज्ञा, (४) स्त्रीपरिज्ञा, (५) नरकविभक्ति, (६) वीरस्तुति, (७) कुशीलपरिभाषित, (८) वीर्य, (९) धर्म, (१०) समाधि, (११) मार्ग, (१२) समवसरण, (१३) यथातथ्य, (१४) ग्रन्थ, (१५) यमकीय, और (१६) गाथा।

१७ असयम के १७ भेद है। वे इस प्रकार है– (१) पृथ्वीकाय-असयम, (२) अप्काय-असयम, (३) तेजस्काय-असयम, (४) वायुकाय-असयम, (५) वनस्पतिकाय-असयम, (६) द्वीन्द्रिय-असयम, (७) त्रीन्द्रिय-असयम, (८) चतुरिन्द्रिय-असयम, (९) पचेन्द्रिय-असयम, (१०) अजीव-असयम, (११) प्रेक्षा-असयम, (१२) उपेक्षा-असयम, (१३) परिस्थापनिका-असयम, (१४) अप्रमार्जन-असयम, (१५) मन-असयम, (१६) वचन-असयम, और (१७) काय-असयम।

पृथ्वीकाय आदि नौ प्रकार के जीवो की यतना न करना, इनका आरम्भ करना और मूल्यवान वस्त्र, पात्र, पुस्तक आदि अजीव वस्तुओ को ग्रहण करना, जीव-अजीव-असयम है। धर्मोपकरणो की यथाकाल यथाविधि प्रतिलेखना न करना प्रेक्षा-असयम है। सयम-कार्यो मे प्रवृत्ति न करना और असयमयुक्त कार्य मे प्रवृत्ति करना उपेक्षा-असयम है। मल-मूत्र आदि का शास्त्रोक्त विधि के अनुसार प्रतिष्ठापन न करना-त्यागना परिस्थापनिका-असयम है। वस्त्र-पात्र आदि उपधि का विधिपूर्वक प्रमार्जन नही करना अप्रमार्जन-असयम है। मन को प्रशस्त चिन्तन मे नही लगाना या अप्रशस्त चिन्तन मे लगाना मानसिक-असयम है। अप्रशस्त या मिथ्या अथवा अर्ध-मिथ्या वाणी का प्रयोग करना वचन-असयम है और काय से सावद्य व्यापार करना काय-असयम है।

१८ अब्रह्म-अब्रह्मचर्य के अठारह प्रकार ये है–

ओरालिय च दिव्व, मण-वय-कायाण करण-जोगेहिं।
अणुमोयण- कारावण- करणेणट्ठारसाऽबभ॥

अर्थात् औदारिक शरीर द्वारा मन, वचन और काया से काम भोग का सेवन करना, कराना और अनुमोदना करना ये ९ औदारिक अब्रह्मचर्य है तथा इसी प्रकार वैक्रिय शरीर द्वारा मन, वचन, काया से अब्रह्म का सेवन करना, कराना और अनुमोदन करना ये वैक्रिय अब्रह्म सेवन है। दोनो के सम्मिलित भेद अठारह होते है।

१९ ज्ञाताधर्मकथाग सूत्र के १९ अध्ययन है। वे इस प्रकार है-(१) उत्क्षिप्त, (२) सघाट, (३) अण्ड, (४) कूर्म, (५) शैलकऋषि, (६) तुम्ब, (७) रोहिणी, (८) मल्ली, (९) माकन्दी, (१०) चन्द्रिका, (११) दावदव (इस नाम के वृक्षो का उदाहरण), (१२) उदक, (१३) मण्डूक, (१४) तेतलि, (१५) नन्दिफल, (१६) अपरकका, (१७) आकीर्ण, (१८) सुषमा, और (१९) पुण्डरीक।

२० बीस असमाधिस्थान इस प्रकार है-(१) **द्रुतचारित्व**-सयम की उपेक्षा करके जल्दी-जल्दी चलना, (२) **अप्रमार्जितचारित्व**-भूमि आदि का प्रमार्जन किये बिना उठना, बैठना, चलना आदि। (३) **दुष्प्रमार्जितचारित्व**-विधिपूर्वक भूमि आदि का प्रमार्जन किये बिना बैठना-चलना, (४) **अतिरिक्त शय्यासनिकत्व**-मर्यादा से अधिक आसन या शय्या स्थान ग्रहण करना, (५) **रात्निकपरिभाषित्व**-अपने से बडे आचार्यादि का विनय न करना, अविनय करना, (६) **स्थविरोपघातित्व**-दीक्षा, आयु और श्रुत से स्थविर मुनियो के चित्त को किसी व्यवहार से पीडा पहुँचाना, (७) **भूतोपघातित्व**-जीवो का घात करना, (८) **संज्वलनता**-बात-बात मे क्रोध करना या ईर्ष्या की अग्नि से जलना, (९) **क्रोधतत्व**-क्रोधशील होना,

(१०) **पृष्ठिमांसकत्व**-पीठ पीछे किसी की निन्दा करना, (११) **अभीक्ष्णमवधारकता**-सदेह युक्त बात को भी निश्चयकारी भाषा मे कहना, (१२) नये-नये कलह उत्पन्न करना, (१३) शान्त हो चुके पुराने कलह को नये सिरे से जागृत करना, (१४) सचित्तरज वाले हाथ, पैर वाले दाता से आहार लेना। (१५) अकाल मे स्वाध्याय करना, (१६) कलहोत्पादक कार्य करना, बाते करना या उनमें भाग लेना, (१७) रात्रि मे ऊँचे स्वर से बोलना, शास्त्रपाठ करना, (१८) **झंझाकरत्व**-गण, सघ या गच्छ मे फूट उत्पन्न करने या मानसिक पीडा उत्पन्न करने वाले वचन बोलना, (१९) सूर्योदय से सूर्यास्त तक भोजन करते रहना, (२०) एषणासमिति के अनुसार आहार की गवेषणा आदि न करना और दोष बतलाने पर झगडना।

२१ शबलदोष-चारित्र को कलुषित करने वाले दोष और जिस कार्य से चारित्र की निर्मलता नष्ट हो, शबलदोष कहे गये है। वे इक्कीस है, जो सक्षेप मे इस प्रकार है-(१) हस्तकर्म करना, (२) अतिक्रम, व्यतिक्रम और अतिचार रूप मे मैथुनसेवन करना, (३) अतिक्रमादि रूप से रात्रि मे भोजन करना, (४) आधाकर्मी आहारादि सेवन, (५) शय्यातर के आहार का सेवन करना, (६) औद्देशिक, क्रीतादि दोषो वाला आहार करना, (७) त्यागे हुए अशन आदि का उपयोग करना, (८) छह महीने के भीतर एक गण का त्याग कर दूसरे गण मे जाना, (९) एक मास मे तीन बार नाभि तक गहरे पानी मे उतरना, (१०) एक मास मे तीन बार मायाचार करना, (११) राजपिण्ड का सेवन करना, (१२) सकल्पपूर्वक प्राणियो की हिंसा करना, (१३) सकल्पपूर्वक मृषावाद करना, (१४) सकल्पपूर्वक अदत्तादान करना, (१५) जान-बूझकर सचित्त भूमि पर कायोत्सर्ग करना, (१६) जान-बूझकर गीली, रज सहित भूमि पर, सचित्त शिला पर या घुन वाले काष्ठ पर सोना-बैठना, (१७) बीजो तथा जीवो से युक्त अन्य किसी स्थान पर बैठना, (१८) जान-बूझकर कन्दमूल का सेवन करना, (१९) एक वर्ष मे दस बार नाभिप्रमाण जल मे अवगाहन करना, (२०) एक वर्ष मे दस बार माया का सेवन करना, और (२१) बारम्बार सचित्त जल से लिप्त हाथ आदि से आहारादि ग्रहण करना।

२२ परीषह-सयम-जीवन मे होने वाले कष्ट, जिन्हे समभावपूर्वक सहन करके साधु कर्मो की विशिष्ट निर्जरा करता है। ये बाईस परीषह इस प्रकार है-

खुहा पिवासा सीउण्हं, दंसा चेलऽरई-त्थिओ।
चरिया निसीहिया सेज्जा, अक्कोसा वह जायणा॥

अलाभ-रोग-तणफासा, मल-सक्कार परीसहा।
पण्ण अण्णाण सम्मत्तं, इय बावीस परीसहा॥

अर्थात् (१) क्षुधा (भूख), (२) पिपासा-प्यास, (३) शीत-ठण्ड, (४) उष्ण (गर्मी), (५) दश-मशक (डास-मच्छरो द्वारा सताया जाना), (६) अचेल (निर्वस्त्रता या अल्प एव फटे-पुराने वस्त्रो का कष्ट), (७) अरति-सयम मे अरुचि, (८) स्त्री, (९) चर्या, (१०) निषद्या, (११) शय्या-उपाश्रय, (१२) आक्रोश, (१३) वध-मारा-पीटा जाना, (१४) याचना, (१५) अलाभ-लेने की इच्छा होने पर भी आहार आदि आवश्यक वस्तु का न मिलना, (१६) रोग, (१७) तृणस्पर्श-ककर-काँटा आदि की

चुभन, (१८) जल्ल-मल को सहन करना, (१९) सत्कार-पुरस्कार-आदर होने पर अहकार और अनादर की अवस्था मे विषाद होना, (२२) प्रज्ञा-विशिष्ट बुद्धि का अभिमान, (२१) अज्ञान-विशिष्ट ज्ञान के अभाव मे खेद का अनुभव, और (२२) अदर्शन। इन बाईस परीषहो पर विजय प्राप्त करने वाला सयमी विशिष्ट निर्जरा का भागी होता है।

२३ सूत्रकृताग-अध्ययन-प्रथम श्रुतस्कन्ध के पूर्वलिखित सोलह अध्ययन और द्वितीय श्रुतस्कन्ध के सात अध्ययन मिलकर तेईस होते है। द्वितीय श्रुतस्कन्ध के सात अध्ययन ये है-(१) पुण्डरीक, (२) क्रियास्थान, (३) आहारपरिज्ञा, (४) प्रत्याख्यानक्रिया, (५) अनगारश्रुत, (६) आर्द्रकुमार, और (७) नालन्दा।

२४ चार निकाय के देवो के चौबीस भेद है-१० भवनवासी, ८ वाणव्यन्तर, ५ ज्योतिष और सामान्यत १ वैमानिक। मतान्तर से मूल पाठ मे आये 'देव' शब्द से देवाधिदेव अर्थात् तीर्थंकर समझना चाहिए, जिनकी सख्या चौबीस प्रसिद्ध है।

२५ भावना-पाँच महाव्रतो की पच्चीस भावनाये होती है।

२६ उद्देशक-दशाश्रुतस्कन्ध के १०, बृहत्कल्प के ६ और व्यवहारसूत्र के १० उद्देशक मिलकर छब्बीस उद्देशक है।

२७ साधु के मूल गुण सत्ताईस है-५ महाव्रत, ५ इन्द्रियो का निग्रह, ४ क्रोधादि कषायो का त्याग, भावसत्य, करणसत्य, योगसत्य, क्षमा, विरागता, मन का, वचन का और काय का निरोध, ज्ञानसम्पन्नता, दर्शनसम्पन्नता, चारित्रसम्पन्नता, वेदनादि सहन और मारणान्तिक उपसर्ग का सहन।

२८ प्रकल्प-आचार प्रकल्प २८ प्रकार का होता है। यहाँ आचार का अर्थ है-आचारागसूत्र के दोनो श्रुतस्कन्धो के अध्ययन, जिनकी सख्या पच्चीस है और प्रकल्प का अर्थ है-निशीथसूत्र के तीन अध्ययन-उद्घातिक, अनुद्घातिक और आरोपणा। ये सब मिलकर २८ है।

२९ पापश्रुतस्कन्ध के २९ भेद इस प्रकार है-(१) भौम, (२) उत्पात, (३) स्वप्न, (४) अन्तरिक्ष, (५) अग, (६) स्वर, (७) लक्षण, (८) व्यजन। इन आठ प्रकार के निमित्तशास्त्रो के सूत्र, वृत्ति और वार्तिक के भेद से २४ भेद हो जाते है। इनमे विकथानुयोग, विद्यानुयोग, मत्रानुयोग, योगानुयोग और अन्यतीर्थिक प्रवृत्तानुयोग-इन पाँच को सम्मिलित करने पर पापश्रुत के उनतीस भेद होते है। मतान्तर से अन्तिम पाँच पापश्रुतो के स्थान पर गन्धर्व, नाट्य, वास्तु, चिकित्सा और धनुर्वेद का उल्लेख भी मिलता है।

३० मोहनीय-अर्थात् मोहनीयकर्म के बन्धन के तीस स्थान-कारण इस प्रकार है-(१) जल मे डुबाकर त्रस जीवो की घात करना, (२) हाथ आदि से प्राणियो के मुख, नाक आदि बन्द करके मारना, (३) गीले चमडे की पट्टी कसकर मस्तक पर बाँधकर मारना, (४) मस्तक पर मुद्गर आदि का प्रहार करके मारना, (५) श्रेष्ठ पुरुष की हत्या करना, (६) शक्ति होने पर भी दुष्ट परिणाम के कारण रोगी की सेवा न करना, (७) तपस्वी साधक को बलात् धर्मभ्रष्ट करना, (८) अन्य के सम्यग्दर्शनादि मोक्षमार्ग रूप

शुद्ध परिणामो को विपरीत रूप मे परिणत करके उसका अपकार करना, (९) जिनेन्द्र भगवान की निन्दा करना, (१०) आचार्य-उपाध्याय की निन्दा करना, (११) ज्ञानदान आदि से उपकारक आचार्य आदि का उपकार न मानना एव उनका यथोचित सम्मान न करना, (१२) पुन.-पुन राजा के प्रयाण के दिन आदि का कथन करना, (१३) वशीकरणादि का प्रयोग करना, (१४) परित्यक्त भोगो की कामना करना, (१५) बहुश्रुत न होने पर भी अपने को बहुश्रुत कहना, (१६) तपस्वी न होकर भी अपने को तपस्वी के रूप मे विख्यात करना, (१७) मनुष्य या अन्य जीवो को घर मे बन्द करके आग लगाकर मार डालना, (१८) अपने पाप को पराये सिर मढना, (१९) मायाजाल रचकर जनसाधारण को ठगना, (२०) अशुभ परिणामवश सत्य को भी सभा मे-बहुत लोगो के समक्ष-असत्य कहना, (२१) बारबार कलह-लडाई-झगडा करना, (२२) विश्वास मे लेकर दूसरे का धन हडप जाना, (२३) विश्वास उत्पन्न कर परकीय स्त्री को अपनी ओर आकृष्ट करना-लुभाना, (२४) कुमार-अविवाहित न होने पर भी अपने को कुमार कहना, (२५) अब्रह्मचारी होकर भी अपने को ब्रह्मचारी कहना, (२६) जिसकी सहायता से वैभव प्राप्त किया उसी उपकारी के द्रव्य पर लोलुपता करना, (२७) जिसके निमित्त से ख्याति अर्जित की उसी के काम मे विघ्न डालना, (२८) राजा, सेनापति अथवा इसी प्रकार के किसी राष्ट्रपुरुष का वध करना, (२९) देवादि का साक्षात्कार न होने पर भी साक्षात्कार-दिखाई देने की बात कहना, और (३०) देवो की अवज्ञा करते हुए स्वय को देव कहना। इन कारणो से मोहनीयकर्म का बन्ध होता है।

३१ सिद्धादिगुण-सिद्ध भगवान मे आदि से अर्थात् सिद्धावस्था के प्रथम समय से ही उत्पन्न होने वाले या विद्यमान रहने वाले गुण सिद्धादिगुण कहलाते है अथवा सिद्धो के आत्यन्तिक गुण। ये इकतीस है-(१-५) मतिज्ञानावरणीय आदि पाँच प्रकार के ज्ञानावरणीय कर्म का क्षय, (६-१४) नौ प्रकार के दर्शनावरण का क्षय, (१५-१६) सातावेदनीय-असातावेदनीय का क्षय, (१७) दर्शनमोहनीय का क्षय, (१८) चारित्रमोहनीय का क्षय, (१९-२२) चार प्रकार के आयुष्यकर्म का क्षय, (२३-२४) दो प्रकार के गोत्रकर्म का क्षय, (२५-२६) शुभनामकर्म और अशुभ नामकर्म का क्षय, (२७-३१) पाँच प्रकार के अन्तराय कर्म का क्षय। इस प्रकार ८ कर्मो की ३१ प्राकृतियो के क्षय रूप, गुण सिद्ध को प्रथम समय मे ही प्राप्त हो जाते है।

अथवा सिद्धो के इकतीस गुण इस प्रकार भी होते है-पाँच सस्थानो, पाँच वर्णों, पाँच रसो, दो गन्धो, आठ स्पर्शो और तीन वेदो (स्त्रीवेद-पुरुषवेद-नपुसकवेद) से रहित होने के कारण २८ गुण तथा अकायता, असगता और अरूपित्व, ये तीन गुण सम्मिलित कर देने पर सब ३१ गुण होते हैं।

३२ योगसग्रह-मन, वचन और काय की प्रशस्त प्रवृत्तियो का सग्रह योगसग्रह कहलाता है। यह बत्तीस प्रकार का है-(१) आलोचना-आचार्यादि के समक्ष शिष्य द्वारा अपने दोष को यथार्थ रूप से भली भांति यथा तथ्य रूप में प्रकट करना, (२) निरपलाप-शिष्य द्वारा प्रकट किये हुए दोषो को आचार्यादि किसी अन्य के समक्ष प्रकट न करे, (३) आपत्ति आ पडने पर भी धर्म मे दृढता रखना, (४)

बिना किसी का सहारा लिए तपश्चर्या करना, (५) आचार्यादि से सूत्र और उसके अर्थ आदि को ग्रहण करना, (६) शरीर का श्रृगार न करना, (७) अपनी तपश्चर्या या उग्र क्रिया को प्रकाशित न करना, (८) निर्लोभ होना, (९) कष्ट-सहिष्णु होना-परीषहो को समभाव से सहन करना, (१०) आर्जव-सरलता-निष्कपटभाव होना, (११) सत्य होना, (१२) दृष्टि सम्यक् रखना, (१३) समाधि-चित्त को समाहित रखना, (१४) पाँच प्रकार के आचार का पालन करना, (१५) विनीत होकर रहना, (१६) धैर्यवान् होना-धर्मपालन मे दीनता का भाव न उत्पन्न होने देना, (१७) सवेगयुक्त रहना, (१८) प्रणिधि अर्थात् मायाचार न करना, (१९) समीचीन आचार-व्यवहार, (२०) सवर-ऐसा आचरण करना जिससे कर्मो का आस्रव रुक जाये, (२१) आत्मदोषोपसहार-अपने मे उत्पन्न होने वाले दोषो का निरोध करना, (२२) कामभोगो से विरत रहना, (२३) मूलगुणो सम्बन्धी प्रत्याख्यान करना, (२४) उत्तरगुणो से सम्बन्धित प्रत्याख्यान करना-विविध प्रकार के नियमो को अगीकार करना, (२५) व्युत्सर्ग-शरीर, उपधि तथा कषायादि का उत्सर्ग करना-त्यागना, (२६) प्रमाद का परिहार करना, (२७) प्रतिक्षण समाचारी का पालन करना, (२८) ध्यानरूप सवर की साधना करना, (२९) मारणान्तिक कष्ट के अवसर पर भी चित्त मे क्षोभ न होना, (३०) विषयासक्ति से बचे रहना, (३१) अगीकृत प्रायश्चित्त का निर्वाह करना या दोष होने पर प्रायश्चित्त लेना, और (३२) जीवन की अन्तिम घडियो के समय सलेखना करके अन्तिम आराधना करना।

३३ आशातनाये निम्नलिखित है-(१) शैक्ष-नवदीक्षित या अल्प दीक्षापर्याय वाले साधु का रात्निक-अधिक दीक्षापर्याय वाले साधु के बराबर चलना। (२) शैक्ष का रात्निक साधु के आगे-आगे गमन करना। (३) शैक्ष का रात्निक के अति निकट चलना। (४) शैक्ष का रात्निक के आगे खडा होना। (५) शैक्ष का रात्निक के साथ बराबरी से खडा होना। (६) शैक्ष का रात्निक के अति निकट खडा होना। (७) शैक्ष का रात्निक के साथ बराबरी से बैठना। (८) शैक्ष का रात्निक के आगे बैठना। (९) शैक्ष का रात्निक के अति समीप बैठना। (१०) शैक्ष का रात्निक के साथ स्थडिलभूमि जाना और रात्निक से पहले ही शौच-शुद्धि कर लेना। (११) शैक्ष का रात्निक के साथ विचारभूमि या विहारभूमि जाना और रात्निक से पहले ही आलोचना कर लेना। (१२) कोई व्यक्ति दर्शनादि के लिए आया हो और रात्निक के बात करने से पहले ही शैक्ष द्वारा बात करना। (१३) रात्रि मे रात्निक के पुकारने पर जागता हुआ भी न बोले। (१४) आहारादि लाकर पहले अन्य साधु के समक्ष आलोचना करे, बाद मे रात्निक के समक्ष। (१५) आहारादि लाकर पहले अन्य साधु को और बाद मे रात्निक साधु को दिखलाना। (१६) आहारादि के लिए पहले साधुओ को निमन्त्रित करना और बाद मे रत्नाधिक को। (१७) रत्नाधिक से पूछे बिना अन्य साधुओ को आहारादि देना। (१८) रात्निक साधु के साथ आहार करते समय मनोज्ञ, सरस वस्तु अधिक एव जल्दी-जल्दी खाये। (१९) रत्नाधिक के पुकारने पर उनकी बात अनसुनी करना। (२०) रत्नाधिक के कुछ कहने पर अपने स्थान पर बैठे-बैठे सुनना और उत्तर देना। (२१) रत्नाधिक के कुछ कहने पर 'क्या कहा?' इस प्रकार पूछना। (२२) रत्नाधिक के प्रति 'तू, तुम' ऐसे तुच्छतापूर्ण शब्दो का व्यवहार करना। (२३) रत्नाधिक के प्रति कठोर शब्दो का प्रयोग करे,

उद्दण्डतापूर्वक बोले, अधिक बोले। (२४) 'जी हाँ' आदि शब्दो द्वारा रात्निक की धर्मकथा का अनुमोदन न करना। (२५) धर्मकथा के समय रात्निक को टोकना, 'आपको स्मरण नही' इस प्रकार के शब्द कहना। (२६) धर्मकथा कहते समय रात्निक को 'बस करो' इत्यादि कहकर कथा समाप्त करने के लिए कहना। (२७) धर्मकथा के अवसर पर परिषद् को भग करने का प्रयत्न करे। (२८) रात्निक साधु धर्मोपदेश कर रहे हो, सभा-श्रोतागण उठे न हो, तब दूसरी-तीसरी बार वही कथा कहना। (२९) रात्निक धर्मोपदेश कर रहे हो तब उनकी कथा का काट करना या बीच मे स्वय बोलने लगना। (३०) रात्निक साधु की शय्या या आसन को पैर से ठुकराना। (३१) रत्नाधिक के समान-बराबरी पर आसन पर बैठना। (३२) रत्नाधिक के आसन से ऊँचे आसन पर बैठना। (३३) रत्नाधिक के कुछ कहने पर अपने आसन पर बैठे-बैठे ही उत्तर देना। इन आशातनाओ से मोक्षमार्ग की विराधना होती है, अतएव ये वर्जनीय हैं।

सुरेन्द्र बत्तीस है-भवनपतियो के २०, वैमानिको के १० तथा ज्योतिष्को के २ चन्द्रमा और सूर्य। (इनमे एक नरेन्द्र अर्थात् चक्रवर्ती को सम्मिलित कर देने से ३३ सख्या की पूर्ति हो जाती है।)

एक से प्रारम्भ करके क्रमश एक-एक की वृद्धि करते हुये तीन अधिक तीस अर्थात् तेतीस सख्या हो जाती है। इन सब सख्या वाले पदार्थों मे तथा इसी प्रकार के अन्य पदार्थों मे, जो जिनेश्वर द्वारा प्ररूपित है तथा शाश्वत अवस्थित और सत्य है, किसी प्रकार की शका या काक्षा न करके हिंसा आदि से निवृत्ति करनी चाहिए एव विशिष्ट एकाग्रता धारण करनी चाहिए। इस प्रकार निदान, ऋद्धि आदि के गौरव-अभिमान से दूर रहकर, अलुब्ध-निर्लोभ होकर तथा मूढता त्यागकर जो अपने मन, वचन और काय को सयम मे रखता हुआ भगवान महावीर के शासन पर श्रद्धा करता है, वही साधु परिग्रह त्यागी होता है, वही वास्तव मे साधु है।

विवेचन · मूल पाठ मे अन्तरग परिग्रह के एक से तैतीस बोल दिये गये हैं। इन्हे ही अन्तरग परिग्रह मानकर प्रतिपादित किया गया है। इन तैतीस बोलो मे वीतराग देव ने जो भी हेय, समझकर विवेकपूर्वक-अमूढभाव से प्रवृत्ति करनी चाहिए। साधु को इन्द्रादि पद की या भविष्य के भोगादि की आकाक्षा से रहित, निरभिमान, अलोलुप और सवरमय मन, वचन, काय वाला होना चाहिए। सोना-चादी, मकान वस्त्र, पात्र आदि वस्तुये ही परिग्रह नही हैं। अपितु परिग्रह का एक अतरंग रूप भी है जो बाह्य परिग्रह से कई गुना ज्यादा भयकर है। देखा जाय तो वास्तव मे परिग्रह का जन्मस्थान ही अन्तर्मन है। बाह्य परिग्रह तो अंतरंग परिग्रह का निमित्त रूप होने के कारण ही परिग्रह कहलाता है। इसलिये शास्त्रकार ने मूल पाठ मे आभ्यन्तर परिग्रह के एक से लेकर तैतीस बोलो का वर्णन किया है और इन्हें ही अन्तरग परिग्रह मानकर प्रतिपादित किया है। इन तैतीस बोलो मे से हेय, ज्ञेय और उपादेय का विवेक करके साधक को विवेक पूर्वक अमूढभाव से प्रवृत्ति करनी चाहिये। साधु को इन्द्रादि पद को या भविष्य के भोगादि की आकाक्षा से रहित निरभिमान, अलोलुप और सवरमय मन, वचन, काय वाला होना चाहिए।

154. Addressing his disciple Jambu Swami, Sudharma said—O Jambu ! One who is devoid of the thought of attachment who has

control over his senses and passions, who is away from activities involving violence to living beings and attachment, and who is without anger, greed, ego and deceit, he is true monk.

(1) Non-restraint is generally of one type as it is due to the non-detachment in one's nature

(2) Bondage is of two types namely—(i) bondage due to attachment, (ii) bondage due to hatred

(3) Punishment (dand) is of three types—(i) Ill thoughts in mind, (ii) bad words, (iii) bad activity

Egoist blemish is of three types—(1) ego of wealth, (ii) ego of enjoyments, and (iii) ego of happiness

Gupti (Control) is of three types—(i) of mind, (ii) of words, and (iii) of activities of the body

Disobedience is of three types—(i) of knowledge, (ii) of faith, (iii) of conduct

(4) Passions are four namely anger, ego, deceit, greed Thought concentration is of four types—(i) in sorrow, (ii) in anger, (iii) in dharma, (v) in purity (Shukla dhyan) Natural instinct (Sanjna) is of four types—(i) for food, (ii) of fear, (iii) for mating, (iv) for attachment to collections Ignoble talk is of four types—(i) about women, (ii) about food, (iii) about state, (iv) about the country

(5) (a) Activity is of five types—(i) natural movement, (ii) using a weapon, (iii) arising out of hatred, (iv) causing trouble, and (v) causing damage to life force

(b) Care (alertness) is of five types—(i) in movement, (ii) in speech, (iii) in collection of alms, (iv) in taking and placing things, (v) in dispersing things

(c) Sense organs are five—(1) Sense of touch, (ii) of taste, (iii) of smell, (iv) of sight, and (v) of hearing

(d) Major vows are five—(i) non-violence, (ii) truth, (iii) non-stealing, (iv) chastity, (v) non-attachment

(6) (a) Living beings are of six types—(i) earth-bodied, (ii) water-bodied, (iii) air-bodied, (iv) fire-bodied, and (v) plant-bodied living beings

(b) Soul complexions (leshyas) are of six types—(i) Dark, (ii) blue, (iii) grey, (iv) bright, (v) red like lotus, and (vi) purely white

(7) Fear is of seven types—(i) from person of same class, (ii) from living beings of other class, (iii) from loss of source of livelihood, (iv) of sudden event, (v) loss, (vi) of damage to reputation, and (vii) of death

(8) Ego is of eight types—(i) of caste, (ii) of family, (iii) of power, (iv) of beauty, (v) of austerities, (vi) of gains, (vii) of knowledge of scripture, and (viii) of wealth

(9) Precautions about chastity (brahmcharya) are nine namely—(i) aloof bed, (ii) avoiding talk about women, (viii) avoiding seat common with woman, (iv) avoiding looking at women, (v) avoiding listening to words of compassion or laughter of ladies, (vi) recalling sensual enjoyment of the past, (vii) avoiding rich food, (viii) avoiding over eating and (ix) avoiding beautification of the body.

(10) Conduct of monk is of ten types—(i) Benevolence, (ii) non-greediness, (iii) simplicity, (iv) humility, (v) a few articles of use, (vi) truth, (vii) self-restraint, (viii) austerities, (ix) detachment, and (x) chastity or celibacy

(11) There are eleven special austerities (pratima) of a householder devotee namely—In respect of (1) faith, (2) austerities, (3) sitting continuous in state of equanimity (Samayik) for 48 minutes, (4) fast for 24 hours in place of worship, (5) meditation, (6) chastity (brahmcharya), (7) avoiding that which contains life, (8) avoiding that which involves violence, (9) avoiding, (10) avoiding that which is prepared specifically for monk, (11) to lead life almost like a monk

(12) There are twelve special austerities of a monk The first seven are practiced for one month, two, three, four, five, six and seven months respectively, eighth, ninth and tenth are of 24 hours each, while the eleventh and twelfth are of one night each There detailed description can be seen in Dashashrut Skandh Sutra.

(13) There are thirteen activities that generate sin (Kriya Sthan) They are sinful activities committed—(i) with a purpose, (ii) without purpose, (iii) involving violence, (iv) suddenly, (v) by pruned look, (vi) by falsehood, (vii) by stealing, (viii) by wrong interpretation, (ix) by egoistic

attitude, (x) by hatred towards friend, (xi) by deceit, (xii) by greed and (xiii) by movement with proper care

(14) The living beings are of fourteen class—(1) subtle fully formed one-sensed living beings, (2) subtle partially formed one-sensed beings, (3) gross fully formed one-sensed beings, (4) gross partially formed one-sensed beings, (5) two-sensed fully formed being, (6) two-sensed partially formed beings, (7) three-sensed fully formed beings, (8) three-sensed partially formed beings, (9) four-sensed fully formed ones, (10) four-sensed partially formed ones, (11) five-sensed fully formed having no mind, (12) five-sensed partially formed without mind, (13) five-sensed fully developed having mind, (14) five-sensed partially developed having mind

(15) There are fifteen types of demon gods who torture hellish beings upto third hell They are—(1) Umb, (2) Umbareesh, (iii) Shyam, (iv) Shabal, (v) Raudra, (vi) Uparaudra, (viii) Kaal, (viii) Mahakaal, (ix) Asipatra, (x) Dhanu, (xi) Kumbh, (xii) Valuk, (xiii) Vaitarnik, (xiv) Khar Svar, (xv) Mahaghosh The tortures given by them are mentioned in first Asrava Dvar.

(16) There are sixteen chapters in Sutra Kritanga wherein the sixteenth chapter is Gatha They are (i) Samaya, (ii) Vaitaliya, (iii) Upasarg Parijna, (iv) Stri Parijna, (v) Narak Vibhakti, (vi) Veer Stuti, (vii) Kusheel Paribhashit, (viii) Virya, (ix) Dharma, (x) Samadhi, (xi) Marg, (xii) Samvasaran, (xiii) Yathatathya, (xiv) Granth, (xv) Yamakiya, (xvi) Gatha.

(17) Non-restraint is of seventeen types namely non-restraint about—(i) earth-bodied living being, (ii) water-bodied, (iii) fire-bodied, (iv) air-bodied, (v) plant-bodied, (vi) two-sensed, (vii) three-sensed, (viii) four-sensed and (ix) five-sensed living being, (x) non-living beings, (xi) discrimination, (xii) discarding, (xiii) disposal, (xiv) not cleaning, (xv) mind, (xvi) speech and (xvii) body

Not to have proper care about nine types of living being such as earth-bodied and the like, causing violence to them, to collect costly clothes, pots, books and the like non-living things is non-restraint of living being and of non-living beings respectively. Not to properly look into the articles used in ascetic conduct at desired intervals is non-

restraint in discrimination (Preksha) Not to engage in acts of restraint and to engage in acts of non-restraint is non-restraint in discarding Not to dispose stool, urine and the like according to the code in scriptures is non-restraint in disposal Not to clean pots clothes and the like according to code is non-restraint in non-cleaning. Not to engage mind in noble thoughts or to engage in bad thoughts is non-restraint of mind To utter speech which is partially true or wrong or bad is non-restraint about speech To engage body in acts involving violence is non-restraint of body.

(18) Non-chastity is of eighteen type—To engage mentally, vocally and physically in non-chastity by doing, getting done and appreciating through physical body and through fluid body. The total comes to eighteen.

(19) There are nineteen chapters in Jnata Dharma Katha Sutra namely—(1) Utkshipt, (2) Sanghaat, (3) Und (egg), (4) Koorm (tortoise), (5) Shailak rishi, (6) Tumb, (7) Rohini, (8) Malli, (9) Makandi, (10) Chandrika, (11) Davadav (a tree), (12) Udak, (13) Mandook, (14) Tetali, (15) Nandiphal, (16) Aparkanka, (17) Aakeern, (18) Sushma, (19) Pundarik

(20) Activities causing non-equanimity are twenty namely—(1) To walk quickly ignoring self-restraint, (2) To sit, move or get up without properly cleaning the place, (3) To clean the place carelessly, (4) To keep beds and seats more than necessary, (5) Not to be humble to seniors like acharya, (6) Cause pain to monks senior in age, initiation or learning, (7) To kill living beings, (8) To be angry over petty matters, (9) To remain in anger, (10) To backbite, (11) To use words with firmness even when in doubt, (12) To escate new quarrels, (13) To re-start quarrel that had pacified, (14) To accept food from a donor whose hand or feet are full of dust that contains living beings, (15) To study at prohibited time, (16) To do acts that produce quarrel, to talk about such matters or to participate in them, (17) To speak loudly at night, (18) To utter such words that cause friction in the group, class or organisation, (19) To go on taking food from sunrise to sunset, (20) Not to seek alms according the code and to quarrel when fault is pointed out.

(21) Serious fault that adversely affect the ascetic conduct are twenty one. In brief they are—(1) To engage in masturbation, (2) To engage in

sex transgressing the code once, once in a while or regularly, (3) To transgress the vow of not having meals at night in the same way, (4) To accept faulty food when it is prepared for monk, (5) To take food from the person who has provided place of stay, (6) To take food prepared specifically for the monk or purchased for him, (7) To have food which has been descarded, (8) To leave ones group of monks within six months, (9) To move in navel deep water three times in a month, (10) To indulge in deceitful conduct three times in a month, (11) To have food from royal family, (12) To cause violence to living beings intentionally, (13) To utter lie intentionally, (14) To steal intentionally, (15) To sit intentionally at a place containing living beings for meditation, (16) To sit or sleep intentionally on wet land, slab containing living beings or wood that has insects, (17) To sit at a place when seed, or living beings are there, (18) To eat roots intentionally, (19) To move in navel deep water ten times in a year, (20) To have deceitful behaviour ten times in a year, (21) To accept food again and gain with hands containing animated water

(22) There are twenty two troubles arising in monkhood which a monk bears calmly in order to destroy his karmas They are trouble due to—(1) hunger, (2) thirst, (3) cold, (4) heat, (5) mosquito bite, (6) nakedness or little clothing, (7) lack of interest in ascetic life, (8) women, (9) movement, (10) sitting, (11) place of stay, (12) threatening, (13) beating, (14) begging, (15) not getting desired thing in meals, (16) illness, (17) pricking of thorn or stone, (18) dust on body, (19) arising of ego when receiving respect, (20) ego of special knowledge, (21) dejection due to lack of knowledge, (22) lack of faith or wrong faith

One who overcomes the said twenty two troubles sheds his karmas

(23) There are twenty three chapters of Sutra Kritang—Sixteen chapters in Part I already mentioned at number 16 above and seven chapters in Part II which are—(1) Pundarik, (2) Kriyasthaan, (3) Ahaar Parijna, (4) Pratyakhyan Kriya, (5) Anagar Shrut, (6) Ardra Kumar, and (7) Nalanda

(24) There are twenty four types in all of four categories of gods namely—(1) ten gods residings in bhavans, (2) eight vaanvyantar gods, (3) five jyotish gods, and (4) one vaimanik gods In another interpretation there are twenty-four Tirthankars.

(25) There are twenty five sentiments—five each of every major vow.

(26) Twenty six lessons—ten of Dashashrut Skandh, six of Brihata Kalp and ten of Vyavahar Sutra totalling seventy six lessons

(27) Twenty seven basic virtues of a monk—Five major vows, control of 5 senses, discarding four passions, truth in contemplation, truth in act, truth in behaviour (yoga), benevolence, detachment, control over mind, speech and body, to have knowledge, perception and ascetic conduct, to tolerate pain, to tolerate unexpected trouble at the time of death

(28) Twenty eight lessons about ascetic conduct—twenty five chapters of the two parts of Acharanga Sutra, three chapters of Nisheeth Sutra

(29) Twenty nine types of derogating literature texts about—(1) earth, (2) lightening, (3) dreams, (4) astronomy, (5) limbs of body, (6) voice, (7) symptoms in body, (8) special marks on human body Eight such texts, then commentaries (Vrittis), explanatory notes (Vaartik) Thus totally twenty four Engaging in worldly stories, worldly knowledge, worldly mantras, worldly activities and activities of persons of other faiths

In another interpretation, the last five in the above-mentioned para are substituted with texts about gandharva music, drama, architecture, medical treatment and archery

(30) Thirty activities that cause, bondage of delusion—(1) To kill by drowning mobile living beings, (2) To kill by closing mouth or nostril with hand, (3) To kill by binding forehead with wet leather tightly, (4) To hit forehead with a thick rod, (5) To kill a noble person, (6) Not to attend to a sick person due to evil thoughts, (7) To lead an ascetic astray from monkhood austerities forcibly, (8) To pollute a person by turning one away from the right path leading to salvation, (9) To criticise the omniscient, (10) Condemning the Acharya or Upadhyaya, (11) Not to realise gratitude of the acharya and others who have imparted scriptural knowledge, (12) To talk again and again about the death of the king, (13) To use mantra for subduing a person, (14) To have lust for sensual pleasure that had been discarded earlier, (15) To call oneself a scholar while actually it is not so. (16) To call oneself as ascetic practicing austerities while it is not so, (17) To shut many persons in a house and then set it on fire, (18) To levy one's sins on another person, (19) To cheat

others by deceitful means, (20) To call a true thing as false with polluted mind, (21) To quarrel again and again, (22) To usurp other's property by taking him in confidence, (23) To attract others wife by taking her in confidence, (24) To call oneself as unmarried although he is married, (25) To call oneself as celibate while he is not so, (26) To be greedy about the wealth of the person who had benefited him, (27) To cause obstruction to the person who had helped him in becoming famous, (28) To kill king, army chief or suchlike important person, (29) To pretend that he is seeing celestial beings while actually it is not so, (30) To call oneself as god, thus undermining gods

(31) The qualities which are in Siddhas (Omniscients without physical body) right from the moment they attain this state or the unique qualities of Siddhas are thirty one They are—(1-5) Destruction of five types of Karmas that cause obstruction to knowledge, (6-14) To destroy nine types of Karmas that adversely affect right perception, (15-16) Destroying Karmas that provide mundane pleasure and pain, (17) To destroy Karma that cause delusion in thought, 18) To destroy Karma that cause delusion in conduct, (19-22) Destroying four types of age-determining Karma, (23-24) Destroying two types of status determining Karma, (25-26) Destroying two types of name-determining Karma, (27-31) Destroying five types of Karmas that cause obstruction in attaining good results

In another form the thirty one qualities are—to be devoid of five forms, five colours, five tastes, two smells, eight touches and three genders These total up as twenty eight To be without a body, without attachment and without any tangible form. Thus the qualities are thirty one

(32) There are thirty two clones of good activities of mind, speech and body namely—(1) To admit ones fault before the Acharya and the like, (2) Acharya's action is not disclosing the faults mentioned by his disciple to another person, (3) Remaining firm in Dharma at the time of difficulty, (4) To practice austerities without any one's support, (5) To learn scriptures and their interpretation from the Acharya and the like, (6) Not to beautify the body, (7) Not to publicise one's hard austerities, (8) To be non-greedy, (9) To bear trouble with equanimity, (10) To remain

free from crookedness, (11) To be truthful, (12) To have right perception, (13) To keep heart in a state of equanimity, (14) To practice five types of ascetic conduct, (15) To be humble, (16) Not to allow frustration to creep in practice of dharma, (17) To have strong desire for liberation (Samvega), (18) Not to be deceitful, (19) To behave according to the code, (20) To act in such a manner that stops inflow of Karma, (21) To stop the faults arising in oneself, (22) To become detached from sensual pleasures, (23) To take vow about basic qualities, (24) To take vow regarding secondary qualities, (25) To discard attachment toward body, property and passions, (26) To avoid slackness, (27) To practice code of conduct of an ascetic every moment, (28) To practice meditation, (29) Not to feel dejected even at the time of deadly pain, (30) To avoid attachment to senses, (31) To undergo meticulously the punishment awarded, (32) To observe Sanlekhna when one is nearing death

(33) There are thirty three transgressions in ascetic conduct—(1) Very close movement of nearly initiated monk with senior monk, (2) His moving ahead the senior monk, (3) His moving adjoining the senior monk, (4) His standing before the senior monk, (5) His standing beside the senior monk, (6) His standing very close to the senior monk, (7) His sitting beside the senior monk, (8) His sitting ahead of senior monk, (9) His sitting very close to the senior monk, (10) While going for call of nature, to be free ahead of the Senior monk, (11) While going with senior monk, to repent for faults earlier to the senior monk, (12) To talk to a visitor before he talks to the senior monk, (13) To remain silent even when awake at night while being called by the senior monk, (14) To express repentance about fault before other monk prior to doing it before senior monk after returning from collection of offerings, (16) To invite other monks for food before inviting the senior monks, (17) To give food to other monks without seeking permission from the senior monk, (18) To eat food of his taking hurriedly while jointly having meals with the senior monk, (19) To ignore the call of the senior monk, (20) To listen the call from one's seat and to reply from there itself, (21) To ask the senior monk what have you said, when he asks something, (22) To address senior monks like junior, (23) To use harsh words towards seniors, (24) Not to approve the talk of the seniors with words 'Yes Sir',

(25) To disturb the senior monk during his lecture by saying 'you don't remember it properly', (26) To ask senior monk to stop the lecture, (27) To disperse the assembly during the lecture of senior monk, (28) To repeat something which the senior monk had said during the talk of the senior so that the audience may disperse, to repeat it twice and thrice if public does not disperse, (29) To speak during the lecture of the senior monk thus causing disturbance, (30) To sit by the side of senior monk like the senior monk, (31) Sit on seat higher than that of the senior monk, (32) To remain sitting at one's seat even if the senior monk says otherwise, (33) To reply from one's seat the question asked by the senior monk

Such transgressions adversely affect the ascetic conduct. They should, therefore, he discarded

The figures 33 can be arrived at by totalling Indras—20 of Bhavanpati gods, 10 of Vaimanik gods, 2 of Jyotishk gods and one Chakravarti

The Above said is what the Tirthankars have stated They are permanent and true So one should have full faith in them He should not have any lurking doubt about them Considering them properly, he should avoid violence He should adopt them meticulously in his conduct Thus becoming free from any mundane desire of the result of such conduct, keeping himself away from the ego of wealth, status and others, avoiding greed and ignorance, he should control his mind, speech and action One who has such a faith, he is the real monk

Elaboration—The text is quite clear It has been interpreted wherever necessary to explain its meaning The purpose is that the Tirthankar has clearly classified what one should discard, what one should invite in his life and what one should know It is all perfectly true, there is no reason for having any doubt in them So one should completely avoid what is to be discarded, he should invite in life what is to be practiced and he should keep in mind with clear sense of discrimination what is to be known A monk should not have any desire for the post of Indra and the like and of world enjoyments in future He should not have ego or greed. He should stop inflow of Karma mentally, vocally and physically

१५५. जो सो वीरवर-वयण-विरइ-पवित्थरबहुविहप्पयारो सम्मत्त-विसुद्धमूलो धिइकंदो विणयवेइओ णिग्गय-तेल्लोक्क-विउलजस-णिविड-पीण-पवरसुजायखंधो पंचमहव्वय-विसालसालो भावणतयंत-ज्झाण-सुहजोग-णाणपल्लववरंकुरधरो बहुगुणकुसुमसमिद्धो सील-सुगंधो अणण्हवफलो पुणो य मोक्खबरबीजसारो मंदगिरि-सिहर-चूलिआ इव इमस्स मोक्खवर-मुत्तिमग्गस्स सिहरभूओ संवरवर-पायवो चरिमं संवरदारं।

१५५. श्री भगवान महावीर के वचनो से कही हुई अनेक प्रकार से परिग्रह निवृत्ति ही उस अपरिग्रह वृक्ष का विस्तार फैलाव है। यह आगे कहा जाने वाला जो अन्तिम परिग्रह विरति अपरिग्रह वृत्तिरूप सवरद्वार का सवर श्रेष्ठ वृक्ष है। सम्यग्दर्शन इसका विशुद्ध-निर्दोष मूल है। धृति-चित्त की स्थिरता इसका कन्द यानि स्कन्ध से नीचे का भाग है। विनय ही इसकी वेदिका-चारो ओर का परिकर है। तीनो लोको मे फैला हुआ विपुल यश इसका घना, स्थूल, महान् और सुनिर्मित स्कन्ध (तना) है। पाँच महाव्रत इसकी विशाल शाखाएँ है। अनित्यता, अशरणता आदि भावनाएँ इस सवर वृक्ष की त्वचा है तथा वह धर्मध्यान, शुभयोग तथा ज्ञानरूपी अकुरो को धारण करने वाला है। निर्लोभता आदि शुभफल प्रद अनेक गुणो रूपी फूलो से यह समृद्ध है। यह शील की सुगन्ध से युक्त है और यह सुगन्ध इह लौकिक फलनिरपेक्ष सदाचार या सत्प्रवृत्ति रूप है। यह सवरवृक्ष अनास्रव-कर्मास्रव के निरोधरूप फलो वाला है। मोक्ष ही इसका उत्तम बीजसार-मीजी है। यह मेरु पर्वत के शिखर पर चूलिका के समान मोक्ष-कर्मक्षय के निर्लोभतास्वरूप मार्ग का शिखर है। इस प्रकार का अपरिग्रह रूप उत्तम सवरद्वाररूपी जो वृक्ष है, वह अन्तिम सवरद्वार है।

155. Bhagavan Mahavır has narrated ın detaıl ın thıs order that one should dıscard hıs attachment to worldly possessıons Thıs ıs that tree what stops ınflow of Karma (Samvar tree) Thıs ıs the last gateway of Samvar and ıs ın many forms (as mentıoned earlıer) Rıght faıth ıs ıts pure faultless base Perseverance or stabılıty of the mınd ıs ıts Kand (off-shoot) Humılıty ıs ıts gırth The ımmense respect and fame ıs thıck, grand, well-buılt trunk Fıve major vows are ıts large branches, sentıments lıke transıtory nature ıs the skın of thıs samvar tree It contaıns buds ın the form of medıtatıon on dharma, merıtorıous actıvıtıes and scriptural knowledge It ıs full of ınnumerable specıal qualitıes It has the fragrance of chastıty. Since that fragrance is free from ımmedıate or expected reward, ıt ıs a good conduct Thıs Samvar tree has fruıts ın the form of stoppage of ınflow of Karmas The essence of ıts seed ıs lıberatıon Just as there ıs the Chulıka at the tap of Meru mountaın, ıt has the top clımax of the path of non-greedıness Thus the last gateway of Samvar tree ıs non-attachment for possessions.

१५६. जत्थ ण कप्पइ गामागर-णगर-खेड-कब्बड-मडंब-दोणमुह-पट्टणासमगयं च किंचि अप्पं वा बहुं वा अणुं वा थूलं वा तसथावरकायदव्वजायं मणसा वि परिघेत्तुं, ण हिरण्णसुवण्णखेत्तवत्थुं, ण दासी-दास-भयग-पेस-हय-गय-गवेलगं व, ण जाण-जुग्ग-सयणासणाइ, ण छत्तगं, ण कुंडिया, ण उवाणहा, ण पेहुण-वीयण-तालियंटगा, ण यावि अय-तउय-तंब-सीसग-कंस-रयय-जायरूव-मणिमुत्ताहार-पुडग-संख-दंत-मणि-सिंग-सेल-काय-वरचेल-चम्मपत्ताइं महरिहाइं, परस्स अज्झोववाय-लोहजणणाइं परियड्ढेउं गुणवओ, ण यावि पुप्फ-फल-कंद-मूलाइयाइं सणसत्तरसाइं सव्वधण्णाइं तिहिं वि जोगेहिं परिघेत्तुं ओसह-भेसज्ज-भोयणट्टयाए संजएणं।

किं कारणं ?

अपरिमियणाणदंसणधरेहिं सील-गुण-विणय-तव-संजमणायगेहिं तित्थयरेहिं सव्वजगज्जीव-वच्छलेहिं तिलोयमहिएहिं जिणवरिंदेहिं एस जोणी जंगमाण दिट्ठा। ण कप्पइ जोणिसमुच्छेओ त्ति तेण वज्जंति समणसीहा।

१५६. जिस अपरिग्रह वृत्ति रूप अन्तिम सवर द्वार मे गाँव, खान, नगर, खेट, कर्बट, मडब, बन्दरगाह, पत्तन अथवा आश्रम मे रहा हुआ कोई भी पदार्थ हो, चाहे वह अल्पमूल्य वाला हो या बहुमूल्य हो, प्रमाण मे छोटा हो अथवा बडा हो, वह भले त्रसकाय-शख आदि हो या स्थावरकाय-रत्न आदि हो, उस द्रव्यसमूह को मन से भी ग्रहण करना उचित नही है, अर्थात् उसे ग्रहण करने की इच्छा करना भी योग्य नही है। चाँदी, सोना, क्षेत्र (खुली भूमि), वास्तु (मकान-दुकान आदि) भी ग्रहण करना नही कल्पता। दासी, दास, भृत्य-नियत वृत्ति पाने वाला सेवक, प्रेष्य-सन्देश ले जाने वाला सेवक, घोडा, हाथी, बैल आदि भी ग्रहण करना नही कल्पता। यान-रथ, गाडी आदि, युग्य-डोली आदि, शयन आदि और छत्र-छाता आदि भी ग्रहण करना नही कल्पता, न कमण्डलु, न जूता, न मोरपीछी, न पखा, न ताड का पखा-ग्रहण करना कल्पता है तथा लोहा, राँगा, ताँबा, सीसा, काँसा, चाँदी, सोना, मणि और मोती का आधार सीपसम्पुट, शख, उत्तम दाँत, सीग, शैल-पाषाण (या पाठान्तर के अनुसार लेस अर्थात् श्लेष द्रव्य), उत्तम काँच, वस्त्र और चर्मपात्र-इन सबको भी ग्रहण करना उचित नही है। ये सब बहुमूल्य वस्तुये दूसरे के मन मे ग्रहण करने की इच्छा उत्पन्न करती है, इसी तरह की बहुमूल्य वस्तुओ का ग्रहण करना, झपट लेना अथवा उसकी वृद्धि या रक्षा करना मूल गुण आदि से सुशोभित अपरिग्रही साधु के लिये उचित नही है। और न ही सयमी साधु को औषध, भैषज्य (अनेक प्रकार की वस्तुओ से बनी हुई दवा) तथा भोज्य के लिये फूल, फल, कद और मूल आदि को, तथा जिनमे १७वा धान्य सन है, ऐसे १७ प्रकार के सभी धान्यो-अनाजो का तीन योग-मन वचन काया से ग्रहण करना ठीक नही है।

ग्रहण नही करने का क्या कारण है ?

अनन्त ज्ञान और दर्शन के धारक, शील-(सदाचार या समाधि), मूल गुण-अहिंसा आदि, विनय, तप और संयम के नायक, जगत् के समस्त प्राणियो पर वात्सल्य धारण करने वाले, तीनो लोको के पूजनीय, तीर्थंकर जिनेन्द्र देवों ने अपने केवलज्ञान से देखा है कि ये पुष्प, फल आदि त्रस जीवो की योनि-उत्पत्तिस्थान है। योनि का विनाश करना कल्पता नही है। इसी कारण श्रमणसिह-उत्तम मुनि सचित वस्तुओ को भोजनादि कार्य मे लेना वर्जित करते है।

156. An article is lying in a village, a shop, a town, a kheda, a karbat, a mandab, a harbour, a port or in an ashram It may be costly or of a little value It may be small or large. It may consist of mobile living things such as conch shell or it may consist of immobile living being such as jewel A monk should not even mentally desire to have it It is not desirable for him to have silver, gold, open land, house. It is not desirable for him to possess chariot, cart, palanquin, bed, umbrella, bucket, broom of pea-cock feathers, fan or a fan of palm leaves He is not allowed to have servants, maids, employees, regular messenger, horse, elephant and bullocks He should not have iron, copper, bronze, glass, conch shells from which pearls and precious stones are derived, the unique tusk, horns, lacquor producing stone, beautiful mirror, clothes, skin-cloth, in his alms Such precious articles create a deep desire in the mind to possess them They produce attachment They produce a desire to increase them and carefully keep them So when people see them lying at a place, they have a desire to pick them up. They have an attraction to possess them They want to keep them safely and to increase their quantity But a monk is not allowed to have them Similarly flower, fruit, root and the like have living organism So suchlike things should not be taken by a monk as he has discarded all the attachment for possessions. He should not mentally, vocally or physically accept such medicines or food

What are the causes for not accepting such things ? Tirthankars have unlimited knowledge and perception They have immense peace in their heart. They have qualities of non-violence humility, austerity. They are the founders of code of self-restraint. They have compassion for all the living being. They are worshipped in all the three words. They have seen in their perfect knowledge that flowers, fruit and mobile livings generate from their place of birth. It is not proper to destroys their place of germination So the excellent monks discard flowers, fruit and the like

विवेचन · प्रस्तुत पाठ में शास्त्रकार ने अपरिग्रही साधु के लिये साफ-साफ कहा है कि ग्राम, आकर, नगर, निगम आदि किसी भी बस्ती मे कोई भी वस्तु पडी हो तो उसे ग्रहण नहीं करनी चाहिए। इतना ही नही, साधु का मन इस प्रकार सधा हुआ होना चाहिए कि उसे ऐसे किसी पदार्थ को ग्रहण करने की इच्छा ही न हो। ग्रहण न करना एक बात है, वह साधारण साधना का फल है, किन्तु ग्रहण करने की अभिलाषा ही उत्पन्न न होना उच्च साधना का फल है। मुनि का मन इतना समभावी, मूर्च्छाविहीन एव नियन्त्रित रहे कि वह किसी भी वस्तु को कही भी पडी देखकर न ललचाये। जो स्वर्ण, रजत, मणि, मोती आदि बहुमूल्य वस्तुएँ अथवा अल्प मूल्य होने पर भी सुखकर-आरामदेह वस्तुएँ दूसरे को मन मे लालच उत्पन्न करती है, मुनि उन्हे उपेक्षा की दृष्टि से देखे। उसे ऐसी वस्तुओ को ग्रहण करने की अभिलाषा ही न हो।

Elaboration—It has been clarly stated ın thıs aphorısm that a monk should not pıck up any artıcle lyıng ın a vıllage, town, colony and the lıke as he has dıscarded all the attachment for possessıons Even the mınd of the monk should be traıned ın such a manner that he should not have any desıre for them Not to have a thıng ıs the result of general practıce of monkhood but not to have any desıre even ın the mınd for ıt, ıs the result of ascetıc practıce of a hıgh order The mınd of a monk should be ın such a state of equanımıty, control and free from attachment that he should not be greedy to have anythıng lyıng at any place, he should ıgnore ıt He should not have even the slıghtest desıre to have ıt Lıve flowers, fruıt, root and the lıke are the places helpful ın generatıng mobıle lıvıng beıngs So ıt ıs not desırable that a monk should destroy them. So he always avoıds to have such thıngs

सन्निधि-त्याग DISCARDING COLLECTION OF POSSESSION

१५७. जं पि य ओयणकुम्मास-गंज-तप्पण-मंथु-भुज्जिय-पलल-सूव-सक्कुलि-वेढिम-वरसरकचुण्ण-कोसग-पिंड-सिहरिणि-वट्ट-मोयग-खीर-दहि-सप्पि-णवणीय-तेल्ल-गुड-खंड-मच्छंडिय-महु-मज्ज-मंस-खज्जग-वंजण-विहिमाइयं पणीयं उवस्सए परघरे व रण्णे ण कप्पइ तं वि सण्णिहिं काउं सुविहियाणं।

१५७. और जो भी पके हुये चावल, उडद या थोडे उबाले मूँग आदि गज-एक प्रकार का भोज्य पदार्थ, तर्पण-सत्तू, मथु-बोर आदि का चूर्ण-आटा, भूजी हुई धानी-लाई, पलल-तिल के फूलो का पिष्ट, सूप-दाल, शष्कुली-तिलपपडी, वेष्टिम-जलेबी, इमरती आदि, वरसरक नामक भोज्य वस्तु, चूर्णकोश-खाद्य विशेष, गुड आदि का पिण्ड, शिखरिणी-दही मे शक्कर आदि मिलाकर बनाया गया भोज्य-श्रीखड, वट्ट-वडा, मोदक-लड्डू, दूध, दही, घी, मक्खन, तेल, खाजा, गुड, खाँड, मिश्री, मधु, मद्य, माँस और अनेक प्रकार के व्यजन-शाक, छाछ आदि वस्तुओ का उपाश्रय मे, अन्य किसी के घर मे अथवा अटवी मे सुविहित-परिग्रहत्यागी, सुव्रती साधुओ को सचय करना नही कल्पता है।

157. There are many articles of consumption such as a little boiled rice, urad and moong pulses, ganj, tarpan—barley powder used as food, manthu, baked corn, paste of sesame flowers, soup of pulses, sweats like jalebis, imaratis, varsarak, churan-kosh, jaggery, mixture of curd and sugar (Shrikhand), laddus, milk, curd, ghee, butter, oil, khaja, honey, wine, meat, many types of vegetarian dishes, whey and the like The monk should not store such articles in the upashray (place of stay) or in the house of anyone or in a hut since he has completely detached himself from attachment for possessions

विवेचन उपरोक्त पाठ मे खाद्य पदार्थो का नामोल्लेख किया गया है। तथापि सुव्रती साधु को इनका सचय करके रखना नही कल्पता है। कहा है–

बिडमुब्भेइयं लोणं, तेल्ल सप्पि च फाणियं।
ण ते सन्निहिमिच्छंति, नायपुत्तवए रया॥

अर्थात् जो ज्ञातपुत्र–भगवान महावीर के वचनो पर श्रद्धा करने वाले साधु है वे दोनो प्रकार के नमक, तिल, घी, तिल पपडी आदि अचित्त वस्तुयें भी सग्रह नही करते है।

सचय करने वाले साधु को शास्त्रकार ने गृहस्थ की कोटि मे रखा है। सचय करना गृहस्थ का कार्य है, साधु का नही। साधु तो पक्षी के समान वृत्ति वाले होते है। उन्हे यह चिन्ता नही होती कि कल आहार प्राप्त होगा अथवा नही ! ऐसी चिन्ता से ही सग्रह किया जाता है, किन्तु साधु तो लाभ–अलाभ मे समभाव वाला होता है। अलाभ की स्थिति को वह तपश्चर्या रूप लाभ का कारण मानकर लेशमात्र भी खेद का अनुभव नही करता। सग्रहवृत्ति से अन्य भी अनेक प्रकार के दोष उत्पन्न होने की सम्भावना रहती है। अतएव साधु को किसी भी भोज्य वस्तु का सग्रह करने का स्पष्ट निषेध किया गया है। परिग्रह–त्यागी मुनि के लिए यह सर्वथा अनिवार्य है।

Elaboration—In the above said aphorism the names of food-stuffs have been mentioned A monk should not store such articles as possessions for collection A monk should not keep in his collection salt, oil, ghee, til brick and other such like eatables Such is the order of Bhagavan Mahavir

The author has termed a monk who stores such things as one in the category of householder To store is the function of a householder and not of a monk A monk should live like a bird He should not worry whether he shall get the food on the following day or not A foodstuff is stored when there is a fear whether food can be got or not on the next day But a monk remains in a state of equanimity whether he gets anything or not He treats the period when he does not get anything in wanderings as that of austerity So he does not feel even slightly dejected at that

time Many other faults are likely to arise due to the habit of storage One can be slack if he collects food more than his actual need If he brings tasty food more in quantity and keeps, it in store, he shall lose control over his sense of taste. So a monk should not store any food article It is compulsory for every monk of the order

१५८. जं पि य उद्दिट्ठ-ठविय-रइयग-पज्जवजायं पकिण्णं पाउयरण-पामिच्चं मीसगजायं कीयगडं पाहुडं च दाणट्ठपुण्णपगडं समणवणीमगट्ठयाए वा कयं पच्छाकम्मं पुरेकम्मं णिइकम्मं मक्खियं अइरित्तं मोहरं चेव सयंगाहमाहडं मट्टिउवलित्तं, अच्छेज्जं चेव अणीसट्ठं जं तं तिहिसु जण्णेसु उस्सवेसु य अंतो वा बहिं वा होज्ज समणट्ठयाए ठवियं हिंसासावज्जसंपउत्तं ण कप्पइ तं पि य परिघेत्तुं।

१५८. तथा जो आहार साधु के लिये बनाया गया हो, अलग से रखा गया हो, चूरे को लड्डू जैसा रच कर साधु के लिये तैयार किया हो, पर्यवजात हो, प्रकीर्ण, प्रादुष्करण, प्रामित्य, मिश्रजात, क्रीतकृत, प्राभृत दोष वाला हो, जो दान के लिए या पुण्य के लिए बनाया गया हो, जो पाँच प्रकार के श्रमणो अथवा भिखारियो को देने के लिए तैयार किया गया हो, जो पश्चात्कर्म अथवा पुर:कर्म दोष से दूषित हो, जो नित्यकर्म-दूषित हो, जो म्रक्षित, अतिरिक्त मौखर, स्वयग्राह अथवा आहृत हो, मृत्तिकोपलिप्त, आच्छेद्य, अनिसृष्ट हो अथवा जो आहार मदनत्रयोदशी आदि विशिष्ट तिथियो मे यज्ञ और महोत्सवो मे, उपाश्रय के भीतर या बाहर साधुओ को देने के लिए रखा हो, जो हिंसा-सावद्य दोष से युक्त हो, ऐसा भी आहार साधु को लेना नही कल्पता है।

158. Further, the food that is uddeshak—the one specifically for the monk, it is kept for some monk (Sthapit), it is rachit—changed into another form for the purpose of offering it to the monk, all such food is prohibited for a monk

Further the offered food is paryawajaat—connected into another form for offering it to the monk It is prakeern—is being offered while it is dripping on the ground. It is pradushkarm—kept in the dark and is offered by bringing it in light It is pramitya—taken on credit for the purpose of a monk. It is mishrajaat—prepared jointly for monk and the householder. It is kreetakrit—prepared for the monk after purchasing it It is prabhrit—served to the monk after adding fuel to the fire or after taking out fuel from the burning fire. Such is the faulty food The food may be pashatakarm—faulty due to paschakarm activity after its offer or faulty due to the act immediately prior to its being offered It may be faulty due to nityakarm—offered out of food which is prepared for charity for collecting merit by offering to five types of monks, (namely

nigrandh, Shakya—the followers of Buddhist faith, those who practice service austerities, these who wear red clothes and those who are followers of Goshalak) or for beggars (Vanipakarti) It may be prakshit—offered with a hand or pot which has live water. It may be offered more than the need (atirikt). It may be maukharya—that which is got by talking more It may be svayangrah—that which is taken by the monk himself with his hand It may be aahrit—brought from the house or the village before the monk for offering It may be mrittikalip—plastered with earth It may be aachhaya—that which is offered after snatching from a weak person It may be anisrisht—that belonging to many persons jointly but offered without the consent of all of them. It may be prepared on special dates for yajna or particular functions It may be the one kept within or outside the place of stay of monks for offering to the monks It may be faulty due to violence involved in it. A monk should not accept any such a food

विवेचन पूर्व पाठ मे बताया गया है कि साधु को आपात्तकाल के लिये अचित्त आहार भी सग्रह करना नही कल्पता, क्योकि सचय परिग्रह है और यह अपरिग्रह धर्म से विपरीत है। इस पाठ मे बताया गया है कि भले ही आहार सचय के लिए न हो, तत्काल उपयोग के लिए हो, तथापि सूत्र मे उल्लिखित दोषो मे से किसी भी दोष से दूषित हो तो भी वह आहार, मुनि के लिए ग्राह्य नही है। इन दोषो का अर्थ इस प्रकार है-

उद्दिष्ट-साधु के लिए ही तैयार किया गया।

स्थापित-साधु के लिए अलग से रखा गया।

रचित-साधु के निमित्त मोदक के चूरे से पुन मोदक लड्डू बाधकर तैयार किया गया।

पर्यवजात-साधु को उद्देश्य करके एक भोज्य पदार्थ को दूसरे भोज्य पदार्थ के साथ मिलाकर रूपान्तर किया हुआ।

प्रकीर्ण-भूमि पर गिराते या टपकाते हुए दिया जाने वाला आहार।

प्रादुष्करण-अँधेरे मे रखे आहार को दीपक आदि जलाकर प्रकाश करके देना।

प्रामित्य-साधु के निमित्त उधार लेकर तैयार किया गया आहार।

मिश्रजात-साधु और गृहस्थ या अपने लिए सयुक्त रूप से बनाया गया आहार।

क्रीतकृत-साधु के निमित्त खरीदकर बनाया गया।

प्राभृत-साधु के आगमन की सम्भावना से मेहमानो को पहले या बाद में भोजन कराना।

दानार्थ-दान देने के लिए बनाया गया।

पुण्यार्थ-पुण्य के लिए बनाया गया।

श्रमणार्थ—श्रमण पाँच प्रकार के माने गये है—(१) निर्ग्रंथ, (२) बौद्धमतानुयायी, (३) तापस—तपस्या की विशेषता वाले, (४) गेरुक—गेरुआ वस्त्र धारण करने वाले, और (५) आजीविक—गोशालक के अनुयायी। इन पाचो प्रकार के श्रमणो के लिए बनाया गया आहार श्रमणार्थ कहलाता है।

वनीपकार्थ—याचक भिखारियो के अर्थ बनाया गया। टीकाकार ने वनीपक का पर्यायवाची शब्द 'तर्कुक' लिखा है।

पश्चात्कर्म—दान के पश्चात् सचित्त पानी से बर्तन धोना आदि सावद्य क्रिया वाला आहार।

पुर कर्म—दान से पूर्व सचित्त पानी से हाथ धोना आदि सावद्य कर्म वाला आहार।

नित्यकर्म—प्रतिदिन एक ही घर से लिया जाने वाला आहार।

म्रक्षित—सचित्त जल आदि से लिप्त हाथ अथवा पात्र से दिया जाने वाला आहार।

अतिरिक्त—प्रमाण से अधिक आहार।

मौखर्य—वाचालता—अधिक बोलकर प्राप्त किया जाने वाला।

स्वयंग्राह—दाता के अभाव मे स्वय अपने हाथ से लिया जाने वाला।

आहृत—अपने गाँव या घर से साधु के समक्ष लाया गया।

मृत्तिकालिप्त—मिट्टी, गोबर आदि से लिप्त हाथ से दिया आहार।

आच्छेद्य—निर्बल से जबरदस्ती छीनकर दिया जाने वाला।

अनिसृष्ट—दाता का अपने अधिकार का नही। अनेको के स्वामित्व की वस्तु उन सबकी अनुमति के बिना दी जाये।

उपरोक्त आहार सम्बन्धी दोषो मे से अनेक दोष उद्गम—उत्पादना सम्बन्धी दोषो मे गर्भित हैं। तथापि अधिक स्पष्टता के लिए यहाँ उनका भी निर्देश कर दिया गया है। पूर्वोक्त दोषो मे से किसी भी दोष से युक्त आहार सुविहित साधुओ के लिए निषिद्ध है।

Elaboration—In the earlier aphorism, it was mentioned that a monk should not store the food because storage represents attachment for possessions It is against the vow of non—attachment. In the present aphorism it has been established that even if the food being accepted by the monk is not for storage and it is for his immediate consumption, it is prohibited if it has any one of the faults mentioned in this aphorism. The meanings of each fault has bean clarified side by side

कल्पनीय भिक्षा **ACCEPTABLE OFFERING**

१५९. [प्र.] अह केरिसयं पुणाइ कप्पइ ?

[उ.] जं तं एक्कारस—पिंडवायसुद्धं किणण—हणण—पयण—कयकारियाणुमोयण— णवकोडीहिं

सुपरिसुद्धं, दसहि य दोसेहिं विप्पमुक्कं उग्गम–उप्पायणेसणाए सुद्धं, ववगय–चुयचवियचत्त–देहं च फासुयं ववगय–संजोग–मणिंगालं विगयधूमं छट्ठाण–णिमित्तं छक्कायपरिरक्खणट्ठा हणिं हणिं फासुएण भिक्खेणं वट्टियव्वं।

१५९. [प्र.] तो फिर किस प्रकार का आहार साधु के लिए लेना उचित है ?

[उ] जो आहारादि ग्यारह पिण्डैषणा से शुद्ध हो, अर्थात् आचारागसूत्र के द्वितीय श्रुतस्कन्ध के पिण्डैषणा नामक प्रथम अध्ययन के ग्यारह उद्देशको मे वर्णित दोषो से रहित हो वह साधु के लिये ग्राह्य है तथा जो खरीदना, हनन करना-हिंसा करना और पकाना, इन तीन क्रियाओ से स्वय करना, दूसरो से कराना और अनुमोदन से निष्पन्न नौ कोटियो के दोषो से रहित हो, जो एषणा के दस दोषो से रहित हो, जो उद्गम और उत्पादना रूप एषणा अर्थात् गवेषणा और ग्रहणैषणा रूप एषणादोष से रहित हो, जो सामान्य रूप से सचित्त से अचित्त हो चुका हो, आयुक्षय के कारण जीवनक्रियाओ से रहित हो, शरीरोपचय से रहित हो, अतएव जो प्रासुक–अचेतन हो चुका हो, जो आहार सयोजन दोष और अगारदोष से रहित हो, जो आहार की प्रशसा रूप धूम–दोष से रहित हो, जो छह कारणो मे से किसी कारण से ग्रहण किया गया हो और छह काय जीवो की रक्षा के लिए स्वीकृत किया गया हो, ऐसे प्रासुक आहारादि से प्रतिदिन–सदा निर्वाह करना चाहिए।

विवेचन · 'अपरिग्रही के लिये कैसा आहार ग्राह्य है ?' इसकी व्याख्या शास्त्रकार ने इस प्रकार की है – '**जं तं एक्कारसपिंडवायसुद्धं · · · नवकोडीहिं सुपरिसुद्ध · · · फासुकेण भिक्खेण वट्टियव्व**।' इन सूत्र पक्तियो का अर्थ हम ऊपर स्पष्ट कर चुके है। तात्पर्य यह है कि भिक्षा–विधि के या आहार–ग्रहण सेवन के जो दोष पहले अहिंसासवर के प्रकरण मे बता चुके है, उन तमाम दोषो से रहित, नवकोटिशुद्ध तथा अगार–धूम–सयोजनादि दोषो से मुक्त, प्रासुक, एषणीय तथा छह काय के जीवो की रक्षा के लिए शास्त्रोक्त ६ कारणो से लिया गया शुद्ध आहार ही साधु के लिए ग्राह्य है। प्रासुक भिक्षा पर ही साधु को जीवन निर्वाह करना चाहिए।

शास्त्र मे साधू के लिये ६ कारणो से आहार का सेवन करना विहित है –

1 क्षुधा वेदना को मिटाने के लिए, 2 सेवा (वैयावृत्य) कर सके इसके लिये, 3 ईर्यासमिति का पालन करने के लिये, 4 सयम पालन करने के लिये, 5 अपने प्राणो की रक्षा करने के लिये, 6 धर्माराधना या चितन करने के लिये।

159. [Q.] Then what type of food is such which can be accepted by a monk ?

[Ans.] The food should be free from faults mentioned in eleven lessons (Uddeshaks) in the first chapter of the second part (Shrut Skandh) of Acharanga Sutra. It should be navakoti Vishudh It means that it should not be purchased, got purchased or inspired to be purchased for the monk. It should not involve violence to living beings, in doing getting done and in supporting such activity. It should not be cooked, getting

cooked or supporting cooking for the monks only then it is pure from nine angles. It should be free from faults related to offering (Eshana) regarding its collection (udgam) and is production. It should be normally lifeless It should be free from life It should be free from activities of the living being due to completion of life span It should be without a body It should have been without life That food should be free from faults relating to mixing, taking hurriedly in company, appreciating the food and others It should have been collected for any one of six reasons for having food and for protecting living beings of six kinds (five kinds of immobile and one kind of mobile living beings) A monk should pass his daily life with such a type of worthy food.

Elaboration—'What type of food is acceptable for the detached?' The author has replied to this question in the aforesaid aphorism In brief, it should be free of all the faults of alms-collection and eating as mentioned in the chapter of Ahimsa Samvar It should be pure nine-ways and free of faults related to cooking, and others, free of life, pure and acceptable A monk can accept only the food that is taken for purpose of protecting six classes of living beings He should subsist only on pure food

Six causes for taking food as mentioned in the scriptures are—

(1) To cool down the feeling relating to hunger, (2) To maintain capability *for serving the Acharya and other senior monks*, (3) To practice properly the rules relating to care while moving, (4) To practice ascetic restraints, (5) To protect ones life-force, (6) To practice meditation according to scriptures

१६०. जं पि य समणस्स सुविहियस्स उ रोगायंके बहुप्पकारंमि समुप्पण्णे वायाहिक–पित्तसिंभ–अइरित्तकुविय–तहसण्णिवायजाए व उदयपत्ते उज्जल–बल–विउल (तिउल) कक्खडपगाढदुक्खे असुभकडुयफरुसे चंडफलविवागे महब्भये जीवियंतकरणे सव्वसरीरपरितावणकरे ण कप्पइ तारिसे वि तह अप्पणो परस्स वा ओसहभेसज्जं भत्तपाणं च तं पि सण्णिहिकयं।

१६०. सुविहित–शास्त्रोक्त विधिनुसार आचरण करने वाले साधु के शरीर मे यदि अनेक प्रकार के ज्वर आदि रोग और जीवन को सकट या कठिनाई मे डालने वाली व्याधि उत्पन्न हो जाये, वात, पित्त या कफ का अतिशय प्रकोप हो जाये, अथवा सन्निपात–वात–पित्त–कफ तीनो दोषो का एक साथ प्रकोप हो जाये और इसके कारण सुख के लेशमात्र से रहित, प्रबल–कष्ट से भोगने योग्य विपुल–चिरकाल तक अनुभव किये जाने वाले (या त्रितुल–तीनो योगो को तोलने वाले–कष्टमय बना देने वाले),

कर्कश–अनिष्ट एव प्रगाढ अर्थात् अत्यन्त तीव्र दु:ख उत्पन्न हो जाये और वह दु.ख अशुभ या कटुक द्रव्य के समान अनिष्ट रूप हो, कठोर हो, दु:खमय दारुण फल वाला हो, महान् भय उत्पन्न करने वाला हो, जीवन का अन्त करने वाला और सारे शरीर मे असहाय सताप उत्पन्न करने वाला हो, तो ऐसा दु ख उत्पन्न होने की स्थिति मे भी स्वयं अपने लिए अथवा दूसरे साधु के लिए औषध, भैषज्य, आहार तथा पानी का सचय करना शास्त्रीय विधी से युक्त नही है।

160. An ascetic is practicing the ascetic conduct according to code, he suddenly gets an attack of fever or any other illness which may appear to be dangerous, he may have serious trouble relating to vaat, pitt or cough or more than one of them simultaneousl, he may not have even a little peace due to it, he may suffer for a very long period; he may have severe pain; that pain may look like a bitter substance and very difficult to bear, it may cause great fear; it may cause pain in the entire body, it may appear like signal for death; even in such a situation a monk should not keep stored food, water or medicine in store for himself or for other monk.

विवेचन पिछले पाठ मे सामान्य अवस्था मे लोलुपता आदि के कारण आहारादि के सचय करने का निषेध किया गया था और इस पाठ मे यह बताया गया है कि कैसी भी रोगादि की स्थिति हो या मरणासन्नता की स्थिति हो, वात–पित्त–कफादि के प्रकोप से अनेक रोग यहा तक की सन्निपात रोग भी हो जाय या सारे शरीर मे असह्य पीडा उत्पन्न हो जाय, कर्मों के तीव्रतम उदय से मरणान्त कष्ट पैदा हो जाय तो भी साधु को अपने या दूसरो के लिये औषध, भैषज्य या भोजनपान का सचय करना या रखना उचित, शास्त्रविधि के अनुकूल नही है अर्थात् अपरिग्रही साधु के जीवन मे सग्रह का कोई स्थान नही है।

Elaboration—In the earlier lesson The storage of food was prohibited in common situation due to greed for it In the present lesson it has been prohibited in illness. Here the intensity of illness has been described It has been stated that illness or torture may be so much dreadful that one may not have rest even for a moment. It may be lasting for a very long period. It may cause dreadful pain to the body and the mind It may be fatal in the end Even in such a grave situation, a monk should not store food, water and the like Collection is attachment and such a collection has no place in the ascetic life.

साधु के लिये ग्राह्य धर्मोपकरण ARTICLES OF A MONK

१६१. जं पि य समणस्स सुविहियस्स उ पडिग्गहधारिस्स भवइ भायण–भंडोवहिउवगरणं पडिग्गहो पायबंधणं पायकेसरिया पायठवणं च पडलाइं तिण्णेव, रयत्ताणं च गोच्छओ, तिण्णेव य पच्छागा,

रयहरण–चोलपट्टग–मुहणंतगमाईयं। एयं पि य संजमस्स उववूहणट्ठयाए वायायव–दंस–मसग–सीय–परिरक्खणट्ठयाए उवगरणं रागदोसरहियं परिहरियव्वं, संजएण णिच्चं पडिलेहण–पप्फोडण–पमज्जणाए अहो य राओ य अप्पमत्तेण होइ सययं णिक्खिवियव्वं च गिण्हियव्वं च भायण–भंडोवहि–उवगरणं।

१६१. शास्त्रविधिनुसार चलने वाले पात्रधारी सुसाधु के पास जो भी काष्ठ पात्र, मिट्टी के बर्तन, उपधि और उपकरण होते है, जैसे-पात्र, पात्र बाधने की झोली, पात्रकेसरिका, पात्रस्थापनिका, पटल, रजस्त्राण, गोच्छक, तीन प्रच्छाद, रजोहरण, चोलपट्टक, मुखानन्तक–मुखवस्त्रिका, ये सब भी सयम की वृद्धि या पुष्टि के लिए होते है तथा वात-प्रतिकूल वायु, ताप, धूप, डास–मच्छर और ठड से अपनी रक्षा बचाव के लिए है। इन सब उपकरणो को राग और द्वेष से रहित होकर साधु को धारण करने चाहिए अर्थात् रखना चाहिए। सदा इनका प्रतिलेखन-देखना, प्रस्फोटन-झाडना और प्रमार्जन-पौछना चाहिए। दिन मे और रात्रि मे सतत-निरन्तर अप्रमत्त (सावधान) होकर भाण्डोपकरणो को रखना और ग्रहण करना चाहिए।

161. The articles which a monk has are in order to glorify his life of ascetic restraint They are pot, earthen pitcher, other articles such cloth to hold the pots, Patra-Kesarika—the cloth to clean the pots, Patra-Sthapanika—the seat on which pots are placed, Patal—three pieces of cloth to cover the pots, gochhak—the small broom to clean the pot, three Prachhaad—three clothes to cover the body, Rajoharan—the broom, Chulapattak—the cloth to be worn at the waist, mukhanantak—mukhvastrika for the mouth He has articles to protect him from wind, heat, sun, mosquito bite and cold also He should keep all these articles without any feeling of attachment or hatred He 'should regularly look at them during the day and the night in a state free from any slackness He should wipe them He should carefully handle his pots and articles

विवेचन उपरोक्त सूत्र पाठ मे **'पडिग्गहधारिस्स'** इस विशेषण पद से यह सूचित किया गया है कि विशिष्ट जिनकल्पी साधु के सिवाय केवल पात्रधारी स्थविरकल्पी साधु के उपकरणो का यहाँ उल्लेख किया गया है। ये उपकरण सयम की वृद्धि और प्रतिकूल परिस्थितियो मे शरीर की रक्षा के लिए ही ग्रहण किये जाते है, इन सब उपकरणो को **'न सो परिग्गहो वुत्तो'** कहकर परिग्रह मानने से सर्वथा इन्कार किया है। उपरोक्त पाठ मे दिये इन उपकरणो के नाम का अर्थ इस प्रकार है –

पतद्ग्रह–पात्र–आहारादि के लिए काष्ठ, मृत्तिका या तूम्बे के पात्र।

पात्रबन्धन–पात्रो को बाँधने की झोली।

पात्रकेसरिका–पात्र प्रमार्जन के लिये पोछने का वस्त्रखण्ड।

पात्रस्थापन–जिस कम्बल के टुकडे पर पात्र रखे जाये।

पटल–भिक्षा के समय पात्र ढँकने के लिए तीन वस्त्र।

रजस्त्राण–पात्रो को धूल से रक्षा के लिये पात्र पर लपेटने का वस्त्र।

गोच्छक–पात्रादि के प्रमार्जन के लिए गोच्छक नाम का कंबल खड।

प्रच्छाद–शरीर पर ओढने के वस्त्र चादरे (तीन)।

रजोहरण–भूमि, शय्या, पाट आदि प्रमार्जन करने के लिये ओघा।

चोलपट्टक–कमर मे पहनने का वस्त्र।

मुखानन्तक–मुखवस्त्रिका या मुहपत्ति।

ये उपकरण सयम-निर्वाह के उद्देश्य से साधु को ग्रहण करने और उपयोग मे लाने के हेतु है, ममत्व से प्रेरित होकर नही।

यहा यह भी स्पष्ट करना आवश्यक है कि गृहीत उपकरणो के प्रति यदि ममत्वभाव उत्पन्न हो जाये तो वही उपकरण परिग्रह बन जाते है। इस भाव को प्रकट करने के लिए प्रस्तुत पाठ मे भी **रागदोसरहिय परिहरितव्वं** अर्थात् राग और दोष से रहित होकर उपयोग करना चाहिए, यह उल्लेख कर दिया गया है।

Elaboration—In the aphorism the word padiggahadhariss indicates that this prohibition is not meant for Jinakalpi monk (monk who remains naked) It is for those Sthavirkalpi monks who keep pots and wear cloth These articles are kept for smoothly undergoing life of ascetic restraint and for protection of the body in difficult situation The meaning of some words is as follows—Patadgrah—Pots of wood, earth or of gourd for collecting food Patra-bandhan—Cloth to tie pots

Other words have been clarified side by side with their meaning.

A monk accepts these articles for smooth practice of ascetic life and does not have any attachment for them So it is not parigraha (collection for attachment of possessions)

Here it is necessary to clarify that in case one has attachment for the articles he has acquired, those very articles shall be termed as parigraha In order to emphasize this fact, the word 'raagdosarahiyam pariharitavyam' has been mentioned which means should be used without attachment or hatred'.

अपरिग्रही साधु का आन्तरिक स्वरूप **INNER NATURE OF DETACHED MONK**

१६२. एवं से संजए विमुत्ते णिस्संगे णिप्परिग्गहरुई णिम्ममे णिण्णेहबंधणे सव्वपावविरए वासीचंदणसमाणकप्पे समतिणमणिमुत्तालेट्ठुकंचणे समे य माणावमाणणाए समियरए समियरागदोसे

समिए समिइसु सम्मदिट्ठी समे य जे सव्वपाणभूएसु से हु समणे, सुयधारए उज्जुए संजए सुसाहू, सरणं सव्वभूयाणं सव्वजगवच्छले सच्चभासए य संसारंतट्ठिए य संसारसमुच्छिण्णे सययं मरणाणुपारए, पारगे य सव्वेसिं संसयाणं पवयणमायाहिं अट्ठहिं अट्ठकम्म–गंठी–विमोयगे, अट्ठमय–महणे ससमयकुसले य भवइ सुहदुहणिव्विसेसे अब्भिंतरबाहिरम्मि सया तवोवहाणम्मि सुट्ठुज्जुए खंते दंते य हियणिरए ईरियासमिए भासासमिए एसणासमिए आयाण–भंड–मत्त–णिक्खेवणा–समिए उच्चार–पासवण–खेल–सिंघाण–जल्ल–परिट्ठावणियासमिए मणगुत्ते वयगुत्ते कायगुत्ते गुत्तिंदिए गुत्तबंभयारी चाई लज्जू धण्णे तवस्सी खंतिखमे जिइंदिये सोहिए अणियाणे अबहिल्लेस्से अममे अकिंचणे छिण्णगंथे णिरुवलेवे।

१६२. इस प्रकार से (पूर्वोक्त) आचार का परिपालन करने के कारण वह साधु सयमवान, धनादि के लोभ से मुक्त, जमीन जायदाद, सम्पत्ति का पूर्णतया त्यागी, नि सग–आसक्ति से रहित, निष्परिग्रहरुचि-परिग्रह मे रुचि नही रखने वाला, ममता से रहित, स्नेह के बन्धन से मुक्त, समस्त पापो से निवृत्त, चन्दनकल्प अर्थात् उपकारक और अपकारक के प्रति समान भावना वाला, तृण, मणि, मुक्ता और मिट्टी के ढेले को समान मानने वाला अर्थात् अल्पमूल्य या बहूमूल्य पदार्थों की समान रूप से उपेक्षा करने वाला, सम्मान और अपमान दोनो अवस्थाओ मे समता का धारक, शमितरज–पापरूपी रज को उपशान्त करने वाला या शमितरत–विषय सम्बन्धी रति को उपशान्त करने वाला अथवा शमितरय–उत्सुकता को शान्त कर देने वाला, राग–द्वेष को शान्त करने वाला, पाँच समितियो से युक्त, सम्यग्दृष्टि और समस्त त्रस और स्थावर जीवो पर समभाव धारण करने वाला होता है। वही वास्तव मे साधु है।

वह साधु श्रुत का धारक, ऋजु–निष्कपट–सरल अथवा सयम मे उद्यत या उद्यमशील है। वह साधु समस्त प्राणियो के लिए शरणभूत होता है, समस्त जगद्वर्त्ती जीवो के प्रति वात्सल्य भाव रखने वाला–हितैषी होता है। वह सत्यभाषी, ससार अन्त के किनारे पर स्थित है, ससार–भवपरम्परा का उच्छेद–अन्त करने वाला, सदा के लिए (बाल) मरण आदि का पारगामी और सब सशयो से परे हो गया है। पॉच समिति और तीन गुप्ति रूप अष्ठ प्रवचनमाताओ के द्वारा आठ कर्मों की ग्रन्थि को खोलने वाला अर्थात् अष्ठ कर्मों का विच्छेद करने वाला, जातिमद, कुलमद आदि आठ मदो का मथन नाश करने वाला और स्वसमय–स्वकीय सिद्धान्त मे निष्णात होता है। सुख–दु ख उसके लिये समान है।। आभ्यन्तर और बाह्य तपरूप उपधान मे सम्यक् प्रकार से पुरुषार्थ करता है, क्षमावान, इन्द्रियविजेता, स्वकीय और परकीय हित मे निरत, ईर्यासमिति से सम्पन्न, भाषासमिति से सम्पन्न, एषणासमिति से सम्पन्न, आदान–भाण्ड–मात्र–निक्षेपण समिति से सम्पन्न और मल–मूत्र–श्लेष्म–सघान–नासिकामलजल्ल– शरीरमल आदि के प्रतिष्ठापन की समिति से युक्त, मनोगुप्ति, वचनगुप्ति और कायगुप्ति का पालक, विषयो की ओर उन्मुख इन्द्रियो का गोपन करने वाला, ब्रह्मचर्य की गुप्ति से युक्त, समस्त प्रकार के परिग्रह का त्यागी, पापाचरण मे लज्जाशील अथवा रस्सी के समान सरल, तपस्वी, क्षमागुण के कारण सहनशील, जितेन्द्रिय, सद्गुणो से शोभित या शोधित, निदान से रहित, चित्तवृत्ति

को सयम की परिधि से बाहर न जाने देने वाला, ममत्व से विहीन, अकिंचन–सम्पूर्ण रूप से निर्द्रव्य, स्नेहबन्धन को काटने वाला और कर्म या आसक्ति के लेप से रहित होता है।

162. As a Jain monk practices the conduct as above mentioned, so he is firm in ascetic restraints He has no attachment for any thing. He is free from the desire of attachment in possessions. He has no worldly attraction for any living being. He is free from bondage of delusion. He is detached from all sinful activities He has same feelings for a person whether the said cn had done any favour to him or troubled him He considers a straw, a precious stone or an earthen ball as of same value. In other words he ignores cheap articles and costly articles treating them alike He remains in a state of equanimity whether he is honoured or insulted He subdues the molecules of sin He pacifies his sensual desires He subdues all the feeling of attachment and hatred He maintains the five cares (Samitis) Such as care in movement (Iriya Samiti) and others He has right perception He has regards for the life-force of all the mobile beings namely those of two to five senses and of all immobile beings who have only one sense of touch. Such a person is the monk in true sense

Such a monk is well read in scriptures He is free from deceit and slackness He is active in restraints He is a support for all the living He has compassion for all in the world He is truthful He is at the end of the circle of life and death He overcomes the traditions of birth death and re-birth He has ceased forever the state of dying with worldly desires He is free from all doubts He has broken the knot of the bondage of all the eight Karmas by meticulously practicing five cares (Samiti) and three stoppages (gupti) He is free from eight types of ego namely ego of clan, family and others He is expert in his philosophy He does not feel happy in state of worldly enjoyment and unhappy in the state of pain He remains the same in both the said conditions. He remains always ready to practice internal and external austerities properly. He is benevolent. He has full control over his senses. He remains engaged in his welfare and simultaneously in welfare of others. He is blessed with equanimous discrimination in movement, in talk (bhasha samiti), in seeking alms (eshna samiti), in placing and picking up things and in disposing urine, stool and the like such as dirty matter from mouth, nose

and the body He practices complete control (gupti) in respect of mental, vocal and physical activities He subdues the senses that have any worldly attraction towards the activities of their field He practices all the restrictions concerning vow of Chastity (brahmcharya) He is detached from all worldly contacts He is as straight-forward as a string. He practices austerities He is forgiving as he is benevolent He has control over his senses He is famous for his good qualities He is free from any desire of worldly benefits for his activities He does not allow his heart to go beyond the circles of ascetic restraint He is free from all worldly attachments He is completely without any money He has shattered all the worldly bondages He is free from all covering of Karmas

विवेचन इस सूत्र पाठ मे शास्त्रकार ने अपरिग्रही साधु के आन्तरिक जीवन की परिभाषा दी है ताकि एक आम आदमी भी अपरिग्रही साधक को पहचान सके। साधु के समग्र आचार को यहाँ सार के रूप मे समाविष्ट कर दिया गया है। साधु के जीवन का अत्यन्त सुन्दर और भव्य चित्र प्रस्तुत किया गया है। कुछ विशिष्ट पदो का तात्पर्य इस प्रकार है-

खंतिखमे-साधु अनिष्ट प्रसगो को, वध-बन्धन आदि उपसर्गो या परीषहो को सहन करता है, किन्तु असमर्थता अथवा विवशता के कारण नही। उसमे क्षमा की वृत्ति इतनी प्रबल होती है अर्थात् ऐसी सहनशीलता होती है कि वह प्रतीकार करने मे पूर्णरूपेण समर्थ होकर भी अनिष्ट प्रसगो को विशिष्ट कर्मनिर्जरा के हेतु सह लेता है।

छिण्णगथे- मन मे पडी हुई ममत्व की गाठ को छिन्न भिन्न करने वाला अथवा अनन्तानुबन्धी कषाय की गाठ को नष्ट करने वाला। **'छिन्नगथे'** के स्थान पर टीकाकार ने **'छिन्नसोए'** पाठान्तर का उल्लेख किया है। इसका अर्थ छिन्नशोक अर्थात् शोक को छेदन कर देने वाला-किसी भी स्थिति मे शोक का अनुभव न करने वाला अथवा छिन्नश्रोत अर्थात् स्रोतो को स्थगित कर देने वाला है। जो ससार मे भटकाने वाले आश्रवश्रोत नष्ट कर चुका है।

निरुपलेप-का आशय है-कर्मलेप से रहित। किन्तु मुनि कर्मलेप से रहित नही होते। सिद्ध भगवान ही कर्मलेप से रहित होते है। ऐसी स्थिति मे यहाँ मुनि के लिए 'निरुपलेप' विशेषण का प्रयोग किस अभिप्राय से किया गया है ? इस प्रश्न का उत्तर टीका मे दिया गया है-**'भाविनि भूतवदुपचारमाश्रित्योच्यते'** अर्थात् ऐसा साधक भविष्य मे कर्मलेप से रहित होगा ही, अतएव भावी अर्थ मे भूतकाल का उपचार करके इस विशेषण का प्रयोग किया गया है।

Elaboration—In the present lesson, a beautiful picture has been drawn of the inner life of a monk, so that even a common man may recognize a detached aspirant. In brief the entire ascetic conduct has been narrated Most of the words in aphorism are easy to understand

Some special words denote as under–

Khantikhame—A monk patiently bears bad situations, troubles and tribulations such as thrashing, bondage or even killing, not because of his incapability or helplessness. Due to his conduct of benevolence, he endures such situations considering them as occasions for special destruction of Karmas

Chhhhinnaganthe—One who destroyes the knot of fondness in his mind or the knot of passions leading to extreme bondage. The commentator has used the word 'Chhinn Soye' instead of 'Chinnaganthe' in the aphorism It means free from dejection, one who is not sad under any circumstances Another interpretation is one who has stopped all the sources (Shrot) The source of river is from where it flows and the source of the worldly ocean of re-birth and death is polluted feelings and mundane behaviour

Nirupalap—It means free from covering of Karma Saints are not completely free from Karma cover Only Siddhas (Souls who have attained complete liberation) are in such state Why then the word 'nirupalep' has been used for monks ? The reply to this is that such a monk shall certainly attain liberation in future so the future state has been depicted

निर्ग्रन्थो की ३१ उपमाये THIRTY ONE ILLUSTRATIVE COMPARISONS OF MONKS

१६३. सुविमलवरकंसभायणं व मुक्कतोए। संखे विव णिरंजणे, विगयरागदोसमोहे। कुम्मो विव इंदिएसु गुत्ते। जच्चकंचणगं व जायरूवे। पोक्खरपत्तं व णिरुवलेवे। चंदो विव सोमभावयाए। सूरो व्व दित्ततेए। अचले जह मंदरे गिरिवरे। अक्खोभे सागरो व्व थिमिए। पुढवी व्व सव्वफाससहे। तवसा च्चिय भासरासि-छण्णिव्व जायतेए। जलियहुयासणे विव तेयसा जलंते। गोसीसं चंदणं विव सीयले सुगंधे य। हरयो विव समियभावे। उग्घसियसुणिम्मलं व आयंसमंडलतलं पागडभावेण सुद्धभावे। सोंडीरे कुंजरोव्व। वसभेव्व जायथामे। सीहेव्व जहा मियाहिवे होइ दुप्पधरिसे। सारयसलिलं व सुद्धहियए। भारंडे चेव अप्पमत्ते। खग्गिविसाणं व एगजाए। खाणुं चेव उड्ढकाए। सुण्णागारेव्व अपडिकम्मे। सुण्णागारावणस्संतो णिवायसरणप्पदीवज्झाणमिव णिप्पकंपे। जहा खुरो चेव एगधारे। जहा अही चेव एगदिट्ठी। आगासं चेव णिरालंबे। विहगे विव सव्वओ विप्पमुक्के। कयपरणिलए जहा चेव उरए। अप्पडिबद्धे अणिलोव्व। जीवो व्व अपडिहयगई।

१६३. (निर्गन्थ श्रमण की महानताओ को आगे कही जाने वाली उपमाओं से उपमित किया है-)

(१) अत्यन्त निर्मल काँसे का बर्तन जैसे जल के प्रभाव से मुक्त रहता है, वैसे ही साधु रागादि के बन्ध से मुक्त होता है।

(२) शख के समान अजन कालिमा से रहित अर्थात् रागादि के कालुष्य से रहित, अतएव राग, द्वेष और मोह से विरक्त होता है।

(३) कछुए की तरह इन्द्रियो का गोपन करने वाला।

(४) उत्तम स्वर्ण के समान शुद्ध आत्मस्वरूप को प्राप्त।

(५) कमल के पत्ते की तरह निर्लेप।

(६) सौम्य-शीतल स्वभाव के कारण चन्द्रमा के समान सौम्य।

(७) सूर्य के समान सयम के तेज से देदीप्यमान।

(८) गिरिवर मेरु के समान अचल-दृढ सयम साधु परीषह आदि मे अडिग।

(९) शान्त समुद्र के समान क्षोभरहित एव स्थिर।

(१०) पृथ्वी की तरह समस्त अनुकूल एव प्रतिकूल स्पर्शों को सहन करने वाला।

(११) तपश्चर्या के तेज से अन्तरग मे ऐसा देदीप्यमान लगता है मानो भस्मराशि से ढकी हुई अग्नि हों। उसी प्रकार कृषकाय शरीर के भीतर उस तेजस्वी आत्मा मे तप का तेज विद्यमान रहता है।

(१२) तेजी से जलती अग्नि के सदृश तेजस्विता से देदीप्यमान।

(१३) गोशीर्ष चन्दन की तरह शीतल और अपने शील के सौरभ से युक्त।

(१४) ह्रद- सरोवर के समान प्रशान्तभाव वाला।

(१५) अच्छी तरह घिसकर चमकाए हुए निर्मल दर्पणतल के समान स्वच्छ, प्रकट रूप से मायारहित होने के कारण अतीव निर्मल जीवन वाला-शुद्ध भाव वाला।

(१६) कर्म-शत्रुओ की सेना को पराजित करने मे गजराज की तरह शूरवीर।

(१७) वृषभ की तरह अगीकृत व्रत-भार का निर्वाह करने वाला।

(१८) मृगाधिपति सिह के समान परीषहादि से अजेय।

(१९) शरद ऋतु के जल के समान स्वच्छ हृदय वाला।

(२०) भारण्ड पक्षी के समान अप्रमत्त-सदा सजग।

(२१) गेडे के सींग के समान एकाकी-अन्य की सहायता की अपेक्षा न रखने वाला अथवा आत्मनिष्ठा रूपी एकाकीपन वाला।

(२२) स्थाणु (ठूँठ) की भाँति ऊर्ध्वकाय-कायोत्सर्ग मे स्थित।

(२३) सूने घर के समान अप्रतिकर्म, अर्थात् जैसे सुनसान पडे घर को कोई सजाता-सँवारता नही, उसी प्रकार शरीर की साज-सज्जा से रहित।

(२४) वायुरहित घर में स्थित दीपक की तरह अकम्पित विविध उपसर्ग होने पर भी शुभ ध्यान मे निश्चल रहने वाला।

(२५) उस्तरे की तरह एक धार वाला, अर्थात् एक उत्सर्ग-मार्ग मे ही प्रवृत्ति करने वाला।

(२६) सर्प के समान एक दृष्टि वाला, अर्थात् सर्प जैसे अपने लक्ष्य पर ही नजर रखता है, उसी प्रकार मोक्षसाधना की ओर ही एकमात्र दृष्टि रखने वाला।

(२७) आकाश के समान आलम्बन रहित-स्वावलम्बी।

(२८) पक्षी की तरह सर्वथा विमुक्त। सब प्रकार के परिग्रह से मुक्त।

(२९) सर्प के समान दूसरो के बनाए हुये स्थान मे रहने वाला।

(३०) वायु की तरह-द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव के प्रतिबन्ध से मुक्त।

(३१) मुक्त जीव के समान बेरोकटोक (अप्रतिहत) गति वाला अर्थात् स्वेच्छापूर्वक यत्र-तत्र विचरण करने वाला।

विवेचन उपरोक्त उपमाओ के द्वारा द्रव्य और भाव परिग्रह से रहित निग्रन्थ श्रमणो के उदात्त चरित्र का वर्णन किया है। इनमे साधुजीवन की विशिष्टता, उज्ज्वलता, सयम के प्रति निश्चलता, स्वावलम्बित, अप्रमत्तता, स्थिरता, लक्ष्य के प्रति निरन्तर सजगता, आन्तरिक शुचिता, देह के प्रति अनासक्तता, सयम निर्वाह सम्बन्धी क्षमता आदि का प्रतिपादन किया गया है।

163. The greatness of an ascetic is depicted through the comparative illustrations given below—

(1) An extremely clean bronze vessel is totally free from effects of water Similarly a monk is free from bondage of attachment and the like.

(2) A conch shell is free from dirt, similarly a monk is free from dirt of attachment, hatred and delusion

(3) A monk keeps his senses under control like a tortoise

(4) A monk is pure like gold in self-purification

(5) A monk is free from any Karmic paste like a lotus leaf.

(6) A monk is like a moon due to his quiet nature.

(7) A monk shines like the sun due to his austerities

(8) A monk is unmoved in troubles like Meru mountain

(9) A monk is free from tribulation like a sea

(10) A monk bears like the earth all the pleasant and unpleasant situations.

(11) A monk has inner brightness due to his austerities as is a fire covered with ash

(12) A monk shines bright like a burning fire

(13) A monk is cool in conduct like sandal wood and fragrant due to his chastity

(14) A monk is quiet like a pond in absence of wind

(15) A monk is as clear, transparent and free from deceit as is a clean mirror properly brightened

(16) A monk is bold in defeating the enemies of Karma like a great elephant

(17) A monk carries the load of his vows like a bullock

(18) A monk, like a lion, is unconquerable by troubles and tribulations

(19) A monk has a pure heart like water in winter

(20) A monk is always awakened like Bharand bird

(21) A monk, like rhinoceros-horn, remains alone and does not need assistance of others

(22) A monk remains erect in meditation like a stump of tree

(23) A monk like a vacant house does not beautify his body

(24) A monk remains stable in his concentration like a lamp in the house free from wind

(25) A monk, like a razor's edge, is single-minded on the path of austerities

(26) A monk, like a snake, has singular attention on his goal of liberation

(27) A monk, like the sky, does not have any support

(28) A monk is free from attachment for possession like a bird.

(29) A monk stays like a serpent in the place built by others

(30) A monk, like air, is free from all restrictions in wanderings regarding place, time, situation.

(31) A monk, like soul without any body cover, moves without any hindrances, freely as he desires

Elaboration—Through these illustrations the uniqueness of ascetic life, its grandeur its fullness in ascetic discipline, its self-supporting nature, its freedom from slackness, its stability, its awakening towards the good, its inner purity, its non-attachment towards the body, its capability in practicing ascetic discipline has been depicted.

साधु अप्रतिबद्धविहारी होता है। विहार के विषय मे इन किसी बन्धन से बँधा नही होता। अतएव निम्नोक्त सूत्र मे विहार के सम्बन्ध मे स्पष्ट उल्लेख करते हुए कतिपय अन्य गुणो पर प्रकाश डाला जा रहा है।

It has been mentioned earlier that a monk is free from all restriction in his wanderings So the next aphorism is about his wanderings

१६४. गामे गामे एगरायं णयरे णयरे य पंचरायं दूइज्जंते य जिइंदिए जियपरीसहे णिब्भओ विऊ सच्चित्ता-चित्त-मीसगेहिं दव्वेहिं विरायं गए, संचयाओ विरए, मुत्ते, लहुए, णिरवकंखे, जीविय-मरणासविप्पमुक्के णिस्संधि णिव्वणं चरित्तं धीरे काएण फासयंते सययं अज्झप्पज्झाणजुत्ते, णिहुए, एगे चरेज्ज धम्मं।

इमं च परिग्गहवेरमण-परिरक्खणट्ठयाए पावयणं भगवया सुकहियं अत्तहियं पेच्चाभावियं आगमेसिभद्दं सुद्धं णेयाउयं अकुडिलं अणुत्तरं सव्वदुक्खपावाणं विउवसमणं।

१६४. (मुनि) हर एक गाव मे एक रात्रि और हर एक नगर मे पाँच रात्रि तक विचरण करता है, क्योकि वह इन्द्रिय विजेता होता है, परीषहो को जीतने वाला, निर्भय, विद्वान्-गीतार्थ, सचित्त, अचित्त और मिश्र सभी द्रव्यो मे वैराग्ययुक्त होता है, सग्रहवृत्ति से दूर, निर्लोभवृत्ति वाला, लघु अर्थात् तीनो प्रकार के गौरव के भार से रहित और परिग्रह के भार से रहित होता है। जीवन और मरण की आशा-आकाक्षा से विमुक्त, चारित्र-परिणाम के विच्छेद से रहित होता है, अर्थात् उसका चारित्र-परिणाम निरन्तर विद्यमान रहता है। वह निरतिचार-निर्दोष चारित्र का धैर्यपूर्वक शारीरिक क्रिया द्वारा पालन करता है। ऐसा मुनि सदा अध्यात्मध्यान मे सलग्न, उपशान्त भाव तथा एकाकी-सहायकरहित अथवा रागादि से असपृक्त होकर धर्म का आचरण करे।

परिग्रहविरमणव्रत की रक्षा के लिये भगवान ने यह उत्तम प्रवचन-उपदेश दिया है। यह प्रवचन आत्म हितकर है, परभव मे उत्तम फल देने वाला है और भविष्य मे कल्याण करने वाला है। यह शुद्ध है, न्यायसगत है, सरल है, अति उत्तम है और समस्त दु खो तथा पापो का शमन करने वाला है।

विवेचन . उपरोक्त पाठ मे कहा गया है कि मुनि को ग्राम मे एक रात और नगर मे पाँच रात तक ही रूकना चाहिये, उसके विषय मे टीकाकार ने लिखा है-

'एतच्च भिक्षुप्रतिमाप्रतिपन्नसाध्वपेक्षया सूत्रमवगन्तव्यम्।

-प्र व्या आगमोदय, पृ १५८

अर्थात् यह सूत्र उस साधु के लिए जानना चाहिए जिसने भिक्षुप्रतिमा अंगीकार की हो। सामान्य साधुओं के लिए यह विधान नहीं है।

164. A monk should not spend more then a night in a village and more than five nights in a town during his wanderings as he controls his senses, overcomes the troubles, has scriptural knowledge and is free from any fear He has a sense of non-attachment in respect of things having life, lifeless things and then having both life and lifeless parts such as servant wearing ornaments and other suchlike substances. He does not keep in store his collection He is free from greed. He is free from three types of ego He does not carry any load of attachment for possessions. He is totally free from any desire for long life or early death. He does not blemish his conduct He continuously follows the conduct as mentioned in scriptures. His conduct never gets adversely affected. He practices ascetic conduct free from any fault undergoing physical activities patiently Such a monk continuously remains in meditation about the soul, is quiet and alone He practices dharma completely detached from all attachment and the like.

Bhagavan has delivered this lecture so that one may safely practice his vow of discarding attachment towards possessions This talk is beneficial for the soul and is going to provide best result in later lives It is beneficial in future also It is pure, just excellent and without any element of deceit It has the capability of removing all troubles and sins

Elaboration—This aphorism is easily intelligible only one things needs clarification It is mentioned that a monk should stay for not more than a day in a village and five days in a town. About this conduct the commentator has mentioned that in this aphorism, this restriction is in case of such monks who are undergoing special practice of austerity of monks (bhikshu pratima). So it is not applicable to all the monks.

अपरिग्रहव्रत की पाँच भावनाएँ

FIVE SENTIMENTS IN RESPECT OF VOW OF NON-ATTACHMENT FOR POSSESSIONS

अपरिग्रही की पहचान के लिए पूर्व सूत्रपाठ मे विशद रूप से व्याख्या करके अब शास्त्रकार ने यहां परिग्रह से विरतिरूप अपरिग्रहमहाव्रत की सुरक्षा के लिए पाच भावनाओ का निम्नोक्त सूत्रपाठ द्वारा निरूपण किया है।

After explaining in detail about the attributes of a detached monk in the preceding aphorism, the author proceeds to explain the five sentiments for protecting the great vow of non-possession

प्रथम भावना—श्रोत्रेन्द्रिय संयम FIRST SENTIMENT · RESTRAINT OF SENSE OF HEARING

१६५. तस्स इमा पंच भावणाओ चरिमस्स वयस्स होंति परिग्गहवेरमण–परिरक्खणट्ठयाए।

पढमं–सोइंदिएणं सोच्चा सद्दाइं मणुण्णभद्दगाइं।

[प्र.] किं ते ?

[उ.] वरमुरय–मुइंग–पणव–दद्दुर–कच्छभि–वीणा–विपंची–वल्लयि–वद्धीसग–सुघोस–णंदि–सूसरपरिवाइणी–वंस–तूणग–पव्वग–तंती–तल–ताल–तुडिय–णिग्घोसगीय–वाइयाइं। णड–णट्टग–जल्ल–मल्ल–मुट्ठिग–वेलंबग–कहग–पवग–लासग–आइक्खग–लंख–मंख तूणइल्ल–तुंबवीणिय–तालायर–पकरणाणि य, बहूणि महुरसरगीय–सुस्सराइं कंची–मेहला–कलाव–पतरग–पहेरग–पायजालग–घंटिय–खिंखिणि–रयणोरुजालिय–छुद्दिय–णेउर–चलण–मालिय–कणग–णियल–जालग–भूसण–सद्दाणि, लीलचंकम्ममाणाणुदीरियाइं तरुणीजणहसिय–भणिय–कलरिभिय–मंजुलाइं गुणवयणाणि व बहूणि–महुरजण–भासियाइं अण्णेसु य एवमाइएसु सद्देसु मणुण्णभद्दएसु ण तेसु समणेण सज्जियव्वं, ण रज्जियव्वं, ण गिज्झियव्वं, ण मुज्झियव्वं, ण विणिग्घायं आवज्जियव्वं, ण लुभियव्वं, ण तुसियव्वं, ण हसियव्वं, ण सइं च मइं च तत्थ कुज्जा।

पुणरवि सोइंदिएण सोच्चा सद्दाइं अमणुण्णपावगाइं–

[प्र.] किं ते ?

[उ.] अक्कोस–फरुस–खिंसण–अवमाणण–तज्जण–णिब्भंछण–दित्तवयण–तासण–उक्कूजिय–रुण्ण–रडिय–कंदिय–णिग्घुट्ठरसिण–कलुण–विलवियाइं अण्णेसु य एवमाइएसु सद्देसु अमणुण्ण–पावएसु ण तेसु समणेण रूसियव्वं, ण हीलियव्वं, ण णिंदियव्वं, ण खिंसियव्वं, ण छिंदियव्वं, ण भिंदियव्वं, ण वहेयव्वं, ण दुगुंछावत्तियाए लब्भा उप्पाएउं।

एवं सोइंदिय–भावणा–भाविओ भवइ अंतरप्पा मणुण्णाऽमणुण्ण–सुब्भिदुब्भि–राग–दोसप्पणिहियप्पा साहू मणवयणकायगुत्ते संवुडे पणिहिइंदिए चरेज्ज धम्मं।

१६५. इस पूर्वोक्त परिग्रहविरमण रूप अन्तिम व्रत की सुरक्षा के लिए पाँच भावनाएँ है। उनमे से प्रथम भावना (श्रोत्रेन्द्रिय–सयम) इस प्रकार है–

श्रोत्रेन्द्रिय से, मनोज्ञ और कर्णप्रिय–सुहावने प्रतीत होने वाले शब्दो को सुनकर साधु को उन पर राग नही करना चाहिए।

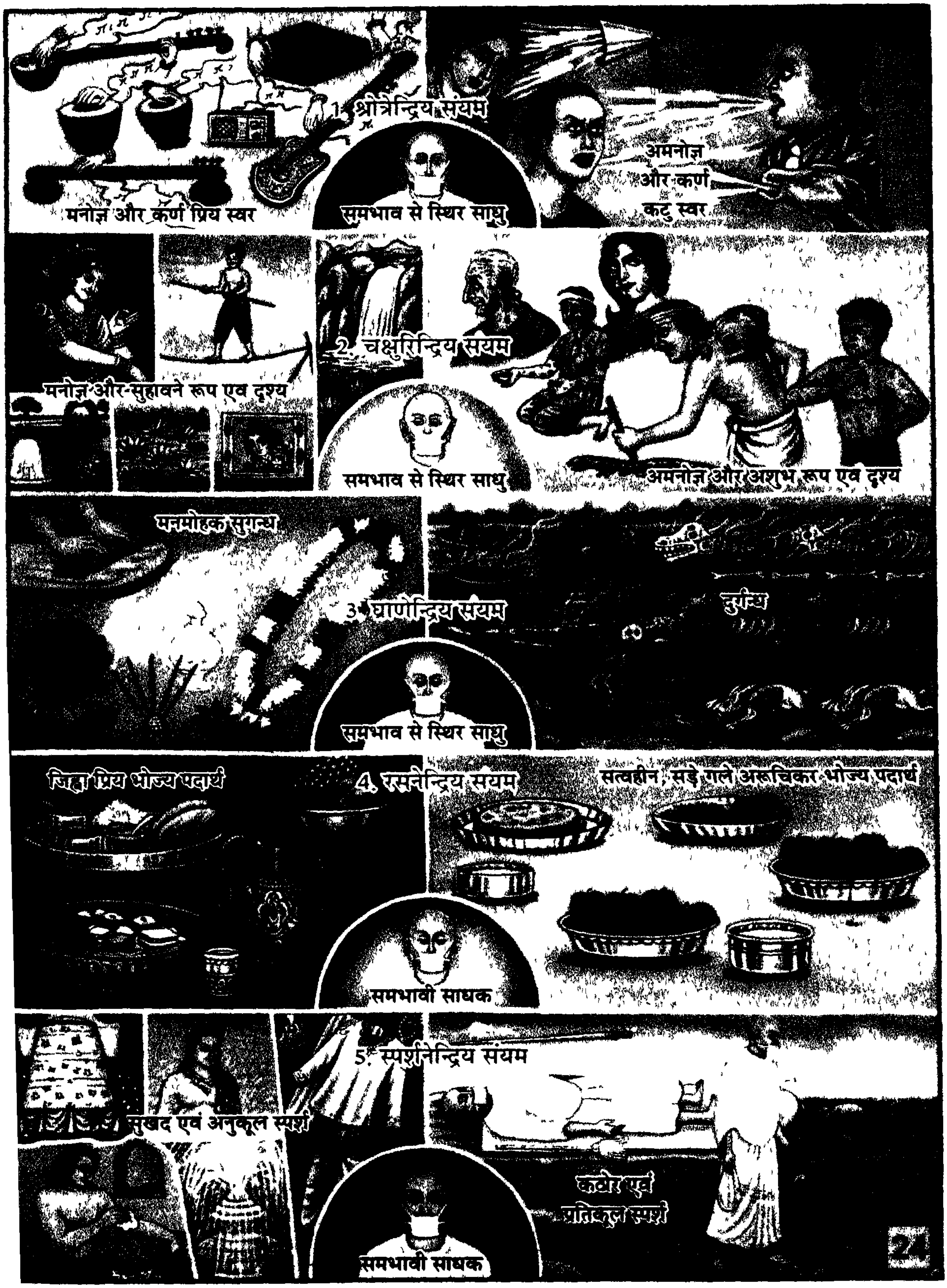
[प्र.] वे शब्द मनोज्ञ कौन-से, किस प्रकार के है ?

[उ] (इसके उत्तर मे कहते है) बडा मृदग-महामर्दल, छोटा मृदग, पणव-छोटा ढोल, दर्दुर-चमडे से मढे मुख वाला और कलश जैसा ढोलक, कच्छभी-वाद्यविशेष, वीणा, विपची और वल्लकी (विशेष प्रकार की वीणाएँ), वद्दीसक नाम का बाजा, सुघोषा नामक एक प्रकार का घटा, नन्दी-बारह प्रकार के बाजों का निर्घोष, सूसरपरिवादिनी-एक प्रकार की वीणा, वश-बासुरी, तूणक एवं पर्वक नामक वाद्य, तत्री-एक विशेष प्रकार की वीणा, तल-हस्ततल, ताल-कास्य-ताल, इन सब बाजो के नाद को (सुनकर) तथा नट, नर्तक, जल्ल-बाँस या रस्सी के ऊपर खेल दिखलाने वाले, मल्ल, मुष्टिमल्ल, विदूषक, कथा कहने वाले, प्लवक-उछलने वाले, रास गाने वाले शुभाशुभ फल बताने वाले, चित्रपट दिखाने वाले, तूण (तुनतुनी) नामक बाजा बजाने वाले, तुम्बी की वीणा बजाने वाले, करताल बजाने वाले आदि द्वारा किये जाने वाले नाना प्रकार की मधुर ध्वनि से युक्त सुस्वर गीतो को (सुनकर) तथा करधनी-कदोरा, मेखला (विशिष्ट प्रकार की करधनी), कलापक-गले का एक आभूषण, प्रतरक और प्रहेरक नामक आभूषण, पादजालक-नूपुर आदि आभरणो के एव घण्टिका-घुघरू, खिखिनी-छोटी घटियो वाला आभरण, रत्नोरुजालक-रत्नो का जघा का आभूषण, क्षुद्रिका नामक आभूषण, नेउर-नूपुर, चरणमालिका तथा कनकनिगड नामक पैरो मे पहनने के सोने के कडे और जालक नामक आभूषण, इन सबकी ध्वनि-आवाज को (सुनकर) तथा लीलापूर्वक चलती हुई स्त्रियो की चाल से उत्पन्न (ध्वनि को) एव तरुणी रमणियो का हास्य तथा स्वर-मधुरतापूर्वक बोले गये शब्द तथा सुन्दर आवाज को (सुनकर) और स्नेही जनो द्वारा भाषित प्रशसा-वचनो को एव इसी प्रकार के मनोज्ञ एव सुहावने वचनो को (सुनकर) उनमे साधु को आसक्त नही होना चाहिए, राग नही करना चाहिए, गृद्धि-अप्राप्ति की अवस्था मे उनकी प्राप्ति की आकाक्षा नही करनी चाहिए, मुग्ध नही होना चाहिए, उनके लिए स्व-पर का घात नही करना चाहिए, लोभ नही होना चाहिए, तुष्ट-प्राप्ति होने पर प्रसन्न नही होना चाहिए, हँसना नही चाहिए, ऐसे शब्दो का स्मरण और विचार भी नही करना चाहिए।

इसके अतिरिक्त श्रोत्रेन्द्रिय से अमनोज्ञ तथा पापजन्य अशुभ शब्दो को-मन में अप्रीतिजनक एव पापजन्य-अभद्र शब्दो को सुनकर रोष (द्वेष) नही करना चाहिए।

[प्र.] वे (अशुभ) शब्द-कौन कौन से है ?

[उ.] आक्रोश वचन, कठोर वचन, निदात्मक वचन, अपमान वचन, डाट फटकार, धिक्कार वचन, दीप्त वचन, त्रासजनक वचन, उत्कूजित-अस्पष्ट उच्च ध्वनि, रुदन ध्वनि, रटित-धाड मारकर रोने, क्रन्दन-वियोगजनित विलाप आदि की ध्वनि, निर्घुष्ट-निर्घोषरूप ध्वनि, रसित-जानवर के समान चीत्कार, करुणाजनक शब्द तथा विलाप के शब्द-इन सब शब्दो मे तथा इसी प्रकार के अन्य अमनोज्ञ एव पापजनित-अभद्र शब्द कान मे पडने पर साधु को रोष नही करना चाहिए, उनकी हीलना नही करनी चाहिए, निन्दा नही करनी चाहिए, न दूसरे लोगो के सामने उनकी बुराई करनी चाहिए, अमनोज्ञ शब्द उत्पन्न करने वाले पदार्थ या व्यक्तियो के छेदन भेदन में प्रवृत्त नही होना चाहिए, न वध करना चाहिए। न ही अपने अथवा दूसरे के हृदय मे जुगुप्सा उत्पन्न करनी चाहिए।



1. श्रोत्रेन्द्रिय संयम
मनोज्ञ और कर्ण प्रिय स्वर
समभाव से स्थिर साधु
अमनोज्ञ
और कर्ण
कटु स्वर
2. चक्षुरिन्द्रिय संयम
मनोज्ञ और सुहावने रूप एव दृश्य
समभाव से स्थिर साधु
अमनोज्ञ और अशुभ रूप एव दृश्य
मनमोहक सुगन्ध
3. घ्राणेन्द्रिय संयम
दुर्गन्ध
समभाव से स्थिर साधु
जिह्वा प्रिय भोज्य पदार्थ
4. रसनेन्द्रिय संयम
सत्वहीन, सड़े गले अरुचिकर भोज्य पदार्थ
समभावी साधक
5. स्पर्शनेन्द्रिय संयम
सुखद एवं अनुकूल स्पर्श
कठोर एवं
प्रतिकूल स्पर्श
समभावी साधक
24

चित्र-परिचय 24

Illustration No. 24

अपरिग्रह व्रत की पाँच भावनाएँ

अपरिग्रह व्रत के साधक को इन पाँच भावनाओ का सदा पालन करना चाहिए—

(1) **श्रोत्रेन्द्रिय सयम भावना**—वीणा का स्वर, तबले की ताल ढोलक को ढाप आदि कानो को प्रिय लगने वाले स्वरो को सुनकर साधक आसक्त न बने इसके विपरीत क्रन्दन, रुदन जोर-जोर से चिल्लाना आदि कान को कटु लगने वाले स्वरो पर क्रोध और द्वेष न करे।

(2) **चक्षुरिन्द्रिय सयम भावना**—स्त्रियो के सुन्दर रूप, बाग-बगीचे कमल सरोवर, टी वी , नट का खेल और इसी प्रकार के आँखो को प्रिय लगने वाले रूप एव दृश्य देखकर उन पर अनुराग न करे एव अशुभ रूप एव दृश्य देखकर मन मे द्वेष अथवा घृणा भाव न लाये।

(3) **घ्राणेन्द्रिय सयम भावना**— चन्दन, गुलाब, सुगन्धित फूलो की माला, श्रेष्ठ धूप और इसी प्रकार की अन्य उत्तम सुगन्धो पर मुनि को आसक्त नहीं होना चाहिए तथा अशुभ गन्धो जैसे नालो की दुर्गंध, सड़े गले जानवरो के शवो आदि से उठने वाली असह्य दूर तक फैली दुर्गंध आदि पर घृणा नही करनी चाहिए।

(4) **रसनेन्द्रिय सयम भावना**—सुन्दर रसीला भोजन, विविध प्रकार की घी तेल आदि से बनी हुई मिठाईयाँ, उत्तम प्रकार के रस, स्वादिष्ट फल एव इसी प्रकार की अन्य मनोज्ञ रस वाली वस्तुओ पर आकर्षण न करे। इसके विपरीत रसहीन विकृत, कटु-कषैले पदार्थो एव अशुभ रसो पर रोष एव घृणा नही करनी चाहिए।

(5) **स्पर्शनेन्द्रिय सयम भावना**—सुन्दर पलग मुलायम उत्तम वस्त्र पानी के फव्वारे आदि के सुखद एव अनुकूल स्पर्शों के प्रति अनुरक्त नहीं होना चाहिए। इसके विपरीत कठोर शय्या, विहार मे ठोकर आदि लगने पर, कर्कश काँटे चुभने पर साधु को रुष्ट नहीं होना चाहिए।

—सूत्र 165-169, पृ 418-429

FIVE SENTIMENTS OF VOW OF NON-COVETOUSNESS

An aspirant practicing the vow of non-covetousness should always nurture the following five sentiments–

(1) Sentiment of restraining the sense organ of hearing The aspirant should not get infatuated with the sweet sounds like those of Veena, Tabla drum etc At the same time he should not despise and get angry at oppressive and harsh sounds like those of wailing, crying, shouting etc

(2) Sentiment of restraining the sense organ of seeing - The aspirant should not get infatuated with appearances pleasing to the eyes, including beauty of women gardens lotus ponds television acrobatic performances etc At the same time he should not despise or be averse to unpleasing and repulsive scenes

(3) Sentiment of restraining the sense organ of smelling The aspirant should not get infatuated with the sweet smells like those of sandal-wood rose garlands of fragrant flowers, incenses and other fragrant substances He should not despise and get angry at oppressive and repulsive smells like those of sever, rotting cadavers and other such stink

(4) Sentiment of restraining the sense organ of taste - The aspirant should not get infatuated with rich food, sweets cooked in butter good quality juices, fruits and other tasty eatables At the same time he should not despise and get angry at tasteless stale bitter, astringent and other such repulsive food

(5) Sentiment of restraining the sense organ of touch – The aspirant should not get infatuated with pleasing and soft touch like that of comfortable bed, soft and good quality dresses, shower from a fountain, etc At the same time he should not despise and get angry at oppressive and harsh touch like hard bed, hurt of stumbling on a stone, sting of a thorn etc

— Sutra-165-169, pages-418-429

इस प्रकार श्रोत्रेन्द्रिय की भावना से भावित साधु का अन्तरात्मा मनोज्ञ-अमनोज्ञ या शुभाशुभ शब्दो पर राग और द्वेष को सर्वथा रोक लेता है, वह मन, वचन और काया का गोप्ता साधु ही संवर भाव से युक्त होकर इन्द्रियों पर नियत्रण करता हुआ चारित्र धर्म का पालन करता है।

165. There are five sentiments for the vow of non-attachment in possessions or for safeguarding the Samvar of non-attachment, which is the last vow of non-attachment The first sentiment (restraint in respect of hearing) is as fallows

A monk should not feel elated (attached) by hearing words of his liking through his ears

[Q.] What are such words ? In what form are they said

[Ans.] The words of one's liking are those of large and small Mridanga (a percussion instrument), of Panav (small drum), of Dardur—a musical instrument covered with leather at its face and looking like a pot, Kachhabhi—a special musical instrument, Veena, Vipanchi, Vallaki–special type of Veena, Vaddeesak, Sughosha—a kind of bell, Susunapanivadini—a type of Veena, flute, Toorak, Parvak, Nandi—the music of twelve musical instruments played simultaneously, Tantri—a special type of Veena, Tal, Taal (kansya taal). A monk should not get attracted at the music of the said instruments Dancers dance on pole and rope The wrestlers show their bouts The clowns, the story tellers, the jumpers, the singers, entertain the public with their sports and the music of Kardham and mekhala (special type of chain worn at the waist), the small bells, the ornament having bells, the ornament Kalapak worn at the neck, pratarak, praharak (names of ornaments), foot-ornaments the jewelled ornament of the thigh (ratnonyalak), Kshudrika, Chamamalika and Kanakanigad—the ornaments of feet and Jalak All these ornaments produce sound at the movement of dancer and when women move in a pleasant mood. The young ladies produce sounds of laughter and amorous talk The relatives utter words of appreciation. A monk should not be interested in such pleasant words He should not get attracted towards them. He should not have a desire to listen to them again when they are no longer there He should not feel happy when he hears them He should not cause any damage for their sake He should not laugh at them He should not keep such words in his memory. He should not think of them.

Further a monk should not feel dejected when he listens unpleasant derogatory words

[Q.] What are such words and in what form are they produced ?

[Ans.] They are the words uttered in a fit of anger The words expressing condemnation disgrace, creating fear or asking one to get away, the harsh words, frightening words, indistinct words, the sound of weeping, moaning, wailing, weeping loudly due to separation, crying like an animal, sounds seeking compassion All such words and suchlike other words should not adversely affect a monk He should not condemn them, tell ill of them He should not call them bad before the public gathering He should not cut or destroy the substance which produces unpleasant sounds He should not create hatred in the mind of others

Thus a monk should lead such a life that his mind may have such a feeling about the sense of hearing that he may have no attachment or hatred in god pleasant words or bad unpleasant words He should have full control on mind, words and body He should have control over his senses Only such monk truly follows the ascetic conduct

द्वितीय भावना–चक्षुरिन्द्रिय सवर

SECOND SENTIMENT STOPPAGE OF KARMA INFLOW RELATING TO SENSE OF SIGHT

१६६. बिइयं–चक्खुइंदिएण पासिय रूवाणि मणुण्णाइ भद्दगाइं, सचित्ताचित्तमीसगाइ कट्ठे पोत्थे य चित्तकम्मे लेप्पकम्मे सेले य दंतकम्मे य पंचहिं वण्णेहिं अणेगसंठाणसंठियाइं, गंठिम–वेढिम–पूरिम–संघाइमाणि य मल्लाइं बहुविहाणि य अहियं णयणमणसुहयराइं, वणसंडे पव्वए य गामागरणयराणि य खुद्दिय–पुक्खरिणि–वावी–दीहिय–गुंजालिय–सरसरपंतिय–सायर–बिल–पंतिय–खाइय–णईसर–तलाग–वप्पिणी–फुल्लुप्पल–पउमपरिमंडियाभिरामे अणेगसउणगण–मिहुण–वियरिए वरमंडव–विविह–भवण–तोरण–चेइय–देवकुल–सभा–प्पवा–वसह–सुकयसयणासण–सीय–रह–सयड–जाण–जुग्ग–संदण–णरणारिगणे य सोमपडिरूव–दरिसणिज्जे अलंकिय–विभूसिए पुव्वकयतवप्पभाव–सोहग्गसंपउत्ते णड–णट्टग–जल्ल–मल्ल–मुट्ठिय–वेलंबग–कहग–पवग–लासग–आइक्खग–लंख–मंख–तूणइल्ल–तुंबवीणिय–तालायर–पकरणाणि य बहूणि सुकरणाणि अण्णेसु य एवमाइएसु रूवेसु मणुण्णभद्दएसु ण तेसु समणेण सज्जियव्वं, ण रजियव्वं जाव ण सइं च मइं च तत्थ कुज्जा।

पुणरवि चक्खिंदिएण पासिय रूवाइं अमणुण्णपावगाइं–

[प्र.] किं ते ?

[उ.] गंडि–कोढिक–कुणि–उयरि–कच्छुल्ल–पइल्ल–कुज्ज–पंगुल–वामण–अंधिल्लग–एगचक्खु–विणिहयसप्पिसल्लग–वाहिरोगपीलियं, विगयाणि मयगकलेवराणि सकिमिणकुहियं च दव्वरासिं, अण्णेसु य एवमाइएसु अमणुण्ण–पावगेसु ण तेसु समणेणं रूसियव्वं जाव ण दुगुंछावत्तिया वि लब्भा उप्पाएउं।

एवं चक्खिंदियभावणाभाविओ भवइ अंतरप्पा जाव चरेज्ज धम्मं।

१६६. द्वितीय भावना चक्षुरिन्द्रिय का सवर है। वह इस प्रकार है–

चक्षुरिन्द्रिय से मनोरम एव भद्र–सुन्दर सचित्त, अचित्त और मिश्र–सचित्ताचित्त पदार्थ के रूपो को देखकर (राग नही करना चाहिए)। वे रूप चाहे काष्ठ सम्बन्धी, पुस्तक या वस्त्र सम्बन्धी, चित्र सम्बन्धी, मिट्टी आदि के लेप से बनाये गये हो, पत्थर पर अकित हो, हाथीदाँत आदि पर हो, पाँच वर्ण के और नाना प्रकार के आकार वाले हो, गूँथकर माला आदि की तरह बनाये गये हो, वेष्टन से, चपडी आदि भरकर अथवा सघात से–फूल आदि की तरह एक–दूसरे को मिलाकर बनाये गये हो, अनेक प्रकार की मालाओ के रूप हो और वे नयनो तथा मन को अत्यन्त आनन्द प्रदान करने वाले हो (तथापि उन्हे देखकर राग नही उत्पन्न होने देना चाहिए)।

इसी प्रकार वनखण्ड, पर्वत, ग्राम, आकर, नगर तथा विकसित नील कमलो एव (श्वेतादि) कमलो से सुशोभित और मनोहर तथा जिनमे हस, सारस आदि अनेक पक्षियो के जोडे विचरण कर रहे हो, ऐसे छोटे जलाशय, गोलाकार बावडी, चौकोर बावडी, लम्बी बावडी, नहर, सरोवरो की कतार, सागर, बिलपक्ति, लोहे आदि की खानो मे खोदे हुए गड्ढो की पक्ति, खाई, नदी, बिना खोदे प्राकृतिक रूप से बने सरोवर, तालाब, नहर (आदि को देखकर) अथवा उत्तम मण्डप, विविध प्रकार के भवन, तोरण, चैत्य–स्मारक, देवालय, सभा, प्याऊ, आवसथ–परिव्राजको के आश्रम, सुनिर्मित शय्या, सिहासन आदि आसन, पालकी, रथ, गाडी, यान, युग्य–यानविशेष, स्यन्दन–घुघरूदार रथ या साग्रामिक रथ और नर–नारियो के झुड, ये सब वस्तुएँ यदि सौम्य हो, आकर्षक रूप वाली दर्शनीय हो, आभूषणो से अलकृत और सुन्दर वस्त्रो से विभूषित हो, पूर्व मे की हुई तपस्या के प्रभाव से सौभाग्य को प्राप्त हो तो (इन्हे देखकर) तथा नट, नर्तक, वादक, मल्ल, मुक्केबाज, विदूषक, कथावाचक, तैराक, रास करने वाले व वार्त्ता कहने वाले, चित्रपट लेकर भिक्षा माँगने वाले, बाँस पर खेल करने वाले, तूणइल्ल–तूणा बजाने वाले, तूम्बे की वीणा बजाने वाले एव तालाचरो के विविध प्रयोग देखकर तथा बहुत से करतबो को देखकर (आसक्त नही होना चाहिए)। इस प्रकार के अन्य मनोज्ञ तथा सुहावने रूपो मे साधु को आसक्त नही होना चाहिए, अनुरक्त नही होना चाहिए, यावत् उनका स्मरण और विचार भी नही करना चाहिए।

इसके सिवाय चक्षुरिन्द्रिय से अमनोज्ञ और पापजनित अशुभ रूपो को देखकर (रोष नही करना चाहिए)।

[प्र.] वे (अमनोज्ञ रूप) कौन–से हैं ?

[उ.] गडमाला के रोगी को, कोढी को, लूले-कुट-टोटे को, जलोदर के रोगी को, खुजली के रोगी को, कठोर पैर या हाथीपगा के रोगी को, कुबडे लँगडे को, वामन-बौने को, जन्मान्ध को, एकचक्षु (काणे) को, विनिहत चक्षु को-जन्म के पश्चात् जिसकी एक या दोनो आँखे नष्ट हो गई हो, भूतपिशाच-ग्रस्त को अथवा पीठ झुकाकर हाथ मे लकडी लेकर चलने वाले को, विशिष्ट चिर स्थायी रूप व्याधि या रोग से पीडित को (इनमे से किसी को देखकर) तथा विकृत, मृतक-कलेवरो को या कीडो से युक्त सडी-गली द्रव्यराशि को देखकर अथवा इनके सिवाय इसी प्रकार के अन्य अमनोज्ञ और पापजन्य अशुभ रूपो को देखकर साधु को उन रूपो के प्रति रोष नही करना चाहिए, उनकी हीलना नही करनी चाहिए, निन्दा नही करनी चाहिए, ना दूसरे लोगो के सामने उनकी बुराई करनी चाहिए। और न ही अमनोज्ञ रूपो को देखकर छेदन-भेदन, मारपीट जुगुप्सा करनी चाहिए।

इस प्रकार चक्षुरिन्द्रिय-सवर रूप भावना से भावित अन्त करण वाला होकर सुसाधु पूर्व वर्णित चारित्र धर्म का भलीभाति आचरण करता है।

166. Second sentiment is about Samvar of sense of sight It is as follows

A monk should not have a feeling of attachment for the living, non-living and living as wall as non-bring objects, which are to his liking even if they are of wood, cloth, pictures or books or are made with earthen plaster, or carved on stone or tusk They may be of the five colours and of different shape. They may be made like a garland or prepared by hands They may be prepared after stuffing some substance or by joining each other like flowers They may be like various types of rosaries They may be providing great pleasure to the mind and to the eyes Still a monk should not allow any feeling of attachment to creep in at their sight

Similarly their may be forests, mountains, villages, towns, small watersheds, circular, square or long bodies (collections of water), chain of tanks, sea, row of holes and ditches in iron mines, ditches, river, natural water reservoirs, tanks, water-beds, beautiful enclaves, various types of buildings, gates, memorials, temples, assembly halls, water-serving stations, ashrams of Sanyasis, well-constructed beds, seats, palanquins chariots, carts, transports, special transports, belled chariots, war chariots and gatherings of men and women Such things may be beautiful, attractive worth-seeing, well-decorated with cloth and ornaments They may be fortmate due to the effect of earlier austerities These may be dancers, wrestlers, clowns, boxers, story-tellers,

swimmeers, alms seekers through showing picture-cloth, bamboo dancers, flute players or Veena players A monk should not get absorbed and attached at seeing these and the activities of such persons. A monk should not become deeply attached in other suchlike pleasant scenes. He should not recollect them and should not ponder over them

Further, a monk should not become angry at the sight of unpleasant and sinful sights irritating to the eyes.

[Q.] What are such unpleasant sights ?

[Ans.] There may be persons suffering illness, due to wind, cough and pitta in the body, persons suffering from eighteen types of diseases including leprosy, person suffering from kunt, kuni, tote, the diseases relating to stomach, person suffering from scabies, flat foot. There may be one-legged persons, dwarfs, blind since birth, one-eyed persons, blind persons, persons affected by ghost, creatures moving with the back, persons suffering from serious disease like chittapeed. There may be corpses, rotten things in which worms have appeared There may be other such like unpleasant and sinful scenes. A monk should not be angry at their sight He should not cause disgrace to them He should not have any latent contempt for them.

Thus a monk should practice ascetic conduct with the mind saturated with feelings in the form of Samvar of the sense of seeing

तीसरी भावना–घ्राणेन्द्रिय संयम **THIRD SENTIMENT–RESTRAINT OF SENSE OF SMELL**

१६७. तइयं–घाणिंदिएण अग्घाइय गंधाइं मणुण्णभद्दगाइं–

[प्र.] किं ते ?

[उ.] जलय–थलय–सरस–पुप्फ–फल–पाणभोयण–कुट्ठ–तगर–पत्त–चोय–दमणग–मरुय–एलारस–पिक्क–मंसि–गोसीस–सरस–चंदण–कप्पूर–लवंग–अगर–कुंकुम–कक्कोल–उसीर–सेयचंदण–सुगंधसारंग–जुत्तिवर–धूववासे उउय–पिंडिम–णिहारिमगंधिएसु अण्णेसु य एवमाइएसु गंधेसु मणुण्णभद्दएसु ण तेसु समणेण सज्जियव्वं जाव ण सइं च मइं च तत्थ कुज्जा।

पुणरवि घाणिंदिएण अग्घाइय गंधाइं अमणुण्णपावगाइं–

[प्र.] किं ते ?

[उ.] अहिमड–अस्समड–हत्थिमड–गोमड–विग–सुणग–सियाल–मणुय–मज्जार–सीह–

दीविय-मयकुहिय-विणट्ठकिविण-बहुदुरभिगंधेसु अण्णेसु य एवमाइएसु गंधेसु अमणुण्ण-पावगेसु ण तेसु समणेण रूसियव्वं जाव पणिहिएंदिए चरेज्ज धम्मं।

१६७. तीसरी भावना घ्राणेन्द्रिय संवर है- घ्राणेन्द्रिय से मनोज्ञ और घ्राणप्रिय गध को सूँघकर (रागादि नही करना चाहिए)।

[प्र.] वे सुगन्ध क्या-कैसे है ?

[उ] जल और थल मे उत्पन्न होने वाले सरस पुष्प, फल, पेय पदार्थ, भोजन, कमलकुष्ठ, तगर, तमालपत्र, सुगधित छाल-दालचीनी आदि, दमनक (एक विशेष प्रकार का फूल)-मरुआ, इलायची का रस, पका हुआ जटामासी नामक सुगध वाला द्रव्य, गोशीर्ष नामक सरस चन्दन, कपूर, लोग, अगर, कुकुम, कक्कोल-गोलाकार सुगधित फलविशेष, उशीर-खसखस, श्वेत चन्दन, खुशबूदार पत्तो व अन्य सुगन्धित द्रव्यो के सयोग से बनी श्रेष्ठ धूप की सुगन्ध को सूँघकर (रागभाव नही धारण करना चाहिए) तथा भिन्न-भिन्न ऋतुओ मे उत्पन्न होने वाले अत्यत गहरी सुगन्ध वाले एव दूर-दूर तक फैलने वाली सुगन्ध से युक्त पदार्थो मे और इसी प्रकार की मनोहर, नासिका को प्रिय लगने वाली सुगन्ध के विषय मे मुनि को आसक्त नही होना चाहिए, यावत् अनुरागादि नही करना चाहिए। उनका स्मरण और विचार भी नही करना चाहिए।

इसके अतिरिक्त घ्राणेन्द्रिय से अमनोज्ञ और अशुभ गधो को सूँघकर (रोष आदि नही करना चाहिए)।

[प्र] वे अशुभ गन्ध कौन-कौन से है ?

[उ.] मरे हुए सर्प, मृत घोडा, मरे हुए हाथी, मरी हुई गाय तथा भेडिया, कुत्ता, श्रृगाल, मनुष्य, बिल्ली, सिह और चीता आदि के सडे-गले शवो की, जिसमे कीडे बिलबिला रहे हो, दूर-दूर तक असह्य दुर्गन्ध फैल रही हो तथा इसी प्रकार के और भी अमनोज्ञ और असुहावनी दुर्गन्धो के विषय मे साधु को रोष नही करना चाहिए यावत् अपनी पाचो इन्द्रियो को वशीभूत करके चारित्र धर्म का आचरण करना चाहिए।

167. The third sentiment is restraint of smell A monk should not become attached at the smell pleasant to the sense of smell.

[Q.] In what from is that smell ?

[Ans.] There are beautiful flowers and fruits growing in land and in water There are eatables, drinks, utpalakushth, tagar, tamaal leaves, sweet smelling skin of plants, damanak (a special type of flowers), marua, cardamom, jatamasi, gosheersh sandalwood, camphor, clove, agar, kumkum, kakkol (a fragrant round fruit), usheer, white sandalwood, special incense prepared with mixture of fragrant

materials All such articles are very pleasant to smell There are other substances also which grow in different seasons at their proper time and their pleasant small spreads in a very large area. The smell of all above-said articles is very good and is highly, pleasant to the nose A monk should not get attracted to that smell. He should not become attached to it He should not even recollect it and think of it.

Further, a monk should not feel disgust or enraged at the unpleasant smell that is despised by the nose

[Q.] What are the unpleasant smells ?

[Ans.] The dead body of a snake, horse, elephant, cow, wolf, dog, human being, cat, jackal, lion, leopard, their rotten corpses where in worms have appeared, give out extremely drastic smell that spreads to a very large distance There are other suchlike substances that produce unpleasant derogatory smell A monk should not feel disgusted or angry at it He should practice his ascetic conduct keeping his senses under complete control

चतुर्थ भावना–रसनेन्द्रिय संयम **FOURTH SENTIMENT RESTRAIN ON TASTE**

१६८. चउत्थं–जिब्भिंदिएण साइय रसाणि मणुण्णभद्दगाइं।

[प्र.] किं ते ?

[उ.] उग्गाहिमविविहपाण–भोयण–गुलकय–खंडकय–तेल्ल–घयकय–भक्खेसु–बहुविहेसु लवणरससंजुत्तेसु महुमंस–बहुप्पगारमज्जिय–णिट्ठाणगदालियंब–सेहंब–दुद्ध–दहि–सरय–मज्ज–वरवारुणी–सीहु–काविसायण–सायट्ठारस–बहुप्पगारेसु भोयणेसु य मणुण्ण–वण्ण–गंध–रस–फास–बहुदव्वसंभिएसु अण्णेसु य एवमाइएसु रसेसु मणुण्णभद्दएसु ण तेसु समणेण सज्जियव्वं जाव ण सइं च मइं च तत्थ कुज्जा।

पुणरवि जिब्भिंदिएण साइय रसाइं अमुण्णपावगाइं–

[प्र.] किं ते ?

[उ.] अरस–विरस–सीय–लुक्ख–णिज्जप्प–पाण–भोयणाइं दोसीण–वावण्ण–कुहिय–पूइय–अमणुण्ण–विणट्ठप्पसूय–बहुदुब्भिगंधियाइं तित्त–कडुय–कसाय–अंबिल–रस–लिंडणीरसाइं, अण्णेसु य एवमाइएसु रसेसु अमणुण्ण–पावगेसु ण तेसु समणेण रूसियव्वं जाव चरेज्ज धम्मं।

१६८. चतुर्थ भावना रसनेन्द्रिय सवर है– रसनेन्द्रिय से मनोज्ञ एव जिह्वा को प्रिय रसो का स्वाद लेकर उनमे आसक्त नही होना चाहिए।

[प्र.] वे (प्रियरस) क्या-कैसे है?

[उ.] घी-तैल आदि मे तलकर बनाये हुए खाजा, घेवर आदि पकवान, विविध प्रकार के पेय पदार्थ-द्राक्षापान आदि, गुड या शक्कर के बनाये हुए भोज्य पदार्थ, तेल अथवा घी से बने हुए मालपूवा आदि वस्तुओ मे, जो अनेक प्रकार के लवण रसो से युक्त हो, मधु, माँस, बहुत प्रकार की मदिरा, बहुमूल्य सामग्री से बनाया गया भोज्य, दालिकाम्ल-खट्टी दाल, सैन्धाम्ल-रायता आदि, दही, सरक, मद्य, उत्तम प्रकार की वारुणी, सीधु तथा कापिशायन नामक मदिराएँ, अठारह प्रकार के शाक और अनेक प्रकार के मनोज्ञ वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श से युक्त अनेक द्रव्यो से निर्मित भोजन मे तथा इसी प्रकार के अन्य मनोज्ञ एव सुहावने-लुभावने रसो मे साधु को आसक्त नही होना चाहिए, यावत् उनका स्मरण तथा विचार भी नही करना चाहिए।

इसके अतिरिक्त जिह्वा-इन्द्रिय से अमनोज्ञ और अरुचिकर रसो को चख कर (उनमे रोष आदि नही करना चाहिए)।

[प्र] वे अमनोज्ञ रस कौन कौनसे है?

[उ] रसहीन-हीग आदि के सस्कार से रहित होने के कारण रसहीन, चलित रस या बिगडे रसो से युक्त ठण्डा, रूखे-बिना चिकनाई के, निसत्त्व भोजन-पानी को तथा रात-वासी, व्यापन्न-रग बदले हुए, सडे हुए, अपवित्र होने के कारण अमनोज्ञ अथवा अत्यन्त विकृत हो चुकने के कारण जिनसे दुर्गन्ध निकल रही हो ऐसे तीखे, कटु, कसैले, खट्टे, शैवालरहित पुराने पानी के समान एव नीरस पदार्थों मे तथा इसी प्रकार के अन्य अमनोज्ञ तथा अशुभ रसो मे साधु को रोष धारण नही करना चाहिए यावत् सयतेन्द्रिय होकर धर्म का आचरण करना चाहिए।

168. The fourth restraint is that of taste A monk should not get attached to pleasant and beautiful juices that are according to his taste

[Q.] What are such juices ?

[Ans.] Some preparations are made in ghee and oil Many dishes are prepared from grapes and sugar Many sweats such as maalpuas are prepared There are salty preparation also Many types of dishes are prepared with honey, the pulp and the like after spending a lot of money The sour pulse and churned curd is prepared. Many high class wines and intoxicating drinks such as varuni, seedhi, pishayan are prepared There are eighteen types of vegetable preparation and many others which are pleasant in colour, smell, taste and touch. A monk should not be attached in such pleasant attractive preparations pleasant to the taste. He should not remember them. He should not even think of them.

Further a monk should not feel disgusted or become angry at the food and juices which are unpleasant to his sense of taste.

[Q.] What are such things unpleasant to the taste ?

[Ans.] There are dishes which are not tasty as sweet-smelling articles such as heeng has not been added to it or which have lost their taste due to the time period lapsed since their preparation. Some have lost their taste as they have becomes cold, or are without oily substance, or have become stale and unfit for eating They have changed in colour They have become rotten and impure They are giving out bad smell as they have totally deformed. Suchlike tasteless substances are like bitter, sour, pungent old water having no taste. A monk should not get disgusted at such and other suchlike unpleasant and bad preparations He should not feel angry He should practice his ascetic discipline keeping his senses under full control

पाँचवी भावना–स्पर्शनेन्द्रिय संयम **FIFTH SENTIMENT CONTROL OVER SENSE OF TOUCH**

१६९. पंचमगं–फासिंदिएण फासिय फासाइं मणुण्णभद्दगाइं–

[प्र.] किं ते ?

[उ.] दग–मंडव–हार–सेयचंदण–सीयल–विमल–जल–विविहकुसुम–सत्थर–ओसीर–मुत्तिय– मुणाल–दोसिणा–पेहुणउक्खेवग–तालियंट–वीयणग–जणियसुहसीयले य पवणे गिम्हकाले सुहफासाणि य बहूणि सयणाणि आसणाणि य पाउरणगुणे य सिसिरकाले अंगारपयावणा य आयवणिद्धमउयसीय–उसिण–लहुआ य जे उउसुहफासा अंगसुह–णिव्वुइगरा ते अण्णेसु य एवमाइएसु फासेसु मणुण्णभद्दगेसु ण तेसु समणेण सज्जियव्वं, ण रज्जियव्वं, ण गिज्झियव्वं, ण मुज्झियव्वं, ण विणिग्घायं आवज्जियव्वं, ण लुब्भियव्वं, ण अज्झोववजियव्वं, ण तूसियव्वंए, ण हसियव्वं, ण सइं च मइं च तत्थ कुज्जा।

पुणरवि फासिंदिएण फासिय फासाइं अमणुण्णपावगाइं–

[प्र.] किं ते ?

[उ.] अणेगवह–बंध–तालणंकण–अइभारारोवणए, अंगभंजण–सूईणखप्पवेस–गायपच्छणण–लक्खारस–खार–तेल्ल–कलकलंत–तउय–सीसग–काल–लोहसिंचण–हडिबंधण–रज्जुणिगल–संकल–हत्थंडुय–कुंभिपागदहण–सीहपुच्छण–उब्बंधण–सूलभेय–गयचलणमलण–करचरण–कण्ण–णासोट्ठ–सीसच्छेयण जिब्भच्छेयणवसण–णयण–हियय–दंतभंजण–जोत्तलय–कसप्पहार–पाय–पण्हि–जाणु–पत्थर–णिवाय–पीलण–कविकच्छु–अगणि–विच्छुयडक्क–वायातव–दंसमसग–

णिवाए दुट्ठणिसज्जदुण्णिसीहिय-दुब्भि-कक्खड-गुरु-सीय-उसिणलुक्खेसु बहुविहेसु अण्णेसु य एवमाइएसु फासेसु अमणुण्णपावगेसु ण तेसु समणेण रूसियव्वं, ण हीलियव्वं, ण णिंदियव्वं, ण गरहियव्वं, ण खिंसियव्वं, ण छिंदियव्वं, ण भिंदियव्वं, ण वहेयव्वं, ण दुगंछावत्तियव्वं च लुब्भा उप्पाएउं।

एवं फासिदियभावणाभाविओ भवइ अंतरप्पा, मणुण्णामणुण्ण-सुब्भि-दुब्भिरागदोसपणिहियप्पा साहू मणवयणकायगुत्ते संवुडेणं पणिहिइंदिए चरिज्ज धम्मं।

१६९. पाचवी भावना स्पर्शनेन्द्रिय सवर है- स्पर्शनेन्द्रिय द्वारा मनोज्ञ और सुखद स्पर्शों को छूकर (रागभाव नही धारण करना चाहिए)।

[प्र.] वे (मनोज्ञ स्पर्श) कौन-से है ?

[उ] जलमण्डप-जिसमे पानी के फव्वारे चल रहे हो, हार, श्वेत चन्दन, शीतल निर्मल जल, विविध प्रकार के पुष्पो की शय्या-फूलो की सेज, खसखस, मोती, कमल की डडी, रात्रि मे चन्द्रमा की चॉदनी तथा मोर-पिच्छी, तालवृन्त-ताड के पखो से की गई सुखद शीतल हवा मे, ग्रीष्मकाल मे सुखद स्पर्श वाले अनेक प्रकार के शय्याओ मे, आसनो मे, शीतकाल मे ओढने के गुण वाले अर्थात् ठण्ड से बचाने वाले वस्त्रादि मे, अगारो से शरीर को तपाने, सूर्य की किरणो की धूप, चिकने-तेलादि पदार्थ, कोमल और शीतल, गर्म और हल्के-जो ऋतु के अनुकूल सुखप्रद स्पर्श वाले हो, शरीर को सुख और मन को आनन्द देने वाले हो, ऐसे सब स्पर्शों मे तथा इसी प्रकार के अन्य मनोज्ञ और सुहावने स्पर्शो मे श्रमण को आसक्त नही होना चाहिए, अनुरक्त नही होना चाहिए, गृद्ध नही होना चाहिए-उन्हे प्राप्त करने की अभिलाषा नही करनी चाहिए, मोह नही करना चाहिए, और स्व-परहित का विघात नही करना चाहिए, लोभ नही करना चाहिए, तल्लीनचित्त नही होना चाहिए, उनमे सन्तोषानुभूति नही करनी चाहिए, हँसना नही चाहिए, यहाँ तक कि उनका स्मरण और विचार भी नही करना चाहिए।

इसके अतिरिक्त स्पर्शनेन्द्रिय से अमनोज्ञ एव अशुभ स्पर्शो को छूकर (रुष्ट-द्वेष नही करना चीहिए)।

[प्र.] वे स्पर्श कौन कौनसे है ?

[उ] विविध प्रकार के रस्सी आदि के बन्धन, लाठी आदि से वध ताडन-थप्पड आदि से मारपीट, तपी हुई लोहे की सलाईयो आदि से शरीर को दागना, अधिक भार का लादा जाना, अग-भग होना या किया जाना, नखो मे सुइयाँ चुभाया जाना, अग की हीनता होना, लाख के रस, नमकीन (क्षार) तेल, उबलते शीशे या कृष्णवर्ण लोहे से शरीर का सीचा जाना, काष्ठ के खोडे मे डाला जाना, डोरी या बेडी से बाँधे जाना, हथकडियाँ पहनाई जाना, कुभी मे पकाना, अग्नि से जलाया जाना, शेफत्रोटन लिगच्छेद, बाँधकर ऊपर से लटकाना, शूली पर चढाया जाना, हाथी के पैर से कुचला जाना, हाथ-पैर-कान-नाक-होठ और सिर मे छेद किया जाना, जीभ का बाहर खीचा जाना, अण्डकोश-नेत्र-हृदय-दाँत या ऑत का मोडा जाना, गाडी मे जोता जाना, बेत या चाबुक द्वारा प्रहार

किया जाना, एडी, घुटना या पाषाण का अग पर आघात होना, यत्र मे पीला जाना, कपिकच्छू-अत्यन्त खुजली होना अथवा खुजली करने वाले फल-करेच का स्पर्श होना, अग्नि का स्पर्श, बिच्छू के डक का, वायु का, धूप का या डास-मच्छरो का स्पर्श होना, दुष्ट-दोषयुक्त-कष्टजनक आसन, स्वाध्यायभूमि मे दुर्गन्धमय, कर्कश, भारी, शीत, उष्ण एव रूक्ष आदि अनेक प्रकार के स्पर्शो मे और इसी प्रकार के अन्य अमनोज्ञ स्पर्शों मे साधु को रुष्ट नही होना चाहिए, उनकी हीलना नही करनी चाहिए, निन्दा और गर्हा नही करनी चाहिए, खिसना नही करनी चाहिए, अशुभ स्पर्श वाले द्रव्य का छेदन-भेदन नही करना चाहिए, स्व-पर का हनन नही करना चाहिए। स्व-पर मे घृणावृत्ति भी उत्पन्न नही करनी चाहिए।

इस प्रकार स्पर्शनेन्द्रिय-सवर की भावना से भावित अन्त करण वाला साधु, मनोज्ञ और अमनोज्ञ, अनुकूल और प्रतिकूल स्पर्शो की प्राप्ति होने पर राग-द्वेषवृत्ति का सवरण करता है और मन, वचन और काय से गुप्त होता है। इस भाँति साधु सवृतेन्द्रिय होकर चारित्र धर्म का आचरण करे।

169. The fifth restraint is of the sense of touch. A monk should not get attached to pleasant touch of beautiful articles

[Q.] Where are such articles that are pleasant to sense of touch ?

[Ans.] There are enclosures having water fountains. There are soft garlands, white sandalwood, pure cool water, flower-beds, khaskhas, pearl, lotus tube, pleasant glow of the moon, broom of pea-cock feathers, fan of palm leaves, pleasant cool air produced by fan, many pleasant beds and seats in summer, many clothes that provide protection in winter, sun-rays and ambers for warmth, oily substances, soft, cool, warm and light articles according to the season that are beautiful and pleasant to touch They provide comfort to the body and ecstatic pleasure to the mind A monk should not get attached to them and other suchlike articles which are beautiful and pleasant to touch He should not get attracted to them He should not have a desire to get them He should not be deeply interested in them He should not pollute his mind and that of others with them He should not have greed for them He should not be deeply absorbed in them. He should not feel dissatisfaction in their absence He should not laugh at them. He should not even keep them in his memory He should not think of them

Further there are articles which are unpleasant to touch and ugly. A monk should not be irritated at them.

[Q.] What are such articles that are unpleasant to touch ?

[**Ans.**] A person is beaten, tied and slapped. His body is touched with a hot needle He is made to carry a heavy load. His limbs are broken. He is troubled with needle or nails He may have some limb missing Hot lacquor, salty oil, boiling glass or melted iron is poured on his body. He is fettered in wood He is tightly bound with a string He is hand-cuffed. He is cooked in a narrow mouthed vessel He is burnt in the fire His limb is pierced He is tied and hung upside down He is hanged He is trampled under the feet of an elephant A hole is made in his hand, foot, ear, nose, lips or head His tongue is pulled out His arms, eyes, heart, tooth or intestines are twisted He is yoked to a cart He is beaten with cane or lashes. He is hit at the heels, knees or back He is crushed in a crusher He is touched with extremely harsh articles that cause scales He is touched with suchlike fruit He gets the touch of fire, of scorpion bite, of wind, of terrible sun, of mosquito-lute He is seated on troublesome seat He may face bad-smelling, harsh, heavy, cold, hot or dry touch and similar other unpleasant touch at the place of his study A monk should not feel indifferent at such a touch He should not hate it He should not criticise it He should not discard it or feel dejected He should not pierce or cut an articles that provides such a harsh touch He should not have a feeling of contempt for it

Thus a monk should have a state of Samvar towards sense of touch in his mind. He should remain in a state of equanimity whether he gets pleasant or unpleasant articles, an article to his liking or not He should not have any sense of attachment or hatred He should keep his mind, speech and body under full control Thus he should lead his ascetic life controlling his senses

पचम सवरद्वार का उपसंहार **CONCLUSION OF FIFTH GATEWAY OF SAMVAR**

१७०. एवमिणं संवरस्स दारं सम्मं संवरियं होइ सुप्पणिहियं इमेहि पंचहिं पि कारणेहिं मणवयकायपरिरक्खिएहिं। णिच्चं आमरणंतं च एस जोगो णेयव्वो धिइमया मइमया, अणासवो अकलुसो अच्छिद्दो अपरिस्सावी असंकिलिट्ठो सुद्धो सव्वजिणमणुण्णाओ।

एवं पंचमं संवरदारं फासियं पालियं सोहियं तीरियं किट्टियं अणुपालियं आणाए आराहियं भवइ'। एवं णायमुणिणा भगवया पण्णवियं परूवियं पसिद्धं सिद्धं सिद्धवरसासणमिणं आघवियं सुदेसियं पसत्थं। त्ति बेमि।

॥ पंचम संवरदारं समत्तं ॥

१७०. इस (पूर्वोक्त) प्रकार परिग्रह विरमण रूप पाँचवाँ सवरद्वार सम्यक् प्रकार से मन, वचन और काय से परिरक्षित पाँच भावनाओं से सवृत्त किया जाये तो सुरक्षित होता है। धृतिमान और बुद्धिमान सुसाधु को यह योग जीवनपर्यन्त निरन्तर पालनीय है। यह आस्रव रहित, निर्दोष, मिथ्यात्व आदि छिद्रो से रहित होने के कारण अपरिस्रावी, संक्लेशहीन, शुद्ध और समस्त तीर्थंकरो द्वारा अनुज्ञात है। इस प्रकार यह पाँचवाँ सवरद्वार उचित समय पर काया से स्पर्श किया हुआ–अमल मे लाया हुआ, पालन किया हुआ, अतिचाररहित शुद्ध किया हुआ, अन्त तक पार लगाया हुआ, वचन द्वारा कीर्तित किया हुआ, अनुपालित तथा तीर्थंकरो की आज्ञा के अनुसार आधारित होता है।

ज्ञात कुल मे उत्पन्न श्रमण शिरोमणि भगवान ने ऐसा निरूपित किया है। युक्तिपूर्वक समझाया है। यह लोक मे प्रसिद्ध, समस्त नय और प्रमाणो से सिद्ध और भवस्थ सिद्धो–अरिहन्तो की आज्ञा रूप बतलाया गया है, भलीभाति उपदिष्ट प्रशस्त।

यह पाचवा सवरद्वार पूर्ण हुआ। ऐसा मैं (श्री सुधर्मा स्वामी) कहता हूँ।

170. In case the vow of non-attachment for possessions–the fifth gateway of Samvar is fully guarded mentally, vocally and physically and is practiced in the form of five sentiments as above-mentioned, then it remains well protected A monk who is perseverant and has sense of discrimination should practice it continuously throughout his life. It stops inflow of Karmas It is spotless. It is free from gaps of ignorance. So it is devoid of asravas and troubles. It is pure and it is propounded by all the Tirthankars Thus this fifth gateway of Samvar is experienced and practiced faultlessly in the conduct upto its completion. It is appreciated in words It is practiced according to the code in the scriptures

It is popounded and logically explained by the omniscient lord who had experienced it It is famous and well established It is said to be the excellent order of Arihants. It has been taught in a discreet manner.

Thus this noble gateway of Samvar has been concluded. So I (Sudharma) Say

विवेचन : पूर्वोक्त सूत्रो मे अपरिग्रह महाव्रत का सम्यक रूप से पालन करने के लिये अपरिग्रही साधक की आवश्यकतानुसार पाँचों इन्द्रियो के विविध विषयो को ग्रहण करते समय क्या दृष्टि होनी चाहिये, क्या भावना

[1] वाचनान्तर मे उपलब्ध पाठ इस प्रकार है–"एयाणि पंचावि सुव्वय–महव्वयाणि लोगधिइकरणाणि, सुयसागर–देसियाणि संजमसीलव्वयसच्चज्जवमयाणि णरयतिरियदेवमणुयगइविवज्जयाणि सव्वजिणसासणाणि कम्मरय–वियारयाणि भवसयविमोयगाणि दुक्खसयविणासगाणि सुक्खसयपवत्तयाणि कापुरिससुदुरुत्तराणि सप्पुरिसजण–तीरियाणि णिव्वाणगमणजाणाणि कहियाणि सग्गपवायगाणि पंचावि महव्वयाणि कहियाणि।"

होनी चाहिये, कैसी साधना होनी चाहिये इसका विस्तारपूर्वक वर्णन अपरिग्रहव्रत को पाचो भावनाओ में किया है। वे भावनाएँ इस प्रकार है-(१) श्रोत्रेन्द्रियसवर, (२) चक्षुरिन्द्रियसवर, (३) घ्राणेन्द्रियसंवर, (४) रसनेन्द्रियसवर, और (५) स्पर्शनेन्द्रियसवर।

शब्द, रूप, गन्ध, रस और स्पर्श, ये इन्द्रियो के विषय है। प्रत्येक विषय अनुभूति की दृष्टि से दो प्रकार का है-मनोज्ञ और अमनोज्ञ।

प्रत्येक इन्द्रिय अपने-अपने विषय को ग्रहण करती है तब वह विषय सामान्यरूप ही होता है। किन्तु उस ग्रहण के साथ ही आत्मा मे विद्यमान सज्ञा उसमे प्रियता या अप्रियता का रग घोल देती है। जो विषय प्रिय प्रतीत होता है वह मनोज्ञ कहलाता है और जो अनुभूत होता है वह अमनोज्ञ प्रतीत होता है।

(१) **श्रोत्रेन्द्रियसंवर भावना**–परिग्रह का अन्तरग और बहिरंगरूप से परमत्यागी साधु जब अपनी कोई भी प्रवृत्ति करता है तो उसके कानो मे कई प्रकार के शब्द आकर टकराते है। उनमे से कई कर्णप्रिय होते है, कई कर्णकटु भी। ये सारे ही शब्द राग और द्वेष के कारण है, जो साधक के जीवन को अन्तरग परिग्रह के गर्त मे डाल देते है। इसीलिए शास्त्रकार ने कुछ विशेष मनोज्ञ शब्दो के नाम गिनाकर अन्त मे उन्ही प्रकार के शब्दो के कर्णगोचर होने पर उनके प्रति राग, आसक्ति, गृद्धि, लोभ, मोह, न्योछावर, तुष्टि स्मरण और मनन से इस श्रोत्रेन्द्रियसवर भावना के प्रकाश मे शीघ्र बचने का निर्देश किया है। इसी प्रकार अमनोज्ञ शब्द, कर्कश, कर्णकटु, कठोर, असह्य और मर्मच्छेदी लगते है यदि साधक उन्हे सुनकर कोई द्वेषात्मक प्रतिक्रिया व्यक्त करता है तो वह द्वेष साधक के जीवन को अन्तरग परिग्रह की खाई मे धकेल देता है। इसीलिए शास्त्रकार ने कुछ खास-खास अमनोज्ञ शब्दो के नाम गिनाकर अन्त मे उन्ही की तरह के कर्णकटु शब्दो के कर्णगोचर होने पर उनके प्रति रोष, अवज्ञा, निन्दा, खीज या चिढ, छेदन, भेदन, ताडन-तर्जन, वध, द्वेष, घृणा आदि से बचने का निर्देश किया है।

निष्कर्ष यह है कि साधु को अपने मन को इस भावना की ऐसी शिक्षा देनी चाहिए, ताकि कर्णप्रिय मनोज्ञ शब्द कान मे पडते ही वह उनपर मोहित न हो जाये और कर्णकटु अमनोज्ञ शब्द कान मे पडते ही वह रुष्ट न हो। तभी अपरिग्रही साधु समभाव मे स्थिर होकर जितेन्द्रिय और सयतेन्द्रिय बनेगा।

(२) **चक्षुरिन्द्रियसवर भावना**–अपरिग्रहव्रती साधु जब अपनी दैनिक दिनचर्या मे प्रवृत्त होता है तो कई रूप आँखो के सामने आते है, उनमे कुछ सचेतन प्राणी के भी होते है, कुछ अचेतन पदार्थों के भी। जैसे मनोज्ञ रुचिकर तथा मनोमोहक पदार्थ सामने आए तो उस समय यदि साधु उस सुन्दररूप या चेहरे आदि को देखकर मन मे रागभाव या मोह लाता है तो साधक अन्तरग परिग्रह के जाल मे फस जाता है। इसीलिए शास्त्रकार ने कुछ खास-खास मनोज्ञ रूपो के नाम गिनाकर अन्त मे उसी प्रकार के अन्यान्य रूपो के दृष्टिगोचर होने पर उन पर आसक्ति, अनुराग, गृद्धि, लोभ, मोह, न्योच्छावर, तुष्टि, स्मरण और मनन से शीघ्र बचने का चक्षुरिन्द्रियसवर भावना के प्रकाश मे निर्देश किया है। इसी प्रकार इनके ठीक विपरीत अमनोज्ञ रूपो को देखकर यदि साधक एकदम रुष्ट हो जाता है तो यही साधक अन्तरंग परिग्रह की चपेट मे आकर द्वेषरूपी शत्रु से दब जाता है। इसीलिए शास्त्रकार ने कुछ खास-खास अमनोज्ञ रूपो के नाम गिनाकर अन्त मे उसी प्रकार के अन्यान्य अमनोज्ञ रूपो के दृष्टिगोचर होने पर अपनी मनोवृत्ति पर नियंत्रण रखने का निर्देश दिया है।

(३) **घ्राणेन्द्रियसंवर भावना**–अपरिग्रही साधक जब अपने नित्यकृत्य में प्रवृत्त होता है तो कई मनोज्ञ भोज्य पदार्थों या कई अन्य सुगधपूर्ण पदार्थों की सुगन्ध उसके नाक से आकर टकराती है, उस समय उन भीनी–भीनी मधुर मनोमोहक सुगन्धो को पाकर यदि वह असावधान होकर उन पर रागभाव लाता है तो यही साधक अन्तरग परिग्रह के जाल मे फस जाता है। इसीलिए शास्त्रकार ने कुछ विशेष मनोज्ञ गधो के नाम गिनाकर अन्त में उन्हीं की किस्म के विभिन्न सुगन्धों के घ्राणगोचर होने पर अपने मन को नियत्रण मे रखने का निर्देश दिया है। वैसे ही साधक जब इन सुगन्धो से ठीक विपरीत मन को बुरे लगने वाले अमनोज्ञ दुर्गन्धो का नाक से स्पर्श होने पर क्रोध से तिलमिला उठता है, भर्त्सना करता है या घृणा करता है तो वह अन्तरग परिग्रह की चपेट मे आकर द्वेषरूपी दुश्मन से दब जाता है। शास्त्रकार ने कुछ अमनोज्ञ गन्धो के नाम बताकर अन्त में यह निर्देश दिया है कि इनके सम्पर्क मे आने पर भी साधक को समभाव मे स्थिर रहना चाहिये।

(४) **रसनेन्द्रियसवर भावना**–परिग्रह से सर्वथा मुक्त होने वाला साधक जब भिक्षाचर्या मे प्रवृत्त होता है तो उसकी जीभ के सामने कई स्वादिष्ट मनोज्ञ रसीली चीजे या रस आते है अथवा उसे भिक्षा मे भी कई मनोज्ञ चीजे प्राप्त होती है, वह उनका आस्वादन करने मे प्रवृत्त होता है, यदि उस समय वह मनोज्ञ स्वादिष्ट रसयुक्त पदार्थों को देखकर मन मे आसक्ति लाता है, तो वह विविध मनोज्ञ रसो के मोहक जाल में फँसकर अपनी आत्मा को पतन के गहरे गड्ढे मे गिरा देता है। इसीलिए शास्त्रकार ने कुछ विशेष मनोज्ञ रसो या रसयुक्त पदार्थों के नाम गिनाकर अन्त मे उन्ही की किस्म के विभिन्न रसो या पदार्थों के रसनेन्द्रियगोचर होने पर अपनी रसनेन्द्रिय पर नियंत्रण रखने का सकेत दिया है।

और जो अमनोज्ञ अशुभ रस है, उनका जीभ से स्पर्श होने पर यदि साधक रोष से तिलमिला उठता है, वह साधक अन्तरग परिग्रह की चपेट मे आकर द्वेष भाव से पराजित हो जाता है। इसीलिए शास्त्रकार साधक को सूचित करते है कि वह अमनोज्ञ रसो या रसयुक्त पदार्थों से जिह्वेन्द्रिय का स्पर्श होने पर क्रोध से तमतमाए नही, अपना मन अनियत्रित न कर बैठे। यानी शास्त्रकार अशुभ पदार्थों के प्रति रोष करने, द्वेष करने, चिढने या घृणा करने, ठुकराने या छेदन–भेदन करने आदि से आत्मा को बचाने का निर्देश करते है।

अपरिग्रही साधक जिह्वेन्द्रिय के साथ नीरस, रुक्ष, अमनोज्ञ पदार्थो का सम्पर्क होने पर यही सोचे कि ये सब वस्तुएँ या रस नाशवान है, स्वादिष्ट पदार्थ भी पेट मे जाकर तो विकृत बन ही जाते है। फिर इन विकृत पदार्थों से मुझे क्यो घबराना चाहिए ?

(५) **स्पर्शनेन्द्रियसंवर भावना**–अपनी दिनचर्या मे प्रवृत्त होते समय प्रतिदिन साधक की त्वचा से ठडे, गर्म, हलके, भारी, खुर्दरे, कोमल, रुक्ष और स्निग्ध अनेक पदार्थो का स्पर्श होता है। उन रुचिकर मनोज्ञ पदार्थों का स्पर्श पाकर यदि साधु आसक्ति करता है, मोह करता है तो वह उन विविध अनुकूल स्पर्शों के मोहक जाल मे फसकर अपने आपको पतन की खाई में धकेल देता है। इसीलिए शास्त्रकार कुछ विशेष स्पर्शों का उल्लेख करके अन्त मे उन्ही के जैसे विभिन्न मनोमोहक स्पर्शों या स्पर्शयोग्य पदार्थों के स्पर्शनेन्द्रियगोचर होने पर आत्म नियत्रण व सुसयमित रहने की बात कहते है।

अशुभ अमनोज्ञ स्पर्शों के शरीर से स्पर्श होने पर जो साधक रोष से भर उठता है तो समझना चाहिये कि उसके निर्बल मन पर द्वेषरूपी शत्रु ने घेरा डाल दिया है। इसीलिए शास्त्रकार साधक को समझाते है कि अमनोज्ञ स्पर्शों या स्पर्शयुक्त पदार्थों का संयोग मिलने पर क्रोधित न हो।

इस प्रकार पाँचो इन्द्रियो के सवर से सम्पन्न और मन, वचन, काय से गुप्त होकर ही साधु को धर्म का आचरण करना चाहिए। उत्तराध्ययनसूत्र के 32वे अध्ययन में इस विषय मे बहुत ही सुन्दरतापूर्वक कहा गया एक ही गाथा मे इसका निचोड़–

जे सद्द–रूव–रस–गंधमागए, फासे य संपप्प मणुण्ण–पावए।

गेही पओसं न करेज्ज पंडिए, स होति दंते विरए अकिंचणे॥

अर्थात्–मनोज्ञ और अमनोज्ञ शब्द, रूप, रस, गन्ध और स्पर्श के प्राप्त होने पर जो पण्डित पुरुष राग और द्वेष नही करता, वही इन्द्रियो का दमनकर्त्ता, विरत और अपरिग्रही कहलाता है।

यहाँ एक महत्वपूर्ण बात यह ध्यान में रखनी चाहिए कि राग और द्वेष आभ्यन्तर परिग्रह है–एकान्तरूप से मुख्य परिग्रह है। अतएव इन्ही को लक्ष्य मे रखकर अपरिग्रह व्रत की भावनाएँ प्रतिपादित की गई है।

॥ पंचम सवरद्वार समाप्त ॥

Elaboration—For the proper observation of the great vow of Aparigraha (non-possession or non-covetousness) and in order to guide the aspirant to practice and acquire the right attitude at the time of experiencing the subjects of five sense organs, five sentiments of the gate of Samwar have been discussed in detail in the preceding aphorisms They are - (1) Samwar of the sense organ of hearing, (2) Samwar of the sense organ of seeing, (3) Samwar of the sense organ of smell, (4) Samwar of the sense organ of taste, and (5) Samwar of the sense organ of touch

Sound, appearance, smell, taste and touch are the subjects of these sense organs Based on experience each one of these subjects is of two kinds - (1) pleasant and (2) unpleasant Each sense organ deals with its respective subject At that time the experience is a general one But simultaneously it creates a feeling of pleasure or otherwise in the soul. That subject which is to the liking is called pleasant and that which is not to the liking is called unpleasant

(1) **Attitude of Shrotrendriya Samvar**—When a monk, who has completely abandoned inner and outer covetousness (Parigraha), indulges in any activity, a variety of sounds strike his ears. Many of these are pleasant to the ears and many unpleasant All these sounds are sources of attachment and aversion that push the life of the monk into the void of internal covetousness. That is the reason the author has, in light of this attitude of Shrotrendriya Samvar (blocking of the inflow of karmas through indulgence of the sense organ of hearing), listed some

selected pleasant sounds and advised to quickly avoid feelings of attachment, infatuation, obsession, greed, fondness, captivation, and contentment, as well as the desire of recalling and pondering on hearing them In the same way repulsive sounds appear abrasive, bitter, harsh, intolerable and heart-rending. On hearing them if an aspirant expresses aversion it pushes his life into the abyss of inner covetousness. That is the reason the author has listed some selected unpleasant sounds and advised to quickly avoid feelings of anger, rejection, slandering, irritation, piercing, breaking, reprimanding, killing, aversion, hatred etc on hearing them

The sum and substance of this is that a monk should train his mind in the said attitude so as not to be beguiled the moment sweet and pleasant sound enters his ears and not to loose his temper on hearing harsh and repulsive sounds, only than a non-covetous monk can settle himself in equanimity and become discipliner and conqueror of senses.

(2) **Attitude of Chakshurindriya Samvar**—When a monk, who has completely abandoned covetousness (Parigraha), indulges in routine activity, a variety of forms appear before his eyes Many of these are living things and many non-living. When an interesting and attractive thing appears and looking at that beautiful form or face, if feelings of attachment and fondness are invoked in the mind of the monk he gets trapped in the web of inner Parigraha That is the reason the author has, in light of this attitude of Chakshurindriya Samvar (blocking of the inflow of karmas through indulgence of the sense organ of seeing), listed some selected pleasant forms and advised to quickly avoid feelings of attachment, infatuation, obsession, greed, fondness, captivation, and contentment, as well as the desire of recalling and pondering on seeing them In the same way when repulsive forms appear, if he instantly gets angry on seeing them it pushes him into the grip of inner covetousness and he is overpowered by aversion. That is the reason the author has, listed some selected unpleasant forms and advised to quickly control his feelings on seeing them

(3) **Attitude of Ghranendriya Samvar**—When a monk, who has completely abandoned covetousness (Parigraha), indulges in routine activity, a variety of smells enter his nose. Many of these are from a variety of tasty foodstuff and many from other fragrant materials. When

he smells a mild, sweet and enticing fragrance, if feelings of attachment rise and he gets carelessly attached to it he gets trapped in the web of inner Parigraha. That is the reason the author has, in light of this attitude of Ghranendriya Samvar (blocking of the inflow of karmas through indulgence of the sense organ of smell), listed some selected pleasant forms and advised to quickly control his feelings In the same way when repulsive smells appear, if he instantly gets angry on smelling them it pushes him into the grip of inner covetousness and he is overpowered by aversion That is the reason the author has, listed some selected unpleasant odours and advised the aspirant to remain steadfast into equanimity on smelling them

(4) **Attitude of Rasanendriya Samvar**—When a monk, who has completely abandoned covetousness (Parigraha), indulges in routine alms-collection activity, he comes across a variety of tasty, attractive and gourmet things He also gets many such things as alms When he tastes such likeable things, if he gets carelessly attached to them he gets trapped in the web of inner Parigraha and allows his soul to fall into the deep gorge of disgrace That is the reason the author has, in light of this attitude of Rasanendriya Samvar (blocking of the inflow of karmas through indulgence of the sense organ of taste), listed some selected pleasant forms and advised to quickly apply control over his taste buds

In the same way when coming across repulsive tastes if he instantly gets angry, this pushes him into the grip of inner covetousness and he is overpowered by aversion That is the reason the author has, listed some selected unpleasant tastes and advised the aspirant to control himself and avoid getting angry In other words the author has advised to avoid feelings of anger, rejection, slandering, irritation, piercing, breaking, reprimanding, killing, aversion, hatred etc. when coming across repulsive things

When he tastes drab, dry and repulsive eatables, the non-covetous aspirant should think that all these things and tastes are destructible or temporary, even the tasty food gets distorted when eaten, why then should he get disturbed in the first place.

(5) **Attitude of Sparshanendriya Samvar**—When a monk, who has completely abandoned covetousness (Parigraha), indulges in routine

activity, he experiences touch of a variety of things experiencing hot, cold, light, heavy, rough, soft, dry and smooth touch When he touches such likeable things, if he gets carelessly attached to them he gets trapped in the web of inner Parigraha and allows his soul to fall into the deep gorge of disgrace That is the reason the author has, in light of this attitude of Sparshanendriya Samvar (blocking of the inflow of karmas through indulgence of the sense organ of touch), listed some selected pleasant touches and advised to remain restrained and steadfast into equanimity on touching them.

In the same way when coming across repulsive touch if he instantly gets angry, this pushes him into the grip of inner covetousness and he is overpowered by aversion That is the reason the author has, listed some selected unpleasant touches and advised the aspirant to control himself and avoid getting angry

This way a monk should follow the ascetic conduct by perfecting Samvar of all five senses and three kinds of restraint—that of mind, speech and body This has been summed up lucidly in the 32nd chapter of Uttaradhyayan Sutra as—The wise who avoids attachment and aversion when experiencing attractive and repulsive sound, form, taste, smell and touch, he alone is called the pacifier of senses, detached and non-covetous

Here an important fact should be kept in mind, attachment and aversion are inner Parigraha and thus the basic covetousness That is the reason all these aforesaid attitudes have been defined on that basis.

• END OF THE FIFTH CHAPTER •

सम्पूर्ण संवरद्वार का उपसंहार
CONCLUSION OF COMPLETE GATEWAY OF SAMVAR

अब शास्त्रकार शास्त्र की समाप्ति पर इस शास्त्र का निम्नोक्त परिचयात्मक सूत्र पाठ द्वारा उपसहार करते है।

१७१. एयाइं वयाइं पंच वि सुव्वय–महव्वयाइं हेउसय–विवित्त–पुक्कलाइं कहियाइं अरिहत–सासणे पंच समासेण संवरा, वित्थरेण उ पणवीसतिं। समियसहिय–संवुडे सया जयण–घडण–सुविसुद्धदंसणे एए अणुचरिय संचए चरमसरीरधरे भविस्सइ।

पण्हावागरणे णं एगो सुयक्खंधो, दस अज्झयणा एक्कसरगा दससु चेव दिवसेसु उद्दिसिज्जंति एगंतरेसु आयंबिलेसु णिरुद्धेसु आउत्त–भत्तपाणएणं। अंगं जहा आयारस्स।

॥ इइ पण्हवागरणं सुत्तं समत्तं॥

१७१. हे सुव्रत ! ये पाँचो सवर द्वार (महाव्रत) सैकडो निर्दोष–शुद्ध हेतुओ के कारण विस्तीर्ण होते हुये भी अरिहत भगवान के शासन मे सक्षेप मे पाँच ही बताये है, विस्तार से (प्रत्येक की पाँच-पाँच भावनाएँ होने से) इनके पच्चीस प्रकार होते है। जो साधु ईर्यासमिति आदि (पूर्वोक्त पच्चीस भावनाओ) सहित होता है अथवा ज्ञान और दर्शन से सहित होता है तथा कषायसवर और इन्द्रियसवर से सवृत होता है, जो प्राप्त सयमयोग का यत्नपूर्वक पालन करता है और अप्राप्त सयमयोग की प्राप्ति के लिए पुरुषार्थ करता है, सर्वथा विशुद्ध श्रद्धानवान् होता है, वह इन सवरो की आराधना करके भविष्य मे चरम शरीरी होता है।

इस प्रश्नव्याकरण सूत्र मे एक श्रुतस्कन्ध है, एक एक जैसे दस अध्ययन है। उपयोगपूर्वक आहार-पानी ग्रहण करने वाले साधु द्वारा, जैसे आचाराग का वाचन किया जाता है, उसी प्रकार एकान्तर आयबिल युक्त तपस्यापूर्वक दस दिनो मे इन (दस अध्ययनो) का वाचन किया जाता है।

॥ प्रश्नव्याकरणसूत्र समाप्त ॥

171. O practitioner of vow ! The five major vows in the form of Samvar have been described in detail with hundreds of reasons These five have been mentioned in brief in the order of Tirthankars There are five sentiments of each vow Thus there are twenty five sentiments in all A monk practices twenty five sentiments such as care in movement (Iriya Samiti) and others or he has right scriptural knowledge and right perception He has control (Samvar) of passions and of senses He practices carefully his life of ascetic restraint He makes serious efforts to practice these ascetic principles which he did not do so far He has full

unblemished faith in them; by practicing these Samvars, he can attain the state of Siddha.

There is one Shrutaskandh in Prashna Vyakaran Sutra. It has ten Chapters Acharanga is studied by the monk who takes water and food with proper care Similarly these ten Chapters of Prashan Vyakaran Sutra are studied in ten days, by observing of austerities of Ayambil on alternate days

● END OF PRASHAN VYAKARAN SUTRA ●

विशिष्ट शब्दों एवं नामों का कोश
Glossary of Technical Words

प्राकृत	हिन्दी	English	पृष्ठ सं
अकारको	अकर्त्ता-क्रिया न करने वाला	non-doer	९३
अकिच्च	अकृत्य-हिसा का एक नाम	unworthy act, a name for vıolence	८
अकिरिया	अक्रिया	ınactıon	८१
अकुस	अकुश	short lance	२०८
अगम्मगामी	बहन-बेटी आदि के साथ गमन करने वाला	ıncester	१०२
अगर	सुगन्धित द्रव्यविशेष	a fragrant herb	२५७
अगार	घर	house	२८
अगुत्ती	अगुप्ति-परिग्रह का २३वाँ नाम	non-restraınt, 23rd Name of parıgraha	२२४
अचक्खुसे	अचाक्षुष-आँख से नही दिखने वाला	ınvısıble to eyes	२४
अच्छभल्ल	रीछ-भालू	a bear	१६
अच्छरा	अप्सरा-देवागना	faıry (a goddess)	१८३
अज्झप्पज्झाण	अध्यात्मध्यान	sprıtual medıtatıon	३३८
अजणकसेल	अजनक पर्वत	anjanak mountaın	२२९
अट्टालग	अट्टालिका-अटारी	tall buıldıng	२६
अट्ट	आर्त्त	dıstressed	३६५
अट्ठकम्म	ज्ञानावरणीय आदि आठ प्रकार के कर्म	eight types of karmas	४०८
अट्ठमयमहणे	आठ मदो का मथन करने वाला	churner of eıght ıntoxıcatıons	४०८
अट्ठावय	अष्टापद-पशुविशेष	octopus	२०७
अट्ठि	अस्थि-हड्डी	bone	२२
अडवी	जगल	forest	५९
अडग	अडा	egg	९०
अणकर	हिसा का एक नाम	karma-debtor, a name for vıolence	८

अणक्क (क्ख)	देशविशेष	name of a state	३३
अणज्ज	अनार्य	ignoble	७७
अणत्थको	अनर्थकारी-परिग्रह का एक नाम	damaging, a name of parigraha	२२८
अणत्थो	अनर्थकारी-परिग्रह का एक नाम	damaging, a name of parigraha	२२८
अणवदग्ग	अनन्त	infinite	२१९
अण्हय	आस्रव	inflow	१
अणासवो	अनास्रव-अहिंसा का एक नाम	non-inflow; a name of ahimsa	२५३
अणाह	अनाथ	an orphan	२४
अणिल	वायु	air	२४
अणिहुय	अस्थिर	unstable	१७
अत्ताणे	अत्राण-त्राण से रहित	insecure	२४
अत्थसत्थ	अर्थशास्त्र, राजनीति	economics, politics	२३९
अत्थालिय	अर्थालीक-धनसम्बन्धी असत्य	to lie about money	१०४
अत	आत	intestine	२२
अध	आन्ध्र-आन्ध्र प्रदेश	andhra state	३३
अद्धचद	अर्धचन्द्र के आकार की खिडकी या सोपान	half-moon shaped window	२८
अप्पसुह	अल्पसुख-सुख से शून्य	little joy, devoid of joy	२३९
अबितिज्जओ	अद्वितीय-असहाय	helpless	३१२
अभिज्जा	आसक्ति	infatuation	२३९
अयगर	अजगर	serpant	१७
अरविद	कमल	lotus	३५२
अरास	मानवजातिविशेष	a tribe	३३
अलिय	अलीक-मिथ्या	a lie	७७
अवकोडकबधन	पीठ पीछे हाथ बाँधना	to tie hands at one's back	४६
अवज्ज	अवद्य-पाप	sin	३६५
अवधिका	उधेई-दीमक	termite	६५
अविभाव	अज्ञात बन्धु	unknown friend	४८

अवीसभो	अविश्रम्भ-हिंसा का एक नाम	a name for violence	८
अस्समड	मृत घोडे का कलेवर	cadaver of a horse	४२३
असि	तलवार	sword	३७
असिवण	तलवार की धार के समान पत्तो वाले वृक्षो का वन	a forest with sharp edged leaves	५१
असजओ	सयमरहित-हिंसा का एक नाम	unrestrained, a name for violence	८
असजमे	असयम	non-restrain	३७७
असतोस	असन्तोष-परिग्रह का एक नाम	discontent, a name of parigraha	२२८
अहरगइ	अधोगति, कुगति	bad rebirth	१०४
अहिमड	अहिमृत-साँप का कलेवर	corpse of a snake	४२३
अहिसधि	अभिप्राय	intention	१०७
आगमेसिभद्द	आगामी काल मे कल्याणकारी	beneficial in future	४१५
आगर	खान	a mine	१४५
आडा	आडपक्षी	a bird	१९
आतोज्ज	बाजे	musical instruments	२८
आदियणा	चोरी	theft	१२७
आभासिय	आभाषिक देश	name of a state	३३
आभिओग	वशीकरण आदि प्रयोग	hypnotizing etc	११०
आमेलग	कलगी	plume on a head gear	२०८
आमोसहि	एक प्रकार की लब्धि	a type of special power	२६४
आयरो	वस्तुओ मे आदर बुद्धि रखना, परिग्रह का २१वाँ नाम	respect for things, 21st name for parigraha	२२८
आयतण	स्थानविशेष	specific place	२६
आयतण	आयतन-अहिसा का ४७वाँ नाम	47th name of ahimsa	२५३
आयासो	खेद का कारण, परिग्रह का २४वाँ नाम	cause of greif, 24th name for parigraha	२२८
आयाणभडनिक्खे-वणासमित	आदान-भाड-मात्र-निक्षेपणा समिति वाला	one who observes care in disposal of things	४०८

आउयकम्मस्सुवद्दवो	आयु कर्मण उपद्रव-हिंसा का १२वाँ नाम	dısturbance related to ayush karma;12th name of voılence	८
आरब	अरब देश	arab country	३३
आराम	बगीचा	a garden	२६
आरिय	आर्य	aryan, noble	१६३
आपण	दुकान	a shop	२६
आवसह	परिव्राजको का आश्रम	hermıtage of parıvrajaks	२६
आविधण	मत्रप्रयोग	use of mantras	११०
आसम	आश्रम	a hermıtage	१४५
आसत्ती	आसक्ति, परिग्रह का एक नाम	ınfatuatıon, a name for parıgraha	२२४
आसालिया	जीवविशेष	a specıe of snakes	१८
आहाकम्म	साधु के निमित्त निर्मित	prepared for monks	३३५
आहेवण	मत्रविशेष	specıfic mantra	११०
इक्कड	इकड जाति का घास	a kınd of grass	३३७
इक्खुगार	इषुकार पर्वत	ıshukar hıll	२२९
इब्भ	बडा श्रेष्ठी	a merchant	२२९
इगाल	अगार-आहार का एक दोष	a fault of food	४०३
इदकेउ	इन्द्रकेतु-इन्द्र महोत्सव मे गाढा जाने वाला स्तम्भ	ındraketu	१८८
ईरियासमित	ईर्यासमिति-गमन सम्बन्धी सावधानी से युक्त	one who observes care ın movement	४०८
उक्कोस	एक जाति का पक्षी	a bırd	१९
उक्खल	ऊखल	a mortar	२८
उज्जुमई	ऋजुमति नामक मन पर्यवज्ञानी	a manah-paryavȷnanı wıth lımıted range	२६४
उञ्छ	भिक्षा	alms	२८६
उट्ट	ऊँट	camel	२२४
उडूवई	चन्द्रमा	the moon	३५२
उप्पाय	उत्पात पर्वत	utpat mountaın	२३२
उद्	उद्देश	purpose	३३

उयरि	जलोदर वाला	suffering from dropsy	४२१
उद्दवणा	उपद्रवण-हिंसा का ९वाँ नाम	disturbance, 9th name of violence	८
उब्भिय	भूमि को फोडकर उत्पन्न होने वाला जीव	born by bursting out of earth	२१९
उम्मी	ऊर्मि-लहर	a wave	१४१
उम्मूलणा	उन्मूलना-हिंसा का दूसरा नाम	uprooting, 2nd name of violence	८
उरग	पेट के बल से चलने वाला सर्पविशेष	a type of snake	१८
उरब्भ	मेढा	a ram	१७
उवहिया	ठगाई करने वाला ठग	swindler	५३
उवकरण	परिग्रह का एक नाम	equipment, a name for parigraha	२२८
उवचयो	उपचय, परिग्रह का चतुर्थ नाम	collection, 4th name for parigraha	२२८
उवाणहा	जूता	shoe	३९६
उस्सओ	उच्छ्य-भाव की उन्नति, अहिंसा का ४५वाँ नाम	uplift of feelings, 45th name for ahimsa	२५३
उसीर	उशीर-सुगन्धित द्रव्य	a fragrant material	४२३
एगचक्खु	काणा	one-eyed	७०
एगेंदिए	एक इन्द्रिय वाला जीव	one-sensed being	६६
एणीयारा	मृग पकडने के लिए हिरणी लेकर फिरने वाले	deer trappers who use dow	३२
एरावण	ऐरावत-इन्द्र का हाथी	airavat, the elephant of indra	३५३
एलारस	इलायची का रस	cardamom extract	४२३
ओदण	चावल-भात	cooked rice	३९८
ओवा	अवपात-पर्वतविशेष	avapat mountain	२३२
ओसह	औषध	medicine	२४५
कक्क	कपट	deception	८०
कक्कणा	असत्य का एक नाम	a name for falsity	७७
कच्छभ	कछुआ	a tortoise	१७

कच्छभि	वाद्य-बाजाविशेष	a musical instrument	४१७
कच्छुल्ल	खुजली के रोग वाला	suffering with eczema	४२१
कडगमद्दण	कटकमर्दन-हिंसा का १५वाँ नाम	15th name of violence	८
कडुय	कडुआ	bitter	८
कठिणग	कठिण-तृणविशेष	a kind of glass	३३७
कणग	सोना	gold	३२२
कणगनियल	सोने का बना गहनाविशेष	a golden ornament	४१७
कणवीर	कनेर	oleander tree	१५६
कण्ण	कान	ear	२२
कन्दु	लोही-भूँजने का एक पात्र	a roasting pot	४६
कन्नालिय	कन्या सम्बन्धी झूठ	lie about daughter	१४९
कप्पिणि	कैंची	scissors	५२
कप्पड	कोडा	a whip	१४९
कपिजलक	कपिजल पक्षी	a bird	१९
कब्बड	खराब नगर	a bad city	२२४
कमडलु	कुण्डी, कमण्डलु	gourd-bowl	२११
कम्मत	कारखाना, जहाँ चूना आदि तैयार किया जाता है	lime factory	३३५
कम्मकर	सेवक	servant	१११
कयली	केला	banana	२१०
करक	करक पक्षी	a bird	१९
करभ	ऊँट	camel	१७
करवत्त	करवत	small saw	३७
करिसण	कृषि	farming	२६
कलस	कलश, घट	urn, pitcher	२११
कलाओ	कलाएँ	arts	२३९
कलाया	कलाद-सुनार	gold-smith	८०
कल्लाण	कल्याणकारी-अहिंसा का २९वाँ नाम	beatific, 29th name of ahimsa	२५३
कलिकरडो	कलह की पेटी, परिग्रह का १९वाँ नाम	box of quarell, 19th name of parigraha	२२८
कवड	कपट	deception	७७
कविल	कपिल पक्षी	a bird	१९

कवोतग	कबूतर	pigeon	१९
कवोला	कपोल, गाल	cheeks	२११
कस	चमडे का चाबुक	a leather whip	५९
कहग	कथा करने वाला	story teller	४२०
काउदर	काकोदर-एक प्रकार का साँप	a type of snake	१८
काणा	काणे	one-eyed	७१
कादम्बक	हस विशेष	a swan	१९
कापुरिस	कायर मनुष्य	a coward	२५०
कायगुत्ते	कायगुप्त	one observing body-restraint	४०८
कारडग	कारडक पक्षी	a bird	१९
कारुइज्जा	छीपे-शिलूरी	strips	८०
कालोदहि	कालोदधि समुद्र	kalodadhi sea	२३३
काहावण	कार्षापण-एक प्रकार का सिक्का	a type of coin	८०
कित्ती	कीर्ति-अहिंसा का ५वाँ नाम	glory, 5th name of ahimsa	२५३
किन्नर	किन्नर देव, वाद्यविशेष	kinnar gods, a musical instrument	१८३
किन्नरी	महिलाविशेष का नाम	a class of women	२१९
किमिय	कृमि-कीडे	worms	६६
किरिया	प्रशस्त या अप्रशस्त कार्य	noble or ignoble deeds	८१
किरियाठाण	क्रियास्थान	place of action	३७७
कीड	कीडा	a worm	२८४
कीर	तोता	a parrot	१९
कुक्कुड	मुर्गा	a cock	१९
कुकूलाऽनल	कोयले की आग	coal fire	३७
कुच्च	कूची बनाने योग्य घास	grass suitable for brush	३३७
कुडिल	कुटिल-टेढा	cunning, bent	८०
कुड्ड	कुड्य-दीवाल	a wall	३७
कुणि	कर से हीन	devoid of arms	४२१
कुद्दाल	कुदाल	a spade	७०
कुद्धो	क्रोधी	angry	३०९
कुम्म	कछुवा	tortoise	१८७

कुम्मास	उडद	a pulse	३९८
कुरग	हिरण	deer	१७
कुलकोडी	कुलकोटि	species	६३
कुलल	कुलल पक्षी	a bird	१९
कुलक्ख	कुलक्ष-पक्षी की एक जाति, एक देश	a bird, a country	३३
कुलिगी	कुतीर्थी	a heretic	८०
कुलिय	विशेष प्रकार का हल-बखर	a type of plough	२८
कुलीकोस	कुटीक्रोश पक्षी	a bird	१९
कुवियसाला	तृण आदि रखने का घर	a barn	३३५
कुस	कुश-तृणविशेष	a type of grass	१८७
कुसघयण	कमजोर अस्थिबध वाला	with weak joints	७१
कुसठिया	खराब आकार वाले	with bad shape	७१
कुहण	कुहण देश	kuhan country	३३
कुहड	कूष्माण्ड-देवविशेष	a type of gods	१४१
कूडतुल	झूठा तोलने वाले	who weighs wrong	८०
कूडमाणी	झूठा माप करने वाले	who measures wrong	८०
कूरकम्मा	क्रूर कर्म करने वाले	indulging in cruelty	३२
कूरिकड	चोर का एक नाम	a name for theif	१२६
कूव	कूआ	a well	२६
केकय	केकय देश	kaikaya country	३३
केवलीणठाण	केवलियो का स्थान-अहिंसा का ३६वाँ नाम	place of omniscients, 36th name for ahimsa	२५३
केसरिमुहविप्फाडगा	सिह का मुँह फाडने वाले	one who tears a lion's mouth	१९३
कोइल	कोकिल	a cuckoo	२११
कोकतिय	लोमडी	a fox	१७
कोट्टबलिकरण	बलिदान का एक प्रकार	a type of sacrifice	४६
कोढिक	कुष्ठ रोगी	a leper	४२१
कोणालग	कोणालक पक्षी	a bird	१९
कोरग	कोरंग पक्षी	a bird	१९
कोल	कोल-चूहे के समान जीव	a rat like a animal	१७
कोल-सुणह	बडा सूअर	wild boar	१७

कोसिकार-कीडो	रेशम का कीडा	silk-worm	१६३
कक	कक पक्षी	a bird	५५-५६
कंचणक	काञ्चनक पर्वत	kanchanak hill	२३२
कचणा	कचना, एक नारी	a class of women	२१९
कची	काञ्ची-कन्दोरा	waist-band	४१७
कुडिया	कुण्डी कमण्डलु	gourd-bowl	३९६
कती	कान्ति-चमक, अहिंसा का छठा नाम	glow, 6th name of ahimsa	२५३
कदमूलाई	कन्दमूल	root-vegetable	३९६
कस	कास्य, कासे का पात्र	bronze pot	३२२
कुकुम	कुकुम	vermilion powder	४२३
कुच	क्रौच पक्षी	a bird	१९
कुजर	हाथी	an elephant	१८७
कुटा	खराब हाथ वाला, टोटा	having defective arm	७१
कुत (कोत)	भाला, अस्त्रविशेष	a spear	५२
कुथु	कुन्थु-जीवविशेष	a worm	६६
कोकणग	कोकण देश	konkan country	३३
कोत	भाला	a spear	५२
कोच	क्रौच देश	kraunch country	३३
खग	पक्षी	bird	१९
खग्ग	खड्ग-गेडा	rhinocerous	१७
खग्ग	खड्ग-तलवार	sword	१३४
खद्ध	जल्दी, शीघ्र	quickly	३३९
खर	गधा	donkey	१७
खस	खस देश	khas country	३३
खहयर	खेचर-पक्षी	bird	१९
खाडहिल	गिलहरी	squirrel	१८
खाति(इ)य	खाई	moat, gorge	२६
खासिया	खासिक देश	khasik country	३३
खील	खील	puffed rice	२८
खुज्जा	कुबडा	hunch back	७१
खुद्दिय	तलाई	a pond	४२०
खुर	छुरा	a knife	३७

खुहिय	भूखा	hungry	२६१
खेड	खेडा-छोटा गाँव	a small village	१४५
खेलोसहि	एक प्रकार की लब्धि	a type of special power	२६४
खेव	चोरी	theft	१२६
खडरक्ख	चुगी लेने वाला अथवा कोतवाल	excise inspector	८०
खंड	खांड-शक्कर	sugar	४२५
खती	क्षान्ति-अहिंसा का १३वाँ नाम	endurance, 13th name of ahimsa	२५३
खध	स्कन्ध	shoulder	८०
खिखिणि	पायल, आभूषणविशेष	an ornament of ankle	४१७
गडि	गडमाला	goitre	४२१
गय	हाथी	an elephant	१७
गयकुल	हाथियो का झुण्ड	elephant-herd	१०८
गया	गदा-अस्त्रविशेष	a mace	१३४
गरल	अन्य वस्तु मे मिला विष	contaminated with poison	३२
गरुल	गरुड पक्षी	an eagle	१९
गवय	रोझ-नीली गौ	black buck	१७
गवालिय	गाय सम्बन्धी झूठ	lie about a cow	१०४
गहियगहणा	गिरवीं रखने वाले-गिरवीं का माल हजम करने वाले	pawn broker	८०
गागर	घडा	pitcher	१८७
गाम	ग्राम	village	१४५
गाय (काय)	एक म्लेच्छ जाति	a tribe	३३
गालणा	हिंसा का एक नाम	a name for violence	८
गिद्ध	गीध	a vulture	५६
गाह	ग्राह-जल जन्तु	an aquatic animal	१७
गिलाण	बीमार	sick	३३०
गुज्झ	अब्रह्म का एक नाम	a name of non-celibacy	१७९
गुत्ती	गुप्ति	restraint	२५३, ३७७
गुणाण विराहणत्ति	गुणो की विराधना-हिंसा का ३०वाँ नाम	insulting qualities, 30th name of violence	८
गुरुतप्पओ	गुरुपत्नीगामी	incest with teacher's wife	१०२

गुल(ड)	गुड	jaggery	३९८
गोउर	गोपुर-नगर का मुख्य द्वार	city gate	२६
गोकण्ण	दो खुर वाला चौपाया जानवर	two hoofed quadrupad	१७
गोच्छओ	पूजनी	a type of brush	४०५
गोड	गौड देश	gaur country	३३
गोण	गाय बैल	cattle	१७
गोणस	बिना फण का साँप	hoodless snake	१८
गोधा	गोधा	a type of lizard	१८
गोमड	गाय का कलेवर	cadaver of a cow	४२३
गोमिय	अधिकारीविशेष	an officer	१४९
गोहा	गोधा	a type of lizard	१०८
गोसीससरसचदन	गोशीर्ष नामक शीतल चन्दन	a type of sandal wood	४२३
गडूलय	गिडोला, जन्तुविशेष	an animal	६६
गथिभेयग	गाँठ काटने वाला	one who cuts knots	१३०
गध	गध	smell	४२४
गंधमादण	पर्वतविशेष	a mountain	२९६
गधहारग	गन्धहारक देश (कन्धार)	kandhar country	३३
घत्थ	ग्रस्त-जकडा हुआ	trapped	२३९
घय	घी	butter-oil	४२५
घर	घर-गृह	house	२६
घायणा	हिंसा का छट्ठा नाम	6th name of violence	८
घीरोली	घर मे रहने वाली गोह	a type of lizard	१८
घूय	घूक-उल्लू	owl	१४९
घटिय	घटिका-घुघरू	bells	४१७
चउक्क	चौक	courtyard	१५४
चउम्मुह	चारो ओर द्वारा वाली इमारत	building with gates on four sides	१५४
चउरग	चकोर पक्षी	a bird	१९
चउरिंदियाण	चार इन्द्रिय वाला जीव	four sensed being	६३
चक्क	चक्र-चक्रव्यूह	circular battle formation	१३३
चक्कवट्टी	चक्रवर्ती	an emperor	८१
चक्कवाग	चक्रवाक, चकवा	a bird	१९

चक्खुसे	चाक्षुष–आँख से देखने योग्य	seen with eyes	२४
चच्चर	चार से अधिक मार्गों का सगम	where four paths meet	१५४
चडग	चिडिया	bird	१९
चडकर	समूह	a group	१३४
चमर	चमरी गाय	yak	१७
चम्म	चमडा	leather	२२
चम्मट्ठिल	चमगादड	a bat	१९
चम्मपत्त	चर्मपात्र	leather bowl	३९६
चम्मेट्ठ	चमडे से मढा पत्थर	leather covered stone	१३४
चय	वस्तुओ की ढेरी, परिग्रह का तीसरा भेद	a heap of things, 3rd name of parigraha	२२८
चरत	अब्रह्मचर्य का एक नाम	a name for non celibacy	१७९
चरिया	नगर और कोट के मध्य का मार्ग	road joining a city with battlement	२६
चलण	चरण–पैर	feet	२१०
चलणमालिय	आभूषणविशेष	an ornament	४१७
चवल	चपल	quick	१९४
चाई	त्यागी	renouncer	४०८
चाडुयार	खुशामदी	sycophant	८०
चाणूर	चाणूर मल्ल	chanur, a wrestler	१९३
चारग	बन्दीखाना	prison	१४९
चारभडा	गुप्त दूत	a secret agent	८०
चाव	धनुष	a bow	१३४
चास	चाश पक्षी	a bird	१९
चिक्खल्ल	कीचड	slime	३७
चित्त	चित्रकूट पर्वत	chitrakoot hill	२३३
चित्तसभा	चित्रसभा	art gallery	२६
चिइ	भित्ति आदि का बनाना	to construct wall	२६
चियका	चिता	funeral pyre	१४९
चिल्लल	चीता या दो खुर वाला पशुविशेष	leopard or a two hoofed animal	१७
चीण	चीन देश	china	३३

चिलाय	चिलात देशवासी	people of chilat country	३३
चीरल्ल	चील	a fly	१९
चूलिया	चूलिका	a peak	३३
चेइय	चैत्य	temple complex	२६
चोक्ख	चोक्ष-अहिंसा का ५४वाँ नाम	choksh; 54th name for ahimsa	२५३
चोरिक्क	चोरी	theft	१२६
चोलपट्टक	चोलपट्टा, साधु के पहनने का वस्त्र	part of a monk's dress	२८९
चंगेरी	फूलो की डाली या वाद्यविशेष	flower basket, a musical instrument	२८
चंडो	उद्धत-प्राणवध का विशेषण	fierce, violent	४
चदणग	कौडी	small shell	६६
चदसालिय	अटारी	a loft	२८
चुंचुया	चुचुक	a tribe	३३
छगल	बकरे की एक जाति	a type of goat	१७
छत्त	छत्र	umbrella	२११
छरुप्पगय	एक कला	an art	२३९
छविच्छेओ	हिंसा का २१वाँ नाम	21st name of violence	८
छीरल	बाहुओ से चलने वाला जीव	lizard like reptile	१८
छुद्दिय	आभरणविशेष	an ornament	४१७
जक्ख	यक्ष-देवविशेष	yaksha, a class of gods	१४०-१४१
जग	यकृत-पेट के दाहिनी तरफ रहने वाली माँसग्रन्थि	lever	२२
जच्च	उत्तम जातीय	of good breed	२१०
जणवय	देश	country	१४५
जत(य)न	यजन अभयदान-अहिंसा का ४८वाँ नाम	forgiveness, 48th name of ahimsa	२५३
जदिच्छाए	यदृच्छा	freedom	९८
जन्नो	यज्ञ, अहिंसा का ४६वाँ नाम	yajna, 46th name of ahimsa	२५३
जमपुरिस	यमपुरुष-परमाधर्मी देव	gods active in hell	३७
जमकवर	यमकवर पर्वत	yamakavar mountain	२३३
जराउय	जरायुज-जड के साथ उत्पन्न होने	placental beings	२१९

	वाला जीव		
जरासंधमाणमहणा	जरासन्ध राजा के मान को मथने वाले	one who subdued jarasandh's pride	१९३
जलगए	जल मे रहने वाले कीडे आदि	aquatic worms	२४
जलमए	जलकाय के जीव	water-bodied beings	२४
जलयर	जलचर	aquatic animals	३४
जल्क	जल्लदेश या डोरी पर खेलने वाला	rope-walkers	३३
जल्लोसहि	एक प्रकार की लब्धि	a kind of super-power	२६४
जलूय	जलूका, जौक	a leech	६६
जव	जौ-जव	barley	१८७
जवण	यवन लोग	yavans	३३
जहण	जघन, जघा	thigh	२१०
जाइ	जाति, जन्म	caste, birth	८०
जाण	यान	vehicle	२८
जाणसाला	यानशाला, वाहन आदि रखने का घर	garage	२८
जारिसमो	जैसा	like that	१
जाल	ज्वाला	flame	३७
जालय	जालियाँ	nets	२८
जाहग	काँटो से ढका हुआ शरीर वाला जन्तु	needle covered animal	१८
जिणेहिं	जिनेन्द्रदेवो द्वारा	by the jinas	१९
जीवनिकाया	जीवनिकाय	class of beings	३७७
जीवियतकरणो	हिंसा का २२वाँ नाम	22nd name of violence	८
जीवगजीवग	चकोर पक्षी	a bird	१९
जुय	युग, जूवा	eon, yoke	२८
जुयकरा	जुआरी	gambler	८०
जूव	यूप	sacrificial pillar	२११
जोगसग्गहे	योगसग्रह	a set of associations	३७७
जोग्ग	दो हाथ का यानविशेष-युग्य	two cubit vehicle	२८
जोणी	योनि-जन्मस्थान	genus	३९६
जत	यन्त्र	instrument	२८
जतुग	पानी मे पैदा होने वाला तृणविशेष	a grass found in water	३३७
जबुय	शृगाल	jackal	१४९

जबू	सुधर्मा गणधर के शिष्य	jambu, sudharma's disciple	१
जभग	जृम्भक-देवविशेष	a class of gods	२९६
झय	ध्वज	flag	१३५
झस	जल-जन्तु	an aquatic animal	१७
झाण	ध्यान	meditation	३५३
ठिति	स्थिति, अहिंसा का २२वाँ नाम	stability, 22nd name of ahimsa	२५३
डब्भ	डाभ-तृणविशेष	a type of grass	३३७
डमर	सग्राम	battle	११४
डाइणी	डाकिन	a witch	१४९
डोब	डोव जाति	donve caste	३३
डोबिलग	डोविलक देश	dovalik country	३३
डसमसग	डास-मच्छर	mosquito	३३९
ढेणियालग	ढेणिकालग-एक प्रकार का पक्षी	a bird	१९
ढिक	ढक पक्षी	a bird	१९
णउल	नकुल	mongoose	१८
णक्क	नाक	nose	२२
णग	पर्वत	mountain	१८७
णगर	नगर	city	१८७
णत्थिगवाइणो	नास्तिवादी-नास्तिक	atheist	८१
णयण	नेत्र	eyes	२२
णह	नख	nails	२२
णिक्खेव	धरोहर	heritage	१०४
णित्तुस	सारयुक्त-असारतारहित	meaningful	३४६
णियडि	माया	deception	२२४
णिवाय	पवनरहित	devoid of air	३३७
णिव्वाण	अहिंसा का एक नाम	a name for ahimsa	२५३
णिव्वुई	अहिंसा का एक नाम	a name for ahimsa	२५३
णिव्वुइघर	मोक्ष	liberation	३४६
ण्हवणं	सौभाग्यस्नान	anointing	११४
ण्हारूणि	स्नायु	muscles	२२
णिग्घिणो	घृणारहित	free of hatred	७३

णिज्जवणा	णिज्जूहग-द्वारशाखा	threshhold	२८
णिस्सेणि	निस्सरणी	ladder	२८
णिस्सद	सार	gist	१
णिससो	नृशस, क्रूर	cruel, inhuman	७३
णेउर	नूपुर	tiny bell	१८७
णदमाणग	नदीमुख	bull-mouth	१९
णगल	हल	plough	२८
तउय	त्रपु	lead metal	३९६
तक्कर	चोर	thief	१४९
तण्हा	तृष्णा-परिग्रह का २७वाँ नाम	craving, 27th name of parigraha	२२८
तत	वीणा आदि वाद्य	musical instruments including veena	२८
तत्तिय	सताप	grief	१११
तप्पण	सत्तू	gram flour	३९८
तय	त्वचा	skin	३९५
तरच्छ	जगली पशु	beast	१७
तलताल	वाद्यविशेष	a musical instrument	४१७
तलवर	मस्तक पर स्वर्णपट्टधारक राजपुरुष	officer with gold band on head	२३३
तलाग	तालाब	a pond	२६
तव	तप	penance	३६२
तस	त्रस जीव	mobile being	२१९
ताय	तात	father, elderly	४८
तारा	तारा	star	२१९
तालियट	ताल पत्र के पखे	palm leave fan	१८७
तित्त	तीता रस	astringent taste	४२५
तित्ती	तृप्ति-अहिंसा का १०वाँ नाम	contentment, 10th name of ahimsa	२५३
तित्तिय	तित्तिक देश	tittik country	३३
तित्तिर	तीतर पक्षी	a partridge	१९
तिमि	बडे मत्स्य	large fish	१७

तिमिसधयार	घोर अन्धकार	pitch dark	२४२
तिमिगल	बहुत बडे मत्स्य	giant fish	१७
तिरिय	तिर्यञ्च	animals	५७
तिवायणा	त्रिपातना (अतिपातना)-हिंसा का १०वाँ नाम	to kill, 10th name of violence	८
तिसिय	प्यासा	thirsty	२६१
तिहि	तिथि	date	४००
तुरय	घोडा	a horse	१८७
तूणइल्ल	वाद्यविशेष बजाने वाला	player of a musical instruments	४१७
तेणिक्क	चोरी	theft	१२६
तेल्ल	तेल	oil	३९८
तोमर	बाण	an arrow	५२
तोरण	तोरण	arch on a door	२८
तती	तन्त्री-वीणा	tantri veena	४१७
तब	ताम्र	copper	२१०
तुड	मुख	mouth	५५-५६
थण	स्तन	udder	२११
थलयर	स्थलचर	terrestrial animal	३४
थावर	स्थावर-एकेन्द्रिय जीव	one-sensed being	२१९
थूभ	स्तूप	a memorial mound	२६
थोवग	थोडा	little	८१
दइओ	दयित-प्रिय	beloved	२२४
दईवतप्पभावओ	भाग्य के प्रभाव से	due to luck	९८
दग	उदक, पानी	water	१४१
दगतुड	दगतुड पक्षी	a bird	१९
दच्छ	दक्ष-चतुर	expert, clever	८०
दहुर	वाद्यविशेष	a musical instrument	४१७
दब्भपुप्फ	एक प्रकार का सर्प	a type of snake	२२
दया	दया-अहिंसा का ११वाँ नाम	pity, 11th name of ahimsa	२५३
दरदड्ढ	कुछ जला हुआ	slightly burnt	१४९
दवग्गि	दावानल	forest fire	३२

दव्वसारो	द्रव्यसार वाला-परिग्रह का १०वाँ नाम	materially wealthy; 10th name of parigraha	२२८
दविल	द्रविड	dravidian	३३
दह	ह्रद	a lake	३२
दहपइ	ह्रदपति-पद्म ह्रद आदि	name of a lake/river	२३३
दहिमुह	दधिमुख पर्वत	dadhimukh mountain	२३३
दाढि	दाढ	molar teeth	२२
दामिणि	माला	a garland	२११
दार	द्वार-दरवाजा	gate; door	२६
दालियब	खट्टी दाल	sour pulse-soup	४२५
दिलिवेढय	जलीय जन्तुविशेष	an aquatic animal	१७
दीविय	चीता	leopard	१७
दीविय	एक प्रकार की चिडिया	a bird	१९
दीहिया	बावडी	stepped well or tank	३२
दुक्कय	दुष्कृत	bad deed	९२
दुग्गइप्पवाओ	हिंसा का एक नाम	a name for violence	८
दुद्ध	दुग्ध	milk	४२५
दुहण	द्रुघन-वृक्षो को गिराने वाला मुद्‌गर द्रुहना	a mace for falling trees	१३४
देवई(की)	देवकी रानी	queen devaki	१९३
देवकुल	देवमन्दिर	temple of gods	२६
दोणमुह	जलमार्ग और स्थलमार्ग दोनो से जाने योग्य नगर	a port city	१४५
दोणि	छोटी नौका	small boat	२८
दोवई	द्रौपदी	draupadi	२१९
दोहग्ग	दुर्भाग्य	bad luck	२११
दतट्ठा	दाँत के लिए	for teeth	२२
दसण	सामान्य बोध, श्रद्धागुण	general perception, faith	१८३
दसमसग	डास-मच्छर	mosquito	३६२
धणिय	अत्यन्त	intense	१४१
धत्तरिट्ठग	धार्तराष्ट्र-हसविशेष	a type of swan	१९
धमण	भैस आदि के देह मे हवा भरना	to blow air into a bufallo	६१

धमणि	नाडी	vein	२२
धिइ	धृति–अहिंसा का २८वाँ नाम	patience, 28th name of ahimsa	२५३
धूम	आहार की निंदा करके खाना	food related fault	४०३
नक्क	जल–जन्तुविशेष	an aquatic animal	१७
नगरगुत्तिय	नगररक्षक	city guard	८०
नट्टग	नर्तक	dancer	४२०
नड	नट	acrobat	४२०
नह	नख	nail	२२
नाराय	लोहे का बाण	iron arrow	५२
निक्किओ	निष्क्रिय	inactive	९२
निगड	लोहे की बेडी	iron shackle	२४
निगम	वणिको का निवास–स्थान	abode of traders	१४५
निग्गुणो	निर्गुण	devoid of attributes	९२
निच्चो	नित्य	permanent	९२
निज्जवणा	हिंसा का २८वाँ नाम	28th name of violence	८
नत्थिकवाइणो	नास्तिकवादी	an atheist	८१
निम्मलतर	खूब स्वच्छ, अहिसा का ६०वाँ नाम	very pure, 60th name of ahimsa	२५३
नि(णि)यडि	कपट–मायाचार	deception	२२४
निव्वाण	निर्वाण–मोक्ष, अहिंसा का एक नाम	liberation, a name for ahimsa	२५३
निव्वुइ	निवृत्ति, शान्ति	release, peace	११७
निहाण	निधान, परिग्रह का ८वाँ नाम	treasure, 8th name of parigraha	२२८
नू(णू)म	नूम–ढक्कन	lid	७७
नेउर	नूपुर	tiny bells	४१७
नेरइय	नरक के जीव	infernal beings	५०
नेहुर	नेहुर देश	nehur country	३३
नदा	समृद्धिदायक, अहिंसा का २४वाँ नाम	source of affluence, 24th name of ahimsa	२५३
नदि	वाद्यविशेष	a musical instrument	४१७
पइभय	प्रतिभय	fearful	३७

पइल्ल	श्लीपद-फीलपाँव	elephantitis	४२१
पउम	पद्म-कमल, पद्मव्यूह	lotus, lotus shaped battle formation	५०, १३१
पउमावई	पद्मावती रानी	queen padmavati	२१९
पएणीयारा	विशेष रूप से हिरनिओ को मारने के लिए फिरने वाले	dow hunters	३२
पक्कणिय	पक्कणिक देश	pakkanik country	३३
पच्चक्खाण	प्रत्याख्यान	to renounce	८१
पच्छागा	ढँकने का वस्त्र	cover made of cloth	४०५
पज्जत्त	पर्याप्त-पर्याप्ति की पूर्णता वाले जीव	fully developed beings	३४-३५
पट्टण	पाटन	a port	१४५
पट्टिस	प्रहरणविशेष	a weapon	१३४
पडगार	जुलाहा	textile weaver	८०
पडिग्गहो	पात्र	a pot	४०५
पडिबधो	प्रतिबन्ध-बाह्य पदार्थों मे स्हेनबन्ध होना, परिग्रह का १२वाँ नाम	fondness for material things, 12th name of parigraha	२२८
पडिलेहण	प्रतिलेखना	inspection	४०६
पडिसीसग	कृत्रिम शिर	image of head	११४
पडिसुया	प्रतिध्वनि	echo	५०
पणव	वाद्यविशेष	a musical instrument	४१७
पण्हव	पह्लव देश	pahnava country	३३
पतरग	भूषणविशेष	an ornament	४१७
पत्तेयसरीर	प्रत्येक शरीर, ऐसे जीव जिनके एक शरीर का स्वामी एक ही हो	a body with one soul	२४
पभासा	प्रभासा-अतिशय दीप्ति वाली, अहिंसा का ५७वाँ नाम	very brilliant, 57th name of ahimsa	२५३
पमया	प्रमदा-स्त्री	woman	२१०
पमोओ	प्रमोद, अहिंसा का २३वाँ नाम	joy, 23rd name of ahimsa	२५३
पयावई	प्रजापति	lord of the people	९२
परदार	परस्त्री	other's wife	२१६

परभवसकामकारओ	परभवसक्रामकारक, हिंसा का १८वाँ नाम	pollutant of next life, 17th name of violence	८
परसु	फरसा	an axe	५२
परहड	चोरी का दूसरा नाम	theft	१२६
परा	तृणविशेष	a type of grass	३३७
परिग्गहो	परिग्रह का पहला नाम	first name of parigraha	२२८
परिचारगा	व्यभिचार मे सहायक	helpful in debauchery	८०
परिजण	परिजन	a relative	११२
परिट्ठावणियासमित	मल-मूत्र आदि परठने की समिति से युक्त	having care in disposal	४०८
परियावण अण्हओ	परितापन आस्रव, हिंसा का २६वाँ नाम	inflow due to causing pain, 26th name of violence	८
परियार	तलवार की म्यान	sword-sheath	२८
परीसह	परिषह-कष्ट	affliction, pain	३७७
पल्लल	पल्वल-छोटा तालाब	small pond	३२
पलाल	पलाल-पोआल	hay	३३७
पलिओवम	उपमाकालविशेष	a unit of metaphoric time	४७
पलित्त	प्रदीप्त	glowing	३७
पलिय	सफेद बाल	white hair	२१०-२११
पवग	उछलने-कूदने वाला	acrobat	६२०
पवयण	प्रवचन	discourse	१
पवग	वाद्यविशेष	a musical instrument	४१७
पवा	प्याऊ	water-hut	२६
पवित्ता	पवित्रा, अहिंसा का ५५वाँ नाम	purity, 55th name of ahimsa	२५३
पवित्थरो	धन का विस्तार, परिग्रह का २०वाँ नाम	acquisition of wealth, 20th name of parigraha	२२८
पव्वीसग	वाद्यविशेष	a musical instrument	१८७
पसय	दो खुर वाला जानवर	two hoofed animal	१७
पहरण	शस्त्र	weapon	२८
पहाण	प्रधान	main, chief	२१०
पहेरग	भूषणविशेष	an ornament	४१७

पाइक्क	पैदल	on feet	१४१
पागार	कोट	battlement	२६
पाठीण	एक जाति का मत्स्य	a type of fish	१७
पाणवहो	प्राणवध, हिंसा का पहला नाम	killing, first name of violence	८
पाणीय	पानी	water	४८
पायकेसरिया	पोछने का वस्त्र	wiping cloth	४०५
पायजालक	पायजेब	anklet (ornament)	४१७
पाद(य)बधण	पात्रबन्धन	cloth for tying bowls	४०५
पायट्ठवण	पात्र ठवणी-जिस पर पात्र रक्खा जाये	bowl-stand	४०५
पारणा	पूर्ति, व्रत का समापन	conclusion of a vow	३४०
पारस	फारस देश	persia	३३
पारदारी	परस्त्रीगामी	having illicit relations with other woman	२१६
पारिप्पव	पारिप्लव जन्तु	an animal	१९
पारेवय (ग)	कबूतर	pigeon	१९
पावकोवो	पापकोप, हिंसा का १९वाँ नाम	extreme sin, 19th name of violence	८
पावलोभ	पापलोभ, हिंसा का एक नाम	greed for sin, a name for violence	८
पासाय	प्रासाद-महल	a palace	२६
पासो	पाश	a snare	२३९
पिक्कमसी	पका हुआ मासी नामक द्रव्य, जटामासी	ripe mansi, jatamansi (a herb)	४२३
पिच्छ	पूँछ	tail	२२
पिट्टण	पीटना	to beat	७०
पित्त	शरीर सम्बन्धी एक दोष	a fault in body humours	२२
पिव्वीलिया	चींटी	ant	६६
पियरो	पिता आदि पूर्वज	ancestors including father	३२
पिसाय	पिशाच	a demon	१८३
पिसुण	चुगलखोर	slanderer	३०७
पिंडवाय	आहार-पानी	food and water	४०२
पिंगलक्खग	पिंगलाक्ष पक्षी	a bird	१९

पिगुल	पिगुल पक्षी, लाल रग का तोता	a red parrot	१९
पिडो	पिड, परिग्रह का ९वाँ नाम	a lump, 9th name of parigraha	२२८
पीवर	पुष्ट	healthy	२१०
पुट्ठी	पुष्टि, अहिंसा का एक नाम	nourishing, a name of ahimsa	२५३
पुढविमए	पृथ्वीकायिक (जीव)	earth-bodied being	२४
पुढविससिए	पृथ्वी के आश्रित रहने वाला	dependent on earth	२४
पुरिसकारो	पुरुषार्थ	valour	८१
पुरोहिय	पुरोहित-शान्तिकर्मकर्त्ता	priest	२३३
पुलिद	पुलिद नामक देशविशेष	pulind country	३३
पुव्वधर	पूर्व नामक शास्त्रो का ज्ञाता	scholar of purvas	२६४
पूया	पूजा, अहिंसा का एक नाम	worship, a name for ahimsa	२५३
पेच्चाभविय	परलोक मे कल्याणकर	beneficial for next life	४१५
पेहुण	मोरपिच्छी	peacock-feather broom	२८
पोक्कण	जातिविशेष, पोक्कण देश	a tribe, pokkan country	३३
पोक्खरणी	पुष्करिणी, चौकोनी बावडी	square stepped-well	२६
पोयसत्था	नौका के व्यापारी	boat traders	५०
पोयघाया	पक्षियो के बच्चो का घात करने वाले	chick hunters	३२
पोयय	पोतज-एक जीवविशेष	placental being	२११
पोसह	पौषध-एक विशिष्ट व्रत	a special vow	८१
पगुला	पगु	disabled	७१
फलक	पाट-बिस्तर-कुर्सी आदि	plank, bed, seat etc	२८
फलिहा	परिघ-आगल	door bolt	२८
फासुय	प्रासुक-निर्जीव	free of living organism	३३५-३३६
फोफस	फुप्फुस-देह का एक अगविशेष	lungs	२२
बउस	एक देशविशेष	a country	३३
बक	बगुला	a heron	१९
बप्प	बाप-पिता	father	४८
बब्बर	एक अनार्य जाति	a non-aryan race	३३
बरहिण	मयूर	a peacock	१९
बलदेव	बलदेव	baldev	८१

बलाका	बगुली	she-heron	१९
बहलीय	बहलीक देशवासी	inhabitant of bahaleek country	३३
बहिर	बहरा	deaf	७१
बायर	बादर नाम–कर्म वाले	with gross naam-karma	२४
बिल्लल	विल्वल देश	vilval country	३३
बीहणग	भयानक	fearful	४४
बुद्धी	बुद्धि, अहिंसा का १६वॉं नाम	wisdom, 17th name of ahimsa	२५३
बेलबग	विडम्बक	jester	४२०
बेइंद्रिय	दो इन्द्रिय वाला	two-sensed	६६
बोही	बोधि, अहिंसा का १६वॉं नाम	enlightenment, 16th name of ahimsa	२५३
वजुल	वजुल पक्षी	a bird	१९
बभचेर	ब्रह्मचर्य	celibacy	३४६
भग	योनि	genus	१८७
भट्ठभज्जणाणि	भाड मे चने के जैसे भूँजना	to roast like corn	४६
भडग	भडक जाति	bhadak tribe	३३
भडा	सैनिक	a soldier	१३६
भद्दा	भद्रा–कल्याणकारी, अहिंसा का २५वॉं नाम	beatific, 25th name of ahimsa	२५३
भमर	भ्रमर	bumble-bee	२२
भयग	नौकर	servant	१११
भयकरो	हिंसा का २३वॉं नाम	ferocious, 23rd name of ahimsa	८
भरह	भरत क्षेत्र	bharat area	१८७
भवण	भवन	a mansion	२६
भाइल्लगा	सेवक	servant	१११
भायण	पात्र	a pot	२६
भारो	भार–आत्मा को भारी करने वाला, परिग्रह का १७वॉं नाम	burden of soul; 17th name of parigraha	२२८
भावणा	भावना	sentiment	२८४
भाविओ	भावित–संस्कार वाला	having good attitude	२८४

भास	भाष पक्षी	a bird	१९
भासासमिए	भाषासमिति वाला	having care in speech	४०८
भिक्खुपडिमा	साधु की पडिमा (प्रतिज्ञा)	resolve of a monk	३७७
भिगारग	भिगारक पक्षी	a bird	१९
भुज्जिय	भूजे हुए धानी	roasted barley	३९८
भुयईसर	शेषनाग	the great serpent	२०२-२०३
भूमिघर	भूमिगृह-तलघर	cellar	२६
भूयगामा	जीवो के समूह	groups of beings	३७७
भेयणिट्ठवण	भेदनिष्ठापन-हिंसा का एक नाम	to tear apart, a name for violence	८
भेसज्ज	भेषज	medicinal	३९६
भोमालिय	भूमि सम्बन्धी झूठ	lie about land	१०४
भडोवगरण	मिट्टी के भांड	earthen pots	२६
भिंडिमाल	भिंडिपाल	a weapon	१३४
मइय	मतिक-खेत जोतने के बाद ढेला फोडने का मोटा काष्ठ	thick wooden bar for breaking lump of sand	२८
मउड	मुकुट	crown	१३६
मउलि	फण वाले सर्प	hooded snake	१८
मगर	मगरमच्छ	crocodile	१७
मच्चू	मृत्यु, हिंसा का एक नाम	death, a name for violence	८
मच्छबधा	मछली पकडने वाले	fishermen	३२
मच्छि	मक्खी	a fly	६३
मच्छडी	मिश्री	crystal sugar	३९८
मज्ज	मद्य	alcohol, wine	३९८
मज्जण	मज्जन-मर्दन	massage	३६१
मज्जार	बिल्ली	a cat	१७
मडब	जिसके नजदीक कोई बस्ती न हो ऐसी बस्ती	an isolated village	१४१
मणगुत्ते	मनोगुप्त	having restraint of mind	४०८
मणपज्जवनाणी	मन पर्यवज्ञानी	one with manah-paryavjnana	२६४
मणि	चन्द्रकान्त आदि	precious stones	३२२

मत्थुलुग	मस्तुलिग	oil	२२
मयणसाल	मैना	maina	१९
महु	शहद	honey	३९८
मम्मण	अस्पष्ट उच्चारण करने वाला	having unclear speech	७१
मय	मद	conceit, intoxication	३७७
मयूर	मोर	peacock	१९
मरहट्ठ	महाराष्ट्र देश	maharashtra state	३३
मरुय	मरुआ	a plant	४२३
मरूया	मरुक देश	maruk country	३३
मलय	मलय देश	malaya country	३३
मल्ल	पहलवान	wrestler	४१७
मसग	मशक, मच्छर	mosquito	६३
महव्वय	महाव्रत	great vows	३५८
महाकुंभि	बडी कुभी	a large urn	४६
महापह	राजमार्ग	highway	१५४
महासउणिपूयणारियु	महाशकुनि और पूतना के शत्रु	enemies of mahashakuni and putana	१९३-१९४
महाछी	अपरिमित याचना वाला, परिग्रह का १४वाँ नाम	seeker of unlimited alms, 14th name of parigraha	२२८
महिच्छा	तीव्र इच्छा, परिग्रह का एक नाम	intense desire, a name for parigraha	२२८
महिस	भैसा	buffalo	१७
महुकरी	मधुमक्खी	honey-bee	२२
महुकोसए	मधु के छत्ते	honey-comb	१०८
महुघाय	मधु लेने वाला	one who takes honey	३२
महुर	महुर देश	mahur Country	३३
महेसी	महर्षि	great Sage	१
महोरग	बडा सर्प	large Serpant	१८
माढि	ढाल	a shield	१३४
माणुसोत्तर	मनुषोत्तर पर्वत	manushottar Mountain	२३३
माया	माया-कपट	deceit	७७
मायामोसो	माया-मृषा	deception-falsity	७७
मारणा	हिंसा का ७वाँ नाम	killing, 7th name of violence	८

मारुय	मारुत-वायु	air	६६
मालव	मालव देश	malava state	३३
मास	माष देश	maash state	३३
मित्तकलत्त	मित्र की पत्नी	friend's wife	१०२
मिच्छद्दिट्ठी	मिथ्यादृष्टि वाला	one with wrong perception	२४५
मिलक्खुजाई	म्लेच्छजातीय	of lower caste	३३
मिय	मृग	deer	१७
मुइग	मृदङ्ग	mridanga, a percussion instrument	४१७
मुगुस	मगूस-भुजपरिसर्प जन्तुविशेष	a reptile	१८
मुट्ठिअ	मौष्टिक देश	maushtika country	३३
मुट्ठिग	मौष्टिक मल्ल	pugilist	४१७
मुत्त	मोती	pearl	३२२
मुद्ध	मूर्धा-मस्तक	head	२०३-२०३
मुम्मुर	अग्नि के कण	sparks	३७
मुरय	मृदग	a musical instrument	४१७
मुरुड	मुरुड देश	murund country	३३
मूसल	मूसल	a mace or club	१९३-१९४
मुसढि	प्रहरणविशेष-भुशुडी	a weapon	२८
मुहणतक (पोत्तिय)	मुखवस्त्रिका	mouth-cover	२८९
महती	महती-महिता-सम्पन्न, अहिसा का १५वाँ नाम	wealth, 15th name of ahimsa	२५३
मूक	गूँगा	mute	७१
मूयग	एक प्रकार का तृण	a type of grass	३३७
मूलकम्म	गर्भपात आदि मूल कर्म	abortion & other sinful acts	११०
मूसल	खाडने का उपकरण	a pestle	२८
मेइणि	पृथ्वी	earth	२१०-२११
मेय	मेद-धातु	a metal	२२
मेत्त	मेद देश	meda country	३३
मेर	मूँज के तन्तु	hessian fibre	३३७
मेहला	मेखला	a chain	४१७
मोक्ख	मोक्ष	liberation	३४६
मेहुण	मैथुन	to copulate	२१६

मोग्गर	मुद्गर	mace	५२
मोट्ठिय	मुष्टिप्रमाण पत्थर	fist size stone	१३४
मोयग	मोदक	a sweet	३९८
मोस	मिथ्या	falsity	७७
मोह	मोह-अब्रह्म का एक नाम	fondness, a name for non-celibacy	१७९
मगल	मगलकारी, अहिंसा का ३०वाँ नाम	beatific, 30th name of ahimsa	२५३
मडक	मण्डप-रावटी	a pavilion	२८
मडव	मडप	a pavilion	२६
मडुक्क	मेढक	a frog	१७
मदर	मेरु पर्वत	meru mountain	४११
मदुय	मन्दुक-जल	water	१७
मम्मणा	तुतला बोलने वाला	stammerer	११७
मस	माँस	flesh	२२
मिज	मज्जा	sinews	२२
मुगुस	मगुस-गिलहरी	squirrel	१८
यम	मूलव्रत-आजीवन व्रत	basic vows	३४६
रक्खस	राक्षस	devil	१४१
रक्खा	रक्षा, अहिसा का ३३वाँ नाम	protection, 33rd name of ahimsa	२५३
रत्तसुभद्दा	रक्तसुभद्रा	name of Krishna's sister	२१९
रइकर	रतिकर पर्वत	ratikar mountain	२३३
रती(ई)	रति-प्रेम	love	३०, १७९
रती (ई)	सन्तोष, अहिसा का ७वाँ नाम	contentment, 7th name of Ahimsa	२५३
रय	रज, कर्मरज	dust, Karmic dust	२४५
रयण	रत्न	gem	३२२
रयणागर	रत्नाकर, समुद्र	sea	१४१
रयणोरुजालिय	जाँघो का भूषण	a thigh ornament	४१७
रयय	चाँदी	silver	३२२
रयत्ताण	रज से रक्षक	protector from dust	४०५
रयहरण	रजोहरण	ascetic-broom	४०५

रवि	सूर्य	the sun	१८७
रसय	रसज–रसो मे उत्पन्न होने वाले जीव	living organism born in juices	२१९
रह	रथ	chariot	२८
रायदुट्ठ	राजविरुद्ध	against state	१०२
रायाणो	राजा	a king	१३३
रिट्ठवसह	अरिष्ट नामक बैल	a bull named arisht	१९३–१९४
रिद्धि	ऋद्धि, अहिंसा का २०वाँ नाम	opulance, 20th name of ahimsa	२५३
रिसओ	ऋषि	a sage	८१
रुचक (रुयग)वर	मण्डलाकार रुचकगिरि	circular Ruchak hill	२३३
रुद्द	रौद्र	fierce	३६५
रुप्पिणी	रुक्मिणी	rukmini	२१९
रुरु	हिरणविशेष	a type of deer	१७
रुरु	रुरु देश	ruru country	३३
रूव	रूप	form, appearance	४२०
रोम	रोम देश	rome state	३३
रोहिए	रोहित, पशुविशेष	an animal	१०८
रोहिणी	रोहिणी, महिलाविशेष का नाम	rohini, name of a lady	२१९
लउड	लकुट–छोटा डडा	small stick	२८
लट्ठी	लाठी	a staff or stick	४६
लद्धी	लब्धि, अहिंसा का २७वाँ नाम	special power, 27th name of Ahimsa	२५३
लयण	पर्वत खोदकर बनाया गया स्थानविशेष	a dugout in a hill	२६
लवण	लवणसमुद्र	Lavan sea	२३३
लवग	लौग	clove	४२३
लावग	लवा पक्षी	a bird	१९
लासग	रास गाने वाले	a singer	४२०
लासिय	ल्हासिक देश	lhasik country	३३
लुद्धगा	व्याध	hunter	३२
लुद्धा	लोभग्रस्त	greedy	१३३
लुपणा	हिसा का एक नाम	a name for violence	८
लेट्टु	पत्थर	a stone	३२२

लेण	पहाड मे बना घर	a house ın a mountaın	३३५
लेस्साओ	लेश्या	soul-complexıon	३७७
लोलिक्क	चोरी का एक नाम	a term for theft	१२६
लोहसकल	लोह की बेड़ी	ıron shakle	१४९
लोहपजर	लोहे का पींजरा	ıron cage	१४९
लोहप्पा	लोभात्मा, परिग्रह का १३वॉं नाम	greed, 13th name of parıgraha	२२८
लगल	शस्त्रविशेष	a weapon	१३४
लुपणा	हिंसा का २९वॉं नाम	29th name of vıolence	८
वइर	वज्र	dıamond, a weapon	२१०-२११
बउस	बकुशदेश	bakush country	३३
वक्खार	विजयो को विभक्त करने वाले पर्वत	mountaıns dıvıdıng contınents	२३३
वग्गुलि	वागुल	a bırd	१९
वज्ज-रिसह-नाराय-सघयण	वज्रऋषभनाराच सहनन	a body constıtutıon	३५३
वज्जो	वर्ज्य, हिंसा का २५वॉं नाम	prohıbıted, 25th name of vıolence	८
वट्टग	बतक	a duck	१९
वट्टपव्वय	गोलाकार पर्वत	cırcular mountaın	२३३
वडभ	टेडे-मेढे शरीर वाला	havıng dıstorted body	७१
वणचरगा	जगल मे घूमने वाले	a forest wanderer	३२
वणस्सइ (वणप्फइ)	वनस्पति	plant	६६
वद्धीसग	वाद्यविशेष	a musıcal ınstrument	४१७
वल्लय	वल्वज	valvaȷ	३३७
वल्लर	खेतविशेष	a farm	३२
ववसाओ	व्यवसाय, अहिसा का ४४वॉं नाम	busıness, 44th name of ahımsa	२५३
बब्बर	बर्वर देश	barbar country	३३
आवसह	परिव्राजको के ठहरने का स्थान	place of stay for parıvraȷaks	३३५
वसा	चरबी	fat	२२
वसीकरण	वशीकरण	hypnotısm	११०
वहण	नौका	boat	२८

वहणा	हिंसा का ८वाँ नाम	8th name of violence	८
वाउप्पिय	भुजपरिसर्पविशेष	a reptile	१८
वाउरिय	जाल लेकर घूमने वाले	trappers	३२
वाणियगा	वणिक लोग	traders	८०
वानर	बन्दर	monkey	१७
वानरकुल	बन्दर जाति	monkey species	१०८
वामण	छोटे शरीर वाला	pygmey	७१
वामलोयवाइ	लोकविरुद्ध-विपरीत बोलने वाला	speaking against tradition	८१
बायर	बादर-स्थूल	gross	२१९
वायस	कौवा	a crow	१९
वाल	बाल	hair	२२
बालरज्जुय	बाल की रस्सी	hair-rope	१४९
वावि	कमलरहित या गोल बावडी	a round tank	२६
वासहर	वर्षधर हिमवान् आदि पर्वत	varshadhar mountains	२३३
वासि	वसूला	a chisel	५२
वासुदेवा	वासुदेव	vasudev	८१
वाहण	गाडी आदि	vehicle	२८
वाहा	व्याध	a hunter	३२
विउलमई	विपुलमति-ज्ञानविशेष	a type of knowledge	२६४
विकप्प	एक तरह का महल	a type of palace	२६
विकहा	विकथा	false speech	३७७
विग	भेडिया, व्याघ्र	wolf	१७
विगला	अगहीन	without limbs	७१
विचित्त	विचित्रकूट पर्वत	vichitrakoot hill	२३३
विच्छुय	बिच्छू	scorpion	३७
विडव	शाखाग्र	tip of a branch	२२४
विडग	कबूतरो का घर	pigeon hole	२८
विणासो	विनाश, हिंसा का २७वाँ नाम	destruction, 27th name of violence	८
विण्हुमय	विष्णुमय	devoted to Vishnu	९२
वितत	ढोल आदि वाद्य	drum and other such instruments	२८
वितत (वियय) पक्खि	वितत पक्षी	a bird	१९

विड्ढि	वृद्धि, अहिंसा का २१वाँ नाम	development, 21st name of Ahımsa	२५३
विप्पोसहिपत्त	एक विशिष्ट लब्धि का धारक	havıng a special power	२६४
विपंचि	वीणा	veena	१८७
विभूई	विभूति, अहिंसा का ३२वाँ नाम	glory, 32nd name of ahımsa	२५३
विभंग	मैथुन का एक नाम	a name for the sex act	१७९
विमुत्ती	विमुक्ति-अहिंसा का १२वाँ नाम	salvatıon, 12th name of ahımsa	२५३
विमल	विमल-अहिंसा का ५८वाँ नाम	tarnıshfree, 58th name of ahımsa	२५३
वियग्ध	व्याघ्र	tıger	१७
विराहणा	विराधना	transgressıon	१७९
विस	विष	poıson	२२
विसाण	हाथी का दाँत	ıvory	२२
विसिट्ठदिट्ठी	विशिष्ट दृष्टि अहिंसा का २८वाँ नाम	specıal perceptıon, 28th name of Ahımsa	२५३
विसुद्धी	विशुद्धि, अहिंसा का २६वाँ नाम	purıty; 26th name of ahımsa	२५३
विहग	पक्षीविशेष	a bırd	१९
विहार	मठ	monastry	२८
वीसत्थछिद्दघाई	विश्वासी का अवसर देखकर घात करने वाला	one who hurts a confidante	१४८
वीसाओ	विश्वास, अहिंसा का ५१वाँ नाम	belıef, 51st name of ahımsa	२५३
वीसुय	विश्रुत-प्रसिद्ध	famous	३५३
वेजयन्ती	विजयपताका	flag of vıctory	१३६
वेढिम	वेष्टिम-जलेबी	a sweet	३९८
वेइय	वेदिका, चबूतरा	platform	२६
वेयत्थी	वेदविहित अनुष्ठान के अर्थी	desırous of Vedıc rıtual	३०
वेरुलिओ	वैडूर्य मणि	cats-eye	३५२
वेसर	पक्षीविशेष	a bırd	१९
वोरमण	हिंसा का १६वाँ नाम	16th name of vıolence	८

वजुल	एक प्रकार का पक्षी	a bird	१९
वस	बाँसुरी	a flute	२५३
सउण	शकुन पक्षी, तीतुर	a partridge like bird	१९
सक	शक देश या जाति	shaka country or people	३३
सक्करा	धूलि	dust	३२२
सक्कुलि	तिलपापडी	a sweet	३९८
सक्खी	साक्षी-गवाह	a witness	८०
सगड	शकट-गाडी	cart	२८
सगड	शकटव्यूह	cart shaped battle formation	१२६
सणप्फय	नखयुक्त पैर वाले	with claws	३४
सयग्घी	सैकडो का सहार करने वाला शस्त्र-तोप	a canon like weapn	२८
सत्ति	शक्ति, त्रिशूल	a trident	१३४
सत्ती	अहिसा का चौथा नाम	fourth name of Ahimsa	२५३
सत्थवाह	सार्थवाह	caravan chief	२३३
सद्दूल	शार्दूल सिह	a lion	१५
सब्बल	भाला	a spear	५२
सण्णी(न्नी)	सज्ञी-मन वाले जीव	sentient beings	३४
सप्पि	घी	butter-oil	३९८
सबर	शबर, भिल्ल जाति	a tribe	३३
लउल	शस्त्रविशेष (लाठी)	a weapon	१३४
सभा	सभा	assembly	२८
समणधम्मे	श्रमणधर्म	jain religion	३७७
समचउरससठाण	समचतुरस्र-चारो कोण बराबर आकृति	a square shape	३५३
समिय	सिद्धान्त	principle	४०७-४०८
सम्मत्तविसुद्धमूलो	सम्यक्त्वरूप विशुद्ध मूल वाला	with righteous pure attitude	३९५
सम्मदिट्ठी	सम्यग्दृष्टि	righteous	४०८
सम्मत्ताराहणा	सम्यक्त्व की आराधना-अहिंसा का १४वाँ नाम	practice of righteousness, 14th name of Ahimsa	२५३
समाही	समाधि-समता-अहिंसा का तीसरा नाम	equanimity, third name of Ahimsa	२५३
समिठई	समिति-अहिंसा का एक नाम	care, a name for Ahimsa	२५३

समिद्धी	समृद्धि-अहिंसा का एक नाम	wealth, a name for Ahımsa	२५३
समुग्गपक्खी	पक्षिविशेष	a bırd	१९
सयभू	स्वयभू	self-proclaimed	९०
सरड	गिरगिट नामक जीवविशेष	chamelıon	१८
सरण	शरण-स्थलविशेष	a place of refuge	२६
सरब	जन्तुविशेष	an anımal	१८
सल्लय	जीवविशेष	a creature	१०८
ससमय	स्वसमय-स्वकीय सिद्धान्त	one's own doctrıne	४०८
ससय	शशक-खरगोश	rabbit	१०८
साउणिया	पक्षीमार-व्याध	bırd hunter	३२
साल	शाखा-वृक्ष की डाली	branch of a tree	२२४
साली	शाली धान्यविशेष	paddy	११२
साहसिय	साहसी-बिना फल सोचे काम करने वाला	courageous, bold	८०
साहारणसरीर	साधारण शरीर (जीव विशेष)	a class of lıvıng beıngs	२४
सिद्धाति(इ) गुणा	सिद्धो के गुण	attrıbutes of perfected ones	३७७
सिद्धावासो	सिद्धावास, अहिंसा का ३४वाँ नाम	abode of the lıberated, 34th name of Ahımsa	२५३
सिप्प	शिल्पकला	craft	२३९
सियाल	श्रृगाल	a jackal	१७
सिरियदलग	श्रीकन्दलक	shrıkandalak	१७
सिलप्पवाल	शिलाप्रवाल	coral rock	३२२
सिव	शिव-उपद्रवरहित, अहिंसा का ३७वाँ नाम	trouble free, 37th name of Ahımsa	२५३
सिहरि	शिखरी नामक पर्वत	shıkharı mountaın	२३३
सिहरिणि	दही और शक्कर से बना पेयविशेष -श्रीखड	sweet curd	२४२
सीमागार	एक प्रकार का ग्राह	crocodıle	१७
सीया	सीता	sıta rıver	२१९
सीया	शिबिका-बडी पालकी	large palanquın	२८
सील	शील, अहिंसा का ३९वाँ नाम	moralıty, 39th name of ahımsa	२५३
सीलपरिघरो	शीलपरिग्रह, अहिंसा का ४१वाँ नाम	possessıon of moralıty, 41st name of Ahımsa	२५३

सीसग	सीसा	lead metal	३९६
सीह	सिह	lion	१७
सीहल	सिहल देश	ceylon	३३
सूइ	व्यूहविशेष	a battle formation	१३३
सुईमुह	सूचीमुख–तीखी चोच वाला पक्षी	a bird with sharp beak	१९
सुग(य)	तोता	parrot	१०८
सुकय	सुकृत	good deed	९०
सुघोस	घटा	bell	४१७
सुणग	कुत्ता	dog	५५
सुय	तोता	parrot	१९
सुयनाणी	श्रुतज्ञानी	having knowledge of scriptures	२६४
सुयग	श्रुतज्ञान, अहिंसा का ९वाँ नाम	scriptural knowledge, 9th name of Ahimsa	२५३
सुरूवविज्जुमईए	सुरूपविद्युन्मती (विशेष नाम)	a name	२१९
सुवण्णगुलिया	सुवर्णगुलिका (विशेष नाम)	a name	२१९
सुसाण	श्मशान	cremation ground	३३५
सुहुम	सूक्ष्म	minute	२१९
सूइ	सूची–सूई	needle	१८७
सूकरे	सुअर	pig	१०८
सूई	शुचि, अहिंसा का ५६वाँ नाम	cleanliness, 56th name of Ahimsa	२५३
सूप	दाल	pulses	३३९
सूयग	चुगलखोर	slanderer	८०
सूयगड	सूत्रकृताग	sutrakritanga	३७७
सूल	शूली	gallows	४६
सूलिय	शूली	gallows	२८
सूसरपरिवाइणी	वीणाविशेष	a type of Veena	४१७
सेण	श्येन–बाजपक्षी	hawk	१९
सेणावई	सेनापति	commander of army	२३३
सेउ(तु)	पुल	bridge	२६
सेय	स्वेद, पसीना	sweat	३६२
सेल	पाषाण	a rock	१९३

सेल्लग	शल्यक जन्तु	an anımal	१८
सेह	शरीर पर काँटे वाला जन्तु-सेही	porcupıne	१८
सेहब	रायता आदि	a dısh made of curd	४२५
सोणिय	रक्त	blood	२२
सोणी	कटि	back	२१०
सोत्थिय	स्वस्तिक	swastıka	१८७
सोम्मा	सौम्य	sober	२१०
सोय	शोक	grief	३०
सोयरिया	सूअरो का शिकार करने वाले	boar hunters	३२
सकड	व्याप्त	wıde spread	३७
सकम	उतरने का मार्ग	down-path	२६
सकरो	वस्तुओ का परस्पर मिलाना, परिग्रह का ७वाँ नाम	to mıx thıngs, 7th name of Parıgraha	२२८
संकुल	व्याप्त	wide-spread	३७
सख	शख	conch shell	२०३
सघयणे	अस्थियो की शारीरिक रचना	bone structure	३५३
सचयो	चय-वस्तुओ की अधिकता, परिग्रह का दूसरा नाम	aquısıtıon, second name of Parıgraha	२२८
सजमो	सयम, अहिंसा का एक नाम	restraınt, a name for ahımsa	२५३
सठाण	सस्थान-शारीरिक आकृति	body constıtutıon	१२७
सडासतुड	सडास की आकृति की तरह मुँह वाला जीव	an anımal	३४
सथवो	बाह्य पदार्थों का अधिक परिचय, परिग्रह का २२वाँ नाम	descrıptıon of outsıde thıngs, 22nd name of Parıgraha	२२८
सधिच्छेय	खात खोदने वाला	a dıgger	१३०
सपाउप्पायओ	झूठ आदि पाप को करने वाला, परिग्रह का १८वाँ नाम	ındulgence ın sıns ıncludıng falsıty; 18th name of parıgraha	२२८
सदण	युद्धरथ तथा देवरथ	a war charıot or a divıne chariot	२८
सबाह	संबाध, बस्तीविशेष	a place of habıtatıon	२२४
सबर	सांभर	a large antelope	१७
सभारो	सभार, जो अच्छी तरह से धारण किया जाये, परिग्रह का छठा नाम	proper dress, sıxth name of Parıgraha	२२८

समुच्छिम	सम्मूर्च्छिम, बिना गर्भ के उत्पन्न होने वाला जीव	living beings of asexual origin	२१९
सवरो	सवर, अहिंसा का ४२वाँ नाम	blockage of karmas, 42nd name of Ahimsa	२५३
सवट्टगसखेवो	हिंसा का एक नाम	a name for violence	८
ससग्गि	मैथुन का एक नाम	a name for copulation	१७९
ससेइम	पसीने से पैदा होने वाला जीव	living organism born in sweat	२१९
सरक्खणा	सरक्षणा–मोहवश शरीर आदि की रक्षा करना, परिग्रह का १६वाँ नाम	to protect body out of fondness, 16th name of parigraha	२२८
सिग	सीग	horn	२२
सुसुमार	जलचर जन्तुविशेष	an aquatic animal	१७
हडि	काष्ठ का खोडा	wooden shakle	१४९
हत्थिमड	हाथी का कलेवर	cadaver of elephant	४२३
हणि हणि	प्रतिदिन	each day	३३७
हत्थदुय	हस्तान्दुक, एक प्रकार का बन्धन	a kind of bondage	१४९
हय	घोडा	horse	१७
हयपुडरीय	ह्रदपुण्डरीक पक्षी	a bird	१९
हरिएसा	चाण्डाल	keeper of cremation ground	३२
हल	हल	a plough	१९४
हस्स	हास्य	laughter	३०
हिययत	हृदय और आँत	heart and intestine	२२
हिमवत	इस नाम का पर्वत	a mountain	३४६
हिरण्ण	चाँदी	silver	३९६
हीण	हीन	lowly	७१
हीणसत्ता	सत्त्व से रहित	weak	७१
हुलिय	शीघ्र	quick	३७
हूण	हूण नामक जाति	hun tribe	३३
हस	हस	swan	३३
हिंसविहसा	हिंस्य (हिंस्र) विहिंसा, हिंसा का चौथा नाम	beastly violence, 4th name of violence	८
हुड	बेडोल शरीर	dis-shaped body	३७

विश्व में पहली बार जैन साहित्य के इतिहास में एक नये ज्ञान युग का शुभारम्भ

(जैन आगम, हिन्दी एव अग्रेजी भावार्थ और विवेचन के साथ। शास्त्र के भावो को उद्‌घाटित करने वाले बहुरगे चित्रों सहित)

१ **सचित्र उत्तराध्ययन सूत्र** **मूल्य ५००/-**

भगवान महावीर की अन्तिम वाणी। आदर्श जीवन विज्ञान तथा तत्त्वज्ञान से युक्त मोक्षमार्ग के सम्पूर्ण अगो का सारपूर्ण वर्णन। एक ही सूत्र मे सम्पूर्ण जैन आचार, दर्शन और सिद्धान्तो का समग्र सद्‌बोध।

२. **सचित्र दशवैकालिक सूत्र** **मूल्य ५००/-**

जैन श्रमण की अहिंसा व यतनायुक्त आचार सहिता। जीवन मे पद-पद पर काम आने वाले विवेकयुक्त, सयत व्यवहार, भोजन, भाषा, विनय आदि की मार्गदर्शक सूचनाएँ। आचार विधि को रगीन चित्रो के माध्यम से आकर्षक और सुबोध बनाया गया है।

३ **सचित्र नन्दी सूत्र** **मूल्य ६००/-**

मतिज्ञान-श्रुतज्ञान आदि पाँचो ज्ञानो का विविध उदाहरणो सहित विस्तृत वर्णन।

४ **सचित्र अनुयोगद्वार सूत्र (भाग १, २)** **मूल्य १,२००/-**

यह शास्त्र जैनदर्शन और तत्वज्ञान को समझने की कुजी है। नय, निक्षेप, प्रमाण, जैसे दार्शनिक विषयो के साथ ही गणित, ज्योतिष, सगीतशास्त्र, काव्यशास्त्र, प्राचीन लिपि, नाप-तौल आदि सैकडो विषयो का वर्णन है। यह सूत्र गम्भीर भी है और बडा भी है। अत दो भागों में प्रकाशित किया है।

५ **सचित्र आचाराग सूत्र (भाग १, २)** **मूल्य १,०००/-**

यह ग्यारह अगो मे प्रथम अग है। भगवान महावीर द्वारा प्रतिपादित अहिंसा, सम्यक्त्व, सयम, तितिक्षा आदि आधारभूत तत्त्वो का बहुत ही सुन्दर वर्णन है। भगवान महावीर का जीवन-चरित्र, उनकी छद्मस्थ चर्या का आँखो देखा वर्णन तथा जैन श्रमण का आचार-विचार दूसरे भाग मे है। दोनो भाग विविध ऐतिहासिक व सास्कृतिक चित्रो से युक्त।

६ **सचित्र स्थानांग सूत्र (भाग १, २)** **मूल्य १,२००/-**

यह चौथा अग सूत्र है। अपनी खास सख्या प्रधान शैली मे सकलित यह शास्त्र ज्ञान, विज्ञान, ज्योतिष, भूगोल, गणित, इतिहास, नीति, आचार, मनोविज्ञान, पुरुष-परीक्षा आदि सैकडो प्रकार के विषयो का ज्ञान देने वाला बहुत ही विशालकाय शास्त्र है। भावार्थ और विवेचन के कारण प्रत्येक पाठक के लिए समझने में सरल और ज्ञानवर्धक है।

७. **सचित्र ज्ञाताधर्मकथा सूत्र (भाग १, २)** **मूल्य १,०००/-**

भगवान महावीर द्वारा प्रवचनों में प्रयुक्त धर्मकथाएँ, उद्‌बोधक, रूपक, दृष्टान्त आदि जिनके माध्यम से तत्त्वज्ञान सहज ही ग्राह्य हो गया है। विविध रोचक रंगीन चित्रों से युक्त। दो भागों में सम्पूर्ण आगम।

८ **सचित्र उपासकदशा एवं अनुत्तरौपपातिकदशा सूत्र** मूल्य ६००/–

सप्तम अग उपासकदशा मे भगवान महावीर के प्रमुख १० श्रावको का जीवन-चरित्र तथा उनके श्रावक धर्म का रोचक वर्णन है। नवम अग अनुत्तरौपपातिकदशा मे उत्कृष्ट तप साधना करने वाले ३३ श्रमणो की तप ध्यान-साधना का रोमांचक वर्णन है। भावो को स्पष्ट करने वाले कलात्मक रगीन चित्रो सहित।

९. **सचित्र निरयावलिका एव विपाक सूत्र** मूल्य ६००/–

निरयावलिका मे पाँच उपाग है। भगवान महावीर के परम भक्त राजा कूणिक के जन्म आदि का वर्णन तथा वैशाली गणतत्राध्यक्ष चेटक के साथ हुए महाशिलाकटक युद्ध का रोमाचक चित्रण तथा भगवान अरिष्टनेमि एव भगवान पार्श्वनाथ के शासन मे दीक्षित अनेक श्रमण-श्रमणियो का चरित्र इनमे है।

विपाक सूत्र मे अशुभ कर्मों के अत्यन्त कटु फल का वर्णन है, जिसे सुनते ही हृदय द्रवित हो जाता है, तथा सुखविपाक मे दान, तप आदि शुभ कर्मों के महान् सुखदायी पुण्य फलो का मुँह बोलता वर्णन है। भावपूर्ण रोचक कलापूर्ण चित्रो के साथ।

१० **सचित्र अन्तकृद्दशा सूत्र** मूल्य ५००/–

आठवे अग अन्तकृद्दशा सूत्र मे मोक्षगामी ९० महान् आत्म-साधक श्रमण-श्रमणियो के तपोमय साधना जीवन का प्रेरक वर्णन है। यह सूत्र पर्युषण मे विशेष रूप मे पठनीय है। विविध चित्र व तपो के चित्रो से समझने मे सरल सुबोध है।

११. **सचित्र औपपातिक सूत्र** मूल्य ६००/–

यह प्रथम उपाग है। इसमे राजा कूणिक का भगवान महावीर की वन्दनार्थ प्रस्थान, दर्शन-यात्रा तथा भगवान की धर्मदेशना, धर्म प्ररूपणा आदि विषयो का बहुत ही विस्तृत लालित्ययुक्त वर्णन है। इसी मे अम्बड परिव्राजक आदि अनेक परिव्राजको की तप साधना का वर्णन भी है।

१२ **सचित्र रायपसेणिय सूत्र** मूल्य ६००/–

यह द्वितीय उपाग है। धर्मद्वेषी प्रदेशी राजा को धर्मबोध देकर धार्मिक बनाने वाले ज्ञानी आचार्य केशीकुमार श्रमण के साथ आत्मा, परलोक, पुनर्जन्म आदि विषयो पर हुई अध्यात्म-चर्चा प्रत्येक जिज्ञासु के लिए पठनीय ज्ञानवर्द्धक है। आत्मा और शरीर की भिन्नता समझाने वाले उदाहरणो के चित्र भी बोधप्रद है।

१३. **सचित्र कल्प सूत्र** मूल्य ६००/–

कल्प सूत्र का पठन, पर्युषण मे विशेष रूप मे होता है। इसमे २४ तीर्थंकरो का जीवन-चरित्र है। साथ ही भगवान महावीर का विस्तृत जीवन-चरित्र, श्रमण समाचारी तथा स्थविरावली का वर्णन है। २४ तीर्थंकरो के जीवन से सम्बन्धित सुरम्य चित्रो के कारण सभी के लिए आकर्षक उपयोगी है।

१४ **सचित्र छेद सूत्र (दशा–कल्प–व्यवहार)** मूल्य ६००/–

आचार-शुद्धि के लिए जिन आगमो मे विशेष विधान है, उन्हे 'छेद सूत्र' कहा गया है। छेद सूत्रो मे आचार-शुद्धि के सूक्ष्म से सूक्ष्म नियमो का वर्णन है। चार छेद सूत्रो मे दशाश्रुतस्कन्ध, बृहत्कल्प तथा व्यवहार-ये तीन छेद सूत्र सभी श्रमण-श्रमणियो के लिए विशेष पठनीय है। प्रस्तुत भाग मे तीनों छेद सूत्रों का भाष्य आदि के आधार पर विवेचन है। यह अग्रेजी अनुवाद तथा १५ रंगीन चित्रों सहित है।

१५ **सचित्र भगवती सूत्र (भाग १, २, ३)** मूल्य १८००/–

पचम अग व्याख्याप्रज्ञप्ति सूत्र 'भगवती' के नाम से अधिक प्रसिद्ध है। इसमे जीव, द्रव्य, पुद्गल, परमाणु, लोक आदि चारो अनुयोगो से सम्बन्धित हजारो प्रश्नोत्तर है। यह विशाल आगम जैन तत्त्व विद्या का महासागर है। सक्षिप्त और सुबोध अनुवाद व विवेचन के साथ यह आगम लगभग ६ भाग मे पूर्ण होने की सम्भावना है। प्रथम भाग १ से ४ शतक तक तथा १५ रगीन चित्रो सहित प्रकाशित है। द्वितीय भाग मे ५ से ७ शतक सम्पूर्ण तथा ८वे शतक का प्रथम उद्देशक लिया गया है। इस भाग मे १५ रगीन चित्र लिये गये है। तृतीय भाग मे आठवे शतक के द्वितीय उद्देशक से नवे शतक तक सम्पूर्ण लिया गया है। साथ ही यह विषय को स्पष्ट करने वाले २२ रगीन भाव पूर्ण चित्रो से युक्त है।

१६ **सचित्र जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति सूत्र** मूल्य ६००/–

यह छठा उपाग है। इस सूत्र का मुख्य विषय जम्बूद्वीप का विस्तृत वर्णन है। जम्बूद्वीप मे आये मानव क्षेत्र, पर्वत, नदियाँ, महाविदेह क्षेत्र, मेरु पर्वत तथा मेरु पर्वत की प्रदक्षिणा करते सूर्य-चन्द्र आदि ग्रह नक्षत्र, अवसर्पिणी, उत्सर्पिणी आदि के विस्तृत वर्णन के साथ ही चौदह कुलकर, प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव का चरित्र, सम्राट् भरत चक्रवर्ती की षट्खण्ड विजय आदि अनेक विषयो का वर्णन भी इस सूत्र मे आता है। इसमे दिये रगीन चित्र जम्बूद्वीप की भौगोलिक स्थिति, सूर्य-चन्द्र आदि ग्रहो की गति समझने मे काफी उपयोगी सिद्ध होगे। यह सूत्र जैन, भूगोल, खगोल और इतिहास का ज्ञानकोष है।

१७ **सचित्र प्रश्नव्याकरण सूत्र** मूल्य ६००/–

प्रश्नव्याकरण अर्थात् प्रश्नो का व्याकरण, समाधान, उत्तर। मानव मन मे सदा से यह प्रश्न उठता रहा है कि राग--द्वेष जनित वे कौन-से भयकर विकार है जो आत्मा को मलिन करके दुर्गति मे ले जाते है और इनसे कैसे बचा जाए? इन प्रश्नो के समाधान स्वरूप प्रश्नव्याकरण सूत्र मे इनका विस्तृत वर्णन किया गया है। इन्हे आगम की भाषा मे आश्रव कहते है। ये आश्रव है-हिंसा, असत्य, चौर्य, अब्रह्मचर्य और परिग्रह। इन आश्रवो का स्वरूप और उनसे होने वाले दु खो को इस सूत्र मे भलीभाँति समझाया गया है।

साथ ही इन पाँच आश्रवरूपी शत्रुओ से बचने हेतु अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य एव अपरिग्रह-यह पाँच सवर बताये गये है। सवर से भावित आत्मा, राग-द्वेष जनित विकारो से दूर रहती है। आश्रव-सवर वर्णन मे ही समग्र जिन प्रवचन का सार आ जाता है।

- इस प्रकार २३ जिल्दो मे २४ आगम तथा कल्प सूत्र प्रकाशित हो चुके है। प्राकृत अथवा हिन्दी का साधारण ज्ञान रखने वाले व्यक्ति भी अग्रेजी माध्यम से जैनशास्त्रो का भाव, उस समय की आचार-विचार प्रणाली आदि को अच्छी प्रकार से समझ सकते है। अग्रेजी शब्द कोष भी दिया गया है। पुस्तकालयो, ज्ञान-भण्डारो तथा सत-सतियो, स्वाध्यायियो के लिए विशेष रूप से सग्रह करने योग्य है।
- इस आगममाला के प्रकाशन मे परम श्रद्धेय उत्तर भारतीय प्रवर्त्तक गुरुदेव भण्डारी श्री पद्मचन्द्र जी म की अत्यन्त बलवती प्रेरणा रही है। उनके शिष्यरत्न जैन शासन दिवाकर आगमज्ञाता उत्तर भारतीय प्रवर्त्तक श्री अमर मुनि जी म द्वारा सम्पादित है, इनके सह-सम्पादक है प्रसिद्ध विद्वान् श्रीचन्द सुराना। अग्रेजी अनुवादकर्त्ता है श्री सुरेन्द्र बोथरा तथा सुश्रावक श्री राजकुमार जी जैन।

●●

IN THE HISTORY OF JAIN LITERATURE BEGINNING OF A NEW ERA OF KNOWLEDGE FOR THE FIRST TIME IN THE WORLD

(Jain Agams published with free flowing translation in Hind and English Also included are multicoloured illustrations vividly exemplifying various themes contained in scriptures)

1. **Illustrated Uttaradhyayan Sutra** **Price Rs. 500/-**

   The last sermon of Bhagavan Mahavir Essence of the ideal way of life and path of liberation based on philosophical knowledge contained in all Angas The pious discourse encapsulating complete Jain conduct, philosophy and principles

2. **Illustrated Dashavaikalik Sutra** **Price Rs. 500/-**

   The simple rule book of ahimsa and caution based Shraman conduct rendered vividly with the help of multicoloured illustrations Useful at every step in life, even of common man, as a guide book of good behaviour, balanced conduct and norms of etiquette, food and speech

3. **Illustrated Nandi Sutra** **Price Rs. 600/-**

   All enveloping discussion of the five facets of knowledge including Mati-jnana and Shrut-jnana

4. **Illustrated Anuyogadvar Sutra (Parts 1 and 2)** **Price Rs. 1,200/-**

   This scripture is the key to understanding Jain philosophy and metaphysics Besides philosophical topics like Naya, Nikshep and Praman it contains discussion about hundreds of other subjects including mathematics, astrology, music, poetics, ancient scripts and weights and measures The complexity and volume of this could be covered only in two volumes

5. **Illustrated Acharanga Sutra (Parts 1 and 2)** **Price Rs. 1,000/-**

   This is the first among the eleven Angas It contains lucid description of ahimsa, samyaktva, samyam, titiksha and other fundamentals propagated by Bhagavan Mahavir Eye-witness-like description of the life of Bhagavan Mahavir and his pre-omniscience praxis as well as details about ascetic conduct and praxis form the second part. Both parts contain multi-coloured illustrations on a variety of historical and cultural themes

6. **Illustrated Sthananga Sutra (Parts 1 and 2)** **Price Rs. 1,200/-**

This is the fourth Anga Sutra Compiled in its unique numerical placement style, this scripture is a voluminous work containing information about scriptural knowledge, science, astrology, geography, mathematics, history, ethics, conduct, psychology, judging man and hundreds of other topics The free flowing translation and elaboration make the contents easy to understand and edifying even for common readers

7. **Illustrated Jnata Dharma Katha Sutra (Parts 1 and 2)** **Price Rs. 1,000/-**

Famous inspiring and enlightening religious tales, allegories and incidents told by Bhagavan Mahavir presented with attractive colourful illustrations This works makes the abstract philosophical principles easy to understand This is the sixth Anga complete in two volumes

8. **Illustrated Upasak Dasha and Anuttaraupapatik Dasha Sutra** **Price Rs. 500/-**

This book contains the seventh and the ninth Angas The seventh Anga, Upasak Dasha, contains the stories of life of ten prominent Shravak disciples of Bhagavan Mahavir with a special emphasis on their religious conduct The ninth Anga Anuttaraupapatik Dasha contains thrilling description of the lofty austerities and meditation done by thirty three specific ascetics With colourful illustrations

9. **Illustrated Niryavalika and Vipaak Sutra** **Price Rs. 600/-**

Niryavalika has five Upangas that contain the story of the birth of king Kunik, a devout disciple of Bhagavan Mahavir This also contains the thrilling and illustrated description of the famous Mahashilakantak war between Kunik and Chetak, the president of the republic of Vaishali Besides these it also has life-stories of many Shramans and Shramanis of the lineage of Bhagavan Parshva Naath

Vipaak Sutra contains the description of the extremely bitter fruits of ignoble deeds This touching description inspires one towards noble deeds like charity and austerities the fruits of which have been lucidly described in its second section titled Sukha-vipaak The colourful artistic illustrations add to the attraction

10. **Illustrated Antakriddasha Sutra** **Price Rs. 500/-**

This eighth Anga contains the inspiring stories of the spiritual pursuits of ninety great men destined to be liberated This Sutra is specially read during the Paryushan period The illustrations related to austerities are specially informative.

11. Illustrated Aupapatik Sutra **Price Rs. 600/-**

This the first Upanga This contains lucid and poetic description of numerous topics including King Kunik's preparations to go to pay homage to Bhagavan Mahavir, Bhagavan's sermon and establishment of the religious order This also contains the description of austerities observed by Ambad and many other Parivrajaks

12. Illustrated Raipaseniya Sutra **Price Rs. 600/-**

This is the third Upanga It provides an interesting and edifying reading of the discussions between Acharya Keshi Kumar Shraman and the anti-religious king Pradeshi on topics like soul, next life, and rebirth This dialogue turned him into a great religionist The illustrations of the examples showing the difference between soul and body are also instructive

13. Illustrated Kalpa Sutra **Price Rs. 600/-**

Kalpa Sutra is widely read and recited during the Paryushan festival It contains stories of life of 24 Tirthankars with more details about Bhagavan Mahavir's life It also contains the disciple lineage of Bhagavan Mahavir and detailed ascetic praxis The illustrations connected with the 24 Tirthankars add to its attraction as well as utility

14. Illustrated Chheda Sutra **Price Rs. 600/-**

The Agams that contain special procedures for purity of conduct are called Chheda Sutra These Sutras enumerate subtle rules for purity of conduct Of the four Chheda Sutras three should be specially read by all ascetics – Dashashrut-skandh, Brihatkalpa and Vyavahar This edition contains these three Chhed Sutras with elaboration based on commentaries (Bhashya) and other works It also includes English translation and 15 multicolour illustrations

15. Illustrated Bhagavati Sutra (Parts 1, 2 & 3) **Price Rs. 1800/-**

Vyakhyaprajnapti, the fifth Anga, is popularly known as Bhagavati It contains thousands of questions and answers on various topics from four Anuyogas, such as soul, entities, matter, ultimate particle and universe This voluminous Agam is an ocean of Jain metaphysics With simple translation and brief elaboration it is expected to be completed in six volumes The first volume contains one to four Shataks and 15 illustrations The second volume contains five to seven Shataks complete

and first Uddeshak of the eighth Shatak As usual 15 colourful illustrations have also been included The third volume contains second Uddeshak of the eighth Shatak and complete ninth Shatak 22 colourful illustrations have also been included These will make the complex topics simple and easy to understand. This is probably for the first time that an English translation of this Agam is being published

16. Illustrated Jambudveep Prajnapti Sutra **Price 600/-**

This is the sixth Upanga The central theme of this Sutra is detailed description of Jambudveep The list of topics discussed in this include inhabited areas of Jambudveep continent, mountains, rivers, Mahavideh area, Meru mountain, the sun, the moon, planets, and constellations moving around the Meru, regressive and progressive cycles of time, people like the fourteen Kulakars, the first Tirthankar Bhagavan Risabhadeva, and incidents like the conquest of the six divisions of the Bharat area The colourful illustrations included in this volume will be helpful in understanding the geographical conditions of Jambudveep as well as the movement of the sun, the moon and planets The readers will find the beautiful multicoloured illustrations of incidents from Bhagavan Risabhadeva's life very lively This Sutra is a compendium of Jain geography, cosmology and history

17. Illustrated Prashnavyakaran Sutra **Price 600/-**

Prashnavyakaran means the grammer of questions, solutions and answers Human mind is always faced with the question that what are those terrible perversions caused by attachment and aversion that tarnish the soul and push it to a tormenting rebirth, and how to avoid them? In order to answer these questions Prashnavyakaran Sutra starts by giving detailed description of these perversions In Agamic terms they are called Aashravas They are - violence, falsity, stealing, non-celibacy and covetousness This Sutra vividly explains the definitions of these Aashravas and the miseries caused by them

In order to protect oneself from these five Aashravas, the tormenters of mind, five Samvars have been defined They are - Ahimsa, truth, non-stealing, celibacy and non-covetousness A soul energized by Samvar remains free of the perversions caused by attachment and aversion The descriptions of Aashrava and Samvar encapsulate the gist of the whole sermon of the Jina

- Till date 24 Agams (including three parts of Bhagavati) and Kalpa Sutra have been published in 23 books The English translation makes it possible for those with passing knowledge of Prakrit and Hind to understand the content of Jain Agams including the religious practices as prevalent in ancient times Also included in some of these editions are glossaries of Jain terms with their meaning in English
- Due to its demand by libraries, Jnana Bhandars, ascetics and lay readers this unique series may soon go out of print
- The publication of this Agam series has been inspired by Uttar Bharatiya Pravartak Gurudev Bhandari Shri Padmachandra ji M S Its editor is his able disciple Uttar Bharatiya Pravartak Shri Amar Muni ji Maharaj His team includes renowned scholar Shri Shrichand Surana as associate editor, Shri Surendra Bothara and Sushravak Shri Raj Kumar Jain, as English translators